कमलेश्वर एवं राजेन्द्र यादव

के

नारी पात्रों का तुलनात्मक अध्ययन

(काम, प्रेम एवं सौन्दर्य के विशिष्ट संदर्भ में)

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी (उ.प्र.)

हिन्दी विषय के अंतर्गत

डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी

उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबंध

निर्देशक :
डॉ. वेद प्रकाश द्विवेदी
रीडर हिन्दी विभाग
अतर्रा पी.जी. कॉलेज, अतर्रा
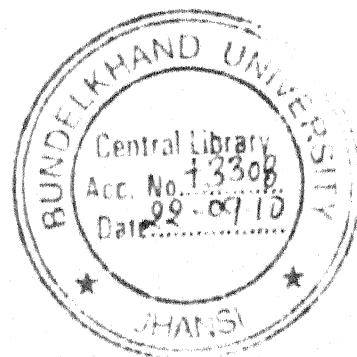
शोधकर्त्री :
भावना दुबे
एम.ए. (हिन्दी)

::शोध केन्द्र::

अतर्रा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अतर्रा बाँदा (उ.प्र.)

डॉ. वी.पी. द्विवेदी
रीडर/अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
अतर्रा पो. ग्रे. कॉलेज अतर्रा

2/10, छोटा डे
लोधू थोक अत

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है, कि सुश्री भावना दुबे ने मेरे निर्देशन में 200 दिन से अधिक रह कर कमलेश्वर एवं राजेन्द्र यादव के नारी-पात्रों का तुलनात्मक अध्ययन '(काम प्रेम एवं सौन्दर्य के विशिष्टि सन्दर्भ में)' पी.एच.डी. उपाधि हेतु शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया है। यह इनकी मौलिक कृति है। इसे मूल्यांकन हेतु अनुशंसित किया जाता है।

दिनांक : ....

निर्देशक

डॉ. वी.पी. द्विवेदी
अध्यक्ष हिन्दी विभाग
अतर्रा पो.ग्रे. कॉलेज अतर्रा (बाँदा)

घोषणा पत्र

मैं भावना दुबे घोषित करती हूँ , कि कमलेश्वर एवं राजेन्द्र यादव के नारी-पात्रों का तुलनात्मक अध्ययन ''(काम, प्रेम एवं सौन्दर्य के विशिष्ट सन्दर्भ में)'' शोध प्रबन्ध मेरी मौलिक कृति है, और यह शोध प्रबन्ध इसके पूर्व किसी अन्य भारतीय अथवा विदेशी विश्वविद्यालय की उपाधि या अन्य शैक्षणिक प्रमाण पत्र हेतु प्रस्तुत नहीं किया गया है ।

शोध कर्त्री
भावना दुबे
भावना दुबे
एम.ए. (हिन्दी)

अतर्रा

दिनांक 20/11/2008

भूमिका

* कामोऽअहम् भरतर्षभ्
* प्रियेषु सौभाग्य फलेषु चारूताम्
* लब्धम नेत्र निर्माणम्
* Beauty is to see not to touch

जैसे सूक्तियों को पढकर मेरे कैशोर्य मन में संस्कृत हिन्दी और अंग्रेजी के साहित्य का आलोणन विलोणन करते हुए यह सहज ही कौतूहल जागृत हुआ कि वस्तुत: सौन्दर्य–वस्तु या दृष्टि में है । काम प्रेम और सौन्दर्य का क्या सम्बन्ध है ? ऐसे कौतूहल पूर्ण प्रश्नों की जिज्ञासा पढते देखते हुए एम .ए. के बाद जब शोध कार्य करने की मेरी स्थिति बनी, तो मुझे 'कमलेश्वर और राजेन्द्र यादव के नारी पात्रो का तुलनात्मक अध्ययन' (काम प्रेम एवं सौन्दर्य के विशिष्ट सन्दर्भ) में शीर्षक पर काम करने की दिशा मेरे शोध निर्देशक ने दी । प्रस्तुत शोध प्रबंध सात अध्याय में विभक्त है ।

प्रथम अध्याय काम प्रेम एवं सौन्दर्य के स्वरूप से सम्बन्धित है । जिसके अन्तर्गत भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार तीनों का सैद्धांतिक निरूपण किया गया है ।

द्वितीय अध्याय में नारी चरित्र दशा एवं दिशा का निरूपण हुआ है इस परिप्रेक्ष्य में पात्र चरित्र व्यक्तित्व के स्वरूप अवधारणाए उसके कारक तत्व और नारी पात्रों का वर्गीकरण किया गया है ।

तृतीय अध्याय हिन्दी का कथा साहित्य स्वरूप एवं विकास से सम्बन्धित है । यहाँ पर कथा साहित्य के अन्तर्गत कहानियाँ और उपन्यासों का क्रमश: उद्भव विकास धाराँए, आन्दोलन की रूपरेखा प्रस्तुत कर आलोच्य कथाकार कमलेश्वर एवं राजेन्द्र यादव के कथा साहित्य का संक्षिप्त परिचय दिया गया है ।

अध्याय चार में आलोच्य कथाकारों के प्रमुख नारी स्वरूपों का वर्णन नारियों के वाह्य व्यक्तित्व के कारक तत्व सौन्दर्य निरूपण उनके व्यक्तित्व के अन्य पक्षों के साथ काम प्रेम और सौन्दर्य सम्बन्धी वैशिष्ट्य का विवेचन प्रस्तुत किया गया है ।

अध्याय पाँच में आलोच्य कथाकारों के गौण नारी पात्रों का विवेचन नारियों है । व्यक्तित्व जनित, विविध रूप तथा काम और प्रेम के विविध पक्षों का उदघाटन किया गया है ।अध्याय छ: में आलोच्य कथाकारों के साहित्य में विकृत मानसिक नारी चित्रण का विवेचन है । यहाँ

विकृत मानसिक रूप में विकलांगता की अपेक्षा प्रेम और काम जनित दमन कुण्ठा संत्रास और समाज या परिवाद में तादात्म स्थापित न कर सकने के कारण नारी के क्रिया कलाप जनित विकृति का तद्जनित परिस्थितियों का विश्लेषण प्रस्तुत किय गया है।

अन्तिम और सातवे अध्याय में काम प्रेम और सौन्दर्य की दृष्टि से आलोच्य कथाकारों का योगदान निरूपित हुआ है। इस परिपेक्ष्य में उनके स्वस्थ विकृत, बदलते हुए परिवेश के कारण आये हुए चिन्तन एवं व्यवहार जनित क्रिया कलाप, कुरूपता के कारण उपजी कुण्ठा, नैतिक अनैतिक मूल्यों का उल्लेख कर साम्य एवं वैषम्य की दृष्टि से आलोच्य कथाकार का मूल्यांकन किया गया है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के लेखन में शोध निर्देशक डॉ. वी.पी. द्विवेदी अध्यक्ष हिन्दी विभाग, अतर्रा पोस्ट ग्रेजुएट अर्तरा, कुशल वस्तुवादी अव्याहत रूप में मार्ग निर्देशन मिला है इस हेतु शोधकर्त्री अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करती है। इस शोध प्रबंध के प्रेरणा स्वरूप अपने पिता श्री देवनाथ दुबे एवं माता श्रीमती विमला देवी का भाव विह्वल मन से स्मरण करती है। जिनकी लालसा मेरे नाम के आगे डॉक्टर लिखने की भावना की पूर्ति हुई है। अपने परिवार जनों में अपने अग्रज श्री वेद प्रकाश तिवारी-श्रीमती रश्मि तिवारी, श्री राम बाबू मिश्रा -श्रीमती कल्पना मिश्रा के साथ-साथ अनुज भाई आशुतोष दुबे का सराहनीय सहयोग प्राप्त हुआ। मेरे परिवारजनों के साथ-साथ आसू , वासू, तोषु, एवं वीसू के बाल सहयोग से ही यह कार्य सम्भव हो पाया है, क्योंकि समय-समय पर इन्होने मेरे उत्साह को बढाकर मेरे शोध कार्य को पूरा करने में सहायता की है। इसके अतिरिक्त विषय वस्तु की सुस्पष्टता के लिए शोधकर्त्री डॉ. अजय मिश्रा (डी.लिट एवं हिन्दी प्रवक्ता-गोस्वामी तुलसी दास राजकीय महाविद्यालय चित्रकूट) के प्रति नमन करती हूँ एवं मेरे मार्गदर्शक श्री रामाकान्त पाठक (तत्कालीन प्राचार्य रतन नाथ इण्टर कॉलेज रसिन) एवं इसी विद्यालय के उपप्रधानाचार्य कृपाशंकर श्रीवास्तव जी का सराहनीय सहयोग मुझे प्राप्त हुआ है। उन्हीं के उत्साहवर्धन से इस दिशा में मैं आगे बढ पाई हूँ। विषय वस्तु सम्बन्धी सामग्री उपलब्ध कराने में श्री प्रदीप द्विवेदी ने जो अग्रणी भूमिका निभाई है। अपने दिल्ली प्रवास में अत्यन्त व्यस्त रहते हुए भी मेरे लिएउपयोगी साहित्य के खोजने में जो श्रम किया है उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन बहुत औपचारिक हो जायेगा, क्यों कि वह मेरे पारिवारिक जन है। इसके अतिरिक्त मेरे अग्रज श्री अजय भार्गव श्रीमती लज्जा भार्गव एवं गुरू श्री श्याम मोहन त्रिपाठी (वर्तमान अध्यात्मिक लेखक) ने मेरे शोध प्रबंधन को मुद्रा राक्षस के चंगुल से बचाया है, उनके लिए कृतज्ञता ज्ञापित करना एक बदमाशी ही सिद्ध होगी. क्योंकि डस सारश्वत यज्ञ की पूर्णाहुति कर्ता में ये

एवं मेरे माता पिता ही जन्य है । अन्त में मैं अपने समस्त शुभचिन्तकों समवस्काओं का आभार व्यक्त करने के साथ–साथ शोध प्रबंध के टंकण श्री दिलीप कुमार सिंह का भी आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होने अत्यधिक परिश्रम कर इसे इस रूप में प्रस्तुत करने में मेरी सहायता की है ।

दिनांक : २०/11/2008

शोधकर्त्री

भावना दुबे

भावना दुबे

एम.ए. (हिन्दी)

विषयानुक्रमाणिका

अध्याय-1

- काम प्रेम एवं सौन्दर्य का स्वरूप
- भारतीय मत पाश्चात्य मत

प्राणियों की मूल प्रवृत्तियाँ-

प्राणिमात्र के भीतर कुछ जन्मजात मूल प्रवृत्तियां होती हैं, जिनसे उनके समस्त कार्यों का परिचालन होता रहता है। इन मूल प्रवृत्तियों की क्रिया स्वत: ही होती रहती है आँख के सामने एका एक हाथ के हिलाने से सहसा पलकों का बंद हो जाना, अचानक भयावह द्दश्य को देखकर चिल्लाने लगना या भाग खड़ा होना, जंगली जानवर को सामने देखकर मन में डरते हुये भी उससे लड़ने के लिये उद्यत होना या फिर किसी सुन्दर दृश्यावली अथवा अनुपम रूप को देखकर उसकी ओर सहसा आकर्षित होना आदि अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं। प्रवृत्ति के साथ उपार्जित ज्ञान (Intelligence) के सम्मिश्रण के कारण एक से अधिक वृत्तियां (Instincts) एक साथ कार्यशील हो जाती है।(1)

पशु जगत एवं मानव जगत की सहज प्रेरक प्रवृत्तियों में अन्तर पाया जाता है। इसका प्रमुख कारण यह है कि पशु जगत के सारे कार्य सहज प्रवृत्ति के अनुसार होते हैं, किन्तु मनुष्य चेतन प्राणी है उसमें बौद्धिकता है। अत: मनुष्य अपने नित्य व्यवहार एवं जीवन के बहुविध अनुभवों के समावेश द्वारा अपनी सहज प्रेरक प्रवृत्तियों को अधिकाधिक बौद्धिक बना लेता है। प्राणि मात्र के अन्तर्गत अपने इसी वैशिष्टय के कारण मनुष्य सर्वश्रेष्ठ माना गया है।

''आहार निद्रा भय मैथुन च सामान्यमेतद् पशुभि र्नराणां।

धर्मां हि तेषामधिको विशेषो, धर्मेण हीन: पशुभि: समाना: ॥''

आहार, निद्रा, भय, मैथुन आदि सहज प्रवृत्तियां पशुओं एवं मनुष्यों में समान ही है, किन्तु धर्म की अधिकाधिक विशेषता अर्थात् बुद्धि तत्व के समावेश हो जाने से उनमें परिष्कृति आ जाती है। प्राणियों का जीवन रहस्यों का आगार है। इसी प्रकार उनकी जीवन दशाओं एवं व्यापारों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यच्छ रूप से प्रभावित एवं परिचालित करने वाली प्रेरक प्रवृत्तियों की संख्या भी अगणित है किन्तु मनोवैज्ञानिको की द्दष्टि में प्राणी मात्र के अन्तर्गत कुल सोलह मूल प्रवृत्तियां पायी जाती हैं। इनमें प्रथम तेरह मुख्य तथा शेष तीन गौण मूल प्रवृत्तियँ मानी गयी है। यहां पर प्रत्येक मूल प्रवृत्ति तथा उससे संबद्ध मनोवेग (Emotion) का संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है।

1. **अपत्यस्नेह वृत्ति अथवा आत्म-संरक्षण की वृत्ति** Parental or Protective-instinct) – वात्सल्य (Love) और त्याग (Sacrifice) इस प्रवृत्ति से सम्बद्ध मनोवेग है।

2. **संघर्ष की वृत्ति** (The instinct of Combat) – जब प्राणी की अभीप्सि वस्तु

अथवा मनोवांछित कार्यक्षेत्र में किसी प्रकार की विघ्न-बाधा डाली जाती है, तब यह संघर्ष वृत्ति क्रियाशील हो उठती है। भोजनोपार्जन और मैथुन में व्यवधान पहुंचने पर यह संघर्ष वृत्ति अत्यधिक उग्र हो जाती है। इस वृत्ति से संबद्ध मनोवेग क्रोध है, जिसके स्तर भेद से तीन स्वरूप हो जाते हैं- क्रोध (Anger), रोष (Rage), रोषोन्माद (Fury)। "काम एष क्रोध एष रजोगुण समद्भव।"

3. **जिज्ञासा की वृत्ति (**The instinct of curiosity**)** – नये विस्मयोत्पादक एवं अज्ञात रहस्यपूर्ण विषयों के संबंध में जानकारी प्राप्त करना इस वृत्ति का प्रमुख उद्देश्य है। अभीष्ट सिद्धि में सहायक साधनों को प्राप्त करने एवं संभावित संकटों से बचने की अवस्थाओं में यह वृत्ति सर्वाधिक सक्रिय होती है। इस वृत्ति के सजग होने पर मनुष्य की विचार-शक्ति एवं विवेक बुद्धि का उदय होता है। औत्सुक्य तथा विस्मय इस वृत्ति से संबंधित मनोवेग है।

4. **क्षुधा निवृत्ति अथवा भोजनोपार्जन की वृत्ति** (The instinct of food seeking)- क्षुधानिवृत्ति के लिये भोजनोपार्जन की वृत्ति अधिक प्रबल है। मनुष्य से लेकर पशु पक्षी, यहां तक कि स्थावर पेड़ पौधों आदि में भी यह वृत्ति उत्कट रूप में विद्यमान है। अत: अन्य सभी वृत्तियों की अपेक्षा यह अति व्यापक एवं सर्वाधिक प्रभावशाली है। इस वृत्ति का मनोवेग क्षुधा (Appetite) है। जो जड़ चेतन सबमें समान रूप से पायी जाती है। क्षुधा निवृत्ति के लिये, पेट को भरने के लिये प्राणी क्या-क्या नहीं करता, कौन-कौन नाच नहीं नाचता ?

5. **निषेध की वृत्ति** (the instinct of Repulsion, avoidance or disgust)- मनुष्य जिसे नहीं चाहता उससे वह दूर रहने का प्रयत्न करता है। यहां तक कि वह उसे देखना तक नहीं पसन्द करता। वह अरुचिकर पदार्थों की उपेक्षा करना चाहता है और उसका यह उपेक्षा भाव शनै: शनै: अपकर्षण में परिणत हो जाता है। घृणा, जुगुप्सा (Hatred) इस वृत्ति के मनोवेग हैं।

6. **पलायन वृत्ति** (The instinct of escape) – भय अथवा खतरे से बच निकलने अथवा भागने की प्रवृत्ति सभी जीवों में समान रूप से पायी जाती है। किन्तु आरक्षित और दुर्बल प्राणियों में यह वृत्ति अधिक सजग रहती है। इस वृत्ति का मनोवेग भय है। इसमें आत्म रक्षण के भाव की प्रधानता रहती है।

7. **सामाजिक वृत्ति** (The gregarious Intinct) – अपनी सुरक्षा तथा प्रतिकूल

वर्ग पर सामूहिक रूप से आक्रमण करना ही इस वृत्ति का उद्देश्य है। जंगल के जीव-जन्तु भी झुण्ड बनाकर रहना पसन्द करते हैं। मनुष्य तो चेतन प्राणी है। अत: उसमें सामाजिकता का भाव अधिक तीव्र रूप में रहता है। इस वृत्ति से सम्बद्ध मनोवेग सहानुभूति है।

8. **आत्म प्रतिष्ठा की वृत्ति** (The instinct or Self assertion)- इस वृत्ति के अन्तर्गत निज- वैशिष्ट्य प्रतिपादन की भावना प्रमुख है। यह वृत्ति मानव समाज में अत्यधिक महत्वपूर्ण है। अहंकार, गर्व और दम्भ इससे संबंधित मनोवेग है।

9. **समर्पण की वृत्ति** (The instinct of surrender of submission)- भय, पारस्परिक, सद्व्यवहार, समस्याओं का शांतिपूर्ण समाधान, प्रेमोपलब्धि, सहानुभूति-अर्जन और सुख सुविधा को प्राप्त करने की भावना इस वृत्ति के मूल में पायी जाती है। स्नेह, उत्सर्ग, आधीनता, दीनता इस वृत्ति के मनोवेग है।

10. **प्रजनन वृत्ति** (The mating, Pairing or the Sex instict) – विषम लिंग के साथ संभोगेच्छा इस वृत्ति का प्रमुख उद्देश्य है। काम-पूर्ति, विषय-सुख की इच्छा मैथुन की अभिलाषा इस वृत्ति के प्रबल मनोवेग है, जो जड़ चेतन सबमें समान रूप से विद्यमान है। क्षुधा निवृत्ति और काम-तृप्ति की अभिलाषा सर्वाधिक महत्वपूर्ण, प्रभावशाली एवं दुर्निवार है। विश्व जीवन के हदृत्कम्पन के ये ही अनिवार्य प्रेरक तत्व है।

11. **परिग्रह वृत्ति** (The acquisitiste instinct)- इस वृत्ति का उद्देश्य भविष्य के लिये आत्मरक्षा की व्यवस्था करना है। अधिकार भावना (ownership) इसका मनोवेग है।

12. **निर्माण वृत्ति (The Constructive Instinct)** – जीव-मात्र में सुचार रूप से जीवन-यापन की भावना पायी जाती है। इसके लिये प्राणी मात्र अपनी बुद्धि एवं क्षमता के अनुसार सृजनशील रहता है। पशु पक्षी, कीड़े-मकोड़े तक में भी यह प्रवृत्ति पायी जाती है। सृजन का आनन्द या उत्साह इस वृत्ति के मनोवेग है।

13. **चित्ताकर्षण अथवा विनयावेदन की वृत्ति** (The instinct of Appeal)- गुरुजनों से सहायता, सुख-सुविधा की प्राप्ति करना ही इस वृत्ति का उद्देश्य है। दैन्य अथवा कार्पण्य इसके मनोवेग है।

14. **क्रीड़ा की वृत्ति** (The Instinct of play)- इसका मनोवेग आत्म प्रदर्शन एवं विनोद है।

15. **अनुकरण की वृत्ति** (The Instinct of Imitation)–इसका मनोवेग प्रदर्शन है।

16. **हास्य की प्रवृत्ति** (The Instinct of Laughter)– इसका मनोवेग हास्य है।

आधुनिक मनोविज्ञान की दृष्टि में उपर्युक्त सोलह मूल वृत्तियों से संबंधित मनोवेगों में से काम (रति), हास्य, भय, घृणा, औत्सुक्य, वात्सल्य, अहंकार कार्पण्य और सहानुभूति ये दस ही सहज वृत्तिमूलक मनोवेग माने गये हैं। इनमें अहंकार को छोड़कर शेष सभी संस्कृत साहित्यशास्त्र में स्वीकृत स्थायी भाव ही हैं। कार्पण्य और सहानुभूति को शोक के अन्तर्गत आसानी से रखा जा सकता है। यहां यह ध्यातण्य है कि कुछ विद्वानों ने मनोविज्ञान के मनोवेग और संस्कृत–साहित्य–शास्त्र के स्थायी भाव को समानार्थी नहीं मानने पर जोर दिया है। वे श्रृंगार के स्थायीभाव रति और मनोविज्ञान के काम में अन्तर बतलाते हैं। उनके विचार से रति में काम वात्सल्य आत्मसमर्पण सामाजिकता, आत्मरक्षा, संघर्ष आदि कई अन्य मनोवेगों का सम्मिश्रण पाया जाता है। अत: काम और रति समानार्थी हैं या एक दूसरे से सर्वथा भिन्न है इस पर संक्षेप में विचार कर लेना आवश्यक है।

काम भाव और रति भाव :

व्यापक भाव में रति और काम एक दूसरे के समानार्थी माने जा सकते हैं। यद् यद्धि क्रियते कर्म............।'' अर्थात् मनुष्य जो भी कर्म करता है वह काम की चेष्टा है।(2)

इस प्रकार भारतीय शास्त्रों में काम की सार्वभौम सत्ता एवं व्यापकता का अनेक स्थलों पर स्पष्ट रूप से उल्लेख मिलता है। अथर्ववेद में कहा गया है कि–

''कामो जज्ञे प्रथमं नैनं देवा, आयु: पितरो न मर्त्या।

ततस्त्वमसि ज्यायान विश्वाहा–महास्ते, कामनम: इति करोमि।''

अर्थात् हे काम:। तू सबसे पहले उत्पन्न होकर देव, पितर और मर्त्य सबको प्राप्त हुआ, तुमसे कोई बचा नहीं है, इसलिये इस विश्व में तू व्यापक और सबसे महान है। हे काम। मैं तुम्हें नमस्कार करता हूं।(3) **''कामस्तदग्रे समवर्तत मनसो रेत: प्रथम यदार्सात् ॥''** इतना ही नहीं काम को सृष्टि उत्पत्ति के पहले मन की सर्वव्यापिनी बुद्धि के मूल तत्व के रूप में स्वीकार किया गया है।(4)

अथर्ववेद में काम की विराटता एवं व्यापकता का वर्णन करते हुये कहा गया है कि–

''क इदं कस्म अदात् काम: कामायादात्।

कामो दाता काम: प्रतिग्रहीता काम: समुद्र मा विवेश।

कामेन त्वा प्रति गृहामि कामैत्तते।''

अर्थात कर्म ने ही काम को दिया है । काम ही दाता है और काम ही प्रतिग्रहीता है । यह सब कुछ काम का ही है । इस प्रकार सम्पूर्ण सृष्टि काम से ही संचालित हो रही है ।[5] इस प्रकार व्यापक अर्थ में काम मूल वासना, इच्छा, आकांक्षा, सृजनोद्गार, सृजन-सुख तथा प्रेम का ही पर्याय सिद्ध होता है । आगे काम के विभिन्न तत्वों पर विस्तार के साथ विचार किया जायेगा । काम के समान ही ''रति'' व्यापक अर्थ रखने वाला शब्द है । पीछे ''अग्निपुराण'' के आधार पर कहा जा चुका है कि ''सर्वव्यापक और सर्वशक्तिमान विभु के सहजानन्द की अभिव्यक्ति यदाकदा हो जाती है, जो चिद्-शक्ति-सम्पन्न, चमत्कार पूर्ण एवं रसमय होती है । उसके आदि विकार अहंभाव से भुवन व्याप्त अभिमान (ममता) का आविर्भाव होता है और ''ममता संकलित अभियान'' से श्रृंगार रस की जननी ''रति' की उत्पत्ति होती है ।''

रति के अनेक अर्थ हैं यथा स्मरप्रिया, कामपत्नी, अनुराग, आसक्ति, क्रीड़ा, रमण, संतोष [6] प्रीति, प्रेम, मुहब्बत [7], मनोनुकूल अर्थों में सुख-संवेदन [8], स्त्री पुरुष के काम-वासनामय हृदय की पारस्परिक रमणेच्छा [9], प्रियवस्तु में मन की प्रेमपूर्ण उन्मुखता [10], ईश्वर के प्रति परानुरक्ति अर्थात भक्ति [11] आदि-आदि ।

''जो आकर्षण बन हंसती थी, रति थी अनादि वासना वही ।''

जयशंकर प्रसाद जी ने ''कामायनी'' में काम और उसके आगमन का विवेचन करते हुये ''रति'' को अनादि वासना के रूप में सिद्ध किया है । [12] सृष्टि की रचना में इसी आदि-वासना ''रति'' या ''काम'' की प्रधानता है, क्योंकि यह सहजात वृत्ति हैं । अंकुरित काम ही अपनी प्रिया रति के संयोग से सृष्टि की उत्पत्ति करता है ।

काम एवं रति का विवेचन करते हुये डॉ. राम स्वार्थ चौधरी अभिनव ने लिखा है कि ''रति'' और ''काम'' अपने व्यापक अर्थ में तत्वत: समानार्थी ही हैं । रति और काम दोनों की अन्तर चेतना प्रेम है, जो जन्म के साथ ही मनुष्य के हृदय में अंकुरित होता है तथा जीवन की अनुकूल एवं प्रतिकूल परिस्थितियों के अनुरूप अनेक रूपों में चरितार्थ होता रहता है । सभी रसो और उनके स्थायी भावों के मूल मे भी प्रेम का ही चमत्कार परिलक्षित होता है। रति अथवा प्रेम ही श्रृंगार रस का स्थायी भाव है, जो जड़-चेतन सबमें समान रूप से अपना व्यापक प्रभाव फैलाये हुये हैं और जिसके अमोध सूत्र में बंधकर सभी परस्पर मिलन की आकांक्षा से आंदोलित है ।

''भुजलता पड़ी सरिताओं की
शैलों के गले सनाथ हुये

जलनिधि का अंचल व्यजन बना

धरणी के दो–दो साथ हुये ।x x x x

कोरक–अंकुर–सा जनम रहा

हम दोनों साथी झूल चले,

हम भूख–प्यास से जाग उठे

आकांक्षा–तृप्ति समन्वय में ।

रति काम बने उस रचना में

जो रही नित्य यौवन वय में x x x x

यह लीला जिसकी विकस चली

वह मूल शक्ति थी प्रेमकला ।

उसका संदेश सुनाने को

संसृति में आयी यह अमला ।''(13)

संसार में जड़ चेतन कोई भी पदार्थ एकाकी रहना नहीं चाहता । सब अपने युग्म के साथ प्रेम–तन्तु में बंधकर मधुर मिलन का महोत्सव मना रहे हैं या उसकी प्राप्ति के प्रयास मे संलग्न है । ''झरना सरिता से, सरिता सागर से, सागर धरती से, धरती आकाश से और आकाश में संचरण करने वाले पवन के मधुर भाव लिये हुये परस्पर मिले रहते हैं । इस प्रकार विश्व प्रपंच का मूलाधार प्रेमी और प्रेमिका का पारस्परिक सौन्दर्याकर्षण एवं मधुर मिलन ही है । इसके अभाव में विश्व में फैली हुई मधुरिमा, रस की उमड़ती हुई धारा निस्सार है ।'[14]

'काम' और 'रति' के पारस्परिक संबंध और महत्ता पर प्रकाश डालते हुये श्री 'हरिऔध' जी ने लिखा है–''दर्शनीयता जितनी सौन्दर्य में मिलती है, अन्य गुणों में नहीं । जितना आर्कषण और हृदयग्राहिता रूप में होती है, जितना–मोहक वह होता है, दूसरा नहीं । इसीलिये काम लोकोत्तर कमनीय और कुसुमायुध है । उसकी सहधर्मिणी रति है, जो प्रेममयी, आसक्तिमयी, रमणशीला और क्रीड़ा कला पुत्तलिका है । काम यदि सौन्दर्य–सरसीरुह है, तो वह उसकी शोभा, काम यदि राका–मयंक है, तो रति उसकी कौमुदी; श्रृंगार–रस का दोनों के साथ आधार–आधेय का संबंध है ।

श्रृंगार रस शिशु का एक जनक है और दूसरी जननी । मानव–हृदय काम रति परायण है, अतएव उसके प्रांगण में प्राय: श्रृंगार–रस शिशु रमण करता रहता है, जिसका परिणाम वे ललित कलायें हैं, जिनसे सारा धरातल ललित भूत हैं ।[15]

नाना अनुकूलताओं एवं प्रतिकूलताओं के मध्य एक प्राणी को दूसरे प्राणी–मनुष्य को मनुष्य के निकट लाने का प्रयास सनातन कालसे चलता आ रहा है। जीवन की इस जय यात्रा में मानव ने जहां एक ओर लोक कल्याण के पथ को प्रशस्त करने का प्रयास किया है, वहां दूसरी ओर उसने आत्म कल्याण की भूमि को भी स्वच्छ बनाने का प्रयत्न किया है। जिस युग में इन दो पक्षों का तादात्म्य नहीं हो पाता, उस युग का काव्य विवेक और हृदय के असांमजस्य के कारण रागात्मक भूमि बनाने में अक्षम हो, जाया करता है। जब क्रिया और चिन्तन का सम्यक् स्वावलम्बन और परस्परावलम्बन होता है, तब श्रद्धा और आस्था का जन्म होता है, जिनसे साधरीकरण होता है। इस रागात्मक संबंध की अवस्थायें मनुष्य की आयु के अनुसार परिवर्तित होती रहती है, किन्तु रति सबमें होती है। रति का व्यापक रूप मानवीयता है। उसकी यही विशिष्टता काव्य के स्थायित्व और प्रियता का आधार है।

संयोगच्छा अथवा प्रजनन प्रवृति-

सृष्टि में नर–नारी के संयोग का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। सृष्टि के कण–कण में यह पारस्परिक कामुक आकर्षण–पारस्परिक मिलन की उत्कृट आकांक्षा तीव्रतम रूप में विद्यमान है। संसार में जो कुछ है, वह सब एक दूसरे के साथ मिलनातुर है, एक दूसरे के साथ अदृश्य प्रेम–सूत्र से आबद्ध है। ''यह संबंध मानव बुद्धि से परे भले ही हो, किन्तु इस संबंध द्वारा कहीं ज्ञात और कहीं अज्ञात रूप से संसार के सृजनादि समस्त मंगलमूलक कार्य यथाकाल होते रहते हैं।[16]

"All things by immortal Power, To each other linked are,

Near or far, that thou con't stir a flower, Hiddenly without troubling of a star."

अर्थात् विश्व की सभी वस्तुयें चाहे वे दूरस्थ हो या सन्निकट एक शाश्वत शक्ति के द्वारा अलक्षित ढंग से एक दूसरे से संयुक्त है। एक सितारे को प्रभावित किये बिना फूल को भी नहीं तोड़ा जा सकता।[17] संसार अथवा प्रकृति की विशाल रंगशाला में सर्वत्र पारस्परिक संयोगेच्छा अथवा प्रजनन प्रवृत्ति की विराट लीला देखी जा सकती है।

''भृंग फूलों पर गूंजता फिरता है, कभी उन पर बैठता है, कभी उनका रस ग्रहण करता है और कभी एक पुष्प का रज वहन करके दूसरों तक पहुंचा आता है। तितलियां नाचती फिरती है, चूम–चूमकर फूलों की बलायें लेती हैं। उनसे गले मिलती हैं, अपने रंग में उन्हें और उनके रंग में अपने को रंगती है, और फिर न जाने कहां चक्कर काटती हुई चली जाती हैं। मधुमक्खी चुपचाप आती हैं फूलों के साथ बिहार करती है, उनसे रस–संचय करती हैं, कुछ को पी जाती है और कुछ को लिये संभलती, बचती न जाने कहां से कहां पहुंच जाती

है। प्राणी ही नहीं, यदि हम अन्तर्दृष्टि से काम लें तो पेड़ों और लता-बेलियों में क्या, फूल-पत्तों तक में हमें कामदेव के साथ रतिदेवी बिहार करती मिलेंगी।[18]

"It is under the awakening of reproductive fife that the fields put on their verdure, the flowers unfold their beauty and fragrance the birds put on their brightest plumage and sing their sweetest song while the chirp of the cricket, the note of the katydid, is but the call to its mate for the many tounged voices, which break the stillness of field and forest, are but myriad notes of love."

सृजन संबंधी प्रेरणाओं से जागृत हो कर ही मैदान अपनी सब्जी दिखलाते हैं, फूल अपने सौन्दर्य और सुगन्ध को प्रकट करते हैं, पक्षी गण अपने चमकीले से चमकीले पर धारण करते हैं, तथा मधुर से मधुर गीत गाते हैं। झिल्ली की झंकार, कोयल की कूक अपने जोड़े के आह्वान के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। मैदान और वनों की निस्तब्धता को भंग करने वाले जो इन नाना प्रकार के पक्षियों के कलरव सुनाई पड़ते हैं, ये सब प्रेम के ही असंख्य गीत हैं।[19]

सबके हृदय मदन अभिलाषा। लता निहारि नवहिं तरू शाखा ॥

नदी उमगि अंबुधि कहँ छाई। संगम करहिं तलाब तलाई ॥

जहं अस दसा जड़न कै बरनी। को कहि सकहि सचेतन करनी ॥

देव दनुज नर किन्नर व्याला। प्रेत पिशाच भूत बैताला ॥

इनकी दसा न कहेऊं बरवानी। सदा काम के चेरे जानी ॥

भक्त शिरोमणि तुलसी दास ने भी इस शाश्वत मिलनवांछा का बड़ा ही सजीव चित्रण किया है। उनकी दृष्टि में भी 'सबके हृदय' में मदन की अभिलाषा मिलनोकुण्ठा, संयोगेच्छा शाश्वत है। वृक्षों की तरुण शाखाओं को निहार कर लतायें उनसे लिपटने के लिए झुक जाती हैं। सागर से मिलने के लिये ही सरिता बड़े वेग के साथ प्रवाहित हो रही है। ताल तलैयों में भी यह संगम व्यापार चलता रहता है। जहां जड़ पदार्थों का यह हाल है वहां सचेतन प्राणी की निरन्तर चलने वाली प्रणय-लीला का वर्णन कौन कर सकेगा ?'' [20]

विश्व के सभी क्रिया कलाप पारस्परिक सौन्दर्याकर्षण, संयोगेच्छा अथवा प्रजनन प्रवृत्ति के सहारे ही चल रहे हैं। संसार के सभी पदार्थ अपने युग्म के साथ संयुक्त होने के लिये विकल होकर अपने साथी की खोज में संलग्न हैं। प्रसिद्ध आंग्ल कवि विलियम शेली ने पुरुष और

प्रकृति के लीला विलास की अद्‌भुत रंगस्थली–विश्व के विराट् रंगमंच पर सतत् होने वाले प्रेम अभिनय निरन्तर मनाये जाने वाले मिलन महोत्सव का बड़ा ही मधुर चित्रण किया है। यहां सर्वत्र प्रतिपल प्रीति पर्व मनाया जा रहा है।

The fountains mingle with the river
And the rivers with the ocean.
The windows of heaven mix for ever
with a sweet emotion.
Nothing in the world is single,
All things by a law divine
In one another's is being and mingle.
why not i with thine ?
See the mountains kiss high heaven,
And the waves clasp one another,
No sister flower would be for given,
If it disduined brother,
And the sunlight clasps the earth
And the moonbeams kiss the sea :
what are all these kissings worth,
íf thou kiss not me ?

''निर्झर सरिताएं से और सरितायें समुद्र से जा मिलती है। व्योम बिहारी पवन एक मधुर भाव लिये हुये परस्पर मिले रहते हैं। इस संसार में कोई भी अकेला नहीं है। दैवी विधान ही कुछ ऐसा है कि सभी वस्तुयें एक शक्ति से मिलकर, उसमें एक–दूसरे से संयुक्त हो कर लीन हो जाती है। फिर क्यों नमें तुम से मिलूं ? पर्वत आकाश का आलिंगन करते हैं, समुद्र की लहरें एक दूसरे को चूम रही हैं। प्रत्येक पुष्प पारस्परिक प्रेम–पाश में आबद्ध है। सूर्य की किरणें धरती को चूम रही हैं और चन्द्रकलाएँ सागर को आलिंगन पाश में बाँधे हुए हैं। विश्व में चतुर्दिक् उमड़ती हुई यह मधुरिमा किस काम की, यदि तुम मेरा चुम्बन न करो।''[21]

सारांश यह है कि प्रेमी प्रेमिका गत पारस्परिक सौन्दर्याकर्षण, पारस्परिक संयोगेच्छा एवं

मधुर–मिलन की बलवती आकांक्षा ही संसार के सारे कार्यक्रम के प्रेरक तत्व हैं। काम–सिद्धान्त के प्रवर्त्तक फ्रायड ने भी संयोग–प्रवृत्ति का प्रतिपादन करते हुये बतलाया है कि संयोगेच्छा की यह शाश्वत प्रवृत्ति – सिर्फ विषम लिंगियों में ही नहीं दिखलाई पड़ती है, वरन् समलिंगी में भी चरितार्थ होती है। ऐसे अनेक दृष्टान्त हैं, जहाँ पुरुष स्त्री को छोड़कर पुरुष की ओर आकर्षित होते हैं और स्त्रियाँ पुरुषों का परित्यागकर स्त्रियों की ओर पुंभाव द्वारा आकृष्ट होती हैं। समलिंगियों के इस आकर्षण में भी दूसरे भाग द्वारा संयोग प्राप्त कर पूर्णत्व प्राप्त करने का आनन्द ही मुख्य लक्ष्य रहता है।''[22]

काम का प्रार्दुभाव : ''शरीर स्थिति हेतुत्वादाहारसधमाणो हि कामा: ।

फलभूताक्ष धर्मार्थयो: ।''

काम प्राणी–मात्र का मूल प्रेरक भाव है और इसका प्रार्दुभाव शरीर के साथ ही होता है। इसे अनंग इसीलिए कहा गया है कि यह सूक्ष्म रूप में समस्त प्राणियों में रमा हुआ है। काम जन्मजात वृत्ति है, इसीलिए इसकी शिक्षा के लिए किसी गुरु की आवश्यकता नहीं होती अपनी कान्ता के साथ रमणोपाय की शिक्षा देने के लिए पशु–पक्षियों का कोई गुरु नहीं होता।''[23] बहुत प्राचीन काल से ही जीवन के प्रबलतम मनोवेग–प्राणीमात्र की जन्मजात मौलिक वृत्ति–काम के सम्बन्ध में विद्वान् एवं दार्शनिक चिन्तन करते रहे हैं। जनश्रुति के अनुसार इस विषय के प्रथम पुरस्कर्ता महादेव के अनुचर नन्दिकेश्वर हैं। किन्तु इनका कोई शास्त्रीय साक्ष्य नहीं मिलता। कुछ लोगों ने उद्दालक ऋषि के पुत्र श्वेतकेतु को काम शास्त्र का प्रथम लेखक माना है। इनके अतिरिक्त इस विषय पर विचार करने वालों में वाभुव्य, चारायण, सुवर्णनाभ, घोटकमुख, गानदीप, गोणिकापुत्र, दत्तक, सुकुमार आदि उल्लेखनीय हैं। काम को सर्वप्रथम शास्त्रीय एवं मनोवैज्ञानिक पद्धति से व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत करने का श्रेय महर्षि वात्स्यायन को है। प्रसिद्ध चन्द्रगुप्त के राज्यकाल में इन्होंने एतदविषयक प्रसिद्ध ग्रन्थ 'काम सूत्र' की रचना की।

आधुनिक मनोवैज्ञानिकों के समान वात्स्यायन ने भी काम को सर्वाधिक व्यापक, प्राणी–मात्र के समस्त कार्य कलाप का उत्प्रेरक, जीवन का जन्मजात मौलिक भाव माना है। 'काम' की व्याख्या करते हुये उन्होंने बतलाया है कि ''काम ही प्रेम है, काम ही सुख है और काम ही दाम्पत्य आनन्द की प्राप्ति एवं सन्तुष्टि है। पंच ज्ञानेन्द्रियों के योग का नाम 'काम' हैं। इस योग में मस्तिष्क एवं हृदय (अन्तरात्मा) सहायक होते हैं। इस भोग में इन्द्रियों एवं भोग्य पदार्थ के बीच एक विशेष प्रकार का सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। इस सम्बन्ध में एक विशेष प्रकार के आनन्द की अनुभूति होती है। इसी आनन्दानुभूति का नाम 'काम' है।''[24]

''श्रोत्रत्वक् चक्षु: जिह्व घ्राणानामात्मसंयुंक्तेन

मनसाधिष्ठितांना स्वेषु स्वेषु विषयेण्वानु कूल्यत: प्रवृत्ति: काम: ।

आत्म संयुक्त मन द्वारा अधिष्ठित कान, त्वक्र, नेत्र, जिह्वा और नासिका की अपने-अपने विषय में अनुकूल प्रवृत्ति का नाम 'काम है ।'(25)

"स्पर्श विशेष विषयत्वस्याभिमानिक सुखानुविद्धा ।

फ लवत्यर्थ प्रतीति: प्राधान्यात् काम: ॥''

वात्स्यायन ने इसे ''सामान्य काम'' की संज्ञा दी है । उनके मतानुसार स्त्री या पुरुष के स्पर्श-विशेष को लक्ष्य करके अभिमानिक सुख से अनुविद्ध फलवान् विषय-प्रतीति ही 'प्रधान काम' है ।(26) न्याय शास्त्र के अनुसार 'काम' आत्मा के साथ सर्वदा विद्यमान रहने वाला एक नित्य मौलिक भाव है, क्योंकि आत्मा में इच्छा, राग, द्वेष आदि भाव निरन्तर विद्यमान रहते हैं ।

योग दर्शन में ''आत्मा काम वै:'' कहकर आत्मा के साथ काम के एकात्मभाव की उद्घोषणा की गई है । सामान्यत: जीवनेच्छा, इच्छा मात्र 'काम' है । जैसा पहले कहा जा चुका है, विशिष्ट अर्थ में-

''स्त्रीषु जातो मनुष्याणां स्त्रीणां च पुरुषेषु वा। परस्पर कृत: स्नेह: काम इत्यभिधीयते ॥''

स्त्री पुरुष के परस्पर कृत स्नेह को, भाव बन्धन को 'काम' कहते हैं ।''(27) प्राचीन वैदिक एवं औपनिषदिक ग्रन्थों में भी सर्वप्रथम 'काम' का ही प्रादुर्भाव बतलाया गया है ।

''क इदं कस्मा अदात् काम: कामायादात् ।

कामो दाता काम: प्रति ग्रहीता काम: समुद्र मा विवेश ।

कामेन त्वा प्रतिगृह्वामि कामैतत् ते ॥''

किसने यह किसको दिया है? काम ने काम को दिया है । काम ही दाता हे और काम ही प्रतिगृहीता है । काम ही समुद्र में प्रवेश करता है । हे काम । काम से मैं तुझे स्वीकार करता हूँ, क्योंकि यह सब तेरा ही है ।''(28) अन्यत्र कहा गया है कि -

''कामस्तदग्रे समवर्तत मन सोरेत: प्रथमं यदासीत् ।

स काम कामेन वृह्त्ता सयोनी रायस्पोषं यजमानाय धेहि ॥

''प्रारम्भ में काम था, जो मन का प्रथम वीर्य था । जगत् के आरम्भ में यही काम (इच्छाशक्ति) सक्रिय हुआ । इसी की प्रेरणा से जगत् की उत्पत्ति हुई ।''(29)

''त्वं काम सहसासि प्रतिष्ठितो विभुर्विभावा, सख आ सखीयते।''

''यह काम बल के साथ प्रतिष्ठित हुआ है। यह मित्र के समान आचरण करने वाले के लिये समर्थ और प्रभावशाली है।''(30) वृहदारण्यकोपनिषद में भी– ''अथो खल्बाहु: काममय एवाय पुरुष इति स यथाकामो भवति। ''काममय एवायं पुरुष: ''आदि वचनों द्वारा मानस में सर्वप्रथम काम के उद्भव की पुष्टि की गई है।''

काम यर्थाथ स्वरूप :

नाट्य शास्त्र के प्रणेता एवं रस सिद्धान्त के प्रवर्तक भरत मुनि ने श्रृंगार रस की व्याख्या करते हुये लिखा है कि–

''यत्किंचिल्लोके शुचिमेध्यमुज्जंवलं दर्शनीयं वा तच्छं गारेणोपमीयते।''

''लोक में जो कुछ पवित्र, उत्तम, उज्जवल एवं दर्शनीय है वह श्रृंगार रस है।''(31)

साहित्य दर्पणकार ने इसकी पुष्टि करते हुये लिखा है कि–

''श्रंग हि मन्मथोद्र भेदस्तदागमन हेतुक:।

उत्तम प्रकृति प्रायो रस: श्रृंगार इष्यते॥''

''काम के अंकुरित होने का कारण अधिकांश उत्तम प्रकृति से युक्त श्रृंगार रस है।''(32) इससे यह सिद्ध होता है कि मन्यथोद् भेद का मुख्य कारण हृदय की सकामता है यही मूक मानसिक प्रवृत्ति काम का यर्थाथ स्वरूप हे, जिनसे यह जीवन–चक्र, विश्व प्रपंच क्रियमाण है। नर नारी का पारस्परिक सहजाकर्षण, रमणेच्छा इसी मानसिक प्रवृत्ति का प्रतिफलन है, हृदय की सकामता की ही प्रक्रिया है। इसमें विश्व की सारी शुचिता, उज्जवलता, उत्तमता और दर्शनीयता का संयोग है।

''यह वह रहस्यमय शिव संकल्प है, जिस पर आत्मोसर्ग कर काम अनंग बन गया। और उसकी सहधर्मिणी रति ने स्त्री पुरुष को एक सूत्र में बांध दिया। दोनों की परस्पर सम्मिलनेच्छा स्वभाविक है– नियति का अनुल्लंघनीय विधान है। इसी से इसका आधार उत्तम प्रकृति से युक्त श्रृंगार रस है।''(33)

"The purest, noblest and most unselfish aspirations and purposes derive their strength and being from the sweet influences which have their beginning and continuance in this power which draws men and women together in happy and holy wedlock. By these sweet influences the most perfect natures are moulded and ennobled. By them are performed the

strongest ties that hold humanity to the accomplishments of every high and holy endeavour".

''स्त्री और पुरुष जिस शक्ति की प्रेरणा से आनन्दमय पावन परिणय सूत्र में बंध जाते हैं, वहीं इन मधुर प्रभावों की स्थिति और उत्पत्ति का कारण है, जिनसे सर्वाधिक पवित्र-भव्य एवं निःस्वार्थ भावनाओं तथा कर्मों को शक्ति और अस्तित्व मिलता है। इन मधुर प्रभावों द्वारा पूर्ण आदर्श प्रकृतियों का परिष्करण होता है तथा उनमें भव्यता आती है। इनसे उन अमोघ बंधनों की सृष्टि होती है,जो प्रत्येक विराट एवं पवित्र महत्वाकांक्षा की पूर्ति के निमित्त मनुष्यता को बांधे रहते हैं।''[34]तात्पर्य यह है कि काम का यथार्थ स्वरूप भोग विलास का सम्मोहन और नग्न वासनाओं की उन्मादना नहीं हैं, अपितु हृदय की सकामता जन्य अथवा मानसिक प्रवृत्ति जन्य वह पवित्र उत्तम, उज्ज्वल और आनन्दमय मधुर प्रभाव है, जो संसार की सृजन-शक्ति का उत्स है।

काम की व्यापकता -

यह सम्पूर्ण सृष्टि काममय हैं। यह संसार गोचर, अगोचर सभी उस व्यापक कामदेव के ही क्रिया कलाप हैं। काम ही कर्त्ता है और वही क्रिया भी है। वह दाता भी है और प्रतिगृहीता भी है। जो कुछ हैं सब काम के ही रूप है, क्योंकि यह सृष्टि ''काम'' से ही चल रही है इसीलिये वेद में भी कहा गया है कि-

''कामो दाता कामः प्रतिगृहीता कामः समुद्र मा-विवेश

कामेन त्वा प्रति गृह्णामि कामेतत् ते।''

''हे काम ! मैं काम से ही तुझे स्वीकार करता हूं क्योंकि यह सब तेरा ही है।''[35] अथर्ववेद में काम की व्यापकता की उद्घोषणा करते हुये कहा गया है कि -

''एवमेष आचार सिद्धो हृद्योज्ज्वलवेषात्मकत्वाच्छृं गारो रसः।''

''हे काम ! तू सर्वप्रथम उत्पन्न होकर देव, पितर और मर्त्य सबको प्राप्त हुआ, तुमसे कोई बचा नहीं, इसलिये इस विश्व में तू व्यापक और सबसे महान है। मैं तुम्हें नमस्कार करता हूं।''[36]

भरत मुनि ने भी लोक में जो कुछ पवित्र, उत्तम उज्ज्वल और दर्शनीय है उसे श्रृंगार रस अर्थात काम के अन्तर्गत माना है। अपने मन्तव्य को स्पष्ट करते हुये उन्होंने लिखा हैं कि -

''कामो जज्ञे प्रथमो नैनं देवा

आपुः पितरो न मर्त्याः।

ततस्त्वमसि ज्यायान् विश्वहामहांस्तस्मै ते, काम नम इत् कृष्णोमि ॥''

'' आचार-सिद्ध हृदयग्राही और उज्ज्वलवेशात्मक होने के कारण श्रृंगार को रस कहते हैं।''(37)

श्रीमद्भगवद् गीता में भगवान् कृष्ण ने कहा है कि-

''धर्माविरुद्धोभूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ।''

''मैं सब भूतों में धर्म के अविरुद्ध काम हूं।''(38)

''यद्र यद्धि क्रियते कर्म.......।''

''मनुस्मृतिकार ने तो सभी कर्मों को काम की चेष्टा कहकर स्पष्ट शब्दों में काम की व्यापकता को स्वीकार किया है।(39) काम शास्त्र के प्रणेता वात्स्यायन ने लैगिक सुख में ही काम को सीमित न कर उसके अन्तर्गत जीवन के सम्पूर्ण कलापक्ष को अर्न्तभूत करके उसके क्षेत्र को बड़ा ही व्यापक बना दिया है। इतना ही नहीं, उन्होंने कामात् सुखम् प्रजोत्पत्तिश्च'' कहकर काम को धर्म और अर्थ से संबद्ध कर दिया है। और इस प्रकार काम को जीवन के व्यापक परिवेश में उपस्थित किया है। कामसूत्र के प्रथम अध्याय में ही अपने मन्तव्य को स्पष्ट करते हुये वात्स्यायन ने लिखा है कि-

''धर्ममर्थ च कामं च प्रत्ययं लोकमेव च।

पश्यत्येतस्य तत्वज्ञो न च रागात्प्रवर्तते ॥53॥

''इस शास्त्र का ज्ञाता धर्म, अर्थ, काम तथा अन्य लोगों के विश्वास पर ध्यान कर कार्य करेगा, राग के वश होकर नहीं।''(40)

"पुरुष: परमेशान: प्रकृति: परमेश्वरी।

शंकर; पुरुषा: सर्वे स्त्रिय: सर्वा महेश्वरी ॥

विषयी भगवानीशो विषय: परमेश्वरी।

सर्वभूतात्मभूताख्या त्रिलिंगा विश्वरुपिणी ॥

कामस्यैषाहि सा मूर्ति: ब्रह्मा विष्णोस्वरात्मिका।

भूता व वर्त्तमाना अनित्या वापि सर्वश: ॥

कामात् सर्वे प्रवत्तन्ते लीयन्ते बुद्धि मागता:।

काम: सर्वमय: पुंसां स्वसंकल्प समुद्भव ॥

न कर्तु शक्यते यच्च परचानु परचयत्।

आनन्द मृतं दिव्यं परं ब्रह्मा तदुच्यते ॥

परमात्मेति चापयुक्तं विकारतः कामसंज्ञितः ।

सुप्तानां जागृतां वा सर्वेषां यो हृदि स्थितः ॥

नाना विधानि कर्माणि कुरूते ब्रह्मा तन्महत् ।

निराकार महाघोर स्वयंवेद्यं परध्रवम् ॥

त्रिवृद ब्रह्मा ततो विश्वं कामश्चेच्छात्रयंकृतम् ।

स्यन्दौ अपरशक्यौ म युक्त्वा कामसंकल्प एव हि। (41)

''इतना ही नहीं,काम में संयम, सात्विकता एवं सद्गुणों का समावेश करके उसके उज्ञवल रूप को ही नहीं उपस्थित किया गया है, वरन उसे मोक्ष प्राप्त करने का एक साधन भी माना गया है। यहां तक कि ब्रह्म, विष्णु और महेश भी कामदेव के ही विभिन्न स्वरूप बतलाये गये हैं। संसार के सभी पदार्थों का उद्भव काम से ही होता है और पुन; सभी उसी में विलीन भी हो जाते हैं।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से ''काम'' जीवन की मौलिक वृत्ति एवं अनिवार्य तत्व है और एक विशेष क्रम के अन्तर्गत फूल पत्ते, लतावल्लरी, पेड़ पौधे, पशु-पक्षी आदि प्रत्येक पदार्थ में काम भावना विद्यमान रहती है, जो विशिष्ट सामयिक परिस्थितियों में उद्दीप्त होती रहती है। पेड़ पौधों में फूल और फल लगने, सूर्य चन्द्र के उदय और अस्त होने आदि क्रियाओं के मूल में यथासमय उद्दीप्त होने वाली काम भावना का ही चमत्कार और इसकी व्यापकता दृष्टिगतहोती है।''

Throughout the vegetable and animal worlds the sexual functions are periodic from The usually annual Period of flowering in plants with its play of operen cell and germ cell, and Consequently seed production, upto the monthly effervescence of the generative organism in woman, seeking not with out the shedding of blood for the qualification of its reproductive function from first to last, we find unfalling evidence of the Periodicty of sex. At first the sun and then as some have thought the moon, have marked throughout a hythmic impress on the Phenomena of Sex.(42)

काम का प्रभाव :

काम का प्रभाव अत्यन्त व्यापक है। जड़ चेतन सब में कामोद्भव के चमत्कार व्यापक

रूप में दृष्टिगोचर होते हैं। मानव और मानवेतर जगत में सर्वत्र काम के प्रभाव की विजय दुन्दुभी सुनायी पड़ती है। ललितकला के विविध रूपों एवं अनेकानेक भाव लोकों की सृष्टि करके मनुष्य अपने हृदय की सकामता को ही चरितार्थ करता है और उनमें अनुरक्त होकर अपने जीवन को सरस, मधुर एवं आनन्दमय बनाता है। काम के प्रभाव से ही मुग्ध होकर पशु–पक्षियों के जोड़े परस्पर सौन्दयाकर्षण के मधुर बन्धन मे बंधकर एक–दूसरे की ओर आकृष्ट होते हैं, एक दूसरे का मुख चूमते हैं और परस्पर लेहन करते हुये नानाविध कामक्रीड़ाओ में प्रवृत्त होते हैं। राग–रंजित ऊषा को दिनमणि की कनक रश्मियों से मण्डित देखकर प्रमुदित विंहगों के कलकण्ठ से स्वर्गीय संगीत की स्वर लहरियां थिरकने लग जाती हैं, खिले हुए कुसुमों को देखकर भ्रमरो की टोलियां उमड़ पड़ती हैं, कुसुमों को देखकर भ्रमरो की टोलियां उमड़ पड़ती हैं, बसन्त के वैभव विलास को देखकर कोयल रात–रात भर हूक भरती रहती है, आकाश में उमड़ती मेघमाला को देखकर मयूर मस्त होकर नर्त्तन करने लग जाता है और वीणा की स्वर माधुरी से मुग्ध होकर मृग व्याध के बाण का शिकार बन जाता है। आखिर ये सभी सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान् कामदेव के प्रभाव के ही परिणाम तो है। इतना ही क्यों, प्राकृतिक जड़ पदार्थ में भी काम के प्रभाव के मधुर दृश्य दिखलाई पड़ते हैं। मूलशक्ति प्रेमकला की लीला सर्वत्र चरितार्थ हो रही हैं। सौन्दर्य, सौकुमार्य, प्रेम और सम्मोहन के अधिष्ठाता, योगियों के चिर–आराध्य कामदेव के प्रभाव के सामने देव, दनुज, मनुज, जड़ और चेतन सभी विनत हैं। काम के व्यापक प्रभाव का उल्लेख करते हुये गोस्वामी तुलसीदास ने स्पष्टत: लिखा है कि पुष्पधन्वा काम ने सभी लोकों को अपना वशवर्ती बना लिया है। काम के मोह ने किस किस को नहीं अंधा बना दिया ? जग में ऐसा कोन है जिसको काम ने नहीं नचाया ?''

''काम कुसुम धनु सायक लीन्हें। सकल भुवन अपने बस कीन्हे ॥''[43]

सुर प्रेरित कामदेव ने भगवान शंकर की समाधि भंग करने के लिये अपनी पूरी शक्ति का विस्तार किया था, जिसके परिणाम स्वरूप जड़ चेतन सब में काम–कला का अद्‌भुत उद्वेलन होने लगा। काव्य ग्रन्थों में इस प्रसंग का बड़ा ही उत्कृष्ट वर्णन किया गया है। जिससे काम की दुर्निवार गति, उसके अप्रतिहत आवेग एवं व्यापक प्रभाव का परिचय मिलता है।

महाकवि कालिदास ने कुमार संभव में उस मनोहर प्रसंग का वर्णन करते हुये लिखा है कि – **''मधुद्विरेफ: कुसुमैक पात्रे पपौ प्रियाम् स्वामानुर्क्तमान: ।**

श्रृंगेण च स्पर्शनिमीलित्ताक्षीम् मृगीमकएड्‌यत कृष्णसार: ॥36॥

ददौ रसात् पंकजरेणुगन्धि गजायगरण्ड्षेजलम् करेणु: ।

अर्द्धोपभुक्तेन बिसेन जायाम् संभावयामास रथागनामा ॥37॥

पर्याप्त पुष्पस्तषक स्तनाभ्य: स्फुरत् प्रवालौष्ठ मनोहराभ्य: ।

लता वधूभ्यस्तखोऽप्यवायुर्व्रिनम्रशाखा भुजबंध नानि ॥''

''भ्रमरगण अपनी-अपनी प्रिया का अनुगामी बनकर पुष्प पात्र में मधु पान करने लगे, कृष्णसार मृग अपने सींगों से हरिणियों के शरीर को सहलाने लगे, जिनके मधुर स्पर्श-सुख से विमोहित होकर हरिणियों ने अपनी आंखें बंद कर लीं। हाथियों ने पद्म-पराग से सुरभित सरोवर-सललि को अपने करो द्वारा हथिनियों को पिलाया और चक्रवाक ने कमल-नाल का एक अंश लेकर आधा स्वयं खाया और अर्द्ध भाग अपनी प्रिया चक्रवाकी को खिलाया। इतना ही नहीं, प्रभूत पुष्प-स्तवक-स्तन और प्रबालोपम अधर-पल्लव से सुशोषित लता-वधूटियां भी वायु से विनत शाखा रूपी बाहु के मधुर पाश में पादप-पुंज को कसकर आलिंगन करने लग गयी।''(44) भक्त शिरोमणि तुलसी दास ने भी इस मधुर, मादक प्रसंग का बड़ा ही मार्मिक चित्रण किया है।

जे सजीव जग अचर चर, नारि पुरुष अस नाम ।

ते निज निज मरजाद तजि, भय सकल बस काम ॥

सबके हृदय मदन अभिलाषा । लता निहारि नवहिं तरु साखा ॥

नदी उमंगि अंबुधि कहुं धाई । संगम करहिं तलाब तलाई ॥

जहं असि दसा जड़न्ह के बरनी । को कहि सकइ सचेतन करनी ॥

पशु पक्षी नभ जल थल चारी । भय काम बस समय बिसारी ॥

मदन अंध व्याकुल सब लोका । निसि दिन नहिं अकलोकहिं कोका॥

देव दनुज नर किन्नर व्याला । प्रेत पिषाच भूत बेताला ॥

इन्ह के दसा न कहेउ बखानी । सदा काम के चेरे जानी ॥

सिद्ध, विरक्त, महामुनि, जोगी । तेहि कामबस भये वियोगी ॥

भये कामबस जोगीस तापस पावरन्हि की को कहै ।

देखहिं चराचर नारिमय जे ब्रहमय देखत रहै ।

अबला विलोकहिं पुरुषमय जगु पुरुष सब अबलामयं

दुइ दण्ड भरि ब्रह्माण्ड भीतर कामकृत कौतुक अयं ॥

धरी न कोइ धीर, सबके मन मनसिज हरे ।

जो राखे रघुवीर, ते उबरै तेहि काल महुं ॥''

''काम के व्यापक प्रभाव एवं उद्दाम शक्ति विस्तार के कारण–चर–अचर सब में संगमेच्छा प्रबलतम रूप से प्रस्फुटित हो उठी। सबके हृदय में ''मदन–अभिलाषा'' जाग्रत हो अनेक कामरूपों, केलि–क्रीड़ाओं में चरितार्थ होने लग गयी। समुद्र से मिलने के लिये सरितायें उमगती हुई प्रभावित होने लगीं। ताल तलैयों का संगम होने लगा। पशु, पक्षी, नभचर, जलचर और पृथ्वी के सभी जीव जन्तु समय की मर्यादा को तोड़कर काम–विमुग्ध हो गये। सारे लोक मदनांध हो व्याकुल हो उठे और अपनी–अपनी सुध–बुध खो बैठे। इतना ही नहीं जो सिद्ध, महामुनि, विरक्त, योगेश्वर, तपस्वी विश्व को अहममय मानते थे, वे अब काम विमोहित होकर उसे नारीमय समझने लगे। स्त्रियां जग को पुरुषमय समझने लग गयीं तथा पुरुषगण संसार को नारीमय मानने लग गये। इस प्रकार सबके मन को मथने वाले मनसिज ने सबको काम विमुग्ध करके विचलित कर दिया।(45)

सारांश यह है कि इस संसार में जो कुछ है, सब ज्ञात और अज्ञात एवं दृश्य–अदृश्य रूप से एक–दूसरे के साथ मधुर भाव बंधन में आबद्ध है एवं एक दूसरे के परस्पर सौन्दर्याकर्षण, सम्मिलन आदि नानाविध प्रेम व्यापारों द्वारा काम का व्यापक प्रभाव ही सर्वत्र चरितार्थ हो रहा है।''(47)

काम रति मनुष्य की नैसर्गिक इच्छा है–

मनुष्य की इच्छाओं का कोई अन्त नहीं हैं। किन्तु सामान्यत: वे सात कोटियों में विभक्त की जा सकती है –

1. दीर्घ जीवी होने की इच्छा
2. रति श्रृंगार और आनन्द की इच्छा
3. जीवन यापन– विषयक आवश्यक उपकरणों को प्राप्त करने की इच्छा
4. यश और सम्मान की इच्छा
5. विद्या, ज्ञान, विज्ञान प्राप्त करने की इच्छा
6. अपने प्रति न्याय की इच्छा
7. मोक्ष प्राप्ति की इच्छा

फ्रीनालॉजी के अनुसार मस्तिष्क में ज्ञान, मान, अर्थ, काम, आयु, विज्ञान और न्याय धर्म के प्रमुख सात स्थान बतलाये गये हैं। अन्य स्थान तो इन्हीं के अन्तर्गत हैं। इससे स्पष्ट है कि ये इच्छायें नैसर्गिक है। कामेच्छ मन में बीज–रूप से है। सबसे पहले इसी की उत्पत्ति हुई। अर्थववेद में कहा गया है कि–''स काम कामेन वृहता सयोनी रायस्पोषं यजभनाथ धेहि।''

''हे काम ! तूने बहुत बड़े काम का विस्तार कर दिया है। अत: अब उसकी पूर्ति के लिये धन दे।[47] इस प्रकार मन और रेत अर्थात् रति ही काम का मूल है। इस काम से ही विविध कामनायें उत्पन्न होती हैं। मनुष्य विश्व के अन्य विषयों से भले ही अपना मन हटा लें,- ***''स्त्रीषु जातो मनुष्याणा स्त्रीणां च पुरुषेषु वा।''***
पर स्त्री से पुरुष को और पुरुष से स्त्री को अपना मन हटाना बड़ा ही दुस्कर है।''

''परस्पर कृत; स्नेह: काम इव्यभिधीयते।''

''स्त्रियों में पुरुषों का और पुरुषों में स्त्रियों का जो परस्पर स्वाभाविक स्नेह है, उसी को काम कहते हैं।[48] स्त्री और पुरुष के इस पारस्परिक स्नेह व्यापार और सहज स्वाभाविक आकर्षण के दो मुख्य कारण हैं। पहला कारण यह है कि ''मनुष्य अनन्त जन्म जन्मान्तरों से अनेक योनियों में स्त्री और पुरुष शक्ति के सम्मेलन द्वारा ही पैदा हुआ और उसी सम्मेलन के द्वारा अन्य जीवों को पैदा करता हुआ चला आ रहा है। दूसरा कारण यह है कि वीर्य में पड़े हुये जीवों के भोग जीवों के बाहर निकलने और नवीन शरीर धारण करने की प्रेरणा देते हैं। इन्हीं दोनों कारणों से स्त्री पुरुषों में एक-दूसरे के प्रति विलक्षण आकर्षण होता है और मनुष्य रति क्रिया के लिये विवश होता है।''[49]

काम-सिद्धि-

काम सिद्धान्त के तात्विक विवेचक वात्स्यायन ने काम सिद्धि को जीवन के अनिवार्य तत्व के रूप में स्वीकार किया है। जिस प्रकार क्षुधा-निवृत्ति के लिये भोजनोपार्जन करना जीवन की अनिवार्य आवश्यकता है, उसी प्रकार प्राणियों के लिये काम की सिद्धि भी परमावश्यक है। पंच ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त सुख, रूप, रस, गंध शब्द और स्पर्श काम की सिद्धि के सहायक उपकरण हैं। काम सिद्धि का शीर्षफल स्त्री-पुरुष समागम से प्राप्त आनन्द हैं। स्त्री पुरुष-संयोग जन्य सुख अन्य लौकिक अथवा वैषयिक सुखों में है। सर्वाधिक सम्मोहनकारी, सर्वोत्कृष्ट एवं मधुरतम है। काम की सिद्धि के लिये सौन्दर्य, यौवन, स्वास्थ्य, विद्या आदि गुण अपेक्षित हैं। इसके अभाव में लोक कल्याणकारी सृजनात्मक प्रेरणायें ही कुण्ठित हो जायेंगी और जगत के सारे कर्मकलाप ठप्प पड़ जायेंगे।

काम के द्विविध रूप : वासनामूलक और परमार्थ मूलक

काम के द्विविध रूप निम्न हैं- वासना-मूलक और परमार्थ मूलक। इन्हीं को दूसरे शब्दों में क्रमश: वासना और प्रेम की भी संज्ञा दी गई है।

''नाना स्वार्थों विविध सुख की वासना मध्य डूबा।

आवेगों से बलित ममतावान है मोह होता ॥

काम जब वैषयिक सुख: निम्न वासना का रूप ग्रहण कर लेता है तब वह निम्न स्तर का हो जाता है। ऐसी दसा में वह प्राणियों को क्षुद्र स्वार्थों की पूर्ति तथा अध:पतन के मार्ग पर ही अग्रसर करता है। यह निकृष्ट काम दशा वस्तुत: प्राणियों की मोह दशा हैं जिसमें व्यक्ति नाना स्वार्थों एवं विविध सुखों की वासना के बीच निमग्न हो जाता है। [50] और उसका अन्तर क्षुद्र विषयोपभोग के आवेगों से अहर्निश आन्दोलित होता रहता है। इस निकृष्ट काम-दशा में दूसरे पक्ष के शोषण (Squeeze out) करने की प्रवृत्ति ही प्रमुख रहती है। इसके परिणाम स्वरूप विषयासक्ति, क्रोध, घृणा, द्वेष, प्रतिशोध, संदेह, भय, दम्भ, अहंवादिता, उग्रता स्वार्थान्धता आदि निकृष्ट भावों की उत्पत्ति होती है, जो व्यक्ति और समाज के विकास के लिये घातक हैं। काम का दूसरा रूप परमार्थ मूलक है। यह काम का उत्कृष्ट रूप है, जिसमें काम पुरुषार्थ का रूप धारण कर मनुष्य को उर्ध्वमुख करता है तथा विकास के पथ पर अग्रसर होने की नित्य एवं भव्य प्रेरणा प्रदान करता है।

काम-वृत्ति का स्थायी भाव रति है तथा उसका व्यवहारिक रूप प्रेम कहलाता है। प्रेम एक स्थिर मनोदशा है जिसमें वात्सल्य भाव (Tender feeling), काम भाव (Lust) आत्मसमर्पण (submission) तथा आत्म-प्रतिष्ठा (Self Assertion) का मधुर सम्मिश्रण रहता है। काम-भाव में आत्म समर्पण आदि सुकुमार भावों के मधुर संयोग से ही प्रेम का निर्माण होता है।

''सर्वे रसाश्च भावाश्च तरगा इव वारिधौ।

उन्मज्जन्ति निमज्जन्ति यत्र स प्रेम संज्ञक: ॥''

''जिस प्रकार समुद्र में अगणित तरंगे उठती है एवं लीन होती रहती है उसी प्रकार जहां सभी रस एवं भाव उन्मज्जित निमज्जित होते रहते हैं, उसी को प्रेम कहते हैं।''[51]

पात्र-भेद से इसी प्रेम के तीन रूप हो जाते हैं। छोटों के प्रति स्नेहाकर्षण वात्सल्य भाव है। समान लोगों के प्रति अर्थात् स्त्री-पुरुष के पारस्परिक स्नेहाकर्षण को दाम्पत्य भाव कहा जाता है तथा गुरुजनों के प्रति होने वाले स्नेहाकर्षण को दैन्य एवं आत्म-समर्पण-भाव पूरित होने के कारण पूज्य अथवा श्रद्धा-भाव की संज्ञा दी जाती है। उच्च स्तर पर पहुंच जाने पर यही पूज्य भाव भक्ति में परिणत हो जाता है। लौकिक प्रेम जब अलौकिक प्रेम का रूप धारण कर लेता है, जीवोन्मुखी प्रेम जब ईश्वररोन्मुख प्रेम में परिणत हो जाता है तब रागमयी भक्ति भावना का उदय होता है। दाम्पत्य प्रेम में प्रेमभाव का पूर्ण स्फुरण तथा कामभाव का उन्नयन हो जाता है। इसमें स्वार्थ की गौणता तथा परार्थ की प्रधानता रहती है। इस प्रकार मनुष्य के

हृदय में कोमल भावनाओं का उदय होता है, जिसकी चरम परिणति मधुर रस साधना में होती है।

''निष्कामी है प्रणय शुचिता मूर्ति है सात्विकी है।

होती सीमा चरम इसमें आत्मोत्सर्ग की है ॥''

''काम की उत्कृष्ट दशा को प्रेम दशा कहते हैं, जिसमें निष्कामता, सात्विकता शुचिता एवं आत्मोसर्ग की चरम सीमा होती है।''(52) इसमें शारीरिक पक्ष की गौणता तथा मानसिक पक्ष की प्रधानता होती है। काम के इस उत्कृष्ट रूप में लौकिक प्रेम लोकोत्तर प्रेम में रूपान्तिरत हो जाताहै। वैषयिक सुख के निम्न धरातल से ऊपर उठकर व्यक्ति जैसे-जैसे पारमार्थिक सुख के सोपान पर आरुढ़ होता जाता है, वैसे-वैसे उसके काम-भाव के साथ-बौद्धिक तत्व के समावेश हो जाने से उसका उन्नयन होता जाता है। अन्ततः व्यक्ति के काम-मनोवेग का पूर्ण उन्नयन हो जाने पर उसके हृदय में सात्विक एवं कोमल भावों का प्रादुर्भाव हो जाता है। प्रेम में इन्हीं सात्विक एवं कोमल मनोभावों का प्राणमय प्रकाशन होता है जो उत्तरोत्तर विकसित होते हुये परम प्रेम स्वरूपा भक्ति में रूपायित हो उठता है।

पाश्चात्य मानस-शास्त्र के तीन संस्थान-

पाश्चात्य मानस शास्त्र का विकास तीन संस्थाओं में हुआ है। प्रथम संस्थान के प्रर्वत्तक विद्वान डा. वाट्सन जिन्होंने मानव मन के अस्तित्व को न स्वीकार कर मानव व्यापारों को ही अपना मुख्य प्रतिपाद्य माना है। डॉ. वाट्सन और उनके अनुयायियों की दृष्टि में ''मनुष्य के सारे व्यापार यंत्रवत् होते रहते हैं। सांसारिक विषयों का उपभोग ही जीवन का लक्ष्य है तथा ईश्वर केवल आलसी मनुष्यों द्वारा उत्पन्न भ्रम हैं।'' ऐसी स्थिति में मधुर रस के स्वरूप के विवेचन की द्दष्टि से यह विचारधारा सर्वथा निरर्थक है।

पाश्चात्य मानस-शास्त्र के द्वितीय संस्थान के प्रर्वतक विद्वान प्रसिद्ध मनोविज्ञानवेत्ता डा. सिगमण्ड फ्रायड, एडलर और युंग है। इन तीनों के सिद्धान्तों में यद्यपि थोड़ी बहुत विषमता द्दष्टिगत होती है तथापि इनके सिद्धान्त मूलत; इन मन की अचेतन अवस्था पर ही आधारित है। इनके मतानुसार काम वृत्ति सभी वृत्तियों का मूल है तथा धर्म, कला आदि में इसी का उन्नयन हो जाता है। अर्थात् ईश्वर प्रेम (God Love) यौन-प्रेम (Sex Love) का ही परिष्कृत रूप है। इस प्रकार ईश्वर के प्रति जो मधुरोपसना की जाती है वह अवदमित काम भावना का ही उदात्त रूप है। पाश्चात्य मानस शास्त्र के तीसरे संस्थान के प्रर्वतक समाजशास्त्री विद्वान विलियम मैग्डुगल है। इनके मतानुसार समाजप्रिय मनुष्य के सारे व्यापारों

में सहेतुक प्रेरणा का अत्यधिक महत्व है। इसी के आधार पर इस कोटि के विद्वानों ने मनुष्य की सहज प्रेरणा (Instinct) भावना (Emotion) और स्थिर वृत्ति की विशद विवेचना की हैं। विलियम मैग्डुगल ने फ्रायड के समान कामवृत्ति की प्रमुखता को स्वीकार करते हुये भी सभी प्रकार के प्रेम-संबंधों में काम भाव (Sex Feeling) की मान्यता को अस्वीकार किया है।

"I have already indicated the fallacy of one piece of reasoning advanced in support of the freudian view, namely the acceptance of all manifestation of Personal love or affection as evidence of Sexuality for this as was said. Is due to the confusion of the sexual instinct with the sentiment of love. ''उनकी दृष्टि में काम भाव और प्रेम की स्थिर वृत्ति को एक मान लेने की भ्रांति के कारण ही सारे प्रेम-संबंधों में काम भाव को स्वीकार किया जाता रहा है।(53)

सामाजिक कल्याण तथा उच्च संस्कृति की दृष्टि से काम भाव का उदात्तीकरण अति आवश्यक है।(54) विलियम मैग्डुगल के सिद्धान्त की विशेषता यह है कि उसने अन्य वृत्तियों के साथ-साथ भक्ति-वृत्ति (Religious Sentiments) पर भी विचार किया है तथा मानवी सत्ता को केवल अचेतन अवस्था तक ही परिसीमित न करके सामाजिक दृष्टि से भी उसका विवेचन किया है। अतएव ईश्वर की मधुरोपसना की दृष्टि से इसके सिद्धान्तों का विशेष महत्व है।

मनोवैज्ञानिकों के काम-सिद्धान्त-विषयक तीन मत-

आधुनिक मनोवैज्ञानिकों के काम-सिद्धान्त-विषयक मत तीन प्रकार के हैं। सबसे पहला है फ्रायड का मत, जो काम को जीवन की मूल प्रवृत्ति मानते हुये लैंगिकता अथवा यौन-भावना पर आधारित है। दूसरा मत है एडलर का, जो हीन-भाव अथवा क्षति-पूर्ति को लेकर चलता है। तीसरा है युंग का सिद्धान्त, जो उक्त दोनों को जीवनेच्छा या स्वत्वरक्षा, अस्मिता के पोषण की शाखायें मानता हुआ जीवनेच्छा का मूल मानता है। इन तीन सिद्धान्तों में कोई मौलिक अन्तर नहीं है, क्योंकि तीनों सिद्धान्त राग, आकर्षण, संयोगच्छा अथवा स्वत्व-रक्षा पर आधारित है और ये सभी प्रेम के ही व्यापार हैं। मनोविश्लेषण शास्त्र के अनुसार प्रेम आत्म रक्षा का ही रूप है। उसमें अपूर्ण की पूर्णता का भाव सन्निहित है। यौन-आकर्षण में भी अपूर्ण द्वारा पूर्णता प्राप्त करने का ही प्रयास होता है। स्त्री और पुरुष के पारस्परिक आर्कषण का कारण है एक पिण्ड में दो योनियों का विकास। पुरुष में स्त्री के और स्त्री में पुरुष के अभाव की पूर्ति हो जाती है। यही नर-नारी के नित्य आकर्षण का मूल कारण है।

फ्रायड का काम सिद्धान्त और भक्ति भाव-

अचेतन-मन के विशद एवं गंभीर अध्ययन तथा कामवृत्ति को जीवन की मूलवृत्ति सिद्ध करने के कारण मनोविज्ञान जगत में सिगमण्ड फ्रायड का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। फ्रायड के अनुसार मन के तीन विभाग हैं चेतन (Conscious) पूर्व चेतन (Preconscious) और अचेतन (Unconscious)। मन के इन तीन विभागों में से फ्रायड ने अचेतन मन को बड़ा महत्वपूर्ण माना है, क्योंकि उसकी दृष्टि में मनुष्य के चेतन मन की समस्त भावनायें किसी न किसी रूप से अचेतन मन की भावनाओं द्वारा नियंत्रित एवं परिचालित होती रहती है। फ्रायड के अनुसार मानव मन में विभिन्न प्रकार की इच्छाओं एवं प्रेरणाओं को उत्पन्न करने वाली मूल शक्ति कामवृत्ति (Libido) है जो अचेतन मन में विद्यमान रहती है। यह कामवृत्ति या राग-क्षुधा आदि सहज वृत्तियों के समान मूलत: नैसर्गिक है। जिस प्रकार पोषण की सहज वृत्ति क्षुधा द्वारा अपनी अभिव्यक्ति करती है उसी प्रकार यह नैसर्गिक यौन वृत्ति भी सदा अपनी अभिव्यक्ति करती रहती है।[55] सृष्टि विधान में इस यौन वृत्ति की ही प्रधानता है। इसी आदि से प्रेरित एक ने अनेक रूपों में अपना आत्म विस्तार किया है।

मनुष्य चेतन एवं सामाजिक प्राणी है। अत; वह अनुचित इच्छाओं का विरोध करके लिबडो द्वारा प्राप्त शक्ति का प्रयोग कला, भक्तिभाव अथवा अन्य श्रेष्ठ दिशाओं में उच्चतर कार्यों के लिये करता है। इसी को फ्रायड ने कामभाव के उन्नयन या उदात्तीकरण की संज्ञा दी है जिसके लिये नैसर्गिक वृत्तियों के निरोध या दमन को वह व्यक्ति के स्वास्थ्य के लिये श्रेयस्कर एवं अनुचित मानता है।''[56]

वात्स्यायन आदि प्राचीन भारतीय मनीषियों के समान पाश्चात्य मनोविज्ञान वेत्ताओं ने भी कामवासना को जन्मजात माना है तथा जीवन की इस मूल वासना की व्याख्या कई प्रकार से की है। फ्रायड के मतानुसार जीवन के समस्त व्यापारों को नियंत्रित एवं परिचालित करने वाली कामवृत्ति सामान्यत: चार रुपों में चरितार्थ होती है- आत्म काम (Autoerotism) अर्थात् अपने आप के प्रति प्रेम, मातृकाम (Qedipus Complex) अर्थात पुत्र का अपनी माता के प्रति कामुक प्रेम अथवा पितृकाम (Electra-Complex) अर्थात् पुत्री का अपने पिता के प्रति समकाम (Home Sexual) अर्थात पुरुष का पुरुष के प्रति या स्त्री का स्त्री के प्रति कामुक प्रेम एवं विषमकाम (Hetro Sexual) अर्थात नर का नारी के प्रति और नारी का नर के प्रति कामुक प्रेम। इस प्रकार मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन ही काम वासना से आच्छादित माना गया है। फलत: फ्रायड की दृष्टि में प्रेम भाव या कामभाव में कोई अन्तर नहीं है। दोनों में यदि थोड़ा अन्तर माना भी जा सकता है तो यही कि प्रेम में यौन आवेगों के आधार भूत

शारीरिक या एन्द्रिक पहलू की आवश्यकताओं को छोड़कर या कुछ काल के लिये भुलाकर उसके मानसिक पहलू पर ही जोर दिया जाता है।''[57] बच्चों में क्षुधावृत्ति के समान यौनभावना या कामवृत्ति जन्मजात होती है। मैथुन अथवा प्रजनन की वृत्ति (Pairing, Mating or Reproduction) प्राणि मात्र की मूल वृत्तियों में एक प्रधान वृत्ति है। अतएव मैथुन वृत्ति से संबदध मनोवेग काम (Lust) एक मौलिक मनोवेग (Primary Emotions) है।

फ्रायड के मतानुसार- "Sexuality is a means or restoring the best sense of Union with the mother for sexual intrecourse and suckling are alike and Unique in this respect that neither should there be any difference or conflict of interest between the Parents."

''बालक का स्तन चूसना, अंगूठा चूसना आदि क्रियायें बाल कामभाव की ही परिचायिका है। मनुष्य में तीन चार वर्ष की अवस्था में ही मैथुन-मनोवेग का उदय होता है, जो यौवन काल में अत्यधिक उदग्र हो जाता है। इसी कामभाव से उत्प्रेरित हो कर बालक अपनी माता से प्रेम करता है। आगे चलकर अपनी माता से विमुक्त हो जाने पर बालक अपने खोये हुये प्रेम को प्राप्त करने के लिये ही दूसरे व्यक्तियों से प्रेम करने लगता है। इस प्रेम व्यापार में किसी प्रकार की बाधा हो जाने पर उसके मन में क्रोध उत्पन्न होता है जो फिर घृणा और द्वेष में परिणत हो जाता है।''[58]

फ्रायड ने मैथुनवृत्ति की व्यापकता पर प्रकाश डालते हुये कहा है कि मनुष्य के प्रेम एवं स्नेह के मूल में यौन भावना ही प्रेरक शक्ति है। उनकी दृष्टि में मनुष्य यौन भावना का एक मण्डल है। अन्य सभी मनोवेग तभी उत्पन्न होते है जब वायलर में बन्द वाष्प के समान यौन भावना बहिभूर्त होती है।[59] फ्रायड ने यह भी माना है कि शैशव कामवृत्ति के उद्भव के साथ ही साथ उसके निरोध या दमन की मानसिक प्रक्रिया भी शुरू हो जाती है और अपने यौन उद्देश्यों के आंशिक ज्ञान से मनुष्य रहित हो जाता है।[60] तात्पर्य यह है कि कामवृत्ति के उदय के साथ-साथ उन्नयन की पृष्ठभूमि तैयार हो जाती है। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर फ्रायड ने कहा है -

"Religion, morality and a social sense the chief elements of what is highest in man were originally one and the same thing. According to the hypothesis which I have put forward in To Tem and Tabul, They were acquired phylogentically out of the father Complex : religion and moral restraint by the actual Process of mastering the oedipus Complex

itself and social feeling from the necessity for overcoming the rivalry that then remained between the members of the younger generation."

''बोध, वृत्ति, ज्ञान और भक्ति भावना का कामवृत्ति के साथ प्रत्यच्छ संबंध जोड़ने का प्रयास किया है । उनके विचार में भक्तिभाव, नैतिकता और सामाजिकता आदि उच्चादर्श कामवृत्ति के ही रूप से आविर्भूत होते हैं, जिसे सामान्य तौर पर मातृकाम और पितृकाम की संज्ञा दी जा सकती है ।(61)

फ्रायड के मतानुसार ईश्वर की कल्पना के मूल में प्राकृतिक शक्तियों से सुरक्षा का उपाय सोचने की वृत्ति तथा भावुकता की वृत्ति सक्रिय है, जो बाल मनोवृत्ति से ही संबद्ध है, जिसके अनुसार मनुष्य प्राकृतिक शक्तियों से संबंध स्थापित करके उन्हें संतुष्ट करने का प्रयास करता है ।(62)

सारांश यह है कि भक्ति भाव का मूल काम वृत्ति है और यह शैशव भी अपने को असह्य मानने वाली वृत्ति का पुनरावर्तन है । अतः फ्रायड की दृष्टि में भक्ति भावना चित्त की भ्रांति है, कल्पना विलास है, जिसका कोई वास्तविक आधार नहीं है ।(63) उपर्युक्त संक्षिप्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि फ्रायड के सारे सिद्धान्त अचेतन मन की महत्ता, जीवन में कामवृत्ति की सर्वव्यापकता और बाल कामभाव पर आधारित है, जिनका प्रत्याख्यान स्वयं फ्रायड के अनुयायी कहे जाने वाले एडलर और युंग प्रभृति विद्वानों ने किया है । एडलर के मतानुसार मनुष्य के सारे व्यापार कामवृत्ति द्वारा नहीं, अपितु प्रभुत्व की इच्छा अथवा आत्माभिव्यक्ति की भावना द्वारा प्रेरित होते हैं । अतएव मनुष्य के मानसिक व्यापार कामवृत्ति के निरोध के कारण नहीं, वरन प्रभुत्व की इच्छा या आत्माभिव्यक्ति के दमन के कारण पैदा होते हैं ।(64)

According to C.G. yung. "The investigation may see in the mud puddle a world full of wonders but to the ordinary man it is something upon which he pe prefers fo turn his back....... But habits are only won by Exercise and appropriate education is the sole means to this end".

एडलर और युग के विचार में ''मानव-मन की कुंठाओं के विशलेषण और नग्न चित्रण के बदले उचित शिक्षा द्वारा उनके निराकरण का उपाय करना कही श्रेयस्कर है ।''(65)

फ्रायड के सिद्धान्तों की दूसरी त्रुटि यह है कि उसने रुग्ण मानस के विश्लेषण के आधार पर ही सामान्य सिद्धान्तों की स्थापना की है, जो स्वस्थ्य मन का मनोविज्ञान नहीं होने के कारण एकांगी एवं अपूर्ण है । इसके अतिरिक्त फ्रायड ने विशुद्ध भौतिक दृष्टि अपनाने के कारण अनुभवों को समझने में भारी भूल की है ।(66) उन्हें अपनी इस भूल का अनुभव बुढ़ापे में हुआ

भी था। फलत: उन्होंने बोधात्मा (Ego) अबोधात्मा (Id) और प्रबोधात्मा (Super Ego) की सत्ता को स्वीकार कर भौतिक धरातल से ऊपर उठकर आध्यात्मिक उर्ध्व भूमि की ओर संचरण करने का प्रयास किया था। मैग्डुगल प्रभृति विद्वानों ने फ्रायड के बाल कामभाव के सिद्धान्त का भी खण्डन करते हुये बतलाया है कि माता पिता का संतान के प्रति और संतान को माता पिता के प्रति स्वभाविक प्रेम होता है। अतएव उसके अन्तर्गत कामुकता का समावेश करना उचित नहीं कहा जा सकता है।[67]

इसी तरह भक्ति भाव को शैशव की मनोवृत्ति का पुनरावर्तन मानने वाले सिद्धान्त को भी अनुनाश्रित होने के कारण अस्वीकार किया गया है।[68] किन्तु फ्रायड के सिद्धान्तों की उपर्युक्त त्रुटियों के रहते हुये भी उनसे तथा विशेषकर उदत्तीकरण के सिद्धान्त से मधुर रस के स्वरूप को समझने में जो सहायता मिलती है, वह कम महत्वपूर्ण नहीं हैं।

काम वृत्ति का उदात्तीकरण :

"The Energy of the instinctual sexual forces is turned a side from its sexual goal and diverted towards other ends no longer sexual though Psychologically related and socially more valuable."

फ्रायड के मतानुसार – काम वृत्ति जीवन की मूल प्रेरणा शक्ति है। किन्तु सामाजिक नियमों की मर्यादा या अन्य परिस्थितियों के दबाव के कारण सहज कामवृत्ति का विरोध या दमन भी करना पड़ता है, जिससे अनेक प्रकार की मानसिक ग्रन्थियां उत्पन्न होती हैं और मनुष्य विकार ग्रस्त हो जाता है। अत: उन मानसिक विकारों से परित्राण पाने तथा कामवृत्ति को समाज–सम्मत रूप प्रदान करने के उद्देश्य से उसके भूमिका परिवर्तन की आवश्यकता पड़ती है। कामवृत्ति के इसी भूमिका–परिवर्तन को फ्रायड ने काम–भाव के उन्नयन या उदात्तीकरण की संज्ञा दी है।''[69]

"All the cost of sublimation converting sexuality into love of his fellows and self assertion into various self assertion through God- he there by obtains peace of mind.

अपने साथियों या ईश्वर के प्रति कामवृत्ति के इस भूमिका परिवर्तन द्वारा व्यक्ति का मानस जहां उद्वेग रहित हो जाता है वहां उसे संतोष, शांति और आनन्द की भी उपलब्धि होती है।''[70] तात्पर्य यह है कि फ्रायड के अनुसार कामवृत्ति का तिरोभाव नहीं हो जाता है, अपितु भक्ति भाव या दूसरा कोई रूप धारण कर वह प्रकट होती है। दैवी शक्ति या आध्यात्मिकता में आस्था नहीं होने के कारण ही फ्रायड ने भक्ति–भाव को काल्पनिक किंवा

भ्रमजाल माना है । किन्तु दैवी शक्ति तथा आध्यात्मिकता में आस्था रखने वाले युग, केनिथवाँकर प्रभृति विद्वानों ने फ्रायड के उदात्तीकरण के सिद्धान्त का खण्डन करते हुये स्पष्ट शब्दों में कहा है कि यह पूर्णतया सत्य नहीं है कि सामाजिक परिस्थितियों से विवश होकर अपनी कामवासना को स्पष्ट रूप से चरितार्थ न करने के कारण ही मनुष्य भक्ति भाव को ग्रहण करता है और अपने असफल लौकिक प्रेम को अलौकिक प्रेम का आवरण देकर अभिव्यक्त करता है ।(71)

ईश्वर के प्रति दिव्य मनोराग का उदय कामवासना की तीव्रता के कारण नहीं, अपितु विषय-विराग तथा आध्यात्मिक अनुराग की प्रबलता से होता है । अनेकानेक संतों एवं भक्तों के जीवन वृत्त इसके प्रमाण है । इसके अतिरिक्त उदात्तीकरण की वृत्ति को काम वृत्ति के अतिरिक्त अन्य सहज वृत्तियों के संदर्भ में भी लागू किया जा सकता है । अत: मधुर रस के स्वरूप के स्पष्टीकरण की दृष्टि से फ्रायड के उदात्तीकरण के मूलभाव परिवर्तन को स्वीकार किया जा सकता है । इसी को युंग ने ''रूपान्तर'' कहा है ।

काम भाव का रूपान्तर :

फ्रायड के उदात्तीकरण के सिद्धान्त से यह अवश्य ज्ञात होता है कि कतिपय कारणों से मनुष्य की सहज कामवृत्ति भक्ति-भाव में परिवर्तित हो जाती है । रूपान्तर (Conversion) के सिद्धान्त मूल भावना की दृष्टि से उदात्तीकरण के सिद्धान्त से विशेष भिन्न नहीं होते हुये भी प्रक्रियात्मक रूप से एक दूसरे से भिन्न हैं । दोनों की दशाओं में परिवर्तन होता है, किन्तु उदस्तीकरण का परिवर्तन जहां बाह्य तथा अस्थायी होता है, वहां रूपान्तर का परिवर्तन जहां बाह्य तथा अस्थायी होता है, वहां रूपान्तर का परिवर्तन एक नूतन सृष्टि के समान है, जिसके अन्तर्गत पुरानी वैषयिक वृत्तियां भूजे हुये बीज के समान सत्व हीन हो जाती हैं और आह्लादित करने वाली भक्ति-भावना अनाविल हृदय में परिव्याप्त हो जाती है । ''युंग, कैनिपवाँकर, विलियम प्रट, विलियम जेम्स, डी. सैक्टिस, डब्ल्यू. बी सेल्वी प्रभृति'' मनोवैज्ञानिकों ने इसी कोटि के परिवर्तन को रूपान्तर की संज्ञा दी है । 'रूपान्तर' के परिवर्तन में दैवी भावना दिव्यात्मा के दर्शन अथवा उच्च मानसिक वृत्ति से प्रभावित होकर मनुष्य की निम्न वृत्तियां उर्ध्वमुखी हो जाती है और इस प्रकार उनका पूर्णत: ''कायाकल्प'' ही हो जाता है । ऐसी दशा में मनुष्य सबसे मुंह मोड़कर भगवद् प्रेम में लीन हो जाता है ।

According to william Pratte. Falling in love at a critical moment can some times do this. Patiotism may; but as a fact the great Power for the transformation of life that dwarfs all others Combined is religion deals with

the deepest questions and the most abiding values and it holds out to the desperate man who has lost all hope in himself or in human help, the promise of supernatural and unfailing assistance.

विलियम प्रट के मतानुसार –''कभी–कभी किसी नाजुक घडी में व्यक्ति विशेष के प्रेम सूत्र में आबद्व हो जाने या देश प्रेम के कारण भी काया पलट हो सकता है। किन्तु वास्तविक रूप में काया पलट की महन्ती शक्ति भक्ति भाव है। जिसके समक्ष अन्य सभी कारण नगण्य है'' क्योंकि जीवन के गम्भीर तथा सर्वाधिक शाश्वत मूल्यों से सम्बन्ध रखने वाला एक मात्र भक्ति भाव ही सभी प्रकार से असहाय और निराश व्यक्तियों को निश्चित रूप से परित्राण देने वाला है।(72)

'रूपान्तर' की मुख्यत: तीन अवस्थायें होती हैं। प्रथमावस्था में व्यक्ति अपने भौतिक दु:खों को अनुभव करता है और उनसे मुक्त होने में अपने को विवश पाता है। अपनी वास्तविक दशा का ज्यों–ज्यों उसे कटु अनुभव होता है जाता है, त्यों–त्यों वह उससे परित्राण पाने के लिये विकलता का अनुभव करता है। इसके लिये वह धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन शास्त्राचार का अनुगमन तथा महात्माओं के सत्संग द्वारा दु:खों की आत्यन्तिक निवृत्ति का उपाय करने लगता है। दुख निरोध के उपाय का अनुसंधान करना रूपान्तर की दूसरी अवस्था है। उपर्युक्त साधनों द्वारा व्यक्ति को जैसे–जैसे सांसारिक विषयों से विराग होता जाता है वैसे–वैसे ईश्रर के प्रति उसका अनुराग बढ़ता जाता है और अन्त में ईश्वरोन्मुख प्रेम पूर्णता पर पहुंचकर सांसारिक विषयों को आत्मसात कर लेता है। उसे सर्वत्र उसी एक निखिल सौन्दर्य रसानन्द स्वरूप परम प्रियतम परमेश्वर के सहज प्रेम की स्वानुभूति होने लगती हैं। ईश्वर प्रेम की यह अद्वयावस्था रूपान्तर की चरमावस्था है, जिसमें भक्ति भावापन्न साधक सांसारिक विषयोपभोग की पूर्व क्रियाओं के समान ही अपने मन में ईश्रर प्रेम की सहजानुभूति करने लगता है।

डी. सैक्टिस द्वारा निर्दिष्ट उपर्युक्त तीन प्रक्रियाओं अर्थात दु:ख का अनुभव और दु:ख निरोध की भावना, दु:ख की आत्यन्तिक निवृत्ति के लिये परमात्मा का सान्निध्य प्राप्त करने के उपाय तथा भगवत्प्रेम की परिपक्वता इन्हीं तीन दशाओं के समन्वित रूप द्वारा पाश्चात्य मनोविज्ञान वेत्ताओं ने रूपान्तर की सम्पूर्ण प्रक्रिया को स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

"Conversion may be described as the process by which the self hitherto divided and unhappy. becomes unified and satisfied under the impulse of religious ideas and motives."(73)

रूपान्तर वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा खण्डित और निरानंद मानवात्मा भक्ति के भावों और प्रेरणाओं से पूर्ण एवं आपृकाय बन जाती है। इस प्रकार दु:खों और पापों से मुक्त होने के संकल्प को लेकर अन्तत: भगत्वप्रेम में लीन हो जाना ही भारतीय एवं पाश्चात्य मनीषियों का भक्ति विषयक दृष्टिकोण है। पाश्चात्य विद्वानों के मतानुसार तरुणावस्था ही रुपान्तर की प्रवृत्ति का आविर्भावकाल है, क्योंकि इस अवस्था में विचारोत्तेजन के कारण व्यक्ति में मानसिक संघर्ष की तीव्र भावना का उदय होता है।'' (74)कामवृत्ति को मानसिक संघर्ष का मूल कारण मानने के कारण पाश्चात्य मनोवैज्ञानिकों ने रूपान्तर को युवावस्था की घटना की भी संज्ञा दी हैं।

According to Forsyth "Psychologically the Phenomenon (Religious Conversion) is none other than the new strong tide of Sexual feeling that accompanies puberty being chocked in its usual Course and deflected into religion."

डॉ. फारसीथ के अनुसार ''मनोवैज्ञानिक दृष्टि से यह भक्त्यात्मक रूपांतर पूणोत्कर्ष प्राप्त सहजानुक्रम में निरूद्ध के अभिनव प्रबल आवेग के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।''(75) किन्तु रूपान्तर प्रक्रिया में काम भाव के उन्नयन के महत्व को स्वीकार करते हुये मनुष्य की अन्य सहजवृत्तियों के सहयोग की अवमानना नहीं की जा सकती है। दूसरी विचारणीय बात यह है कि सांसारिक विषयोभोयोग की इच्छा मनुष्य की जन्मजात कामना है और इसका उदय जीवन के आरंभ काल में ही हो जाता है। अत: रूपान्तर की प्रक्रिया के प्रादुर्भाव के लिये कोई वयगत सीमारेखा नहीं खींची जा सकती।

In the ideas of Thouless- "Both are the result of sublimation of the libido into religious channels, but in mystical Conversion it is not only that Part of the libido specialised in the Sex-instinct is sublimated but the whole of the libido employed in the activities and affections of this world life.(74)

थाउसेल के विचार में अधर्मी का धर्मात्मा बनजाना तथा धर्मात्मा का परमहंस बन जाना रूपांतर की साधारण और असाधारण दो कोटियां है। और ये दोनो ही भक्ति मार्ग में काम भाव (Libido) के उदत्तीकरण के सुपरिणाम है।किन्तु दूसरे प्रकार के रहस्यात्मक रूपान्तर में लिबिडो की उस आंशिक शक्ति का ही उन्नयन नहीं होता है जो कामुकता प्रधान है अपितु सांसारिक जीवन के क्रिया कलाप एवं सारे स्नेह सूत्रों को परिचालित करने वाला उसकी सभी शक्तियों का उदात्तीकरण हो जाता है।''(76)

अर्थात् असाधारण कोटि का रूपान्तर मानव की सभी प्रकार की सहजवृत्तियों का भक्तिभाव में मधुर पर्यवसान है। इस विशिष्ट दशा में सभी ऐहिक भाव समाप्त हो जाते हैं और साधक भगवत्प्रेम के मधुर रस का आस्वादन कर परम सुख का अनुभव करने लगता है।

मनुष्य की कामवृत्ति –

काम एक जन्मजात मौलिक मनोवेग है तथा मैथुन अथवा प्रजनन प्रवृत्ति (Pairing or mating instinct) से उसका नैसर्गिक संबंध है, इसकी चर्चा पीछे की जा चुकी है। इस कामवृत्ति का स्थायी भाव रति है तथा उसका व्यवहारिक रूप प्रेम कहलाता है। प्रेम एक स्थिर मनोदशा है, जिसमें वात्सल्य भाव (Fender feeling), कामभाव (lust), आत्म–समर्पण (Submission) एवं आत्मप्रतिष्ठा के भाव का मधुर सम्मिश्रण रहता है।

कामभाव में आत्मसमर्पण आदि सुकुमार भावों के मधुर संयोग से ही प्रेम का निर्माण होता है। इसीलिये कहा गया है कि ''जिस प्रकार समुद्र में अगणित तरंगें उठती एवं विलीन होती रहती हैं, उसी प्रकार जहां सभी रस एवं भाव उन्मज्जित निमज्जित होतेरहते हैं, उसी को प्रेम कहते हैं।

''सर्वे रसाश्च भावाश्च तरंगा इव वारिधौ।
उन्मज्जन्ति निमज्जन्ति यत्र स प्रेमसंज्ञक: ॥''(77)

पात्र भेद से इसी प्रेम के तीन रूप हो जाते हैं। छोटों के प्रति जो स्नेहाकर्षण होता है उसे वात्सल्य भाव कहते हैं। बराबर वालों के प्रति अर्थात् स्त्री पुरुष में जो पारस्परिक स्नेहाकर्षण होता है, उसे दाम्पत्य भाव कहा जाता है। बड़ों के प्रति होने वाले स्नेहाकर्षण में दैन्य एवं आत्मसमर्पण के भाव सन्निहित रहते हैं। इसी को पूज्य या श्रद्धाभाव की संज्ञा दी जाती है। इस प्रकार उच्च स्तर पर पहुंचकर यही पूज्य भाव भक्ति में रूपान्तरित हो जाता है। लौकिक प्रेम जब अलौकिक प्रेम का रूप धारण कर लेता है, जीवोन्मुखी प्रेम जब ईश्वरोन्मुखी प्रेम में परिणत हो जाता है तब रागमयी भक्ति की पक्की पृष्ठभूमि तैयार हो जाती है।

दाम्पत्य प्रेम में प्रेमभाव पूर्ण स्फुरण तथा काम का उन्नयन हो जाता है। इसके अन्तर्गत स्वार्थ की गौणता एवं पदार्थ की प्रधानता हो जाती है। फलत: मनुष्य के हृदय मे कोमल भावनाओं का उद्भव होता है जिसकी चरम परिणति ही मधुर रति साधना है।

प्रेम का स्वरूप एवं तत्व

प्रेम दर्शन-

सामान्य रूप से मधुर रस का साध्य तत्व जीवात्मा और परमात्मा का एकात्म भाव है। उपास्य और उपासक का एकात्म भाव ही मधुर रस साधना का चिर साध्य है। इन दोनों की तादाम्य स्थिति ही प्रेम दशा कहलाती है। दर्शन शास्त्र में भी इन्हीं दोनो के एकत्व का प्रतिपादन किया गया है।

जीव ईश मिलि दोय, नामरूप गुण परिहरे। रसिक कहावे सोय, ज्यों जल घोले शर्करा ॥

इस प्रकार 'प्रेम' और 'दर्शन' दोनो का लक्ष्य उपास्य और उपासक में एकत्व स्थापन करना है। इस एकत्व रूप प्रेम दशा को प्राप्त करने वाले भक्ति भावापन्न साधक ही सच्चे प्रेम रसिक कहे जाते है। (78)

प्रेम हरि को रूप है, त्यों हरि प्रेम सरूप। एक होइ द्वै में लसै, ज्यों सूरज अरू धूप ॥

''परमात्मा और प्रेम सूरज और उसकी धूप के समान अभिन्न है।''(79)

जल तरंग भूषण कनक, घट मांटी पटतंत। खेल खिलाडी यों सदा, ओत प्रोत लसंत।।

इसी प्रकार प्रेम दशा को प्राप्त होकर शक्ति और शक्ति मान भी एक हो जाते है।'' (80) जीवात्मा और परमात्मा के तात्विक स्वरूप और पारस्परिक संबंध के निर्धारण तथा सम्यक् स्पष्टीकरण के लिए एवं अपने अपने साधन मार्गों को पुष्ट आधार देने के लिए ही समय-समय पर विभिन्न धर्माचार्यों ने अनेकानेक द्वैत-अद्वैत परक दार्शनिक मतवादों की स्थापना की है। इस प्रकार परमात्मा और जीवात्मा, उपास्य और उपासक, शक्तिमान और उनकी शक्तियों के तात्विक स्वरूप और उनके एकात्म भाव के प्रतिपादन के लिए जहां तत्ववेत्ताओं ने विभिन्न दार्शनिक सिद्धातों की अवतारणा की है वहां शक्तिमान और उनकी शक्तियों के रागात्मक संबंध की सिद्धि के लिए सहदृय साधको एवं भावुक भक्तों ने प्रेम दर्शन के सिद्धांत को स्वीकार किया है। यदि सूक्ष्म दृष्टि से विचार किया जाए तो सगुण, निर्गुण साधनात्मक एवं भावात्मक सभी प्रकार के साधकों ने प्रत्यच्छ अथवा परोक्ष रूप से 'प्रेम' को ही परम पुरुषार्थ माना है और प्रेम दर्शन के सिद्धांत को ही प्रमुख साधन तत्व के रूप में ग्रहण किया है।

प्रेम नचावत नचत सब, जँह लौं धामी धाम। सो नाचत हित नाम वस, सेवक चित विश्राम ॥

इसका कारण यह है कि प्रेम प्राणीमात्र की नैसर्गिक एवं व्यापक वृत्ति है। लौकिक और अलौकिक सारी लीलाएं प्रेम की प्रेरणा से ही निरंतर सम्पादित हो रही है।(81) प्रेम वृत्ति

मनुष्य की सभी चित्त वृत्तियों के मूल में है। और अत्यन्त व्यापक एवं गहरी होने के कारण प्रत्यचक्ष एवं अप्रत्यच्छ रूप से यह मनुष्य की सभी चित्तवृत्तियों का स्वरूप निर्धारण नियमन और संचालन करने वाली है। सामान्य रूप से किसी पदार्थ को प्राप्त करने में मानव मन की तीन वृत्तियां सक्रिय दिखलाई पडती है। वह सबसे पहले ईप्सित पदार्थ के संबंध में जानना चाहता है। इसी को ज्ञान (Knowing) कहा गया है। उसकी जानकारी प्राप्त लेने के बाद उसे प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करने की आवश्यकता होती है। इसी को क्रिया (कर्म) या संकल्प वृत्ति (Willing) की संज्ञा दी गई है। अंततः उसके साथ स्थायी संबंध स्थापित करने के लिए तथा तज्जन्य आनंद प्राप्त करने के लिए उससे मन लगाने या अनुरक्त होने की आवश्यकता है। इसी को 'चाह' या 'इच्छा' (Feeling) कहते है। सारांश यह है कि ज्ञान कर्म और इच्छा–इन तीनों के मूल में प्रेम ही प्रेरक तत्व के रूप में काम कर रहा है। किन्तु इन तीनों में से इच्छावृत्ति के साथ प्रेम का सर्वाधिक प्रगाढ संबंध है। ईप्सित पदार्थ से मन लगाना और सात्विक आनंद के लिए उसे चाहना स्वयं आनंद प्राप्त करना और दूसरे को आनंदित करना इससे भी आगे बढकर स्वसुखी भाव की अपेक्षा तत्सुखी भाव को प्रश्रय देना ही प्रेम की मूलभूत भावना है।

इस प्रकार प्रेम में चित्त की तीनों वृत्तियों (ज्ञान कर्म और इच्छा) का सुखद संयोग होता है। प्रेम मूलतः इच्छा है जो ज्ञान का निर्देशन या नियन्त्रण पा कर विशिष्ट या संयत रूप ग्रहण करता है बिना ज्ञान के इच्छा अंधी है और बिना इच्छा के ज्ञान पंगु और क्रिया के बिना दोनों निष्क्रिय है। इच्छा गति देती है, ज्ञान उसका उचित दिशा निर्देश करता है और क्रिया दोनो के समन्वयात्मक स्वरूप प्रेम को अभिव्यक्त करती है अथवा दोनो क्रिया के माध्यम से अभिव्यक्ति का मार्ग खोजते है।(82) अनिवर्चनीय प्रेम स्वरूपम्। मूकास्वादनवत्। प्रकाशते क्वापिप्रात्रे। गुणा रहितं कामना रहिंत प्रतिक्षणावर्धमानमविच्छिन्न सूक्ष्मतरमनुभवरूपम्। तत्प्राप्य तदेवावलोकयति तदेव श्रृणोति तदेव भाषयति तदेव चिन्तयति। प्रेम वृत्ति की इसी विलक्षणता, व्यापकता एवं सहजता के कारण भगवद प्रेम पिपासु भावुक भक्तों एवं साधको ने दार्शनिक मतवादों की दुरूहता, जटिलता एवं शुष्कता से अलग प्रशस्त प्रेम पंथ का अनुगमन किया है, जहां अमर प्रेम रसायन का आस्वादन करके भक्ति भावापन्न साधक प्रेम को 'मूकास्वादनवत्' केवल अनिवर्चनीय मानता है। किसी योग्य पात्र में ही यह प्रकाशित होता है। यह गुण रहित कामना रहित प्रतिक्षण वर्धमान अविच्छिन्न सूक्ष्मतर एवं अनुभव रूप है। इसे प्राप्त करने वाला प्रेम को ही देखता है।(83) नारद ने भक्ति को 'परम प्रेम रूपा' और अमृत स्वरूपा (84) कह कर तथा शांडिल्य ने भक्ति को ईश्वर में परानुरक्ति अर्थात सर्वोत्तम

एवं गंभीर अनुराग की संज्ञा देकर स्पष्ट रूप से यह उद्घोषित कर दिया है कि प्रेमी उपासक और प्रेमास्पद उपास्य का नित्य अचंचल संयोग ही प्रेम साधना का परम ध्येय है। इस प्रकार प्रेम भक्ति का सवस्त है तथा अन्य साधना मार्गों का भी वह प्रत्यच्छ और परोक्ष रूप से प्रमुख प्रेरक तत्व है। तभी तो सगुण और निर्गुण से परे काया नगर बसाने वाले तथा हदृय मंदिर में अपने प्रियतम के मधुर मिलन का रस पान करने वाले अन्तस्साधना के अभिलाषी आत्माराम योगी भी 'प्रेम पियाला' की महिमा का वर्णन करते नहीं अघाते। सारांश यह है कि मधुर रस साधना का मूलाधार प्रेम है तथा इसके दार्शनिक स्वरूप को प्रकाशित करने वाला प्रमुख व्यावहारिक सिद्धांत प्रेम दर्शन का सिद्धांत है।

प्रेम तत्व : प्रेमापुमर्थोमहान

भारत वर्ष के प्राचीनतम साहित्य वैदिक बाड.मय में कई प्रेम प्रसंगो की अवतारणा हुई है किन्तु विस्मय की बात है कि वहां ऐसे किसी भी प्रसंग में प्रेम शब्द का स्पष्ट प्रयोग नहीं मिलता। दाम्पत्य प्रेम के लिए चक्रवाक और चक्रवाकी के युग्म का उदाहरण देना[85] प्रणयी श्यावाश्य आत्रेय द्वारा अपनी प्रणयिनी के लिए कठोर तपश्चर्या करना [86] यमी का अपने भाई यम के लिए काम पीडित होना[87] पुरूरवा द्वारा उर्वशी पर अनुरक्त होना आदि [88] प्रेमपूर्ण प्रसंगों में भी प्रेम शब्द के प्रयोग का अभाव है। वैसे प्रिय, प्रिया प्रेम या प्रेष्ठ जैसे शब्दों के प्रयोग मिलते है किन्तु उनसे प्रेम शब्द के अर्थ की प्रतीति नहीं होती। वैदिक साहित्य में काम शब्द के बहुत प्रयोग मिलते है। एक ओर काम शब्द से जहां सृष्टि संकल्प रूपी परम तत्व का बोध होता है। वहां दूसरी ओर उससे कामीजनोचित अभिलाषा की भी प्रतीति होती है। [89] इससे ज्ञात होता है कि उस समय प्रेम के अर्थ में कदाचित काम शब्द का प्रयोग होता था जो कामना का आशय प्रकट करता था।[90] आगे चलकर भक्ति मार्ग की प्रतिष्ठा तथा उसके अन्तर्गत हदृय की रागात्मिका वृत्ति की प्रधानता के कारण श्रीमद्भावत आदि। पुराणों एवं नारद भक्ति सूत्र आदि ग्रंथों में प्रेम शब्द के स्पष्ट प्रयोग मिलते है। मध्यकालीन साधना में प्रेम भाव के समाविष्ट हो जाने पर ब्रह्म का माधुर्य रूप इतना अधिक प्रभावशाली बन जाता है कि प्रेमी साधक प्रेम में प्रेम स्वरूप परमात्मा का साक्षात्कार कर धन्य हो उठते है और गर्वनिष्ठा के साथ उद्घोषणा करते है कि प्रेमापुर्मोथामहान अर्थात प्रेम ही परम पुरूषार्थ है मोक्ष नहीं।

विदन्ति तत्वत्वाविदस्तत्वं यजज्ञानमद्वयम।
ब्रह्मोति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते॥

इतना ही नहीं उनका यह भी दृढ विश्वास है कि ब्रम्हा को ज्ञानमय समझने वाले उसके एक लघु अंश को जान पाते है पर उसे प्रेममय समझने वाले उसके संपूर्ण रूप को जानते है।[91] प्रेम अनेकार्थक एवं अन्यन्त व्यापक शब्द है। प्राच्य एवं पाश्चात्य कोशकारों ने प्रेम के भौतिक रूपों के साथ-साथ उसके आध्यात्मिक रूपों पर भी विचार किया है। इस प्रकार उन्होंने प्रेम को स्थूल इन्द्रियों तक ही परिसीमित न कर मन के सूक्ष्म और उदात्त भाव जगत के विषय के रूप में भी स्वीकार किया है। [92] प्रेम के संबंध में पाश्चात्य जीवन दर्शन से प्रभावित विद्वानों के विचार से भक्तिवादी साधको के विचार सर्वथा भिन्न है। मनोविज्ञान शास्त्र और शरीर शास्त्र के आधुनिक विद्वांन प्रेम को एक प्रकार की बुभुक्षा मानते है, जिनकी अनुभूति प्रत्येक प्राणी और प्रत्येक अवयव को स्वभाविक रूप से होती है। प्रसिद्ध मनोविज्ञान बेत्ता फ्रायड ने काम वासना को जीव जगत की मूलवृत्ति स्वीकार करते हुए समस्त भौतिक अथवा आध्यात्मिक भावपरक संबंध के मूल में यौन विषयक प्रेम के अपरिष्कृत या परिष्कृत रूप को माना है। समाज विज्ञान वेत्ताओं की दृष्टि में प्रेम सामाजिक संबंधों का एक भावात्मक अंश मात्र है।

"A feeling of strong personal attachment induced by that which delights or commands admiration by sympathetic unederstanding or by ties of kinship or ordent affection manifestation of desire for and earnest effort to promate the welfare of a person esp. as seen in God's solicitude for men and men's due gratitude and reverence to God"! [93]

उनकी दृष्टि में प्रेम को अनावश्यक महत्व प्रदान करना निरर्थक है किन्तु प्रेम प्रभावापन्न भक्तों और साधकों के मतानुसार प्रेम सामाजिक जीवन का ही नहीं अपितु समस्त साधना का मूलाधार है। यह भक्ति भाव का अनिवार्य तत्व ही नहीं उसका शीर्ष फल भी हे। इसीलिए नारद शांडिल्य आदि भक्ति शास्त्र प्रतिष्ठापकों ने भक्ति को प्रेमलक्षणा बतलाते हुए प्रेम को उसका अनिवार्य तत्व माना है।

''तदर्पिताखिलाचारिता तद्विस्मरणे परम व्याकुलता।''

नारद के अनुसार भगवान के प्रति अपने सभी कर्मों का सर्वात्म समर्पण कर देना तथा रचमात्र भी उनके विस्मरण से परम व्याकुलता का अनुभव करना भक्ति साधना के अनिवार्य अंग है।[94] चैतन्य मतानुयायी वैष्णव साधको ने भक्ति के रागानुगा रूप को सर्वाधिक प्रश्रय प्रदान कर प्रेम को पंचम पुरूषार्थ माना तथा श्रीमद् भागवत पुराग में वर्णित गोपीभाव को सर्वश्रेष्ठ बतलाया।

सम्यड.मसृणितस्वान्तों ममत्वातिशयांकित :।

भाव: स एव सान्द्रात्मा बुधै: प्रेमा निगद्यते ॥

वृन्दावन के षट् गोस्वामियों ने जिनमें रूपगोस्वामी का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है। भक्ति रस के अन्तर्गत अन्य सभी रसों का समावेश करके मधुर रस शास्त्रीय विवेचन किया तथा इसके आधारभूत तत्व प्रेम की व्याख्या करते हुए बतलाया कि जिस भाव द्वारा हमारी अन्तरात्मा स्निग्ध कोमल एवं निर्मल हो तथा जो ममत्वाति शयांकित हो उसी के प्रगाढ रूप को सुधीजन प्रेम की संज्ञा देते है।(95)

साधन भक्ति हइते हय रतिर उदय। रति गाढ हइले तारे प्रेम नामे कय ॥

कृष्णदास कविराज के अनुसार साधन भक्ति के अभ्यास द्वारा रति अथवा अनुराग का भाव उदय होता है जो प्रगाढ हो जाने पर प्रेम नाम से पुकारा जाता है।(96) स्वामी अभेदानंद के अनुसार 'प्रेम' वह आकर्षण शक्ति है जो सभी प्राणियों में पाई जाती है। भौतिक स्तर पर इसी शक्ति को गुरूत्वाकर्षण कहते है तथा आत्म तत्व के स्तर पर इसी को प्रेम की संज्ञा दी जाती है। मानवीय प्रेम के अन्तर्गत वैयक्तिक सुखोपभोग की कामना प्रधान होती है। किन्तु ईश्वरीय प्रेम सर्वथा निष्काम एवं विश्वात्म रूप होता है। इस प्रकार प्रेम मूलत: आध्यात्मिक है।(97)

मध्यकालीन प्रेम साधको ने प्रेम को अपने प्रेमास्पद के प्रति अत्यन्त दृढ व्यक्तिगत अनुराग के रूप में प्रदर्शित किया है। तथा अपने उपास्य के प्रति 'अर्पित मनोबुद्धि' और अर्पिताखिलाचार द्वारा उसे सार्वजनिय बनाकर विश्व प्रेम में स्थापित कर दिया है।

प्रेम आत्मा का भूषण है। प्रेम के रसास्वादन के लिए ही आत्मा ने एक बार पुन: देह पिंजर में बन्दी होना स्वीकार किया है। प्रेम संजीवन मूरि है। जिसके दृश्य में प्रेम में प्रेम का संचार नहीं, वह मांस वेष्टित अस्थियों का ढेर मात्र है।(98) स्वामी विवेकानंद ने प्रेम के समष्टिगत रूप का महत्व बतलाते हुए कहा कि – जब मैं भ्रमवश यह सोचने लगता हूं कि मैं स्वयं मर्यादित हूं, तब मेरा प्रेम संकीर्ण तथा विशेष भावापन्न हो जाता है। विश्व की सभी वस्तुए ईश्वर जन्य हैं और इसीलिए वे प्रेम पात्र है। यही ध्यान में रखना चाहिए कि समष्टि के प्रेम में ही अंश का प्रेम अन्तर्भूत है।(99) हैथलॉक एलिस के शब्दों में – ''जब तक विषय सुख की इच्छा का तिरोधान नहीं हो जाता तब तक प्रेम का कमनीय और मनोहर कुसुम नहीं विकसित होता।'' (100) स्वामी रामतीर्थ के विचार में – True love like the sun expands the self ......love means perception of beauty........a man who has never loved can never realise God; that is a fact.

सच्चा प्रेम सूर्य के समान आत्म प्रकाश को फैलाता है । ......प्रेम का अर्थ है सौन्दर्य का साक्षात्कार ....यह सत्य है कि जिसने प्रेम नहीं किया उसे ईश्वरानुभूति कभी नहीं हो सकती ।[101]

तात्पर्य यह है कि प्रेम हमारे चतुर्दिक व्याप्त प्रत्येक वस्तु और व्यापार का चरम निष्कर्ष है । यह एक भावना मात्र नहीं है । यह ब्रह्म से नि:सृत विशुद्व चेतना का उज्जवल प्रकार है । प्रेम के रूप में अपनी चेतना के उर्ध्वमुखी विकास करने तथा उसे निखिल सृष्टि के ऊपर प्रसारित करने से ही हम ब्रम्हा विचार कर सकते है । तथा असीम परमानंद का सान्निध्य प्राप्त कर सकते है । केवल प्रेम रहित व्यक्ति ही अपने प्रेमानंद के प्रेमास्पद के प्रेमोपहारों का उनकी उपयोगिता के रूप में मूल्यांकन करते है किन्तु उपयोगिता क्षणिक एवं अपूर्ण होती है । यह हमारे संपूर्ण रूप को कभी नहीं ग्रहण कर सकती है ।

For love is the ultimate meaning of every thing around us. It is not a mere sentiment, it is truth, it is the joy that is at the root of all creation. It is the white light of pure consciousness that emanates from Brahma.... It is through the heightening of our consciousness into love and extending it all over the world that we can attain Brahma Vihara communion with this infinite Joy he who has no love in him values the gifts of his lover only according to their usefulness But utility is temporary and partial it can never occupy over whole being.[102] To achieve the cantact or communion love is the final aim and purpose of human existence.

उपर्युक्त ईश्वरीय सम्पर्क अथवा असीम परमानंद के सानिध्य को प्राप्त करने के लिए प्रेम ही चरम लक्ष्य है जो मानवीय अस्तित्व का मूल उद्‌देश्य है ।

All the things must die but love alone eludes mortality overleaps the tombs, and bridges the chasm of death with generation....our wealth is a weariness and our wisdom is a little light that chills, but love warms the heart with unspeakable solace even more than when it is given than when it is received all other things are futile, let us cherish it. इस संसार की सारी वस्तुए नश्वर है केवल प्रेम अविनाशी है, जो मृत्यु को धता बताने वाला है तथा जीवन और मृत्यु की दरार को पाटने वाला है । प्रेम के अभाव में वैभव भार है तथा ज्ञान ऐसा क्षुद्र प्रकाश है जो जडता को बढाता है । वस्तुत: प्रेम वह मधुर उष्मा है जो हृदय को अनिवर्चनीय तत्व प्रदान करता है । आदान में

नहीं प्रदान में हीं प्रेम का वास्तविक आस्वाद सन्निहित है। प्रेम के अतिरिक्त अन्य सभी निस्सार है।(103) प्राच्य एवं वाश्चात्य विचारको की प्रेम विषयक उपर्युक्त मान्यताओं के अनुसार सामान्य रूप से प्रेम के आत्मपरक और वस्तुपरक दो पक्ष प्रकट होते है। किन्तु सूक्ष्म दृष्टि से विचार करने पर ये दोनो पक्ष प्रेम की एक ही मूल भावना के दो रूप है।

प्रेम और कामः तत्सुखी और स्वसुखी भाव

प्रेम और काम में परमार्थ और स्वार्थ का अन्तर है। प्रेम में जहां तत्सुखी भाव की प्रधानता होती है, वहां काम में स्वमुखी भाव की प्रगाढता है। प्रेम में अपने सुख की अपेक्षा अपने प्रेमास्पद के सुख की प्रवत्ति ही तीव्र रहती है, किन्तु काम में मनुष्य केवल स्व सुख की ही आकांक्षा करता है। काम और प्रेम के अन्तर को स्पष्ट करते हुए श्रीकृष्णदास कविराज ने बतलाया है कि –

आत्मेन्द्रिय प्रीति इच्छा तार काम नाम।
श्री कृष्णेर प्रीति इच्छा तार प्रेम नाम ॥

X X X

अतएव काम प्रेम बहोत अन्तर।
काम अन्धतम प्रेम निर्मल भास्कर ॥

आत्मेन्द्रिय सुख की इच्छा काम है तो श्रीकृष्ण सुख की इच्छा प्रेम। काम अन्धतम है तो प्रेम निर्मल भास्कर।(104)

आदि अन्त जाको भयों, सो सब प्रेम न रूप।
आवत जात न जानिए जैसे छांह अरू धूप ॥(105)
छिनहीं चढ़े छिन उतरे, सो तो प्रेम न होय।
अघट प्रेम पिंजरे वसे प्रेम, कहावै सोय ॥ (106)

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने जड विषयक अनुराग को 'काम' तथा भगवद विषयक अनुराग को प्रेम की संज्ञा दी है क्योंकि जडादि विषयक अनुराग से प्राप्त सुख नहीं सुखाभास है।(107)

प्रेम और काम के उपर्युक्त अन्तर के रहते हुए भी मधुर रसोपासना के अन्तर्गत काम का एकान्तिक अभाव नहीं माना जा सकता, क्योकि इन्द्रियों के माध्यम से ही प्रेम अभिव्यक्त होता है। श्री बल्लभ रसिक के अनुसार –

काम रूप बिन प्रेम न होई ।

काम रूप जहं प्रेम न होई ॥

कामरूप के बिना प्रेम नहीं हो सकता तथा जहां कामरूप हीं है वहां प्रेम नहीं है ।(108) तात्पर्य यह है कि प्रेम के लिए कामना आवश्यक है और प्रेम के उदय होने पर कामना का विसर्जन ही श्रेयस्कर है । शक्ति और शक्तिमान के नित्य बिहार परक प्रेम में नित्यता शुद्धता सरसता और अखंडता है । यह आदि अन्तहीन नितनूतन तथा सदा एक रस है ।

सारांश यह है कि यौन सम्बन्ध से उदभूत वासना युक्त प्रेम में जहां तत्सुख सुखित्व का सर्वथा अभाव रहता है वह शक्ति और शक्तिमान के नित्य बिहारपरक प्रेम में तत्सुखी भाव ही सर्वस्य माना जाता है । इसमें प्रिया प्रियतम और सभी सहचर और परिकर एक दूसरे के प्रीत्यर्थ ही प्रेम लीला में प्रवृत्त होते है । जहां तुम मेरे हो की अधिकार प्रवृत्ति काम करती है वहां प्रेम केवल स्वसुख की क्षुद्र वासना से परिचालित होता है । इस स्थिति में प्रेम आत्म चैतन्य प्रकाश के रूप में प्रस्फुटित नहीं होता । स्थूल भोग मांसाचार और इन्द्रिय परायणता के कारण वह काम या मोह कहा जाता है और इससे प्राप्त आनंद निकृष्ट माना जाता है किन्तु इसके विपरीत जहां मैं तुम्हारा हूं की समर्पण प्रवृत्ति से प्रेम व्यापार सम्पादित होता है वहां उसका विशुद्ध रूप प्रकट होता है । इसमें एकमात्र प्रिय का सुख प्रिय की परितृप्ति और प्रिय का आनंद ही प्रेम का लक्ष्य होता है इसके लिए सर्वस्य विसर्जन करने में भी उसे परम संतोष का अनुभव होता है ।

तत्व प्रेम कर मम भरू तोरा । जानत प्रिय एक मन मोरा ॥

सो मन सदा रहत तोहि पाही । जानु प्रीतिरस एतनहि माही ॥

इस विशिष्ट प्रेम दशा में प्रेमी का अपना कुछ नहीं रह जाता है । तन मन धन सब प्रेमास्पद के सुख और आनंद के लिए वह समर्पित कर देता है ।(109) भारतीय साहित्य साधना में राधा भाव और गोपी भाव का प्रेम इसका आर्दश माना गया है । इसीलिए भक्त जन इस प्रकार के निर्मल प्रेम तथा इससे प्राप्त उदात्त आनंद को छोड कर किसी दूसरे प्रकार के प्रेम और आनंद की कल्पना तक नहीं करते क्येंकि इसी कोटि का प्रेम जीवनमुक्ति प्रदायक माना जाता है ।

प्रेम और आनंद–

आनंद प्रेम का शाश्वत धर्म है । प्रेम और आनंद चन्द्र और चन्द्रिका के समान एक दूसरे से अभिन्न है । प्रेम का मिलन रस तो आनंद का अगार है ही इसके विरह रस में भी प्रिय की

मधुर स्मृति के रूप में आनंद का उद्वेक होता रहता है। तभी तो विरही जन विरह वेदना में तपना भी सुखकर मानते है तथा अपने प्रेमास्पद के लिए अपना सर्वस्य गवां कर भी विलक्षण आनंद तृप्ति और संतोष का अनुभव करते है। प्रेम का यह आनंद रस नवजीवन प्रदान करने वाला है। साधकों ने प्रेम की इस आनन्दानुभूति का वर्णन अनेक प्रकार से किया है।

कबीर बादल प्रेम का, हम परि बरष्या आई।

अंतरि भीगी आत्मा, हरी भई बनराई ॥34॥

पूरे सू परचा भया, सब दुख मेल्या दूरि ॥

निर्मल कीन्हीं आत्मा, ताथै सदा हजूरि ॥35॥

प्रेम के बादल से जब आनंद रस की तृप्ति होती है तब अन्तरात्मा सराबोर हो जाती है और समस्त वन राजि अर्थात वाह्य जगत भी हरा भरा हो जाता है। तात्पर्य यह है कि प्रेम के आनंद रस में अर्न्तजगत और वाह्य जगत को मधुर रस से आप्यायित करने की अप्रतिम शक्ति है। सभी प्रकार के तापों का शमन करके पूर्ण पुरूय से परिचित कराने में यहा पूर्णतया समर्थ है।

आनन्द की उदात्त अनुभूति का आधार : प्रेमतत्व

दार्शनिक दृष्टि से प्रेम और आनंद का मूल श्रोत प्रेम दर्शन है। एक ही परम तत्व का समष्टि रूप परमात्मा है तथा व्यष्टि रूप आत्मा है। सत् चित् और आनंद तीनों की समष्टि ही ब्रहम है। अतएव आत्मा में भी ब्रह्म के तीनों रूप विद्यमान है। इसी आधार पर आत्म साक्षात्कार को ब्रम्हा साक्षात्कार और आत्मानंद को ब्रह्मनंद माना गया है। ब्रम्ह्म के सत् चित् और आनंद ये तीनो रूप मिल कर ही उसके पूर्ण और शाश्वत स्वरूप को अभिव्यक्त करते है। ब्रह्म के सत चित और आनंद ये तीनो ही रूप अनुभव गम्य है किन्तु इनमें उसका आनंद स्वरूप ही सहज बोध गम्य है।[110]

हंस: शुचिषद् वसुरन्तिरिक्ष संद्धौता वेदिषदतिधिर्दुरोणसत्।

नृषद वरसदृतसद् व्योमसहब्जा गोजा ऋतजा: अद्रिजा ऋतं वृहत।

निर्गुण निराकार ब्रह्म के सगुण और साकार रूप की अवतारणा का यही रहस्य है। आत्मा भी इसी आनंद स्वरूप के साक्षात्कार के लिए निर्गुण रूप को त्याग कर सगुण रूप धारण करता है।[111] अपने निर्गुण स्वरूप में आत्मा जीव देह की उपाधि माया प्रकृति के शुद्व (विशुद्ध सत्व) और अशुद्ध (सत्व, रज और तम) गुणों देशकाल कार्य कारण भाव, ज्ञान और द्वन्द्वादि के परे पूर्ण निरूपाधि प्रकाशवान और पूर्ण सत्ता है जो तटस्थ मौन एकरस रहती

है। किन्तु आत्मा का सगुण स्वरूप देह और चित्त के माध्यम से अभिव्यक्त होता है। प्रेमानुभूति से ही आत्मा प्रकाशित होती है तथा आनंद कला की ज्योति प्रस्फुटित होती है। निर्विकार प्रेमानुभूति विराट व्यापक और अतिशय प्रभाव शाली होती है। जिससे अन्त:करण में स्थित आत्मा का सद्य: अनुभव तथा साक्षात्कार होता है तथा जीव जगत और निखिल प्रकृति के रहस्य का उद्‌घाटन हो जाता है। निर्मल प्रेमानुभूति की इस विशिष्ट भाव दशा में चराचर जगत के सभी पदार्थ एक ही विराट सत्ता सूत्र में गूंथे हुए मणिगण के समान संयुक्त प्रतीत होते है।

मत: परतरं नान्यत्किंचिदस्ति धनंजय।

मयि सर्वमिंद प्रोंत सूत्रे मणिगणा इव ।।7।।(112)

विशुद्ध प्रेमानुभूति की इस विशिष्ट भाव दशा के पहले सब कुछ निर्जीव निरानंद और जड मालूम पडते है। किन्तु इस अनुभूति को प्राप्त करते ही सभी प्राणमय आनंदमय और चेतनमय हो उठते है। इसी विशुद्ध प्रेमानुभूति से मनुष्य प्रकृति बंधनों से विमुक्त होता है। और देह तथा चित्त से उपर उठकर अपनी आत्मा के आनंदमय स्वरूप में एकाकार हो जाता है।(113) ''सर्वो हि आत्मास्तित्वं प्रत्येति, न नाहमस्मीति। यदि हि नात्मत्व प्रसिद्धि; स्यात सर्वो लोको नाहमस्तीति प्रतीयात्।''

सारांश यह है कि आत्मा ही प्रेम भावना का उदगम स्थल है। आत्मा के विचार से प्रेम नित्य आत्मा का शाश्वत धर्म है। प्रेम की यथार्थ सत्ता के मर्मोदघाटन का तथा उसकी उदात्त अनुभूति का एकमात्र आधार आत्म तत्व ही है।(114) चित्त की भूमि पर उदित होने तथा इन्द्रियों के माध्यम से अभिव्यक्त होने के कारण प्रेम की वृत्ति प्रकृति धर्म के समान प्रतीत होती है। इस प्रकार प्रेम चित्त का गुण ठहरता है क्योंकि वह चित्त से उत्प्रेरित होकर देह के माध्यम से अभिव्यक्त होता है। इसमें तो कोई संदेह ही नहीं कि देह से सम्बद्ध होकर ही चित्त वृत्तियों को उपजाता है और चित्त से सम्बद्ध देह ही उन वृत्तियों के अनुरूप आचरण करता है। तात्पर्य यह है कि देह सम्बन्ध बिना किसी भी वृत्ति का उदय नहीं होगा।(115) यही सिद्धांत प्रेम वृत्ति के सम्बन्ध में भी सिद्ध होता है किन्तु प्रेम वृत्ति के पोषण और विकास के लिए आत्म तत्व का आधार परमावश्यक है। अत: प्रेम के पूर्ण विकास के लिए आत्मा और देह सभी को पूरी पूरी आवश्यकता है। आत्मा रूपी प्रकाश जल पवन आदि के बिना प्रेम बीज का पल्लवन व विकास नितांत असम्भव है। ..... आत्म तत्व प्रेम विकास में सहायक होकर पुन: आत्मा में ही लौट जाता है। आत्मा प्रेम प्रकाशन के लिए चित्त भूमि पर उतरती है। .... सब कुछ कार्य कर प्रेम पुन: अपने मूल स्थान आत्मा या परमात्मा में ही लौट आएगा। ......

प्रेमी रूपी अमर अग्नि आत्मा से उत्पन्न होकर काष्ठ के समान क्षण भंगुर देह को समाप्त कर स्वयं पुन: अविकृत रूप में आत्म तत्व को ही लौट जातीहै । अत: प्रेम का प्रकाशन चित्त या देह के द्वारा ही सम्भव हो सकता है यद्यपि वह अपने आदिरूप में आत्म में ही निवास करता है । अत: शाश्वत धर्म है । इस प्रकार आत्म तत्व से नि:सृत चित्त भूमि में संचरण करने वाला तथा देहन्द्रिय को प्रकृ त माध्यम से प्रकाशित करने वाला प्रेम ही जीवन का सारभूत पदार्थ है । परम पुरूषार्थ है । इसका मधुर पर्यवसान दिव्य ज्योति मर्य सूक्ष्म एवं आनंदमय आत्म जगत में ही होता है । समस्त आनंद प्रदायक इन्द्रिय व्यापारों के मूल में आत्मा की प्रेरणा की क्रियाशीलता रहती है । वही प्रेम की मधुर अनुभूति को चेतनता उदात्तता एवं दिव्यता प्रदान करती है । प्रेम की उदात्त अनुभूति की विशिष्ट भाव दशा में प्रेम आत्मा और परमात्मा में कोई अन्तर नहीं रह जाता ।

love is a condition of soul"(116)

x x x

Love is God and God is love(117)

...first that love exists only in relation to some object and second that object must be something of which he is at present in want"(118)

ऐसी अवस्था में चित्त और देह के माध्यम से प्रकाशित होने वाला प्रेम प्रकृति धर्म से विरहित हो जाता है और प्रकृति बन्धन का कारण न बनकर मुक्ति की आनंद प्रदायिका बन जाती है । समस्त अन्त:करण रूप चित्त जितना ही अधिक निर्विकार होता है, शाश्वत आत्मा का शाश्वत प्रेम प्रकाश उतना ही प्रोज्जवल हो कर आगे इन्द्रियों की ओर विकीर्ण होता है। आत्मतत्व की दिव्य मनोभूमि पर प्रेम की उदात्त अनुभूति ही भक्तों और संतो की प्रेम साधना का प्रमुख लक्ष्य है ।

प्रेम वृत्ति के विविध रूप-

प्रेम वृत्ति के सम्यक प्रकाशन के लिए द्वैत की कल्पना अनिवार्य है । उपास्य और उपासक स्वामी और सेवक प्रेमी और प्रेमिका और सखा सखा आदि मानवीय युगल सम्बन्धों के बिना प्रेम वृत्ति चरितार्थ नहीं हो सकती । प्रेम एक ऐसा सार्वजनीन और सर्वव्यापक भाव है जो लौकिक क्षेत्र में अनेक भूमिकाओं में प्रकट होता है । इसके अतिरिक्त अलौकिक अथवा अद्वितीय प्रेमास्पद के प्रति चरितार्थ होते हुए भी वह कई रूपों में अभिव्यक्त होता है । प्रमुख मानवीय भाव बन्धनों तथा उनके अनुरूप की जाने वाली उपासना विधियों के अनुसार प्रेम

शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य और मधुर (दाम्पत्य) भावों में विशेष रूप से प्रकाशित होता है।

दाम्पत्य प्रेम–

शान्त दास्य सख्य और वात्सल्य भाव के अन्तर्गत प्रेमानुभूति की वैसी तीव्रता नहीं पायी जाती जैसी दाम्पत्य भाव के अन्तर्गत उसकी तीव्रानुभूति होती है। दाम्पत्य भाव के प्रेम में आत्म समर्पण अर्थात तत्सुखे सुखित्वं की भावना अपने चरम रूप में चरितार्थ होती है। यहीं कारण है कि मध्यकालीन धर्म साधना के क्षेत्र में ईश्वरीय प्रेम का सर्वाधिक प्राणमय प्रकाशन उसी प्रसंग में हुआ है जहां प्रेमी भक्तों ने अपने प्रेमास्पद भगवान को कान्ता भाव से ग्रहण किया है। कान्ता भाव के अन्तर्गत भक्त अपने को प्रिया तथा भगवान को अपना प्रियतम मानकार उपासना करता है तथा उसके सभी संयोग वियोग जन्य अन्तर्दशाओं की अनुभूति करता है। जिन्हें लौकिक नायिका अपने नायक के मिलन और विरह में अनुभव करती है। संयोग और वियोग की विविध भाव दशाओं में मग्न होकर भावुक भक्त अनिवर्चनीय आनंद प्राप्त करता है।

प्रभु व्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम ते प्रकट होहि मैं जाना।

X X X

चहौं न सुगति सुमति संपति कछु, रिधि सिधि विपुल बढाई।

हेतु रहित अनुराग रामपद, बढ अनु दिन अधिकाई॥

उसे इस बात का पूरा विश्वास रहता है कि सर्वव्यापक प्रभु प्रेम के वशीभूत होकर ही प्रकट होते है। इसीलिए वह सुगति सुमति, संपत्ति, ऋद्धि, सिद्धि, विपुल, विरूदावलि सबको त्याज्य मान कर केवल अनुदिन वर्द्धमान हेतु रहित हरि पदानुराग की कामना करता है।[(119)] अपने इष्टदेव के प्रति अन्तरंगता तथा तज्जन्य आनंद लाभ की दृष्टि से कान्ता भाव की उपासना सर्वश्रेष्ठ मानी गई है।

निर्भर प्रेम मगन मुनि ग्यानी। कहि न जाइ सो दसा भवानी॥

दिसि अरू विदिसि पंथ नहि सूझा। को मैं चलेउँ कहा नहि बूझा॥

कबहँक फिरि पाछे पुनि जाई। कबहुँक नृत्य करइ गुन गाई॥

अबिरल प्रेम भगति मुनि पाई। प्रभु देखैं तरू ओट लुकाई॥

कान्ता भाव के प्रेमोन्माद में भक्त को अपने प्रेमास्पद भगवान के प्रति एकात्म भाव की उदात्त एवं गम्भीर अनुभूति होती है। यहां तक कि प्रेमोन्मादना के कारण वह सुध–बुध खो

बैठता है और उसकी चेष्टाएं लोक वाह्य जैसी प्रतीत होती है।[120] जीवात्मा और परमात्मा के एकात्म भाव की सम्यक् अभिव्यक्ति के लिए भावुक भक्तों एवं संतो ने उपासना के क्षेत्र में स्त्री पुरूष के दाम्पत्य सम्बन्ध की उद्भावना की है तथा इसके मधुर भाव सम्बन्धों का प्रतीकात्मक प्रयोग किया है। सामान्य रूप से प्रेम की तीन कोटियों मानी गई है। देवता ऋषि एवं अन्य पूज्य गुरूजनों के प्रति लघुजनों द्वारा की जाने वाली प्रीति को श्रद्धा या भक्ति कहते है। समन्वयस्क मित्रों या प्रेमी प्रेमिका की पारस्परिक प्रीति को 'प्रणय' की संज्ञा दी गई है। पुत्रादि या अन्य स्नेह भाजन के प्रति गुरूजनों द्वारा की जाने वाली प्रीति को वात्सल्य कहा जाता है। प्रेम की इन तीन कोटियों में समवयस्क प्रेम प्रेमिका की प्रणय लीला सर्वाधिक व्यापक और प्रभाव शाली मानी गयी है। क्योकि प्रेम की इसी कोटि में सम्भ्रम रहित पूर्ण तादाम्य भाव की मधुर अनुभूति होती है तथा शारीरिक और मानसिक सम्बन्धों का सहज और पूर्ण विकास होता है।[121] अतएव दाम्पत्य भावपरक मार्धुय भाव ही मानवीय प्रेम का उदात्त एवं विकसित रूप है।

ईश्वरीय प्रेम–

उपर्युक्त सभी प्रेम रूपों का चरम विकास ही ईश्वरीय प्रेम है। ईश्वरीय प्रेम की सर्वाधिक तीव्रानुभूति तथा सम्यक अभिव्यक्ति सेव्य सेवक भाव और वात्सल्य भाव की अपेक्षा कान्ता भाव में ही सम्भव होती है। इसीलिए निर्गुण और सगुण दोनो प्रकार के साधना मार्गो में कान्ता भावपरक मधुरोपासना को प्रश्रय दिया गया है। किन्तु इस प्रसंग में यह ध्यातव्य है कि निर्गुणों पासक संतो ने जहां –

करग्रहविधि प्राप्ता: पत्युरादेश तत्परा:।

पतिवृत्यादविचत्रा: स्वकीया: कथिता इह ॥

स्वकीया[122] प्रेम को आदर्श मानकर मधुरोपासना के मर्यादित रूप को उपस्थित किया है वहां सगुणोपासक वैष्णवाचार्यों ने अपने भगवत्प्रेम की तीव्रता को प्रदर्शित करने के लिए –

रागेणैवार्पितात्मानो लोकयुग्मानु पेक्षिणा।

धर्मेण स्वीकृता यास्तु परकीया भवन्ति ता: ॥

परकीया प्रेम [123] को आदर्श मानकर अपनाया है। पूर्वराग प्रेमाकर्षण भावावेगों की तीव्रता रासोल्लास प्रेम की परिपूर्णता नित नूतनता एवं रमणीयता की दृष्टि से भी स्वकीया प्रेम की अपेक्षा परकीया प्रेम अधिक स्पृहणीय माना गया है।

स्वकीया प्रेम की अपेक्षा परकीया प्रेम में प्रेभानुभूति को अति तीव्र बनाने वाले विरह

और मान की भी अतिशयता रहती है। प्रेम दर्शन के तत्वज्ञो ने विरह को प्रेम की शाश्वत गति कहा है। वस्तुत: विरह ही प्रेम का जीवन है। विरह की आंच में तप कर प्रेम तप्त स्वर्णवत शुद्ध बन जाता है और प्रेमी के हृदय में स्वसुखी भाव के बदले तत्सुखी भाव का प्रार्दुभाव हो जाता है। इस प्रकार विरह और मान संवलित परकीया भाव मधुर रस के आस्वादन में अति सहायक सिद्ध होती है।

नित्य बिहार प्रेम-

तात्विक दृष्टि से शक्ति और शक्तिमान के नित्य बिहार प्रेम में कभी वियोग नहीं होता इसमें मिलन विरह से परे समरसता की स्थिति सदैव विद्यमान रहती है तथा शक्ति शक्तिमान के परम विलक्षण मधुर प्रेम रस में निरंतर मग्न रहती है। इसमें संयोग ही संयोग है। वियोग कभी होता ही नहीं। अतएव प्रेम को नित नूतन और आस्वाद्य बनाये रखने के लिए सूक्ष्म विरह और सूक्ष्म मान की उद्भावना की गयी है। इस प्रकार के सूक्ष्म विरह और सूक्ष्म मान से संयुक्त प्रेम में प्रिया प्रियतम एक पल भी एक दूसरे से वियुक्त नहीं रह सकते किन्तु साथ रहकर विरह सदृश अतृप्ति का अनुभव करते हुए और अधिक सामीप्य की कामना से आनन्दित एवं पुलकपूर्ण बने रहते है।[(124)]

भक्ति शास्त्र के अनुसार माधुर्य्य प्रेम के पाँच प्रकार के रसों में से शान्त रस की सिद्धि प्रेम की अवस्था तक दास्य रस की सिद्धि राग की अवस्था तक होती है। इनमें मधुर ही एक ऐसा विलक्षण रस है कि वह भाव की अवस्था तक पहुंचने में समर्थ है। 'भाव' के दो भेदों में रूढ दशा तक कृष्ण महिषी गण (स्वकीयाएं) तथा अधिरूढ दशा तक केवल गोपियां (परकीयाएं) ही पहुंच पाती है। अतएव प्रेम की चरम परिणति महाभाव दशा की प्राप्ति का एकमात्र श्रेय परकीया भाव को ही है।

मधुर रस : आत्मा का रसमय अनुभव

प्रेम का प्रमुख धर्म आत्मा को तृप्त करना है। यह आत्मा तृप्ति श्रद्धा भक्ति वात्सल्य दाम्पत्य आदि किसी भी प्रेम रूप से संभव हो सकती है, किन्तु इसके लिए प्रेम की उच्चता परमावश्यक है। प्रेम सम्बन्धों में दीप शिखा सी मनुष्य की उर्ध्वमुख चेतना या आत्मतत्व का जितना ही अधिक समावेश होता है प्रेम उतना ही व्यापक उदात्त यह है कि 'प्रेम' मनुष्य को 'स्व' की मुद्र सीमा से बाहर निकाल 'पर' और दिव्य बनकर आत्मा को संतृप्त मुक्त और विमल बनाने में समर्थ होता है। तात्पर्य की सीमा का अतिक्रमण करते हुए सर्व के निस्सीम लोक में पहुंचाने वाला है। इस विशिष्ट अवस्था में प्रेम आत्मा के रसमय अनुभव के रूप में सिद्ध होता है तथा जीवन की पूर्णता का परिचायक बन जाता है। आत्मा के इसी रसमय अनुभव के अनिवर्चनीय आनंद और शान्ति उपलब्ध होती है। साधना के क्षेत्र में मधुर रस

साधना के सन्निवेश एवं कान्ता भाव की मधुरोपासना का यही एकमात्र लक्ष्य है। मधुर रस की दृष्टि से प्रेम सृष्टि का सर्वोत्कृष्ट आध्यात्मिक नियम है। यहीं शाखत आत्मा का चिरंतन धर्म है। संक्षेप में प्रेम ही जीवन की संजीवनी शक्ति है वही मनुष्य की भौतिक और आध्यात्मिक कर्म कौशल की प्रतिभा है वहीं दिव्य चेतना की स्फू र्ति है तथा सृष्टि और आनंद की अमर प्रेरणा है। इसीलिए सामान्य रूप से प्रेम को धर्म अर्थ काम और मोक्ष से परे पंचम पुरूषार्थ की संज्ञा दी गई है। भावुक भक्तों ने उपास्य और उपासक के बीच कान्ता भावपरक मधुर प्रेम सम्बन्ध की उदभावना द्वारा प्रेम के पूर्ण रूप को प्रतिष्ठित किया है।

इस प्रकार प्रेम दर्शन का सिद्धांत अपूर्ण को पूर्ण से मिलाने का तथा उसे पूर्णता प्रदान करने का विलक्षण साधन है। इसकी सबसे बडी विलक्षणता यह कि प्रेम भावना की यह उदात्त अनुभूमि इन्द्रियों के माध्यम से भी प्राप्त होती है। अतएव प्रेम दर्शन के इस रहस्य को जानने वाले साधक और कवि इन्द्रियों की सहजानुभूति के माध्यम से ही मुक्ति पाने की कामना करते है। ऐसा वे इसलिए करते है कि उनकी दृष्टि में लिखित सौन्दर्य रसानंद स्वरूप ब्रह्म कभी अपने आपको इन्द्रियों में अभिव्यक्त कर रहा है। इस तरह प्रेम दर्शन और उसके व्यावहारिक रूप का सारभूत तत्व मधुर रस ही है जो बन्धनों के बीच मधुर मुक्ति की उपलब्धि और तदजन्य आनंद रस के आस्वादन का अभिनव सोपान है।

प्रेम वस्तु नहीं प्रेम दृष्टि है विचार है। जीवन की वह सुखद अनुभूति है जिसके बिना जीवन निस्सार प्रतीत होता है। संसार की सभी भावनाओं पर नियंत्रण किया जा सकता है लेकिन प्रेम भावना पर किसी प्रकार का नियंत्रण नहीं रह जाता है। स्वभाविक रूप से जीवन सुख की कल्पना करता है और वह सुख प्रेम की परिकल्पना से स्फुटित होता है। यह माना जाता है कि प्रेम के उद्‌गम में सहायक काम होता है। लेकिन वस्तुत: प्रेम के उदगम के पश्चात काम की उदिग्ध भावना पर नियंत्रण होना चाहिए। छायावादी युग निर्माता जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित कामायनी में मनु और श्रद्धा में बीच पल्लिवत प्रेम में सौन्दर्य एवं काम की भावना प्रमुख थी लेकिन प्रेम का चरम तत्व मातृत्व होता है लेकिन पुरूष के द्वारा प्रेम की सुखद अनुभूतियां को मातृत्व को काम के साथ जोडकर देखना ईर्ष्या उत्पन्न करता है। कामायनी में मनु औरत के मिलन एवं काम के पश्चात के द्वारा श्रद्धा को पुत्र होने एवं सम्पूर्ण बात्सल्य काम की सुखद अनुभूतियों को केवल दर्शन मात्र कर लेने से तृप्ति न होकर उसके काम भावना को उदिध्न करता है। और मनु के अवचेतन मस्तिष्क पर छायी हुई काम भावना चेतन मस्तिष्क पर हावी हो जाती है और इसकी तृप्ति की खोज में वह इडा के पास चला जाता है।

निष्कर्षत: प्राच्य एवं पाश्चात्य ग्रन्थों के साथ साथ वर्तमान में भी जहां एक ओर समाज के रीति रिवाजों एवं परम्पराओं के डोर से बंधा हुआ (दाम्पत्य, ईश्वरीय) प्रेम अमृत के समान बताया गया है वहीं दूसरी तरफ इन्हीं परम्पराओं और रीति रिवाजों की बेडियों को तोडकर किया गया प्रेम विषमय एवं अराजक के नाम पर जाना जाता है। वस्तुत: प्रेम निर्मूल है प्रेम शाश्वत है यह ईश्वर की वह ईबादत है जो ईश्वर का आत्म से साक्षात्कार में सहायक होती है।

सौन्दर्य स्वरूप एवं अवधारणा –

''लज्जावासो, भूषणं शुद्ध शीलं, पादक्षेपो धर्म मार्गे च यस्या: ,
नित्यं पत्यु: सेवनं, मिष्ट वाणी, धन्या सा स्त्री पूजयत्येव पृथ्वीम्।

विकास बाद की दृष्टि से देखा जाय अथवा पौराणिक विवेचन का आश्रय लिया जाय, यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि मानव किसी मूल इकाई से अवतरित निर्मित या विकसित हुआ है। चाहे हम यह मान लें कि वह एक कोष्ठाणु से विकसित होता हुआ इस रूप को प्राप्त हुआ है, अथवा यह कि उसे परमात्मा ने अपने ढांचे में ढाला है – यह बात ज्यों कि त्यों स्थिर है कि मानव की मूल चेतना एकत्व की ओर ही अनुवृत्त रहती है। अपने मूल एकत्व की खोज में उसकी भावना निरंतर व्यग्र रहती है। विश्व की अनेकानेक रंगीनियों में उसका रागाकुल आकर्षण इसी अन्तर्निहित मूल वासना का परिणाम है। विभिन्न अवस्था विशेषों में उसका अनुराग विभिन्न लक्ष्यों को त्यागता और ग्रहण करता चलता है और प्रायश: वह किसी भी सांसारिक वस्तु पर अपने राग का स्थायित्व नहीं कर पाता इससे स्पष्ट हो जाता है कि – "We know that according to Poaltinian metaphysics spirit is the direct emanation of the one.... It is also on this metaphorical conception that the conception of love that draws soul to beautiful (spirit) and the latter to the one is based; अनेकत्व में एकत्व को खोजने की मूल वृत्ति तब तक सतुष्ट नहीं हो सकती, जब तक वह अपने मूलाधार की अनुभूति न कर ले। विश्व के समस्त दर्शनों का यही लक्ष्य है। इसी का सम्यक ज्ञान सत्य की प्राप्ति है।''(125)

आनन्द की प्राप्ति – प्रो. श्री रामकृष्ण शुक्ल 'शिलीमुख ' के कला और सौन्दर्य लेख में ''सहज आकर्षण, सहज सौन्दर्य, आत्मा की सहज आनन्द वृत्ति है – सच्चिदानन्द का स्फुरण व्यापार है। यह न हो तो विश्व का संचरण बन्द हो जाये। कला इस सहज वृत्ति की सहज विकृति है, क्यों कि आनन्द व्यापार का अधिक से अधिक विस्तार ही सच्चिदानन्द की अंतिम कोटि की लक्ष्य सिद्धि है।(126) ''सौन्दर्य भावना आनन्द रूप ब्रम्हावृत्ति ही है, अर्थात

सौन्दर्य भावना आनन्द तत्व का ही प्रतिफलन है।"[127] "फिर भी प्रकृति माया मात्र है। वह मिथ्या है, इसीलिये कि वह किसी असल की नकल करती है। अत: उसके द्वारा किस पूर्णता को हम देखते है वह भी एक आभास ही है। पूर्ण सौन्दर्य आनन्द की वृत्ति जब इसे समझ लेती है तो मनुष्य योगी बन जाता है और चिरन्तन ज्योति के अखिल सौन्दर्य को प्राप्त कर वह अपने अखिलानन्द रूप को प्राप्त करता है। सच्ची कला यही है, क्यों कि सौन्दर्य भी प्रकाश रूप ही है। उससे हमारी आँखे खुल जाती है, ऑखे खुल जाती है कि हदृय खुल जाता है।[128]"

अनेकत्व में एकत्व का दर्शन ही आनन्द की प्राप्ति है। अपने को अनेकश: विखेर कर भी मानव को तब तक तोष या तृप्ति नहीं हो सकती जब तक कि वह परम एक की प्राप्ति न कर ले। अत: तात्विक विचारणा का निष्कर्ष यही है कि मानव का लक्ष्य आनन्द की प्राप्ति ही है। भारतीय दर्शन का प्राकश्य शब्द 'सच्चिदानन्द' भी यही प्रतिपादित करता है कि मूल सत्ता के परिज्ञान के अनन्तर ही आनन्द की उपलब्धि होती है, और परमात्म तत्व में आनन्द की प्रमुखता है। अपनी शारीरिक, भौतिक, मानसिक, और आध्यात्मिक सभी प्रवृत्तियों में मानव अपने किसी अभाव को भरना चाहता है और ये सब प्रयत्न–चाहे वे सांसारिकता में उलझे विरमें या झटके हुए ही हो– मूलत: आनन्द अन्वेषण के प्रयास है।"[129] मानव का रूदन और हास खगकुल का किटकिट और कलरव कोयल की हुक और कूक, वनचरों का रोर और शोर एवं जलचरों की कलबल और हलचल सभी उनकी आनंद लिप्सा के भावभाव पक्ष अभिव्यक्तियां है। समाज का लक्ष्य भी आनन्द प्राप्ति है। व्यतिश: मानव का जो भावनागत लक्ष्य है, वही समष्टिश: भी उसका लक्ष्य होगा ही। अत: समस्त मानव समाज का भी चरम लक्ष्य आनन्दोपलब्धि ही है। और यही कारण है कि मानव ने इसकी सम्प्राप्ति के हेतु सम्मिलित प्रयत्न किये है। ललित कलाओं के समस्त विकास उसकी इसी अभिलाषा के पूर्त्यर्थ हुए है। इतना ही नहीं, उसने भौतिक उपयोग की निर्मितियों के लिए भी कलाओं का प्रश्रय लिया और ऐसी वक्षता को उपयोगी कला से अभिहित किया है। सुरम्य उपवन, आवास, देवालय, चित्र आदि तो उसके आनंद के साधन है ही उसके दृष्टि क्षेत्र में आने वाली तुच्छ से तुच्छ वस्तु को भी उसने आनन्दप्रद रूप देकर ही संतोष किया है।

सौन्दर्य से आनन्द लाभ –ललित और उपयोगी कलाओं के माध्यम से मनुष्य जो आनन्द प्राप्त करता है, उस पर यदि हम विचार करे, तो यह होगा कि ऐसे पदार्थो में एक मनोरम सुन्दरता का आधान किया जाता है। उदाहरण के लिए मेज पर कागजों को सुडौल कागज दाब बनाया है वह रंग बिरंगी पुष्पाकृतियों से हदृया भिराम हो गया है। उम्रा का हास,

सुमनों का उल्लास निशिकर की जगर-मगर समीरण की सरसर, लहरियों का नर्तन और भ्रमरियों का नि:स्वन ऐसे प्रकृति सौन्दर्य से जैसे मानव आनन्दित होता है, वैसे ही उसने अपनी ही कृतियों में भी सौन्दर्य- समाविष्ट करके उन्हें आनन्द का साधन बनाया है। यही कारण है कि रंगो की रंगरेली और काट-छाट की अठखेली ने अनगिन डिजाइनों की ठेलपेली कर रखी है और मानवोपयोग की प्रत्येक वस्तु इसी कारण, नित नवीन रूप धारण कर सुहैल बन जाती है। प्रो. श्री गुलाबराय के लेख काव्य का क्षेत्र से - भेद में अभेद यही सत्य का आदर्श है और यही शिव का भी मापदण्ड है।'' सौन्दर्य बाह्य रूप में ही सीमित नहीं है वरन् उसका आन्तरिक पक्ष भी है। उसकी पूर्णता तभी आती है जब आकृति गुणों की परिचायिका हो। सौन्दर्य का आन्तरिक पक्ष ही शिव है। वास्तव में सत्य, शिव और सुन्दर भिन्न-भिन्न में एक दूसरे के अथवा अनेकता में एकता का रूप है। सत्य ज्ञान की अनेकता में एकता है, शिव कर्म क्षेत्र की अनेकता की एकता का रूप है, सौन्दर्य भाव क्षेत्र का सामजस्य है, सौन्दर्य हम वस्तुगत गुणों वा रूपों के ऐसे सामंजस्य को कह सकते हैं, जो हमारे भावों में साम्य उत्पन्न कर हमको प्रसन्नता प्रदान करे तथा हमको तन्मय कर ले।यह सौन्दर्य रस का वस्तु गत पक्ष है। '' आनन्द सौन्दर्य का आध्यात्मिक रूप है। सौन्दर्य में व्यापकता और व्यतिशयता के परस्पर विरोधी गुण एक साथ विद्यमान रहते है। सौन्दर्य वस्तु में, पार्थिवता में तो व्याप्त रहता ही है, पार्थिवता से ऊपर उठकर वह शुद्ध अध्यात्म तत्व भी है। ईशावस्योपनिषद्र में परमात्मा के लिए जो कहा गया है-''उत त्व पश्यन्न ददर्श वाचमुत त्व श्रुवन्न श्रृणोत्येनाम्।''(130)

उतो त्वस्मै तन्वं विस जायैव पत्य उशती सुवासा:। अर्थात वह वस्तु के भीतर भी है उसके बाहर भी है, वह मूर्त भी अमूर्त भी। सौन्दर्य तत्व की तुलना दार्शनिकों ने वाक से की है। जिस प्रकार वाणी शब्दमय होते हुए भी अर्थ रूप में आध्यात्मिक व्यतिशय है इसी प्रकार सौन्दर्य भी स्थल और सूक्ष्म दोनो ही है।''(131) सौन्दर्य की यह व्यतिशयता ही रस की उत्पादिका है। सुख दुखात्मक मानवीय सहज प्रवृत्तियों - कामनाओं, वासनाओ, और मूल पशु वृत्तियों की जब रसिक स्थूलता के बंधनों का उच्छेद कर आध्यात्मिकता के साथ चर्वणा करता है, तब उनसे अपूर्व रस की अनुभूति होती है। ऐसी दशा में प्रेरणा का सर्वथा अभाव रहता है।''(132)

''तेन व्यक्तेन मुंजीथा:'' अर्थात जीवन की वास्तविक परिस्थितियाँ तो प्रेरणा अवश्य उत्पन्न करती है साहित्य में रसिक की उन्हीं परिस्थितियों का कर्त्तव्यों पराम दशा मे आस्वादन होता है। पश्चात्य मनोविज्ञान ने भी भरत के इस मत की पुष्टि है। From the radiation of

the sexual passion, beauty borrows its warmth, and the whole sentimental side of our aesthetic sensibility .... With out which it would be preceptive and mathematical .... is due to our sexual organization remotely stirred."(133) [sense of beauty (page58) George santayana as quoted in saundarya shastra of Dr. Hardwari Lal sharma] In this case the stimulation is too weak to terminate in action .... and it is precisely because the tendency is unable in this case to reach its customary goal, because it is absolutely inhibited as soon as produced, that the phenomena are considered by themselves and not as a means to a special end; and that is the characteristic of aesthetic emotion,"(134) पोलहन भी मानते है कि सौन्दर्य ["The Laws of feeling"-Paulhan as quoted in -saundarya shastra by Dr. Hardwari Lal Sharma] भरत मुनि के अनुसार रस अथवा आनन्द का यह प्रेरणा हीन संसार मायिक होता है, दृष्टा के विश्वास और वासना पर आधृत होता है। शंकुक ने इसी बात को चित्रतुरंग न्याय से स्पष्ट करते हुए लिखा है कि जिस प्रकार चित्रलिखित घोडा सत्य नहीं होता, किन्तु उसे असत्य मान लेने पर उससे सौन्दर्य की प्रतीति भी नहीं हो सकती, उसी प्रकार द्रष्टा को भी स्वयं संचारित माया की सृष्टि को सत्य ही मानना होता है, तभी वह उससे सौन्दर्य एवं रस की उपलब्धि कर सकता है। इसी को वर्डसवर्थ ने 'willing suspension of disbelief ' कहा है और जर्मन दार्शनिक ग्रूस ने Conscious self illusion; कहते हुए स्पष्ट किया है कि सौन्दर्य भावना वस्तुत: कल्पना की भावना है (Assumption feeling;) जो सत्यासत्य दोनो से परे है। इससे स्पष्ट है कि सौन्दर्य चेतना प्रेरणामय क्रिया कलापों या अनुभवों से जागृत नहीं होती। स्त्री सौन्दर्य की सम्यक और पूर्ण अनुभूति भी वासना को तिरोहित कर देने पर ही हो सकती है। इस दृष्टि से कामायनी के मनु द्वारा वासना सहित और वासना रहित दशा में अनुभूत सौन्दर्य की तुलना की गई है।

वासना सहित अनुभूत सौन्दर्य–

कौन हो तुम खींचते यो मुझे अपनी ओर
और ललचाते स्वयं हटते उधर की ओर,
ज्योत्स्ना–निर्झर ठहरती ही नहीं यह ऑख
तुम्हे कुछ पहचानने की खो गई सी साख।
कहा मनु ने तुम्हें देखा अतिथि कितनी बार
किन्तु इतने तो न थे तुम देखे छबि के भार

पूर्व जन्म कहूँ कि था स्पृहणीय मधुर अतीत
गूंजते जब मन्दिर घन में वासना के गीत
मधु बरसती बिधु किरन है कॉपती सुकुमार
पवन में है पुलक मंथर चल रहा मधु भार।
तुम समीप, अधीर इतने आज क्यों है प्राण
छक रहा है किस सुरभि से तृप्त होकर प्राण।
चेतना रंगीन ज्वाला परिधि में सानन्द
मानती सी दिव्य सुख कुछ गा रही है छन्द।
अग्नि कीट समान जलती है भरी उत्साह
और जीवित है, न छाले है न उनमें दाह।
कौन हो तुम विश्व माया कुहुक सी साकर
प्राण सत्ता के मनोहर भेद सी सुकुमार
हहय जिसकी कांत छाया में लिए नि:श्वास
थके पथिक समान करता व्यजन ग्लानि विनाश। –वासना सर्ग–कामायनी

वासना रहित अनुभूत सौन्दर्य–

अरूणाचल मन मन्दिर की वह मुग्ध माधुरी नव प्रतिमा,
लगी सिखाने स्नेहमयी सी सुन्दरता की मृदु महिमा।
उस दिन तो हम जान सके थे सुन्दर किसको है कहते।
जीवन कहता यौवन से कुछ देखा तूने मतवाले।
यौवन कहता सॉस लिए चल कुछ अपना सम्बल पाले।
हद्दय बन रहा था सीपी सा तुम स्वाती की बूँद बनी,
मानस शतदल झूम उठा जब तुम उसमें मकंरद बनी।
तुमने इस सूखे पतझड में भर दी हरियाली कितनी।
मैं समझा मादकता है तृप्ति बन गई वह इतनी। x x x

तुम अजस्त्र वर्षा सुहाग की ओर स्नेह की मुध रजनी, चिर अतृप्ति यौवन यदि था तो तुम उसमें संतोष बनी। –निर्वेद सर्ग: कामयनी

आनन्द की लयावस्था - सौन्दर्य में अवगाहन करने से जगत् विस्मृति और आत्म विस्मृति स्वयं ही हो जाती है। जब व्यक्ति को न जगत् के नानाविध माया जालो।''(135) का और न अपने अहंभाव का ध्यान रह जाता है। जब इनके प्रतिबिम्ब उसके मानस मुकुर में पर पडते ही नहीं, जब इनकी सत्ता का ही उसके अतंस् पटल से लोप हो जाता है तब वह शुद्ध बुद्ध निरंजन ''(136) रह जाता है दूसरे शब्दों में उसकी आत्मा का लय परमात्मा में हो जाता है उसे ब्राम्हानन्द प्राप्त हो जाता है , जो कि वस्तुत: परमानन्द है।

According to plotinus (204-269) a Greek philosopher .... If we look at this level from the point of view of the soul that has ascended to spiritual level. We find that distinction between the subject and the object just appears and is on the verge of disappearing, that all variety and multiplicity of the universe is reduced to a single Inter connected system of types and laws and is apprehended as whole at a glance; that there is perfect forgetfulness of distnction between subject and object and identification of thinker with what is thought about and that the vision of truth is syneptic and not synthetic. It is timeless, thought and being arise at this level. Being the first limitation, in which the one manifests itself. It is a state of pure universal sole consciousness, which may be represented as 'am;(137)

B- "Thus in aesthetic contemplation there is complete loss of personality. The subject becomes the object the soul ceases to be a personality." (138)

C- According to heibniz (1646-1716) a german philosopher... "God, therefore, is a monad, in which in finite degree of representation of the universe in reached and realised. He is the moand of moands the highest monad." (Page279)

x x x x x x x

We also know that God. as moand of moands is perfect and that is his perfect intelligence, nature of all things. actual and possible is represented with absolute clarity Representation of the whole universe in perfect intellingence therefore, is universal harmony. In the presentation of the fourth, the final level of aesthetic experience, leibing allies himself with the mystic school of aesthetic such as that of plotinus. At this level of aesthetic. Experience microcosm becomes mocrocosm, the individual is transformed into universal : moond attains Godhead," (139)

D- रस सिद्धांत पर समस्त भारतीय ग्रन्थ।

E- Psychology of Rasas - Rakesh Gupta

सौन्दर्य सत्य और शिवत्व की एकता -

प्रसन्नता, हर्ष या सुख तो इस आन्दर का करोडँवा भाग भी नहीं। उनका इससे पासंग ही क्या। यह आनन्द तो शिवत्व की चरमावधि है। जीवन की अनेकानेक अनुभूतियों के सामंजस्य और विचारों की संगति से बुद्धि प्रसादयुत होकर परम शांति का अनुभव करती है। "Beauty according to him, Baumgarten (174-1762) a German philosopher is felt perfection. Distinction between beauty and truth is purely subjective. The same attributes (perfection) of reality is called truth or beauty according as it is grasped by reason or feeling. In his conception of perfection here, he follows wolff. according to whom it was nothing but logical relation of the whole to parts, of unity in multiphicity. Beauty, therefore, according to him is nothing but felt harmony of parts with one another and the whole acordingly ugly is the absence of this feeling of harmony" (140)

Thus, the aesthetic experience, accomrding to descartes, is the experience of intellectual joy accopanied by an emotion and therefore, by the other three types of joy sensouous, imaginative and emotional"(141)

Aesthetic experience, therefore, according to Kocke, is a pleasant deception, caused by artistic presentation of false creations of imagination."

"But feeling though not identical with aesthetic activity or intention, is a necessary accompaniment of it. For crose holds that all the forms of spiritual activity are closely related to one another and that every one of them is accompanied by the elementary pleasure or pain pleasure is due to the attainment of the aim of a spiritual activity whether it be theoretical or practical."(142)

ब्रम्हानन्द की इस अनुभूति में सत्य और शिवत्व की सी सहयुति है। सौन्दर्यानुभूति इस प्रकार सत्यानुभूति और शिवानुभूति की तद्रूपता है। शिव कामना मनुष्य जीवन का परमध्येय है। यह चरमादर्श तभी प्राप्त हो सकता है जब मानव ने परम सत्य का दर्शन कर लिया हो, अनेकत्व में एकत्व की प्रतीति व्यष्टिगत भेदों को दूर भगाकर उसे समाष्टि का अंग बना लिया हो। वस्तुत: शिवत्व धर्म मर्यादित आध्यात्मिक विकास की उदस्त परिवित है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि सौन्दर्य की चेतना सत्य का उद्घाटन करती है। सत्यकी प्रतीति से पुन: सौन्दर्य का विस्तार होता है, जो शिवत्व की उपलब्धि करता है। शिव दृष्टि से सुन्दर में नूतनता और रमणीयता का उदय हो जाता है।"Beauty is truth, truth beauty....that is all ve know on earth and all ye need to know.(143)

काव्य, चित्र, नृत्य, संगीत, लक्षण और स्थापत्य एवं अम्बर सुमन सरितादिक का सौन्दर्य सत्य की प्रतीति कराते हुए अनुभूति का आनंद प्रदान करता है ।

सौन्दर्य और नीति – नीति अथवा धर्म की मान्यताएं वस्तुत: सत्य की ही अनुभूतियां है । अत: नीति से सौन्दर्य का प्राणन और विस्तार ही होता है । हमारे आचार विचार और व्यवहार हमारी सांस्कृतिक निधियाँ है, जिनकी सुचारता से सौन्दर्य शिव में और भाव कर्त्तव्य में अनुप्राणित हो जाता है । किन्तु नीतिगत सत्य देश काल की सीमाओं से आवद्ध और प्रभावित अवश्य होता है । यथा न बुद्ध ने करूणा, ईसा ने प्रमा और मुहम्मद ने विश्व बन्धुत्व की भावना में सत्य का साक्षात्कार लिया था । यह सब सत्य अवश्य है, किन्तु एक सीमा में बंधे हुए व्यापक सत्य के ये सब अंश मात्र है और जीवन के विकास के साथ–साथ इन सत्यांशों से आंगे अन्यान्य प्रतीति कराता रहता है ।''

सुमित्रानन्दन पन्त – क) वही प्रज्ञा का सत्य स्वरूप, हृदय में बनता प्रणय अपार

लोचनो में लावण्य अनूप , लोक सेवा में शिव अविकार ।(144)

सत्य की व्यापकता हो तदनुसारी सौन्दर्य का विस्तार भी होता रहता है । अत: यह कथन असंगत न होगा कि नीति से सौन्दर्य से पुष्ट अवश्य होता है, किन्तु सौन्दर्य नीति के सीमा बन्धन से सदा ऊपर उठा रहता है । सत्य और सौन्दर्य स्वयं में पवित्र और शिव है, उन्हे नीति के शिवत्व और पुनीतत्व के आरोप की अपेक्षा नहीं होता उनकी पुनीतता और शिवता नीति राजय पवित्रता से कहीं अधिक व्यापक है ।

सौन्दर्य और संस्कृति– सुमित्रानन्दन पन्त :

कहा खोजने जाते हो, सुन्दरता और आनन्द अपार ? इस मांसलता में है मूर्तित, अखिल भावनाओं का सार । मांस मुक्ति है भाव मुक्ति, औ भावन्मुक्ति जीवन उल्लास,

मांस मुक्ति ही लोक मुक्ति भव जीवन का जो चरम विकास ।

मांसों का है मांस मानुषी, मांस करो इसका सम्मान,

निर्मित करो मांस का जीवन जीवन मांस करो निर्माण । –जीवन मांस–युगवाणी

इस प्रकार सौन्दर्य नीति का गुण–भाग ग्रहण करता हुआ मधुर रूप में उपस्थित होता है, जो मनुष्य की रागात्मकता को ही नहीं अपितु प्रज्ञा को भी आप्लावित कर देता है । सौन्दर्य के प्रभाव से मानव चिन्तन की सुन्दरता धारणकर लेता है और वस्तु की वाह्य रमणीयता मानव की आन्तरिक रमणीयता का प्रकाश करती है ।'' रम्य सृष्टि हो रूप जगत की रम्य

धरा श्रृङ्गार। बाह्य रूप हो रम्य वस्तु का होंगे रम्य विचार''नारी रूप के लिए भी यह पूर्णतया चरितार्थ होता है। नारी सौन्दर्य के प्रभाव ने अनेक दुराचारियों में पुनीति सुरूचि और संस्कृति का संचार कर दिया है।''(16)

सौन्दर्य साहित्य का प्राण है – सत्य और नीति के साथ शिवत्व का योग जिस अपूर्व सौन्दर्य की सृष्टि करता है, वह अनुपम रूप से हृदय हारी होता है। हृदयानुरंजन काव्य का प्रधान गुण है, अत: काव्य अथवा साहित्य का प्राण सौन्दर्य ही है। सौन्दर्य के साथ ही आनन्द और लयावस्था अनिवार्य रूप से सम्बद्ध है, अत: सौन्दर्य चित्रण से ही काव्य का ब्रम्हानन्द सहोदरत्व निष्पन्न हो जाता है और उसी से उसका साधरीकरण भी प्रस्तुत हो जाता है। क्यों किं सौन्दर्य बोध समस्त मानव चेतना में एक सा है।

सुमित्रानन्दन पन्त – ''सुन्दर ही पावन, संस्कृत ही पावन निश्चय ,

सुन्दर हो भू का मुख, संस्कृत जीवन संचय

सुन्दर हो भव आलय, संस्कृत जड चेतन समुदय,

सुन्दर हो नव मानव, संस्कृत भव मानस की जाय।''

सौन्दर्य बोध से जिस परम सत्य की उपलब्धि होती है वह सभी मानवात्माओं को भावभूति की एकता पर पहुंचा देता है। सौन्दर्य ही निश्चयेन मानवता और संस्कृति का उद्‌भाव क है, सौन्दर्य निष्ठा से ही भव मानव संस्कृत होकर नव मानव के रूप में विकसित होता है।''

सुन्दर क्या है – अत: प्रत्येक साहित्यिक का यह कर्त्तव्य है कि जाता है कि वह सुन्दर के रूप में भली भांति अवगत हो। सौन्दर्य को विशदरूप से समझाने के लिए सौन्दर्य शास्त्र के अनेक मनीषियों ने प्रयत्न किये है, जिनमें कुछ परस्पर विरोधी भी है। फिर भी हम उनको समन्वयात्मक संक्षिप्त रूप रेखा इस प्रकार उपस्थित कर सकते है।

रूप भोग और अभिव्यक्ति के सामंजस्य से सौन्दर्य की प्रतीति होती है जो वस्तुएं या भाव इन तीनो के साम्य भाव से सम्पन होने के कारण रसिक या भाविक वा प्रेक्षक में अन्तश्चेतना जागृत करते हुए उसे रसचर्वणा में सक्षम बनाती है, वे सुन्दर कहलाती है।

भोग – भोग उस पदार्थ की संज्ञा है जो वस्तु का कलेवर बनाता है। इसमें रंग और ध्वनि के माधुर्य की प्रधानता होती है। रंग प्रकाश का ही एक रूप है। सूर्य प्रकाश में सात रंग होते है। जो पदार्थ उन प्रकाश किरणों में से जैसी किरणों को अभिशोषित कर लेते है, वे उसी रंग के दिखाई देते है। मानव जीवन से भी प्रकाश का घनिष्ट सम्बन्ध है विभिन्न रंग की किरणों

के उसके शरीर और मन पर भिन्न–भिन्न प्रभाव पडते है, और तदनुरूप उसकी गतिविधियों में भी अन्तर आ जाते है। यही कारण है कि साधारणतया मानव के अनजाने भी प्रकाश उसके जीवन के लिए अनिवार्य हो गया है, उसकी वेदना और संवेदनाओं से प्रकाश का अपरिहार्य सम्बन्ध हो गया है। कुछ कुछ प्रतिकूल। समय एवं परिस्थितियों के परिवर्तन से इस अनुकूलता या प्रतिकूलता में भी न्यूनाधिक्य या आवर्तन हो सकता है। कभी कभी रंगों के हलके और गहरे होने न होने का भी अवस्थानुकूल प्रभाव पडता है। रंगों का सामंजस्य तो प्राय: रूचिकर होता ही है। इन सूक्ष्म प्रभावों के कारण रंग मानव को अति प्रिय लगते है, और इसी कारण वे ततद वस्तुओं में मनुष्यों की रूचि और प्रियता जागृत करते है।

ध्वनि का माधुर्य भी वस्तु में सौन्दर्य को प्रतीति कराता है। कर्कश शब्द मनुष्य को प्राय: रूचिकर नहीं लगते है। युद्धादिक अवस्थाओं मे कठोर नाद भी अवसरानुकूलता के कारण अच्छे लगते है, तथापि सामान्य अवस्थाओं में श्रुति मधुरता ही रूचि सम्पन्नता का साधन बनती है। और वस्तु को सुन्दर बनाती है।

रूप – रंग और ध्वनि भोग्य पदार्थों के उचित विन्यास रूप का उदय होता है। अनेक में एक का बोध रूप है। जब अनेक रंगो को इस प्रकार संगत और विन्यस्त कर दिया गया हो कि उनसे रंगो की विभिन्नता प्रतीत न हो कर एक ही इष्ट रंग की प्रतीति होने लगे तब हमें रूप की उपलब्धि या सम्बुद्धि होती है। यही बात ध्वनि पर भी चरितार्थ होती है। ध्वनि के विन्यास से भी रूप का उदय होता है। सप्त स्वरों को भिन्न भिन्न प्रकार से विन्यस्त करने पर भिन्न भिन्न राग रागिनियाँ उत्पन्न होती है, और जिस प्रकार विभिन्न रंगों के भिन्न विन्यासों से भिन्न भिन्न रूपाकृतियाँ बनती है उसी प्रकार विभिन्न स्वरों के ताल, लय और मात्रा के विभिन्न विन्यासों से पृथक पृथक स्परूप राग रागिनियाँ बनते है। रंगो के विभिन्न रूप जैसे मानव में विभिन्न संवेदनाऍं जागृत करते है, वैसे ही विभिन्न राग रागिनियों से भी भिन्न भिन्न सम्वेदनाऍं तरंगित होती है।

रूप के प्रकार – प्रमुखत: रूप तीन प्रकार का होता है –

1) ज्यामितिक या सन्तुलित रूप : जिसमें वस्तु की माप सब ओर से ठीक और अनुपातिक होती है। सम्मात्रा भी इसी का एक गुण है।

2) सजीव रूप : जीवधारियों में और उनके कार्यों में रूप की सजीवता रहती है। संगीत, नृत्य, अभिनय, मानव, पशु आदि में सजीव रूप होता है।

3) प्रतीकात्मक रूप : प्रतीक वह रूप है जो अपने से अभिधार्थ में भिन्न किसी अन्य सूक्ष्म अनुभूति की अभिव्यक्ति करता है; यथा कमल को विमल सौन्दर्य का सिंह को शक्ति

एवं आत्म विश्वास का और कोकिल या वसन्त को जीवनोल्लासका प्रतिरूप माना जाता है; जैसे जायसी ने पद्मावती को –''तन चितउर, मन राजा कीन्हा। हिय सिघंल, बुधि पदमिनि चीन्हा ॥''(145)

रूप की सुडौलता – यूरोपीय सौन्दर्य शास्त्रियों ने जिनका मत यूनानी मूर्तिकला के सिद्धान्तों से प्रभावित है, रूप की सुन्दरता के लिए सापेक्षता, सम्मात्रा संगति और सन्तुलन के गुण अपेक्षित बताये है, जिससे वस्तु को एक व्यवस्थित क्रम तथा निश्चित आकार प्राप्त हो जाय। सन्तुलन को तो आनन्दवर्धनाचार्य ने भी आवश्यक कहा है क्योंकि वह प्रधान गुण भाव है।''सापेक्षता का अर्थ है अवयवों का ऐसा संयोजन कि वे परस्पर सम्बद्ध और पूरक बन जाये। सम्मात्रा का आशय यह है कि वस्तु के एक ओर का भाग का ठीक प्रतिरूप हो। विरोध के अभाव को संगति कहते है। अनेक की एकता रूप कहलाती है, और अनेक में एकता, समन्वय वा सामंजस्य कराने वाले हेतु को संगति कहते है। परिणाम की समता सन्तुलन है।

रूप को सुन्दर बनाने वाले गुण – माधुर्य लावण्य औदार्य एवं सुखकारिता के होने से रूप सुन्दर लगता है, अन्यथा रूप के होते हुए भी हमारा उसके प्रति कोई आकर्षण नहीं हो सकता।

मधुरता –''भवैत्सौन्दर्य भंगाना सन्निवेशो यथोचितम् श्री मदूप गोस्वामी के अनुसार रूप की मधुरता तब होती है, जब रूप का आविर्भाव करने वाले उसके अवयव भी पृथक पृथक रूप से आस्वादन योग्य हो। अवयवों का अविरोधी विन्यास जिसमें खण्ड से अखण्ड और अखण्डस हो। इस प्रकार से खण्ड की ओर अवधान हो जाय मधुरता है। इस प्रकार समग्र में अवयवों का चमत्कारी गुण ही मधुरता है। ''चित्त द्रवीभावमयोंऽऽ आह्लादो माधुर्यमुव्यते '' जिससे आकर्षण और विकर्षण की क्रिया चित्त में एक अपूर्व आह्लाद उत्पन्न करती है, चित को द्रवित करती है।'' संक्षेप में अवयवों के उचित संस्थान से उत्पन्न अविरोधी, समन्वित प्रभाव को ही हम माधुर्य नाम से अभिहित करते है।

लावण्य –लावण्य सजीव रूप में ही होता है। जब किसी सजीव रूप के अवयव इस प्रकार सम्बद्ध हो कि उनमें जीवन ओज की तरलता की तरंग प्रतिभासित होती हो तब वह लावण्य कहलाता है। गौर वर्णता और सुण्ठु मुखाकृति से भिन्न लावण्य की अपनी पृथक सत्ता होती है।

उदारता –उदारता विशेष रूप से ज्यामितिक रूप में होती है। जब सन्तुलित रूप में तरलता की तरंग की प्रतीति होती है तब हम उसे उदारता कहते है। ज्यामितिक के रूप प्राणियों के शरीर का भी होता है अत: उदारता मनुष्यों के रूप में भी होती है , उदाहरणार्थ श्री हर्ष का

कथन है कि–''धन्यासि वैदर्भि ! गुणैरूदारैर्थया समाकृष्यत नैषधोऽपि । इत: स्तुति: का खुल चन्द्रिकाया यदब्धि मस्युतरली करोति ॥''(146)

सुख कर्ता –

उपर्युक्त तीनो गुणों के भी होने का प्रयोजन यह है कि रूप सुखकर हो जो वस्तु सुखकर होती है, वही हमारे चित्त को आकर्षित करती है । सामंजस्य से सुख होता है, अनेकता में एकता की स्थापना से चित्त को प्रासादकिता प्राप्त होती है, और तभी ऐसा रूप जो एकसूत्रता प्रदर्शित करे सुन्दर प्रतीत होता है । एकसूत्रता के अभाव में चित्त खेदित होता है और तब रूप में दु:ख का अनुभव होने से वह कुरूप प्रतीत होता है । कुरूप और सुरूप के निणृय में प्रेक्षक का मन ही प्रधान है, और मन के लिए रूप की सुखकारिता विशेषत: अभिलाष्य होती है ।

रूप में विन्यास की क्षीणता –

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भोग्यांशो का सम्यक् विन्यास रूप की प्रतीति के लिये अनिवार्य है । तथापि विन्यास की चिरन्तनता में एक दोष भी हो जाता है वह यह कि उससे रूप में एकरूपता आ जाती है, सदा के लिये एक ही रूप स्थिर हो जाता है, और तब परिवर्तन के अभाव में आकर्षणार्हता का अभाव हो जाता है अत: रूप को निरन्तर रमणीय बनाये रखने के लिये यह परमावश्यक है कि उसके अवयवों का विन्यास की परिवर्तन शीलता से ही हमे सौन्दर्य के दर्शन होंगे और हम मानेगे कि – ''क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयताया:।''(147)

अर्थात सौन्दर्य प्रतिक्षण अपना नवीन रूप प्रकाशित करता है । Keats says," A thing of Beauty is a joy for ever; और इसीलिए वह शाश्वत आनन्द प्रदान करता है ।''(148)

अभिव्यक्ति –

अमूर्त को मूर्त करना अभिव्यक्ति है । जैसे चित्रकला वास्तु कला और मूर्ति कला के स्थूल उपकरणों में वैसे ही संगीत और काव्य के सूक्ष्म उपकरणों में भी अर्मूत का मूर्तीकरण ही अभिव्यक्ति कहलाता है । काव्य के सूक्ष्म अभिव्यक्ति कौशल पर विचारको ने सूक्ष्म विचार किया है, किन्तु उसका दिग्दर्शन हमारी सीमा में नहीं आता । हम इतना ही कहेंगे कि भोग और रूप के सौन्दर्य के साथ ही नारी में अभिव्यक्ति का कौशल पर भी पूर्णता विद्यमान है । यही कारण है कि मम्मटाचार्य भी काव्य शैली को नारी की नैसर्गिक शब्दावली के अनुरूप बनाने का सुझाव देते है, जब कि वे यह कहते है – 'कान्ता सम्मित तयौपदेशयुजे ।' ध्वनि में लोच होने में सौन्दर्य निहित है । काकु वक्रोक्ति आदि अलकारों का सौन्दर्य भी इसी में

है । सुन्दर अभिव्यंजनाओं का लक्ष्य आनंद है और ध्वनि की लोच तरल अभिव्यंजना की प्रमुख साधिका है । उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि सौन्दर्य शस्त्रियों के दो वर्ग है – एक तो वे जो सौन्दर्य पर विभाव (प्रमेय वा विषय) की दृष्टि से विचार करते है दूसरे वे जो आश्रम (प्रभाता वा विषयी) की अनुभूति को प्रधानता देते है । इनमें पहला दृष्टिकोण भौतिक वादी ही है और दूसरा आध्यात्मिक । क्योंकि मानव न केवल तन है न केवल मन बल्कि तनमन का संघात है अत: ये दोनो दृष्टिकोण एकांगी रह जाते है । यद्यपि डॉ. जेरार्ड, डॉ. सली तथा वैन आदि विद्वांन दोनो के समन्वय की ओर झुके है, तद्यापि सर्वतोगत्वा वे भी विभाव पक्ष की सीमा को पार नहीं कर सके । दाइदेरो के मत से सौन्दर्य वस्तु के अंगो के पारस्परिक संबंध में अवस्थित है – Beauty consists in the preceptions of relations."

प्रमेय पक्ष –

प्रमेय वा विभाव की दृष्टि से रूपगोस्वामी आदि भारतीय सौदारिको और अरस्तू आदि पाश्चात्य दार्शनिको ने जो विचारणाएँ की है वे सब क्षेमेन्द्र के औचित्य सिद्धांत में समाहित हो जाती है । वस्तुत: वे सब उपमितियाँ या प्रतिपत्तियाँ औचित्य का ही अंग है । रूप गोस्वामी का यथोचित संनिवेश औचित्य ही तो है । इसी प्रकार अरस्तू कथित सौन्दर्याग–सम्मात्रा क्रम और आकार होगार्थ प्रतिपादित–सौदर्यवयद सम्मात्रा, विभिन्नता, स्पष्टता जटिलता, क्षमता और विशालता, दाइदेरो और बर्क द्वारा निर्धारित सौन्दर्योपकरण लघुता मसृणता, कोमलता शुद्धता आभा एवं क्रमिक रूपान्तरण तथा रिचर्ड प्राइज और क्रूसाज द्वारा निश्चित सौन्दर्योपादान एकता, यथा भाव विभिन्नता, व्यवस्था, और अनुपात ये सब इतने विभिन्न नाम होते हुए भी औचित्य का सीमोलघन नहीं करते, औचित्य के ही विभिन्न पक्ष है । अत: यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि औचित्य (उचित स्थान विन्यास) में ही सौन्दर्य है जैसा कि रूप गोस्वामी ने सिद्ध किया है । कतिपय विभाव पाक्षिक सौन्दर्य शास्त्री परम्परा वधारित सौन्दर्य आदर्श को सौन्दर्य का हेतु मानते है । इस विचार धारा में प्रमाता की अनुभूति भी सौन्दर्य निश्चयीकरण का एक अंग मानी गई है किन्तु यह अनुभूति सर्वथा विभावाधृत ही होती है । अत: इस मत में भी आध्यात्मिकता नहीं ही है । इस मत के प्रस्थापक है वकी महोदय जिनका मत लार्ड कैमे, विलियम शेन्स्टन तथा अब्राह्य ट्यूकर के मतो का अनुसारी है । डॉ. जेराई ने आकृति और वर्ण के सौन्दर्य के अतिरिक्त उपयोग सौन्दर्य को भी स्वीकार किया है, जिससे प्रमाता व अनुभावक भी सौन्दर्य के अतिरिक्त उपयोग सौन्दर्य चेतना में गृहीत हो गया है । डॉ. सली का मत है कि सांबधिक वा वस्तुगत सौन्दर्य के साथ ही अनुभावक (विषयी) के केन्द्रीण और साहचरिक अभिव्यक्ति सौन्दर्य का भी अस्तित्व रहता है । एलीसन

जैफे तथा बैन आदि सौन्दर्य शास्त्री 'साहचर्य नियम' का प्रतिपादन करते हुए सौन्दर्य मीमांसा में विभाव को स्थान नहीं देते फिर भी उन्होने प्रकारान्तर से विभाव ही को सर्वस्व स्वीकार कर लिया है क्योंकि उनके साहचर्य नियम से जो सुखद सौन्दर्यानुभूतियाँ होती है, वे अनिवार्यत: विभाव के प्रभाव में ही जगती है। कुछ ऐसे विचारक है जो विभाव को नहीं किन्तु सामान्य प्रकृति को ही महत्व देते है। रेनाल्डस के विचार से प्रकृति प्रत्येक प्राणी और पौधे को एक पूर्व निर्णीत रूप की ओर विकसित करती जा रही है, जिस रूप से अभ्यस्त होकर भी हम उसके सौन्दर्य की चर्वणा करते है। "We adrnire beauty for no other reason than that we are used to it." रेनाल्ड्स के विचार से प्रत्येक प्राणी और पौधे को एक पूर्व निर्णीत रूप की ओर विकसित करती जा रही है जिस रूप से अभ्यस्त होकर भी हम उसके सौन्दर्य की चर्वणा करते है।'' डार्विन के मत से प्राणियों एवं पौधों के रूप रंग में प्रतीयमान सौन्दर्य का कारण है। प्रकृति निर्वाचन और कार्य (फल व उपयोग) है लिंग निर्वाचन जिससे वंश वृद्धि हो। मधुमक्खियों, तितलियों, भ्रमर और मानव भी अपनी सौन्दर्य लिप्सावश ही पौधों के पराग सेवन में कारण बनते है। फिर सौन्दर्य आत्मरक्षार्थ भी है, जैसे तितली का रंग बिरंगापन उस पुष्पों में छिपकर आत्मरक्षा करने में सक्षम बनाता है। स्त्री का सौन्दर्य भी सन्तानोत्पति के निमित्त पुरूष को आकर्षित करने के लिए है। एक अन्य प्रकार से भी प्रकृति सौन्दर्योत्पादिका कही गई है। ह्यूम के मतानुसार – " It must be allowed that there are certain qualities in objects which are gifted by nature to produce these particular feelings." ''विभावों में कुछ ऐसे है जिन्हे प्रकृति ने सौन्दर्य की इन विशेष भावनाओं को जगाने के लिए स्थापित कर दिया है।'' किन्तु फिर भी यह ध्यातव्य है कि Beauty is no quality in things themselves. If exists in the mind which contemplates them," सौन्दर्य वस्तुनिष्ट नहीं है, यह केवल सौन्दर्य चेतना में निहित रहता है।''

हर्बट स्पेन्सर ने एक मूल सौन्दर्य भावना की कल्पना की है, जो क्रमश: प्राकृतिक रूप से विकसित होती हुई व्यष्टि नहीं, समष्टि के जीवन में भी संचित होती रहती है, वही भावना विभाव में सौन्दर्य की प्रतीति कराती है। रस्किन ने भी ऐसी ही कल्पना की है। उनकी प्रमेयात्मक वृत्ति में मूल सौन्दर्य भावना तो है, किन्तु वह केवल प्रमाता के मन में ही न रहकर वस्तु निष्ठ भी होती है, और इस कारण सौन्दर्य दो प्रकार का हो जाता है –वस्तुगत (typical)और सजीव (vital) इतना होते हुए भी ह्यूम और स्पेन्सर विषय का अत्यधिक आधार लेने के कारण भौतिक वादी ही रह गये है।

प्रमाता पक्ष –

ह्यूम द्वारा प्रतिपादित आध्यात्मिक पक्ष रस्किन द्वारा ईश्वर से सम्बद्ध हो गया, क्यों कि रस्किन के मत में वस्तु का सौन्दर्य उसकी अनन्तता, स्थिरता, एकता सम्मात्रा शुद्धता और संयति निहित है, और ये गुण ईश्वरीय गुण है। सन्त आगस्टाइन सत्य शिवत्व और सौन्दर्य ही किया हुआ मानते है। लेवीक (Leveque) के मतानुसार वस्तु में निहित एकता भिन्नता कोमलता और वर्ण विन्यास जन्य सौन्दर्य मन किंवा ईश्वर की ही अभिक्ति के ईश्वरीय गुणों का वस्तुओं में आधान ईश्वर द्वारा कविवर पन्त ने जीवन में परम सौन्दर्य के अवतरण की अनुभूति इस प्रकार की है –

''देखते देखते आ जाता है, मन पा जाता,

कुछ जग के जगमग रूप नाम, रहते रहते कुछ छा जाता,

उर को भाता, जीवन सौन्दर्य अमर ललाम।

विरूपता में भी सौन्दर्य की प्रतीति –

अंतर्निहित चारूता ही आकृति में छलकती है ; चेतना की चारूता ही मानव को सुसंस्कृत दिखाती है। अत: जो व्यक्ति अंतश्चेतना के सौन्दर्य से परिपूर्ण है वह विरूप होने पर भी सुन्दर प्रतिभाषित होता है ; चेतना सौन्दर्य उसकी जड आकृति में आकर्षणता, मनोरमता और भावानुरंजकता की दीप्ति भर देता है इसके विपरीत असंस्कृत व्यक्ति सुरूप होने पर भी विकर्षण उत्पन्न करता है और चित्त का अनुरंजन नहीं करता। वह असुन्दर प्रतीत होता है।

प्रमेय और प्रमाता की एकता –

अध्यात्मवादी सौन्दर्यशास्त्रियों में कतिपय विद्वान प्रमाता की प्रमेय में एकत्वानुभूति प्रतिपादित करते है। थियोडार विशेर का मत है कि कलात्मक सुन्दर प्रमेय में प्रमाता अपना ही रूप देखता है। शेलिंग के मतानुसार अहं,– आत्यन्तिक प्रज्ञा द्वारा 'इदं' से एकत्व की अनुभूति करता है, इस प्रकार आत्मा और विश्व अथवा प्रमाता और प्रमेय में इच्छा और ज्ञान के क्षेत्र के क्षेत्र में नहीं अपितु कला में होती है। अत: उसके मत से सान्त में अनंत की अभिव्यक्ति ही सौन्दर्य है। शांपेनहावर के अनुसार प्रमेय और प्रमाता दोनो ही एक मूल संकल्प के परिणाम है और सौन्दर्य भी उसी संकल्प की एक अभिव्यक्ति है। हीगेल– "The beautyiful is the spiritual making. it self known sensuously." हीगेल भी प्रभाता और प्रमेय को एक ही आत्यन्तिक का परिणाम और सौन्दर्य को इन्द्रिय ग्राह्य संरचना मानता है। यद्यपि इसी

कारण उसका मत भौतिकता के निकट पहुंच गया है। प्लेटो ने भारतीय तांत्रिको के समान दो प्रकार की सृष्टि मानी है मूल और दृश्य। दृश्य दृष्टि के समस्त तत्व बीज रूप में (Ideal) (Phenomeha) मूल सृष्टि में विद्यमान रहते है अत: स्पष्ट है कि सौन्दर्य भी मूल सृष्टि का ही एक तत्व है। वह अद्वैत और आत्यन्तिक सौन्दर्य सदा एक रस रहता है, उदय अंत या वृद्धि ह्यास जैसा उसमें कुछ नहीं होता। यही कारण है कि सब रूपों में सौन्दर्य एक ही है, एक रूप का सौन्दर्य दूसरे से भिन्न नहीं है। प्लोटीनस का विचार है कि एक शिव ही विश्व का मूल तत्व है। उसी से वस्तु परक प्रज्ञा का उदय होता है जो भौतिक वस्तु को रूप रेखा देकर सौन्दर्य युक्त बनाती है। लार्ड शेफ्टशबरी ने ईश्वर को ही प्रथम सौन्दर्य कहा है जिससे प्रतिबिम्बित होकर ही विश्व के समस्त पदार्थ सौन्दर्य वलयित बनते है। हर्चिसन के मतानुसार मूल आत्यन्तिक सौन्दर्य की अपेक्षा से ही दृश्य जगत का सौन्दर्य प्रतीत होता है। स्पष्ट है कि शेफ्टशबरी और हर्चिसन के मत प्लेटो और प्लोटीनस के ऋषी है।

मानव व्यवहार वादी सौन्दर्य शास्त्री -

मानव के व्यवहार में सौन्दर्य की प्रतीति करने वाले विचारकों में शिलर लोत्से और काउसन प्रधान है। शिखर ने मानव व्यवहार के तीन क्षेत्रों में से केवल क्रीडा जगत को सौन्दर्य आनन्द का क्षेत्र माना है, क्योंकि इसमें आत्मा के लिए जड जगत का सा भौतिकता का बंधन और नीति जगत का सा नैतिकता का बंधन नहीं है, अपितु इसमें जड जगत और नीति जगत का यथापेक्ष समन्वय है, जिसमें मानवत्मा स्वतन्त्र होकर कर्म प्रवृत होता है सुखपूर्वक सौन्दर्य क्रीडा कर सकता है और यही मानव का परम पुरूषार्थ है। लेप्से ने मानव व्यवहार के एक ही चेतन लोक के तार्किक विवेचन की सुविधा की दृष्टि से तीन क्षेत्र मान लिए है सत लोक, नियम लोक और मूल्य स्तर लोक (Region of standard of values) नियम लोक की नैतिकता और मूल्य स्तर लोक की निर्णीतियॉ वस्तुत: सत् लोक में ही संभव है हो सकती है, अत: इन दोनो लोको का समन्वय सत् लोक में ही हो जाता है। लोत्से के मत में सौन्दर्य वस्तुत: सुख (Pleasure) का ही विकसित रूप है। उनमें इतना ही अंतर है कि सौन्दर्य सहजानुभूति का विषय है और समष्टि आत्मा को आनंद देता है जबकि सुख इन्द्रियों का विषम है, और व्यष्टि आत्मा को आनंद देता है। विक्टर काउसन लोत्से से भिन्न मानव व्यवहार में सौन्दर्य सुख और उपयोगिता का पृथक-पृथक महत्व मानता है तीनो का घोल मेल नहीं करता। उसके मतानुसार मानसिक सौन्दर्य (Ideal of merital beauty) ही आत्मन्तिक सौन्दर्य या ईश्वर है, जिसकी अभिव्यक्ति वस्तु में होने पर हम उसे भौतिक

सौन्दर्य कहते है और भौतिक सौन्दर्य में आभ्यांतरिक सौन्दर्य की प्रतीति ही नैतिक सौन्दर्य है। जैफ्रे भी काउसन का अनुवर्ती है। उसके अनुसार यह दृश्य जगत वासना है जिसका परमात्मा वासी (धारक) है, इस प्रकार सौन्दर्य उस अदृश्य शक्ति की ऐसी अभिव्यक्ति है जो भौतिक उपकरणों द्वारा हुई है।

मानसिक वृत्तियाँ और सौन्दर्य शास्त्र –

कुछ विद्वानो ने सौन्दर्य की सीमांसा मानसिक वृत्तियों के आधार पर की है। उनमें हर्बर्ट रीड और कांट प्रमुख है। रीड के अनुसार सौन्दर्य वस्तु का गुण नहीं, प्रत्युत ईश्वरीय अभिव्यक्ति है, मानसिक वृत्ति है, और अन्त: करण गम्य है। ज्ञान शक्ति और इच्छाशक्ति ईश्वरीय शक्तियाँ है, और वस्तुओं में सौन्दर्य का आधान करती है। काष्ट ने मन की तीन शक्तियाँ है मानी है ज्ञान शक्ति, इच्छा शक्ति और अनुभूति शक्ति। इनके आधार पर दर्शन के भी तीन विभाग कर दिये गये है। सौन्दर्य चेतना तीसरी शक्ति के अंतर्गत है। क के मतानुसार सौन्दर्य का गुण है नि:स्वार्थ शुद्ध आनंद की प्राप्ति कराना, परिणाम है सार्वभौमता, किन्तु उसका हमसे संबंध है वैयक्तिक एकांकी और स्वार्थ हीन। सौन्दर्य सभी को अनिवार्यत: आनंद देता है।

एकांगिता –

अध्यात्मवादी सौन्दर्य ने सौन्दर्य को भौतिकता से उपर तो उठा दिया और उसे व्यक्ति गत सुख साधन से आगे सार्वभौम आनंद का जनक भी सिद्ध कर दिया , किन्तु वे सौन्दर्य की मीमांसा में वैज्ञानिक स्पष्टता और इयन्ता नहीं ला सके। पण्डित राज जगन्नाथ के मतानुसार ''लोकोत्तराह्लाद जनक ज्ञान गोचरता'' सौन्दर्य ऐसे ज्ञान का प्रत्यच्छीकरण है, जो लोकोत्तर आह्लाद उत्पन्न करने की क्षमता रखता हो।'' यह कथन समस्त अध्यात्मवादी सौन्दर्य शास्त्रियों की गवेषणाओं और विवेचनाओं का सार है। तो भी इसमें स्पष्टता का आभाव है, और इससे सौन्दर्य के स्वरूप की अनेक कल्पनाए जन्म ले सकती है। यही कारण है कि डॉ. फतेह सिंह का कथन सत्य लगता है कि ''इनके प्रेरक दृष्टिकोण न्यूनाधिक एकांगी है।(149) इसी प्रकार भौतिक वादी सौन्दर्य शास्त्रियों के दृष्टिकोण भी एकांगी है वे प्रमाता को बिलकुल भुला देते है।

गजानन शर्मा प्राचीन भारतीय साहित्य के नारी सौन्दर्य रूपी तत्वों की जैसा कि हम पुष्टि की है लिखन बैठि जाकी सविहि, गहि गहि गरब गरूर भये न केते जगत के चतुर चितेरे कूर॥ जीवन न केवल शरीर है, न केवल आत्मा वरन दोनो का संघात है। अत: सौन्दर्य की वही परिभाषा सर्वग्राध्य हो सकेगी, जिसमें उसके भौतिक और आध्यत्मिक दोनो पक्षों का समन्वय हो। सौन्दर्य संबंधी यही कठिनाई बिहारी ने भी अनुभव की होगी। प्रवर की यह

सौन्दर्य परिभाषा प्रमाता और प्रमेय का उचित समन्वय करती है –''आकृष्टि कर रमण कर तादात्म्य जो कराये विभु योजनानुसरिता सौन्दर्य वह कहावे।''जिन्होने पहले उसे प्रमेय में और फिर प्रमाता में –समे समे सुन्दर सभै रूप कुरूप न कोय।

मन की रूचि जेति जित तित तेती रूचि होय ॥

रूप रिझानहार यह, वे नयना रिझवार ॥

इस दृष्टि से कवीन्द्र रवीन्द्र ने रमणी सौन्दर्य को आधा सत्य और आधा स्वप्न बतलाया है। और फिर गम्भीर विचारणा के पश्चात दोनो मे निहित समझा है।

''माई री वा मुख की मुसुमानि , सम्हारी न जैहे, न जैहे ॥''

रसखान ने यद्यपि विभाव में निहित सौन्दर्य का ही अधिक चित्रण किया है तथापि वे प्रमाता को भी महत्व देते है। ''प्रान वही जु रहे रिझिवा पर रूप वही जिहिवाहि रिझायो।''

इसी प्रकार भक्ति काल में अन्य कवियों ने भी प्रमेय की विशिष्टता दिखाने के साथ ही प्रमाता की अनुभूति को भी कुछ न कुछ महत्व अवश्य दिया है।

नारी सौन्दय-

भक्ति काल में नारी के भौतिक और आध्यात्मिक दोनो प्रकार के सौन्दर्य की अनुभूति हुई। पदमावती, राधा आदि सभी नारियों के शारीरिक और मानसिक सौन्दर्य का निरूपण किया गया है। हंसत जो देखा कमल भा आदि कथनों में आध्यात्मिक सौन्दर्य का भौतिक सौन्दर्य के रूप में प्रस्फुटित होना, और भौतिक सौन्दर्य की प्रमाता की आन्तरिक अनुभूति में उपास्थापना–सौन्दर्य का आध्यात्मिक पक्ष इस युग का विवेच्य रहा है। इसका दिग्दर्शन यथा स्थान किया जायेगा।

सुन्दर और उदात्त-

सुन्दर जब और भी उत्कृष्ट रूप धारण करता है सामान्य जागतिक प्रवृत्तियों से हमें उपर उठाकर जब वह अध्यात्म की अनुभूतियों का आस्वादन कराने लगता है, तब वह उदात्त कहलाता है। जब हम विश्व में व्याप्त वेदना की अनुभूति चित्र, मूर्ति, काव्य आदि में अथवा प्रकृति में करते है और प्राकृतिक पदार्थों या चित्रादिक सृष्टियों में उसे मूर्त रूप में प्रत्यच्छ करते है, तब वह केवल सुन्दर ही न रहकर उदात्त बन जाती है। जर्मन दार्शनिक जुग के अनुसार हमारा सम्पूर्ण मानसिक जगत व्यक्तिव अहंभाव अध्यात्म भाव– एक अनन्त अपरिमेय तत्व में प्रभावित होता है। इसी अज्ञेय तत्व के प्रभाव से धर्म और कला आदि का उदय होता है। यह जीवन शक्ति अनंत है और अभिव्यक्ति पाने के लिये यह हमारी चेतना को आन्दोलित

करती रहती है। यह जीवन शक्ति अनंत औपौरूषेय शक्ति का एक अंग है, और इसकी चेतना हमें उसी असीम का बोध कराती है, हमारी समीमता को तिरोहित कर देती है। भगवान वेदव्यास के अनुसार अब आत्मा अपने दिव्य अमेय और अनन्त स्वरूप को चीन्ह लेती है तब उस विराट की अनुभूति से हमें इस क्षुद्र भौतिक जीवन के सुख दुखादिक निरर्थक और अकिंचन लगने लगते है और हम स्वयं असीम और अनंत हो जाते है। महत्मा ईसा भी आत्मा के अमरत्व का सन्देश देते हुए कहते है कि यह जीवन तुच्छ है अनन्त और असीम का परिज्ञान ही मानव मात्र के लिए इष्ट है। इसी से निर्वाण मनुष्य जीवन का ध्येय बताया है। यही सौन्दर्य का उदात्त ही उदात्त तत्व है, जिसमें अनंत वेदना और अनंत आनंद का अनुभव होता है।

उदात्तता के तीन दृष्टिकोण-

वस्तु की दृष्टि से सुन्दर की अपेक्षा उदात्त अधिक भव्य होता है क्योंकि रूप से सीमा की प्रतीति होती है। जिससे रूपाविष्ट सौन्दर्य ससीम और लघु प्रतीत होता है, जबकि उदात्त जो अरूप वा रूप के अभाव से परिज्ञात होता है, निस्सीमता का बोध कराता है और फलस्वरूप भव्यतर होता है। समुद्र और आकाश अपनी अरूपता के कारण अधिक उदात्त अनुभूति जागृत करते है। खण्डहर में सुन्दरता की प्रतीति नहीं होती, किन्तु उदात्तता की अनुभूति अवश्य हो सकती है, युवक की अपेक्षा वृद्ध का सौन्दर्य अधिक उदात्त और अधिक भव्य होता है। मनोविज्ञान की द्दष्टि से उदात्त में संवेदना की तरलता विशेष रूप से परिलक्षित होती है। उदात्तता की अनुभूति रूप के अभाव से होती है। रूप के अभाव की प्रतीत होने पर निसर्गत: प्रवृत्तियों में गतिरोध उत्पन्न होता है, और जैसे जल प्रवाह में गतिरोध होने पर जल ऊपर चढता है उसी प्रकार मनोवृत्तियों में गतिरोध होने से वे भी उत्कर्ष को प्राप्त होती है अर्थात उनका उदात्तीकरण हो जाता है उदात्त हो जाने पर भी उनमें वह बढना संवेदना जो गतिरोध का स्वाभाविक परिणाम है, बसी रहती है, और उस मनोदशा को एक अर्पूव रागात्मकता प्रदान करती है। त्याग, आत्म बलिदान, उदारता आदि के भाव भी तभी विकसित होते है, तब साधारण मनोवृत्तियों में गतिरोध आता है और तभी इनसे आत्म विस्फूर्ति होती है। काम के गतिरोध से कामतत्व का रूपान्तर हो जाता है और वह नवीन स्फूर्ति नवल दीप्ति और नव्य वेदना के रूप में प्रकट होता है। दर्शन शास्त्र की दृष्टि से उदात्त मानसिक स्फुरण और मानसिक आत्मिक विस्फूर्ति का उपादान होता है। अनंत वेदना की अनुभूति से एक मानसिक विसंकोच या दबाव की प्रतीति होती है फिर उसके प्रतिक्रियात्मक परिणाम सौन्दर्यनुभूति में सरलता तो बहुत होती है किन्तु मानसिक स्फुरण इतना नहीं होता है। असीम के परिज्ञान से

समीम को अपनी सीमाएं अवगत हो जाती है। वृहत के प्रभाव से हमें अपनी लघुता की प्रतीति होती है। हम वृहत को देखकर उससे अपनी तुलना करके अपने को अति क्षुद्र पाते है। किन्तु शीघ्र ही हमारी आत्मा का विराट भाव जागृत हो जाता है और सीमाओं के बन्धन टूट कर ब्रहात्व की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा मिलती है। काण्ट ने इस प्रक्रिया को आध्यात्मिक स्फूर्ति (Spiritual reinvigoretion) का नाम दिया है। उसने इसे समुद्र दर्शन के उदाहरण से स्पष्ट किया है। जिस प्रकार समुद्र के निकट हम अपनी लघृता से व्यथित होते है और फिर शीघ्र ही हमारी अपनी विशालता की अनुभूति भी जागृत होने लगती है उसी प्रकार कोई भी विशालता हमें हमारी लघुता का बोध कराती है और फिर हमें अपने को भी विशाल समझने की प्रेरणा देती है।[150]

नारी का उदात्त स्वरूप -

नारी सौन्दर्य की उदातत्ता उसके तीनो रूपों माता पत्नी और कन्या है हरि जननी मै बालक तोरा जैसी प्रीति बालक अरू माता रूप, त्वमेव माता च पिता त्वमेव आदि में परमात्मा का माता रूप न तिसु मात पिता सुत बांधव, पूत पैषि जिव जीवत माता। ओति प्रोति जन हरि सिउ राता तू मेरा पिता पिता तू है मेरी माता। जननी है कै सब जग पाला मे भक्तिकाल के कवियों ने अंकित की है। ज्ञान मार्गियों के लिए परमात्मा माता स्वरूप भी है अथवा कहना चाहिए कि उन्होने माता में परमात्मा की विशेष स्थापना देखी है। प्रेममार्गियों ने माता का चित्रण अत्यल्प किया है किन्तु जहाँ भी किया है वहाँ उसे परम स्नेहमयी और सर्वथा शुद्ध उदात्त रूप में ही अंकित किया है।''[151] सूरदास ने माता यशोदा के मक्खन समान स्नेह आत्म त्याग और नि:स्पृह वात्सल्य का जो चित्र प्रस्तुत किया है, वह मधुरता के साथ परम उदात्त है।''[152] जो केवल पितु आयसु ताता तौ जनि जाहु जानि बडिमाता तुलसी दास ने माता को परमाभिवया कहा है जिसका स्थान पिता की अपेक्षा अत्युच्च है।''[153]

पत्नी रूप की उदात्तता भक्ति कालीन कवियों ने प्रमुख रूप से प्रस्तुत की है।

क) ''आज मरम मैं जानिउ सोई। जस पियार पिउ ओर न कोई॥ [154]

ख) ''काढि प्रान बैठि लेई हाथा। मरै तो मरौ, जिऔ एक साथा॥

ग) पद्मावती – नागमती सती खण्ड में –पद्मावती का प्रेम और जौहर[155] राधा का प्रेमातिरेक और एकीभाव सीता का तप[156] और त्याग[157] तथा ऐसी ही अन्यान्य नारियों का आध्यात्मिक उत्कर्ष उनके उदात्त रूप की अनुभूति कराता है। प्रेम मार्गियों ने नारी को परमात्मा का प्रतीक माना पुष्टिमार्गियों[158] ने राधा को परम पुरूष की हादिनी शक्ति कहा[159] और तुलसीदास एवं रामभक्त कवियों ने सीता को परम शक्ति के रूप में देखा।

क) ''ह्लादात्मापि यया ह्लादते ह्लादयति च सा ह्लादिनी शक्ति : ॥ (160)

ख) ''जा तन की झाई परे स्याम हरित दुति होई

ग) ''ह्लादिनी द्वाराय करे भक्तेर पोषन। (161)

राधा की अनुकम्पा के बिना परमात्मा की कृपा नही मिलती और अपनी शक्ति सीता से विमुक्त हो कर तो परमपुरूष राम भी व्याकुल हो जाता है। भय संकुलता का अनुभव करता है।   प्रिया हीन डरपत मन मोरा।

कन्या- राधा की माता कीर्तिका सुता छोह -

क) कुंवरि कौ कहुँ दीठिलागी, निरखि कै पछिताई।
सूर तब वृषभानु धरनी, राधिका डर लाई ॥

ख) सुता लई उर लाई, तनु निरखि पछिताई, ।
डरनि गई कुम्हिलाई सूरबरनी ॥(162)

ग) देवताओं की मनौतियाँ करने पर यह माता पिता और भाइयों की लाडिली मिलि है - ''देवधामी करत, द्वार द्वारै परत, पुत्र है, तीसरे यह बारी।

भई बरष सात को सुभ घरी जात की, प्यारी दोउ भ्रात की, बची भारी।

कुंवरि दई अन्हवाई गई तन मुरझत्तई। बसन पहिराई कहु कहति खारी ॥

रूप की उदात्तता विशेषत: सगुण भक्ति परक कवियों ने प्रदर्शित की है, यद्यपि निर्गुण भक्ति के कवियों ने भी कन्या का चित्रण परम पुनीतता के प्रकाश में ही किया है। सूरदास ने कन्या का चित्रण अन्य सभी कवियों की अपेक्षा अधिक किया है। तुलसीदास ने पार्वती विश्व (भुवन) मोहनी और सीता के कन्या रूप का चित्रण अत्यन्त निष्कलुष और उदात्त भाव में किया है।(163) पार्वती और सीता अपनी पावनता को तप सयंम और त्याग से परम उदात्त बना लेती है। रिषिन्ह गौरि देखि तहँ कैसी। मूरतिमत तपस्या जैसी पार्वती तो महार्षियों और महामुनियों के लिए भी तपस्या का आदर्श बन गयी है।

अनुज वधू भगिनी सुत नारी। सुत सठ ये कन्या सम चारी ॥

इनहिं कुदृष्टि विलौकै जोई। ताहि बधे कुछ पाप न होई ॥

यहाँ तक कि सबके लिए सम्मानीया ही नहीं, बन्दनीया भी है। उसकी ओर कुदृष्टि करने वाले को बध कर देने में भी पाप नहीं लगता है।(164)

सौन्दर्यानुभूति कैसे होती है -

सौन्दर्यानुभूति किस वस्तु से अधिक होती है, और किस प्रकार होती है - इन प्रश्नों

पर भारतीय शास्त्रों में केवल दार्शनिक पद्धति से विचार किया गया है जिसका सार यह है कि सौन्दर्यानुभूति से आप्लबित होने पर मानव का अहं और मम भव उच्छिन्न हो जाता है, और ध्यान स्व से हटकर वस्तु के विस्तार पर केन्द्रित हो जाता है। यहां तक कि उसे स्वात्म विस्मृति भी हो जाती है वह केवल ब्रम्हा विस्तार की अनुभूति में लीन हो जाता है। किन्तु वह तो सौन्दर्यानुभूति की चरमावस्था है। इस आध्यत्मिक अनुभूति में निश्चय ही सौन्दर्य चेतना की कुछ निम्नतर प्रतीतियाँ विचार क्षेत्र में नहीं ली गई है। सौन्दर्यानुभूति की अपेक्षाकृत निम्नतर अनुभूतियों पर जो मानव समाज की दैनिक अनुभूतियाँ है, पाश्चात्य दार्शनिको ने गम्भीरता पूर्वक विचार किया है। जर्मन दार्शनिक काण्ट, हीगेल और शोपेन हावर, तथा फिफ्टे, रोलिंग, बोसांके, क्रोचे बोदुई, हर्बट रीड, ई.एफ, कैरिट, बर्नन ली, जी,एल,रेमण्डस, जी जैण्टिल एस. अलेक्जेण्डर सी.बैल थोरर्वन फ कनर आदि अनेक विद्वांनो ने प्रमुखता: सौन्दर्य की शारीरिक और मानसिक अनुभूतियो पर भी विचार किया है।

प्रेक्षक और वस्तु का एकीभाव –

सौन्दर्य में सम्यक रूप से अवगाहन करने में समर्थ होने के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि प्रेक्षक और वस्तु दोनो में पूर्ण सहयोग हो वस्तु का सौन्दर्य और प्रेक्षण की मनोदशा एक दूसरे के उपयुक्त हो। इसके लिये फाल्केट महोदय ने चार नियम निर्धारित किये है। प्रथम वस्तु ऐसी हो कि प्रेक्षक के लिए महत्वपूर्ण हो। वस्तु का तुच्छ व गौण प्रतीत होना प्रेक्षक में उसके प्रति अभिरूचि जागृत नहीं करेगा और उस दशा में सौन्दर्य की अनुभूति भी नहीं हो सकेगी अत: यह अनिवार्य ही है कि वस्तु अपने में कुछ न कुछ मूल्य अवश्य रखती हो, मानव जीवन के लिए वह हितकारी हो। पुष्प इन्द्रधनुष निर्मल सरिता पर्वतीय दृश्य आदि मानव मन को सहसा आकर्षित कर लेते है क्योंकि मानव जीवन से उनका घनिष्ट सम्बन्ध है, और वे उसके लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस दृष्टि से नारी भी पुरूष के परमाकर्षण का केन्द्र है। दूसरे सौन्दर्यानुभूति तभी हो सकती है जब प्रेक्षक भावना प्रवण और चिन्तशील हो। वह वस्तुगत सौन्दर्य की प्रतीति कर सके और उसके भोग, रूप और अभिव्यक्ति को पृथक पृथक जान सके। उसकी भावना का प्रवाह इतना तीव्र हो कि वह अपने अहं को उसमें वहा सके, और वस्तु के भोग और रूप की तथा तज्जन्य आध्यात्मिक स्फूर्ति की अनुभूति कर सके। वस्तु के अवयव विन्यास के प्रति उसे भावना प्रवण होना चाहिए। तीसरे प्रेक्षक में आस्वादन वा चवर्ण की क्रिया भी जगी हुई होनी चाहिए। यदि रसिक किसी भी कारण से ऐसी स्थिति में न हो कि वह सौन्दर्य से प्रभावित हो सके, उसका ध्यान अन्य विषयों की ओर लगा हो अथवा वह चिन्तागत किंवा विक्षुब्ध होने के कारण सौन्दर्य चवृणा का अवकाश ही न

पा सकता हो तो वह सौदर्भ्यानुभूति नहीं कर सकेगा। चौथे उपरिलिखित बातों के ही निष्कर्ष रूप में रसिक के लिए यह भी अनिवार्य है कि वह सुन्दर का रसास्वादन करते समय आसपास की अन्य यथार्थताओं से पराड.मुख हो जाय उसकी यथार्थता की भावना क्षीण हो जाय। A temporary banishment of the egotistical impulses that dominate his every day life. " उसके दैनिक जीवन को अभिशासित करने वाली अहं भावमयी प्रवृत्तियों का कुछ काल के लिए निष्कासन हो जाय।[165] A momentary exile even of his earnest striving in th sphere of speculative moral and religious values." और उस क्षण भर के लिए कल्पनात्मक नैतिक और धार्मिक मूल्यों के सम्बन्ध में उसके हार्दिक प्रयत्न स्थगित हो जाये।[166] तभी वह खण्डात्मक प्रतीतियों से उपर उठकर कला कल्पना और प्रकृति की समस्तता की अनुभूति कर सकेगा और तभी वह सुन्दर और उदात्त की भावना से आप्लावित हो सकेगा।

सौन्दर्यानुभूति के सिद्धांत-

सौन्दर्य आस्वादन में कोई तो वस्तु का प्राधान्य मानते है, और कोई प्रेक्षक का। इसी आधार पर दो प्रकार के सिद्धांत बन गये है – एक विषयगत सौन्दर्य सिद्धांत और दूसरा विषयियत सिद्धांत। केवल वस्तु में ही सौन्दर्य मानने वाले अनेक मत है। उनमें सौन्दर्य के शरीर सिद्धांत की प्रमुखता है। उसके अनुसार शारीरिक विश्रान्ति को ही सौन्दर्य का रहस्य माना जाता है। हतस्पन्द श्वास प्रक्रिया रूधिर चक्र पाचन यन्त्र जीवन ग्रथियॉ आदि सब शरीरावयव सौन्दर्य से प्रभावित होकर रस मय तथा आनन्दाप्लावित हो जाते है और उनकी शक्ति का अपचय न होकर उपचय होने लगता है, जबकि असुन्दर के दर्शन से अधिक श्रम होता है, शक्ति का ह्यस होता है क्योंकि असुन्दर वस्तु में संतुलन का आभाव रहता है, जिससे मस्तिष्क को उसके विन्यास की टूटी हुई कडियों को जोडकर उसके वास्तविक स्वरूप को हदृयंगम करने में अत्यधिक परिश्रम करना पडता है। कामुकतादिक आवेगो में शक्ति का व्यय बहुत अधिक होता है क्योंकि उनमें रूप विन्यास का आभाव होता है। इसके विपरीत अृगार रस आदि सौन्दर्यानुभूतियों में स्नायविक शक्ति का स्फुरण और विवर्धन होता है क्योंकि उनमें भोग्य अवयवों का उचित विन्यास होता है जिसकी प्रतीत से मन को स्फूर्ति प्राप्त होती है। शरीर पर सौन्दर्य के प्रभाव का अध्ययन करने का कार्य प्रायोगिक सौन्दर्य शास्त्र ने किया है, और फै कनर एक्सनर कल्पे काल्किन्स पफ र मैक्डूगल मार्टिन, शूल्जे आदि ने प्रयोग के द्वारा सौन्दर्यानुभूति को स्पष्ट करने का प्रयास किया है, और प्रयोग की अनेक विधियों की स्थापना की है। उनमें से एक प्रभाव विधि है जिससे एक के पश्चात एक

सुन्दर वस्तु उपस्थित करके प्रेक्षक अपने मन पर पडे हुए प्रभाव का विश्लेषण करता है। इससे सुन्दर असुन्दर का अन्तर तथा न्यूनाधिक सौन्दर्य का स्पष्टीकरण हो जाता है दूसरी विधि वर्णन की है, जिसमें प्रेक्षक के समक्ष अनेक वस्तुए एक साथ प्रस्तुत करके उससे अनेक वस्तुए एक साथ उससे अनेक प्रभाव का वर्णन कराया जाता है। वर्नन ली द्वारा प्रवर्तित इस विधि से विभिन्न सुन्दर वस्तुओं के प्रभावों की तुलना हो जाती है इसी प्रकार की अन्य प्रयोग विधियों से मानव शरीर हृदय श्वास मंत्र रक्तसंचार आदि परसौन्दर्य का प्रभाव आकाँ जाता है। फैकनर महोदय ने वस्तुगत सौन्दर्य की अनुभूति के कतिपय सिद्धांत निर्धारित किये है, जिससे यह ज्ञात हो सकता है कि किस वस्तु से अधिक सौन्दर्यानुभूति होती है और किससे कम। स्पष्टता के नियम के अनुसार भोग और रूप के विन्यास जितने सुस्पष्ट होते है, सौन्दर्य की प्रतीति के विन्यास जितने सुस्पष्ट होतेहै, सौन्दर्य की प्रतीति भी उतनी ही अधिक होती है। रूप समन्वय वा सहयोग जब रेखा और रंग अथवा स्वर और लय आदि में पूर्ण सहयोग हो। यदि ये परस्पर अनाश्रित एवं प्रथक पृथक रहते है तो सौन्दर्य की अनुभूति नहीं करा सकते और न सौन्दर्य सुख की उपलब्धि ही करा सकते है। अनुभूतियों में समसरता के सिद्वांत के अनुसार रंगो रेखाओं आदि की अनेकता को सम्पूर्ण की एकता का बोध कराना चाहिए। वे सब अपनी सत्ता की प्रथकता समग्र की एकता में लीन कर दे तभी सौन्दर्य को सृष्टि में अपना योग दे सकेगे। रूपाधारों की बलवत्ता के नियम के अनुसार रेखा और रंग, स्वर और लय एवं गंध और स्पर्श आदि अनुपात के अनुसार होने चाहिए आवश्यकता से कम या अधिक नहीं, अपेक्षानुसार हो। तभी उनका बलोदय स्पष्ट होगा और तभी रूपाधारों के ठीक प्रकार से अनुभूतिगम्य हो जाने पर समग्र की सुन्दरता भी, स्वभावत: अधिक सुस्पष्टतया आस्वाद्य बन जायेगी। विषयीगत सौन्दर्य सिद्धांत रसिक के मन पर पडे हुए प्रभाव को ही सौन्दर्य के अस्तित्व का उत्पादन मानता है। सौन्दर्यानुभूति के समय मानव मनपर विधायक और निषेधक दोनो के प्रभाव पडते है। सौन्दर्य का विधायक प्रभाव वह चित्त विस्फूर्ति है, जिससे सौन्दर्य प्रतीत के समय अनेक संवेदनाओं का उद्वेक होता है। और रसिक के मन की बर्हिमुखी वस्तु वह और ध्या और अर्न्तमुखी वस्तु से आगे बढकर अन्तर की ओर ध्यान प्रवृत्ति होती है। रसिक कभी वस्तु की रमणीयता से प्रभावित होता है और कभी वह अपने ही अन्तर के आंदोलन पर ध्यान केन्द्रित कर लेता है। निषेधात्मक प्रभाव के अनुसार प्रेक्षक की व्यवहारात्मक सभी क्रियाएं शांत हो जाती है। काम आदि सहज प्रवृत्तियों के स्थगित हो जाने से सभी आवेग एवं उद्वेग शांत हो जाते है और वासनाएं सो जाती है। जीवन की अतृप्तियॉ क्षेम उत्पन्न नहीं करती। इस प्रकार विधायक और निषेधक प्रभावों के कारण रसिक का चित्त

अपूर्व उल्लास का अनुभव करता है। सौन्दर्य की अनुभूति से ये अनेक मानसिक प्रतीतियाँ होती है और उनसे सुख प्राप्त होता है। कतिपय विचारक इस सुख को ही सौन्दर्य बोध मानते है।

सौन्दर्य विसरण –

इस प्रकार जब सौन्दर्य की सम्यक प्रतीति हो जाती है तब वह सौन्दर्यानुभूति अपना प्रसार करने लगती है, क्योंकि सौन्दर्यानुभूति संक्रामक होती है, सहज प्रसरण शील होती है। सौन्दर्य चेतना केवल अपने में ही आनंद मयी नहीं होती है वरन अपने परिमण्डल के अन्य भावों और अनुभावों को आनंदमय बना देती है। जब सौन्दर्यानुभूति के कारण रसिक के शरीर मन और आत्मा में स्फुरण होता है, तब निसंगत यह स्फुरण अन्य मनादशाओं पर भी उत्क्रांत और सत्क्रांत हो ही जाता है जिससे अन्य भाव एवं पदार्थ भी सुन्दर तथा आनंद मय बन जाते है यही सौन्दर्य का विसरण है।

रसानुभूति की सात बाधाएँ –

आनंद रस की अनुभूति तभी हो सकती है जब उसमें प्रत्यूह उपस्थित करने वाली सात बाधाओं का परिहार करके प्रेक्षक तन्मयी भवन योग्यता सम्पादित कर ले। ये बाधाएँ है –

1. प्रतिपक्षावयोग्यता सम्भावना विरह अर्थात सुन्दर वस्तु का प्रतीति से दूर होना।
2. स्वगत परमतत्व नियमेन देशकाल विशेषावेश प्रेक्षक का स्व और पर के देशकाल की विशिष्टता से इतना आविष्ट रहना कि इस भेद को भुला कर सुन्दर में लीन न हो सका।
3. निजसुखादिवशी भाव प्रेक्षक का अपने सुखादिक में उलझे रहना।
4. प्रतीत्युपायवैकल्पम् प्रतीती का कोई उपाय ही न होना।
5. स्फुटत्भाव वस्तु के आलोक लोक का स्पष्ट न होना।
6. अप्रधानता आवस्वाद्य वस्तु या भाव को गौण समझना, और सशंय योग सुन्दर के कल्पना लोक का ही सन्देहास्पद होना।

चिदावरण भंग –

बाधाओं के अपगत होने पर कामनाओं, वासनाओं और चिन्ताओं को जो अपने में समाहित किए हुए है, और इसलिए जो आत्मा को जड बनाये हुए है। ऐसे अन्नमय कोष आदिक आवरणों का भंग करके चेतन आत्मा युक्ति प्राप्त करती है। उस दशा में समाधि

सुख जैसा लयात्मक सुख प्राप्त होता है। और प्राणों को अपूर्व विराम की प्रतीति होती है तब प्रकृति अथवा सुन्दर वस्तु के साथ रसिक की एकात्मकता हो जाती है। चित्त विस्तार की इस अवस्था में रसिक का हदृय प्रेक्ष्य वस्तु के गुणों में आध्यात्मिकता का संवेश कर लेता है।

इस प्रकार वस्तु के भोग रूपात्मक गुण रसिक के हद्दय को आप्लावित करते है और हद्दय अपने भावों की सरसता उस वस्तु पर अभिप्रक्षित करके उसे आनंदमय बना देता है। इस प्रक्रिया से वस्तु और हद्दय का परस्पर विनिमय और मिलन होता है जिसे साधारणी करण की संज्ञा दी जाती है। फ्रायड और युंग ने भी इस लयात्मक स्थिति का निरूपण किया है। उनके मत से मानव के अहं के तत्व में कामना छाई हुई है। यही कामना चेतना, प्रेरणा और अभिलाषा आदि का जन्म स्थान है। इस अन्र्तजगत का प्रतिबिम्ब हमारा बाह्य जगत है। इसी कामना की तृप्ति के हेतु कलाओं को सृष्टि होती है फिर भी इसकी तृप्ति नहीं हो पाती है। कामना तृप्ति का हमारा प्रयत्न चलता रहता है। उसी में लय होने को हमारा लघु व्यक्तित्व लालायित रहता है सौन्दर्यानुभूति से इस लयात्मक सुख की प्राप्ति होती है। स्त्री सौन्दर्य इस लय में प्रधान रूप से सहायक होती है। जर्मनदार्शनिक वण्ट ने भी लय के इस सिद्धांत पर अपने विचार प्रस्तुत किये है उसके द्वारा प्रस्थापित अन्तर्भावना की तद्रूपता का सिद्धांत भी दर्शक की तल्लीनता को ही परम सुख प्रतिपादित करता है। मन की यह सामान्य प्रवृत्ति है कि वह जिस वस्तु या क्रिया का साक्षात्कार करता है, उसके गुणों में स्वयं तद्रूप हो जाता है।बालक का मन पतंग के साथ और प्रकृति पयृवेक्षक का मन सरोवर की तंरगों के साथ उडता और लहराता है। यही एकी भाव तूद्रपता (Merger) है। इस तद्रूपता को वर्नन ली ने आत्मिक अगुओं का अभिनय कहा है। वर्नन ली के विचार से सहदृय वस्तु में प्रवेश नहीं करता वरन् वस्तु हद्दय में अभिसंचरित होती है। ह्रदय उषा का सौन्दर्य ग्रहण करने नहीं जाता वरन् उषासुषमा पर अपना अनुराग लुटाती है, जिससे हद्दय उस रंग में रंग जाता है और इसी एकीभाव के साथ हद्दय में पूर्व संचरित अनुभव वेदनाओं और संवेदनाओं की स्मृतियॉ तथा भविष्य की मधुरिम कल्पनाए भी जग उठती है। यह अन्त: स्प्रद जितना अधिक होगा सौन्दर्य जन्य आनंद की प्रतीति भी उतनी ही अधिक होगी।

गति संगति और प्रगति का उदय -

सौन्दर्यानुभूति से जीवन में गति, संगति और प्रगति का संचार होता है। सौन्दर्य दर्शन से जीवन की जडता हट जाती है और क्षोभ दूर होकर मन की शुद्ध भावना जागृत होती है। चंचल आवेगों के स्थान पर जीवन में वास्तविक गति आती है। गति शीलता के साथ ही

भावनाओं में संगति भी स्थापित हो जाती है। जीवन में प्रतिदिन अनेक भावों विचारों स्मृतियों और कल्पनाओं का जमघट होता रहताहै ये कभी कभी परस्पर विरोधी भी होते है तब इनमें अपेक्षा के अनुसार संगति बैठाना भी आवश्यक हो जाता है। यह संगति उस समय प्राप्त हो जाती है जब सौन्दर्यानुभूति से जीवन गतिशील हो जाता है। विरोधी की शांति होकर अनुभूतियों में सन्तोल स्थापित हो जाता है जब सौन्दर्यानुभूति से जीवन संगति मुखरित हो उठता है। संगति हो जाने पर जीवन रहस्यों का उद्घाटन होने लगता है। कल्पना में प्राण, कामना में सिहरन नेत्रों में आशाज्योति और प्राणों में उल्लास भर जाता है तथा जीवन सर्वतोभावेत प्रगतिमय हो जाता है।

आनन्दवर्धन का ध्वनि सिद्धांत-

इस प्रकार जीवन को सब ओर से आप्लावित कर लेने वाले सौन्दर्य की थाह लेना अत्यन्त दुष्कर है। क्षण क्षण में नवीन हो जाने वाले सौन्दर्य को नियमों में कौन बांध सकेगा ? यह तो समस्त रसो सा सार है, चमत्कार है। सौन्दर्य जन्य आनंद की अनुभूति अमेय अखण्ड और रहस्मयी होती है। इसमें अनेक भावनाओं और अर्थों की व्यजनाए संयोजित होती है।

''अविवक्षित वाच्यस्य पद वाक्य प्रकाशता। तदन्यस्वानुरण रूप व्यङ्ग्यस्य च ध्वेन: ॥

जिस प्रकार घण्टे के बज चुकने के पश्चात भी उसका अनुरणन देर तक चलता रहता है उसी प्रकार सौन्दर्य की अनुभूति भी बहुत कम समय तक प्रतिध्वनन वा निर्हाद करती रहती है। (167) चित्त के चिर संचित संस्कार झनझना उठते है, और उनकी झंकार सुदीर्घ काल तक होती रहती है आनंद वर्धन द्वारा निर्वाचित निध्नर्द को पाश्चात्यों ने सौन्दर्यर्यज झंकृति Aesthetic Resonance का नाम दिया है। प्रत्येक मूल भावना की जागृति के साथ मन में अनेक समान भावों का संचरण तथा शरीर में तदनुकूल स्पन्दन होने लगते है। मन और तन का यह शरीर में तदनुकूल स्पन्दन होने लगते है। मन और तन का यह भावानुकूल स्पन्दन ही रसानुभूति अथवा आनन्दोपलब्धि है।

स्त्री सौन्दर्य और काम रस -

जैवकीय मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और धार्मिक कारणों से नारी पुरूष के लिए रूप सृष्टि और जीवन मास है, उसमें सत्यम्, शिवम् , सुन्दरम् तीनों तत्व निहित है, अत: वह जीवन संगिनि है, और प्रकृति प्रवर्तित, युग्मेच्छा के कारण तथा पुरूष के पूरक गुणों की सन्निधान होने से मानव की चिर सहधर्मिणि है। नारी नर की पूरक है, उसके बिना पुरूष अपूर्ण है।(168) सुखस्य स्त्रियों के रूप नाना रूपं घराश्च ता: यही कारण है कि पुरूष के लिए प्रत्येक क्षेत्र में नारी सुख का मूल है। नारी में सौन्दर्य के दोनो पक्ष प्रस्फुटित है। वह बाह्य और

आन्तरिक दोनो तरह के सौन्दर्य की आगार है शरीर और हृदय दोनो से वह सौन्दर्य का प्रतीक है कान्ता सम्मिततयोपदेश युजे[169] नारी परम मंगलमयी है शिवत्व से उसका भावना जगत संजोया हुआ, उसकी प्रेम श्रेय वाणी कविता का आर्दश है। प्रियत्व के सहज सम्मिलन से उसका सौन्दर्य मधुर और उदार बन गया है। और वह पुरूष को केवल यौन आकर्षण के कारण ही सुन्दर प्रतीत नहीं होती वरन् उसका सौन्दर्य दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक आधार शिलाओ पर प्रतिष्ठित है। नारी सौन्दर्य की प्रतीक है, क्योंकि उसमें पुरूष को सौन्दर्य के रूप में भोग और अभिव्यक्ति नामक तीनो तत्व प्राप्त होते है। नारी शरीर में रमणीक रंगो का अपूर्व समन्वय रहता है उसकी मधुर ध्वनि भी सौन्दर्य बोध का प्रबल उपकरण होती है। सौन्दर्य की एक विशेषता हमने कोमलता मानी है – ''नाम्नैव स्त्रीति पेशलम् स्त्री तो अपने नाम में भी कोमल और मंजुल है रूप रंग रंग ढंग सुधरता सुधरता, समता सापेक्षता, मार्धुय लावण्य उदारता सुखकारता एवं संगति और संतुलन सभी दृष्टियो से नारी का सौन्दर्य अप्रतिम है। रूप का विन्यास और अभिव्यक्ति उसकी सजीवता के कारण अत्यन्त कमनीयता उत्पन्न करते है। उसकी वाणी की मिठास सौन्दर्य को तरलित और सम्प्रेषित करती है। नारी शरीर में समस्त ललित कलाओं का निवास है। वस्तु और मूर्तिकाल के सापेक्षता एवं सन्तुलन आदि गुण उसमें प्रयत्क्ष है उसकी वाणी में संगीत है, उसके वचनों में साहित्य का प्राण है उसका रूप चित्रकला का सजीव उदाहरण है। इससे भी उपर वह मानसिक और शारीरिक वेदनाओं की परमतृप्ति कोण है। यही कारण है कि भतृहरि ने नारी को सौन्दर्य का सार और कलाओं की सृष्टि के रूप में देखकर अपने उदात्ती कृत सौन्दर्य जन्य शम का केन्द्र माना है। भतृहरि का दर्शन नारी की इसी रूप भत्यता पर आध्रत है।[170]

यत्किंअितलोके शुचि मध्य मुज्जवल दशृनीय वा तच्ट्छङ्गारिणोपनीन्ते आकर्षक सौन्दर्य का प्राण है और यह नारी नारी में प्रकृत्या ही परिव्याप्त है। आकर्षण तत्व अनिवर्चनीय है: मूल प्रकृति का यह जिज्ञासामय संवेगै, जो सृष्टि के समस्त प्राणियों में नर नारी की पारस्परिक अनुरक्ति उत्पन्न कराता है। इस आकर्षण से यौन भावना ही नहीं अन्य अनेक भाववेग आभिभूर्त होते है, जो एक दूसरे का समन्वय करते हुए अथवा सयुक्त होते हुए अत्यन्त मनोहारी प्रतीत होते है यही कारण है कि संसार के सब सौन्दर्य श्रङ्गार में सन्निहित हो जाते है।

''सर्वे रसाश्च भावाश्च तरंगा इव वारिधौ। उन्मज्जन्ति निमज्जन्ति यत्र स प्रेमसंज्ञक ॥

इस प्रकार रतिभाव विश्व की समस्त गुण राशि का अवलम्बन है।[171]

श्रृंग हि मन्मथोद् भेदस्तदाग मन हेतुक:। उत्तम प्रकृति प्रायो रस: श्रृङ्गार इष्यते ॥

और मानव प्रकृति का सर्वश्रेष्ठ अंग है। नारी में पुरूष के लिए रमणीयता की प्रधानता

है, क्योंकि प्रेम उसके मूल में विद्यमान है। यही कारण है कि पुरूष का स्त्री में उसके मूल में विद्यमान है। यही कारण है कि पुरूष का स्त्री में भाव दशा का लय हो जाता है।[172] हिन्दू धर्म शास्त्रों के अनुसार –

क) स्वेच्छामय: स्वेच्छायाय द्विधा रूप बभूव ह।

स्त्री रूपों वाम भागांशो दक्षिणांश: पुनाद स्मृत:॥

ख) द्विधा कृत्वा ऽऽत्मानो देहमेर्दन पुरूषोऽभवत।

अर्धेन नारी तस्यां स विराजमसृजत प्रभु: ॥

परम पुरूष ने प्रकृति नारी को अपने में से ही बनाया है। अयाध्यक्षेण प्रकृति: सयते सचराचरम्॥ और द्वैत वादियों के मत से मूल प्रकृति और मूल पुरूष का सनातन सहयोग ही सृष्टि का कारण है।[173] Bibal एवं miltons paradise lost में ईसाई धर्म में भी हवा को आदम की पसली से बना हुआ कहा ागया है। इसी क्रम में एकोडंह बहुस्याम मनुष्य का भी अस्तित्व आया और परमात्मा एक से अनेक हो गया। प्राय: यही विचार मुस्लिम धर्म में भी मिलता है।[174]

श्रोत्रस्य श्रोत्र मनसो मनो यद्वाचो ह वाचँस उ प्राणस्य प्राण:।

चक्षुषश्चक्षु रतिमुच्य धीरा: प्रेत्सास्यालोकादमृता भवन्ति ॥

अत: प्रेम की प्रेरणा से परमात्मा अनुस्यूत है, वह सभी को अनुप्राणित करता है, वह जीवों के श्रोत्र का श्रोत्र, मन का मन, वाणी की वाणी, और प्राण का प्राण है।

परमात्मा का यह प्रेम ही सृष्टि की सुव्यवस्था का कारण है ; ग्रह नक्षत्रादिक सभी उसी प्रेम के आकर्षण का नियम पालन कर रहे है।

विश्वदेव सविता या पूषा सोम मरूत चंचल पवमान

करूण आदि सब घूम रहे है किसके शासन में अम्लान ?

महानील इस परम व्योम में अंतरिक्ष में ज्योति मार्न

ग्रह नक्षत्र और विद्युत्कण किसका करते ये संधान

छिप जाते है और निकलते आकर्षण में खिचे हुए

तृण वीरूध लहलहे हो रहे किसके रस से सिंचे हुए ?

वृक्षो का जडो द्वारा पृथ्वी से चिपकना षटपद का शतदल पर मडराना मीन का नीर से स्नेह, और उसी प्रकार नर नारी की अनुरक्ति उसी दिव्य प्रेम के परिणाम है।[175] अत:

सौन्दर्य के प्रति सहजरूप से होने वाले आकर्षण को प्रेम कहते है । श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी के शब्दो में सौन्दर्य एक भावानुभूति है, प्रेम उसकी रसानुभूति है ।(176) चाहे एक ही परमात्म तत्व प्रभु अपने को दो बांट कर पुरूष और नारी (प्रकृति) बन गया हो चाहे ये नर नारी के दोनो रूप अनादि काल से ही हो । इतना तो प्रत्येक दशा में सिद्ध ही है कि पुरूष और प्रकृति (नर और नारी) का व्यक्तित्व परस्पर पूरक है, क्योंकि शास्त्रों ने स्त्रीधारा पुधारा मयी कैवल्याधिकारिणी कैवल्य का अधिकार तभी माना है जब पुधारा और स्त्री धारा में समन्वय हो जाय ।(177) पूर्व मीमांसा दर्शन का यह कथन कि नर नारी आरंभ से ही अलग अलग है, भौतिक विज्ञान की आधुनिक उपलब्धियों की अनुकूलता में है । विद्युत भी दो प्रकार की होती है – उसके धनात्मक और ऋणात्मक भेदों में परस्पर प्रबल आकर्षण होता और उसी आकर्षण के द्वारा उसकी कार्य शक्ति निष्पादित होती है । जैवकीय विज्ञान ने भी नर नारी रूपें के इस आकर्षण की पुष्टि की है । पौधों में भी पराग सेचन क्रिया ही प्रजनन की साधिका बनती है । उनमें भी स्त्री पुरूष रूपों में यह आकर्षण विद्यमान है, और इसका उद्देश्य और परिणाम है प्रजनन सन्तोत्पत्ति ।

क) मयाध्यक्षेण प्रकृति: सूयते सचराचरम ।'' गीता

ख) प्रकृति स्वामवष्टम्य विसृजामि पुन: पुन: ।'' गीता

ग) प्रकृति स्वामधिष्ठांम सभावाम्यातममायमा ।'' गीता

जैसे परम पुरूष ने प्रकृति में अधिष्ठित होकर अनेक रूपों की उत्पत्ति की थी, वैसे ही अब भी विश्व के समस्त नर अपनी अपनी मादाओं से सहयोग कर प्रजोत्पति करते है । नर नारी का संयोग प्राकृतिक तो है ही धर्म शास्त्रों ने कैवेल्य प्रीप्त के लिए भी इसे अनिवार्य बताया है । जैस विद्युत के दोनो रूपों के मिले बिना मुक्ति की प्राप्ति नहीं हो सकती । स्त्री धारा और पुरूष धारा विवाह द्वारा मिल कर दोनो की एकता प्राप्त करती हुई मुक्ति अधिकारिणी बनती है ।(178) दोनो के मिलने से उनकी उच्छलंखल अनर्गल पशु प्रवृत्तियाँ नियंत्रित हो जाती है उनकी भोगेच्छाएँ केवल एक दूसरे में सीमित हो जाती है और फिर इसमें आत्म संयम और आत्म त्याग की भावना उत्पन्न ह्रो है, जिससे पति पत्नी परस्पर आध्यात्मिक उन्नति में सहयोग करते है । भलि काल में प्रेम का यही आर्दश था ।

काम –

निखिल शक्ति बंध रूप पाश में करती ससृंति नर्तन

रूप परिधि में मुक्त प्रकाशित शतशत रवि शशि उड्डगन । + + + +

प्रकृति रूप इच्छा से उन्मद करती सृजन सनातन ।

रूप सृष्टि यह भावों को दो मधुर रूप परिरंभण ।

नर नारी का पारस्परिक आकर्षण सर्वथा प्राकृतिक है, विधाता का विधान है । यह सृष्टि के क्रमानुगमन के हेतु उद्देश्य पूर्वक रखा हुआ सौन्दर्य प्रत्यय है । यह रूप पाश ही संसृति और प्रकृति को सृजन में तत्पर करता है । प्रजावृद्धि के लिए इसकी अनिवार्यता भी है । जिस प्रकार शरीर के पोषण के लिए भोजन अपेक्षित है उसे रसना के लिए आकर्षणास्पद है बनाने के लिये प्रकृति ने उसमें षडरस का निधान भी कर दिया है उसी प्रकार प्रजा परम्परा चलाने के लिए आवश्यक रति को भी परम आनंद से युक्त बनाया गया है । नर नारी संबंध से ये दोनो अर्थ सिद्ध होते है । कोनानन्द रति प्रजातिम रत्यानन्द के साथ सन्तति प्राप्त भी हो जाती है ।[179] वचनादान विहरणोत्सर्गानन्दाश्च पंचानाम् । ईश्वर कृष्ण ने अपने साख्य कारिका में पंचम इन्द्रिय का विषय ही आनंद बताया है।

सुरतो च समाधौ च माया यत्र न लीयते ।

ध्यानेनापि हि किं तेन कि तेन सुरतेन वा ॥

यह आनंद ब्राह्मनन्द का समकक्ष तक मान लिया गया है । प्रवृतिरेषाभूतानाम । मनुस्मृति के अनुसार यह प्राणियों की सहज प्रवृत्ति है । प्राणियों की इस सहज प्रवृत्ति का नाम काम (sex) है जिसकी परिभाषा है-श्रोत्र त्वक्र चक्षुजिहवा घ्राणानामत्म संयुक्तेन मन साधिष्ठातानास्वेषु स्वेषु विषमें एवानकूल्यत: प्रवृति: काम: । आत्मा से युक्त नाम द्वा कर्ण त्वचा, नेत्र जिहवा तथा प्राण नामक पंचेन्द्रियों से आनंद प्राप्ति की प्रवृत्ति को काम कहते है । यह काम लेश मात्र विर्गहणीय नहीं है । यह तोचार पुरूषार्थों में से एक है । जीवन में इसका अत्यधिक महत्व है । कतिपय आधुनिक मनोवैज्ञानिकों के मत में तो यह काम नर नारियों की प्रत्येक प्रवृत्ति का मूलाधार है उनके विचार से कोई भी ऐसा कार्य नहीं जिसकी मूल प्रेरणा काम भाव से प्राप्त न होती है ।

कर रही लीलामय आनंद महाचिति हुई सजग सी व्यक्त

विश्व का उन्मीलन अभिराम इसी में सब होते अनुरक्त ।

काम मंगल से मंडित श्रेय सर्ग इच्छा का है परिणाम

तिरस्कृत कर उसको तुम भूल बनाते हो असफल भवधाम ।

प्रसाद जी ने कामायनी में इस काम की व्याख्या इस प्रकार की है – यह चेतना अपनी आनंद लीला से व्यक्त हो कर विश्व का सुन्दर विधान कर रही है । यह सृष्टि उसकी इच्छा

का काम का मंगलमय परिणाम है।[180] धर्मविरूद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ। यह काम अ तिरस्करणीय है। गीता के शब्दो में यह धर्म से अविरूद्ध काम है, सर्वतोमुखी सुख समृद्धि का पोषक और भगवान की विभूति है।[181] इस प्रकार है कि उर्व इव प्रपथे कामो अस्मे वैदिक काल में काम शब्द का अर्थ व्यापक था इमं काम मन्दया गोभिरवैश्वचन्द्रवता राघसा प्रपश्च वह क्षुद्र इन्द्रिय परक वासना मात्र नहीं है। ऋग्वेद में पहले इसका आशय केवल कामना था।[182] कामस्तदग्रे सवर्त्ततोऽधिमनसो रेत: प्रथम तदासीत। काम या वासना वह मूल प्रवृत्ति है जो चित्त में सर्व प्रथम उदित होतीहै। काम सूत्र में भी काम की व्याख्या पहले कामना अर्थ करके ही फिर आगे बढा गया है। वात्स्यायन ने पंच ज्ञानेन्द्रियों का आत्मा से प्रेरित मन की संवेदना के साथ अपने अपने विषयों के अनुकूल प्रवृत्त होना काम बताया है।

काम काम सब कोई कहै काम न चीन्है कोई। जेती मन की कामना काम कही जै सोई॥

काम का यही अर्थ महात्मा कबीर ने भी किया है। ऋग्वेद में काम को कामना के रूप में ग्रहण करके ही उस व्यक्ति को निष्काम कहा गया है जो सब प्रकार की इच्छाओं को वश में कर चुका है। भगवान बुद्ध ने भी ऐसे निकाय व्यक्ति को ही निर्वाण का अधिकारी माना है।

काम का वासना में रूपांतरण –

धीरे धीरे ऋग्वेद काल में ही काम का अर्थापकर्ष होने लगा। इसका कारण संभवत: यह रहा होगा कि कामास्पद वस्तु के प्रति सकाम व्यक्ति अत्यधिक आसक्त होने लगे होगे जिससे इसे दूषित भावना माना जाने लगा होगा। काम की प्रवृत्ति से अभिभूत व्यक्ति को कामी की सज्ञा दे दी गई और उसका उल्लेख गर्हा निन्दा और वितृष्णा के साथ किया गया।

''स्त्रीषु जातो मनुषयाणां स्त्रीणां च पुरूषेषु वा। परस्पर: कृत: स्नेह: काम इत्यमिधीयते॥

ज्यो ज्यो काम के साथ आशक्ति और उपभोग की इच्दा बढती गई त्यो त्यो काम को वासना के अर्थ में ग्रहण किया जाने लगा और स्त्री पुरूष का आकर्षण तथा सहयोग ही इसका प्रधान भाव हो गया। काम सूत्र में भी काम की विशेष व्याख्या सुख एवं प्रजोत्पत्ति कारी काम के रूप में की गई और कहा गयाकि स्त्री पुरूष के पारस्परिक स्पर्शादि से उत्पन्न अभिमानिक सुखों का विषय बोध ही प्रधान वा विशेष काम है।

''कामिहि नारि पियारी जिमि लोभहिं प्रिय जिमि दास।
तिमि रघुनाथ निरंतर प्रिय लागहु मोहि राम॥

भक्ति काल में काम शब्द का यही दूसरा अर्थ प्राय: ग्रहण होता है था। गोस्वामी तुलसी दास जी ने इसका यह अर्थ ग्रहण किया है।

क) कौशल यह कोमल कितना है सुषमा दुर्भेय बनेगी क्या ।
चेतना इंन्द्रियों को मेरी मेरी ही हार बनेगी क्या ॥

ख) आह ! वैसा ही हृदय का बन रहा परिणाम ,
पा रहा हूं आज देकर तुम्ही से निज काम ।
आज ले लो चेतनाका यह समर्पण दाव ।
विश्व रानी ! सुन्दरी नारी ! जात की मान ।

महाकवि प्रसाद ने काम का वासना में पर्यवसान बडे सुन्दर शब्दों में किया है । काम वासना स्थूल शरीर से संबंध रखती है और इन्द्रिय भोग तथा तृप्ति की अभिलाषिणी होती है । वासना से अभिभूत हुए मनुष्य का पशु से कोई अन्तर नहीं रह जाता । मनोवैज्ञानिक हैवलॉक एलिस का भी यही मत है कि यौन संयोग का प्रबल आकर्षण नर नारियों को उद्भ्रान्त बना सकता है, और इस प्रकार की क्षुधा मनुष्य में पशुओं से किञ्चिंत भी भिन्न नही हुआ करती है ।

वासना परक काम से लज्जा की उद्भूति –

क) धूमलतिका सी गगन तरू पर न चढती दीन
दबी शिशिर निशिथ में ज्यो ओस भरा नवीन
झुक चली सव्रीड वह सकुमारता के भार
लद गई पा कर पुरूष का नभमय उपचार ।
और वह नारीत्व का जो मूल साधु अनुभाव
आज जैसे हसँ रहा है भीतर बढाता चाव
मधुर क्रीडा मिश्र चिंता साथ ले उल्लास
हृदय का आनंद कूजन लगा करने रास ।
गिर रही पलके झुकी थी नासिका की नोक
भ्रूलता भी कान तक चढती रही बेरोक ।
स्पर्श करने लगी लज्जा ललित कर्ण कपोल
खिला पुलक कदंब सा था भरा गदगद बोल । – वासना सर्ग–कामायनी

ख) उज्जलव वरदान चेतना का सौन्दर्य जिसे सब कहते है ,

जिसमें अनंत अभिलाषा के समपने सब जगते रहते है। -लज्जा सर्ग-कामायनी

जब काम नर नारी सहयोग मूलक विलास भाव का पर्याय बना, तभी से संस्कार प्रिय मानव में लज्जा का प्रादुर्भाव भी हुआ क्यों कि वासना में जहां उद्रामता की प्रधानता होतीहै वही गोपन की प्रवृत्ति भी स्वाभाविक ही होती है। यद्यपि लज्जा का आगमन केवल गोयोन प्रकृति से होता है तथापी उससे दो बडे गुणों की मनोरमता प्रेम भाव में प्राप्त हो जाती है एक तो यह कि लज्जा से नारी के आकर्षण को चार चांद लग जाते है उसके सौन्दर्य में अपूर्व निखार और औदार्य आ जाता है, यौवन के साथ शनैः शनैः तन मन में व्याप्त होता हुआ यह मनोविकास उसके छिपाने के प्रयत्न से और भी अधिक प्रकाशित होता हुआ स्त्री का भूषण बन जाती है और उसकी श्री वृद्धि में परम योग देता है।

वैसी ही माया में लिपटी अधरों पर उंगली धरे हुए,
माधव के सरस कूतूहल का ऑखों में पानी भरे हुए ॥

\+ + +

स्मिता बन जाती है तरल हंसी नयनों में भरकर बाकपना।
प्रत्यच्छ देखती हूं सब जो वह बनता जाता है सपना ॥

\+ + +

इतना न चमत्कृत हो बाले। अपने मन का उपकार करो।
मैं एक पकड हूॅ जो कहती ठहरो कुछ सोच विचार करो ॥

\+ + +

मै रति की प्रतिकृति लज्जा हूॅ मै शालीनता सिखाती हूॅ,
मतवाली सुन्दरता पग में नुपुर सी लिपट मनाती हूॅ ॥

\+ + +

लाली बन सरल कपोलो में ऑखो में अंजन सीलगती,
कुचिल अलको सी घुघॅराली मन की मरोर बन कर जाती है ॥

\+ + +

चंचल किशोर सुन्दरता की करती रहती रखवाली,
मैं वह हलकी सी मसलन हूॅ जो बनती कानो की लाली ॥ -लज्जा सर्ग -कामायनी

दूसरे उससे प्रेम की प्रतिष्ठा अध्यात्म भूमि पर होने लगती है। अपने क्षुद्रतम रूप में भी वह चित्र को अध्यात्म की मनोभूति में प्रविष्ट करा देती है। प्रसाद जी ने लज्जा के इन दोनो गणुों सौन्दर्याभिवर्धन और अध्यात्मसंचरण पर प्रकाश डाला है।

काम का पुनर्निमलीकृत रूप –

यही कारण है कि श्रङ्गार रस को रस राजत्व प्रदान करने वाले आचार्यों ने उसके लिएपवित्र भाव का होना आवश्यक समझा था। साहित्य दर्पणकार ने भी इसी बात को ध्यान में रखकर श्रङ्गार का उत्तम प्रकृति होना अभीष्ट है बतलाया है। और इसी कारण शार्ङ्गधर ने स्त्री पुरूष को भी स्नेह नाम देना अधिक उचित समझा है।

इयमेव रति: प्रौढा महाभाव दशा वृजेत। या मृग्या स्याद्विमुक्तना भक्तां च वरीयसाम॥

वैसे रति शब्द की व्याख्या भी उसकी उत्तम प्रकृति की ओर इंगित करती है। मानो अनुकूल विषय में मन का स्वत: प्रवृत्त होना रति है। [183]

क) वह मूल शक्ति उठ खडी हुई अपने आलस का त्याग किये,
परमाणु बाल सब दोड पडे जिसका सुन्दर अनुराग लिये॥

+ + +

कुकुम का चूर्ण उडाते से मिलने को गले ललकते से,
अंतरिक्ष में मधु उत्सव के विद्युत्वकण मिले झलकते से॥
वह आकर्षण वह मिलन हुआ प्रारंभ माधुरी छाया में,
किसको कहते सब सृष्टि, बनी मतवाली अपनी माया में॥

किसी नैसर्गिक आत्मीयता के कारण नर नारी में एक ऐसा सहज मिलनेच्छा जागृत होती है, जिसमें पारस्परिक आत्म सम्पर्ण की तीव्र उत्कण्ठा भरी रहती है। [184]

'' तव विभूति वह विखर गयी है अब विश्व प्रकृति में आंगन में।
अत: दिव्य आत्मिकता मेरी हो गयी प्रकृति के कण कण में। + + +
प्रिये हमारा मिलन वासना से पंकिल क्यो होना ?
उससे तो अध्यात्म भाव का पुण्य प्रकाश बढेगा।
रति जन्य यह आत्म विस्मृति वस्तुत: आत्म विस्तार है,
जो प्राणियों को अनेकता में एकता की ओर अग्रसर करता है। आह–प्रवर
इन्हीं सब कारणों से ऐसे काम पर आधृत श्रङ्गार को अग्नि पुराण में आदिरस की संज्ञा

दी गई है पुराणों में ऐसे ही काम की कल्पना की गई है जो रतिसंयुक्त होकर भी अनंग है, जो राधाकृष्ण और अर्धनारीश्वर को युगल मूर्तियों की भॉति भौतिकता से आध्यात्मिकता तक के उत्कर्ष की ओर संकेत करता है ऐसे ही काम से उत्पन्न प्रेम को सूफी कवि हल्लाज ने परमात्मा का सार तत्व माना है ।

युक्त रूप का तत्व बनेगा जगती का नव जीवन,

रूप मुक्ति ही भाव मुक्ति यह तात्विक सत्यान्वेषण ॥

अत: पंत जी का यह तत्वनिष्कर्ष कि रूप की मुक्ति से ही भाव की मुक्ति होती है, वस्तुत: ऐहिक प्रेम के उत्कर्ष में दिव्य प्रेम की अनुभूति की व्याख्या करता है ।

प्रेम का स्वरूप –

अनिर्वचनीयम् प्रेम स्वरूपम ऐसे निष्काम काम वाला प्रेम नि:स्पृह और नि:स्वार्थ होता है । मूकास्वाद नवत् ऐसा प्रेम एक अनिवचृनीय तत्व है । (185)

क) काम गंधहीन हइले गोपीभाव पाय ।

ख) अतएव कामे प्रेमे बहुत अंतर । काम अंधतम प्रेम निर्मल भास्कर ॥

अतएव गोपीगणे नाहि काम गंध । कृष्ण सुख हेतु मात्र कृष्णेर संबंध ॥

वासना परक काम में जबकि स्वार्थ और भोगाकांक्षा की प्रधानता रहती है, त्यागकर अलौकिक प्रेम कहलाता है, जिसे बंगाली वैष्णव कवियों ने गोपी भाव रूप में ग्रह किया है ।

It is not untill lust is expanded that it develops into the exuisite and enthralling flower of love. वासना का पूर्ण त्याग करके ही यह काम कली परिपूर्ण प्रेम प्रसून के रूप में मिलती है ।

''गुण रहित कामना प्रतिक्षणर्धमानमविच्छिन्न सूक्ष्मतर मनुभव रूपम । शुद्ध प्रेम गुण रहित कामना रहित और सूक्ष्मतर होता है ।

बिनु गुन जीवन रूप धन, बिनु स्वारथ हित जानि,

सकल कामना ते रहित, शुद्ध प्रेम रसखानि ॥(186)

ऐसा प्रेम प्रेम मात्र के किसी गुण पर आधृत नही होता ; वह तो एक सहज आत्मिक आकर्षण है, नैसर्गिक लगन है, अत: वह प्रिय से कुछस्वार्थ सिद्ध की अपेक्षा नहीं करता उसे तो प्रिय के गुण दोषों पर भी दृष्टिपात करने का अवकाश नहीं मिलता । यही कारण है कि वह आरंभ से ही एक सा अविच्छिन बना रहता है और निरन्तर बढता रहता है । भक्ति काल के

कवियों ने ऐसे ही कामना रहित प्रेम को अपना आदर्श और साध्य माना है। गुणमाहात्म्यासक्ति रूपा सक्ति प्रजासक्ति स्मरणासक्ति दास्यासक्ति सख्या सक्ति कान्तासक्ति वात्सल्यासक्त्यात्मनिवेदनासक्ति तन्मतासक्ति परम विरहासक्ति रूपा एकधाप्येकादशधा भवति। नारद भक्ति सूत्र के अनुसार यह प्रेम एकादश रूप धारण हुआ विभिन्न संबंधो के माध्यम से व्यक्त होती है। सामान्य तथा कवियों ने प्रेम के तीन रूप भक्ति (श्रद्धा) माधुर्य (सख्य) और वात्सल्य (स्नेह) प्रशस्त माने है। प्रेम के सभी रूपों में भावातिरेक की महिमा है।

प्रेम में अनन्यता -

जब प्रेम में विशुद्धता और गम्भीरता भरपूर होतीहै, तब प्रेम भाव अति प्रखर हो जाता है, और प्रेम की दशा और की और हो जाती है। वह अपने को प्रेमी पर बलिहार कर देता है उसी के रंग में रंग जाता है और आत्म समीक्षा में असमर्थ हो जाता है। तत्प्राप्य तदेवावन्लोकयति, तदेव श्रृणोति, तदेव भाषयति तदेव चिन्तयति। वह अपने हृदय मुकुर में उसी की झांकी देखता रहता है। वह उसी को सुनता बोलता और सोचता रहता है। (187)

क) यज्ज्ञात्वा मत्तो भवति स्तब्धो भवति आत्मारामोभवति ॥

ख) कण्ठावरोध रोमांचाश्रुभि : परस्पर तपमाना: पावयन्ति कुलानि पृथिवी च ॥

ग) वाग्गदगदा द्रवते यस्म चिंत, रूदत्यभीक्षणं हसति क्वचिच्च।

विलज्ज उद्गायति नृक्षयते च, मद्भक्ति युक्तो भुवन पुनीत ॥

कभी वह प्रेम लीनता में अश्रु प्रवाह करता है और कभी हास विहास की आभा धारण करता है।(70) तदपिताखिलाचार: सत्कायक्रोधाभिमानादिकं तस्मिन्नेव करणीयम् ॥ प्रेम को रिझाने के लिए उसकी ये सब सहज चेष्टाए है जिनका उसे भाव तक नहीं है। इस प्रकार के ध्यान में उसके समस्त स्वार्थ स्वयं अपशमित हो जाते है और यदि उसे कभी अपने स्वार्थों का ध्यान भी है, तो उन्हें प्रिय के लिये बलिदान करने में ही वह परम सुख का अनुभव करता है।

सा न कामयमाना निरोध रूपगत्वात ॥ निरोधवस्तु लोक वेद

व्यापार न्यास: ॥ तस्मिन्नन्यता तद्विरोधिबूदास सीनता च ॥

वह उनन्यता के कारण वह संसार की अन्य वस्तुओं के प्रति उदासीन व विरक्त हो जाता है जिससे उसका मन निवृत्ति पथ ग्रहण कर लेता है, और अपने प्रेम मार्ग पर दृढ एवं अविचलित होकर अग्रसर होता रहता है।(188)

क) सुनहु स्याम यह बात और कोउ क्यों समुझाइ कहै ।

दुहु दिसि कौअति विरह विरहिनी कैसे कै जु सहै ॥

जब राधा तबही मुख माधौ, माधौ रटत रहै ।

जब माधौ व्है जात सकलत्ततु, राधा विरह देहे ॥

उभे उग्र दब दारू कीट ज्यौ, सीतल ताहिं चेहे ।

सूरदास अति विकल बिरहनी, कैसेहु सुखन लहै ॥

ख) ''राधा माधव भेंट भई

राधा माधव, माधव राधा कीट भृङ्ग गति है जु गई ॥

माधव राधा के रंग रॉचै, राधा माधव रंग ।

माधव राधा प्रीति निरन्तर रसना करि सो कहि न गई ॥

विहसि कहो हम तुम नहि अंतर यह कहि कै उन ब्रज पठाई ॥

सूरदास प्रभु राधा माधव ब्रज बिहार नित नई नई ॥

यह दशा लौकिक और अलौकिक दोनो प्रकार के प्रेम में प्राप्त होती है। एक बिन्दु पर केन्द्रित रहता हुआ भी, इसी कारण वह प्रेम अपूर्व शक्ति धार कर सर्वव्यापी बन जाता है। इसमें प्रेमी का प्रिय से तादात्म्य हो जाता है। सूर को राधा का कृष्ण से ऐसा तादात्म्य हुआ है। [72]

राधा हरि बन गई हाय यदि, हरि राधा बन पाते

तो उद्धव मधुवन से उलटे, तुम मधुपुर ही जाते ।

यह क्या यह क्या भृम या विभ्रम दर्शन नहीं अधूरे ।

एक मूर्ति आधे में राधा आधे में हरि पूरे ॥

जिसे आधुनिक युग में गुफ्त जी ने अनुभूत किया है ।

इहि विधि होई अवेस परम प्रेमहि अनुरागी ।

और रूप पिय चरित तहा सब देसन लागी ॥

रोम रोम रहे व्याधि के मोहन जिनके आय ।

तिनके भूत भविष्य को जानत कौन दुराय ॥ रंगीली प्रेम की ॥

सुनत सखा के बैने जैन आए भरि दोउ ।

विवस प्रेम आवेस रही नाहिन सुध कोउ ॥

रोम रोम प्रतिगोपिका है गई सांवरे गात ।

काम सरोवर सावरौ ब्रज बनिता हो पात ॥

उलहि अंग अंग ते ॥

पुनि ब्रज सुन्दर संग मिलि सौहे सुन्दर वर यो ।

अनेक शक्ति करि आवत सौहै परमातम ज्यौ ॥

मोहन लाल रसाल की लीला इनही सौहै ॥

केवल तनमय भई कछु न जानति हल कोहै ॥

भृङ्गी मय ते मृग होत इक मजाजड कीटु ।

कृष्ण प्रेम ते कृष्ण होन कछु नहीं अचरज बढ ॥

नन्दास की गोपियों में उद्धव ने इस तादात्म्य के दर्शन किये है ।(189) तुलसीदास के राम तो शत्रु भाव से भजने वाले राक्षसों को भी आत्मलीन कर लेते है ।

क) कुम्भकर्ण की सायुज्य प्राप्ति - तासु तेछ प्रभुवदन समाना

ख) रावण की सायुज्य प्राप्ति - तासु तेज समान प्रभु आनन (190)

कबीर -

लाली मेरे लाल की जित देखो तित लाल । लाली देखन मैं चली, मैं भी हो गई लाल ॥

ज्ञान मार्गी कवियों ने इसी तादात्म्य को ज्ञान का साध्य प्रतिपादित किया है । और प्रेम मार्गियों की कलाओं का चरम बिन्दु भी यही आत्म लय है । सख्य माधुर्य दैन्य और दास्य सभी में अनन्यता से ही तीव्रता और ततलीनता का सचरण होता है ।

दाम्पत्य भाव और मधुर रस -

सम्यर्ड मसृणितस्वान्तो ममत्वातिशयाकित :। भाव: स एव साद्रात्मा बुधै: प्रेम निगघते ॥

दाम्पत्य भाव को सब भावों का मूल तथा सबसे मधुर भाव कहा गया है, क्योंकि इसी से पूर्ण तल्लीनता प्राप्त होती है । दाम्पत्य भाव की तल्लीनता, अनन्यता और तीव्रता ही भगवान के भक्त के प्रेम में उदाह्त होती है । इसमें पूर्ण आत्म समर्पण होता है, अत: अनेक कवियों ने आत्मा परमात्मा में पति पत्नी भाव का आरोप किया है । सूफी कवियों के अतिरिक्त भक्त कवियों में भी ऐसा ही भाव पाया जाता है । सगुण भक्त कवियों ने परमात्मा की ऐसी भक्ति को माधुर्य भाव का नाम दिया है ।

काम मिलावै राम को जो राखै यह जीति । दास मलूका यो कहै, जो मन आवै परतीति ॥

अधिकांश भक्त कवियों की अनुभूतियों ने यह सिद्ध कर दिया है कि दाम्पत्य भाव का चरम विकास आध्यात्मिक प्रेम में होता है ॥ विवर्त विलास के अनुसार पुरूष के प्रेम को अध्यात्मपरक बनने के लिए प्रकृति (स्मी) के संग रूपी अग्निकुण्ड की वैसी ही आवश्यकता है, जैसी कि दूध को गाढा करने के लिये आग की । (191)

बंगाल का बाउल सम्प्रदाय किसी बाहय इष्टदेव की कल्पना नहीं करता । वह यह प्रतिपादित करता है कि प्रत्येक व्यक्ति के अन्तर में मनेर मानुष का निवास है, जिससे प्रत्यच्छ संबंध स्थापित करके वह आत्म प्रेम के द्वारा ही आत्म सिद्धि प्राप्त कर लेता है । उत्तर भारत का सहजिया सम्प्रदाय भी किसी वाहय अलौकिक इष्टदेव का पूजन अर्चन नहीं करता । वह मानता है कि प्रत्येक मनुष्य के दो पक्ष होते है रूप और स्वरूप । रूप से आशय है उसका हाडपास का पुतला और स्वरूप का अर्थ है इस पुतले में अंतनिर्हित राधा या कृष्ण का सूक्ष्म व्यक्तित्व । वह इस रूप पर स्वरूप का आरोप करता है, और रूप के माध्यम से ही स्वरूप की सिद्ध करता है । सूफी प्रेम पद्धति और इसमें यह अन्तर है कि सूफी लोग परमात्मा को रूह का मूल मानते हुए उससे दाम्पत्य संबंध स्थापित करते है जिससे आत्मा परमात्मा का द्विव्य भाव प्रकट होता है किन्तु सहजिया सिद्धांत केवल व्यवहारत: परमात्मा को द्विधा विभक्त करता है तत्वत: आत्मा परमात्मा को वह सदा एक और अभिन्न मानता है । सहजिया प्रेम उपास्य उपासक का प्रेम है । बाउल सम्प्रदाय सहजिया सम्प्रदाय से इस बात में सिद्धांतत: भिन्न है कि वह किसी आरोप की प्रक्रिया को स्वीकार न करे मनेर मानुष को ही अलौकिक व्यक्तित्व के रूप में स्वीकार करता है । भक्ति काल की दाम्पत्य भाव मूलक विभिन्न साधनाओं का वर्णन यथावसर किया जायेगा जिससे प्रगट होगा कि नारी का उपासना क्षेत्र में कैसा मनोवैज्ञानिक अधिपत्य था ।

परकीया प्रेम और अध्यात्म भाव -

शाडिल्य ऋषि ने प्रेम को पुरानुरक्ति माना है – साधना भक्ति हइते हम रतिर उदय ।

रति गाढ हइले तारे प्रेम नामे कम ॥

चैतन्य चरितमृत कार ने भी अनुराग के सघन होने को ही प्रेम कहा है तदर्पिताखिला चारिता तद्विस्मरणे परम व्याकुलता अनुराग की यह सान्द्रता सारे बाह्य आचारों की उपेक्षा करता है इसमें तो प्रिय का विरह होने पर एक परम व्याकुलता प्रेमी को व्याप्त किये रहती है।

अनायाराधितो नून भगवान्हरिरीश्वर: । यन्नोविहाय गाविन्द: प्रीतो याम न यद्रूह: ॥

श्रीमदभागवत का गोपी भाव इसी विचार धारा का प्रतीक है।[192] यद्यपि नारद आदि भक्ति विवेचको ने प्रेम की इस तीव्रता को सर्वथा वैध एवं शील सयुक्त आचार विचार के आधारों पर ही समाघृत रखने का प्रयत्न किया था। [193]

शिलष्यति कामपि चुम्बति कामपि रसयति कामपि रामम्।

गोविन्द ब्रज सुन्दरी गजवृंत पश्यामि दृष्यामि च

राधामाधवोर्जयन्ति यमुना कूले रह: केलम :

तथापि कालाक्रमानुसार से यह प्रेम परमोद्रेक परकीया प्रेम की तरलता और सम्यन्ता का आकांक्षी बनने लगा, और साहित्य तथा भक्ति दोनो में परकीया का प्रेम प्रखरतम और सान्द्रतम प्रेमा दर्शों के रूप में गृहीत हो चला इस आधार पर भक्ति के कुछ सम्प्रदाय भी चल पडे। भक्ति कवियों ने परकीया प्रेम को यौनाकुलता के कारण नहीं वरन उसमें स्वत: उदभूत अर्पितमनोबुद्धि और अर्पिता खिलाचार की व्याकुल विवृत्ति के कारणपरमात्मा के प्रेम के लिए उदाहरणीय माना था।

नारी के विभिन्न अभिधेय -

कार्यों रूपों और स्थितियों के अनुसार नारी के अनेक नाम भारतीय साहित्य में प्रचलित है, जिससे नारी के विभिन्न स्वरूपों का बोध होता है। नर के धर्म वाली या नर के सबंध होने के कारण उसका नारी नाम पडा है। इस शब्द से सृष्टि के एक एक प्राणि विशेष का रूप सामने आता है और यह भक्ति काल में प्राय: उसी अर्थ में प्रयुक्त भी होता था जिस अर्थ में आजकल साधरणतया मादा (Female) शब्द का प्रयोग होता है। यह एक ध्यातव्य विषय है कि भक्ति काल में जहां स्त्री निन्दा है, वहा प्राय: सर्वत्र ही नारी शब्द का प्रयोग हुआ है जो सम्भवत: यौन सम्बन्ध के प्रतीक के रूप में ग्रहण हुआ है। ऋग्वेद में मानयन्ति एना: पुरूषा:। में नारी को मैना नाम से भी अभिहित किया गया है क्योंकि इसे पुरूष सम्मान देते है।[194] ग्रा गच्छन्ति एना: पुरूष इनके पास जाता है अत: ये ग्ना कहलाती है। स्त्रिय: सत्यायते: अपत्रपणकर्मण: ये लजाती है , अत: स्त्री कहलाती है।[195]

नरेन्द्र शर्मा :

क) प्रगति पथ पर किरण छिटकती चली वह मुक्त हासिनि।

वह नही पर्यक प्रिय की अङ्कःकी जो शायिनी थी।

\+ + +

आज तक तुम फूल तितली गीति भी वह छोडता हूँ॥

प्रीति कविकृत प्रेयसी की प्रीति थी – वह छोडता हूँ ॥
विश्व मधु का कुण्ड था मन तरी, थे पतवार भुज द्वय !
सुनो नारी निरादर की रीति की वह छोडता हूँ। –*नारी के प्रति मिटटी के फूल*

ख) जग के भीषण संघर्षों से टूट पिसे जीवन में
फिर अदम्य उत्साह जगाती स्नेह दृष्टि क्षण भर में।

\+ + +

अत्माओं के मधुर मिलन से आशा ज्योति निकलती,
हतोत्साह हतप्रभ जीवन का अंधकार जो हरती'' (आह प्रवरकृत)
योषा यौते: मिश्रणार्थस्य सा हि मित्रयति अत्मान पुरूषेण साकम।
जब नारी पुरूष के साथ अपने को मिलाती है तब योषा कहलाती है।

सुमित्रानन्दन पन्त –

मुक्त करो नारी को मानव ! चिर वंदिनी नारी की,
युग युग की बर्बर कारा से जननि सखी प्यारी को।

\+ + +

उसे मानवी का सौरव दे पूर्ण सत्व दो नूतन,
उसका मुख जग का प्रकाश हो, उठे अन्ध अवगुष्ठन ।

\+ + +

प्रेम स्वर्ग हो धरा, मधुर, नारी महिमा से मंडित,
नारी मुख की नव किरणों से युग प्रभात हो ज्योतित।

\+ + +

मुक्त करो जीवन संगिनि को जननि देवि को आहत,
जग जीवन में मानव के संग हो मानवी प्रतिष्ठित। –नारी युग वाणी

आज कल नारी को पुरूष की सहयोगिनी मानने का प्रचार हो रहा है, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उससे यह आशा की जाती है कि वह पुरूष के कन्धे से कन्धा भिडा कर चले, और उसके प्रत्येक कार्य में हाथ ही न बंटाये अपितु उसका पथ भी प्रशस्त करें और नया मार्ग भी बनाये। यही कारण है कि आजका कवि उसे मुक्त करके मानवी का गोरव दिलाने के लिए

प्रयत्नशील है। (196) भक्ति काल में भी ऐसी नारियॉ हुई जिन्होने युद्ध क्षेत्र में सौर्य प्रदर्शन करके चिताओं में जगकर और धर्म समाज एवं साहित्य में नेतृत्व करके पुरूष समाज का भी गौरव बढया था यह नारी के योषा रूप के अन्तर्गत आता है। वयति सौन्दर्यम वह सौन्दर्य बुनती एवं विखेरती है, अत: वामा है चित्त को द्रवित करती है, अत: सुन्दरी है। पुरूष को मत्त पुलकित और हर्षित करने के कारण वह प्रमदा है। उसमें स्वयं में लालसा की प्रधानता है और पुरूषों में भी लालसा जागृत करती है, जिससे वह ललना कहलाती है। मान प्रिय होने से मानिनी कामना जगाने वाली होने से कामिनी, गृहस्थी चलाने के कारण गृहिणी घर का श्रङ्गार होने से भामिनी व आमा और मन रमाने वाली होने के कारण रमणी है। माता पत्नी और पुत्री आदि सभी रूपों में वह पुरूष के लिए सम्माननीय है। पूज्य होने से उसे महिला कहा गया है। पशु गुण से उठकर वह मानवीय नैतिकता एवं सदाचरण से सम्पन्न हो कर मानवी कहलाती है। भक्ति काल में इन सभी रूपों में नारी का चरित्रांकन हुआ है।

सौन्दर्य की परिभाषा-

सौन्दर्य जीवन की कला है। इसके निरुपण एवं विवेचन के लिये सर्वप्रथम वैदिक धरातल पर दृष्टिपात करना श्रेयष्कर होगा। साहित्य का पुरातन आधार वेदों को ही माना जाता है। वैदिक ऋचाओं के गायक मात्र विचारक ही नहीं थे, वरन् द्वन्दातीत एवं दृष्टा थे। उनका ज्ञान अर्जित किया हुआ नहीं वरन् उद्भाषित होता था। इसीलिये वे रागातीत एवं वीतराग कहे जाते थे। उन्होंने सौन्दर्य की एकांतिक परिभाषा के स्थान पर परमात्मा एवं प्रकृति के संयोग-सानिध्य से मंत्रों की अवतारणा की है और इन मंत्रों में उन्हें सौन्दर्य के दर्शन होते थे। इन्हीं काव्य सृष्टाओं के द्वारा उपमालंकार के माध्यम से कार्य सौन्दर्य का अभिधान निम्नांकित ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

''अहलहिं पर्वते शिश्रयाणं त्वष्टामे वज्रं स्वर्य ततक्ष दूसरी लाइन से लिखे ! वाश्रा इव धेनव: स्वयन्दमाता अंज: समुद्रभव जग्भुराप: ।।''(197)

इसी प्रकार कहा गया है -

''अभ्रतिव पुसं एति प्रतीची गर्तारूगिव सनयेधनानाम् ।

जायेव पत्य उशती सुवासा उषा हस्तेव निरिणीते अप्स: ।। (198)

अर्थात आर्कषक ऊषा की दिव्य ध्वनि, भाग्यता सुन्दरता और बाह्य सौन्दर्य से अभिभूत ऋषि ने आन्तरिक सौन्दर्य का चित्रण भी किया है। उसे कुमारी, गृहणी और मातृ रूप के परिदर्शन में भी प्रस्तुत किया गया है।

इसके अतिरिक्त उषा के माध्यम से ही अन्य बिम्ब स्थापित करते हुये वे कहते हैं कि-

''कन्येव तन्वा शाश्शदाना एषि देवी देव नियक्षमाणम् ।

संस्मयमाना युवति: पुरस्तादाविर्वक्षासि कृषुण विभाती ।।

हे प्रकाशवती उषा ! तुम कमनीय कन्या के समान अत्यन्त आकर्षण मयी हो कर अभिसिप्त फल प्रदाता सूर्यदेव के समक्ष स्वयं को प्रस्तुत करती हो और स्मितवंदना युवती के सदृश अपने वक्षस्थल को निवारण करती हो अर्थात् सौन्दर्य का दर्शन उपस्थित करती हो।''(199)

वैदिक युगीन सामाजिक जीवन के मध्य, सौन्दर्य की अभिवृद्धि करने वाले आभूषणों और वस्त्रों का विवरण भी ऋग्वेदादि में उपलब्ध मिलता है।इसी प्रकार ऋग्वेद काल में, मानसिक सौन्दर्य के साथ-साथ शारीरिक सौन्दर्य का आर्कषण भी प्रचुरता के साथ विद्यमान था। अत: सौन्दर्य का अभिज्ञान कराने में अप्स: के अतिरिक्त दृश, श्री, वपु:, वल्गु, श्रिय:,

भद्र, मण्ड, चारू, प्रिय, रूप, कल्याण, शुभ, चित्र, स्वादु, रण्व, यक्ष, अद्‌भुत, हिरण्यपेशस् एवं आनन्द आदि शब्दों का भी उपयोग किया गया है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि सौन्दर्य का बीज अन्त:करण में अंकुरित होता है और यह मानसिक शक्तियों के आधार पर पुष्पित एवं पल्लवित होता हैं। तत्पश्चात् समग्र शरीर को प्रभावित करता हैं और सम्पूर्ण जीवन को आकर्षक रंगों के ताने बाने से बुन डालता है। अत: यह कहना कि प्रत्येक कला कलाकार की मन: स्थिति अथवा आत्मानुभूति का यह एक आन्तरिक अंश है। बाह्य उपादानों से उसका तात्विक नहीं अभिव्यक्ति सम्बन्ध है। अभिव्यक्ति इसी प्रकार कुछ विचारकों की दृष्टि से सौन्दर्य पूर्णत: वस्तुनिष्ठ है।''(200)

इसीलिये वह प्रत्यच्छ बोध से सम्बन्धित हैं। प्रत्यच्छ के लिये अन्त:करण और इन्द्रिय दोनों का वस्तु के साथ सन्निकर्ष या संयोग होना चाहिये। इस प्रत्यच्छ की मात्रा इन्द्रियों की ज्ञराक्तता –अरक्तता और अच्छाई–बुराई पर निर्भर हैं। इन्द्रिय एक प्रकार की शक्ति हैं, जिसमें बाहरी वस्तु ज्ञेय अथवा दृश्य से प्रभावित होने तथा उनकों प्रभावित करने की क्षमता हैं। इन्द्रिय होने के कारण ही अर्थात् प्रत्यक्षीकरण के माध्यम की विशेषता के कारण ही हम व्यक्तियों में सौन्दर्य के प्रभाव से मुग्ध होने तथा सुन्दर को प्रभावित करने में स्तर अथवा मात्रा की भिन्नता पातें हैं। इसीलिये व्यक्ति के सौन्दर्य बोध की भिन्नता भी इसका पुष्कल प्रमाण पेश करती हैं कि सौन्दर्य का संबंध ऐन्द्रिय प्रत्यच्छ से हैं।

इसी प्रकार रामायण में नारी को–

''तदुन्नंस पाण्डुरदन्तम व्रणं। शुचिस्मितं पद्मपलाशलोचनम्।

द्रक्ष्येकदायिविंचन कदाम्वहं। प्रसन्नताराधिपति तुल्य दर्शनम ॥''

रामायण में नारी को असितक्षेणा पद्मपलाशलोचना, करमोरु, नागनासोर, आयताक्षी, वदनाम्बुजा वृषस्कन्धा, शशिप्रभानता बिम्बोष्ठी आदि विशेषणों से विभूषित किया गया है। यद्यपि कथाप्रवाह और अनुभूति तारल्य में इस रुढ़िबद्धता के कारण कोई अभाव नहीं दिखाई देता।''(201)

बाल्मीकि जी ने सीता के परिपेक्ष्य में–

''श्यामोकमल पत्राक्षीमुपवास कृशान्नम्।(202)

'श्यामा' का ही प्रयोग किया है, जिसका अर्थ है ''यौवनमध्यस्था।''

पाश्चात्य शास्त्रकारों के अनुसार सौन्दर्य की परिभाषा और स्वरूप :

पाश्चात्य साहित्य में प्रवर्तित तथा प्रचलित शब्द Aesthetses वस्तुत: युनानी Greek

भाषा का है Atnrikas जिसका साधारण अर्थ है इन्द्रियगत अनुभूतियाँ । वह ज्ञान जो इन्द्रियबोध से संयुक्त है । सर्वप्रथम वामगार्टन ने अपने शोध प्रबंध में इस शब्द का प्रयोग किया था, जिसका अर्थ था ''विशेष- विज्ञान ।'' सन् 1950 ई. में ''एस्थेटिका'' नामक ग्रन्थ का प्रकाशन हुआ जिसके द्वारा वामगार्टन ने इसका अर्थ प्रस्तुत किया –

"A science of sensitive Cognition only.......a science that was Concerned both that abscure knowledge as obscure."

इन्द्रियनुभूतिपरक विज्ञान अथवा अज्ञात का प्रच्छन्न विज्ञान भावात्मक ज्ञान । तात्पर्य यह है कि वह परिचयात्मक विज्ञान जो शब्दों के माध्यम से समुपस्थित न किया जा सके आदि ।

हीगेल के मतानुसार इस शब्द का अर्थ- कला दर्शन है । जबकि साधारण रूप से इस शब्द का अभिप्राय प्रकृति अथवा कला के सौन्दर्य से माना जाता है । भारतीय पृष्ठभूमि पर इसे ''ललित–कला दर्शन'' अथवा ''कला विज्ञान'' कहा जाता है ।((203)

डॉ. ऊषा गंगाधर राव साजापुरकर के द्वारा ''ऐस्थेटिक्स का भावार्थ सौन्दर्य स्वीकृत किया गया है । ललित कला तथा उपयोगी कला के परिवेश में सौन्दर्य तथा उदान्त दोनों रूपों को स्वीकार किया गया है ।(204)

संक्षेप में वामगार्टन ने ऐस्थेटिक्स का प्रयोग ललित कलाओ के दर्शन के लिये किया । हीगेल ने इसे काव्य और प्रकृति के सौन्दर्य के परिप्रेक्ष्य में लिया । पीछे या कालान्तर में इसका अर्थ हो गया ''ललित कलाओं के तत्वों का सैद्धांतिक निरुपण और उसके आधार पर कलाकृतियों का मूल्यांकन ।'' इसके विषय में यह भी कहा जाता है कि इन्द्रिय बोध से प्राप्त सौन्दर्य भावना के मनोमय आनन्द का विश्लेषण सौन्दर्य शास्त्र के द्वारा होता है । ऐसे बोधों के आधार पर चाक्षुष एवं श्रवण रहते हैं । अतएव इस शास्त्र को तीन भागों में विभाजित किया जाता है –

1. ऐन्द्रिय सौन्दर्य ।
2. विधानगत सौन्दर्य ।
3. अभिव्यक्तिगत सौन्दर्य ।

वैसे सौन्दर्य के अन्य प्रकार भी सौन्दर्य शास्त्र में विवेचित हुये हैं परन्तु प्रधानता इन्हीं तीनों की सर्वाधिक परिलक्षित होती है । धीरे-धीरे ऐस्थेटिक्स का विषय सौन्दर्यनुभूति भी बन गया ।

According to charls yoro. "Aestheties is the science of beauty as expression in Art."

और चार्ल्स योरो ने उसको मनोविज्ञान की शाखा ही बना दिया है।[205]

परन्तु कालान्तर में पुन; हीगेल की व्याख्या आधारित हुई कि सौन्दर्य शास्त्र ललित कलाओं का दर्शन है। क्रोथे में इसको "The Science of expression" (दा आफ साइन्स एक्सप्रेशन) कहा तो लेंगर ने उसे ललित कलाओं का दार्शनिक विकल्पों और समस्याओं का सैद्धांतिक निरुपण बताया।

सौन्दर्य के तत्व–

सौन्दर्य में बिम्बों का निर्माण करने तथा उनके स्वरूप का गठन करने हेतु निम्नलिखित पांच अवयव तत्व माने जाते हैं, जो इस प्रकार हैं–

1. अनुभूति
2. भाव
3. आवेग
4. ऐन्द्रियता
5. स्मृति

1. अनुभूति–

जैसा कि सौन्दर्य के विषय में कहा जाता है कि सौन्दर्य प्रियता कवि का प्रधान गुण एवं स्वभाव है। उसकी यहीं सौन्दर्य प्रियता समय–समय पर भिन्न–भिन्न सांसारिक अनुभवों के द्वारा अभिव्यक्ति होती रहती है। कवि के अनुभव चाहे लौकिक हो या अलौकिक, पार्थिव हो अथवा दिव्य, मूलरूप में यही काव्य के विषय बनते हैं।

इस प्रकार जीवन और सांसारिकता से सम्बद्ध विशद अनुभवों के धरातल पर कवि उन अनुभवों को पुन: प्रस्तुत करने में सक्षम हो जाता है। इस परिपेक्ष्य में कु. एडिथ रिकर्ट के अनुसार ''बिम्ब विधान अभिव्यक्ति की वह प्रणाली है जिसके अन्तर्गत अनुभूतियों का चित्रांकन मानस चित्रों में किया जाता है।''

कु. स्पार्जन ने, ''कवि को बिम्बों की श्रृंखला से परिव्याप्त बताया है।''[206]

परन्तु कुछ सौन्दर्य शास्त्री इस विचार से पूर्ण सहमत नहीं हैं। उनके अनुसार कवि स्मृति में संचित अतीत की विभिन्न अनुभूतियाँ जो स्मृति से संयुक्त है। उनके द्वारा बिम्बों को

एकत्र करके उन्हें नया सौन्दर्य तथा विशिष्ट रूप प्रदान करता हैं। बिम्बों के द्वारा ही कवि के अन्तर्गत गूढ़ कक्षों अर्थात् चेतन अचेतन, विचारधारा, रुचि, भावात्मक प्रतिक्रिया आदि का उद्घाटन होता है।

इसके अतिरिक्त मनोविज्ञान की दूसरी मान्यता है कि बिम्बों की सर्जना तथा उसके भावन में व्यक्ति तथा उसकी रुचि का भी पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। अस्तु यह विचारधारा भी सौन्दर्य शास्त्र की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

2. भाव–

भावों के द्वारा ही कवि अपने बिम्ब को पाठक तक सम्प्रेषणीय बना पाता है और तभी यह इन्द्रियग्राह्य हो सकता है। इसके आभाव में बिम्ब योजना काव्य को उपकारी और आर्कषण नहीं बना सकती है।

इस संदर्भ में डा. कुमार विमल के कथनुसार ''बिम्ब विधान कलाकार का ऐसा संवेग संकुल प्रयास हैं जिसमें वह विविध अथवा विपरीत वस्तुयें मन: स्थितियों और धारणाओं को जो सामान्यत: विच्छिन्न और अर्थहीन लगती है, अपनी कल्पना शक्ति से परस्पर मिलाकर एक नवीन संदर्भ अथवा अनुक्रम देता है।''(207)

बिम्ब कवि को आकस्मिक निर्बन्धता की भावना तथा देश काल की सीमाओं से उन्मुक्ति प्रदान करने वाला होता है। इससे कवि को एक अचानक उद्भत का आभाव होता है यह आकास्मिक उदभूति भाविक तथा वैचारिक ''जटिल युग्म'' से अनुप्राणित होती है तथा श्रेष्ठ कलात्मक कृति की परिचायिका होती है।

इस परिपेक्ष्य में डॉ. नगेन्द्र का कथन है कि– ''कवि बिम्ब शब्दार्थ के माध्यम से कल्पना द्वारा निर्मित एक ऐसी मानस छवि है जिसके मूल में भाव की प्रेरणा रहती है।''(208)

अत: स्पष्ट है कि बिम्ब का अनिवार्य तत्व या अंग भाव अथवा विचार हैं और उसकी उपस्थिति के बिना बिम्ब का निर्माण संम्भव ही नहीं है।

रिचर्ड्स ने भी इसका समर्थन करते हुये लिखा है कि ''बिम्ब का महत्व या भावना को प्रभावित करता है।''(209)

3. आवेग–

आवेग के विषय में कवि कालरिज की मान्यता है कि–

"Images however beautiful, though faithfully copied from nature and as accurately represented in words, do not of original genius only as for

as they are modified by a predominant Passion, on by associated thoughts of images awakened by that Passion."

बिम्ब चाहे कितने ही सौन्दर्य पूर्ण हों, बिल्कुल उपुर्युक्त शब्दों के द्वारा पुन: प्रस्तुत की गई प्रकृति की सत्य प्रतिकृति है, वे किसी कवि का प्रतिनिधित्व नहीं करते, किसी शक्तिशाली आवेग या उससे सम्बद्ध विचारों तथा बिम्बों से विश्लेषित होने पर ही उन्हें मौलिक प्रतिभा का प्रमाण माना जा सकता है।''(210)

श्रेष्ठ कविता के लिये भावों की प्रबलता की आवश्यकता होती है, जो विचारों को एक्य तथा क्रमबद्धता प्रदान करते हैं। भाषा और प्रतिभाओं को आवेष्ठित करने में समर्थ होते हैं। साहित्यिक तथा ऐतिहासिक विवरणों को परस्पर सम्बद्ध करने वाले तत्व आवेग वस्तुओं को अनुभूति के ऐसे परिप्रेक्ष्य में रखते हैं कि वे बिम्ब रूप विधान होने के साथ ही साथ विशेष भावना के सफल वाहक भी बन जाते हैं।

बिम्बों के वे प्रसंग अनुबंध और विधान जो अनुपातिक रूप से रक्षा का निर्वाह नहीं कर पाते हैं। ऐसे बिम्ब सी.डी. लेविस के अनुसार निरर्थक कहे गये हैं।

According to I.A. Rechards, "Too much importance has always been attached to the sens or qualities. What gives an image efficacy is less its videness as an image than that its character as a mental event peculiarly Connected with sansation."

आई.ए. रिचर्ड्स के अनुसार ''बिम्ब की ऐन्द्रिक विशेषताओं को सदैव अति महत्व दिया गया है। एक बिम्ब योजना को उसकी विस्मृति इतनी प्रभाविकता उत्पन्न नहीं करती।

जितनी कि संवेदन से अनूठी रीति से सम्बद्ध मानसिक घटना के रूप में रहने की विशेषता।'' (211)

4. स्मृति तथा कल्पना :-

बिम्बों के निर्माण में स्मृति तथा कल्पना का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। बिम्ब विधान को कला या काव्य का क्रियात्मक पहलू ही माना जा सकता है क्योंकि वह कल्पना द्वारा उत्थित होता है। बिम्ब विधान के समय यह निरंतर कार्यशील रहती हैं तथा यह दो प्रकार से कार्य करती हैं।

रिचर्ड्स के अनुसार- ''स्मृति अतीत की छापों की एक निखरे हुये संग्रह के रूप में

बिम्बों को भावनाओं की मंजूषा में सजोकर नहीं रखती बल्कि वह विविध आसगों के माध्यम से बिम्बों का पुंजीकरण और सम्मिश्रण कर उन्हें नवीन रमणीयता और विशिष्ट छवि भी प्रदान करती हैं।(212)

इसके विषय में डॉ. विमल कुमार का मत है कि ''एक अर्थ में कल्पना वस्तु सन्निकर्ष के सामान्य प्रभावों को सुरक्षित रखती है और इसके अर्थ में कल्पनावस्तु सन्निकर्ष के मानसिक प्रभावों से निर्मित बिम्बों को संग्रहित कर उन्हें सहस्रों प्रकार के संयोजन प्रदान करती हैं। दूसरे अर्थ वाली कल्पना कलावरेण्य मानी जाती हैं।(213)

5. प्रज्ञा नव नवोन्मेष शालिनी मता-

इसी प्रकार भारतीय काव्य शास्त्र में कवि कर्म की प्रेरणा दात्री ''प्रतिभा'' को स्वीकार किया गया है तथा नव निर्माण कराने वाली प्रज्ञान को ही प्रतिभा बताया गया है।

पाश्चात्य साहित्य में इसी को कल्पना शक्ति कहा जाता है। कल्पना शक्ति ही कवि को नवीन सृजन तथा रूप विधान की क्षमता प्रदान करती हैं। लोगिनुस भी बिम्ब को कल्पना चित्र मानते हैं।(214)

वेस्टर भी कल्पना को चित्र विधायनी शक्ति के रूप में स्वीकार करते हैं।(215)

अत: यह कहना कि कल्पना ही एक ऐसी शक्ति है जो ऐक्य की स्थापना के साथ ही साथ सामान्य अनुभवों को भी नवीन सुषमा से विन्यस्त करके काव्य का विषय बना देती हैं। इसी कल्पना की प्रेरणा प्राप्त कर कवि अपनी भावाभिव्यक्ति को सफल बनाने के हेतु बिम्ब, प्रतीक, उपमान आदि का प्रयोग करता है। संभवत: अतिशयोक्ति नहीं होगी। ऐसा माना जाता हैं किन्तु इतिहास में जो तटस्थता परिलक्षित होते है उसका कारण आवेगों का अभाव है। परन्तु काव्य में ऐतिहासिक विवरणों के समान कोई तटस्थता नहीं होती। उसमें तो आवेग संचालित होते हैं। इसलिये वे ही बिम्ब सौन्दर्य शास्त्र की दृष्टि से सार्थक और महत्वपूर्ण होंगे, जो कवि के आत्मस्पर्श से आवेग संचालित हैं।

6. ऐन्द्रियता-

बिम्बों का वस्तुनिष्ठ ऐन्द्रिक सन्निकर्ष होना विशेष महत्वपूर्ण है। बिम्ब ऐन्द्रिय संवेदन का शब्द चित्र है, ऐसा कहना ध्वनित करता है कि बिम्ब योजना ऐन्द्रिय आस्वादन से सम्बद्ध हैं। इन्द्रियगम्यता ही वह तत्व है जो बिम्ब को काव्य में सामान्य वर्णन से विशेष वर्णन के योग्य बना देता हैं।

रिचर्ड हार्टर कोगल के अनुसार– ''काव्य में बिम्ब विधान चक्षु श्रवणेन्द्रिय रचना घ्राणेन्द्रिय तथा स्पर्श के माध्यम से उपलब्ध ऐन्द्रिय अनुभूतियों की अभिव्यंजना है। कविता में इनका चित्रण इस विशिष्टता के साथ होता है कि उसके द्वारा मूल संवेदनाओं को यथा संभव वास्तविकता तथा विस्तार के साथ पाठकों तक पहुंचाया जा सकें। अतएव काव्य के बिम्ब हमारी इन्द्रियानुभूति के कलात्मक रूप कहे जा सकते हैं। इस प्रकार बिम्ब विधान के आवश्यक तत्व वस्तुनिष्ठता और ऐन्द्रियकता है।

इस विषय में डॉ. कुमार विमल का यह कथन सारगर्भित जान पड़ता है कि सौन्दर्य शास्त्र या कला विवेचन और विशेषकर काव्यालोचन की दृष्टि से बिम्ब एक प्रकार का रूप विधान है। जो प्राय: किसी ऐन्द्रिय प्रभाव या संवेदन की मानसिक प्रतिलिपि अथवा प्रतिकृति हुआ करता है।''(216)

वर्ड्सवर्थ ने इसे और अधिक स्पष्ट करते हुये बिम्बों के दो आधार बताये हैं–संवेदनों या प्रभावों की सत्यता श्रेष्ठ बिम्बों में पायी जाती हैं।

वस्तुत: काव्य काल के बिम्ब एन्द्रियकता के सानिध्य में उत्पन्न वस्तुओं का मानसिक निर्माण ही नहीं करते वरन् उन सन्निकर्ष के मानसिक प्रभावों से निर्मित बिम्बों को संग्रहित कर उन्हें सहंस्रो प्रकार के संयोजन प्रदान करती हैं। दूसरे अर्थ में कल्पना कलावरेण्य मानी जाती हैं।(217)

सौन्दर्य एवं अन्य शास्त्र

(क) सौन्दर्य– दर्शन शास्त्र में –

अनुमान के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रागैतिहासिक युग में भी ''शिवत्व'' की भावना से अनुप्राणित होकर ही ''सौन्दर्य चेतना'' की निष्पत्ति हुई होगी। चूंकि मानव चेतन प्राणी हैं, अतएव वह संवेदनशील हैं और आकर्षण विकर्षण से भी परिपूर्ण हैं। अत: सौन्दर्य का निमंत्रण उसने स्नेह समन्वित साधना के सहित स्वीकार किया होगा। अध्ययन के आधार पर यह कहा जाता है कि सौन्दर्य चेतना शैशव में सरल और पवित्रीकृत रहती है, वहीं युवावस्था में वासनात्मक प्रौढ़ काल में स्वारिनल एवं वृद्ध जीवन में दार्शनिकता से सिक्त रहती हैं।

अस्तु परिभाषिक परिप्रेक्ष्य में सुन्दर वस्तु के सर्जन अथवा आस्वादन के समय कलाकार और रसिक की आत्मा जिस विशेषावस्था को प्राप्त कर लेती है, उसकी संज्ञा को सौन्दर्य–चेतना (Aesthetic Conseiousness) माना गया है।

अनन्त के प्रति शान्त अनुराग, उपनिषदों की रहस्यपूर्ण वाणी के द्वारा ही अभिव्यक्त हुआ है। इसका समय छठवीं सातवीं शताब्दी ई. पूर्व माना गया है। सं. 220 तक बताई जाती है।

अष्टादश पुराणों में प्रयोजनातीत सौन्दर्य की ओर उन्मुख करने वाले सत्य का दर्शन है। अस्तु इनमें भी सौन्दर्य बोध का अभाव दृष्टिगोचर नहीं होता।

यथा– *''रम्ये गीत ध्वनि श्रुत्वा सत्यज्यायसयास्थिा विष्णु पुरुष।''*

''विष्णु पुराण में शारदी, ज्योत्सना, यमुना तट, शीतल, मन्द, पवन को रास की सौन्दर्य सृष्टि में सहायक निरुपित किया गया है।(218)

''दर्शन'' शब्द दृश धातु से करण अर्थ में ''ल्युट'' प्रत्यय लगाकर बना है। इसका अर्थ है जिसके द्वारा देखा जाये।अत: चाक्षुष इन्द्रिय द्वारा प्रमाणित ज्ञान ही विश्वसनीय तथा प्रत्यच्छ है।(219)

(ख) सौन्दर्य शास्त्र में

भारतीय सौन्दर्य दर्शन का मूलाधार काव्य शास्त्र को ही माना जाता है। जैसा अन्यत्र उल्लेख किया जा चुका है, भारतीय दर्शन के धरातल पर आत्मतत्व के माध्यम से सौन्दर्यानुभूति की उपलब्धि परिलक्षित होती है। परन्तु सौन्दर्य के स्वरूप तथा आस्वादन का विवेचन काव्य शास्त्र में ही प्राप्त है। भारतीय आचार्य की मनोवैज्ञानिक दृष्टि सदैव ही सौन्दर्य चेतना की ओर उन्मुख रही है। एक प्रकार से प्रीति और विस्मय का शास्त्रीय विधान ही रस और अलंकार है।

काव्यालंकार के प्रणेता भामह ने अपने ग्रन्थ में शब्द तथा अर्थ के परिप्रेक्ष्य में कहा है कि–

''न नितान्तादिमात्रेण जायते चारुता गिराम्।

वक्राभिधेय शब्दोक्तिरिष्टा वाचामलंकृति: ॥

नितान्तादि शब्दों के प्रयोग मात्र से काव्य में चारुता संभव नहीं। (220)

उसके हेतु अपेक्षित है शब्द और अर्थ की वक्रतामयी उक्ति। अत: इससे स्पष्ट हो जाता है कि आपने अलंकार तथा सौन्दर्य मे अभेद स्वीकार किया है।

दण्डी –

''कामं सर्वोव्यलंकारों रसमये निषिचति।

तथाप्य ग्राम्य तैवेन भारं वहति भूयस: ॥''

सौन्दर्याभिव्यक्ति के हेतु दण्डी ने अग्रगम्यता को विशेष रूप से और बारम्बर आवश्यक निरुपित किया है।[221]

साधारण रूप से ग्राम्य फूहड़ अथवा भदेस वस्तु को सुन्दर नहीं माना है। इन्होंने अलंकारों की परिभाषा प्रस्तुत करते हुये स्वयं स्पष्ट कर दिया है कि– ''काव्य में शोभा के विधायक धर्मों को ही अलंकार कहा जाता है।''

उद्भट –

काव्यांलकार सार संग्रह ने उद्भट में एक स्थान पर कहा है कि मनोहारी साधर्म्य को ही उपमा कहते हैं। काव्यादर्श में उपमा को सर्वोपरि तथा सौन्दर्य शालिनी माना है।

वामन–

रीति सम्प्रदाय के प्रर्वतक वामन सौन्दर्य शब्द का स्पष्ट और महत्वपूर्ण प्रयोग करने वाले आचार्य हैं। आधुनिक विचारक इनके सम्प्रदाय को ''सौन्दर्य सम्प्रदाय'' के नाम से जानते हैं।

आनन्दवर्धन–

ध्वनि सिद्धान्त के प्रर्वतक जो ध्वनि को ही काव्य की आत्मा मानते हैं इनके अनुसार–

''उक्तत्यन्तरेण यत् तच्चारूत्व प्रकाशयन ।

शब्दो व्यंजकतां विभ्रद्रध्वन्युक्तैर्विषयी भवेत् ॥''

व्यंजना तभी ध्वनित्व को प्राप्त करती है, जब ध्वनि–ध्वनि का चारूत्व वाच्य अथवा तद्भिन्न अन्य काव्य तत्व की चारुता विशेष से समृद्ध हों।

आचार्य अभिनव गुप्त–

इन्होंने 'लोचन नाम्नी टीका के माध्यम से आनन्द वर्धनाचार्य के ध्वन्यालोक'' के विशिष्ट स्थलों को स्पष्ट किया है और सौन्दर्य से सम्बद्ध अनेकों स्फूट विचार प्रस्तुत किये हैं।

इनके अनुसार

''शब्दार्थोयो: द्विविध चारुत्वारं स्वरूपंमाया निष्ठम् ध्वनि चारुत्व का हेतु है। इन्होने चारूत्व को स्वरूपनिष्ठ तथा संघटनानिष्ट बताया है चारुत्व के परिप्रेक्ष्य में आपने स्पष्टतया सौन्दर्य शब्द का भी प्रयोग किया है।

इसके अतिरिक्त जहां आनन्द वर्धन ने ध्वनि को कमनीय कहा है वहां टीकाकार अभिनव गुप्त ने कमनीयता का अर्थ ''चारुत्व धी हेतुता'' किया है। अर्थात् कमनीय उसे कहा है, जिसे चारुत्व का बोध हो।

इसी प्रकार कवि चर्चा के प्रकरण में, राजेश्वर ने कवि को अधिकाधिक सौन्दर्य प्रसाधनों से मुक्त रहना बताया है । कवि मे रुचि का होना, केवल यही मन्तत्व प्रकट करता है कि वातावरण सौन्दर्य से वह प्रभावित रहे और अपने काव्य में उसका प्रति फलन करें । (222)

रुद्रट–

इन्होंने काव्यालंकार ग्रन्थ में ''पाडित्य'' का सार चारु काव्य को बताया है । चारु शब्द की व्याख्या करते हुये नामिसाधु ने उसे सौन्दर्य परक स्वीकार किया है। रुद्रट ने काव्य में ''शक्ति व्युत्पत्ति अभ्यास'' द्वारा चारुत्व की निस्पत्ति को माना है । नामिसाधु यहां भी चारुत्व को सौन्दर्य स्वीकार करते हैं।

काव्यशास्त्री शब्द और अर्थ को काव्य के घटकों के रूप में स्वीकार करते हैं । काव्यशास्त्रियों ने इन दोनों में सौन्दर्य की सत्ता को ही स्वीकार किया है। इन्होंने सहितत्व के निर्वाचन में, शब्दार्थ बंध में अपने द्वारा निर्धारित तीनों भागों और गुणों में सौन्दर्य की स्थिति को माना है ।(223)

आचार्य भोज–

आचार्य भोज ने सरस्वती कठांभरण तथा श्रृंगार प्रकाश ग्रन्थों की रचना की हैं। इन्होंने साहित्य शास्त्र को अनेक प्रकार की नवीन उद्‌भावनाओं से सम्पन्न किया है उनके ये दोनों ग्रन्थ जैसे भरतमुनि का नाट्यशास्त्र । इन दोनों में ही सौन्दर्य शास्त्र संबंधी विचार यत्र–तत्र विकीर्ण है ।

अभिनव गुप्त–

इन्होंने अभिनव भारती में अनेक स्थलों पर सौन्दर्य शब्द का प्रयोग करते हुये काव्य में उसका अस्तित्व दिखलाया है ।

''अन्येतु काव्येअपि गुणांलकार सौन्दर्यतिशय कृते रसचवर्ण: माहु: । काव्य में जो रसचवर्णा होती है, उसमें गुण अलंकार सौन्दर्यातिशय ला देते हैं ।(224)

लक्षण तत्व के परिप्रेक्ष्य में आपने कहा है कि इससे अभिनेयता में सौन्दर्याधान होता है। भाव ध्वनि में प्रधानता भाव की रहती हैं । इसका कारण आपने सौन्दर्यातिशय को माना है ।

इसी तरह भाव और रस को आपने बीज और वृक्ष माना है । जिसमें अभिनयपुष्प से सुन्दरफल निष्पन्न होता है ।

इस प्रकार लगभग सभी काव्य शास्त्रियों ने काव्य में सौन्दर्य की सत्ता स्वीकार की है ।

कामशास्त्र में सौन्दर्य –

कामशास्त्र का आविर्भाव प्राय: आचार्य भरत से पूर्व माना जाता है । इतिहासकारों में कामसूत्र को वात्सायनकृत तथा ईसा की दूसरी–तीसरी सदी में प्रणीत माना हैं ।

सृष्टिलोक की व्यवस्था के लिये ब्रह्म ने एक लाख श्लोकों का प्रणयन किया जिसमें धर्मार्थकाम त्रिवर्ग का प्रतिपादन था । इसी आधार पर मनु ने धर्म शास्त्र, ब्रहस्पति ने अर्थशास्त्र एवं कामशास्त्र एवं प्रणयन महादेव के शिष्य आचार्य नन्दी ने किया । यह ग्रन्थ उद्दालक के पुत्र श्वेतकेतु ने संक्षिप्त किया और आचार्य वाभृव्य ने सात अध्यायों में लिखा दिया । तत्पश्चात् नानाविध्र ''अधिकरणों'' पर विभिन्न आचार्यों ने पृथक–पृथक ग्रन्थों की रचना की ।

इसमें सर्वश्री आचार्य दत्तक, चारायण, सुवर्गनाम, घोटकमुख, पतंजलि, गोणि का पुत्र और कुचुमार के नाम उल्लेखनीय है ।(225)

अन्त में आचार्य वात्सायन ने सभी का साथ सन्निविष्ट करते हुये कामसूत्र का प्रणयन किया । इसी का प्रभाव जयदेव रचित गीत गोविन्द ''मक्ष्जरी, रतिमञ्जरी राजस्थानी आचार्य कुल्लोनमल प्रणीत ''अनंगरंग'' और पद्म श्री लिखित नागर सर्वस्य आदि अनेक ग्रन्थों में परिलक्षित होता है ।

काम सूत्र केवल काम विषयक ही नहीं हैं वरन् समाज शास्त्र भौतिक शास्त्र और मनोविज्ञान भी उसका विचारणीय अधिकरण हैं । जीवन में मर्यादा व्यवस्था और सुसम्बद्धता की स्थापना उसका लक्ष्य है । वह मात्र सेक्स का व्याख्यात्मक विवरण नहीं है ।

परिभाषा–

मानस प्रक्रिया, मानसिक व्यापार तथा रागात्मिका वृत्ति का नाम ही काम हैं । यह वृत्ति मानव प्राणि मात्र के मन में प्रकृत रूप से विद्यमान है ।

काम के अधिष्ठाता देवता के रूप में कामदेव को माना जाता है । जिसे सभी ने परम सुन्दर माना है । वैदिक काल से लेकर तुलसी तक और सूर से चलते हुये आधुनिक कवियों तक सौन्दर्यशाली काम का आधिपत्य रहा है ।

वात्सायन ने इसे रामणीयक, सुदर्शनता आदि शब्दों से सम्बोधित किया है । शारीरिक सौन्दर्य की वृद्धि के लिये इन्होंने अलंकारों को उपयोगी माना है ।(226)

सौन्दर्य का भौतिक रूप अभिव्यंजन है और आनन्द उससे व्यजिंत होने वाला तत्व है । यदि व्यंग्य और व्यंजक में अभेद माना जाये, तो इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता है कि जो

रस है वही सौन्दर्य हैं और जो सौन्दर्य है वही रस है। लगभग ऐसा ही सभी साहित्यशास्त्रियों ने माना हैं।

रीतिकालीन कवियों ने इन्हीं आचार्य वामन की ''रीति'' अर्थात् सौन्दर्य की सम्प्राप्ति का उद्देश्य सामने रखा है। संस्कृत काव्य शास्त्र रस रीति, वक्रोक्ति अलंकार औचित्य और ध्वनि आदि 6 विशिष्ट सम्प्रदायों में विभक्त है, किन्तु रीतिकाव्य में रीति गुण वक्रोक्ति तथा औचित्य का प्रतिपादन किसी भी आचार्य ने नहीं किया है। इसीलिये केवल तीन सम्प्रदाय ही वर्तमान में शेष रहें– अलंकार, रस और ध्वनि। इनमें से ध्वनि सम्प्रदाय समाप्त सा ही रहा। और केवल रस तथा अलंकार का बोलबाला रहा। एक संक्षिप्त सा विवेचन उल्लेखनीय है।

केशव के अनुसार–

''अलंकार कवितान के सुनि–सुनि विविध प्रकार।

कविप्रिया केशव करी, कविता को सिंगार॥''

उनकी यह ''काव्य सिंगार'' की घोषणा वामन के सौन्दर्य मूल्यांकार की ही प्रतिध्वनि है और उनका ''सगुन पदारथ अर्थयुत'' कहना ही वामन के शब्दार्थ का ग्रहण है। लगभग यही मन्तव्य आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र का है।

देव–

इनके काव्य में अलंकारों का महत्व पंचम अंग के रूप में ही मिलता है। मानुष, भाषा, मुख्य–रस भाव नायिका छन्द। अलंकार पचांग ये कहत सुनत आनन्द में रस को मुख्य माना गया है और शेष सभी को उसकी प्राप्ति का साधन। इन्होंने शब्द को जीव, अर्थ को मन और रसमयता को यशस्वी– शरीर तथा अलंकारों को गति माना है।

''शब्द जीव तिहि मनु अर्थ, रसमय सुजस शरीर।

चलत चहूं जुग छन्द गति, अलंकार गंभीर॥''

बिहारी–

बिहारी आचार्य वामन के सिद्धान्तानुसार भूषण सार का विरोध करते हुये लिखते हैं कि–

भूषन भार संभारिहैं क्यों यह तन सुकुमार।

सूधे पायं न धरिपरत, महि शोभा कुमार॥

अस्तु ये अलंकारों के काव्य के लिये मानते हैं, काव्य को अलंकार के लिये नहीं।

अत: यहां डॉ. दीक्षित के शब्द विशेषोल्लेखनीय है कि सप्त सौन्दर्यरस अलंकाराचार्य (केशव से बिहारी तक) जिस प्रदीप्त काव्य मण्डल के कांतिमान नक्षत्र है, वह आचार्य वामन (ध्रुव) के चारों ओर परिभ्रमण करने वाला है। कोई थोड़ा पास है कोई थोड़ा दूर और इसी मान्यरस के आधार पर उसके अंशियों सहित इस काव्यांश में प्रस्तुति की गई है।

॥ दीप्तरसत्वं कान्ति : ॥

भारतीय काव्य सम्प्रदाय एवं सौन्दर्य-

डॉ. रामानन्द तिवारी के अनुसार ''लिप्सा'' का समानुभूतिक सिद्धान्त स्पष्ट रूप से मनोवैज्ञानिक और व्यक्तिवादी है। उसमें किसी अध्यात्म का आधार अथवा आग्रह नहीं हैं। किसी वस्तु अथवा व्यक्ति में हमारी रुचि तीव्र होती हैं। तो हम प्राय: उसके साथ अपने को तद्रूप कर लेते हैं और उसी के समान अनुभव और व्यवहार करने लगते हैं।(227)

इसी प्रकार प्रवास जीवन चौधरी ने उक्त सिद्धान्त की मनोविज्ञानोत्तर अर्थक्ता (Metapsychical significance) का निर्देष करते हुये इसका संबंध भारतीय सौन्दर्य शास्त्र से जोड़ना चाहा है। श्री चौधरी ने इस प्रसंग में अभिनव गुप्त के विचारों की अधिक चर्चा की है।

जीव विज्ञान की इस स्थापना का समर्थन करता है। मानव क्या, मानवेतर प्राणियों पर भी यह बात चरितार्थ होती है। उदाहरण के लिये –

महाकवि बिहारी के अनुसार –

रुचि भेद –

''समै-समै सुन्दर सवै, रूप कुरूप न कोय।

जाकी रुचि जेती जितै, तित तेती सुन्दर होय॥''

उदाहरण के लिये क्यों कुछ जीवधारियों को प्रकाश सुन्दर लगता है। और कुछ जीवधारियों को अंधकार ? क्यों पतंगा दीपक की लौ से आकृष्ट होकर उस पर मर मिटता है। क्यों स्नेही चातक चांदी की किरण मंजूषा चंदा की ओर सदा उन्मुक्त रहता है। किन्तु ठीक इसके विपरीत क्यों उलूख को प्रकाश का सौन्दर्य आकृष्ट नहीं कर पाता हैं। इसी प्रकार जोंक को छाया ही क्यों प्रिय होता है। (228)

सचमुच प्रतीति ही उत्कृष्ट सौन्दर्यानुभूति हो सकती है। इसी को आचार्य राम चन्द्र शुल्क ने ''अन्तस्सता की तदाकार परिणिति'' के रूप में स्वीकार किया है। सौन्दर्यानुभूति का विवेचन करते हुये इन्होंने लिखा है कि-''कुछ रूप रंग की वस्तुयें ऐसी होती हैं। जो हमारे मन में आते ही थोड़ी देर के लिये हमारी सत्ता पर ऐसा अधिकार कर लेती है। कि उसका

ज्ञान ही हवा हो जाता है और हम उन वस्तुओं की भावना के रूप में ही परिणत हो जाते हैं। हमारी अन्त: सत्ता की यही तदाकार परिणित ही सौन्दर्य की अनुभूति है।''

कालिदास का भी विश्वास है कि-

''रम्याणि वीक्ष्य मधुरांश्च निराम्य शब्दान।

पर्युत्सकी भवति यत् सुखिताऽपि जन्तु : ॥'' (229)

सौन्दर्यानुभूति में सर्वदा आलम्बन के प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रहने पर विकलता का अंश विद्यमान रहता है। उदाहरण के लिये हम प्रथम स्थिति को ऊपर की इन पक्तियों में देख सकते हैं।

इसी प्रकार हिन्दी के कुछ रीति-कालीन कवियों की भी यही धारणा रही है। मतिराम के अनुसार-

''कुदंन को रंग फीको लगै, झलकै अति अगनि चारु- गोराई।

आंखिन में अरसानि चितौन में मंजु विलासिनि की सरमाई ॥''

कि सुन्दर की रमणीयता न वर्द्धमान निकटता से घटती है और न निरन्तर भोग से छीजती है, बल्कि सुन्दर वस्तु अपने अघट सौन्दर्य के कारण द्रष्टा के लिये हर क्षण नवीन होती जाती है। मुस्कान की मिठाई खाने वाले मतिराम ने एक बाकी अदा के साथ के इस तथ्य को व्यक्त किया है।

''को बिनु मोल विकात नहीं, मतिराम लहै मुस्कान मिठाई।

ज्यों-ज्यों निहारिये नेरे है नैननि, त्यो त्यों खरी निकैरे सी निकाई ॥

मतिराम ही नहीं, विसासी सुजान के द्वारा छले गये घनानन्द की भी यही उक्ति है-

''राबरे रूप की रीति अनूप, नयी-नयी लागत ज्यों-ज्यों निहारिये।

त्यों इन आंखिनि बान अनोखी अघानि कहूं नहि आन निहारिये ॥

पाश्चात्य काव्य सम्प्रदाय एवं सौन्दर्य :

हीगेल के अनुसार ''सिम्बालिक आर्ट'' अर्थात् वास्तु कला में सौन्दर्य सृजन की दृष्टि से पिण्डीभूत मूर्तन की अधिकता रहती है। (230)

"This first type of art (the symbolic type of art) is ruther a more search ofter plastic Configuration then a Power of a enuine representation.

इन्हीं के विचारानुसार सौन्दर्य अथवा प्रत्यय के उचित मूर्तन होता है। इसमें अभिव्यक्ति

का स्वरूप उतना अधिक स्थूल नहीं रहता है । कुल मिलाकर क्लालिफल कला में आइडिया तथा इमेज की एक पारस्परिक अनुकूलता स्थापित हो जाती है और इन दोनों में एक समतोल निष्पन्न हो जाता है ।

अत: रोमांण्टिक कला का उद्देश्य ''सिम्बांलिक या क्लासिकल'' कला की तरह सौन्दर्य के किसी अंश का भाव एन्द्रिय प्रत्यक्ष करा देना नहीं रहता, बल्कि रोमांटिक कला में अभिव्यक्त सौन्दर्य के साथ ही आत्मा या चेतना के गहन अंशों की भी अभिव्यक्ति होती है । हीगेल के बाद पाश्चात्य सौन्दर्य शास्त्र के आधुनिक स्वरूप को प्रभावित करने वाले विचारकों में क्रोचे का बड़ा ही महत्व है । अभिव्यंजनावाद के माध्यम से क्रोचे ने पाश्चात्य सौन्दर्य शास्त्र को विकास का एक नया आस्पद प्रदान किया है ।

इन्होंने सौन्दर्यानुप्राणित कला- सृजन में सहजज्ञान को प्राथमिकता दी है । किन्तु इन्होंने सहजज्ञान और ''बुद्धि में बैर'' नहीं माना है । इनका स्पष्ट कथन है कि - "(Inlrction is blind. Intellect lands her eyes)"

अत: इनका सहजज्ञान साधारण अर्थों से विशिष्ट हैं । इस सहजज्ञान में वस्तु प्रत्यय और बिम्ब की प्रतीति का अन्तरहीन एक्य विद्यमान रहता है । इसीलिये सहजज्ञान के द्वारा किसी सौन्दर्यात्मक कलाकृति में देश अथवा काल का नहीं विशिष्टता अथवा व्यक्ति सत्ता का उद्घाटन होता है ।

इसी प्रकार विल्हेलन वोरिंगर ने विप्स की मान्यता का विशलेषण करते हुये कहा है कि-

"Appreceptive activity becomes aesthetic enjoyment in the case of positive empathy in the case of the unision of my natural tendencies of self Activation with the activity demanded of me by the sensuous object, in relation to the work of Art also. It is this Positive empathy alone which comes inter question.

इसी प्रकार आधुनिक सौन्दर्य शास्त्र में अनेक सिद्धान्तों की स्थापना की गई है । जिसमें अन्विति सिद्धान्त, सोद्देश्यता और कल्पनाशील जीवन की पृथकता का सिद्धान्त तथा संतुलन सिद्धान्त महत्वपूर्ण है । किन्तु ये सभी सिद्धान्त पूर्व विवेचित सिद्धान्तों के ही उच्छिष्टि हैं । अत: इनका विस्तृत विवेचन आवश्यक नहीं है ।इसी तरह शास्त्री जी ने सौन्दर्यज आनन्द सिद्ध करते हुये सौन्दर्य बोध को ऋतम्भरा प्रज्ञा से संबंधित माना है ।[231]

ठीक इसी प्रकार भारतीय कला में सौन्दर्य को प्राय: रहस्यमय माना गया है, जिसके सर्वोत्तम उदाहरण सन्त अथवा सूफी साहित्य और युगबद्ध मुद्रा की मैथुनी मूर्तियां हैं। इसीलिये जेम्स कजिन्स ने उचित ही कहा है कि जहां हीगेल आदि की वैचारिक दृष्टि से ललित कलाओं को विश्व जीवन की अनुभूति के लिये सम्पर्क साधन कहा है। वहां भारतीय दृष्टि कभी-कभी योग साधना अथवा यौगिक चिन्तन को कला का लक्ष्य मान लेती है। (232) वस्तुत: साधारणीकरण का मधुमती भूमिका से संबंध जोड़ना इसी दृष्टि का द्योतक है।

मनोविश्लेषण एवं सौन्दर्य शास्त्र -

सौन्दर्य विशलेषण करते हुये पश्चिमी विद्वान मैक्स मूलर ने कहा है कि भारत में सौन्दर्य की चर्चा नहीं है। इसके अलावा भी कुछ लोगों का मत है कि यहां उपनिषदों में सत्यं शिवं सुन्दरम् कहकर केवल ब्रह्मा के स्वरूप का निरुपण किया गया है, किन्तु यह धारणा निर्मूल है।

भारत में काव्य शास्त्रीय सौन्दर्य विवेचन के परिप्रेक्ष्य में भी नानाविध सिद्धान्तों का प्रतिपादन हुआ है तथा रसान्र्तगत ही सुन्दर को समाविष्ट किया गया है। ठीक उसी प्रकार जैसे पाश्चात्य साहित्य में कला मीमांसा की चर्चा करते हुये भी अनिवार्य रूप से सुन्दर की साधना पर अत्यधिक बल दिया गया है।

सौन्दर्य शास्त्र के अभिधार्य हेतु केवल शास्त्र एवं विज्ञान ही पूर्ण समर्थवान है यह धारणा असंगत प्रतीत होती है। किसी वस्तु अथवा अनुभव के चरम स्वरूप के परिज्ञान के लिये जब उसे सम्पूर्ण सत्ता का अंश मानकर विचार किया जाता है तो हमारा दृष्टिकोण दार्शनिक होता है। यही आनन्द चेतना है। यही आत्मस्वरूप से परिचित कराती है, यह स्वयं रसमय है- ''रसो वै स: ''सुन्दर वस्तुओं के दर्शन से आह्लाद होता है, मन आनन्दित होता है। प्रत्यच्छ स्मृति एवं कल्पनादि के द्वारा आनन्द की सम्प्राप्ति होती है और आनन्द उत्पन्न करने की क्षमता रखने वाले गुण को सुन्दर कहा जाता है वस्तु का यह सौन्दर्य ही उसका आध्यात्मिक रूप है।

हमारा देश प्राकृतिक सौन्दर्य से समन्वित है, विभिन्न प्रकार की जलवायु से युक्त है। नदी झरनों के अतिरिक्त अनेक अचल नानाविद खाद्य पदार्थों की उपलब्धि आदि सभी ने मिलकर हमारे मानस को शान्त एवं गंभीर बना रखा है।

अनेक दर्शन शास्त्रियों ने विशेष गुणों की स्थापना श्रद्धा, भक्ति एवं आत्म समर्पण को ही आनन्द प्राप्ति का माध्यम माना और इस प्रकार सत्यासत्य, श्रेयस, प्रेयस, निःश्रेयस तथा अभ्युदय प्रिय अप्रिय, जड़-चेतन सुख दुख सभी का रहस्योद्घाटन किया। उस परमानन्द के

प्राप्ति का पथ प्रशस्त्र किया जो पूर्ण है और परम तेजस्वी हिरण्यगर्भ तथा परम सुन्दर है।

सांख्य और रामानुज वेदान्त के अनुसार सौन्दर्य ब्रह्म है और कला उसकी भाषा है। मानव जीवन का ऐश्वर्य उसका प्रकाश है। जो सौन्दर्य से अभिभूतहै। इसी प्रकार शंकराचार्य ने सौन्दर्य शास्त्रीय दृष्टिकोण से अद्वैत का अध्ययन किया है जिसका दर्शन अथवा अनुभव प्रदाता है। वही सुन्दर है और उसके साथ तादम्य स्थापित करना ही अद्वैत है।

अस्तु सत्‌चित्‌ का मंगलमय रूप ही आनन्द है और उसका मूल सौन्दर्य बोध वही सच्चिदानन्द है। प्रतिभा ज्ञान की परिधि में सत्य जब दर्शन का रूप धारण कर लेता है तो सुन्दर हो जाता है। तात्विक दृष्टि से ब्रह्म का जो स्वरूप सत्य है दार्शनिक दृष्टिसे चित है परमार्थिक दृष्टि से आनन्द है और वही कलात्मक दृष्टि से चिदानन्द, परमतत्व तथा सुन्दर है। दर्शन की भूमिका पर वही आनन्दमय बताया गया है। दार्शनिक का जो आनन्द सत्य है वही कवि का सौन्दर्य है, ज्ञानी का अध्यात्म तथा भावुक का काव्य है। वह अमृत है, चिर सुन्दर है, जिसे देखकर भी तृप्ति नहीं होती।

विद्यापति–

''जन्म अवधि हम रूप निहारलु, नयन न तिरपति भेल ॥''

अत: सौन्दर्य एवं आनन्द एक है और वह इतना विस्तृत है जितना ब्रह्माण्ड असीम है तो सौन्दर्यानुभूति कम कैसे हो सकती है। आनन्द स्फुरण रुपिणी सौन्दर्य वृत्ति ही आध्यात्म है।

सौन्दर्य का अधिष्ठान – भरत प्रज्ञा चक्षु मेधा विरुद्ध दण्डी और उद्‌भट के पश्चात्‌ आचार्य वामन (750–850) ई. जैसे व्यक्ति का अवतरण संस्कृत का काव्य सम्प्रदाय में एक विशिष्ट क्रांति दृष्टा के रूप में हुआ। इनके प्रतिद्वन्दी आचार्य उद्‌भट ने अलंकार पर ही ग्रन्थ लिखा किन्तु आचार्य वामन ने आलोचना शास्त्र के समस्त तत्वों को अपनी पांडित्य पूर्ण प्रतिभा से उद्‌भाषित किया। अस्तु आचार्य वामन को ही सौन्दर्य सम्प्रदाय का अधिष्ठाता स्वीकार किया गया है। आपके द्वारा रचित काण्यालंकार एक ऐसा ग्रंथ है जिसका प्रणयन सूत्र शैली में हुआ है। इसमें 5 अधिकरण 12 अध्याय तथा 319 सूत्र है। आपके अनुसार जिन अंशों से काव्य का निर्माण होता है वे स्वतंत्र अस्तित्व भी रखते हैं काव्य के निर्माण में चार अंश माने जाते हैं।

1. शब्द
2. शब्दगुण

3. अर्थ

4. अर्थों का गुण

इन काव्य अंशियों के सम्मिलन से काव्य बनता है और जिससे काव्य का सौन्दर्य अथवा काव्य का मूल अभिव्यक्त होता है उसे प्रभाव गुण या पांचवां अंश माना जाता है। सौन्दर्यगाधिष्ठान के विषय में यह कथन उल्लेखनीय है –

''फूलों की सुन्दरता के लिये पौधों का रोपण होता है, सौन्दर्य का नहीं। इसके लिये बीज डालते हैं मिट्टी पानी तथा ऋतु की अनुकूलता का भी विचार किया जाता है। सौन्दर्य तभी प्रस्फुटित होता है जब उसमें पुष्पावर्तन होता है। काव्य के विषय में भी ऐसा ही समझना चाहिये। उसका बीजादि शब्द है। गुण ही रचना गत वैशिष्ट्य है – विशेषो गुणात्मा तो पद रचना काव्य का शरीर है और विशिष्टता उसकी रीति। इसकी विशेषता गुणों की शब्दावली में भी संभव है। अतएव रीतिगत्माकाव्यस्य और सब कुछ मिलाकर काव्य समग्र में सौन्दर्यता की प्रधानता होनी चाहिये, इसीलिये काव्य, ग्राह्मलकारात् तथा सौन्दर्यमलंकार: काव्य के मूल्य या सौन्दर्य की उपाधि के साधन है अलंकार, गुण रीति आदि कारण है, जिनसे सौन्दर्य में अभिवृद्धि होती है परन्तु काव्य समग्र तभी सत्काव्य अथवा सिद्द काव्य प्रमाणित होगा जब उसमें सौन्दर्य होगा।

जहां तक रस का प्रश्न है उसे काव्य का चरम काल माना जाता रहा है। आनन्द सुख और प्रसन्नता को उसमें समाविष्ट किया गया है और सुन्दर होने पर ही वह रसादि वासना को उद्‌बुद्ध करता है– अभिनव गुप्त ने जिसे ह्दयसवाद सुन्दर आदि कहा है रमणीयता ही सौन्दर्य है (पंडित राज जगन्नाथ) और इसी प्रकार रमणीय अर्थ का प्रतिपादक शब्द ही काव्य है।

इस प्रकार आचार्य कवियों ने ही नहीं वरन रीति काल के लगभग सभी आचार्यों ने अलंकार तत्व को नगण्य माना है। परन्तु उसे काव्यात्मा ने भी स्वीकार नहीं किया है। (233)

अपितु अपनी परम्परा, स्वभाव और शक्ति के अनुकूल उनके अलंकारिक प्रयोग काव्य के शरीर को विभूषित करके सौन्दर्य अलंकार के धरातल पर रस रूप काव्यात्मा को उर्ध्वोन्मुखी बनाते रहे हैं और इस प्रकार वे आचार्य सौन्दर्य काल के सभी गुणी ग्राहक तथा सौन्दर्यद्दष्टा रससिद्धि कवि और आचार्य माने जाने योग्य हैं।

सौन्दर्य एवं कुरुपता –

कला में एक ऐसी शक्ति रहती है जिसके द्वारा वह सामान्य जगत की तथाकथित कुरूप वस्तु को भी सुन्दर बना देती है।

मौलाना शिवली के अनुसार चित्रकला की दृष्टि से एक आसन्न प्रसवा गदही का चित्र उतना ही महत्वपूर्ण और कलात्मक हो सकता है जितना अम्बपाली या अफ्रीको कोजिमा और मेरिना जुलोगा जैसी विश्वसुन्दरी का चित्र ।(234)

पाश्चात्य सौन्दर्य–चिन्तन में अरस्तू के काल से कुरूप के संबंध में विचार विमर्श होता रहा है और दिन–प्रतिदिन उसे अपेक्षाकृत अधिक व्यापकता प्रदान की जाती रही है । अरस्तु ने कुरूप में हास्यास्पद की गिनती भी की है । किन्तु लेसिंग ने कुरूप को काव्य में केवल कौमिक या भयानक के प्रत्यक्षीकरण का साधन माना है । हीगेल के अनुसार कुरूप में कुछ न कुछ विकृति अवश्य रहती है, जैसे कुरूप चर्चा में कैरीकिचर का उदाहरण देते हुये इन्होंने चरित्र–चित्रण की विकृति को निद्दष्ट किया है । शेजेन्को के अनुसार कुरूपता सौन्दर्य का भावात्मक निषेध (पाजीटिव निगेशन) है ।

अस्तु कुरूपता भी हमारी सौन्दर्य चेतना से संबंधित है । व्ययदेश निर्धारण की दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि– कुरूपता उस वस्तु में है जो चाक्षुस, श्रावण अथवा अन्य एन्द्रिय प्रत्यक्ष के उपरान्त आश्रय की बोधवृत्ति या इन्द्रियों को अरुचिकर प्रतीत होती है । साथ ही साथ संसर्ग–सम्पर्क और पूज्य भाव के आरोपण से कुरूप भी आकर्षण बन जाता है । या उसकी अरुचिकता घट जाती है । पुन: विशिष्ट आन्तरिक गुण के कारण कुरूपवर्जना का भाव बदल जाता है । उदा. स्वर लालित्य के कारण काली कोयल और पांडित्य के कारण अष्टावक्र उल्लेखनीय है ।

दूसरी बात यह है कि सुन्दर और कुरूप एक दूसरे के मूल्यों एवं सीमाओं का निर्धारण करते हैं शायद इसीलिये बाल्मीकि ने राम के सौन्दर्य्र को अधिक प्रभविष्णु एवं सूर्पणखा की कुरूपता को अधिक विकर्षण बनाने के लिये सौन्दर्य और कुरूपता का सामानान्तर वर्णन किया है –

सुमुखं दुर्मुखी वृत्तमध्यं महोदरी ।

विशालाक्षं विरूपाक्षी सुकेशं ताम्रमूर्घटना ॥

प्रीतिरूपं विरूपम सा सुक्ष्वां भैरवस्वरा ।

तरुणं दारुणं वृद्धा दक्षिणं वामभाषिणी ॥ (बाल्मीकि रामायण)

अत; सारांश स्वरूप यह कहा जा सकता है कि कुरूपता के प्रति तीव्र प्रतिक्रिया हमारी सौन्दर्य चेतना के लिये शुभकर है ।

साहित्य और सौन्दर्य रसानुभूति से संबंध-

सौन्दर्यानुभूति के विषय में आई.ए. रिचर्ड्स ने प्रिन्सिपल आफ लिटरटी क्रिटिसिज्म में यह मत व्यक्त किया है कि- मन की कोई ऐसी विशिष्ट दशा नहीं है जिसे हम सौन्दर्यानुभूति की अवस्था के नाम से अभिहित कर सकते हैं।(235)

अत: जिसे हम सौन्दर्यानुभूति की अवस्था कहते हैं उसके कुछ विशिष्ट लक्षण होते हैं। जीव विज्ञान के अनुसार हमारे- ऐन्द्रिय ज्ञान और संवेदन मूलत: दो प्रकार के होते हैं- प्रोटोपैचिक और एपिक्रिटिक। ये दोनों त्वकचेतना के साधन और आधार हैं।

विशेषकर अभिनवगुप्त की मान्यता है कि सौन्दर्यानन्द को ब्रह्मानन्द नहीं कहा जा सकता, क्योंकि सौन्दर्यानन्द ब्रह्मानन्द से भिन्न कोटि का होता है। ब्रह्मानन्द की स्थिति में प्रज्ञा स्थिर हो जाती है। जिससे कला सृजन संभव नहीं है। अत: सौन्दर्यानन्द ब्रह्मानन्द से भिन्न स्थिति का होता है। उसके साथ-साथ उनका दृष्टिकोण है कि सौन्दर्यानुभूति (जिसे भारतीय काव्यशास्त्र में प्राय; रसानुभूति कहा जाता है) व्यक्ति की वह नन्दतिक चेतना है जो बाह्य विघ्नों घातों अथवा प्रभावों से मुक्त रहती है। इस नन्दतिक चेतना का कोई बाह्य उद्देश्य नहीं होता है। यह मनुष्य की प्रयोजन हीन दशा है।

An aesthetic experience, however, the feelings and facts of everyday life even if they are transfigured, are always persent.In respect of its proper and irriducible character, therefore, which distinguishes if from any form of ordinary consciousness aesthetic experience is not of a discursive order.

अस्तु सौन्दर्यानुभूति को समझने के लिये कलानुभूति का विवेचन आवश्यक है। पूर्व काव्यशास्त्रियों के अनुसार कलानुभूति एक ऐसी सुखद अनुभूति है जो सत्य मिथ्या के विधि निषेधों से ऊपर है। अत: कलानुभूति वस्तु विशेष के संवेद्य अंशों के चयन पर जीवित रहती है। इसलिये सुखदायी और रसात्मक होती है। भारतीय दृष्टि से भी कला का आशु अथवा समीपी मूल्य विशिष्ट सुख (आनन्द) ही माना गया है।

अभिज्ञान की दृष्टि से निर्वैयक्तिकता का अभ्युदय कलानुभूति का सर्वोपरि लक्षण है। सामान्य अनुभूतियों में मनुष्य अपने व्यक्तित्व और वैयित्तकता की परिधि से आबद्ध रहता है। किन्तु कलानुभूति लक्षणों में वह इन सीमाओं से ऊपर उठ जाता है। अत: कलानुभूति एक विशिष्ट संवित् है, जो भावक में सत्वोद्रेक पैदा करती है।

दूसरी बात यह है कि कलानुभूति की दो मुख्य किस्में हैं– उपजात व प्रेरित। उपजात कलानुभूति का संबंध कारयित्री प्रतिमा से अत: सहृदय से है। प्रथम कला सृष्टि के क्षणों की अनुभूति है और द्वितीय कला दर्शन के क्षणों की कलानुभूति ही विकास और उपचिति के मात्रा के अनुसार हृदय संवाद तन्मयीभवन योग्यता और रसानुभाव की अवस्थाओं मे बदलती रहती है। दूसरे प्रकार की कलानुभूति भोगीकरण प्रधान होती है। जबकि उपजात कलानुभूति में भोग से अधिक महत्व इन तीनों कार्यों में होता है– अनुभूति का निबड़ीकरण, अनुभूति का मार्जन और अनुभूति की व्याख्या।

कलानुभूति के दो प्रकार स्पष्ट हैं–सहज और संकुल। शैशवावस्था और किशोरवय की कलानुभूति अथवा प्रौढ़ व्यक्ति की भी। (फिक्शेसन से उद्भूत) शिशु अथवा कैशोर कलानुभूति सहज होती है। इसके विपरीत जो व्यक्ति जितना ही परिपक्व बुद्धि और आवेष्टनों के प्रति सजग होता है उसकी कलानुभूति उतनी ही संकुल होती है।[236]

उपर्युक्त अध्याय के सम्पूर्ण विवेचन का निष्कर्ष रूप संक्षेप में निम्नांकित ढंग से व्यक्त किया जा सकता है–

(क) सौन्दर्य काल अन्य कलाओं का अपरिहार्य तत्व है।

(ख) सौन्दर्य सृजन और सौन्दर्य भावना में सृष्टा और सहृदय की स्वाद रुचि का सापेक्षिक महत्व है।

(ग) कुछ विचारक सौन्दर्य को वस्तुनिष्ठ और कुछ आत्मनिष्ठ मानते हैं। किन्तु यह निर्विवाद रूप से सत्य है कि सौन्दर्यबोध का संबंध अंशत: एन्द्रिय प्रत्यक्ष से अवश्य है तथा इसके सौन्दर्य ग्रहण में अन्त:करण का योग अपेक्षित है।

(घ) सौन्दर्य चेतना का बहुत ही ऋजु संबंध हमारे भावात्मक संवेगों के साथ है।

(च) प्रायोगिक सौन्दर्य शास्त्र में विवेचित सौन्दर्य के साथ काव्य एवं अन्य ललित कलाओं का सीधा संबंध नहीं है।

(छ) कला चिन्तन की दृष्टि से सौन्दर्य के प्रति भारतीय दृष्टिकोण ही सर्वोत्तम प्रतीत होता है। क्योंकि इसमें आध्यात्मिक ह्रास, आन्तरिकता और प्रकृति प्रेम को सर्वाधिक महत्व दिया गया है।

(ज) उदात्त सौन्दर्य का चरम रूप है।

(झ) सौन्दर्यानुभूति का आनन्द से अनिवार्य संबंध है।

(ट) सौन्दर्यानुभूति जब सृजन की ओर सक्रिय होती है तब वह कलानुभूति बन जाती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. An out live of psychology by william M.C. dougall - P-13.
2. मनुस्मृति
3. अथर्ववेद – पृ. 9/2/19
4. अथर्ववेद – पृ. 19/52/1
5. वही – पृ. 3/29/7
6. प्रकृति वाद – पृ. 811
7. हिन्दी शब्द सागर – पृ. 28, 93
8. रतिस्तु मनोनुकूलेष्वर्थेषु सुख संवेदन – प्रदीपकार
9. स्मर करम्बितान्त : करसायो: स्त्रीपुं सयो: परस्पंर रिंरसा रति: स्मृता। सुधा सागर।
10. रतिर्मनोनुकूलडर्थे मनस: प्रवणायितम् :। सा. दर्पणकार
11. सा परानुरक्तिरीश्वरे – भक्ति शास्त्र
12. कामायनी – जयशंकर प्रसाद
13. कामायनी – जयशंकर प्रसाद
14. Love's philosophy : william shelley
15. रस कलश: हरिमौध – पृ. 87
16. वही हरिऔध – पृ. 90
17. वही पृ. 90 से उद्धृत
18. वही पृ. 89 – 90
19. वही पृ. 92
20. रामचरित मानस
21. Love's philosophy : william shelley.
22. मधुर रस – स्वरूप और विकास भाग 1 पृ. 69
23. कामसूत्र वात्स्यायन, अ. 2 सूत्र 37
24. रीति कविता और श्रृगार रस का विवेचन, डॉ. रा. पृ. चतुर्वेदी पृ. 110 से उद्धृत।
25. कामसूत्र अ. 2 सूत्र 11
26. कामसूत्र अ. 2 सूत्र 12

27. सारंग घर – 1, 6
28. अथर्ववेद – 3, 29,7
29. अथर्ववेद – 19, 52, 1
30. अथर्ववेद – 19, 52, 2
31. नाट्यशास्त्र
32. साहित्य दर्पण।
33. रस कलश हरिऔध पृ. 82
34. वही
35. अथर्ववेद – पृ. 2, 29, 7
36. नाट्यशास्त्र
37. अथर्वृवेद पृ. 9,2,19
38. गीता – 6, 11
39. मनुस्मृति
40. कामसूत्र अ. 2 (सप्तमसधिकार)
41. शिव पुराण : धर्मसहिंता, पाठ–8
42. Studies in the psychology of sex, vol. 11, Havelock ell is.
43. राम चरित मानस बालकाण्ड
44. कुमार संभव : – कालीदास, तृतय सग
45. राम चरित मानस
46. मधुर रस स्वरूप और विकास भाग 1, पृ. 76
47. अथर्ववेद – 19,52,1
48. शारङ्गघर – 1, 6,
49. वैदिक सम्पत्ति पं. रघुनन्दन शर्मा शास्त्री, पृ. 753, 754
50. प्रियप्रवास हरिऔध
51. रीति कविता और श्रृगांर रस का विवेचन डॉ.रा. पृ. चतुर्वेदी पृ. 8 से अद्घृत
52. प्रियप्रवास हरिऔध।
53. Introduction to social psychology, page - 351 by william M.C. Dougall
54. Introdcution to social psychology page 358-59

55. Introduction Lectures of psycho-anlysis: freud. page 263.
56. वही '' '' पृ. 362
57. वही '' '' पृ. 277
58. Basic writings of sigmund freud.
59. Basic writings of sigmund freud, - contribution. I
60. Introduction Lectures of psycho analysic : freud. p. 27
61. The Ego and Id, p. 49
62. The future of an Illusion : freud. P.38
63. do " " frued p. 42 and 55.
64. Hindu psychology : Akhilanand, page - 70
65. Mordern man in search of soul : C.G. young P. 51-52
66. I Ibid - Page 134-135
67. Introduction to the social psychology : macdougall P.339.
68. Social psychology : Thouless, page- 358
69. Introduction Lectures : freud P.290
70. अपने साथियो या ईश्वर।
71. The psychology of sex : Oswald schwarty P.23.
72. Religious consciousness : william pratte : Page 158.
73. The psychology of Religion : W.B. selbie P.187.
74. " do "
75. Psychology and Religion : forsyth. P.138
76. Introduction to the psychology of Religion : Thouless P.224.
77. रीति कविता और श्रृगांर रस का विवेचन डॉ. रा. पृ. चए पृ. – 8 से उद्धृत।
78. भगवत रसिक की वाणी पृ. 27
79. हनुमान प्रसाद पोद्वार लिखित 'गोपी प्रेम' पृ. 12 से उद्धृत
80. सुधर्म बोधिनी, पृ. 14
81. सुधर्म बोधिनी लाड़िली दास, पृ. – 8
82. आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य – डॉ. रामेश्वर लाल खंडेलवाल – पृ. 102
83. नारद भक्ति सूत्र – 51 से 55 सूत्र।
84. वही – सूत्र 2 और 3

85. अथर्ववेद कां. 14, सूत्र 2 मं. 64
86. श्रौत्र सूत्र – 16, 11, 9
87. ऋग्वेद – 10–10
88. वही – 10–95 और 5 – 41–19
89. वही मं. 5 सू. 61 मं. 7
90. मध्यकालीन प्रेम साधना : पं. परशुराम चतुर्वेदी पृ. 12
91. श्रीमद् भागवत – 1–2–11
92. प्रेमा न प्रियता हार्दे प्रेम स्नेहोऽथ दोहदम् । अमरकोरा प्रथम कांड ।
93. Webster's New International Dictionary of English language. P.1279.
94. नारद भक्ति सूत्र – 19
95. हरिभक्ति रसामृत सिन्धु : रूप गोस्वामी (अच्युत ग्रंथमाला काशी) पृ. 15
96. चैतन्यचरितामृत : कृष्णदास कविराज ।
97. ह्यूमैन एफेक्शन एण्ड डिवाइन लव : स्वामी ।
98. ऋषि तिरवल्लुवर तामिल वेद (अजमेर) पृ. 83–84
99. आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य : डॉ. रामेश्वर लाल खंडेलवाल पृ. 89
100. Psychology of sex : Havelock ellis, vol v, page 133.
101. Heart of Rama: Swami Ramtirth, Page 130,131 and 133.
102. Radha Krishnan : from preface to Dilip Kumar Roy's ameny the great 1950.
103. The mansions of philosophy : will purant (1929), P-170-171
104. श्री चैतन्य चरितामृत : कृष्णदास कविराज, आदि लीला चतुर्थ परिच्छेद ।
105. ध्रुवदास कृत बयालिस लीला : प्रीति चौवनी ।
106. कबीरदास
107. मध्यकालीन धर्म साधना : आ. ह. प्र. द्विवेदी पृ. 213
108. श्री बल्लभ रसिक की वाणी ।
109. तुलसी कृत राम चरित मानस सुन्दर काण्ड और चातक चौतीसी के दोहे दृष्टव्य ।
110. श्रीमद् भागवत, 10, 33, 35,36, 37, 38
111. नारद भक्ति सूत्र – 58

112. कठोपनिषद अ. 2 बल्ली 2 मंत्र 2

113. श्रीमद् भागवत गीता, अ. 7 श्लोक 7

114. नारद भक्ति सूत्र – 46, 47, 50, 60, 68, और 71

115. ब्रम्हासूत्र – 1, 1,1 पर शंकर भाष्य

116. आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य : डॉ. रामेश्वर लाल खंडेलवाल
पृ. 162 से उद्धृत।

117. Plato : Phaedrus , P.5

118. Studies in a dying culture by christopher candwell P.132

119. Plato : symposium, P.77-78

120. राम चरित मानस

121. राम चरित मानस अख्यकांड

122. पं. परशुराम चतुर्वेदी लिखित हिन्दी काव्यधारा में प्रेम प्रवाह : पृ. 53, 57

123. उज्जवल नीलम मणि : हरिवल प्रकरण पृ. 49

124. ऋग्वेद – 1, 32, 2

125. Western Aesthetics - K.S. Pandey - P. 123-3

126. कला और सौन्दर्य लेख से –प्रो रामकृष्ण शुक्ल ''शिलीमुख–पृ. 4

127. वही पृ. 8

128. वही. पृ. 12

129. वही पृ. 15

130. ऋग्वेद – 10/7/1/4

131. भरत मुनि तथा अन्य सभी भारतीय रस शास्त्री।

132. The Lows of "feelings" - paulham as quoted in saundarya shastru by
Dr. Hardwari Lal sharma.

133. अविश्वास का एच्छिक स्थगन – वर्डसवर्थ

134. सचेतन आत्म प्रवंचन – जर्मन दार्शनिक ग्रूस।

135. मानिनी – प्रवर कृत

136. श्रीमद् भागवत – मदालासा का पुत्र को उपदेश

137. Western Aesthetics by K.C. Pandey Page 129-130

138. Represented by K.C. Pandey in his western Aesthetics Page 153
W.R. Inge; The philosophy of plotinus, volume I I page 199.
139. Western Aesthetics - K.C. Pandey Page 285-86
140. वही पृ. 291
141. सौन्दर्य शास्त्र की दृष्टि से अनेक की एकता ही सत्य है और यही सौन्दर्य है।
142. Ibid - page 510
143. Ode on grecianurn - Keats
144. परिवर्तन, युगवाणी सुमित्रानंद पन्त
145. जायसी ग्रन्थावली – मलिक मुहम्मद जायसी पृ. 301
146. औषधीय चरितम्।
147. माघ, शिशु पालवधम्।
148. Keats
149. साहित्य और सौन्दर्य – पृ. 113
150. सौन्दर्य शास्त्र – डॉ. हरद्वारी लाल – पृ. 5
151. उसमान – चित्रावली – पृ. 224 सूर मोहम्मद अनुराग बांसुरी पृ. 123
152. सूर सागर पहला खण्ड – श्री नन्द दुलारे बाजपेयी पृ. 255 से 595 तक के विविध प्रसंग
153. अयोध्या कांड – दोहा – 56, चौपाई –1
154. जायसी ग्रन्थावली पृ. 54
155. वही पृ. 65
156. सूर सागर – नन्द दुलारे बाजपेयी – पृ. 496–538, 629 से 678, 746–860,
761–1269
157. राम चरित मानस – अयोध्यकाण्ड – दोहा – 63–78
158. हिन्दी सूफी कवि और काव्य पृ. 285 जायसी ग्रंथावली भूमिका पृ. 34–56, तसव्वुफ
और सूफीमत – 236
159. सूरसागर – वेकेटेश्वर प्रेस – पृ. 287 विष्णु पुराण – 1/12/69, श्री राधा का कम
विकास–पृ.199 डॉ. शशि भूषण दास गुप्त, राधा का विकास – साहित्यिक निबंध पृ. 473
160. सिद्धान्तरत्न – बलदेव विद्या भूषण – पृ. 40 बिहारी चरितामृत।
161. रामचरित मानस – किष्कंधा काण्ड – दोहा 14 चौ – 1

162. सूरसागर – 131

163. रामचरित मानस, बालखण्ड, दोहा – 129 से 135 तक

164. राम चरित मानस काण्ड – 4

165. A critical History of modern Aesthetic earl of histowel page. 70

166. Ibid Page. 80

167. ध्वन्यालोक, तृतीय उद्योत।

168. शतपथ ब्राहम्ण – 5/2/1/10

169. मम्मट कृत काव्य प्रकाश

170. भतृहरि – श्रृंगार शतक – श्लोक 16, 23, 27, 55, 59, 62, 72, 82 वैराग्य शतक श्रोक – 36, 39, 48, 52, 58, 67, 75,

171. रस कलश – हरिऔध

172. साहित्य दर्पण

173. गीता

174. Studies in Islanic mysticism page 80 nicalcen out lines of islamic culture prof shustry.

175. ज्ञान सागर साहित्य परिषद ग्रंथावली पृ. 24, 26

176. साकल्य – सौन्दर्य बोध पृ. 250

177. कर्म मीमांसा दर्शन, धर्मवाद सत्र 56

178. कल्याण नारी अंक

179. कौषतिक उपनिषद – 1/7

180. कामायनी – श्रद्धा सर्ग, जयशंकर प्रसाद पृ. 53

181. गीता – 7/11

182. ऋग्वेद – 3/30/19/2/10/6

183. मध्यकालीन प्रेम साधना – पृ. 179

184. Psychology of sex - Havelock, Ellis

185. नारद भक्ति सूत्र – 51, 52

186. रसखान और घनानन्द (ना. प्र.स. काशी)

187. नारद भक्ति सूत्र – 55

188 सूत्र – सूत्र 6/8/9

189. नन्ददास कृत भवंरगीत ना.प्र. सभा, श्री कृष्ण सिद्धांत पंचाध्यायी रास पंचाध्यायी अध्याय–2

190. मानस लंका 71–103

191. विर्वत विलास – पृ. 1649, हिन्दी काव्यधारा में प्रेम प्रवाह पृ. 101

192. श्रीमद् भागवत पूर्वार्द्ध – 30/28

193. नारद भक्ति सूत्र – 3/4/53/54

194. निसक्त – 3/21/2

195. वही – 3/21/2

196. सुमित्रनन्दन – नारी युगवाणी

197. ऋग्वेद – 7/86/5

198. वही – 12/23/10

199. Alexander, Beauty and other forms of value landon, page - 179-180

200 रामायण –सुन्दरकाण्ड पृ. 13/68

201 वही – पृ. 13/68

202. Hegel philosopy of pine ... page 47

203 हिन्दी रीति काव्य में सौन्दर्य बोध पृ. 85

204. Ramaswamy Sastri 'Indian Asetheties (1928)

205. Shakespeare's Imagery and what it tells up page 13-14

206 सौन्दर्य शास्त्र के तत्व डॉ. कुमार विमल पृ. 203

207 काव्य बिम्ब डॉ. नगेन्द्र पृ. 5

208. रिचर्ड्स के आलोचना सिद्धांत, डॉ. शंभुदत्त झा, पृ. 73

209 Bigraphia literaria P 177.

210. literature critics - page 11

211 प्रिंसपिल ऑफ लिटरेरी क्रिटीसिज्म रिचर्डस पृ. 106

212. सौन्दर्य शास्त्र के तत्व –पृ. 109

213. काव्य में उदात्त तत्व – डॉ नगेन्द्र – पृ. 19

214. Wester's new word dictionary of the american language .

215 सौन्दर्य शास्त्र के तत्व –पृ. 211

216. वही पृ. 109

217. कोषेतिक ब्राम्हणोपनिषद – 1/10

218. भारतीय दर्शन का रूप – डॉ. उमेश मित्र पृ. 5

219. काव्यालंकार – 1 / 36

220. काव्यादर्श – 1/62

221. कारिका – 1/15

222. अध्याय – 10 पृ. 16 चौ सं. 1997 वि.

223. निर्णयाकार संस्करण – 1 / 15 पृ. 115

224. निर्णयाकार संस्करण – 1 / 15 पृ. 115

225. अभिनव भारती नाट्य शास्त्र पृष्ठ 291

226. कामसूत्र परिशीलन ले. वाचस्पति गैरोला भूमिका भाग 1

227. कामसूत्र पृ. 602, 622, 623, 636 तथा 638

228. डॉ. रामानन्द तिवारी कृत पृ. 71

229. बिहारी सतसई दो. सं. 722

230. अभिज्ञान शकुन्तला अंक –5

131. Hegal - the pholosophy of fine astt. p. 103.

232. सौन्दर्य विज्ञान ले हरिवंश सिंह शास्त्री काशी विद्या पीठ पृ. 56/118

233. दा फिलासफी ऑफ ब्यूटीफूल ले. जेम्स एच कजिन्स पृ. 35

234. हिन्दी रीतिकाल में सौन्दर्य : ऊषा गंगाधरराव साजापुरकर।

235. शेरूलअजम, मौलाना शिवली, नेमानी

136. The Aesthetic experience according to Abhenaw gupta

237. सौन्दर्य शास्त्र के तत्व : डॉ. रामकुमार मित्तल पृ. 106

अध्याय-2

- नारी चरित्र दशा एवं दिशा
- पात्र चरित्र एवं व्यक्तित्व की परिभाषाएँ
- नारी पात्रों का वर्गीकरण

पात्र चरित्र एवं व्यक्तित्व की परिभाषायें

अपारे काव्य संसारे कवि रेका: प्रजापति की उक्ति के अनुसार भारतीय काव्य शास्त्र में कवि को प्रजापति क्रान्त दृष्टा रचना निर्माण कर्ता कहा गया है। जिस प्रकार इस द्रव्य मान संसार में भिन्न रंगरूप आकार, आहार–व्यवहार, सत् असत् अच्छे बुरे व्यक्ति हमें दिखाई देते हैं इसी प्रकार साहित्यकार की रचना में प्राप्त पात्र भी काल्पनिक होते हुये हमारे वस्तुगत जगत से मिलते जुलते तद्वत कार्य व्यवहार आचरण करते हुये दिखाई देते हैं। इन्हें ही काव्य शास्त्रीय भाषा में पात्र कहा जाता है। जिसकी स्वरूप और अवधारणा देश काल परिस्थिति और आवश्यकता के अनुसार भिन्न–भिन्न मानदण्डों, आदर्शों की परिकल्पना की गई है। शोधकर्त्री यहां पात्र एवं व्यक्तित्व के शाब्दिक अर्थ के साथ ही भारतीय एवं पाश्चात्य आचार्यों, सामाजिकों और मनोवैज्ञानिकों की परिभाषाओं को प्रस्तुत कर नारी चरित्रों के विविध रूपों का वर्गीकरण विश्लेषण करेगी।

पात्र शब्द की उत्पत्ति एवं अर्थ

पात्र शब्द संस्कृति की ''प'' धातु के साथ ष्ट्रन प्रत्यय के संयोग से बनता है जिसके पुलिंग अर्थ में व्यक्ति जो किसी काम या बात के लिये सब प्रकार से उपयुक्त या योग्य समझा जाता है या जो सब प्रकार से अधिकारी हो उसे पात्र कहते हैं। नपुंसक लिंग में इनका अर्थ हैं- वह आधार जिसमें कुछ रखा जा सके। ऐसा बर्तन जिसमें पानी रखा या पिया जा सके।

भाववाचक रूप में-

''आज्ञा'' या आदेश को पात्र कहते हैं विशेषण रूप में जो किसी कार्य या पद के लिये उपयुक्त होने के कारण चुना या नियुक्त किया जा सके।(1)

(1) पात्र से हमारा तात्पर्य काव्य नाटक, उपन्यास कहानी इत्यादि में व्यक्ति से है जिनके क्रियाकलाप से कथा वस्तु की सषष्टि या परिपाक होता है। पात्रता और पात्रत्व पात्र से ही संबंधित हैं। प्रसिद्ध अंग्रेजी लेखक मम्ण्डपथ्तजमं ने कहा है कि आत्माभिव्यक्ति का अन्तरावम्लन ले कर साहित्यकार शब्द मूर्तियां गढ़ता है फिर उनके साथ नाम और लिंग जोड़ता है। ये शब्द मूर्तियां ही पात्र है।

The harelipt...... makes up & number of word masses raughly.(2)

इस संबंधी अवधारण को और अधिक स्पष्ट कहने के लिये यह आवश्यक प्रतीत होता है कि पात्र से मिलते जुलते अन्य शब्दों के वास्तविक अर्थ समझ लिया जाय इन। शब्दों में चरित्र, व्यक्तित्व, स्वभाव शील इत्यादि प्रमुख शब्द हैं।

पात्र एवं चरित्र-

सामान्यत: पात्र एवं चरित्र में बहुत अन्तर नहीं है। साहित्य में वर्णित नाम धारी व्यक्ति पात्र है और उसका आचरण चरित्र है। चरित्र में दो पक्ष दिखाई देते हैं एक साहित्य निविष्ट व्यक्ति की इकाई अथवा विभाव और इसका उसका स्वभाव प्रकृति अथवा आचरण। श्री जी.एम. किर्कउड़ ने लिखा है-

But character means also personality, Especially that port of aspect of Personality moral character".(3)

1. सामान्य चरित्र के दो पक्ष मान्य है सत् एवं असत् सामाजिक परम्परा के अनुकूल नीति सम्मत आचरण करने वाला सत् चरित्र है और इसके विरुद्ध असत् चरित्र माना जाता है। चरित्र के विशद अर्थ में हम कह सकते हैं कि मनुष्य के वर्हि अंग तथा प्रकाशक सभी तत्व समाहित हो जाते हैं। जिसमें व्यक्ति बौधिक क्षमतायें उसकी इच्छा शक्तियां तथा उसकी भावनायें कामनायें आती है। एस.एच. बूचर ने लिखा है कि-

   "Character is its widest pence as including all that reveals amon's personal and inner self his intellactual powers no less than the will and emotin's".[1]

2. अंग्रेजी शब्द (Character) का हिन्दी अनुवाद चरित्र है यह एक गतिशील तत्व है एग्गत ने लिखा है कि कोई मनुष्य जो कुछ है वही उसका चरित्र है।(4)

3. चरित्र मूलत: अन्त: करण से संबंधित जिसका सम्यक् रूप श्रीमद् भगवत गीता में इस प्रकार वर्णित है- शरीर को क्षेत्र मानकर पंच महाभूत- आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी अहंकार, बुद्धि और मूल प्रकृति दस इन्द्रियां, पांच इंद्रियां और उनके विषय का उल्लेख किया गया है।'' (5)

4. इस प्रकार मनुष्य जब भी कोई प्रतिक्रिया करता है। उसके अन्त:करण में एक चेतना जागृत होती है और उसी के परिणाम स्वरूप वह तद्वत आचरण करता है।

यद्यपि आन्तरिक क्रियाकलापों को परिभाषित नहीं किया जा सकता है। जैसा कि आलोचक करेक्टर को परिभाषित करते हुये कहता है कि-

"What is character ?....... a Factor whose virtues have not been

discavered.......... the so called, inword neverness the seemingly unpvedicatable soul, is nothing more nor less than character.[7]

1. पाश्चात्य मनोविज्ञानवेत्ता हाकिंग एवं ए.सी. ब्रेडले भी मानते हैं कि चरित्र जैसे निगुण तत्व को परिभाषित करना बहुत कठिन है।[8]

2. मैकाड्यूगल ने चरित्र को प्रज्ञात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक तत्वों का संगठन माना है। डा. रोबैक के मतानुसार चरित्र जन्मजात मूल प्रवत्यात्मक उत्तेजनाओं के निग्रह वाला एक सतत जागष्ह एक मनोवैज्ञानिक सुझाव है–

   "Psychologica dispasition to in habit instructive implres in some social medeum.

3. राविन्सन ने चरित्र को परिभाषित करते हुये लिखा है चरित्र चित्रण शब्द का अभिशाप कहानी पात्रों को पर्याप्त मूर्तिमहता और स्वभाविकता के साथ इस प्रकार चित्रित करना है कि वह पाठकों के लिये छाया नाम न रहकर पुस्तक के समतल पन्नों से उभर आये और कम से कम उस समय के लिये व्यक्तित्व धारण कर लें।[९]

इस प्रकार भारतीय पाश्चात्य विचारकों के मतों का समन्वय कर यह कहा जा सकता है कि मन, बुद्धि, अहंकार से निर्मित अन्तकरण द्वारा किये गये कर्म चरित्र का निर्माण करते हैं।

2. पात्र एवं व्यक्तित्व–

चरित्र को समझने के लिये यह आवश्यक है कि व्यक्तित्व का तात्पर्य और एतद् विषयक अवधारणायें स्पष्ट कर ली जाये। व्यक्तित्व शब्द वि+अञ्ज् + क्तिन + त्वल् से बना है जिसका अर्थ है कि व्यक्त होने की अवस्था किन्तु यह इसके सम्पूर्ण अर्थ का द्योतक नहीं है। वस्तुत: व्यक्तित्व के मूल में कहीं आकर्षक रूप सौन्दर्य, शारीरिक या आशिंक शौष्ठव तो कहीं सभ्य सुसंस्कृत व्यवहार और आचरण माना जाता है जैसा कि रमाशंकर त्रिपाठी ने लिखा है ''कभी इसे ज्ञान तथा विवेक की कसौटी पर कसा जाता है तो कहीं सांसारिक अनुभव और अनुकूल शब्द के निकर्ष पर कभी इससे बाह्य आकृति का भाव ग्रहण किया जाता है और कभी व्यक्ति के अन्त: प्रवृत्तियों, रुचियों तथा चारित्रिक विशिष्टताओं का। व्यक्तित्व के आंकलन के लिये अति लोकप्रिय समाज प्रचलित सामान्य सूत्र है। व्यक्तित्व तुम्हारा वह प्रभाव है जो अन्य व्यक्तियों पर पड़ता है।[10]

व्यक्तित्व का अंग्रेजी पर्याय– पर्सनाल्टी (Personality) है जिसका केवल शारीरिक

लक्षण न होकर बौद्धिक और सामाजिक स्वत्व निहित है । मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व को अनेक प्रकार से परिभाषित करने का प्रयास किया है । लेवनिन ने व्यक्तित्व को विवेक और विचार की कसौटी पर कसा है । जानलाक ने चातुर्य एवं विवेक और विचार की कसौटी पर कसा है । जानलाक ने चातुर्य एवं विवेक के आधार पर व्यक्तित्व का विश्लेषण किया है । वाटसन ने व्यवहार का पूर्ण अनुमान व्यक्तित्व से किया है । नार्मन कामर्सन जन्म से वयस्क होने तक दूसरे व्यक्तियों से सम्पर्क में आने के कारण सांस्कृतिक गतिविधियों के प्रभाव को व्यक्तित्व स्वीकार किया है । केम्फ ने व्यक्तित्व का आशय मनुष्य के सम्पूर्ण व्यवहार से लिया है । जिसमें व्यवस्थापना की विधियाँ और मानसिक प्रक्रियाओं का समावेश होता है । मार्टन किंग के अनुसार –मनुष्य के सम्पूर्ण जैविक लक्षण मूल प्रवृत्तियों और अर्जित अभिवृत्तियों तथा आदतों की समग्र इकाई को व्यक्तित्व कहा है ।

इस प्रकार व्यक्तित्व के मूल में व्यक्ति को शारीरिक बनावट आचरण के ढंग उसकी अभिरुचियां, अभिवृत्तियाँ, क्षमता, योग्यता, प्रवृत्ति के अतिविशिष्ट सामन्जस तत्व आते हैं अलफोर्ट ने लिखा है कि व्यक्तित्व एक गतिशील संघठन है जो एक विचित्र व्यवस्थापन शक्ति रखना है जिसके द्वारा मनुष्य की मन: शरीर व्यवस्थाओं और उसके पर्यावरण के साथ बराबर तालमेल बैठता रहता है ।''[11]

Personality is the dynamic orgonization within the individual of those psychological system that determine his unique adjustment to his environment.

व्यक्तित्व की संरचना जानने में मनोवैज्ञानिकों ने बहुत परिश्रम किया है । उनके अनुसार व्यक्तित्व इड इगो और सुपर इगो से मिलकर बनता है । सिगमन फ्रायड इस व्यवस्था के जनक है, उनकी मान्यता है कि व्यक्तित्व का सबसे महत्वपूर्ण अंश अचेतन है वहां रहने वाले प्रेरणायें, दुर्दमनीय असभ्य,अनगढ़ क्रूर, स्वार्थ परायण और असधारणताय होती है । इगो उसका दमन करता है जो कुछ साधारणतायें या असाधारण विशिष्टियों या विचत्रतांए में मनुष्य में होती है, इनके संघर्ष से ही व्यक्तित्व का निर्माण होता है । इस प्रकार मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व निर्माण के मूल में शारीरिक गठन, नाड़ी, तंत्र, सामाजिक और सांस्कृतिक प्रभाव, अनुवांशिकता और पर्यावरण, मानसिक दृढ़ता आदि का उल्लेख किया है ।

पात्रों का वर्गीकरण–

भारतीय नाट्यशास्त्र में पात्रों को दो भागों में विभक्त कर इनकी चारित्रिक विशेषताओं का उल्लेख किया है । प्रधान पात्र और गौड़ पात्र जो पात्र कथा में देर तक छाये रहते हैं, उसे

गति यति देते हैं, फल के अधिकारी होते हैं उन्हें प्रधान पात्र कहा जाता है। पुरुषों में ऐसे पात्रों को नायक और स्त्रियों में नायिका कहते हैं पश्चिमी दृष्टि में पात्रों के चरित्र के कुछ सिद्धान्तों के चर्चा की गई है जिसमें मैरल एलवुड होरेस और लाजस एग्री के नाम प्रमुख हैं।

एल्बुड के अनुसार लेखक द्वारा प्रभावपूर्ण पात्रों की सृष्टि के लिये निम्नलिखित छः आधार हैं-

1. चरित्र को जीवन्त बनाकर।
2. पात्र को समाधान के लिये ज्वलंत (महत्वपूर्ण) समस्या दे कर।
3. पात्रों को तार्किक स्थिति में रखकर।
4. पात्रों को वैसे गुण एवं प्रधान चारित्रिक विशेषताओं से सम्पन्न कर जो उनकी चेष्टाओं एवं कार्यों की विश्वसनीयता एवं तर्क संगतता को अवश्यंभावी रूप में प्रभावित करें।
5. कथा के प्रारंभ में ही इस प्रकार के आवेगों और विचारधाराओं की योजनाकर जिनके कारण दर्शक का मस्तिष्क पात्र के साथ घटित घटनाओं को स्वभाविकता के आग्रह स्वरूप ग्रहण करें।
6. पात्र के प्रत्येक कार्य के लिये कारण और अवस्था देकर।[12]

होरेस का औचित्य सिद्धान्त-

मध्य युग के प्रख्यात रोमन साहित्य शास्त्री होरेस ने औचित्य सूत्र को व्यापक औचित्य-सिद्धान्त के रूप में उपतृहित करके पात्रावरण के प्रतिमान के रूप में प्रस्तुत किया है। औचित्य सिद्धान्त की चर्चा करते हुये होरेस बताते हैं कि ''विभिन्न पात्रों की उनकी अवस्था के अनुकूल गुणों से युक्त चित्रित करना चाहिये।'' उदाहरणार्थ- एक बालक का चित्रण करते समय बाल-सुलभ कार्यों एवं मनोवेगों का ध्यान रखना आपेक्षित होगा।[13] the child, who can just talk and keep his fut can just talk and keep his fut with condidence, large to pay his purse, in quick to angen, as quidck to coal. औचित्य सिद्धान्त व्याख्या के क्रम में होरेस ''परम्परा पालन को मुख्य बताते है वे कहते है या तो तुम परम्परा पालन में दृढ़ रहो या इसका ध्यान रखो कि तुम्हारे अविष्कारों में संगति है।[14]

तात्पर्य यह है कि जो व्यक्ति (अनुकार्य) अपनी जिन चारित्रिक विशिष्टताओं के लिये प्रसिद्ध रहा है। उसे उन्हीं चारित्रिक गुणों से युक्त चित्रित करना चाहिये। वहीं होरेस ने रचनाकार को अपनी तरफ से कुछ भी करने की छूट नहीं दी है। वस्तुतः होरेस नूतन उद्भावनाओं की

छूट अवश्य देते हैं पर वही तक जहां तक उससे कला तथा सौष्ठव में वृद्धि हो उसके विपरीत मनचाहे एवं अनौचित्य पूर्ण चित्रण को वे व्यंग्य मानते हैं। क्योंकि यह हास्य एवं विद्रूप उत्पन्न करता है। होरेस का कहना है कि यदि कोई चित्रकार अपने चित्र में घोड़े की गर्दन और आदमी का चित्र बनाये और शेष अंगों पर अनेक रंग बिरंगे पंख लगा दे जिससे एक ऐसा चित्र बन जाये कि ऊर्ध्व भाग तो एक सुन्दर स्त्री का हो और अक्षभाग एक कुरूप मछली का और उसे देखने को आपको आमंत्रित किया जाये, मेरे मित्रों तो क्या आप अपनी हंसी रोक सकेंगे।''[15]

इसके अतिरिक्त होरेस ने दो अन्य बातें भी कही है। उनका मानना है कि पात्रों के मध्य संवाद की योजना करते समय रचनाकार को पात्रों की सामाजिक प्रतिष्ठा, मन:स्थिति वर्ग वर्ण, योनि, निवास स्थान आदि का ध्यान रखना आवश्यक है।[16] दूसरी बात यह है कि काव्य एक सर्वांगपूर्ण कृति है। अत: इसकी रचना भी पूर्ण रूपेण सौष्ठव से युक्त होनी चाहिये। यही बात पात्र-कल्पना एवं चरित्र चित्रण के संबंध में भी लागू होती है। यह मानते हुये कि एक भूल भी किसी कषति के सम्पूर्ण सौष्ठव को नष्ट कर सकती है। होरेस कहते हैं कि अगर मेरी नाक टेढ़ी हो तो कजरारी आंखें और काले केश मेरे किस काम के।'' [17]

कुछ विद्वानों के अनुसार इस संबंध में होरेस ने नया कुछ नहीं जोड़ा क्योंकि औचित्य सिद्धान्त की प्रेरणा उन्हें अरस्तू से मिली। होरेस के विचार अरस्तू के विचार से मिलते हैं।[18] अरस्तू द्वारा उद्भावित और होरेस द्वारा प्रतिपादित औचित्य सिद्धांत इतना प्रभावकारी सिद्ध हुआ कि मध्ययुग से लेकर आधुनिक काल तक किसी न किसी रूप में इस सिद्धान्त का अन्वयन विविध साहित्य शास्त्रियों के विचारों में होता रहा है। मध्ययुग के जेनेटस, डायोमिडीज, जॉन ऑफ एलिसबरी, दान्ते आदि विचारकों काव्यकारों पर होरेस की स्पष्ट छाप है। नव जागरण के युग में आद्योपान्त अरस्तू तथा होरेस का प्रभाव प्रबल तथा प्रशस्त बना रहा। पुनर्जागरण काल में बेल जानसन के विचार उल्लेखनीय है। अपने युग में उन्होंने अरस्तू तथा होरेस के द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों की ही पुन: उद्घोषणा की। 19-20वीं शताब्दी के विलियम आर्चर प्रमृति विद्वान भी औचित्य की सीमा को सहजत: स्वीकारते दिखाई देते हैं।[19]

आयाम- त्रय- सिद्धान्त

प्रसिद्ध समीक्षक लॉजस एग्री के अनुसार पात्रों को त्रि आयामात्मक होना चाहिये।[20] सामान्यत: मानव मात्र में तीन आयाम होते हैं जो शारीरिक, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक

है। इन तीन आयामों के ज्ञान के अभाव में कोई रचनाकार उत्तम चरित्रों की सृष्टि नहीं कर सकता । उदाहरणत: एक बीमार व्यक्ति का स्वास्थ्य के प्रति जो दृष्टिकोण होगा, वह एक स्वस्थ व्यक्ति के दृष्टिकोण से भिन्न होगा । यह मानव का शारीरिक आयाम है । सामाजिक आयाम की चर्चा करते हुये एग्री बताते हैं कि सड़क पर पैदा होने के उपरान्त गंदी गलियों में खेलकर जीवन व्यतीत करने वाले पात्र की प्रतिक्रियायें उस पात्र की प्रतिक्रियाओं से भिन्न होगी जिसने अपनी आंखें भव्य प्रासाद में खोली होंगी । मानव जीवन का मनोवैज्ञानिक आयाम उपर्युक्त दोनों आयामों का परिणाम है ।

शारीरिक आयाम-

(क) योनि (ख) अवस्था (ग) ऊंचाई एवं भार (वजन) (घ) बाल आंखों एवं त्वचा का रंग (ङ) हाव-भाव (च) बाह्याकृति- भारीपन की कमी या अधिकता, सिर का आकार, चेहरा, उंगलियां, स्वच्छता आदि (छ) दोष-जन्मजात चिन्ह, रोग, अनियमितता, कुरुपता (ज) वंश परम्परा प्राप्त गुण- अवशेष ।

सामाजिक आयाम-

(क) वर्ग: श्रमिक, शासक मध्यम

(ख) आजीविका : कार्य के प्रकार, कार्य की अवधि, आय कार्य की शक्ति आदि ।

(ग) शिक्षा- कहां तक किस प्रकार के विद्यालयों से, इच्छित विषय, योग्यता ।

(घ) गृहस्थ जीवन- अभिभावक जीवित अथवा मृत, आय का स्रोत एवं सीमा, अभिभावक विभक्त तो नहीं, अभिभावको की आदत आदि ।

(ङ) धर्म ।

(च) जाति, राष्ट्रीयता

(छ) जाति विरादरी अथवा लोक समुदाय में स्थान-मित्रों क्लबों, क्रीड़ा आदि का नेता ।

(ज) राजनीतिक पहुंच या योग्यता

(झ) मनोविनोद, रुचि, पठित, पुस्तकें, समाचार पत्र, पत्रिकायें आदि ।

मनोवैज्ञानिक आयाम-

(क) यौन-जीवन, नैतिक स्तर (ख) वैयक्तिक महत्वाकांक्षा (ग) नैराष्य, प्रमुख

निराशायें (घ) स्वभाव (कालरिल, इंजीगोंइग पेसी मिस्टिक। (ङ) जीवन के प्रति दृष्टिकोण (च) जटिलतायें प्रेम बाधा अंधविश्वास आदि (छ) वाह्योन्मुखता, अन्तरोन्मुखता, उभयोन्मुखता (ज) योग्यतायें, भाषायें, विभाषायें, ज्ञान विज्ञान, कला कौशल (झ) गुण–कल्पना, निर्भय, रुचि।

एग्री के अनुसार यह चरित्र निर्माण का ढांचा है जिससे रचनाकार को आवश्यक रूप से अभिज्ञ होना चाहिये। और इसी (ढांचे) पर (चरित्र) निर्माण करना चाहिये।[21]

उपर्युक्त आयाम–त्रय का उल्लेख कर एग्री ने लेखकों के लिये स्वस्थ चरित्रों की सृष्टि अपेक्षाकृत आसान कर दी है। हालांकि अमत्सरी भाव से देखें, तो एग्री का विवरण समीचीन एवं युक्ति युक्त ही रहता है। यह आवश्यक नहीं कि किसी पात्र के विषय में लेखक जितना जानता है उतना सब पाठक के समक्ष प्रस्तुत ही कर दे।

He may not choose to tell us he knows many of the facts even of the kind we call obvious may be hidden.[22]

मनोवैज्ञानिकों की पात्र विषय परिकल्पनायें–

शारीरिक प्रकार की भांति 'मनोवैज्ञानिक प्रकार सिद्धान्त का इतिहास भी बहुत पुराना है। मन अथवा अन्त: वृत्तियां हो तो मूलत: मनुष्य की एतावत्ता की निर्धारक है। मन एवं मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयो:।''[23] इसीलिये मन एवं अन्त:करण को समझने का प्रयास स्वभाविक ही है। 19वीं–20वीं शताब्दी में मनोविज्ञान के क्षेत्र में असाधारण मीमांसा और अन्वेषण हुये। फ्रायड के आर्विभाव से मनुष्य को परखने का आधार उसका वाध्याचरण मात्र न रहकर उसका अंसलक्ष्य अन्त:करण बन गया।

अस्तु आधुनिक युग के मनोवैज्ञानिकों में जेम्स[24] ने दो प्रकार के व्यक्ति माने हैं– एक तो कोमल स्वभाव वाले (Thenderminded) दूसरा कड़े स्वभाव वाला (Tufminded) कोमल स्वभाव वाले व्यक्तियों का व्यवहार मुख्यत: अर्मूत और काल्पनिक सिद्धान्तों द्वारा निर्देशित होता है ये लोग बुद्धिवादी, आदर्शवादी, आशावादी और धार्मिक परम्पराओं में विश्वास रखने वाले होते हैं कड़े स्वभाव वाले व्यक्ति अधिकतर वास्तविकतावादी तथा इनके व्यवहार तथ्यों द्वारा निर्देशित होते रहते हैं। ये लोग विचारों की अपेक्षा शारीरिक संवेदनाओं में अधिक रुचि रखते हैं। स्वभावत: ये लोग वस्तुवादी निराशावादी अधार्मिक और सशंयवादी होते हैं।[25]

व्यक्ति प्रकार- अन्तर्मुखी-बहिर्मुखी-

अन्त:वृत्ति को व्यक्ति वर्गीकरण का आधार तो बहुत से विद्वान सिद्धान्त रूप से मानते चले आये किन्तु मनोवैज्ञानिक प्रकारों को तो विधिवत प्रचलित करने का तथा इस संबंध में सर्वाधिक मान्य सिद्धान्त निर्धारित करने का श्रेय युंग को ही है। युंग प्रतिपादित।(26) अन्तर्मुख तथा बर्हिमुख प्रकार से आज साधारणतया सभी परिचित है। जिन व्यक्तियों की रुचि स्वयं की ओर केन्द्रित हो उन्हें युंग ने अन्तर्मुख कहा है और जिन व्यक्तियों की रुचि का अभिस्थापन भौतिक तथा सामाजिक पर्यावरण की ओर होता है उन्हें बर्हिमुख कहा है।

अन्तर्मुख व्यक्ति-

अन्तर्मुखी वृत्ति वाला व्यक्ति प्रमुख रूप से स्वसम्बद्ध समस्याओं पर विचार करता है। उसका सामाजिक जीवन में अपेक्षाकृत कम रुझान होता है। उसके लिये वैयक्तिक (सब्जेक्टिव) बातों का सर्वाधिक महत्व होता है। वह स्वभावत: संकोची और विचारशील होता है। वह प्रात: अकेला रहना पसंद करता है। और सामाजिक भाग–दौड़ से दूर रहना चाहता है। वह अपनी आन्तरिक दुनिया में लीन रहता है और बाहरी संसार को खुली आंखों से देखते हुये भी जैसे उदासीन रहता है। समाज में रहकर मानों समाज से वह बाहर रहता है। प्राकृतिक स्थल या उपादान जैसे सरिता, सागर लतायें, पुष्पवाटिका, उसे चन्द्रमा आदि रमणीय स्थान अन्तर्मुखी व्यक्ति को अधिक आकृष्ट करते हैं। अन्तर्मुखी व्यक्ति चेतन मन में जितना स्वार्थी होता है उतना ही अचेतन मन में नि:स्वार्थी होता है। वह हृदय से परोपकार परायण होता है।

बहिर्मुख व्यक्ति-

बहिर्मुख व्यक्ति का विचार सामग्री बाह्य पदार्थ होते हैं उसके लिये बाह्य और वस्तुगत बातों का सर्वाधिक महत्व होता है ऐसा व्यक्ति चतुर, व्यवसायी एवं विभिन्न परिस्थितियों में कार्य करने की क्षमता रखता है। ऐसा प्राय: समाज सुधारक होता है और मानवीय नेतृत्व भी इसी युंग के वर्ग से संचरित होता है।

युंग के वर्गीकरण में आगे एक और उपवर्गीकरण है।

इसके अनुसार अन्तर्मुख तथा बहिर्मुख दोनों प्रकार के व्यक्तियों को दो–दो उपकोटियां होती हैं। अन्तर्मुख– (1) भाव प्रधान (2) विचार प्रधान

बहिर्मुख– (1) भाव प्रधान (2) विचार प्रधान

नारी पात्रों का वर्गीकरण

भारतीय वाङ्मय में फल के अधिकारी को नायक या नेता कहा गया है और उसकी पत्नी या प्रेयसी नायिका कहलाई हैं। प्राक्तन इस अवधारणा का विकास आधुनिक युग में हुआ। हिन्दी के प्रारंभिक साहित्य में नारियों के एक निश्चत वर्गीय रूप मिलते हैं साथ ही तदनुरूप उनके रूप शील, गुण, चरित्र की अवधारणायें व्यंजित की गई थी जैसे-जैसे देश की सांस्कृतिक धार्मिक आर्थिक क्षेत्रों में वैचारिक विकास हुआ नारी चरित्रों के पुराने प्रतिमान नये रूप में परिवर्तित संसोधित एवं परिवर्धित होते रहे।

आज नारी को न तो पद्मिनी या सामान्य स्व स्वकीया या स्वकीया रूप में चित्रित किया जाता है न ही पूर्वाग्रह अवदानों के निश्चित गुणों के आधार पर इसके चरित्र का विकास किया जाता है। आज नारी के दो रूप दिखाई देते हैं –

(1) प्रमुख पात्र

(2) गौण पात्र

यहां संक्षेप में प्रमुख और गौण पात्र की अवधारण निश्चित कर ले जिससे आगे आलोच्य साहित्यकारों के नारी चरित्र के विकास के स्वरूप को समझने में सरलता होगी।

1. प्रधान स्त्री पात्र

1. कथा की काल सीमा में प्रमुख पात्र देर तक छाये रहते हैं। उनकी भूमिका लम्बी होती है। वे प्रत्यक्ष रूप से अपनी उपस्थिति और अस्तित्व का ज्ञान कराते रहते हैं। इसके विपरीत गौण पात्रों का आगमन कथा में अल्प काल के लिये होता है। कभी-कभी तो उनकी एक झलक मात्र ही दिखलाई देती है। उनकी उपस्थिति एवं अस्तित्व का पूर्ण आभास नहीं हो पाता।

2. कथा के विकास में प्रमुख पात्रों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। कथा का प्रयोजन एवं लक्ष्य इन पात्रों की भूमिका पर ही निर्भर रहता है। अधिकांश घटनायें इन पात्रों से सीधा संबंध रखने वाली होती है। इसीलिये इनकी भूमिकाओं में सघनता और विविधता होती है।

   इसके विपरीत गौण पात्रों की भूमिका अल्पकालीन होती है। इनका कथा की घटनाओं से सीधा संबंध नहीं होता है। प्रसंग विशेष को व्यक्त करने के लिये उनका उपयोग होता है।

3. कथानक के कार्य की पूर्णता प्रमुख पात्रों द्वारा व्यक्त होती है उनका योगदान सक्रिय एवं प्रभाव डालने वाला होता है।

गौण पात्र इसके स्थान पर प्रमुख पात्रों के कार्यों को पूर्ण करने में सहायक होते हैं वे एक प्रकार से पूरक होते ही गौण पात्रों की सहायता से प्रमुख पात्रों की भूमिका अधिक स्पष्ट होती है।[27]

यहां एक बात ध्यान रखने योग्य यह है कि प्रमुख एवं गौण पात्रों का यह वर्गीकरण पात्र द्वारा कथानक में निभाई गई भूमिका के आधार पर किया गया है। प्रमुख पात्र एवं गौण पात्र के व्यक्तित्व किसी एक प्रमुख पात्र अथवा सभी प्रमुख पात्रों के व्यक्तियों से महान हो। किन्तु जब तक कथा विकास के अन्तर्गत उसकी पात्र विशेष की भूमिका महत्वपूर्ण और स्थायी बनकर नहीं आती तब तक उसे केवल व्यक्तित्व के आधार पर प्रमुख पात्र नहीं माना जा सकता।[28] इसी दृष्टि से राम कथा के पात्रों को दो भागों में विभाजित किया गया है।

तात्पर्य यह है कि आधुनिक युग की समस्याओं के अनुरूप जो चरित्र या व्यक्तित्व सटीक बैठते हैं उनका वर्गीकरण उपर्युक्त प्रकार से ही संभव है। क्योंकि समस्याओं के वैभिन्न तथा अन्त:करण की प्रवृत्ति के कारण समान परिस्थिति में आचरणगत भिन्नता निश्चित रूप से दिखाई देती है प्रमुख और गौण पात्रों के आधार पर आलोच्य साहित्यकारों की कथागत नारी पात्रों का मूल्यांकन भी सहज हो जायेगा।

नायिका भेद-

पहले कहा जा चुका है कि फल के अधिकारी को कथा की दृष्टि से प्राक्तन आचार्यों में नायक कहा है और उसकी पत्नी या फल प्राप्त होनेमें सहायिका को नायिका कहा गया है। काम शास्त्र, काव्य शास्त्र में नायिका भेद पर अतिविस्तीर्ण चित्रांकन है जिसका उल्लेख यहां समीचीन प्रतीत नहीं होता क्योंकि आज न तो नायिका भेद के अनुरूप चित्रण कर सामान्तों, सम्राटों को प्रसन्न कर धन प्राप्त करने की परिस्थिति है, न ही नायिकाओं के वह भेद स्वरूप नहीं दिखाई देते क्योंकि आर्थिक, सामाजिक जटिलता के कारण मात्र विलास की पुत्तलिका बनना स्त्रियों का नही है। फिर भी यत्रतत्र काम सौन्दर्य एवं प्रेम के चित्रण में कहीं कहीं नायिकाओं की अस्पष्ट झलक दिखाई देती है। इसलिये शोध कर्त्री विहंगाअवलोकन के रूप में नायिका भेद का संक्षिप्त परिचय दे रही है।

काम शास्त्र (वात्सायन) और आचार्य भरत ने नायिकाओं के चार भेद किये थे जिसमें देह-यष्टि, आर्गिक, समानुपातिक संरचना काम की कृति उनकी अभिरुचि और अन्त: प्रवृत्ति

की दृष्टि से वर्गीकरण किये गये हैं। आचार्य भरत ने उत्तमा, मध्यमा आद्युना दिव्या गणिका वासक सज्जा धीरा, ललिता एवं रामचन्द्र ने कुलजा, दिव्या, पण्यकामिनी ऐसी नायिकों के उल्लेख किये हैं। आगे चलकर धनंजय एवं भानुदत्त ने इनका वैज्ञानिक वर्गीकरण किया है। जिसमें नायिकाओं के तीन भेद कहे गये हैं।[29]

1. स्वकीया परकीया सामान्या-

स्वकीया को उत्तम चरित्र पतिव्रता पति के प्रति अपने व्यवहार में कुशला कहा गया है जिसके मुग्धा, मध्या, प्रगल्भा तीन भेद दशरुपक कार ने बताया है भानुदत्त ने अज्ञात यौवना ज्ञात यौवना मध्यानायिका के यौवनावति, कामवति, मोहान्त सुरतक्षया या धीरा, अधीरा, धीरा–धीरा, प्रगल्भा नायिका के भेद बताया है। [30]

परकीया नायिका का संबंध गुप्तरूप से पर पुरुष से संबंध स्थापित करने वाली नायिका माना गया है। विवाह से पूर्व पारिवारिक या सामाजिक मर्यादा की अवहेलना कर प्रच्छन्न रूप से अन्य पुरुष के प्रति आसक्त अथवा विवाहोपरान्त भी उसी पुरुष से अनुराग रखने वाली नायिका परकीया कहलाती है जिसके ऊहा अर्नुवहा जैसे दशादिक भेद हिन्दी के रीति काल में वर्णित है।

सामान्या नारी को गणिका या पण्यकामिनी कहा जाता है जो तरुणी सबके लिये सर्वथा सहज सुलभ होती है पूर्णयौवना स्वायत, स्वछन्द होती है उसे सामान्या कहा जाता है। पारिभाषिक शब्दावली में यह गणिका या वेश्या कहलाती है।

प्रणय स्थिति जन्य भेद के रूप में स्वाधीन पतिका वासक सज्ञा खण्डिता, अभिसारिका प्रवस्य पतिका आगत पतिका जैसे भेद भी नायिका भेद में अर्न्त मुक्त होते है भरत ने नारी की अंग रचना मन: सौष्ठव, आकर्षक मसृण रूप विन्यास और नारी प्रकृति का विवेचन किया है। इसी परिप्रेक्ष्य में साहित्य दर्पण कार आचार्य विश्वनाथ के द्वारा उल्लिखित नारियों के आंगिक विकार तारूण्य गत मुखरता को अलंकार कहकर हाव भाव, हेला, शोभा, कान्ति दीप्ति माधुर्य, लीला, विलास जैसे लगभग 27 अलंकारों का उल्लेख है।

नायक की तरह जैसे प्रतिनायक का चित्रण भारतीय साहित्य में हुआ है उसी प्रकार प्रति नायिका सहनायिका का वर्गीकरण भी मिलता है वस्तुत: नायिका प्रतिनायिका जैसे वर्गीकरण के पीछे काम विलास की विभिन्न अवस्थाओं का शील अश्लील चित्रण करना कवियों का मुख्य लक्षण था। जो वर्गीकरण आज अप्रासंगिक हो गये हैं। इसका अर्थ यही है कि आज नारी पात्रों में वह सौन्दर्य या काम अथवा रति विलास की क्रियाओं के चित्रण का अभाव

है अंतर यह हो गया है कि पहले स्त्रियों का मात्र इतना ही काम था, जबकि आज नारी की नई अवधारणा विकसित हो गई है भले ही उसमें प्राचीन परिस्थिति जन्य काम विलास की चेष्टायें न मिलती हो किन्तु आज उसके नये-नये रूप दिखाई देने लगे हैं। मनोवैज्ञानिक धारणाओं के विकास के कारण साहित्यकार ने नारियों के अन्त: बाह्य सौन्दर्य काम एवं चरित्र के चित्रण की नई प्रणालियों को विकसित कर लिया है अत: यहां आधुनिक नारी की नवीन अवधारणा का स्वरूप संक्षिप्त में लिखना अप्रासांगिक न होगा।

3. नारी चरित्र की आधुनिक अवधारणायें -

अपारे काव्य संसारे कवि रेक : प्रजापति- में आचार्य ने इस दृश्यमान संसार के नियामक निर्माता को प्रजापति कहा है उसी प्रकार साहित्यकार निर्मित रचना भी एक जीवन्त संसार होती है जिसमें तन्निविष्ट पात्र इस जगत के समान रूप रंग आकार प्रकार सामाजिक धार्मिक आर्थिक सांस्कृतिक विभिन्नता लिये होते हैं उसी प्रकार साहित्यिक रचना के पात्र पृष्ठों में अंकित शब्दों से उभर कर एक नये संसार की अनुभूति कराते हैं दोनों रचनाओं में आधा हिस्सा नारियां होती है जिनका समाज में अप्रतिम स्थान है।

भारतीय संस्कृति नारी को गौरवपूर्ण महत्तम उच्च स्थान पर अभिसिक्त करती है। कहा गया है -यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता - उन्होंने नारी के दायित्व और महत्व का मूल्यांकन कर जहां एक ओर उसमें बाह्त्य सौन्दर्य की उच्चतम प्रतिकृति बताया है वही दूसरी ओर त्याग ममता सौन्दर्य वात्सल्य माधुर्य जैसे मानवीय गुणों की श्रेष्ठ स्थापना नारी में की है। समाज के अनुरूप साहित्य में नारियों के महत्व का मूल्यांकन हुआ है। पुरुष को जन्म देने वाली नारी वत्सला धात्री जननी प्रेयसी पत्नी सहायिका और मंत्रणा देने वाली आदि विभिन्न रूपों में उसकी चर्चा एवं उसके उदाहरण विश्व के प्राचीनतम साहित्य में सर्वत्र मिलते हैं। धीरे-धीरे अर्थ एवं काम की महत्ता ने नारी के एक नये रूप का उद्घाटन किया और यही से नारी शोषण की करूण गाथा प्रारंभ हो गई। उसे वंशधर या वासना की पुतली चरण दासी और असूर्यस्या जैसे रूपों की अधिकल्पना कर उसके सतीत्व पर प्रश्न चिन्ह लगाने का अधिकार पुरुष को मिल गया। यह नारी चरित्र के स्वरूप विकास का द्वितीय चरण था।

मध्यकालीक सामान्तयुगीन असभ्य बर्बर जातियों में नारियों को गुलाम बनाकर बेचा जाने लगा। अनेक क्रूरता पूर्ण यातनाओं से उसे प्रताड़ित किया जाने लगा। वह वस्तु मात्र हो गई। उसके शरीर का क्रय विक्रय होने लगा और गर्मगोश्त के सौदागर नये नये यातनाओं के रूपों को आविष्कृत कर नारियों का इतना शोषण किया कि नारी तथाकथित पति के मृत्यु

पर उसके साथ जीवित ही जला दी जाने लगी। दहेज के नाम पर उसकी बलिबेदी पर उपसर्ग होना अत्याचारों की मौन स्वीकृति, सतीत्व के श्रेष्ठ लक्षणों में गिना जाने लगा, और नारी को सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक अधिकारों से वंचित कर उस पर इतने क्रूरतम अत्याचार हुये जिसकी करुण गाथा लिखना ही संभव नहीं है।

धीरे–धीरे युग बदला परिस्थितियां बदली नारियों की प्रकृति बदली, मानवाधिकारों की चर्चा होने लगी और पाश्चात्य जगत में नारी मुक्ति के अनेक आंदोलन चले। यद्यपि यह आंदोलन शिक्षा विवाह सामाजिक और आर्थिक प्रतिष्ठा को लेकर थे। और धीरे–धीरे आधुनिक भौतिकता वादी युग में नारी को पुरुष के समान माना गया, अथवा अपनी अदम्य जिजिविषा के कारण नारी ने स्वत: पुरुष के कंधा से कंधा मिलाकर अपनी अस्मिता की पहचान बनाने का अथक प्रयास किया पश्चिम में आज नारी पूर्ण रूप से स्वतंत्र है फिर भी नारी मुक्ति के आंदोलन वहां आज भी चल रहे हैं। जिसका एकमात्र लक्ष्य काम जन्य या उन्मुक्त स्वेराचार अथवा स्वछंद यौन संबंधों को लेकर यह विचार विमर्श होता है जबकि भारत वर्ष में नारी के स्वत्व की पहचान का अर्थ ही कुछ और है– बाल विवाह, अशिक्षा, कुपोषण उसे हीन समझना नारियों का गिरता अनुपात दहेज प्रथा, आर्थिक स्वतंत्रता जैसे अधिकारों को प्राप्त करना यहां आज भी प्रासंगिक है।

स्वतंत्र भारत में नारियों पर हुये इस अत्याचार की झलक आज भी गांव में देखने को मिल जाती है। यद्यपि शिक्षा के कारण नारियों ने अपनी पहचान बनाई है। रचनागत पात्र के रूप मे उसका प्रतिबिम्बन साहित्य में दिखाई पड़ता है।

आधुनिक युग में नारी लेखन पर बहुत विवाद हुआ, किन्तु नारियों का लेखिका के रूप में एक ऐसा युग आया जिसकी पक्षधरता में नारी जीवन की विसंगतियों बिडम्बनाओं और त्रासदी का विशद चित्रण किया गया विभिन्न विचार मंचों से आधुनिक नारी गत प्राक्तन संस्कारों के विरुद्ध उसकी पहचान के अनेक केन्द्र बिन्दु और कोण तलाशें गये। कहना नहीं होगा कि काव्य की अपेक्षा उपन्यास कहानियों में आधुनिक नारी के नवीन रुपों का चित्रांकन अधिक मुखरता से हुआ है। नारी अस्मिता अपनी जिजीविषा और पहचान के लिये अब पुरुष की मुखापेक्षी नहीं रही। उसे आर्थिक स्वतंत्रता मिलते ही दैहिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु वस्त्र प्रसाधन सामग्री तथा अपनी निजी आवश्यकता के लिये वह स्वावलम्बी हो गई। इस प्रकार आर्थिक स्वतंत्रता ने नारी को एक नये रूप में परिवर्तित किया। संख्या भले ही सीमित हो किन्तु नारी स्वतंत्रता के अधुनातन रूप तथा कथा कहानियों में चित्रित किये जाने लगे। प्रेम, विवाह, विवाह पूर्व एवं विवाहेत्तर संबंध की स्वीकृति से भले ही पुरुष के अहम को चोट

पहुंचती हो किन्तु नारी के इस रूप का चित्रण भी कथाकारों ने बड़ी सजगता से किया है। यद्यपि उपभोक्तावादी संस्कृति के कारण नारी को वस्तु मानकर उसके सौन्दर्य का उन्मुक्त व्यापार कालादर्शो की नई संस्कृति भले ही उसे आधुनिक या अत्याधुनिक बना दे किन्तु प्राक्तन संस्कारों से मुक्त होना नारी के लिये बहुत कठिन है।

निष्कर्ष यह है कि भारतीय समाज पुरुष सत्तात्मक है। नारी पर वह अपना अधिकार बनाये रखना चाहता है। यद्यपि शिक्षा, औद्योगिकीकरण बाजारवाद में नारी शोषण के नये आयाम उद्घाटित किये गये हैं और इसके अनेक कुपरिणाम भी आने लगे हैं। वस्तुत; पश्चिम में आज नारी स्वातंत्र का नारी मुक्ति आंदोलन का एकमात्र अर्थ है यौन स्वतंत्रता। जबकि भारत वर्ष में नारी को सामाजिक, आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ बनने की प्रेरणा होनी की अवधारणा ही आधुनिक नारी जागरण का रूप कहलाता है। कमलेश्वर एवं राजेन्द्र यादव जी ने अपने नारी पात्रों को इन्हीं विविध रूपों में देखकर उसकी विडम्बना रविद्रूपता जिजीविषा एवं संघर्ष शीलता का चित्रण प्रत्यच्छ या मनोवैज्ञानिक प्रणाली से यथार्थ के धरातल पर किया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. शब्द कल्पद्रुम तृतीय भाग – पृ. 108–109।
2. एस्पेक्ट ऑफ दा नावेल – इयम फास्टर – पृ. 44।
3. ए स्टडी ऑफ सोफोक्लीन ड्रामा – जी एम किर्कउड़ पृ. 99।
4. अरस्तु थ्योरी ऑफ पोएट्री एण्ड फाइन आर्ट – एस.एच. बूथर – 340।
5. न्यू इण्टरनेशनल डिक्शनरी ऑफ इग्लिस लैंग्वेज पृ. –46 ।
6. गीता (श्रभ मद भागवत्) 13 वॉ अध्याय।
7. प्लाट और कलेक्टर – हाकिंग – पृ. 169।
8. सेक्सपिरियन ट्रेचडी – ए.सी. ब्रेडले पृ. – 73
9. राइटिंग फार यंग पीपुल – रोवेन्स पृ. 11
10. साहित्य में पात्र प्रतिमान – रमाशंकर त्रिपाठी – पृ. 21
11. पर्सनाल्टी ए. साइक्लाजिकल इंटर पीटेशन – अल्फोर्ट पृ. 48
12. करेक्टर्स मेक योर स्टोरी – मैरेन एतबुड – पृ. 115
13. दा कम्पलीट वर्क ऑफ होरेस – होरेस – पृ. 402
14. पाश्चात्य काव्यशास्त्र की परम्परा – होरेस, अनुवाद (सम्पादक डॉ सावित्री सिन्हा) पृ. 64
15. वही पृ. 61
16. वही पृ. 64
17. वही पृ. 62
18. प्लेमेकिंग – विलियम – आर्चर, पृ. 29–30
19. वही पृ. 29–30
20. दा आर्ट ऑफ ड्रेमेटिक राइटिंग – लॉजस एग्री पृ. 33
21. वही पृ. 33–37
22. एक्सपेक्टस ऑफ नावेल – इयम फास्टर, पृ. 61
23. श्रीमद् भगवत गीता
24. प्रिंसिपल ऑफ साइक्लार्जी – एनवाई – 1904 विलियम जेम्स
25. असामान्य मनोवैज्ञानिक – डत्तॅ. रामकुमार राय पृ. 111
26. द साइक्लॉजी ऑफ इडेक्शन (एच.जी.)

27. मानस के गौण पात्र – श्री निवास गुप्ता के आधार पर (बैंकटेश्वर विश्व विद्यालय तिरूपति)

28. वही

29. दश रूपक – धन्ञ्जय 2/15 (रसमंजरी – भानुदत्त) पृ. 7–8

30. नायिका के भेद (साहित्य दर्पण) 3/64

अध्याय-3

- हिन्दी का कथा एवं उपन्यास साहित्य का स्वरूप एवं विकास
- कमलेश्वर एवं राजेन्द्र यादव का कथा साहित्य

हिन्दी कहानियों का उद्‌भव एवं विकास

मानव जिज्ञासा प्रवृत्ति का प्राणी हैं। यह प्रवृत्ति उसे प्रकृति से प्राप्त हुई है। कल–कल छल–छल बहती नदियां, झरने–गुपचुप कुछ कथा कहते रहस्यमयी सितारे लयमय झूमते वृक्ष से मानव ने अपनी जिज्ञासु प्रवृत्ति को शांत किया। विचार विनिमय या सम्प्रेषण के साथ ही वह आदिकाल से किसी वस्तु का वर्णन कोई गाथा कोई आश्चर्य पूर्ण घटना का उल्लेख करता आया है उसकी यह प्रवृत्ति कथा साहित्य का मूल स्रोत रहे हैं। अवकाश के क्षणों में आत्म परमात्म चिंतन के साथ जिज्ञास प्रवृत्ति का रूपान्तरण कथा के रूप में इस प्रकार होने लगा। इसके संक्षिप्त सूत्र वेदों में दिखाई पड़ते हैं। कालान्तर में अनुभवों से परिवेश बना। ज्ञान धर्म, नीति, विश्वास आदि तत्वों की पुष्टि हेतु कथाओं का सृजन स्वत: होता गया –रामायण, महाभारत, पुराण, साहित्य जातक साहित्य इत्यादि में कथा के आदिम सूत्र खोजे जा सकते हैं।

हिन्दी में कहानी विधा ने संस्कृत के गुणाढ्‌य कृत वृहद कथा मण्डली दश कुमार, चरित, वेताल पच्चीसी एवं फारसी के सहस्त्र रजनी कथा, छबीली भटियारी, गुले कबावली जैसे संग्रहों से कथाजन्य कुतूहलता, नाटकीयता, प्रेम, रोमांस आदि लिया, तो शैली शिल्प पाश्चात्य प्रभाव की देन है। हिन्दी के कथा विकास को हम मुख्य रूप से प्रेमचन्द पूर्व, प्रेमचन्द और उनकी समसामायिक कहानी प्रेम चन्दोत्तर कहानी नयी कहानी, अकहानी, समकालीन, सचेतन कहानी जैसे धाराओं में विभक्त कर सकते हैं।

प्रेमचन्द पूर्व कहानी –

इस काल में हिन्दी कहानी अपना स्वरूप ग्रहण कर रही थी। उसकी शिल्प विधि का विकास हो रहा था और नये–नये विषयों पर कहानियां लिखी जा रही थी। प्रेमचन्द के पूर्व रानी केतकी की कहानी 'सिहांसन बत्तीसी' 'बेताल पच्चीसी' 'नासिकेतोपाख्यान' 'राजा भोज का सपना' 'इन्दुमती' 'दुलाई वाली' 'प्लेग की चुड़ैल' प्रमुख कहानियां हैं। इस युग की कहानियों में आकस्मिकता, वर्णनात्मकता, चरित्रतत्व का आभाव था। सरस्स्ती इन्दु हिन्दी गल्प माला इस युग की प्रमुख पत्रिकायें थी। जिनका कथा साहित्य के विकास में अप्रतिम योगदान रहा है।

इस युग की कहानियों के संदर्भ में हिन्दी साहित्य में लिखा है –''इस समय की कहानियों में अनेक भाव प्रतिक्रियायें जगाने वाली घटनाओं का विधान हैं पर इनका कथानक इतना सपाट है कि उसे बड़ी सरलता से इसी कथा–सूत्र के रूप में नि:शेष किया जा सकता है। घटनाओं के बीच का संबंध जो आदर्श कथानक कहला सकता है इन कहानी की अति स्थूल

वर्णनात्मकता में खो जाता है । यहां तक कि इन कहानियों के कुछ मार्मिक स्थल अपने अर्थवक्ता खो देते हैं ।''(1)

सारांश यह है कि प्रेमचन्द पूर्व कहानियों में, कौतूहल व साहसिक प्रसंग तो मिलते हैं किन्तु इनमें मानव स्वभावगत चारित्रिक वैशिष्ट्य का नितान्त अभाव है । यहां अतिशय वीर, त्यागी, दानी उदार या तो उच्चकोटि के आदर्श पात्र है या फिर बुरे या निम्न प्रवृत्ति के । इन कहानियों में उद्भावित वातावरण अर्थहीन है, जिसका उद्देश्य विवरण मात्र प्रस्तुत करना है, साथ ही ये कहानियाँ मात्र मनोरंजन के लिये (किस्सागोई पद्धति) पर लिखी गई है ।

प्रेमचन्द युग-

प्रेमचन्द युग की हिन्दी कहानी पहली बार मानव व्यवहार को और स्वभाव को अधिक समीप से चित्रित करने का प्रयत्न करती है और नये सहानुभूति पूर्ण विवेक से आदर्श एवं वास्तविकता के द्वन्द्व को परिभाषित करना चाहती है । प्रेमचन्द युग हमारे देश के राजनीतिक एवं सामाजिक उथल-पुथल का युग है । प्रेमचन्द जब जीवन के यथार्थ के स्वभाविक चित्रण को आख्यायिका का ध्येय बताते हैं, तो उनकी दृष्टि देश की परिस्थिति पर असंदिग्ध रूप से रहती है ।

प्रेमचन्द हिन्दी के युग प्रर्वतक कहानीकार माने जाते हैं । इनका स्थान हिन्दी कहानीकारों में सर्वोपरि है । उनकी रचनात्मक चेतना कजा की कहानी में अपनी ही बात बच्चे के मुंहसे कहलाते हुये उन्होंने संकेत किया कि उनकी अकाल प्रौढ़ता परिस्थितियों के तीखे संघर्ष के मुंह से ही परिणाम थी ।

प्रेमचन्द युग की प्रमुख कहानियों में 'सप्तसरोज' 'प्रेम पचीसी' 'सौत' 'पंच परमेश्वर' 'नमक का दरोगा' 'बड़े घर की बेटी' 'रानी' 'सारन्धा' 'शतरंज के खिलाड़ी' 'ठाकुर का कुआं' 'ईदगाह लाटरी' 'पूस की रात' 'खाली बोतल' 'अंधेरी रात' 'मैना' 'हारजीत' 'पिकनिक' 'झूठमूठ' 'अपना-अपना भाग्य' और 'पाजेब' 'एक रात' मास्टर जी प्रमुख कहानियां हैं ।

इस युग की कहानियों में कथा परम्परा की रूढ़ि अतिरंजना और कोरी भावुकता से मुक्ति दिलाने का प्रयत्न किया गया है । इस युग की कहानियों में अतिशय वर्णनात्मक, घटना का आकर्षण, चरित्रों की वर्गों में सीमित होने की नियति, लक्ष्यात्मक आदर्शवाद के दर्शन होते है । इस युग की हिन्दी कहानियों के संदर्भ में हिन्दी साहित्य में लिखा है, वर्तमान आख्यायिका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और जीवन के यथार्थ और स्वभाविक चित्रण को अपना

ध्येय समझती हैं। उसमें कल्पना की मात्रा कम और अनुभूतियां की ही मात्रा अधिक होती है इतना ही नहीं बल्कि अनुभूतियां रचनाशील भावना से अनुरंजित होकर कहानी बन जाती हैं।

निष्कर्षत: प्रेमचन्द युग की कहानियों की महत्वपूर्ण विशेषताओं मे एक विशेषता यह है कि इस युग की कहानी साधारण मनुष्य की साधारण आकांक्षाओं की कहानी हैं। रानी केतकी की कहानी से हल्कू और मधुवा की कहानी तक का विकास हिन्दी कहानी का महत्वपूर्ण ऐतिहासिक विकास है। प्रेमचन्द ने मानसरोवर पहले भाग की भूमिका में इसयुग की कहानी की विशेषताओं का उल्लेख करते हुये उचित ही संकेत किया है कि जमीन उतनी लम्बी चौड़ी नहीं है, पर कहानी जीवन के अधिकाधिक निकट आ गई है। कहानी का आधार अब घटना नहीं रह गयी है उसका आधार मनोविज्ञान की अनुभूति है। आगामी विकास की कहानी में यदि मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण की प्रधानता है तो इसकी प्रेरणा इस युग में ही लक्षित होती हैं। सब मिलाकर प्रेमचन्द युग में चरित्र प्रधान, वातावरण प्रधान, कार्य और कथानक प्रधान, प्रतीक प्रधान, इतिहास प्रधान प्रकृति वादी संलापात्मक आदि विभिन्न शैलियों की कहानियां बहुत बड़ी संख्या में लिखी गई और वृहत्तर सामाजिक संवेदना को अभिव्यक्ति देने का प्रयत्न किया गया।

प्रेमचन्दोत्तर युग -

प्रेमचन्दोत्तर युग की रचना प्रक्रिया एक जटिल प्रक्रिया है। जिसके निर्माण में दर्शन, सामयिक संदर्भ मनोविज्ञान, समाज शास्त्र, राजनीति विज्ञान आदि बोध के विभिन्न पक्षों का महत्वपूर्ण योग रहा है। जीवन के गूढ़ रहस्यमय सत्य की अभिव्यक्ति करने वाले इस युग के कहानीकारों के लिये सत्य की खोज की ही सार्थकता है। समाधान इसका इष्ट नहीं हैं। प्रेम चन्दोत्तर कहानी किसी एक दिशा की ओर अग्रसर नहीं हुई अपितु विविध दिशाओं में उसका विकास हुआ। कहानी इस काल की केन्द्रीय विधा रही है। अत: उसने जीवन और जगत के विविध पक्षों को अपनी परिधि में समेटने का प्रयास किया इस काल में एक ओर तो प्रगतिवादी कहानियां लिखी, तो दूसरी ओर मनोविश्लेषणात्मक कहानीकारों ने ऐसे विषयों पर कहानियां लिखी जिनमें व्यक्ति मन की आन्तरिक परतों को खोलकर देखा गया था।

प्रगतिवादी कथाकारों में सर्वप्रमुख हैं- यशपाल- जिन्होंने मार्क्सवादी चेतना से अनुप्राणित होकर अनेक कहानियों की रचना की। वर्ग संघर्ष, शोषण, सामाजिक एवं भौतिक रुढ़ियों पर आक्रोश उनकी कहानियों के विषय रहे हैं।

प्रेम चन्दोत्तर युग की प्रमुख कहानीकारों में चन्द्रगुप्त विद्यालकार, रामप्रसाद पहाड़ी देवीदयाल चतुर्वेदी भगवती चरण वर्मा, राम वृक्ष बेनीपुरी आदि है। तथा इस युग की प्रमुख कहानियाँ– 'सफर' 'अधूरा' 'टेसू के फूल' 'मधु सूदन' 'संगीतों का साया' 'बिखरी कलियां' आदि हैं।

उक्त विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रेमचन्दोत्तर कथाकारों में मनोविश्लेषण प्रवृत्ति की प्रधानता है। वर्ग संघर्ष एवं यथार्थवाद की ओर रुझान भी कुछ कहानीकारों का रहा है तथा उन्होंने प्रतीकात्मकता एवं सांकेतिकता का सहारा भी लिया है। इस काल में प्रेम, रोमांस एवं यौन समस्याओं को भी कहानीकारों ने अपनी विषय वस्तु बनाया है। युगीन परिवेश को पूर्णत: व्यक्त करने में इस काल की कहानी ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। कहानी के शिल्प ने भी इस काल में उत्तरोत्तर प्रगति की है। अब कहानी में घटना विरलता के साथ–साथ व्यक्ति चरित्र पर विशेष बल दिया जाता है।

नई कहानी–

सन् 1950 के बाद की कहानी विषय और शिल्प दोनों ही दृष्टियों से पूर्ववर्ती कहानी से भिन्न हैं। पुरानी कहानी जहाँ पूर्वाग्रह से मुक्त है। आज की कहानी का स्वरूप निर्धारित करते समय नि:संकोच कहा जा सकता है, कि नई कहानी नई कविता की भांति उद्भूत नहीं हुई हैं। नई कहानी से पूर्व नई कविता विशिष्ट प्रवृत्ति के रूप में स्थान प्राप्त कर चुकी थी। सभी बंधनों से मुक्त नई कविता विशिष्ट प्रवृत्ति के रूप में स्थान प्राप्तकर चुकी थी। सभी बंधनों से मुक्त नई कविता अपने रूप में दूर से झलक उठती थी। पुराने कहानीकार ने अपनी आंखों पर समाजवादी नैतिकतावादी रुमानी या मनोविश्लेषणवादी चश्मा लगाकर जीवन को देखा, किन्तु नये कहानीकार ने सभी पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर जीवन को यथार्थ रूप में देखने समझने का प्रयास किया। उसकी कहानी भोगे हुये यथार्थ से जुड़ी है, इसलिये वह अधिक प्रमाणिक है।

हिन्दी में नई कहानी के आंदोलन का नेतृत्व आरंभ में कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव तथा मोहन राकेश ने उठाया और भीष्म साहनी, अमरकांत, रमेश वक्षी, मार्कण्डेय, मन्नु भण्डारी, राजेन्द्र अवस्थी, दूधनाथ आदि कहानीकारों ने इसे नया बनाया हैं।

नयी कहानी आंदोलन की प्रतिष्ठा में कमलेश्वर का सर्वाधिक महत्व है। कमलेश्वर ने नयी कहानी के विषय में अपना मत व्यक्त करते हुये लिखा है– पुरानी और नई कहानी के बीच बदलाव का बिन्दु है – नई वैचारिक दृष्टि।''

नई कहानी में नगर बोध की प्रवृत्ति प्रमुखता से व्यक्त हुई है। आज के नगरीय जीवन में पायी जाने वाली सतही सहानुभूति, आन्तरिक ईर्ष्या, स्वार्थपरता, जीवन की कृत्रिमता आदि की अभिव्यक्ति कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, अमरकान्त की कहानियों में देखी जा सकती है। नई कहानी में आधुनिक बोध कई अर्थों में विद्यमान है। मध्यकालीन मूल्यों के ह्रास तथा नवीन वैज्ञानिक सोच ने आज की कहानी का भावन किया है। नगरीय जीवन की वास्तविक स्थितियों का चित्रण तो इन कहानियों में है ही साथ ही आधुनिक बोध से उत्पन्न अकेलेपन एवं रिक्तता की अनुभूति, युगीसंक्रमण एवं तनावों को भी उसमें अभिव्यक्त किया गया है।

नई कहानी को समृद्ध करने में हिन्दी कथा लेखिकाओं का भी महत्वपूर्ण स्थान है। ऊषा प्रियंवदा, मन्नू भण्डारी कृष्णा सोवती, शिवानी, मेहरुन्निसा परवेज एवं रजनी पनिकर जैसी कहानी लेखिकाओं ने पति–पत्नी एवं नारी पुरुष संबंधों को अपनी कहानी में प्रमुखता से अभिव्यक्त किया है जिनकी जीती जागती रचनायें – ''मैं हार गई, त्रिशुंक'' तीन निगाहों की एक तस्वीर आदि।

नई कहानी हिन्दी कथा विकास यात्रा की एक उपलब्धि है। यद्यपि इस कहानी पर मूल्यहीनता का आरोप लगाया जाता है, क्योंकि जीवन के शाश्वत मूल्य जैसी किसी चीज में इनका कोई विश्वास नहीं है, तथापि हम इसे इस आरोप से बरी कर सकते हैं। नई कहानी में मूल्यहीनता न होकर मूल्यों का परिवर्तन है। नई कहानी किसी एक क्षण या एक स्थिति या एक संवेदना को व्यक्त करने वाली कहानी हैं। मानव की दृष्टि बदलने के साथ ही नई कहानी का शिल्प भी बदला है। नयी कहानी का विषय क्षेत्र सीमित है– ऐसा आरोप इस पर लगाया गया है तथा प्रयोगधर्मिता ने भी इसके स्वरूप को विकृत किया है – इस धारणा को भी नई कहानी से जोड़ा गया है केवल रचना चमत्कार एवं बुद्धि वैभव के बल पर प्रेमचन्द नहीं बना जा सकता। इस तथ्य को नये कहानीकार यदि ध्यान में रखें और जीवन की गहन वास्तविक अनुभूति से जुड़े तो वे अधिक प्रभावशाली रचना को जन्म दे सकेंगे।

हिन्दी कहानी लोकप्रियता के चरम शिखर पर हैं। अत: यह आशा की जा सकती है कि कहानी का भविष्य भी उज्ज्वल है। समकालीन कहानीकार अपने परिवेश के प्रति सजग है। वे प्रमुख घटनाओं के प्रति अपनी रचनात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। बदलते हुये परिवेश में जिन नवीन मूल्यों का विकास हो रहा है, उसे नया कहानीकार आत्मसात कर रहा है। कमलेश्वर की कहानी तलाश इस बदलते हुये जीवन मूल्य की सार्थक तलाश है। आज से पच्चीस तीस वर्ष पहले शायद ही कोई युवती अपनी विधवा मां को किसी अन्य पुरुष से संबंध बनाने के औचित्य को उस शालीनता एवं शिष्टता से अंगीकार करती, जिस शिष्टता से तलाश

की सुमी अपनी माँ की आवश्यकता को अनुभव कर घर से दूर हास्टल में रहने चली जाती है। नयी कहानी में जीवन के हर क्षेत्र से जुड़ी समस्या कहानी का विषय बन रही हैं एवं जीवन के अनुभूत सत्य को साहित्यिक रूप प्रदान किया गया है।

सचेतन कहानी -

सचेतन कहानी को वैचारिक भूमि पर लाने के लिए महीप सिंह के संपादन में ''आधार' का सचेतन कहानी विशेषांक 1964 में निकाला गया। महीप सिंह सचेतन कोएक दृष्टि बताते है जिसमें जीवन का जीना और जानकारी दोनों ही सम्मिलित है।

''नई कहानी '' एक ऐसे आंदोलन की स्थिति में अपना अस्तित्व लेकर आयी जिसने सीधे सीधे अपनी बात को सर्वोपरि रखने का दावा किया। वह किस परिमाण में सार्थक था यह यहां अभिष्ट नहीं है। कुछ लेखकों ने नयी कहानी का मूल्य हीनता का विरोध करके सचेतन कहानी नाम से संगठित और योजनाबद्ध सचेतन कहानी का आंदोलन ऐसा ही आंदोलन था। इसमें आनंद प्रकाश जैन और महीप सिंह अग्रणी थे। राजीव सक्सेना, श्याम परमार, मनहर चौहान, योगेश गुप्त, वेदराही, सुखवीर, जगदीश चतुर्वेदी, धमेन्द्र गुप्त, हहयेश तथा हिमांशु जोशी और अन्य उल्लेखनीय कहानीकार है। इनके अनुसार नई कहानियों में व्यक्तिगत कुंठा, पराजय, सेक्स की विक्रतियों की अभिव्यक्ति अपेक्षाकृत अधिक है जबकि जीवन का सत्य केवल यही नहीं है।

सचेतन कहानी एक सक्रिय भाव बोध हैं। जिसमें न तो पश्चिम की भोड़ी नकल है, न उससे प्रेरित नकली मानसिकता है। जिससे नितांत अकेलेपन और दिखावटी घुटन का प्रदर्शन होता है। यह समसामयिकता और चैतन्य साहित्यकार का मनुष्य में सामाजिक चेतना का पुन: प्रतिष्ठा का आंदोलन था। सचेतन कहानी आंदोलन कहानी के 'नई' के नशे के प्रति सावधान करना ही था जिससे एक तीव्र विकास से गुजरती परम्परा संज्ञा शून्य न हो जाये।

वास्तव में सचेतन कहानी का उदय फिर भी एक चेतना को, उद्देश्य को, लेकर हुआ था, परन्तु अकहानी आंदोलन एक फैशन के रूप में सामने आया। फैशन कभी टिकाऊ नहीं होता।

समान्तर कहानी-

10 वर्षों के अंतराल के बाद नई कहानी के लेखक और सारिका के संपादक कमलेश्वर ने ही इसका नेतृत्व किया। समान्तर कहानी को 'आम आदमी' से हमदर्दी थी। 'कमलेश्वर' ने कहा ''ये कहानियां आम आदमी के समय संदर्भों में जन्म लेने वाले जलते प्रश्नों के यथार्थ

मूलक द्विविधारहित कदम है।'' ''समान्तर कहानी बड़े पैमाने'' पर चल रही यथार्थ की लड़ाई में शामिल कहानियां है।'' 'समान्तर' का उद्देश्य कथा साहित्य में 'आम आदमी' में प्रबुद्ध जागरुकता लाना है।यह सर्वविदित है कि 'कमलेश्वर' ने नई कहानी आंदोलन का नेतृत्व किया। वे स्वयं एक श्रेष्ठ कहानीकार है। प्रस्तुत संग्रह में मानसरोवर के हंस उनकी कहानी हैं। यह ऐसे शाश्वत मूल्यों की कथा है, ऐसा यथार्थ बोध है जो कभी पुराना नहीं पड़ेगा। और जिसका आदर्श प्रेमचन्द या पुरानी कहानी की परम्परा के आदर्शवादियों से किसी भी दृष्टि से भिन्न नहीं है।

प्रस्तुत संग्रह में त्यौहार, 'सन्नाटा', 'अग्निकुण्ड', 'भोलाराम का जीव' तंत्र कहानियों को ये विशिष्ट मतवादों के आंदोलनों का नेतृत्व करने वाले नेता कौन सी कहानी मानेंगे ? क्या ये नये के संदर्भों के यथार्थ को अंकित नहीं करतीं ? क्या ये सचेतन की चेतना नहीं है? और ये क्या ये समान्तर चलते जीवन की विसंगतियों, भारत के पूरे परिवेश का चित्र प्रस्तुत नहीं करतीं ? क्या स्वयं कमलेश्वर की कहानी ''मानसरोवर के हंस'' उद्देश्य की दृष्टि से प्रेमचन्द अथवा उग्र की कहानियों के समकक्ष नहीं है।

वास्तव में आज की हिन्दी कहानी नये युग की नई अभिव्यक्ति की समर्थ और सशक्त विधा है।

समसामयिक कहानी–

सातवें दशक के पश्चात् हिन्दी कहानी में व्यापक और बहुआयामी विस्तार हुआ। क्योंकि टी.वी. और मीडिया के अत्यधिक विकास के कारण साहित्यकार अंतर्राष्ट्रीय धरातल पर पश्चिमी जगत के विचारों से प्रभावित हुआ। जहां उसकी दृष्टि में विस्तार हुआ, वहीं उपभोक्तावादी संस्कृति के कारण कथा साहित्य में नये–नये प्रयोग प्रारंभ हुये। बौद्धिक उन्मेष और शहरी स्वार्थपरता राजनीतिक बिडम्बना के कारण क्षरित होते हुये मानवीय मूल्यों से संबंधित घटनाओ का चयन किया गया। जीवन के केन्द्र में आयी हुई कहानी उसकी पुर्न व्याख्या ही नहीं करती अपितु घटनाओं परिस्थितियों का चित्रण कर नये मूल्यों को तलाशती भी है। मेहरुन्निशा परवेज, गोविन्द मिश्र, राम दरक्ष मिश्र, रीता शुक्ल, धुव्र जायसवाल, उदय प्रकाश, रञ्जन द्विवेदी, बटरोही इस युग के चर्चित हस्ताक्षर है। इसकी कहानियों में एक ओर प्रेमचन्दीय प्रगतिशीलता की नई व्याख्या है, सामाजिक अवधाराणाओं का स्वस्थ रूप है तो दूसरी ओर इनका शैलिक रचाव या भाषिक प्रतिमानन की बुनावट भी नये रूप में दिखाई देती है। परायापन, अजनबी पने निश्ंशगता को महत्व देकर टूटती हुई मर्यादाओं, स्थापित होते हुये नवमूल्यों और अस्तित्ववादी चिन्तन की मुखरता के साथ दाम्पत्य प्रेम में आयी दरार

विवाह पूर्व एवं विवाहेत्तर संबंधों की स्वीकृति इन कहानियों की निजि विशेषता है। कमलेश्वर, मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, निर्मल वर्मा की कहानियों में इस यथार्थ को देखा जा सकता है।

इसी के साथ ही समकालीन कहानियों का एक आंदोलन विकसित हुआ है। इस संदर्भ में डा. सरोजनी शर्मा ने लिखा है कि–आठवें, नवें दशक के कहानियों में हमारी नई सोच एवं बदलाव का प्रतिबिम्ब है। इस परिवर्तन की प्रक्रिया में यथार्थ परिवेश के साथ व्यक्ति के व्यक्ति से, व्यक्ति के समाज से तथा परिवार के संबंधों के यथार्थ को सहानुभूति पूर्ण दृष्टिकोण से चित्रित करने की प्रवृत्ति है।(2)

समकालीन कहानीकारों में जिन नये मूल्यों की तलाश और युग अभिव्यंजना की छटपटाहट है उनमें दूधनाथ सिंह रावीन शाह पुष्प, ममता कालिया, मधुकर सिंह, आनन्द प्रकाश जैन, शिवप्रसाद सिंह, रामदरश, असगर बजाहत, इब्राहिम शरीफ, मुद्रा राक्षस, सूर्य वाला इत्यादि कहानी लेखक है।

सारांश यह है कि आज की विडम्बना भरे युग में कथा का आयाम अत्यन्त विस्तृत है। प्रेमचन्द के बाद विषय वस्तु की दृष्टि से सामाजिक, यथार्थवादी, अस्तित्ववादी, मनोवैज्ञानिक कहानियां लिखि गई हैं। साथ ही अकहानी, नई कहानी, समान्तर या समानान्तर कहानी, सचेतन और समकालीन कहानी, आंचलिक कहानी, शिल्प विधान की दृष्टि से हास्य व्यंग्यात्मक कहानी इत्यादि ऐसे कथा आंदोलन है जिनमें आज की जीवन की विविधता चित्रित है। कहानी की इसी महत्ता के कारण उसके इतिहास विकास में इतना वैविध्य है। उसके पात्र में हमारे स्वानुभूति यथार्थ के वास्तविक पात्र प्रतीत होते हैं साथ ही भाषिक रचाव, शिल्पगत संवेदना, मानवीय स्वार्थपरता का चित्रांकन इतने विविध रूपों में हुआ कि आज की कहानी हमारे जीवन की केन्द्र बिन्दु बन गई है। उसका विकास साहित्य का पर्याय बन गया है उसमें रेखा चित्र, कैरीकेचर आत्मकथा एवं जीवनी साहित्य जैसी गद्य विद्यायें हो अन्तर्मुक्त गई हैं।

शोध कर्त्री ने समग्र कथा आंदोलन को एक नई दिशा देने वाले साहित्यकारों में कमलेश्वर, मोहन राकेश एवं राजेन्द्र यादव में से कमलेश्वर एवं राजेन्द्र यादव का चयन कर उनके नारी पात्रों के वैशिपटय का मूल्यांकन युग प्रवृत्ति काम और प्रेम के परिपेक्ष्य में किया है।

हिन्दी उपन्यास : स्वरूप विकास

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। संसार में अपना जीवन यापन करते हुये वह सृष्टि के साथ भावात्मक संबंध स्थापित करता है। यह विशिष्ट कार्य इश्र कला के माध्यम से करता है।

साहित्य कला में गद्य और पद्य दोनों समान रूप से महत्वपूर्ण माने गये हैं। मुख्य रूप से गद्य के दो भेद कहे गये हैं – दृश्य और श्रृव्य। उपन्यास तथा उससे संबंधित अन्य नाम– निबंध, आख्यायिका, गाथा, कथा द्वितीय वर्ग में आते हैं। भामह[1] दण्डी[2] ने आख्यायिका एवं कथा का अलग–अलग विवेचन किया है।

आचार्य विश्वनाथ ने भी इन्हीं लक्षणों से अपनी सहमति जतायी है। तात्पर्य यह है कि उपन्यास आधुनिक युग की देन तो अवश्य है, किन्तु पृष्ठभूमि के रूप में वृहत्कथा, पंचतंत्र कादम्बरी तो अवश्य हैं। ''उपन्यास'' शब्द का प्रयोग नाट्य शास्त्र संबंधी ग्रन्थों में पताका स्थानक के चतुर्थ भेद और प्रतिमुख संधि के रूप में उल्लखित हैं।

उप + न्यास से बना शब्द उपन्यास बहुलअर्थी है– जैसे कल्पित कथा, परिकथा, उपकथा, उपाख्यान, आख्यान, कूटार्थ कथा, कूटार्थोपाख्यान, मिथ्या कथा तथा प्रबंध कल्पना है।[3] हिन्दी शब्द सागर में इसे परिलक्षित करते हुये लिखा गया है कि उपन्यास वह काल्पनिक गद्य कथा हैं जिसमें वास्तविक जीवन से मिलते जुलते चरित्रों और कार्य कलापों का विस्तृत और सुसम्बद्ध चित्रण हो, रोमांचकारी क्रियाकलापों का ऐसा चित्रण, जासूसी क्रियाकलापों से भरा इसी प्रकार का चित्रण उपक्रम बन्धन है।[4] उपन्यास का अंग्रेजी पर्याय नावेल है। व्युत्पित्ति की दृष्टि से नावेल शब्द का मूल रूप लैटिन भाषा के नावेल तथा नावलेस शब्द हैं। इस शब्द का अर्थ समाचार से मिलता जुलता है।[5] गद्यात्मकता, यथार्थता, कल्पनात्मकता, चित्रणात्मकता, कथात्मकता एवं कलात्मकता की दृष्टि से उपन्यास को परिभाषित किया गया है। दा न्यू पिक्चर्ड इंसाक्लोपीडिया में उपन्यास दीर्घआकार की गद्य में रचित उस कल्पित कथात्मक रचना को कहा गया है, जिसमें जीवन के यथार्थ स्वरूप की परिचायक कथा तथा पात्र सर्जित किये गये हों।[6] वेस्टर ने गद्यात्मक दृष्टि से कहा है कि उपन्यास गद्य में लिखी हुई एक विशाल आकार की कल्पनात्मक कथा होती हैं उसमें मानव जीवन के यथार्थ स्वरूप या चित्रण करने वाले पात्रों और उनके कार्यों का अंकन होता है।[7]

राबर्ट लिडेल यथार्थ पर बल देते हुए लिखते हैं कि उपन्यास में यथार्थ को एक प्रेरणा देने वाले तत्व के रूप में कार्यशील होना चाहिये।[8] हेनरी हड़सन, शिपले, कल्पना तत्व पर दृष्टिपात करते हैं। शिपले के अनुसार उपन्यास एक कल्पित कथानक से युक्त दीर्घ कथा होती है। जिसके पात्रों का चयन यथार्थ जीवन से किया जाता है।[9] जीवन चित्रण पर ध्यान रखकर हेनरी फील्डिंग एवं वाल्टर ऐलेन अपना मंतव्य इस प्रकार व्यक्त करते हैं, कि उपन्यास विशेष रूप से लोगों के जीवन को ध्यान में रखकर मानवीय अनुभवों का प्रतिनिधित्व करता है। [10] हिन्दी साहित्यकारों में डॉ. श्यामसुन्दर दास का अभिमत है, कि उपन्यास की कोटि में साधारणत: कल्पना प्रसूत वह सम्पूर्ण कथा साहित्य आ जाता है, जो गद्य की रीति से व्यक्त किया गया है।[11]

1. इस प्रकार उपन्यास एक गद्यमय आख्यान है।
2. इसका कथानक कल्पित होता है।
3. यह विशाल काय होता है।
4. इसके सारे पात्रों और उसके क्रियाकलापों का चित्रण एक ही कथानक के अन्तर्गत होता है।[12]
5. इसके पात्र और उसके क्रियाकलाप यथार्थ जीवन का निरूपण करते हैं।

हिन्दी उपन्यास का विकास

उपन्यास स्वरूप की व्याख्या करते हुये पहले लिखा जा चुका है कि प्राचीन भारतीय वाङ्मय में इसके प्रारंभिक बीज अवश्य विद्यमान रहें हैं, किन्तु उनको आधुनिक स्वरूप अंग्रेजी साहित्य से मिला है, यद्यपि बंग्ला भाषा से अनूदित उपन्यासों की एक विस्तृत श्रृंखला भी यहां मिलती है। हिन्दी उपन्यासों का सूत्रपात्र भारतेन्दु युग में हुआ। इस युग के उपान्यासों में आचार, नीति, उपदेश, धर्म कुरीतियों के सुधार संबंधी उपन्यासों के साथ मात्र मनोरंजनार्थ तिलस्म, ऐयारी प्रधान उपन्यासों की रचना हुई।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने श्रद्धा राम फिल्लौरी के भाग्यवती को हिन्दी का प्रथम सामाजिक उपन्यास और परीक्षा गुरु (श्री निवास दास) को पहला अंग्रेजी ढंग का मौलिक उपन्यास माना है। भारतेन्दु युग में सामाजिक, ऐतिहासिक, जासूसी तथा तिलस्मी प्रवृत्तियों के[13] उपन्यास लिखे गये है। श्रद्धा रामफिल्लौरी, श्री निवास दास के बाद बालकृष्ण भट्ट का नूतन ब्रह्मचारी, सौ अनजान एक सुजान, डॉ. जगमोहन सिंह का श्यामा स्वप्न, राधाकृष्ण दास का निस्सहाय हिन्दू, राधाचरण गोस्वामी का विधवा विपत्ति एवं कल्पलता, अम्बिका दत्त व्यास का आश्चर्य वृत्तान्त सामाजिक धारा के प्रमुख उपन्यास है।

डॉ. प्रताप नारायण टण्डन लिखते हैं कि भारतेन्दु युग एक प्रकार का नव जागरण का युग था। जनजीवन के विविध क्षेत्रों में इस समय अनेक क्रान्तिकारी आंदोलन हो रहे थे। इन आंदोलनों के फलस्वरूप सामाजिक मान्यताओं और दृष्टिकोणों में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन लक्षित हो रहे थे। भारतेन्दु युगीन सामाजिक उपन्यासकारों ने भी अपनी कृतियों में इन सामाजिक परिवर्तनों के फलस्वरूप उत्पन्न हुई समस्याओं को विवेचित किया है।[14]

ऐयारी क्रियाकलापों से युक्त विशेष तिलिस्म से संबंधित उपन्यासों प्रेम के काल्पनिक क्रियाकलापों का ऐसा चमत्कारिक वर्णन होता है कि पाठक का मन उसी में रमा रहता है . देवकी नन्दन खत्री के चन्द्रकान्ता, चन्द्रकान्ता संतति, नरेन्द्र मोहनी वीरेन्द्र वीर ऐसे ही विस्तृत आकार के उपन्यास हैं। इसी प्रकार ऐतिहासिक घटनाओं एवं कल्पना का पुट लगाकर उपन्यास लिखे गये हैं, जिनमें बाल मुकुन्द वर्मा, श्यामसुन्दर लाल शर्मा, कार्तिक प्रसाद खत्री एवं बल्देव प्रसाद मिश्र प्रमुख उपन्यासकार हैं।

हिन्दी उपन्यासों के द्वितीय उत्थान को प्रेमचन्द्र युग कहा जा सकता है। कुछ विद्वान इसे आधुनिक काल[15] या नवीन उत्थान[16] या विकास युग[17] या तृतीय उत्थान[18] या युवावस्था कहते हैं। कुछ प्रौढ़ काल[19] की ओर भी कुछ आदर्शोंन्मुख यथार्थवाद[20] और मानवतावाद या राष्ट्रीयतावाद[21] की ओर संकेत करते हैं। आगे विकास क्रम की रूपरेखा प्रेमचन्द को ही केन्द्र मानकर विश्लेषण किया जा सकता है। यह युग प्रेमचन्द युग भी कहा जा सकता है।

प्रेम चन्द युगीन उपन्यास

पिछले पृष्ठों में कहा जा चुका है कि हिन्दी उपन्यासों का उद्‌भव और विकास जासूसी, अय्यारी और रोमांच प्रधान उपन्यास लिखे गये हैं। हिन्दी उपन्यासों को एक नया मोड़ देने में जो नाम सामने आया है वह मुंशी प्रेमचन्द है। प्रेमचन्द पहले उर्दू में लिखते थे बाद में हिन्दी की ओर प्रवृत्त हुये और उन्होंने अपने उपन्यासों का उद्देश्य मानव चरित्र की व्याख्या रखा है। वे समाज सुधारक, तत्कालिक राजनीतिक आंदोलनों से प्रभावित थे। अपने उपन्यासों में उन्होंने आदर्शवाद को छोड़कर आदर्शोंन्मुख यथार्थवाद का आश्रय ग्रहण किया है।

रूठी रानी उनका पहला उपन्यास है जिसमें भारतवर्ष के परम्परागत आदर्श, शौर्य, राष्ट्र प्रेम और देश भक्ति आदि गुणों का गान करते हुये बताया है कि इन विशेषताओं के होते हुये पारस्परिक ईर्ष्या और द्वेष के कारण हमारे पूर्वज दासता और विनाश से स्वयं को नहीं बचा सकें।

सेवासदन, प्रेमाश्रय, रंगभूमि, वरदान, निर्मला, गोदान उनके ऐसे उपन्यास हैं जिसमें तत्कालीन समाज की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक समस्याओं का उल्लेख किया गया है। गोदान के अतिरिक्त उनके सभी उपन्यासों में समस्या का विवरण और उसका निदान भी प्रस्तुत किया जाता था। किन्तु गोदान तक आते-आते इन सुधारों के प्रति प्रेमचन्द का विश्वास उठ गया। अतः मोहभंग के कारण गोदान में समस्या का निदान प्रस्तुत नहीं किया गया है। प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों में समाज के दीन, हीन, शोषित, बहिष्कृत पात्रों के प्रति सहानुभूति रखकर अस्पृश्यता, बेमेल विवाह, अंधविश्वास इत्यादि पुरातन मूल्यों में अनास्था व्यक्त कर उज्ज्वल भविष्य का संकेत किया है। अपने लेखन के माद्यम से प्रेमचन्द ने अनेक उपन्यासकारों को प्रभावित किया है- जिसमे विश्वम्भर नाथ शर्मा कौयिशक बेचन शर्मा उग्र ऋषभ चरण जैन, भगवती प्रसाद बाजपेयी, गोविन्द बल्लभ पन्त, चण्डी प्रसाद हृदयेश प्रमुख हैं। सि युग के उपन्यासों में चतुरसेन शास्त्री, मन्नत द्विवेदी, राधिका रमण प्रसाद सिंह, गोविन्द बल्लभ पंत के उपन्यास प्रेमचन्द के ही अनुकरण पर लिखे गये हैं। इस युग में प्रेमचन्द के

अतिरिक्त ह्रदय की परख भाग्य तरंग, निकुंज, देहाती दुनिया, मंगल प्रभात, चन्द्र हसीनों के खतूत, दिल्ली का दलाल, बुधवा की बेटी, गढ़कुण्डार प्रत्यागत मां, भिखारणी, कंकाल, विराटा की पद्मिनी अप्सरा, त्यागमयी, कुल्लीचक्र, प्रेम निर्वाह, तितली, अंतिम आकांक्षा पतिता की साधना आदि प्रमुख उपन्यास है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कथावस्तु की दृष्टि से प्रेमचन्द्र युगीन उपन्यासों की निम्नलिखित विशेषताओं का उल्लेख किया है–

1. घटना वैचित्रय् प्रधान।
2. मनुष्य के अनेक पारस्परिक संबंधों की मार्मिकता
3. अन्तर्वृत्तीय अथवा शील वैचित्रय और उसका विकास क्रम अंकित करने वाले।
4. समाज के पाखण्ड पूर्ण कुत्सित वृत्तियों का उद्घाटन करने वाले।
5. वाह्य और आभ्यान्तर प्रकृति की रमणीयता समन्वित रूप चित्रण करने वाले उपन्यास है।(22).

इस युग के उपन्यासों की मूल प्रवृत्ति सामाजिक यथार्थवादी, उपन्यासों का युग कह सकते हैं। पारिवारिक स्तर पर इस युग के उपन्यासों ने संयुक्त परिवार के विघटन, विवाह और नारी के विषय पारिवारिक विघटन के मूल कारण में अर्थ विद्रोह आदि कारक तत्वों का उल्लेख हुआ है। इस युग के उपन्यासों के संदर्भ में डॉ. रामचन्द्र तिवारी ने लिखा है कि ''इस युग के उपन्यासों में मनोविश्लेषात्मक, गहराई, बौद्धिक चेतना या कलात्मक दक्षता नहीं है। सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक आंदोलनों की साफ तस्वीर इन उपन्यासों में देखी जा सकती है। विदेशी सत्ता को प्रत्यच्छ अप्रत्यच्छ रूप से पुष्ट करने वाले पण्डे, पुरोहित पुलिस, पटवारी, अफसर इस युग के उपन्यासों में जगह–जगह मिलते हैं। हिन्दू मुस्लिम, वैमनस्य, छुआछूत समस्या, आर्थिक असमानता, गांव नगर की बढ़ती हुई दूरी का चित्रण उपन्यासकारों की इस जानकारी का प्रमाण है कि विदेशी महाप्रभुओं की कूटनीति इनकी तीव्रतर बनाने में संलग्न हैं।(23)

प्रेमचन्दोत्तर युग में हिन्दी उपन्यास धारा अनेक रूपों में प्रवाहित होने लगी। इस युग में मनोविश्लेषणात्मक, आंचलिक, सांस्कृतिक एवं स्वच्छन्दतावादी उपन्यासों का प्रार्दुर्भाव हुआ है। डॉ. प्रताप नारायण टण्डन ने लिखा है कि ग्रामीण समाज के उत्थान के लिये विविध स्तरीय जो कार्य कलाप राजनीतिक स्तर पर हो रहे थे उनसे संबंधित उपन्यास इसयुग में लिखे गये हैं। ऐतिहासिक, सांस्कृतिक राजनीतिक तथा सामाजिक प्रवृत्तियों पर लिखे गये उपन्यास परम्परा के अनुसार ही है।(24)

प्रेमचन्द युग में ही उपन्यास लेखन प्रारंभ करने वाले लेखक आगे नयी प्रवृत्तियों, नये विषयवस्तु और नये शिल्प विधान को लेकर चले हैं। यह कहना अत्युक्ति पूर्ण नहीं होगा कि उपन्यासों का जो प्रवाह अत्यन्त प्रबल वेग से प्रेमचन्द युग में मिलता है, आगे चलकर वह अनेक छोटी-छोटी धाराओं में विभक्त हो गये। मानव चरित्र के विश्लेषण, व्याख्यान के लिये मनोवैज्ञानिक स्पर्श दिये जाने लगे। फ्रायड गेल्टाट आदि मनोविश्लेषकण वादियों के सिद्धान्तों के अनुरूप पात्रों के अन्तर्मनों का सृजन, एतद्विषयक कथावस्तु का चयन, समस्याओं का निदान, कुण्ठा दमन, विद्रोह आदि प्रवृत्तियों के अनुरूप उपन्यास लिखे जाने लगे तो दूसरी ओर राजनीतिक, सामाजिक, समस्याओं के निराकरण हेतु ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, स्वछन्दतावादी उपन्यासों की कमी नहीं रही। वृन्दावन लाल वर्मा, चतुरसेन शास्त्री, राहुल सांकृत्यायन, उदयशंकर भट्ट, इलाचन्द्र जोशी, भगवती चरण वर्मा, यशपाल, जैनेन्द्र कुमार, उपेन्द्रनाथ अश्क, सच्चिदानन्द हीरानन्द, वात्स्यायन अज्ञेय इस युग के प्रमुख उपन्यासकार है।

प्रेमचन्द युगीन भाषा के संदर्भ में हिन्दी विकास की रूपरेखा समझकर प्रेमचन्दोत्तर उपन्यासों की अवधारणा समझने में सरलता रहेगी। डॉ. मोहन अवस्थी ने लिखा है कि मुंशी प्रेमचन्द ने जिस युग में उपन्यास लिखे उसका भारतीय समाज महात्मा गांधी की विचारधारा तथा कांग्रेस के आंदोलनों से प्रभावित था।

तद्नुसार उनकी भाषा चलती हुई किन्तु व्यंजना पूर्ण वह भाषा सामान्यरूप से बोलचाल की भाषा है। जिसमें उर्दू के सुपरिचित तथा सुप्रचलित शब्दों का प्रयोग हुआ है। मुहावरों के प्रयोग में मुंशी प्रेमचन्द इतने दक्ष हैं कि उनके वाक्य के प्राय; मुहावरों में ही पूरे हो जाते हैं उनकी भाषा पात्रों के अनुकूल अपनी भाव भगिया बदलती हुई चलती है।[25]

भाषा की इस सम्पन्नता के कारण हिन्दी उपन्यास अनेक रूपों में प्रवाहित होने लगा इसे हम निम्नलिखित भागों में विभक्त कर उसकी संक्षिप्त रूपरेखा इस प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं।

प्रेमचन्द के परम्परा के अवशेष उपन्यास-

ऊपर कहा जा चुका है कि गांधी युग की सर्वव्यापकता और आंदोलन की अभिव्यक्ति प्रेमचन्द और उनके समसामयिक उपन्यासकारों में हुई है। किन्तु प्रेमचन्द के पश्चात् इस आस्था, आदर्श और चिन्तन की समाप्ति परम्परा भगवती प्रसाद बाजपेयी, प्रताप नारायण श्रीवास्तव, सियारामशरण गुप्त के हाथों अधिक सुरक्षित रही। जिनमें कथानक समाज की समस्याओं से संबंधित था और पात्र भी आदर्श यथार्थ से मुक्त हुआ करते थे, किन्तु आगे आने वाली परिस्थितियों के कारण इस प्रकार के उपन्यास कोरी भावुकता प्रधान समझे गये।

क्योंकि प्रेमचन्छ के कार्यकाल में ही सामाजिक यथार्थ बोध का तीव्र प्रवाह के लक्षण दिखाई देने लगे थे।

सामाजिक बोध के यथार्थ बोध संबंधी उपन्यास –

प्रेमचन्द्र की प्रतिक्रिया स्वरूप साहित्य में मार्क्सवादियों का वर्चस्व बढ़ने लगा। कविता के क्षेत्र में प्रगतिवादी आंदोलन सर्वव्यापी होने लगा। अत: इस युग के उपन्यासकारों के लिये युग चेतना का अर्थ बदल गया। यशपाल, भगवतीचरण वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क, रांगेय राघव जैसे उपन्यासकार हुये हैं जिसमें युगीन धारा के प्रति आक्रोश और उसके विनाश के लिये काल मार्क्स प्रतिपादित क्रांति की भावना ही एकमात्र उपाय रह गया था। जैसा कि हिन्दी साहित्य के इतिहास में लिखा है कि ''इन उपन्यासकारों के लिये युगीन चेतना का अर्थ आए दिन की घटनाओं और स्थितियों का वर्णन मात्र नहीं रह गया बल्कि युग की परिस्थितियों के प्रति उनकी गहरी और तीव्र प्रतिक्रियायें उनके उपन्यासों के कथ्य और पात्रों के चरित्र में अनिवार्यत: निहित रहने लगी उनकी समसामयिकता जीवन के सतही विस्तार से सम्बद्ध न रहकर जीवन जीवन के बर्हिमुखी तत्वों के प्रति गहन, सूक्ष्म और सभी प्रतिक्रियाओं से उभरी।[26]

समाजवादी उपन्यास

इस युग के उपन्यासों में मार्क्सवादी चेतना का प्रबल आग्रह है। वर्ग, संघर्ष, रूढ़िगत सामाजिक व्यवस्था, सामाजिक विसंगतियों, रूढ़ि परम्पराओं, जीवनगत समस्याओं का मूल कारण आर्थिक वैषम्य आ गया। दादा कामरेड, झूठा–सच, देशद्रोही, विषादमढ़ पराया, सती मइया का चौरा इस युग के ऐसे उपन्यास हैं, जिनमें मार्क्सवाद के व्यवहारिक और सैद्धांतिक पक्षों की अभिव्यक्ति दी गयी है। अमृतराय भी सामाजिक यथार्थवाद से पोषित आर्थिक विचारधारा से कहकर समर्पित उपन्यासकार है। ऐसे प्रगतिशील उपन्यासों के बीच हाथी का हाथ, नागफनी का देश उपन्यास प्रकाश में आये। जिसमें मार्क्सवाद के अतिरिक्त अन्य चिन्तन की उपेक्षा की गयी है। यद्यपि नागार्जुन सैद्धांतिक और व्यवहारिक दृष्टि से इस शब्द के समर्पित उपन्यासकार है किन्तु उन्होंने यथार्थवाद को बौद्धिक मीनार से उतार कर आंचलिक प्रवृत्ति की ओर उपन्यासकारों का ध्यान आकृष्ट किया। इसलिये कुछ लोग उन्हें आंचलिक उपन्यासकार है जहां सामाजिकता का स्वर तो प्रधान है किन्तु विद्रोह की भावना धधकती हुई दिखाई देती है।

अन्तर्मुखी या मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास

कहना नहीं होगा कि प्रेमचन्द युगीन उपन्यासकार वस्तु परक और बहिरंग यथार्थ से

जुड़े हुये थे। किन्तु मन की गहराइयों में उतरने का प्रयास न के बराबर हुआ है। जिस प्रकार प्रगतिवादी उपन्यासकार क्रांतिवादी चेतना से प्रभावित हो कर यथार्थ के विभिन्न स्तरों को अपने उपन्यासों में प्रस्तुत किया। उसी प्रकार फ्रायड तथा अन्य मनोविश्लेषण वादियों के सिद्धान्तों को व्यावहरिक रूप देने के लिये हिन्दी के अनेक उपन्यासकारों ने ऐसी कथाओं का सृजन किया है, जिनसे मनुष्य को कर्म प्रेरणाओं उनके अर्न्तगत के संश्लिष्ट विन्यास का विश्लेषण किया जा सकता है। ऐसे उपन्यासकारों में इलाचन्द्र जोशी, जैनेन्द्र और अज्ञेय आते हैं। सुखदा, त्यागपत्र, कल्याणी, सन्यासी, जहाज का पंक्षी, परदे की रानी, शेखर एक जीवनी, नदी के द्वीप, अपने-अपने अजनबी ऐसे ही धारा के उपन्यास हैं, जिनमें व्यक्ति की यौन भावना, दमित वासनायें, कुण्ठायें, कार्यव्यवहारों से प्रभावत होती है। यथार्थ यहां उतना सत्य नहीं है जितना कि अहम का विगलन। यह मुख्य रूप से अन्तस साधना है। हिन्दी साहित्य में लिखा है- ''मन की गहराइयों, उलझनों की थाह लेने के लिये मनोविज्ञान का तथा मानस तत्व का और अन्तर्द्वन्दों के विश्लेषण के लिये स्वप्नों, निराधार, प्रत्यक्षीकरणों और प्रतीकों आदि का सहारा लिया गया है। मानस तत्वों में ही ध्यान केन्द्रित होने के कारण बहुत बार उनकी दृष्टि ऐकान्तिक काल्पनिक होकर जिन्दगी से कट गयी है।[1]

आंचलिक उपन्यास-

आंचलिक उपन्यास स्वतंत्रता के पश्चात की देन है। इसकी पृष्ठभूमि में राजनीतिक क्षेत्र में बढ़ती क्षेत्रीयता, छोटे-छोटे राजनीतिक क्षेत्र और उनकी हृदय क्रियाकलाप रहे हैं। इस प्रकार वे सत्य, अहिंसा, गांधीवाद के नाम पर सत्ता की कुर्सी में बैठे किन्तु उनका आचरण सामन्तों, जागीरदारों की तरह शोषण युक्तही रहा। अतः स्वातंत्रता की परिकल्पना से परिचालित राजनीति के प्रति साहित्यकारों का मोहभंग हुआ और उन्होंने अपने उपन्यासों में क्षेत्र विशेष की पृष्ठभूमि, सांस्कृतिक महत्ता, लोक संस्कृति, परम्पराओं धार्मिक विश्वासों, प्रचलित लोक कथाओं, वेशभूषा आदि का त्योरेवार सूक्ष्म चित्रांकन हुआ है। यद्यपि इसका सूत्रपात्र नागार्जुन कर चुके हैं फिर भी इस धारा के मूर्धन्य उपन्यासकार फणीश्वर नाथ रेणु हैं। जिनका मैला आंचल, परती परकथा बहुश्रुत उपन्यास हैं। इस संदर्भ में लिखा गया है कि - ''इन उपन्यासों में सुनयोजित सुगठित कथा नहीं उसमें अन्विति का अभाव है, छोटी-छोटी स्थिति अंकन के माध्यम से जिन्दगी का फलक तैयार किया गया है। जिसमें रिपोतार्ज, फ्लैसबैक, डाक्यूमेन्ट्री शैलियों का प्रयोग है। चित्रमय बिम्ब देने के लिये स्थानीय रंगों का कट दिया गया है।

इस परम्परा में उदयशंकर भट्ट, देवेन्द्र सत्यार्थी, शिवप्रसाद रुद्र, राम दशरथ मिश्र, शैलेश मटियानी, कृष्ण चन्दर इत्यादि उपन्यासकार प्रमुख हैं। इस संदर्भ में इतना अवश्य कहा जा सकता है कि कड़, कर्कश, सामाजिक, आर्थिक, यथार्थ और स्वप्न रजक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और लोक परम्पराओं का तालमेल जिस प्रकार रेणु और नागार्जुन ने किया था आगे चलकर राहुल सांकृत्यागन, रंगेय राघव उसमें मार्क्सवादी पुट देकर उसे एक नये रूप में प्रस्तुत किया है।

ऐतिहासिक उपन्यास-

इस धारा का प्रादुर्भाव प्रेमचन्द युग से ही हो गया था क्योंकि ऐतिहासिक कथानक, सामाजिक कथानक से बहुत भिन्न नहीं होते। ऐतिहासिक उपन्यासों में ऐतिहासिक तथ्यों की रक्षा करने के लिये तद्विषयक सामग्री के साथ घटना और चरित्रों की संगति बैठायी जाती हैं। वृन्दावन लाल वर्मा, का गढ़ कुण्डार, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, मृगनयनी, माधव जी सिंधिया, अहिल्याबाई ऐसे ही उपन्यास हैं जिसमें बुन्देलखण्ड की स्थानीय परिस्थितियों नदी नाले तथा राजनीतिक परिस्थितियों का जीवन्त चित्रांकन हुआ है। इस युग के दूसरे प्रसिद्ध उपन्यासकार आचार्य चतुरसेन शास्त्री हैं। वैशाली की नगरवधू, आलमगीर, सोना और खून, रांगेय राघव का मुर्दों का टीला, यशपाल की दिव्या, भगवतीचरण वर्मा की चित्रलेखा, हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनेक उपन्यास आते हैं। इसी धारा को राहुल सांकृत्यायन ने एक नया मोड़ दिया है। जय यौधेय सिंह सेनापति मधुर मिलन अथवा नरेन्द्र कोहली के रामकथा सम्बन्धी उपन्यास अन्यन्त प्रभावी रूप से प्रस्तुत हुये हैं।

आधुनिक संकट बोध ग्रस्त उपन्यास-

बीसवीं शताब्दी के सातवें दशक में चीन-पाकिस्तान के युद्ध अनेक पंचवर्षीय योजनाओं की विफलता, बेकारी, महंगाई, भूख, भ्रष्टाचार आदि के कारण समाज में एक शून्यता सी व्याप्त होने लगी इसमें विदेशी घटनाओं का हस्तक्षेप एक नये संकट को पैदा करने लगा तथा इस संबंध में डॉ. मोहन अवस्थी ने लिखा है कि ''मानव संबंधों की प्रंवचना, जीवन की कृत्रिमता, संत्रास, घुटन, कुण्ठा, दिशाहीनता आदि को रूपायित करना ही आधुनिक उपन्यासों का लक्ष्य है। दाम्पत्य जीवन की विसंगतियां, स्त्री पुरुष में परस्पर आस्था, पूर्व या विवाहेत्तर स्वच्छन्द यौन उपभोग, तनाव एवं बिखराव व्यक्ति का अजनबीपन एवं महत्वाकांक्षाओं की क्षत विक्षत भावनायें इस युग में अभिव्यक्त हुई है।(27)

मोहन, राकेश, निर्मल वर्मा, राजेन्द्र यादव मन्नु भण्डारी, ममता कलिया, दयानन्द वर्मा,

राजकमल चौधरी, कृष्णा सोबती, मृदुला गर्ग इस धारा के प्रमुख उपन्यासकार एवं उन्यासकर्ती हैं।

लघु उपन्यास–

इस धारा के उपन्यासों में कथा एवं शिल्प का नया प्रयोग हुआ है। विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में धारावाहिक रूप में छपने वाले उपन्यास इस श्रेणी में आते हैं। यद्यपि लघु उपन्यास जैनेन्द्र कुमार के सुनन्दा और त्याग पत्र लघु उपन्यास ही कहलाते हैं। किन्तु उनमें शिल्पगत नवीनता नहीं हैं वस्तुत: इस श्रेणी में आने वाले उपन्यासों में धर्मवीर भारती का सूरज का सातवां घोडा राजेन्द्र यादव के मंत्र विद्ध–कुलटा, शिवानी के कुछ उपन्यास इस धारा का प्रतिनिधित्व करते हैं।

वर्तमान युग के कुछ नये उपन्यासकार –

हिन्दी उपन्यास विकास पर विहंगम दृष्टि डाले तो दिखाई पड़ेगा कि परीक्षा गुरु से लेकर जासूसी, ऐय्यारी, कौतूहल प्रधान मनोरंजक श्रेणी के उपन्यासों से विकसित होकर यह धारा प्रेमचन्द के युग में आदर्शोन्मुख यथार्थवाद का आश्रय लेकर जीवन की कटु सच्चाइयों, अशिक्षा, अंधविश्वास आदि पर कुठाराघात कर मानव चरित्र की सम्यक व्याख्या की गई है। प्रेमचन्द के पश्चात् उपनन्यासकारों का एक ऐसा बड़ा वर्ग तैयार हो गया जिनकी प्रवृत्तियों का के ऐसा बड़ा वर्ग तैयार हो गया जिनकी प्रवृत्तियों में आदर्श और चिन्तन भिन्न रहे अत: प्रेमचन्द के बाद लिखे गये उपन्यास विविध धाराओं में विभक्त हो गये जैसे कोई बड़ी नदी छोटे–छोटे नदी नालों में बंटकर बहती है ऐसे ही स्वतंत्रता पूर्व एवं स्वतंत्रता के बाद सातवें दशक से लेकर नवें दशक तक हिन्दी उपन्यास बडी मात्रा में विविध रंग प्रकार रूप विभिन्न शिल्प विधानों का आश्रय लेकर लिखे गये हैं। यद्यपि अकविता और अकहानी की तरह उपन्यास की चर्चा बौद्धिक मंचों से अवश्य हुई है, किन्तु अन्त में उपन्यासकारों की सफलता पाठकीय रुचि और संवेदना पर रहती है। अत: उपन्यास की परिकल्पना व्यावहारिक रूप में नहीं आ पायी। शताधिक उपन्यासकार भिन्न–भिन्न रंग परिस्थितियों, संस्कारों एवं दृष्टियों के कारण नये–नये शिल्प का प्रयोग कर उपन्यास लिख रहे हैं। जिसमें कामतानाथ, उदय प्रकाश, गोविन्द मिश्र, कमलेश्वर, शैलेष मटियानी, शिवानी, मैत्रेय पुष्पा, श्रीलाल शुक्ला, गिरिराज किशोर नये पुराने पीढ़ी के प्रतिनिधि उपन्यासकार हैं।

आधुनिक युग बोध जीवन की अर्थहीनता, दिशा हीनता, युवा वर्ग की झटपटाहट, लाचारी, सांस्कृतिक अपकर्ष, अजनबीपन, अकेलापन, स्वार्थ परता तथा जिजीविषा और

इन सबमे प्रमुख नर–नारी के मध्य उपजे विभिन्न काम, प्रेम, सौन्दर्य, उन्मुक्त यौन संबंधों की विस्तृत चर्चा इस बीसवीं शताब्दी के अंतिम चरणों के उपन्यासकारों में मिलती हैं।

हिन्दी उपन्यास मनोरंजन से प्रारंभ होकर मानव–चरित्रों की व्याख्या, गांधीवाद, दर्शन क्रांति की दहकती ज्वाला, पूंजीपतियों के प्रति आक्रोश, संघर्ष के चित्रण के साथ ही मानव मन की चेतन, अवचेतन, अचेतन, मस्तिष्क की गुत्थियों की सुलझाता हुआ कहीं ऐतिहासिक कहीं सांस्कृतिक संघर्षों के लिये तद्‌विषयक दृष्टि अपनाता हुआ देश की राजनीतिक असफलता के कारण पनपता युवा आक्रोश और दिशा हीनता नैतिक मूल्यों का ह्रास विदेशी अप संस्कृति की चित्रित करने वाले उपन्यासकार दिखाई देते हैं।

कहना नहीं होगा कि जासूसी अय्यारी कुतूहल प्रधान घटनाओं को लेकर प्रारंभ किये गये उपन्यास क्रमश: मानव चरित्र एवं उसके वाह्य क्रिया कलाप, युगीन धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक सांस्कृतिक क्षेत्र में पिछड़ेपन या एतद् विषयक समस्याओं को चित्रित करने के साथ ही उनके निदान हेतु समाधान को लेकर उपन्यास का विकास हुआ। साथ ही उपधाराओं के रूप में सामाजिक ऐतिहासिक स्वछन्दतावादी लघु उपन्यासों का ही प्रचलन हुआ। उपन्यासों का विकास मानव मन की जटिल निगूढ़ दलित कुण्ठित भावनाओं के चित्रण पात्रों के क्रियाकलापों के कारक तत्वों के रूप में मनौवैज्ञानिक उपन्यासों की परम्परा प्रौढ़ रूप में दिखाई देती हैं।

यहां यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि राजनीतिक हताशा के कारण व्यक्ति के मन में अस्तित्व बोध नारी अस्मिता यथार्थवाद के धरातल पर घटित समस्याओं से प्रभावित होकर ऐसे उपन्यास लिखे गये हैं जिसमें उपभोक्तावादी संस्कृति एवं जदजन्य जीवन मूल्यों के क्षरण, संक्रमण और समाज में व्याप्त दुरवस्था का चित्रांकन उपन्यासकारों ने किया है।

हिन्दी के समग्र कथा साहित्य (कहानी एवं उपन्यास) में विकास को देखकर यह कहा जा सकता है कि इसके लेखक अपनी नयी जमीन को तलाशने के लिये बेचैन है इस कथा साहित्य में समस्याओं के साथ ही व्यक्तित्व विकास के क्षेत्र में प्राक्तन जीवन मूल्यों की अपेक्षा वास्तविक आधुनिक जीवन मूल्यों की तलाश प्रारंभ हुई है। ऐसे जीवन मूल्य जिनमें सर्वाधिक परिवर्तन संर्वधन संशोधन हुआ है वह सामाजिक क्षेत्र है जिसमें सौन्दर्य, काम, प्रेम का प्रमुख स्थान है।

पिछले अध्याय में काम प्रेम एवं सौन्दर्य का सैद्धांतिक विवेचन करते हुये यह देखा गया है कि भारतीय एवं पाश्चात्य दृष्टि एवं चिन्तन में पर्याप्त समानता रही है। जहां स्त्री एवं पुरुष के समानुपातिक, आंगिक सौष्ठव के साथ कौलीन्य जनित गुणों की महत्ता को प्रामुख्य दिया

गया है। वस्तुत: सौन्दर्य दृष्टि में और मूल्य रूप में चित्रित है। जिसका बहुआयामी विकास आधुनिक युग में हुआ है। मात्र सौकुमार्य, मसृणता, सुचिकनता देहयष्टि ही सौन्दर्य नहीं है अपितु वाह्य विरूपता एवं कार्मिक शक्ति तथा सद्‌गुणों में भी सौन्दर्य को देखने का प्रयास आधुनिक युग के कथाकारों में दिखाई देता है। भिन्न लिंग के प्रति देह जनित आकर्षण यह वासना का प्राथमिक रूप हैं, किन्तु साहचर्य, त्याग, उत्सर्ग, बलिदान सहानुभूति तथा सहानुभूति के कारण जो मनोभाव उत्पन्न होता है। वह काम है। प्रेम तो ऐसा उच्च धरातल है जो पूत मेध्य, उदात्त और उज्ज्वल हैं जिसमें अपना सर्वस्य दान करने की लोभ रहित भावना अन्तर्निहित होती है। तीव्र गाढ़ानुराग, गहरी आसक्ति गहरे अन्त:स्थल में प्रिय की छवि और उसके प्रति अनन्यता को ही प्रेम कहा गया है। इस दृष्टि से जब हम हिन्दी कथा साहित्य पर दृष्टिपात करते हैं तो देवकी नन्दन खत्री, गोपाल राम गहमरी में नारियों के वाह्य सौन्दर्य पर विशेष बल दिया गया है। उनकी लावण्य मय कांति, सुकुमारता, मद के कारण देहकांति को प्रमुखता दी गई है। जबकि पुरुष सौन्दर्य में कठोरता और शूरवीरता को स्थान मिला है प्रेमचन्द तथा उनके समसामाशियक कथाकारों में प्रेम एवं सौन्दर्य की यही दृष्टि रही है किन्तु वासना के गर्हित रूप का चित्रण भी समाज सापेक्ष रूप में हुआ है। काम, प्रेम एवं सौन्दर्य की पाश्चात्य विचारधारा ने हिन्दी के कथा साहित्यकारों को बहुत गहरे रूप में प्रभावित किया है। जहां पात्र के अचेतन में इड भावना के कारण वासना या काम का प्रमुख हाथ है काम ही व्यक्तित्व के तीन चौथाई भाग को उसके क्रियाकलापों को प्रभावित करने वाला कारक तत्व के रूप में माना जाने लगा।

मार्क्सवादी दृष्टि में सौन्दर्य वस्तु रूप में चित्रित किया जाने लगा। सौन्दर्य के प्रति आकर्षण सहज और स्वभाविक तथा नारी संसर्ग की भावना सहज वृत्ति के रूप में चित्रित होनी लगी तो साठोत्तरी कथा साहित्य में इसे वस्तु जगत का एक रूप मानकर इस आकर्षण को काम का रूप देकर सामान्य मनोविकार माना गया वहीं दूसरी ओर सामाजिक परिस्थितियों के कारण नारियों के मन में सौन्दर्य की मारक शक्ति का अनुभव हुआ। और वे उन्मुक्त होकर देह प्रदर्शन से लेकर कायिक संसर्ग को अपनी उन्नति का एक सोपान मानने लगी। इड इगो के संघर्ष काम के दमन से उत्पन्न कुण्ठा वालों को विकृत मानसिक वाला बना देता है जिसके अनके रूप और परिणाम विभिन्न उपन्यासों में दिखाई देते हैं। शोधकर्त्री ने कमलेश्वर एवं राजेन्द्र यादव के समग्र कथा साहित्य में काम, प्रेम एवं सौन्दर्य के क्षेत्र में विविध रूप, छवि क्रियाकलाप उसके कारक तत्व, प्रभाव और विरूपता को चित्रित कर मार्मान्तरीकरण, स्वप्न संघनन, अन्तर्द्वन्द्व एवं बहिर्द्वन्द्व के साथ उदात्तीकरण शैली को अपना कर समाज के इस प्रमुख मूल्य का बहुआयामी विस्तार किया है।

उपन्यास कार कमलेश्वर का प्रारम्भिक परिचय

प्राख्यात कहानीकार तथा मीडिया मैन के साथ–साथ साहित्याकार के देदीप्यमान नक्षत्र कमलेश्वर जी का जन्म 6 जनवरी 1932 को उत्तर प्रदेश के मैनपुरी जनपद में कुलीन एवं सभ्रान्त परिवार में हुआ था। समय एक सा नहीं होता परिस्थितिवश अमीर कहे जाने वाले घर में गरीब की तरह रहना, खाना खाकर भी भूखा उठना, अकुलाहट भरे दु:खों के बीच भी हंस सकना, बच्चा होते हुए भी वयस्कों की तरह निर्णय ले सकना – यह कमलेश्वर जी की आदत नहीं मजबूरी थी। आर्थिक तंगी से मजबूर कमलेश्वर जी के लिए इम्तहान में अव्वल आकर वजीफा लेना पढाई की दृष्टि से उतने संतोष की बात नहीं थी, जितनी कि आर्थिक विवशता के दृष्टिकोण से थी। छोटी छोटी विवशताओं ने जो उस वक्त कमलेश्वर जी के अस्तित्व के लिए बहुत बडी थी, उन्हें जर्जर कर दिया था। साइकिल की मरम्मत का पैसा न चुकाने पर साइकिल वाले का साइकिल छीन लेना एवं ब्रांच लाइन की रेलगाडी ......छोटे–छोटे स्टेशन और बंजर पड़े खेत ....तारों पर बैठी हुई चिडियां ये जीवन की सारी जद्दोजहद को अनुभूति एवं जीवन में परिस्थितयों की कसकता व्यक्त हुई कमलेश्वर जी की लेखनी के माध्यम से।

स्वतंत्रता आन्दोलन अपने लक्ष्य की प्राप्ति की ओर शीघ्रता से बढ रहा था। स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु अनेक धारायें वह रही थीं। उन्हीं धाराओं के सम्पर्क में बालक जीवन में ही कमलेश्वर जी भी आ गये। सरदार भगत सिंह द्वारा स्थापित हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी अर्थात क्रांतिकारी समाजवादी पार्टी के संपर्क में कक्षा दस पास करते कमलेश्वर आ गये और मार्क्स बाद की सक्रिय पाठशाला में शामिल होकर आजादी की लड़ाई में प्रच्छन्न रूप से कार्य करने लगे। आपको क्रान्तिकारियों के पत्र पहुंचाने का दायित्व सौंपा गया जिसे आप पूरी निष्ठा से सम्पन्न करने लगे। अंग्रेजी राजसत्ता के डाकघर कान्तिकारियों के पत्रों को खोल लिया करते थे और उन्हें उच्च अधिकारियों को पहुंचा देते थे, जिससे उनके गुप्त गन्तव्य वर्तनियां सरकार की जानकारी में आ जाते थे, जिससे खतरा और अत्याचार में बृद्धि हो जाती थी। बाल सेना पर किसी की भी दृष्टि नहीं थी इससे कार्य सरल और सहज बना हुआ था।

आप विज्ञान के छात्र थे और रेलवे में मैकेनिकल इंजीनियरिंग की ट्रेनिंग के लिए चुने लिये गये और जमालपुर रेलवे कारखाने में मैकेनिकल इन्जीनियरिंग की एन्प्रेन्टिसशिप के लिए प्रवेश भी प्राप्त कर लिया किन्तु दासता की सेवा में मन न लगने के कारण प्रशिक्षण त्याग कर

अपनी माता के पास मैनपुरी वापस चले गये। माता जी ने पढ़ाई जारी रखने का आदेश दिया।

प्रेरणा और प्रभाव -

अपने बडे भाई सिद्धार्थ भाई के कपडे पहनकर भविष्य के सपने देखना। भविष्य के लिए लडी जाने वाली आपकी वह लडाई तब बहुत छोटी सीमाओं में महदूद थी। माँ के लिए चश्मा अपने लिए जीन की गेंद और नई किताबें, भाई के लिए नई चप्पल .... । जैसी छोटी-छोटी आवश्यकता से लेकर जीवन की बडी बडी परिस्थितयों में हिम्मत न हारने की प्रवृत्ति आपको अपनी माँ से प्राप्त हुई थी। माता जी द्वारा पढ़ाई जारी रखने की प्रेरणा के कारण आपने पुन: अध्ययन की ओर मन लगाया। तेरह वर्ष की वाल्यावस्था में ही कान्तिकारी समाजवादी पार्टी के सम्पर्क में आ जाने से पार्टी के ही समाचार पत्र क्रान्तियुग में कामामाता मारू जहाज तथा गदर पार्टी पर आपकी प्रथम रचना प्रकाशित हुई। इसके पश्चात क्रान्तिकारियों पर ही लघु कहानियाँ सतत आपकी प्रकाशित होती रही है। यह प्राथमिक लेखन कहा जा सकता है। लेखन की ओर रूचि का कारण मैनपुरी नगरी का प्रकाश प्रेस था, जहां से प्रकाश नामक अनियमित निकलने वाला पत्र था। इसके मालिक श्री शिव शंकर मिश्र जी थे, जो आपके मित्र थे। यहीं से आपने प्रूफ रीडिंग और ट्रेडिल मशीन (छपाई की छोटी मशीन) पर कागज लगाना सीख लिया था।

लेखन का कार्य अनवरत चल रहा था। आप एम.ए. प्रथम वर्ष के छात्र जीवन तक लेखन जगत को मित्र बना लिये थे। छात्र जीवन के मित्र श्री गंगा प्रसाद श्रीवास्तव 'नलिन' तथा शीतला सहाय श्रीवास्तव की प्रेरणा से कानपुर जनपद से छपने वाली साप्ताहिक पत्रिका 'राष्ट्रधर्म' में कहानियां भेजने का क्रम प्रारंभ हुआ जो प्रकाशित होकर आपकी शक्ति एवं साहस को विशालता प्रदान करने में सहायक हुई। इसी बीच कर्तव्य (1947ई.) नामक कहानी भी छपी जिसे कुछ बदलकर 1948 ई. में रसीली कहानियाँ नामक पत्रिका में 'सैनिक का कर्त्तव्य' नाम से श्री दयाशंकर मिश्र 'सूर्य' ने अपने नाम से प्रकाशित किये। यह बिलकुल आपकी कहानी की प्रतिलिपि थी, मात्र नाम यादव राम चन्द्र के स्थान पर यादव सदाशिव किया गया था किन्तु अन्त में भूल बश यादव रामचन्द्र ही छपा था। ज्ञात करने पर मिश्र जी समीपी निकल आये। इससे आपका साहस और बढ गया कि - मैं ऐसी कहानियां लिखता हूं जिसे पाठक लोग पढेंगे, पसन्द करेंगे और शायद याद भी करेंगे। इतना आत्मविश्वास पर्याप्त था क्योंकि आप साहित्य के छात्र न होकर विज्ञान के छात्र थे। लेखन आपकी मजबूरी न थी बल्कि अपनी अभिव्यक्ति का मार्ग आप खोज रहे थे।

प्रारंभिक कहानिया – (सम्प्रति कथा प्रस्थान नामकरण)– अप्सरा, रजनी, मनोहर कहानियां, निर्झर, नई सदी, जागृति, बसुधा, राष्ट्रवाणी और धर्मयुग '' आदि में प्रकाशित हुई। अप्सरा में छपी कहानी कामरेड की प्रशास्ति डॉ. धर्मबीर भारती ने इलाहाबाद में प्रसारित कर आपके आत्मबल को सफलता के चरमोत्कर्ष पर पहुंचा दिया।

इलाहाबाद से आप 59–60 ई. में दिल्ली चले गये और वहां नई कहानियां पत्रिका का सम्पादन करना प्रारंभ किया और स्वत: की कृति भी प्रकाशित होती रही।

तीसरे पडाव पर आप 1966 ई. में बम्बई पहुंच गये और साहित्य साधना का क्रम अक्षुण्य रहा। इस प्रकार साहित्य के क्षेत्र में 10 उपन्यास एवं 100 से भी अधिक कथा संग्रह विद्यमान है। विविध विषयों पर आपकी अनेक पुस्तके प्रकाशित हो गई है। नई कहानी की भूमिका – चर्चित आलोचनात्मक पुस्तक है। भारतीय भाषाओं के संग्रह शिखर कथा कोश 12 खण्डों में प्रकाशित हुआ है। अभी 24 खण्ड और प्रकाश्य मान है।

आत्म संस्मरण की तीन पुस्तके –

1. जो मैने किया।
2. यादों के चिराग।
3. जलती हुई नदी।

बहुत लोकप्रिय हुई है। बंगला देश युद्ध की डायरी और 'आँधी' फिल्म की डायरी पर आधृत देश देशान्तर महत्वपूर्ण पुस्तके है। आतंकवाद से ग्रसित कश्मीर पर साहसिक और जोखिम भरी साहसिक यात्रा पुस्तक है।

मीडिया के क्षेत्र में आप विख्यात व्यक्तित्व है। प्रिन्ट मीडिया में नई कहानियां, सारिका, कथायात्रा, गंगा जैसा सप्त पत्रिकाओं का सम्पादन किया है दैनिक जागरण समाचार पत्र का दिल्ली संस्करण भी सम्पादित किया। दैनिक भास्कर राजस्थान के प्रधान सम्पादक होने का आपको गौरव प्राप्त है।

इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के क्षेत्र में 1959 से जुडे है। भारतीय दूरदर्शन के प्रथम स्क्रिप्ट राइटर रहे। काश्मीर, अयोध्या आदि पर वृत्त चित्र भी बनाये। आपने भारतीय दूरदर्शन के एडीशनल डायरेक्टर जनरल भी रहने का गौरव प्राप्त किया है। सम्प्रति लगभग 100 हिन्दी फिल्में लिखने के साथ ही भारतीय दूरदर्शन के लिए –

1. दर्पण

2. चन्द्रकान्ता

3. युग

4. बेताल पच्चीसी और

5. विराट

प्रभृत सीरियल भी लिख चुके है। 'एडस' जेसी भयानक बीमारी से समाज को बचाने के लिए रेत पर लिखे नाम भी राष्ट्र को समर्पित कर साहित्य जगत के साथ-साथ आपने मानवता का बहुत उपकार किया है। अमानुष, सारा आकाश, फिर भी, उसके बाद, मि. नटवरलाल, दा वर्निग ट्रेन, राम बलराम, मौसम, सौतन, अँधी, पति पत्नी, और वो, जैसी 100 फिल्मों का लेखन प्रदान कर हिन्दी फीचर फिल्म को एक आयाम दिया।

दुष्यन्त कुमार की दृष्टि में -जिस जमाने में उसने लिखना शुरू किया था और जिस संघर्ष से वह निकलकर आया था, उसने कमलेश्वर को नितांत अन्तर्मुखी बना दिया था। उसके उस आर्दशवादी प्यार ने उसे बाद में चलकर और तोड दिया।[2]

जीवन की विभिन्न परिस्थिति को झेलते हुए भी कमलेश्वर जी विनम्र खुशदिल, खुशमिजाज और मिलनसार आदमी है। लतीफा और चुटकुलों की फुलझडियों से वह महफिलें गुलजार रखते है और बातों को मोडकर बात पैदा करने में उसका जवाब नहीं है।

प्रगति में परिवर्तन का बोध निहित है और कमलेश्वर की प्रगति इसी परिवर्तन की प्रतिक्रिया को समझने का परिणाम है। उसकी कहानियां भाषा और कथ्य समाज के बदलते हुए भिन्न भिन्न परिवेशों की देन है। उसका स्टैमिना परिवर्तन की तेज से तेज रफ्तार में उसका सहायक होता है, इसीलिए कमलेश्वर जी कभी पिछडते नहीं और न प्रयत्न शिथिल होता है। जब वह मैनपुरी जैसे कस्बे से इलाहाबाद में पहुंचा तब भी और जब इलाहाबाद जैसे शहर से दिल्ली जैसी महानगरी में आकर बसे, तब भी आने और बसने के बीच वह निरंतर मानसिक रूप से अपने शिथिल परिवेश के प्रति सजग रहे है। और लेखन की भूमिका बनाते रहे है। 'राजा निरबंसिया' से 'कस्बे का आदमी' के बाद 'नीली झील' से लेकर 'खोई हुई दिशाएं' तक की आपकी कहानियां मध्यवर्गीय जीवन की सादगी से शुरू होकर महानगर की आधुनिकतम संचेतनाओं और संश्लिष्टताओं का प्रतिनिधित्व करती है। और दुष्यन्त जी के अनुसार यह कोई साधारण बात नहीं है कि एक कलाकार अपनी भाव भूमियों पर परिश्रमपूर्वक तैयार की गई अपनी निर्मितियों को इतनी निर्ममता से तोडकर अलग हो जाए और नए सफल प्रयोग करने लगे। कमलेश्वर जी चाहते तो कस्बे की कहानी की तख्ती लटकाए

औरों की तरह एक स्कूल खोले बैठे होते मगर आपने कलाकार का धर्म अपनाया मठाधीशों का नहीं वह निरंतर प्रयोग करता और अपने को तोडता बदलता और संशोधित करता आया है।

आपके लेखन की सबसे बडी उपलब्धि है जो मैं समझ सकी हूं यह है कि आपका जीवन दर्शन प्रभावारोपित नहीं आपके अपने अनुभवों से बने व्यक्तित्व का सहज प्रोजेक्शन है। जीवन की भांति लेखन में भी युग की परस्पर विरोधी स्थितियों में सामंजस्य का एक नया सही और सम्मानप्रद रास्ता खोजने की चाह आपकी आधार शिला है। इन अंधेरों उलझावों और यंत्रणाओं में मनुष्य का वर्तमान रूप खोजने और पहचानने तथा उसे सही सन्दर्भों में प्रतिष्ठित कर पाने की तडप ही उसकी घाती है। इससे इतर वह नितांत अकेला और असहाय है, जिससे हर पल अपने ही संस्कारों, कला रूचियों और स्वनिर्मित प्रतिमानों से जूझना पडता है।

आपकी आसाधारण सफलता का रहस्य है खुद अपने से टक्कर लेने की अशेष सामर्थ्य और मनोबल। रात भर जी जान से लडकर आप हर सुबह उठते ही एक नई लडाई के लिए प्रस्तुत दिखते है। प्रसिद्ध मीडिया मैन कमलेश्वर ने जमीन और जिन्दगी से सीधे जुडे स्त्री पुरूषों के जीवन का चित्रण करने और उनकी छोटी बडी आशा, आकांक्षाओं संघर्षों इत्यादि को व्यक्त करने में विशेष कमाल हासिल किया है। इसी कारण कहानियों के अलावा बिलकुल पहले उपन्यास से ही उन्होंने साहित्य जगत में अपनी विशिष्टता कायम कर ली और एक के बाद दूसरी छोटी परन्तु महत्वपूर्ण रचनाएं देकर अग्रणी उपन्यासकारों में अपना स्थान सुनिश्चित कर लिया। उनके यथार्थ परक लेखन ने रचनात्मकता के साथ-साथ जीवन तथा इतिहास के चिन्तन के नये द्वार भी खेल दिए है - कितने पाकिस्तान जिसका विलक्षण उदाहरण है।

कहानियों के साथ कमलेश्वर जी के समग्र उपन्यासों का भी विशिष्ट ऐतिहासिक महत्व है इनके व्यक्तित्व एवं लेखन के बारे में जितना भी कहा जाए फिर भी इनकी महत्ता अकथनीय है।

कमलेश्वर का उपन्यास साहित्य -

साहित्य समाज का दर्पण होता है। समाज की अच्छाइयों -बुराइयों आदि को साहित्य के माध्यम से ही जाना जाता है। समाज संस्कृति आदि को व्यक्त करने के लिए साहित्य ही जिम्मेदार होता है। व्यक्ति और समाज में संघर्षण और सामंजस्य विकास की एक सहज स्वभाविक प्रक्रिया है परन्तु इस विकास की प्रक्रिया के रूप और उद्देश्य में समयानुसार

परिवर्तन होता रहता है। यह तो ठीक है कि परिस्थितियों द्वारा होने वाले प्रत्येक संघर्षण में व्यक्ति के व्यक्तित्व की स्वतंत्रता, स्वछन्दता और विकास की चाहना रहती है। परन्तु इस स्वतंत्रता एवं स्वछन्दता की कसौटी बदलती रहती है।

एक सड़क सत्तावन गलियां –

एक सडक सत्तावन गलियां 1956 में लिखा गया कमलेश्वर जी का पहला उपन्यास है। सन 68–69 या शायद इसके बाद श्री प्रेम कपूर ने इस पर फिल्म बनाई बदनाम बस्ती। यह उपन्यास कमलेश्वर जी की आरंभिक एवं मौलिक लेखकीय स्मृतियों का प्रथम स्रोत है। कमलेश्वर जी के स्वयं के छोटे से कस्बे का आख्यान है। एक सड़क सत्तावन गलियां उपन्यास एक मध्यवर्गीय जीवन मूल्यों का नितांत आदर्श प्रतिमानिक ग्रन्थ रत्न है। इस उपन्यास में उपन्यास कार ने छोटे से कस्बे एवं उसमें रहने वाले मध्यम वर्गीय की सामान्य जिन्दगी से लेकर जीवन के स्वतंत्र एवं नीति के स्रोतों की खोज के साथ–साथ अहंकार काम एवं प्रेम के यथार्थ का चित्रण किया है।

उपन्यास का प्रारंभ बाढ़ के दिनों उदासी से होते हुए दशहरे दिवाली की धूम पर आ जाता है। संपूर्ण बस्ती रामलीले की धुन में खोयी हुई थी। मोटर ड्राइवर सरनाम एवं उसके चहेते रंगीला और शिवराज से कथा का प्रारंभ होता है। नायक सरनाम जिसका रंगीला एवं शिवराज से कोई रिश्ता नहीं है लेकिन फिर भी उपन्यास कार उपन्यास के अन्त तक इन तीनों को एक दूसरे से जोड़ कर रखे हुए है। नायक सरनाम की बस्ती में साख है हर कोई उसे सम्मान देता है और उसी के प्यार दुलार के कारण रंगीले एवं शिवराज की हरकतों को सहन भी कर लिया जाता है। उपन्यास के प्रारंभ में रंगीले का शिवराज पर आसक्त होना एवं उसे प्रभु अवतार बताकर एवं श्रेष्ठ भक्त की श्रेणी में खुद को रखकर उससे मिलने एवं अपने विकृत प्रेम की तृप्ति का माध्यम बनाना चाहता है – तीन चार रोज शिवराज रंगीले का फलाहार स्वीकार करके स्वयं भंडारे में दे आता था पर बाद में उसे कुछ खलने लगा। रंगीले उसे अपने पास बैठा लेता तरह तरह की बातें करता तुम्हारे हाथ कितने मुलायम है। धन्य है तुम्हारे माँ बाप! भइयन कभी चला करों शहर घुमा लाया करें।

जहां एक सडक सत्तावन गलियां के सभी पात्र आकण्ठ भ्रष्ट है कोई भी कार्य उनके लिए अनैतिक नहीं है। फिर भी सरनाम सिंह जैसे पात्र में सहज स्नेह एवं आत्मीयता के साथ साथ कर्तव्य पालन का मानों विशाल सागर लहराता हो। कथा बंसिरि नायिका से आगे चलती है। सरनाम एवं उसके साथियों द्वारा बंसिरि के घर पर डाका डालने एवं बंसिरि के

साथ दुराचार के बाद कचेहरी पर सब की पेशी होती है और सरनाम भी उपस्थित होता है लेकिन बंसिरि उसे पहचानने से इन्कार कर देती है और उसके बलिष्ट शरीर पर मन ही मन रीझती है लेकिन सरनाम और बंसिरि संपूर्ण उपन्यास में अपने प्रेम को व्यक्त नहीं करते। शिवराज अपने पिता की मृत्यु के पश्चात आश्रम में नहीं रहता और वह भी सरनाम के साथ रहने लगता है। कहीं कही सरनाम के दिल में शिवराज के प्रति समलैंगिक प्रेम की भावना थी वह उसके लिए सभी साधन सामग्री लाता था। लेकिन बंसिरि के द्वारा शिवराज को मर्द एवं कठोर देह दखने की सलाह देने के बाद उसे सरनाम का अपने प्रति इतना लगाव खलने लगता है। शिवराज हेम से प्रेम करता है और लेकिन अज्ञात कारण वश उपन्यास में उन दोनो का प्रेम चरम सीमा पर नहीं पहुंच पाता है। सरनाम, मंगल, रंगीला ये सब मिलकर फिर कहीं डकैती की योजना बनाते है। इसके पूर्व बंसिरि अपने घर से बेघर हो जाती है और सर्कस में काम करने लगती है एक दिन सरनाम के द्वारा लारी ले कर वहां जाने पर एवं बंसिरि को पहचानने के बाद सरनाम के दिल में एक बार फिर प्रेम की हूंक उठती है और अपने साथ भीले जाने की बात करता है। बंसिरि तैयार हो जाती है लेकिन सरनाम समय से नहीं पहुचता है और बंसिरि वहां से चली जाती है।

बस्ती में शिवराज सरनाम और रंगीले अपनी जिन्दगी जी रहे है लेकिन सरनाम के दिल में बंसिरि की चाह रही आती है। एक दिन अचानक सरनाम की नजर सत्तार की रास मण्डली में नृत्य करती हुई गोपियों के ऊपर पडती है और उसमें बंसिरि भी नजर आती है लेकिन एक बार फिर परिस्थिति वश वो मिलकर भी नहीं मिल पाते है। बंसिरि की आहट के लिए सरनाम के कान हमेशा खडे रहते जिले का कोई मेला उसने नहीं छोडा। हर नौटंकी रास मंडली में रात गुजारी पर वह नहीं मिली। उधर शिवराज बाजा मास्टर के माध्यम से कमला नाम की युवती से जा मिलता है वह नृत्य एवं नौटंकी में काम करने वाली युवती है अन्तोगत्वा शिवराज को उससे प्रेम हो जाता है और शिवराज उससे शादी करने के लिए तैयार होता है। उधर बार-बार ठगी गयी बंसिरि गेंदा कवि के हाथ लग जाती है। गेंदा कवि उसे सरनाम की बस्ती में ले आता है। और उसकी बोली लगाता है। अन्तोगत्वा सरनाम अनजाने में बंसिरि को रंगीले के लिए 500 रू. मं खरीद लेता है। लेकिन जब बाद में सरनाम को एवं बंसिरि को पता चलता है तो उन दोनो के मन में एक दूसरे के कृत्यों के कारण के मन में टीस पैदा हो जाती है। बंसिरि शिवराज के माध्यम से सरनाम की खोज खबर लेती रहती है। रंगीले को सरनाम के लिए झूठी गवाही देने के लिए बंसिरि राजी कर लेती है लेकिन झूठी गवाही के आरोप में स्वयं रंगीले को जेल हो जाती है। बंसिरि माँ बनने वाली होती है। उपन्यास के अन्त में एक

बार फिर सरनाम बंसिरि और बंसिरि के बच्चे के देखभाल की जिम्मदारी ले लेता है और बंसिरि के बदले की भावना प्रेम के अश्रु के रूप में बह चलती है।

लौटे हुए मुसफिर -

'लौटे हुए मुसाफिर' सन् 1947 के आसा पास का वातारवरण प्रस्तुत करता है ठीक उस समय का जब देश का विभाजन तय हो गया था और जगह जगह साम्प्रदायिक मारकाट शुरू हो गई थी। पूरी कौम को किस तरह गुमराह किया गय, उपन्यासकार कमलेश्वर लिखते है कि यह यथार्थ परिदृश्य मेरे सामने था।जो कुछ मेरे छोटे से शहर मेजिस तरह पूरा माहौल बदला और संवेदन शून्यता हावी होती चली गयी, वे स्थितियां मुझे रचनात्मक स्तर पर लगातार कुरेदती रहीं ...... खासतौर पर सत्तार और साइकिल वाले रतन के रिश्तों का बदलना मुझे बेचैन करता रहा ...... बावजूद इसके कि मेरे कस्वे में कोई दंगा -फसाद नहीं हुआ था पर जो दंगा फसाद आंतरिक सतह पर हुआ था, वही इस उपन्यास का कथ्य बना।''

नसीबन हिन्दू होते हुये भी बच्चन के बच्चों को पालती है। प्रस्तुत उपन्यास में अंग्रेजो से स्वतंन्त्र होने की जद्दोजहद के साथ-साथ पृथक राष्ट्र बनाने की चाह में भड़के दंगे और मरती हुई इंसानियत के बीच नसीबन जैसे पात्र का उल्लेख कर उस इंसानियत को बचाया गया है। 1857 में सभी धर्म और जाति के लोगो ने कंधा से कंधा मिलाकर के अंग्रेजो से लोहा लिया और हिन्दू मुस्लिम दोनों ही एक दूसरे त्योहारों और और खुशियों में शामिल होते है। लेकिन धीरे धीरे अंग्रेजी हुकुमत इसाईयों के साथ अपना कब्जा बढाते गये। लेकिन उधर धीरे धीरे नौजवान लोग छिप छिप कर अस्पताल के पास वाली कोठरियों में बैठकर सलाह मशविरा किया करते थे उस समय तक हिन्दू और मुसलमान दोनों ही एक जत्थे में थे। शहर से थोड़ी दूर पर चिकवो की बस्ती थी देशी राज के दिनों में बड़े अच्छे हाल थे, लेकिन अंग्रेजी हुकूमत के तूफान को भी इन्होंने झेला था। सन् 1945 में खून की क्रांति नहीं हुई थी लेकिन आन्तरिक रूप से लोगों के मनों में क्रांति हुई और बस्ती की चूल हिल गई थी अपने पन की भावना खत्म हो गई थी नफरत की आग बस्ती को निगल गई थीऔर आँखों में अजनबीपन की चमक उंभर कर संपूर्ण चिकवों की बस्ती उजड़ गई थी। घर नहीं गये तो केवल नसीबन और जुम्मनसाई। उनके घर जीर्ण शीर्ण हो गये थे। धीरे-धीरे स्टेशन के उस पार का डेरा पड़ा हुआ। इन सब को देखकर जहां नसीबन के मन में एक आस बढती वहीं दूसरी तरफ जब वह आज भी उस तरफ देखती है, तो वीरानी और बढ जाती है वे सब बच्चे चले गये थे अब कोई कुकुरमुत्ते बीन कर नहीं लाता और न ही कोई स्टेशन से बीडियों के खोखे और सिगरेटों की पन्नियाँ बटोर कर नहीं लाता। इसके पूर्व बस्ती में नसीबन और बच्चन के प्रति

अफवाह के बारे में चिन्ता न करते हुए उसके बच्चों का पालन पोषण करती है ।सलमा अपने पति (मकसूद) को छोडकर अपने बूढ़े पिता के यहां रहने आ जातीहै और अस्पताल में नौकरी करके अपना खर्च चलाती है। तभी बस्ती में सत्तार आ जाता है और सलमा काउसके प्रति आकर्षण उन दोनों के प्रेम में रूपान्तरित हो जाता है। बस्ती में धीरे-धीरे सबकों उन दोनो के प्रेम के बारे में पता लग जाता है और जुम्मन साई के यहां उन दोनो की पेशी होती है। सत्तार के चुप रहने पर सलमा दृढ़ता से जुम्मन साई के द्वारा पूछे गये प्रश्नों का उत्तर देती है। आन्तरिक धर्म युद्ध के चलते सलमा का पति और उसका साथी सलमा के घर रहने आ जाते है यह देखकर सत्तार परेशान हो जाता है और वह नसीबन से सलमा के बारे में पता करता है नसीबन उनके पति और दोस्त के बीच में चल रहे समलैंगिक सम्बन्ध के बारे में बताती है तब सत्तार सलमा से कही दूर चलने केलिए कहता है लेकिन सलमा इंकार कर देती है। जुम्मन साई के यहां सभा होती है और उसमें सलमा का पति भाग लेकर धर्म के प्रति सभी को उकसाने का काम करता है। सत्तार को यह सब अच्छा नही लगता है और एक फि र एक दिन वह एक दरोगा की हत्या करने की कोशिश भी करता है। और फिर अचानक एक दिन सत्तार कहीं चला जाता है। सलमा को लगातार उसकी चिन्ता रहती है लेकिन वह कुछ कर नहीं पाती है। नसीबन के पास से बच्चन सहित उसके बच्चे पाकिस्तान लेकर चले जाते हैं। सलमा भी अपने पति के साथ चली जाती है। पूरी बस्ती उजड़ जाती है लेकिन उपन्यास के अन्त में बच्चन के बच्चे रोजगार के अवसर पाकर वापस आते है। उपन्यासकार ने सर्म्पूण कथानक के इतिहास के उजडने एवं स्थायित्व में नसीबन को साक्षी बनाकर इंसानियत एकता को जीवित बनाये रखा है।

तीसरी आदमी -

प्रख्यात मीडिया मैने कमलेश्वर जी कृत तीसरा आदमी पति पत्नी और वो फिल्म से मिलता जुलता उपन्यास है लेकिन दोनों ही अपने अपने स्थान पर समाज के यथार्थ को चित्रित करने का सफल प्रयास किया है। इस समसामायिक उपन्यास कार ने महानगर में संघर्षरत एक मध्यवर्गीय परिवार की कहानी है। परिवार क्या है। - देखा जाए तो मुख्यत: संपूर्ण कथा पति पत्नी और पति के एक मित्र की है। संत्रास घुटन और उमस वाली भीड भरे इस महानगर के छोटे कमरे में इन तीनों का रचाव, बसाव मनमुटाव, द्वन्द्व संशय और स्पर्धा इस उपन्यास का विशेष कथ्य है।

कथा का प्रारंभ कथानायक के विवाह एवं संस्कारों से प्रारंभ होता है। कथानायक

नरेश का विवाह एक सुन्दर युवती (चित्रा) से होता है परिवार की कल्पनाओं से परे सुन्दर सुशिक्षित चित्रा के सौन्दर्य पर मुग्ध नरेश चाहकर भी चित्रा के साथ न बैठकर संस्कार वश सामान्य डिब्बे में पितृव्य एवं मित्रों के साथ बैठ जाता है और चित्रा के पास अपने भाई समान भाई (सुमन्त) को भेज देता है। विपरीत लिंग सम्मोहन स्वभाविक एवं प्रकृति गुण है। इसलिए नरेश एवं चित्रा का काम एवं सम्मोहन स्वभाविक पति पत्नी के प्रेम को लालयित रहता है। चित्रा को सुमन्त एवं घर के लोगों के साथ हंसते बोलते देख कर जहां एक ओर नरेश को संतुष्टि प्राप्त होती है। वहीं दूसरी तरफ अपने से चित्रा के द्वारा किये गये संकोच एवं नव दाम्पत्य प्रेम के झिझक को सहन करने में टीस एवं घुटन का अनुभव करता है। युवा पीढी नई आशाओं एवं सपनों से पूर्ण होती है। मायके जाने पर नरेश के प्रति बढते प्रेम की उद्विग्नता को चित्रा पत्र के माध्यम से व्यक्त करती है। परिवार में एक साथ रहने एवं प्रेम की तृप्ति न होने पर नरेश अपना ट्रांसफर दिल्ली जैसे बडे महानगर में करा लेता है और चित्रा के साथ जाकर सुमन्त के छोटे से कमरे में जा बसते है। इस आशा के साथ कि शीघ्र ही एक अच्छे मकान की व्यवस्था कर लेंगे जिसकी पूर्ति अन्तोगत्वा नहीं हो पाती है। महानगर जैसे बडे शहर में एक छोटे कमरे में सुमन्त नरेश एवं चित्रा का साथ-साथ रहना, प्रेम के क्रिया कलाप करना एवं दाम्पत्य जीवन को मधुर बनाने वाले प्रेम एवं काम की अतृप्ति लिये हुए अवसर की तलास में कभी तो नरेश और चित्रा महानगर की व्यस्तता में खुले पार्क एवं शान्त सड़कों में चुहल बन्दी करते है तो कभी सुमन्त के द्वारा शो देखने जाने पर काम एवं प्रेम की क्रियाये सम्पन्न करते है। इस संशय के साथ कि कहीं कोई आ न जाये और हमें देख न ले। शायद यही संशय उसके मधुर जीवन में विकार पैदा करता है। चिन्ता और सुमन्त काफी हिल मिल जाते है यहां तक कि सुमन्त जल्दी आने पर घर के कामों में हाथ बटाने लगता है। और फिर सुमन्त द्वारा चित्रा को प्रूफ रीडिंग का काम ले आता है। चित्रा पूरे घर का काम समाप्त करने के बाद प्रूफ रीडिंग करती है और सुमन्त के शाम को घर लौटने पर अपने काम को लेकर उसके साथ डिस्कशन में व्यस्त हो जाती। एक दिन तो बहस के दौरान सुमन्त चित्रा को काफी झिडक देता है, और उसके पढाई पर छीटाकशी करने पर चित्रा रो पडती है और उस दिन से दोनो के बीच में थोडी मन मुटाव भी दिखता है। इसी दौरान एक दिन चित्रा सुमन्त के साथ काम में व्यस्त हो जाती है। चाय का दौर एक बार खत्म हो जाने पर चित्रा दोबारा चाय लाती है और नरेश को भूल जाती है। उस समय नरेश अपने आप को पहली बार अपमानित महसूस करता है लेकिन चित्रा जल्दी ही चाय देने लगती है और उसी दिन जब चित्रा सुमन्त और नरेश शाम में इकटठा होते है उसी दिन कहीं पर कुछ खोया हुआ था या

कुछ और जुड गया था जिसे वो तीनो ही कोई नाम नहीं दे सकते थे। जो कुछ जुडा था वह शायद अतिरिक्त था .... कुछ ऐसा जो उन तीनों को ही अकेला कर रहा था। उसी दिन से सुमन्त चित्रा का कुछ विशेष ध्यान देता है। नायक नरेश प्रत्येक पुरूष के समान अपने लिए अपनी पत्नी की आंखों में गर्व और इज्जत देखना चाहता है लेकिन उस समय चित्रा की आंखे संयत हो जाती है। कथा के विकास क्रम में चित्रा का भाई दो दिन के लिए दिल्ली घूमने आता है और चित्रा अपने पति नरेश के कार्य अधिकारों को खूब बढा चढा कर बताते हुए नरेश को भी सहमत करती है और नरेश चित्रा और चित्रा के भाई को अपना रेडियों स्टेशन घूमाने ले जाता है और नरेश कुछ ज्यादा ही उत्तेजित होकर चित्रा को अपना कार्यालय दिखाता है। नरेश कहता है कि जिन्दगी में बहुत बार ऐसे क्षण आए मैने गर्व से भरकर चित्रा की आंखों में अपनी सार्थकता खोजनी चाही जो कि प्रत्येक पति स्वभाविक रूप से अपनी पत्नीकी आंखों में खोजने की कोशिश करता है। कमलेश्वर नरेश के माध्यम से कहते है कि शायद हर पुरूष अपनी प्रेमिका या पत्नी की आंखों में अपनी भावनाओं की अतिरजित तस्वीर देखने की कामना रखता है।

धीरे-धीरे चित्रा सुमन्त एवं नरेश के बीच दूरिया बढती जा रही थी। नरेश पति बर्बरता की श्रेणी में नही आना चाहता था और न ही संकोच वश चित्रा से अपने प्रश्नों को सुलझाने की कोशिश करता है। आर्थिक तंगी के साथ-साथ प्रमोशन एवं टी.ए.डी.ए. के चक्कर में नरेश आफिस के काम से एक टूर में जाता है। सुमन्त और चित्रा को ले कर वह बहुत परेशान रहता है लेकिन सुमन्त द्वारा आगरा जाने की बात कहे जाने पर वह निश्चिंत हो जाता है। प्रकृति के मनारम दृश्य में मुग्ध होने के बाद भी उसका अवचेतन मस्तिष्क उसी कमरे में अटका रहता है और वह सुमन्त और चित्रा को लेकर बहुत कुछ सोच डालता है। टूर से वापस लौटने पर एवं चित्रा के द्वारा करते हुए कपडों में कमीज को छुपाने का किया गया अथक प्रयास नरेश के मन में शंका को दृढ़ होने में सहायक तत्व का काम करता है तथा बहाने के दौरान नरेश अपनी ही कमीज देखकर अपने शंका पर पश्चाताप करता है और चित्रा उसे निश्चल एवं अधिक पवित्र दिखाई देने लगती है और परिस्थिति में एक बार फिर नवयौवन पूर्ण दम्पत्ति छिटपुट प्रेम करते है। जब कि चित्रा कों अचानक इस तरह के प्यार की कभी आशा नहीं थी नरेश के द्वारा अचानक किये गये प्रेम से भाव विभोर हो उठती है। नरेश के रहने पर चित्रा और सुमन्त के द्वारा बिल्ली घुसने की बात के द्वारा जस एक के द्वारा इस बात को सिद्ध करते है कि वे दोनो नरेश के न रहने पर किस प्रकार वे अलग-अलग सोते थे। वे इतने व्यस्त थे कि एक दूसरे से मिलना एवं बैठना तक नहीं हो पाया था और उन दोनो के

इस कथ्य एवं नाट्य से नरेश को और घुटन सी महसूस होती है। कथा के विकास क्रम में एक दिन नरेश अपने काम से घर जल्दी लौट आता है लेकिन घर पर ताला देखकर वह अचम्भित हो उठता है तभी नई दिल्ली स्टेशन तरफ घूमने जाने पर वह चित्रा और सुमन्त को साथ-साथ देखता है सुमन्त चित्रा के कंधे पर हाथ रखे हुए एवं चित्रा उन्मुक्त हंसी हंसते हुए चले जा रहे थे। यह देखकर नरेश को बहुत धक्का लगता है। चित्रा के अन्दर का डर एवं संकोच धीर-धीरे समाप्त होता जा रहा था, इसके साथ ही साथ वह तटस्थ होती जाती है। घर में वे तीनों ही बहुत अलग अलग से रहते।

कथा के अग्रिम चरण में नरेश चित्रा से ट्रांसफर करवा कर वापस चलने को कहता है। लेकिन चित्रा इन्कार कर देती है। नरेश का भोपाल चले जाना एवं अन्तोगत्वा पुत्र रत्न की सूचना प्राप्त होने के बाद एक बार फिर नरेश सब कुछ भुला कर चित्रा एवं अपने बच्चे के साथ रहने का निश्चय करके दिल्ली वापस आता है एवं चित्रा भी बच्चे को लेकर पीहर से आती है। मातृत्व नारी के काम प्रेम की चरम परिणति होती है। नरेश को चित्रा माँ के रूप में और भी सुन्दर दिखती है। लेकिन सुमन्त का फिर से आना मिलना जुलना गुडडू (बच्चा) के साथ खेलना आदि पर कथानायक नरेश उदारता वश माफ कर देता है लेकिन धीरे-धीरे तीसरी छाया के रूप में कथानायक नरेश के अवचेतन मस्तिष्क पर छाने लगता है और एक बार फिर नरेश गुडडू के बीमार होने पर अपनी जिम्मेदारी को आर्थिक तंगी के कारण सफलता से नहीं निभा पाता है। सुमन्त के द्वारा सहायता करने एवं चित्रा का एक बार फिर रूझान सुमन्त की तरफ देखकर अवचेतन मस्तिष्क पर छाई हुई तीसरे व्यक्ति की छाया नरेश के चेतन मस्तिष्क पर अवसाद बनकर प्रकट होती है। चित्रा फिर से गर्भवती होती है और प्रसव खर्च बहन करने से इन्कार कर नरेश फिर से चला जाता है। सुमन्त के द्वारा प्रसव खर्च बहन कर चित्रा एवं सुमन्त साथ-साथ रहने लगते है। तभी एक दिन फिर नरेश दिल्ली जाता है। सुमन्त नरेश से सम्पर्क करता है। नरेश चित्रा एवं बच्चे से मिलने जाता है चित्रा का अचानक नरेश को पर्दा करना एवं संकुचित भाव से बाते करने पर नरेश के सामने संपूर्ण स्थित स्पष्ट हो जाती है। सुमंत के बाहर जाने की सूचना जानकार नरेश एक बार फिर चित्रा को बाहों में भरकर अपने जीवन के बारे में सोचने की कोशिश करता है तभी चित्रा उसके हाथों को झिडक कर दूर खडी हो जाती है कि अब यह नहीं होगा और न ही हो सकता। उसके इस उत्तर से नरेश पागल हो जाता है और वह चीख पडता है कि जो मेरे साथ हुआ वो क्या था ? लेकिन चित्रा तटस्थ भाव से बच्चों को लेकर रसोई घर में अन्दर से चिटकनी बन्द कर लेती है। नरेश हताश एवं क्रुद्ध हो कर वापस लौट जाता है।

कथा के अंतिम दौर पर नरेश को पता चलता है कि उसके आने के बाद सुमन्त कभी लौट कर नहीं आता है वह एक होटल में जाकर फॉसी लगा लेता है। नरेश ये भी सोचता है कि चित्रा को पुलिस ने खूब परेशान किया होगा लेकिन चित्रा ने नरेश को नहीं बुलाया। लेकिन नरेश के अब जाने से होता भी क्या क्योंकि नरेश को यह बात महीने बाद पता चली थी।

जीवन यापन के लिये संघर्ष और आर्थिक दबाव के तनाव ही विशेष तौर पर इस कथ्य के मूल में है। तीसरा आदमी एक संशय की कथा है –जिसमें पति अपनी पत्नी पर शंकालु निगाह रखने को विवश होता है। उसका अजीज दोस्त एक वक्त के किए तीसरा आदमी का प्रतीकार्य बन जाता है। यह उपन्यास वक्त की नजाकत है।

डाक बंगला –

कमलेश्वर जी के चर्चित डाक बंगला में इरा नायिका अनवरत संपूर्ण उपन्यास में जीवन भर संघर्षरत रहती है। नृत्य संगीत प्रिय होने के कारण उसे नाटक से अत्यधिक प्रीति है। इरा स्वयं नाटक लिखती है और उसके द्वारा लिखित नाटक के मंचित होने पर वह स्वत: उसमें नायिका बनती है और सफल होने पर सप्ताह पर्यन्त उसके प्रभाव से आकान्त रहती है। नाटक प्रिया होने के कारण इरा की आसक्ति नाटकों के प्रति दैनन्दिन तीव्र होती जाती है। वह युनिवर्सिटी की छात्रा होते हुए भी युनिवर्सिटी के सांस्कृतिक कार्यक्रम में सहभागिता लेते हुए नाटक करती है और यहां प्रथम अनुभव उसे विमल नामक दूसरे नाटक कर्मी के साथ होता है जो उसका प्रेमी बनता है। विमल भी नाट्य मंच से जुडा हुआ है। शिमला में नाटक समारोह का आयोजन होता है उसमें नाटय क्लब को आमत्रण मिलता है जिसके विमल और इरा सदस्य है। क्लब के सभी सदस्य शिमला जाते है और शिमला में ही इरा और विमल का प्रेम शारीरिक सम्बन्ध में बदल जाता है। विश्वविद्यालय की परीक्षा होते ही इरा अपने फौजी पिता के पास चली जाती है। जिन्हें नृत्य संगीत नाटक से नफरत थी। वे नाटकों में भाग लेना और नंगे होकर नाचने गाने में कोई अन्तर नहीं मानता था। वे कभी भी ये सब पसन्द नहीं कर पाये और इस स्वत: निर्णय लेकर पिता से सदा सर्वदा के लिए मुक्त हो कर अपने प्रेमी विमल के साथ रहने दिल्ली आ जाती है। इरा और विमल स्थायी रंगमंच खडा करने की जीतोड़ कोशिश करते है पर कर्ज के सिवाय कोई भी लाभ नहीं होता। स्थिति की भयावहता इस प्रकार बढ जाती है कि दोनो ही एक एक पैसे के लिए मोहताज हो जाते है और इरा को – " बतरा जैसे व्यक्ति के यहां काम करना पडता है और नाटक मे सफल होने एवं इरा का बतरा जैसे व्यक्ति के यहां काम करने पर विमल कुण्ठित होता गया और इरा उदास होती जाती। समय के चलते दोनो हताश होते जाते है। लेकिन जीने के लिए इरा विवश होकर

नौकरी के इस प्रस्ताव को विचारार्थ स्वीकार कर लेती है और उधर इरा का फौजी पिता अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए दूसरा विवाह कर लेता है। अस्तु इरा पास भी नहीं जा सकती क्योकि इरा के पिता हमेंशा एक बाप की तरह पेश आने की मजबूरी में कैद था कभी भी मित्र की तरह व्यवहार नहीं कर सकता था। और इन सबका उत्तर देने के लिए इरा अपने को तैयार करती है और काल अटेन्डेन्ट की नौकरी कर लेती है। किन्तु यही से इरा के प्रति विमल के मन में शंका उत्पन्न हो जाती है वह इरा का पीछा करता है कि कहीं इरा का अनुचित सम्बन्ध तो बतरा से नहीं हो गया किन्तु स्पष्ट नहीं करता। कुछ सीमा तक दोलायमान रहते हुए विमल अन्तत: बिना किसी सूचना के ही इरा को अकेली छोडकर चला जाता है। विमल वापस नहीं आता जिससे इरा को अकेला ही रहना पडता है और अपने अस्तित्व के रक्षा के लिए धीरे-धीरे इरा बतरा के साथ रहने लगती है। शीला के द्वारा इरा को बतरा के घर से निकाल दिया जाता है। इरा अच्छी तरह जानती है कि स्त्री जीवन में पुरूष नामक प्राणी होना चाहिए वह रूक्ष हो या काठ का ही क्यों न हो। वह रक्षा कवच का कार्य करता है, इसीलिए हर लडकी एक कवच ढूढती है वह चाहेपति का हो, भाई का हो या किसी झूठे रिश्तेदार का। इस कवच के नीचे वह अच्छा या बुरा हर तरह का जीवन बिता सकती है। जैसे उसे पहनने के लिए साडी चाहिए वैसे ही एक पुरूष कवच चाहिए। विमल के चले जाने पर इरा नितांत अकेली हो जाती है। अन्त में विवश होकर बतरा के यहां ही रहने चली जाती है औरयहीं से विमल का नाम उसकी जिन्दगी से मिट जाता है।''

हेमेन्द्र बतरा एक खूबसूरत और धनी व्यक्ति होते हुए भी विधुर का जीवन जीता है। उसकी प्रेयसी शीला कभी कभी आकर पत्नी की तरह रहती है और धन ऐठकर चली जाती है। ऐसे ही बही शीला एक बार पुन: बतरा के यहां कुछ समय रहकर चली जाती है। बतरा दुखी होता और रात्रि में रोता है जिसे सुनकर इरा बाहर निकलकर आती है तो बतरा उसे अपने कक्ष में ले जाकर शीला की वास्तविक जिन्दगी का रहस्य खोलता है और इरा को अपनी जिन्दगी का अंग बना लेता है। इरा अब उसकी अन्टेडेन्ट न बनकर पत्नी बन जाती है। यद्यपि विवाह संस्कार नहीं होता तथापि पति पत्नी का स्तर मिल जाता है।

यह इरा की जिन्दगी का दूसरा मोड होता है। कुछ समय तक सामान्य स्थिति रहती है किन्तु शीला के वापस आते ही शीला और इरा में द्वन्द्व शुरू हो जाता है और अन्तत: शीला विजयी होकर बतरा के जीवन से इरा को सदैव के लिए निकाल कर फेक देती है।

बतरा ने उपकृत करते हुए इरा को डॉ. चन्द्रमोहन के अनाथ बच्चों के ट्यूटर गार्जियन का कार्य दिलवा देता है। डॉ. चन्द्र मोहन के सान्निध्य में आना इसकी जिन्दगी की तृतीया

स्थिति है जो असम के विजयगढ़ क्षेत्र में सेना में डाक्टर होकर नागा विद्रोह को कुचलने के लिए जाने वाली सैनिक टुकडी के साथ जाते है। वहीं शिलांग में उनकी एक मात्र बहिन भी अपने परविार के साथ रहती है। बच्चों को पढाने और देखभाल करते हुए इरा का बच्चों से आत्मिक लगाव हो जाता है। डाक्टर चन्द्र माहेन भी इसको प्यार करने लगते है किन्तु व्यक्त नहीं कर पाते। इरा को देखकर भाव प्रदर्शन करते है किन्तु अधिकार प्रदर्शन नहीं कर पाते। आसाम जाते हुए वह इरा के सामने विवाह का प्रस्ताव रखता है और इरा समाज में सुरक्षा पाने के लिए प्रस्ताव को स्वीकार कर लेती है। लेकिन एक अधेड उम्र का व्यक्ति आखिर क्या सुख दे सकता है मात्र उत्तेजना पैदाकर परेशान करने के सिवाय। डाक्टर की काम वृत्ति को देखकर एवं उसमें असमर्थ होने पर इरा को टीस हो जाती है। कभी कभी तो वह डाक्टर को कमरे में बन्द कर देती है तो वह फूट फूट कर रोता है और भविष्य में ऐसा न करने का वचन देता है। नागा विद्रोह में डॉक्टर मारा जाता है लेकिन वसीयत में पच्चीस हजार इरा के लिए छोड जाता है।

इस प्रकार तीसरा मोड का दुखद अन्त होता है किन्तु डाक्टर ने इरा को एक आंतरिक शक्ति अवश्य ही प्रदान कर दिया था। और वह थी सम्पत्ति इरा स्वछन्द और स्वतंत्र जीवन जीने के लिए निर्मुक्त हो जाती है किन्तु उसके कोमल मन पर पुराने प्रेमी विमल की स्मृतियां समय-समय पर अपना प्रभाव दिखलाती रहती है। अपना संस्मरण तिलक को सुनाकर इरा विमल और सोलंकी लिहखट के डाक बंगले से दूसरे दिन की यात्रा कोल्हाई की तरफ प्रारंभ कर और भ्रमण करते हुए वापस आ कर माडू के डाक बंगले में रूकते है और यहां से इरा के अतिरिक्त सब अलग अलग होकर चले जाते है। इरा की सहेली का पत्र आता है कि विमल चौदह वर्ष की सजा काटकर वापस आने पर इरा को खोज रहा है। यह सूचना प्राप्त होते ही इरा एक सूटकेस मात्र लेकर चुपचाप कश्मीर से नागपुर चली आती है जिस की सूचना तिलक को सोलंकी से प्राप्त होती है।

इरा विमल को प्राप्त करके मानों सर्वस्य अर्जित कर लेती है। दिल्ली में दो वर्ष पश्चात विमल से भेंट हाने पर वह बताती है कि विमल तपेदिक का रोगी हो गया था। उसकी स्थिति डॉ. चन्द्र मोहन के सदृश हो यगी थी। क्रान्तिकारियों के साथ पकडा गया था। और राष्ट्रविरोधी दस्तावेज भी उनसे प्राप्त हुआ था जिसके कारण उम्र कैद की सजा भोगते हुए तपेदिक का रोग हो गया था। इरा पूर्ण मनोयोग से उसकी सेवा करती है और विमल के अस्तित्व की रक्षा करने का प्रयास करती है किन्तु क्षयरोग की तीव्रता से विमल का प्राणान्त हो जाता है। कुछ समय तक विमल की स्मृतियां को संजोये हुए वह विमल के कमरे में रहती है। जीवन यापन

के लिए चण्डीगढ में नौकरी कर लेती है – इरा विमल के कमरे में अपना आधिपत्य इस आशय से बनाये रखती है कि पता नहीं कब पुन: दिल्ली लौटना पडे तब अस्तित्व की रक्षा के लिए दर दर की ठोकरें न खानी पडे । इरा अपने जीवन की समस्त घटनाओं को बहुत ही आत्मीयता औरसहजता तथा विश्वास के साथ तिलक को सुनाती है ।

डाक बंगला नामकरण भी इसीलिए हुआ है कि संपूर्ण कथानक – इरा का जीवन वृत्त यही खुल सका था इसीलिए – कितने अपने और साथ ही कितने बेबाने होते है डाक बंगले । मुसाफिर आते है और चले जाते है । लेकिन उनकी यादें उसी डाक बंगले में रह जाती है ।

काली आँधी –

समसामायिक राजनीति से प्रभावित उपन्यास काली आँधी प्रसिद्ध उपन्यास कार कमलेश्वर जी के लेखन को एक नये परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करता है । काली आंधी में केवल राजनीति में चरित्रहीनता और भ्रष्टाचार का चित्रण नहीं है । इस उपन्यास के कथ्य में खासतौर पर दो तरह की वैचारिकता एक ही साथ गुंथी हुई है भ्रष्टाचार के अतिरिक्त दूसरी वैचारिकता है महत्वाकांक्षा के विस्तार की सफलता के नशे की । यह उपन्यास अपने रचनाकाल में चर्चा का विषय रहा और जब इसी पुस्तक पर आधारित फिल्म बनी तो वह फिल्म भी चर्चा का खास विषय रही है ।

काली आँधी राजनीति के विद्रूप चेहरे को उजागर करने के उद्देश्य से भी लिखी गयी थी । भारतीय राजनीति में अवसर वादिता बढने गरीबी और भूख मिटाने की खोखली मुहिम चलाने और खासतौर पर भ्रष्आचार पनपने का यही दौर रहा है । वोट के वक्त जिस प्रकार के वोट किये जाते है और उसके परिणाम वास्तविक तौर पर क्या होते है काली आंधी आज भी समय की धार पर खरी है ।

कहानी के प्रारंभ एवं विकास में वैरिस्टर प्रताप राय की इकलौती पुत्री मालती खजुराहों के रहने वाले जगदीश वर्मा उर्फ जग्गी बाबू से खजुराहो दर्शन के समय मिलती है और दोनो में प्रेम हो जाता है । उनके प्रेम का द्योतक मालती के जूडे में लगा पीला गुलाब होता है । छतरपुर वापस आने पर उच्च शिक्षा के लिए जब मालती को विदेश भेजने की तैयारी शुरू हुई तो मालती दृढता से विदेश जाने से इंकार कर देती है और उसकी इच्छा से ही बीस वर्ष की आयु में ही उसका विवाह जगदीश वर्मा के साथ सम्पन्न हो जाता है । विवाह के लगभग एक साल के पश्चात वैरिस्टर प्रताप राय की मृत्यु हो जाती है । प्रताप राय की जायदाद की देखभाल उनका कार्यालय सहायक गुरूसरन लगभग तीन वर्ष तक करता है । दिल्ली की

संस्कृति में पली बढी मालती को राजनीति का आकर्षण आकर्षित कर लेता है और वह राजनीति में जग्गी बाबू की सहायता से उतर पडती है और अपने पिता जी के सहायक रहे गुरूसरन को अपना वैयक्तिक सचिव बनाकर खजुराहों वापस बुला लेती है। मालती सर्व प्रथम म्युनिसपल बोई का चुनाव लडती है। यही से सफलता का जो प्रथम सेहरा उसे बंधा वह संसद के चुनाव तक स्थायी रूप से बंधा ही रहा। सफलता उनके कदम चूमती चली गयी और यह सफलता कुछ इस रफ्तार से आई कि उनकी और जग्गी बाबू की जिन्दगी को तोडती छोडती निकल गयी। प्रथम म्यूनिसपल बोर्ड कमेटी के चुनाव लडने में हंगामा बहुत होता है। नानाविध असत्य अफवाहें और जनापवाद भी प्रचारित प्रसारित होता है। इसका प्रमुख कारण था कि जग्गी बाबू खजूराहो में एक टूरिस्ट होटल संचालित करते थे प्रथम बार राजनीति में घर से दोनो साथ-साथ निकले थे और जग्गी बाबू ने मालती के लिए भाषण लिखकर रटवाया भी था। राजनीति का ज्वर मालती पर इतना तीव्र चढता है कि उसका घर परिवार उससे पीछे छूटता जाता है। भाइयों बहनों की आवाज फैलती जाती है। विस्तृत होती जाती है। आवाज की गूंज गहराती चली जाती है। परिणामत: जग्गी बाबू हर बार इस आवाज के साथ पीछे छूटते गये। प्रथम जीत पर जनता स्वागत समारोह का आयोजन करती है। पति पत्नी एक ही जीप पर साथ-साथ बैठकर आते है। मंच पर दोनो एक साथ बैठते है। लेकिन जिला परिषद चुनाव जीतने पर होने वाले समारोह में मालती अग्रिम पंक्ति की कार में और जग्गी बाबू अनुगामी कार में मालाये संभाले बैठे थे। विधान सभा के चुनाव में जीतने पर जग्गी बाबू सबसे पीछे वाली कार से आते है और मंच पर चढते समय एक वालांटियर द्वारा रोक लिए जाते है और तब जग्गी बाबू को अपना परिचय देने पर और वालांटियर के द्वारा यह कहने पर कि हां हां सभी मालती जी के घर वाले ही है। जग्गी बाबू को बहुत अपमान महसूस होता है। गुरूसरन की अचानक दृष्टि पड जाने से मामला सुलझ जाता है। धीरे-धीरे जग्गी बाबू उदासीन हो जाते है और अपना अधिक समय खजुराहो के होटल में व्यतीत करने लगते है। सारे जगह में बात शुरू हो जाती है कि जग्गी बाबू का होटल लोगों को पटाने के लिए है। यह सुनकर मालती उनसे होटल बन्द करने को कहती है और जग्गी बाबू के पूछने पर वह कहती मै नही सुनना चाहती कि पब्लिक में यह होटल हमारी काली आमदनी एवं गंदे कामों के लिए इस्तेमाल होता है। जग्गी बाबू इसी बात को लेकर दोनो में खूब बहस होती है और उनके दाम्पत्य जीवन में विखराव आ जाता है। अन्तोगत्वा इन घटना चकों का परिणाम होता है कि जग्गी बाबू अपना टूरिस्ट होटल बन्द करके पुत्री लिलि को लेकर पंचमढी चले जाते है और वहां एक पब्लिक स्कूल में लिलि को प्रवेश मिल

जाता है। रहने के लिए होस्टल की सुविधा भी मिल जाती है। निश्चित होकर जग्गी बाबू वहां से सीधे भोपाल जाकर होटल गोल्डन सन में सहायक मैनेजर की नौकरी करने लगते है। अनुभव सम्पन्न होने के कारण शीघ्र ही वह प्रोन्नति प्राप्त कर मैनेजर बनते है और वही रहने की सुविधा भी प्राप्त हो जाती है। मालती जो स्वयं राजनीति के क्षेत्र में काम करती हुई अपनी गृहस्थी न केवल तहस नहस कर डालती है वरन पुत्री और पति को भी खो बैठती है यहां तक कि महिलाओं को सम्बोधित करते हुए बह अपने एक कुशल पत्नी होने का मिथ्या सम्भाषण भी देती है और उन्हें राजनीति के लिए प्रेरित करती है। धीरे से मालती महिला सेवा दल को गठित कर लेती है और मंत्री प्रसन्न होकर मालती को अपने मंत्रिमंडल में मंत्री बना देते है। दूसरी तरफ राजनीति से लुब्ध होकर जग्गी बाबू अज्ञात वाश में चले जाते है। जग्गी बाबू भोपाल में गोल्डन सन में मैनेजरी करने लगते है। चुनाव दौर पर मालती भोपाल जाती है और गोल्डन सन में ही ठहरती है और कई तरह के हथकण्डों के पश्चात चुनाव जीत जाती है। जब सभी लोग उनकों जीत की बधाइयों दे रहे थे तभी अवकाश में आई हुई लिलि भी उससे आटोग्राफ ले आती है और पता लगने पर कि वह मेरी बेटी है और वे दोनो यहां है तो मालती जी एवं गुरूसरन दोनो जग्गी बाबू के कमरे मिलने जाते है। मालती लिलि से अपने परिचय की बात कहने पर जग्गी बाबू व्यंग्यात्मक दृष्टिकोण से बात को टाल देते है और जिस दिन मालती को लौटना होता है ठीक उसी दिन लिलि को भी पचमढी वापस जाना है।

कहानी के अन्त में के रूप में चुनाव जीतकर वापस जा रही होती है दोनो रेलवे स्टेशन में दो अलग-अलग दिशाओं में जाने वाली गाडियों में लिलि और मालती चले जाते है। और जग्गी बाबू शून्य में देखते रहते है।

आगामी अतीत

कमलेश्वर की यह कृति 'आगामी अतीत'-दूसरे प्रकार का कथानक प्रस्तुत करती है। इसका कथ्य रोमांटिक अवश्य दृष्टिगोचर होता है, परन्तु इसमें निहित रोमांटिकता के भीतर की जो टीस उभर कर हमारे समक्ष आती है उसके सन्दर्भ विशेष रूप से सामाजिक आर्थिक निर्भरताओं से सम्बन्ध रखते है।

कलकत्ता का प्रसिद्ध केमिकल्स दवाओं का निर्माता कमल बोस डाक्टर चिकित्सा क्षेत्र में बडी उपलब्धियां अर्जित करता है। भारतवर्ष के किसी भीकोने में जाने पर मानसी केमिकल्स के विज्ञापन वाला होर्डिंग उसकी प्रशस्ति का स्वत: साक्षी रहता है। प्रसिद्धि की उंचाई पर

पहुंचते पहुंचते कमल बोस चंदा निरूपमा से विवाह कर लेता है जो कि बहुत बडे चिकित्सा क्षेत्र की कम्पनी मालिक की बेटी है। लेकिन कमल विद्यार्थी के जीवन में ही चंदा से उसकी भेंट होती है और उन दोनो के बीच वहीं से प्रेम प्रसंग के बीज पडते है।

प्रेम का प्रतिफल यह होता है कि धीरे-धीरे दोनो शारीरिक सम्बन्ध स्थापित कर लेते है। उधर डाक्टरी की परीक्षा देने कमल कलकत्ता चला जाता है और फिर आर्थिक निर्भरता एवं महत्वाकांक्षी होकर वहीं रह जाता है और निरूपमा से विवाह कर लेता है। उधर चन्दा गर्भवती हो जाती है और सामाजिक व्यवस्था के प्रतिफल स्वरूप चंदा को समाज में रहना कठिन हो जाता है। इन्हीं परिस्थितियों के चलते उसके पिता की मृत्यु हो जाती है और चन्दा भी परिस्थितियों का सामना करते हुए के लकडहारे से शादी कर लेती है। चन्दा के एक लडकी उत्पन्न होती है जिसका नामकरण चांदनी रखा जाता है। कालान्तर में उसका लकडहारा पति जंगल से लौटकर नहीं आता है और चन्दा कुछ दिनों तक वैद्यकी करके अपना और अपने बेटी के जीवन का निर्वाह करती है। और जीवन के अग्रिम छोर पर वह मानसिक अवसाद से ग्रसित होकर पागल हो जाती है और फिर इस दुनिया से चली जाती है।

उधर चांदनी परिस्थिति वश वेश्यालय की शरण लेती है। वार्धक्य आ जाने पर और जीवन के अग्रिम छोर पर पहुंचने से डॉ. कमल को उनका एकाकीपन कष्ट एवं पीडा देता है। धन, पद प्रतिष्ठा से रिक्तता दूर नहीं की जा सकती है। यह अनुभव कर वह एकान्त वास के लिए कलकत्ता से दार्जलिंग चला जाता है। और वहां उसे एक बार फिर चन्दा की याद आती है तब वह चन्दा की खोज में निकल पडता है और उसी खोज में उसकी भेंट चंदा की बेटी चांदनी से हो जाती है जो कि एक कुशल वेश्या बन चुकी होती है और कमल बोस उसे बेटी के रूप में अपने डाक बंगला में रख कर सुधारने का प्रयत्न करता है। दैहिक धन्धा करती है। कमल बोस के द्वारा बेटी कहने पर वह झिडक उठती है लेकिन कमल बोस हार नहीं मानता है। देह व्यापार के लिए प्रस्तुत चांदनी सजधज कर कमल बोस के कक्ष मं प्रवेश कर उन्हें बांहों में कसती है। लेकिन तभी कामावेश के वंशीभूत चांदनी को क्रोध से आवेशित होकर चांदनी कमल बोस चांदनी को सारी सच्चाई बता देता है, कि क्यों उसने उसे बेटी क्यों कहा था। कमल बोस बताता है कि हाँ चंदा तेरी माँ जिन्दगी भर मेरा ही इन्तजार करती रही है। मैं वहीं डाक्टर हूं और तब चांदनी विफर पडती है कि तुम वही डाक्टर हो जिसने मेरी माँ की जिन्दगी खराब की थी। कमल बोस भावाविष्ट हो जाता है और चांदनी से कहता है कि अगर किस्मत में होता तो तू मेरी और चंदा की लडकी होती। लेकिन चांदनी विश्वास नहीं कर

पाती और चली जाती है। कमल दार्जलिंग से वापस कलकत्ता जाने लगता है तब मार्ग में चांदनी उसका फोटो दिखाती है।

कथा के अन्त में कमल बोस चांदनी को पुत्री के रूप में स्वीकार करता हुआ उसे कलकत्ता साथ ले जाना चाहता है लेकिन चांदनी तैयार नहीं होती है और तब वह अकेले ही उस फैसले को स्वीकार करके वापस चला जाता है।

वही बात

वही बात उपन्यास एक महत्वाकांक्षी पति और उसकी दमित पत्नी का द्वन्द्व है। पति के स्थानांतरण एवं व्यस्तता के दौरान पत्नी का एकान्त और भी गहरा हो जाता है और उससे खुशहाल दाम्पत्य जीवन विघटित होने लगता है। उपन्यास का सम्पूर्ण कथावस्तु में दमित पत्नी पुनर्विवाह रचाती है। संपूर्ण कथानक स्त्री पुरूष संबंधों की एक नई परिभाषा तैयार करती है। सामाजिकता की सही और सुदृढ दिशा के मार्गदर्शन में निहित उपन्यास वही बात संक्षिप्त कथावस्तु इस प्रकार है।

कथानक के प्रारंभ में प्रशांत कस्ट्रक्शन एरिया में चीफ इंजीनियर के पद पर अपनी पत्नी समीरा के साथ आता है और उन दोनो के आने पर डिप्टी साहब, खजांची बाबू ओवरसियर बाबू अर्दली माली खानसामा सभी मिलकर स्वागत करते है। समीरा को वहां के प्राकृतिक दृश्य वादिया पहाडी ढलान बहुत अच्छे लगते है। और प्रशांत और समीरा चांदनी में एक दूसरे को प्यार करते है। और सभी से परिचय करते समय समीरा और प्रशान्त डिप्टी साहब नकुल से मिलते है। एक दिन नकुल शहर से कुछ आचार पापड थर्मस एवं समीरा के लिए कुछ पत्रिकाएं लेकर आता है लेकिन समीरा को यह अच्छा नहीं लगता है और पत्रिकाओं का पुलिन्दा खिडकी से बाहर फेक देती है। पीछे के रास्ते से जाते समय नकुल को वह पुलिंदा मिल जाता है और उसकी समझ में नहीं आता कि आखिरकार वह पुलिंदा फेका किसने है। जिन्दगी काम में व्यस्त होती चली गई। प्रशान्त कन्सट्रक्सन में इस कदर व्यस्त हुआ कि वह चाह कर भी समीरा के लिए समय नहीं निकाल पा रहा था और समी धीरे-धीरे एकाकी अवसाद में डूबती जा रही थी। दोनो के बीच में उतनी ही दूरिया बढती जा रही थी। तभी कन्ट्रक्शन के काम से एवं आदिवासियों की समस्या के कारण प्रशान्त को दिल्ली जाना पडता है प्रशान्त के साथ समीरा भी जाने के लिए उद्यत होती है लेकिन प्रशान्त उसे समझा कर चला जाता है। समीरा एकान्तिकता के आगोश में समर्पित हो जाती है। दो दिन कहकर चार दिन में लौटना और फिर बार-बार काम से बाहर जाना और समीरा अकेली बरामदे में

बैठती टहलती लेकिन घडी की सुई थी कि आगे बढने का नाम नहीं लेती। एक दिन बस्ती के लोगो का जायजा लेने प्रशान्त बस्ती जाता है और वहां से कुछ मुखौटे और मूर्तियां ओवरसियर बाबू प्रशान्त को देते है और तब समीरा उत्सुकता के साथ उन्हें घर में सजाती है।

कथा विकास के दौरान जब एक बार प्रशान्त बाहर चला जाता है तब समीरा रेलिंग में खडी रहती है और दूर से नकुल की गाडी की बत्ती दिखाई देती है। तब नकुल और पास आता है और समीरा से घूमने चलने की बात करता है और तब समीरा उसे काफी पीने के लिए कहती है। तब दोनो बरामदे की सीढी में बैठकर काफी पीते है और फिर घूमने चले जाते है। अचानक पत्थर पर पैर पडने से समीरा का शारीरिक संतुलन विगड जाता है और नकुल उसे थाम लेता है लेकिन दोनो का संतुलन बिगडने से वे दोनो चार छः कदम फिसल जाते है और दोनो बहुत पास आ जाते है। एकाकी अवसाद से ग्रसित समीरा पेड के तने से लिपटकर रोने लगती है और नकुल उसे अपने सीने का सहारा देता है। उस दिन के बाद दोनो आपस में नहीं मिलते। प्रशान्त भी अपने नये काम की व्यस्तता को लेकर उत्सुक रहता है और नकुल आदिवासी बस्ती में उन्हें समझाने जाता है और वहां उसे पीट दिया जाता है। घायल नकुल को समीरा देखती है और फिर उसके लिए हल्दी पीस कर भेजती है तथा फोन के हाथों कुछ पढने के लिए मगवाती है। तब नकुल उसी पुलिन्दे की धूल साफ करके भेजता है समीरा उन्हें पढती है। प्रशानत कन्सट्रक्सन में और नकुल व्यस्त हो कर भी दोनो के बीच में होती है। आदिवासियों की बस्ती खाली कराने का श्रेय प्रशान्त नकुल को न देकर अपने उपर लेता है और यह सब समीरा चुपचाप देखती रहती है। नकुल प्रशान्त द्वारा डिक्टेट कराई गई रिपोर्ट को देखकर पागल हो जाता है, क्योंकि प्रशान्त नकुल द्वारा आदिवासियों से किये गये वादों में फेरबदल कर देता है जिसे देखकर नकुल आहत हो जाता है और प्रशान्त उसे खरी खोटी सुनाता है। नकुल बिना कुछ कहे साइट से वापस आ जाता है। बस्ती खाली करा लेने की सफलता में प्रशान्त सभी को खाने में बुलाता है और उसी की खरीदारी करने समीरा बस्ती जाती है और समीरा को नकुल मिल जाता है और तुरन्त मीनू तैयार करके उसकी खरीददारी करवा देता है। समीरा को नकुल का साथ अच्छा लगने लगता है। रात में सभी खाने आते है और नकुल के सुझाव से प्रशान्त अपनी कामयाबी एवं समीरा खाने की तारीफ से लद गये। प्रशान्त को थर्मल प्रोजेक्टर का काम मिलने से प्रशान्त ज्यादा से ज्यादा वक्त अपने नये काम में देता और साइट का काम नकुल को दे देता और नकुल आधी रात तक बरामदे में बैठकर काम करता और समीरा कभी कभार उसे काफी दे

जाती थी लेकिन मुंह से कुछ नही बोलती थी पर आंखों ही आंखो में बहुत सी बाते हो जाती थी। प्रशान्त समीरा को हमेशा समझाता था एक सफल व्यक्ति को ही दुनिया पूछती है और समीरा कहती कि उस सफलता की उंचाइयों के बीच कहीं मैं पीछे न छूट जाउ। और फिर एक दिन समीरा और नकुल मिलते है। तब नकुल प्रशान्त से अपने और समीरा के बीच सम्बन्धों को बताने के लिए कहता है लेकिन समीरा मना कर देती है और खुद इस बात को प्रशान्त को बताने के लिए कहती है। और फिर एक रात जब प्रशान्त समीरा को स्पर्श करता है तो समीरा छिटक कर दूर खडी हो जाती है और उससे यह कहकर के मैं अब तुम्हारी नहीं रही मैं अब नकुल की हो गई हूं। यह सुनकर प्रशान्त अवाक रह जाता है और समीरा के साथ पशुता से पेश आने की वजाय समीरा की खुशी स्वीकार करता है और तलाक देकर वहां से चला जाता है। तब नकुल और सीमरा शादी कर लेते है। नकुल भरपूर समय दे देता है समीरा को लेकिन समीरा के मन में कही न कहीं अन्तर्द्वन्द्व चलता रहता है और वह नकुल से घर बदलने के लिए कहती है नकुल तैयार हो जाता है और एक दिन जब तहसील दार बस्ती में कनशपक्सन देने आते और तब समीरा को देखकर प्रशान्त के आने की खबर पूछते है लेकिन तब खजांची बाबू बात का सम्भाल लेते है लेकिन तहसील दार द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से व्यंग्य कसने पर समीरा आंतरिक रूप से आहत हो ती है। लेकिन जाते जाते तहसील दार को समीरा तगडा जबाव देती है और यह देखकर नकुल खुश होता है और समीरा से ठीक इसी तरह समाज से लडकर जीने के लिए कहता है। धीरे-धीरे नकुल भी काम में व्यस्त होता जाता है और समीरा एक बार एकांकी पन से परिचय कर बैठती है और तब नकुल समीरा को समझाता था। डैम के सेकेण्ड और थर्ड पेज का बजट बढ रहा था जिसके कारण काम से नकुल को दिल्ली जाना पडा और दो दिन के लिए कह कर नकुल चला गया लेकिन वहां पर उसे चार पांच दिन लग गये। हाला कि वह समीरा को फोन लगाता रहा लेकिन समीरा को फोन से नहीं यथार्थ में उसका स्पर्श उसकी उपस्थिति चाहती थी। लेकिन अचानक एक पिलर गिरने एवं काम में खर्च ज्यादा पडने की बजह से नकुल दिन दिन भर साइट पर लगा रहता। एक बार जब नकुल दिल्ली से वापस लौटा ता समीरा की मानसिक अवस्था विक्षिप्त सी हो जाती है और वह सारे गहने उतार कर बाल खोले आंखे सुजाये रोती रहती है और नकुल जो कि अपने काम से ही परेशान रहता है उसकी ऐसी हालत देखकर बौखला जाता है। उन दोनों के बीच कहा सुनी होती है और नकुल समीरा के उपर हाथ उठा देता है। उधर तहसीलदार द्वारा समीरा के बारे में अपमान जनक शब्द सुनकर खजांची बाबू से हाथा पाई हो जाती है और तब समीरा एक टार्च खरीद कर खजांची बाबू से मिलने जाती

है। इधर नकुल को दीक्षित जी सलाह देते है कि प्रशान्त एक्सपर्ट की सहायता से इस काम को पूरा किया जाए और फिर प्रशान्त आता है और वह नकुल से हाथ मिलाता है जिस समय नकुल अपने बंगले में होता है समाने डिप्टी साहब की बेटी का बच्चा आया लिये रहती है उसे देखकर प्रशान्त खुश होता है और एक आंसू की झलक उसके आंखों मं देखने को मिलती है। साइट पर जाने के लिए तैयार प्रशान्त जीप से ना जा कर पैदल पहाडी की ढलान से नीचे जाता है और उसे वह दिन जब वह पहली बार समीरा के साथ आया था याद आता है। वह सोचने लगता है और फिर रास्ते में समीरा को खडे देखता है लेकिन बिना कुछ बोले चला जाता है सारा काम निपटाने के बाद जब वह आता है तो समीरा अपने गेट के पास मिलती है और प्रशान्त है कहकर चला जाता है लेकिन प्रशान्त को चैन नहीं पडती और वह फोन पर समीरा से बात करता है और समीरा को समझाता है। तब समीरा अकेले में बहुत रोती है और नकुल के आते आते सामान्य हो जाती है क्योंकि प्रशान्त ने समीरा के जिन्दगी से बिलकुल अलग तीसरे आदमी के रूप में अपने को कहा था। साइट से नकुल के लौटने के बाद नकुल प्रशान्त को खाने पर बुलाने को कहता है और समीरा सभी को बुला लेने की बात कहती है। दूसरे दिन सभी खाना खाते है और तब प्रशान्त नकुल को समझाता है कि तुम वह मत करो जिसके किये समीरा ने मुझे छोडा।

कथावस्तु के अंतिम छोर पर दूसरे दिन प्रशान्त वापस चला जाता है। समीरा उसके लिए टिफिन देती है और नकुल और समीरा दोनो प्रशान्त को खुशी से बिदा करके प्रेम से रहने लगते है।

सुबह दोपहर शाम

'सुबह दोपहर शाम' कमलेश्वर रचित यह उपन्यास अन्य उपन्यासों की तरह सामान्य एवं सामाजिक परिवेश में न होकर भारत वर्ष में हो रहे राजनीतिक उथल पुथल को प्रस्तुत करता है। अंग्रेजी सत्ता अखिल भारत वर्षीय हो चुकी है। जिसके कारण घर परिवार ग्राम समाज और राष्ट्र के चिन्तन में परिवर्तन घटित होने लगता है। उपन्यास का प्रारंभिक कथानक सामान्य रूप से प्रारंभ होता है किन्तु उपन्यास के क्रमोत्तर विकास के साथ-साथ विचारों में जटिलता डाक तार और रेल का प्रचार प्रसार एवं जीवन मूल्यों के परिवर्तन पर घर परिवार में विभेद उग्र होता दिखाई पडता है। इसके साथ ही साथ उपन्यास के अन्त में अपने वतन के लिए न्योछावर होने की भावना का जज्बा भी दिखाई देता है।

उपन्यास का प्रारंभ बडी दादी का पक्षियों एव जीवों की भाषा पहचानने से होता है।

जसवन्त के पितामह मैनपुरी के बडे राजा के सिपहसलार थे। 1857 में जब स्वतंत्रता संग्राम छिडा था तो बडे बाबा (पितामह) राजा साहब के साथ स्वयं घोडे पर और जान हथेली पर रखकर उनकी रक्षा के लिए चार अन्य घुडसवारों के साथ किला छोडकर चले गये थे। आगरा से आया हुआ तोपखाना अंग्रेजों को विजयश्री प्रदान कर दिया था। राजा का पीछा किया जाता है। मैदानी क्षेत्र होने के कारण जसवन्त के बडे बाबा की सलाह पर सभी झांसी की तरफ प्रयाण करते है किन्तु गौस खाँ की तोपे खामोश हो चुकी थी और झांसी का पतन हो चुका था तथापि दतों सवार झांसी की तरफ भागते चले जा रहे थे कि मार्ग में चौगुना बन्धा आ जाता है। जिसे पार करने में राजा का घोडा पत्थर पर गिरकर गम्भीर रूप से घायल हो जाता है और उसकी छाती विर्दीण हो जाती है और तब बडे बाबा अपना अश्व राजा को प्रदान कर स्वयं पैदल चल पडते है और अंग्रेजों के गोली का शिकार बन जाते है और तब वह बडे गर्व से कहती कि मैं सधवा हूं मेरे पति मरे नहीं बल्कि शहीद हो गये है औरयह बाशा लगाती है कि मेरा पुत्र न सही लेकिन मेरे पुत्र का पुत्र जसवन्त जरूर अंग्रेजों से अपने बडे बाबा की मौत का बदला लेगा देश विकास की बात पर उसमें नौकरी करने की बात सुन बडी दादी दुखी एवं निराश हो जाती है। बडी दादी को अंग्रेजों से घृणा हो जाती है। पुत्री कलावती फरूखाबाद के दरवारियों में से एक के लडके के साथ धूमधाम से विवाहित थी, उसका पति माजीपुर में अंग्रेजों के खजाने का खजांची बन जाता है। गदर (1857) में एक तरफ तो वह खजाना लूट लेता है तो दूसरी तरफ दो अंग्रेजों की जान भी बचाता है और परिणाम स्वरूप जसवन्त के बुआ फूफा बिना तिलक के राजा रानी बन जाते है। इससे बडी दादी के मन में पुत्री कलावती के लिए नफरत भर जाती है। यहां तक कि जसवन्त का अपनी बुआ के यहां से आने पर जो सौगात मिलती है उसे भी देखकर बडी दादी चीखती है और जसवन्त को बाहर दरवाजे पर खडाकरके गंगा जल छिडकर शुद्धकरके ही प्रवेश करने दिया जाता।

जसवन्त मिडिल स्तरीय परीक्षा उत्तीर्ण कर ग्राम में निष्क्रिय पडे रहकर व्यर्थ में समय नष्ट करना उचित न समझकर अपने उन्हीं फूफा से कहकर रेलवे विभाग में बडे बाबू की नौकरी कर दो रूपये मात्र मासिक वेतन के रूप में प्राप्त कर लेता है। जब कार्य भार ग्रहण करने के लिए जाना चाहता है तब बडी दादी सब कुछ अपने अतीन्द्रिय ज्ञान से जान लेती है जो उनके लिए असहय हो जाता है। दादी का ज्ञान सर्वतो भावेन विशाल था। वह प्रकृति में घटित होने वाली हर घटना को जान लेती है पशु पक्षियों से कीट पतंगों से सभी से वार्ता कर लेती है। इस बात को जानते हुए जसवन्त का साहस किसी भी प्रकार से वाद विवाद का नहीं होता है। आंधी के बीत जाने पर जसवन्त पुन: दादी के पास जाकर जाने की बात करता है

तो दादी उसे अपने माता–पिता से अनुज्ञा लेने की बात कहती है। अन्ततोगत्वा दादी आदेशित करती है कि जसवन्त की बीबी और शंतो भी साथ जाना चाहे तो चले जाए। प्रातः जसवन्त अपनी पत्नी के साथ पाथेय लिए हुए बैलगाडी से प्रातः प्रस्थान करता है। प्रस्थान काल में वे दोनो सभी को प्रणाम करते है। शान्ता की माता बडी माँ को प्रणाम करती है तो माँ अस्फुट आशीष देती है किन्तु जसवन्त को पाद स्पर्श नहीं करने देती और साथ ही साथ दुखी भाव से किसी के पास न रहने के लिए कहती है। और जसवन्त के प्रस्थान करते ही हाथ के कंगन उतार कर जसवन्त की माँ को दे देती है। और रात्रि में जब जसवन्त की माता पैर दबाने अपनी सास के पास जाती है तो दादी को रोती देखती है। जसवन्त की माँ चली जाती है। प्रातः जब सभी सो कर उठते है तो दादी का कोई पता नहीं रहता कि ये कब कहां और कैसे गायब हो गई। बहुत खोज की जाती है। जसवन्त से भी कहा जाता है और वह अपने काम के सामने असमर्थता व्यक्त कर देता है। अंग्रेजी व्यवस्था की प्रशंशा में ही जसवन्त पूरी तरह से आकण्ठ डूबा हुआ है। दादी और उसके घर का गौरव वह लगभग विस्मृत हो चुका है। शंतों भी प्रत्येक बात को सम्यकतया समझती है। बडी दादी की पूजा वाली महक अब जसवन्त की माँ से आने लगी। जसवन्त के बडी दादी के चले जाने के बाद शंतो जसवन्त के माता पिता अकेले हो जाते है और फिर धीरे से जसवन्त शंतों को भी ले आता है। लेकिन उस गुमटी घर में शन्तों का मन नहीं लगता धीरे धीरे वह वहीं रहने लगती है और कभी कभार जसवन्त की माँ तीज त्योहार को पहुच जाती और तब सब साथ मिलकर त्योहार मनाते और उसी बीच हरकारे के द्वारा बडी दादी का पता चल जाता है और सभी लोग उन्हें जंगल में मनाने के लिए जाते है और तब बडी दादी वापस आने के लिए स्वीकार कर लेती है। लेकिन तभी दादी महाप्रमाण कर जाती है और दादी का किया कर्म वहीं सम्पन्न हो जाता है। सन्तों धीरे धीरे बडी होने लगती है और मैनपुरी रेलवे स्टेशन पर नई बस्ती सृजित कर लेते है। मैनपुरी के ही बाबू कामता परसाद के बडे बेटे प्रवीन जो मीडिल स्कूल में हेडमास्टर के बेटे के साथ तय हो जाती है। बारात के आने पर स्वागत सत्कारोपरान्त विवाह सम्पन्न हो जाता है। आर्शीवाद का क्रम चल रहा होता है कि लगातार तीन गोलियों के आवाज आने पर शाक्ता इसे सूरज की हरकत समझती है किन्तु ऐसा नहीं था। बरन् क्रान्तिकारी नवीन जो प्रवीन का छोटा भाई था उसे पकडने गारद के साथ अंग्रेज दरोगा पाल जूनियर आता है और सभी को आंतकित करने के लिए फायर किया तलाशी भी ली जाती है किन्तु नवीन का कोई पता उसे नहीं लगता अंग्रेजी गारद वापस चली जाती है। शान्ता अपनी ननद मंजू से नवीन के बारे में पूंछती है।

कथा विकास क्रम में बारात प्रात: काल ही विदा हो जाती है। ट्रेन के एक डिब्बे में सभी बारातियों के खान पान की सामग्री सहित बिठाकर जसवन्त बिदा करता है। बाबू कामता प्रसाद बहू शान्ता को गेट के पास चददर का पर्दा डालकर सीट पर स्थान देते है साथ ही मंजू को भी बिठा देते है। सभी बाराती ट्रेन में खाना खाने में व्यस्त थे कि तभी नवीन गाडी में बुर्काधारण किये बैठ रहता है और कष्ट हो रहा था तभी बाबू कामता प्रसाद उसे शान्ता की तरफ जाने का प्रस्ताव करते है तो वह अपनी गठरी समेट बैठे बैठे ही शान्ता की तरफ खिसक कर चला जाता है। तभी बुर्काधारी नवीन अचानक शान्ता का चरण स्पर्श कर प्रणाम करता है और शान्ता भ्रमित हो कर उसे महिला समझती है और तभी और शान्ता को भाभी कहकर उससे अपनी बात कहता है और शान्ता अपने आंचल से नवीन के आसू साफ कर खाना खिलाती है और तब नवीन पुलिस को देखते ही चलती ट्रेन से ही कूद जाता है और हडबडाहट में घुटनों में चोट आ जाती है किन्तु अवलम्बन बने शान्ता के हाथ उसे आश्रय देते है और इसी जल्दबाजी में शान्ता और पुलिस ट्रेन में घुस आती है। उधर पहली बार किसी की बहू रेल से आ रही थी इसलिए परछन कैसे हो क्योंकि बहू को सीधे दरवाजे पर ही उतरना चाहिए। और फिर पालकी की व्यवस्था की जाती है। बारात घर आती है और सभी घरेलू रस्में होती है। संतो अपनी सास को घर की मान पर्यादा का वचन देती है। दूसरे दिन शान्ता के मुंह दिखाई की रस्म होती है और उसके सौन्दर्य की प्रशंसा होती है लेकिन बाबू कामता प्रसाद की बडी भाभी जिनसे हवेली का विवाद चल रहा था आती है और व्यंग्यात्मक बाण छोडकर स्थिति को तनाव पूर्ण कर देती है और स्वत: बेइजजत होकर जाती है। विकास क्रमेतर में शान्ता जिस गाडी से जाती है उस पर सरकारी खजाना भी भेजा जाता है और तभी नवीन के साथ अन्य क्रांतिकारी लोग मिलकर लूट लेते है और दो सिपाही को छोडकर सभी मारे जाते है तभी जनता द्वारा लुटेरे कहे जाने पर उन्हें बताया जाता है कि ये लुटेरे नहीं क्रांतिकारी है और तब पुलिस प्रवीन को बुलाती है धमकाती है। और जेल में बन्द करके पीट भी देती है। तब घर से प्रवीन नवीन के सरेण्डर करने की बात करता है और संपूर्ण घर का वातावरण विषाक्त हो जाता हे और प्रवीन के द्वारा नवीन से अपने कोई सम्बन्ध न रखने की घोषणा पर शान्ता बडी दादी की तरह बोल पडती है कि लाला जी हमारे है और हमेशा इस घर के रहेंगे। दूसरी तरफ मिर्जासाहब भी नवीन एवं उसके दल को संरक्षण देते है और उसी बीच शान्ता माँ बन जाती है और सूरज भी नवीन की मदद करता है। तभी होली के अवसर पर नवीन शान्ता के बुलाने पर होली खेलने आता है और प्रवीन को नवीन समझकर पुलिस प्रवीन को पकडने लगती है और प्रवीन के यह कहने पर कि वह प्रवीन है नवीन नहीं पुलिस

पानी की मांग करती है और तब शान्ता अवसर पाकर नवीन को पीछे गेट से भगा देती है और फिर वापस आ कर अंग्रेज को फिरंगी बाबू कहकर सम्बोधित करती है और वह इस बेइजजती को बर्दाश्त नहीं कर पाता है और बदला लेने के लिए प्रवीन को थाने ले जाना चाहता है और तभी शान्ता शेरनी की तरह उसके सामने खडी हो जाती है। दूसरे दिन प्रवीन को थाने जाते देखकर उसके पिता भी साथ चल देते है और तब रास्ते में मिर्जा साहब से अंग्रेजो की दिन प्रतिदिन बढती ज्यादतियों के बारे में बात चीत होती है प्रवीन पर अहिंसा का समर्थक होता है। लेकिन थाने पहुंचने पर प्रवीन थर्ड डिग्री का प्रयोग करते है एवं पिता के द्वारा विरोध करने पर उन्हें भी घसीट कर मारा जाता है एवं पेड से बाध दिया जाता है और तब प्रवीन क्रातिकारियों के सारे रहस्य खोल देता है। जमशेद नामक सिपाही बयान नोटकर इंस्पेक्टर को देकर इसकी सूचना क्रांतिकारियों को देने चला जाता है कि वे शीघ्र ही अडउा खाली कर कहीं अन्यत्र चले जाए। क्रांतिकारियों का दल प्रवीन को मार डालने की बात करता है किन्तु दल को सकुशल सुरक्षित हटाकर नवीन सच्चाई जानने घर आता है। शान्ता के द्वारा प्रवीन से पूछने पर वह अपना बयान स्वीकार कर लेता है और तब शान्ता प्रवीन को धिक्कारते हुए देश के लिए कलंक कहती है और प्रवीन उसे मारता है और तब शान्ता में पूर्ण नारीत्व एवं स्वदेश प्रेम जाग्रत हो जाता है। नवीन के द्वारा प्रवीन से सच्चाई पूछे जाना एवं प्रवीन का मिलने से इंकार कर देना। शान्ता नवीन से भाग जाने के लिए कहती है और तभी पुलिस आ जाती है और तब नवीन का हाथ पकडकर शान्ता उपरी कोठरी में भागकर दरवाजा बन्द कर लेती है इंस्पेक्टर नवीन को सरेण्डर करने के लिए कहता है और गोली मारने का भय दिखाता है किन्तु शान्ता पर कोई असर नहीं पडता और कथानक के अंग्रिम छोर में जब नवीन कहता है कि गारद है भाभी, तो शान्ता उसे डाट देती है और सिपाहियों से अपने नंगे होने एवं उसे देख सकने के साहस को ललकारती है और हिन्दुस्तानी सिपाहियों द्वारा इंकार करने पर फिरंगी उन पर पिस्तौल तानता है, लेकिन नवीन फिरंगी को गोली मार देता है।

उपन्यासकार राजेन्द्र यादव का प्रारम्भिक परिचय :

उपन्यास कार, कहानीकार, कवि, प्रकाशक, सम्पादक, अनुवादक तथा समीक्षक राजेन्द्र यादव का जीवन अंधेरे से रोशनी की यात्रा है। साहित्य की धारा जहां मोड लेकर सारे परिदृश्य को नया कर देती है, निश्चय ही वहां कुछ रचनाएं होती है और राजेन्द्र यादव जी जैसे प्रतिभा सम्पन्न समसामायिक लेखक की लेखनी से जहां लक्ष्मी कैद है जैसी कहानियां निर्मित हो जाती है और समाज को एक नई दिशा और नयी सोच देती है।

28 अगस्त 1929 को आगरा शहर के राजा मंडी नामक मुहल्ले मं जन्में राजेन्द्र यादव

के बचपन का काल आजादी की लडाई का था । आजादी की लडाई में साहित्यकार भी अपना दायित्व निभा रहे थे । राष्ट्रकवि दिनकर भी स्वतंत्रता सेनानी बने अपनी कविता के माध्यम से प्रेरित एवं उत्साहित करने का कार्य कर रहे थे । कवि दिनकर की इन काव्य पंक्तियों ने किशोर मन पर अमिट छाप छोड दी –

'सेनानी करो प्रयास अभय, भावी इतिहास तुम्हारा है,

ये नरवत अभा के बुझते है, सारा आकाश तुम्हारा है ।'

और फिर इसी के प्रभाव से यादव जी का 'प्रेत बोलते है' उपन्यास बाद में 'सारा आकाश' शीर्षक पा बैठा ।

संयुक्त परिवार प्रथा भारतीय संस्कृति की पहचानों में से एक है । राजेन्द्र जी का बचपन भी संयुक्त परिवार में ही बीता और कालान्तर में इसका प्रभाव आपके उपन्यास में देखने को मिला । पिता से राजेन्द्र यादव को केवल पढाई के संस्कार ही नहीं मिले । पिता के खाने पीने के संस्कारों ने भी उनकों प्रभावित किया था । माता तारा बाई एवं पिता मिस्त्री लाल एवं उनके नाना जी हमेंशा राजेन्द्र जी को कहानी सुनाते एवं लेखन के लिए प्रेरित करते थे । राजेन्द्र जी के विवाह मे भी काफी विरोध हुआ था । ख्याति लब्ध लेखिका मन्नू भंडारी से राजेन्द्र यादव का परिचय कब हुआ यह स्वयं राजेन्द्र यादव के शब्दों में देखिए – कलकत्ते के बालीगंज शिक्षा सदन में मन्नु भंडारी लाइब्रेरी के लिए पुस्तकों की सूची तैयार कर रही थी । यहां उससे मेरा पहला परिचय हुआ था । मन्नू जी के माता–पिता के धोर विरोध के कारण राजेन्द्र एवं मन्नु ने अर्न्तजातीय विवाह कर परम्परागत समाज में विद्रोह का प्रतीक साबित किया । मन्नु के साथ बीता वैवाहिक जीवन काल राजेन्द्र यादव के साहित्य की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है । विवाह के उपरांत वे आर्थिक मानसिक तथा लेखकीय समस्याओं के मोर्चों पर मन्नू का सम्बल पाकर निरंतर लडते रहे । विवाह के बाद कहने मात्र को वे गृहस्थ बन गये । गृहस्थ जीवन जीना उनकी दृष्टि से साध्य नहीं साधन था । मन्नू में भी लेखन की काबिलियत थी । और दोनो एक दूसरे के सहयोग से एक इंच मुस्कान उपन्यास की रचना हुई ।

लेखन राजेन्द्र यादव की दृष्टि से एक नाजुक फूल है इसे खुशामद औरचाटुकारिता की गरम हवा से उन्होंने हरदम बचा कर रखा है वे सम्मान और शर्तों पर जो मिलता है वही लेते है । यहां तक कि लेखन के प्रति हिकारत और उदासीनता उन्हें कभी पसंद नहीं आई । लेखन उनके लिए सबसे प्रिय वस्तु है चाहे अपना लिखा हो या दूसरों का । स्वाभिमानी लेखक

राजेन्द्र यादव आज भी अपने वसूलों के साथ जिंदगी जी रहे है। जिंदगी हो या कला स्वानुभूति के अभाव में बेजान है। कलाकार के लिए दूसरों के अनुभवों पर जीना ठीक वेसा है जैसे कोई लंगडा बैसाखी के सहारे चलता है। राजेन्द्र जी स्वानुभूति के कायल है। स्वानुभूति उनकी जिंदगी हो या कला सैकंड हैंड अनुभवों पर जीना उस समय बहुत भारी पड जाता है जब अपने पास उन्हें पचा सकने लायक शक्ति न हो। राजेन्द्र जी का यह कथन उनके अधिकांश उपन्यास में देखने को मिलते है।

राजेन्द्र यादव कमलेश्वर एवं मोहन राकेश तीनों ही महान एवं समसामायिक कथाकारों के अग्रिम पंक्ति में आते है। राजेन्द्र जी का अथक प्रयास था और अपनी लेखनी माध्यम से स्वतंत्रता के जिन सपनों को जगाया था उन्हें आपसी सम्बन्धों में तिलतिल कर टूटते देखना महसूस करना और लिखना हिन्दी कहानी को एक नया स्वरूप दे रहा था। अकेला अनसमझा व्यक्ति मोहभंग की त्रासदी का साक्षात प्रतीक है।

राजेन्द्र जी यह स्वीकार करते हुए कहते है कि प्रेमचन्द जहां खडे हो कर दुनिया को देख रहे थे वह जगह मेरे लिए सुलभ नहीं रही। राजेन्द्र जी शहरी मध्यवर्ग की उस दुनिया से आये थे जहां संस्कार सामंती थे स्थितियां उपनिवेशावादी और प्रतिरोध राष्ट्रीय। प्रेमचन्द के इन तीनों आयामों को उन्होंने कहां आत्मसात किया है यह कहना बडा मुश्किल है। एक सफ ल उपन्यासकार एवं कहानी कार के रूप में राजेन्द्र जी महसूस करते है कि हमारा मध्यवर्ग पिछली पीढी द्वारा किये गये आर्दशों नैतिक मान्यताओं और राष्ट्रीय भावनाओं से निरंतर मोहभंग से गुजरा है। यहां सबसे पहले शिकार आत्मीय बंधन है। राजेन्द्र यादव जी की कहानियां परिवारिक और व्यक्तिगत स्तर पर प्राय: उन्हीं सम्बन्धों के टूटने और व्यर्थ होते जाने की कहानियां है।

संबंधों की यह दरार सबसे अधिक मुखर होकर आई है स्त्री पुरूष के आपसी रिश्तों में क्योंकि मनुष्य के सबसे संवेदन शील संदर्भ यहीं बनते है। स्त्री पुरूष परिवार की मूलभूत ईकाई है। जो परिवार में होगा वही समाज और अगे जाकर राष्ट्र में होगा। समसामायिक कथाकार उस समय इन सारे पुराने संबंधों व संस्थाओं को टूटता हुआ महसूस कर रहे थे। हाला कि यह टूटने प्रेमचन्द के जमाने में भी थी मगर वे आर्दश बाद के गोंद से उन्हें वापस जोडने का प्रयास करते है जबकि राजेन्द्र जी के लिए यह संभव नही था। जो टूट रहा है वह टूटने की समग्र प्रक्रिया चक्र को पूरा जरूर करेगा एवं वर्तमान जीवन चक्र में आर्थिक सामाजिक निर्भरताओं के चलते हुए व्यक्ति के साथ साथ विशेष रूप से स्त्री (नारी) के अस्तित्व का विवेचन करते हुए उनके आंतरिक अवसाद एवं कुण्ठा को व्यक्त करते हुए समाज को मानव

स्वभाव के प्रत्येक पहलू से जोडने की कोशिश की है वह कोशिश जिसे समझते हुए भी समाज स्वीकार नहीं करता है । बहुमुखी प्रतिभा के धनी यादव जी उस गड्ढे से स्वयं अपना सेतु बनाकर बाहर आए है जिस स्थिति ने उन्हें गिरा दिया था । जैसे ही हांकी के खेल में दाहिने पैर को भारी चोट लगी और विकलांगता नसीब आयी, उनकी शारीरिक गतिविधियां सीमित हो गई । लेकिन इस क्षति की पूर्ति के लिए बौद्धिकता है । अपने लेखन में यादव जी ने स्थान स्थान पर जीवनानुभव की अभिव्यक्ति पर बल दिया है । यादव जी का स्व किसी न किसी रूप में हर एक का स्व है ।

हंस के सम्पादक राजेन्द्र यादव नई कहानी के प्रमुख प्रतिनिधियों में रहे है । वैचारिक निबंधों – 'कांटे की बात' के विविध खंड के कारण ही नहीं 'वे देवता नहीं है' और 'मुड के देखता हूं' सरीखी अपनी नई पुस्तकों के कारण भी इधर वह फिर चर्चा में है । 'खेल खिलौने जहां लक्ष्मी' उनकी कहानियां आज भी हिन्दी कहानी की विरासत है । सारा आकाश 'उखडे हुए लोग' 'शह और मत' 'मंत्रविद्ध' और 'कुलटा' अपनी तरह से उपन्यास जगत को समृद्ध करते है । अत: कोई भी संवेदनशील पाठक उनके उपन्यासों में अपनी तस्वीर कहीं न कहीं अवश्य देख सकता है अनुभूमि की प्रभाणिकता और अभिव्यक्ति की क्षमता के कारण स्वातंव्योत्तर कालीन हिन्दी उपन्यास और कहानी क्षेत्र में राजेन्द्र यादव का वह स्थान है जो तीसरे और चौथे दशक में प्रेमचन्द जी का था ।

सारा आकाश

राजेन्द्र यादव कायह पहला उपन्यास भी है और तीसरा भी । वे लिखते है कि इसकी मूल कहानी को जब मैने रफ रूप में लिखा था तो नाम दिया था प्रेत बोलते है । लगभग दस साल बाद मैने जब उसी कहानी को अलग परिवेश और प्रभाव देने के लिए एकदम नये सिरे से लिख डाला है, नये अर्थ और अभिप्राय दिये है तो नाम भीनया ही दे दिया है । शायद यह रूप और नाम भी अधिक सही और व्यापक है ।

सेनानी करो प्रयाण अभय भावी इतिहास तुम्हारा है ।

ये नखत अमा के बुझते हैं, सारा आकाश तुम्हारा है ।।

सारा आकाश की कथा के सम्बन्ध में राजेन्द्र यादव ने लिखा है कि सारा आकाश प्रमुख्यत: निम्न मध्यवर्गीय युवक के अस्तित्व के संघर्ष की कहानी है ।आशाओं, महत्वाकाक्षाओं और आर्थिक सामाजिक सांस्कारिक सीमाओं के बीच चलते द्वन्द्व हारने थकने और कोई रास्तानिकालने की बेचैनी की कहानी है । मूल उपन्यास दो खण्डों में विभाजित है । पूर्वार्द्ध सांझ बिना उत्तर वाली दस दिशाए एवं उत्तरार्द्ध सुबह प्रश्न पीडित दस दिशाएं रूप में है । इसकी संक्षिप्त कथावस्तु इस प्रकार है ।

कथानक समर निम्न मध्य वर्ग का युवक है, जिसका विवाह उसकी स्वीकृति के बिना प्रभा से हो जाता है। उसके मन में यह बोझ है कि इस समय देश को कर्मठ युवकों की आवश्यकता है और संघ की शाखा से मुह चुराता हुआ घूमता रहता है, क्योंकि आज उसकी सुहागरात है। लेकिन उसकी आत्मा धिक्कारती है, कि उसकी नसों में राणा प्रताप शिवाजी का रक्त प्रवाहित हो रहा है। उस जैसे युवकों में भगवान बुद्ध महावीर स्वामी भगवान राम कृष्ण का अंश है। उसे सामने लाने की आवश्यकता है। वह ब्रह्मचारी होने का संकल्प लेता है । वह विवाह की रंगीनियों में नहीं फंसेगा। यह उसके निर्माण का समय है। भाभी ने रात्रि में उसे उसके कमरे में धकेल दिया किन्तु रात्रि भर दोनो मध्य सन्नाटा फैला रहा। प्रभा द्वारा अपने स्वागत की कल्पना करता समर अपने को अपमानित अनुभव करता है और वह उस कक्ष को छोडकर बाहर आ गया। इस अपमान का बदला लेने के लिए संकल्प विकल्पों में उलझ गया। यह सूचना सारे घर में फैल गयी। बाबूजी ने समर को समझाया कि प्रभा पराये घर की लडकी है। समर को इस प्रकार का लडकपन नहीं करना चाहिए। समर को निराश उद्विग्न देख भाभी परिहास करती है कि लगता है कि रात बनी नही ? देवर भाभी इस विषय पर चर्चा करते है कि भले ही प्रभा पढी लिखी हो सुन्दर भी है नए विचारों की है। बात धीरे-धीरे ठीक हो जायेगी। समर सात भंवर डालकर उसे लाया है। भाभी प्रभा से माफी मांगने का संकेत करती है। दूसरी रात भी बिना बोले निकल गयी और समर संकल्प दृढ हो गया।

दूसरे दिन प्रभा को खाना बनाना था और सबसे पहले समर को खाना खाना था। प्रभा ने खाना बनाया और करीने से थाल सजा कर परोस समर के सामने रखा किन्तु दुर्भाग्य वश दाल जहर के समान कडवी बनाया और उसमें नमक अधिक था। अत: समर थाली को फेक देता है। प्रभा मंद स्वर में कहती है कि खाना उसने पूर्व में ही चख लिया कि सब कुछ ठीक था किन्तु प्रभा की फूहडता का प्रभाव घर भर में फैल गया और प्रभा दूसरे दिन मायके आ गई।

अब घर में कठोर यथार्थ सामने आने लगा। बडे भाई टूटी साइकिल को घसीटते है। पिताजी पच्चीस रूपये पेंशन पाते है। अम्मा जी माला जपती रहती और बहिन मुन्नी ससुराल से परित्याग होकर घर को बोझ है। कुंवर छोटा और अमर अभी पढ़ते है, ऐसे में गृहस्थी कैसे चले ? समर शारीरिक और बौद्धिक श्रम और नैपुण्य हेतु संघ की शाखाओं में जाता था किन्तु इस कुंठा अनचाहे सम्बन्ध और निराशा के कारण उसके कार्यक्रम को बंद कर दिया। माँ की उद्घोषणा से घर में भूचाल आ गया कि वह समर की दूसरी शादी करेंगी। पिता औरपडोसी इस बात का विमर्श करने लगे कि समर को किसी डाक्टर या वैद्य को दिखा कर

इलाज करवाया जाए। उधर मुन्नी का बोझ परिवार पर अनावश्यक तनाव उत्पन्न कर रहा था क्योंकि वह परिवत्यक्ता होकर मायके चली आई थी। क्योंकि मुन्नी के पति ने एक अन्य स्त्री के हाथ रख दोनो प्रेम क्रीडा करते थे। इसे तनाव एवं आर्थिक तंगी के माहौल में परिवारवाले चाहते थे कि समर पढाई छोड कर नौकरी कर ले। प्रतिदिन किसी न किसी कारण प्रभा की निन्दा की जाती आर्थिक तंगी का रोना होता जिससे समर की शांति भंग हो गई। वह पागलों की तरह उद्विग्न होने लगा। एक दिन मुन्नी ने बडे सहानुभूति पूर्ण स्वरों में समर में पूछा से वह प्रभा से विल्कुल नहीं बोला ? दूसरी शादी के प्रश्न को सुनकर अचानक समर के मन में यह बात विद्युत की भांति कौंध गई कि इन परिस्थितियों में प्रभा क्या सोचती होगी। तभी भाभी आकर मुन्नी को किसी काम से भेज कर बडे ही निराशा भरे स्वरों में विवाह के छह महीनें बीत जाने प्रभा के घमंड करने और कान्ता सम्मित उपदेश के समान समर को याद दिलाया कि ऐसी रूप गर्विताओं को दबा कर रखने में ही पुरूषार्थ प्रभावी रहता है क्योंकि ऐसी औरतें बिना मार खाये रास्ते पर आती ही नहीं है। समर भी सोचने लगा कि ऐसी घमंडी पत्नी के साथ जीवन दुर्वह हो जाएगा। बोर्ड की परीक्षा हेतु समर ने पिता से पच्चीस रूपये मांगे इस पर जो बवाल मचा कि समर के सामने यह यक्ष प्रश्न खडा हो गया कि वह अपने सुख के आगे माता पिता भाई की ओर ध्यान नहीं देता। समर को सूचना मिली कि भाभी के बच्चा होना है अत: गृहस्थी के कार्य भोजनादि के लिए वह प्रभा को लिवा लाये। समर के इंकार करने पर पिता ने बहुत डाटा कि वह ऐसा पुत्र है जिसके कारण समाज में उनकी बहुत फजीहत है, लोग समर को नपुसंक तक कहने लगे। छोटा भाई अमर ससुराल गया और प्रभा को लिवा लाया साथ ही यह अप्रत्याशित सूचना दी समर के ससुराल वाले समर को बडी प्रशंसा करते है। समर इस प्रशंसा का व्यंग्य रूप में समझ अपने पुराने विचारों पर ही दृढ रहने का संकल्प किया। वह पुस्तक खोलने बैठा रहता किन्तु उसका मन एवं सारी इन्द्रिया प्रभा पर ही केन्द्रित थे। प्रभा के एक एक क्रिया व्यवहार कोसुनकर ही वह अनुमान लगता रहा। उसके मन में उल्लास की उष्णता फिल्मों में नायक नायिकाओं के रंगीन और सुहावने दृश्य स्मरण आने लगे। प्रेम की अनेक उमंगे तरंगे उसके मन को उद्वेलित करने लगी। परस्पर रूठता मनाना गुदगुदाना और रति क्रीडा के अनेक काल्पनिक दृश्य उसकी आंखों में तैरने लगे। वह प्रभा से बोलने का मन बना रहा था। कि प्रभा भाभी के कमरे में सोने का प्रयत्न करने लगी। समर आकाश से गिरा उसके सारे वायबी मांसल और रंगीन स्वप्न ध्वरत हो गये और वह यथार्थ के धरातल पर खडा यह सोचने लगा कि वह गिरते गिरते बाल बाल बचा। इस प्रकार प्रभा की उपेक्षा का संकल्प और दृढ हो गया। वह अब ऐसे अवसरों की ताक में

रहता कि कठिन से कठिन परिश्रम में प्रभा किस प्रकार और कैसे रोती है यह वह देखे और आनंदित हो। यह पर पीडा जन्य आनंद का प्रतीक समर को एक नये धरातल पर ला देता है। वह दांत पीसता मन ही मन कुढता रहता कि प्रभा ने उसे अभी समझाही नहीं है कि वह किस पत्थर का बना हुआ है या प्रभा का किससे पाला पडा है। अब वह पहले दिन एवं बाद में प्रभा के साथ किए गये व्यवहार को उचित समझने लगा प्रभा प्रात: काल से लेकर दस बजे रात तक काम करती उसे शीत में कांपते देख वह आनंदित होता।

दुर्भाग्यवशात भाभी के पुत्री हुई और प्रभा के लिए अतिरिक्त काम निकल आया। कभी हरीरा बनाती कभी दूध उबाल कर देती घर का पूरा खाना बनाना, गेंहूँ बीनना, चौका बर्तन आदि के कार्य प्रभा जिस सहजता से करती समर को आश्चर्य होता और आनंदित होने के अवसर न पाने के कारण वह खीझ-खीझ उठता वह कल्पना करता कि वह उससे कहे कहाँ बच्ची ! कैसा लग रहा है ? इस प्रकार कार्य करते देख घर वालों ने ध्यान दिया कि प्रभा पर्दा विल्कुल ही नहीं करती । सास ससुर ने इतना बावेला मचाया कि समर प्रभा को डाटता नहीं ? बच्ची के नाम करण या छठी के दिन पंडित द्वारा रखी गयी मिटटी के तीन डेले और उसमें बंधा रक्षा सूत्र को प्रभा ने समझानहीं। उसने उस मिटटी के बर्तन साफ कर लिया इससे घर में बवाल मच गया। भाभी रोने लगी प्रभा के उत्तर ने जलती आग घी का काम किया। कुपित समरने प्रभा के गाल में जोरदार तमाचा मारा। प्रभा गिर पडी और वह बाहर चला गया। यद्यपि उसे इस कृत्य पर पश्चाताप हुआ। समर के मन में अब धटित हुई समस्त परिस्थितयों और परिवेश घुटन उत्पन्न करने लगे उसके मन में अन्तर्द्वन्द्व चलने लगा उसे खने पीने की सुधि नहीं रहती। समर का`लगता कि उसने कोई बहुत जधन्य अपराध कर डाला। इस अपराध बोध के कारण धीरे-धीरे अपने को पागल समझने लगा। वह अपने मित्र दिवाकर से गप्पे लगाता। पार्कों में चुपचाप बैठा रहता। भाभी अपनी बच्ची तक ही सीमित रहती एक दिन माँ ने प्रभा से पूछां कि अपने मायके पत्र नहीं लिखती। प्रभा ने समय न होने का कारण कहा कि इसे ताना समझा गया। समर रसोई घर में बैठकर चुपचाप खाना खाता। मुन्नी के बहाने रोटी आदि की मांग करता बाद में कुद ऐसा अभ्यास बन दगया कि रसोई घर में बैठी प्रभा उसकी थाली देख कर जिस चीज की कमी देखती चुपचाप डाल देती। प्रभा समर के कमरे में सफाई के साथ ही उसकी सारी पुस्तकों तथा उसके कपडों को व्यवस्थित करती। कभी कभी घर का कोई काम रह जाता या बिगड जाता हो तो प्रभा के फूहडपन का ही वर्णन होता घर में। उसकी अकर्मण्यता को कोसा जाता। यह अकल्पनीय किन्तु विघटन के कगार पर खडे पारिवारिक जीवन में ही संभव है। इस प्रकार एक वर्ष

व्यतीत हो गये । मार्च में समर की परीक्षाएं थी । एक दिन समर ने सुना कि माँ प्रभा से कह रही थी जाने कब से उसने अपना सिर नहीं घुला । इस आरोप में न ताना या न क्रोध अत: प्रभा ने हिम्मत करके यह कहा कि अम्मा तुम्ही बताओं कि वह किसवक्त सिर धोए । इतना सुनते ही परिस्थिति तानों में परिवर्तित हो गई । माँ ने नाराज होकर कहा कि भले ही प्रभा उसे काम का ताना न दे भाभी ने जोड दिया कि जितना आज प्रभा कर रही है उसका अहसान जता रही है परिस्थिति पडने पर वह ब्याज सहित प्रभा का कार्य करेगी । इस चीख पुकार ताने बाजी से समर तटस्थ रहता । परीक्षोपरान्त दिवाकर ने समर के साथ फिल्म देखने का कार्यक्रम बनाया तभी घर आये समर को पता लगा कि उसकी बहिन मुन्नी को लिवाने उसके पतिदेव आये है । घर में व्याप्त स्तब्धता जडता आश्चर्य इस बात में थी कि अब ऐसी कौन सी बात हो गई कि मुन्नी का पति अपने पुराने कुकृत्यों की क्षमा याचना कर ग्लानि प्रकट कर मुन्नी को हर हालत में लिवा ले जाने के लिए तैयार हो गया है । पता लगा कि उसकी रखैल मर गयी है और बच्चों का लालन पालन नहीं हो पा रहा । यह सुनकर मुन्नी अपने पिता के चरणों से लिपटकर अपनी करूण पुकार अरन्तुद वेदना व्यक्त करती रही कि उसे जहर देकर मार डालिए किन्तु ससुराल जाने को तैयार नहीं है । मुन्नी के लाख रोने धोने के बाद सामाजिक प्रतिष्ठा की रक्षा हेतु इस आश्वासन पर ससुराल भेजा गया कि कष्ट मिलते ही मुन्नी के लिए इस घर के दरवाजे सदैव खुले रहेंगे और कारूणित वातावरण में आर्तनाद करती मुन्नी ससुराल भेज दी गयी । मुन्नी के इस रूदन ने समर को अन्दर से हिला दिया क्योंकि चलते चलते अन्त तक मुन्नी ने समर से यह आग्रह किया था कि प्रभा भाभी निर्दोष है और समर को उससे बोलना चाहिए ।

दूसरे दिन दिवाकर उसकी पत्नी किरण और समर फिल्म देखकर लौटे कि रास्ते में दिवाकर ने समर के आगे पढने की चर्चा की तब समर ने उससे अपने परिवार की आर्थिक स्थिति का यथार्थ वर्णन कर कहीं नौकरी दिलाने का आग्रह किया । किरण ने समर से कहा कि वह अवसर निकालकर अपनी पत्नी प्रभा को लेकर उसके घर आए । समर अपने घर लौटा तो घर में नये काण्ड का सूत्रपात हो चुका या कि प्रभा पर्दा तो करती नहीं उपर छत में बाल भी धोती है कहीं ऐसा तो नहीं कि सबसे बचाकर छत पर बाल धोने के बहाने वह किसी से नैना लडाती हो और इस प्रकार घर में आशंका कुशंका होने लगी कि कहीं प्रभा भी पडोसी पाण्डे जी की लडकी के समान कहीं भाग न जाये । प्रभा चुपचाप समस्त आरोपों को सुनती रही सास का कथन या कि प्रभा ने समर के जीवन को नरकमय बना दिया है । समर देर से लौटने के कारण चुपचाप चारपायी पर सो गया कि अचानक उसकी नींच खुली और उसने

देखा कि दीवार से कोई रो रहा है। वह चारपायी से उठकर टहलता हुआ आगे और पानी पीकर चुपचाप विस्तर पर बैठकर सोंचने लगा कि रात बारह बजे गिरती ओस में अकेली बैठी प्रभा क्यों रो रही है। एक मन ने कहा ठीक है तो दूसरे मन ने उसे धिक्कारा कि नीचता की भी कोई सीमा होता है। इस प्रकार अन्तर्द्वन्द्व के परिणाम स्वरूप प्रभा के पास गया और उससे कहा कि आधी रात को प्रभा यहां क्या कर रही है ?प्रभा ने समर को आंखे उठाकर देखा और आंचल से मुख ढककर रोने लगी। समर ने कडवे स्वर में कहा कि रोने का कार्य तो सवेरे हो सकता है गिरती ओस में उसकी तबियत खराब हो जायेगी। तडककर प्रभा कहती है कि वह जाकर सोये, जब एक साल से उसकी चिन्ता नहीं की गई तब अब क्या जरूरत है ? उसकी तबियत से समर को क्या लेना देना है ? प्रभा ने कुछ तीखी कुछ कारूणिक और कुछ आहत भरी दृष्टि से समर को देखा समर ने उसके कंधे पर हल्के से हाथ रखकर प्रभा से पूछा कि वह समर से नाराज है क्या ? उन्मत्त प्रभा ने दोनो हांथों उसे झंझोडती हुई पूछती है कि उसने समर का क्या बिगाडा है ? उसका क्या कसूर है ? अगर समर को पसन्द नहीं तो वह वह अपने हांथो उसका गला घोट दे तब दूसरी शादी कर ले। इस प्रकार आवेश के कारण कांप कर यह निश्चेष्ट हो गयी। समर को लगा कि उसके अन्दर बर्फ की भारी चट्टान चटक गयी और वह प्रभा से लिपट कर रोने लगा। उसके मन में ग्लानि थी कि बडे लाड प्यार से पाली गयी इकलौती प्रभा पर उसने कितना अत्याचार किया। प्रभा की क्या इच्छाएं अभिलाषाएं रही होंगी। इस प्रकार अचेत प्राय प्रभा को अपनी बांहों में उठाकर कमरे लाया तभी आकाश मे प्रात: काल के लक्षण दिखाई देने लगे जगकर प्रभा ने समर से पहली बार कहा कि उसे एक पोस्टकार्ड चाहिए। समर को लगा कि वह अपना सिर दीवार में पटक दे।

उपन्यास का उत्तरार्ध प्रश्न पीडित दस दिशाओं से सम्बन्धित है, किन्तु उत्तर किसी के पास नहीं था। उल्लसित होकर समर मित्र दिवाकर के पास पहुंचा। अपने आन्तरिक हर्ष उल्लास को किसी न किसी बहाने व्यक्त करना चाहता था। इस आगे पढने के लिए नौकरी की भी चर्चा करना चाहता था। दिवाकर उसे नौकरी के लिए आश्वस्त करता है समर इस सुखद समाचार को सबसे पहले प्रभा को सुनाना चाहता था। घर आते ही उसे बाबू जी कुछ कमाने के लिए उपदेश करने लगे और ऊपर भाभी तथा भाई साहब यह चर्चा कर रहे थे कि समर प्रभा से बोलने लगा है और यह चर्चा मंद-मंद स्वर में घर भर में फैल गयी। प्रभा ने समर के समक्ष यह रहस्य खोला कि प्रथम बार खाना बनाने के समय पूरा खाना बनाकर एक क्षण के लिए प्रभा रसोई घर से बाहर निकली ही थी कि भाभी ने बताया कि उस दिन उसका मन

ठीक नहीं था, घर की याद आ रही थी, तथा पडोसी बहू के जल मरने की दुर्घटना से वह आहत थी। इस प्रकार समर और प्रभा के मध्य अनेक गलत फहमियां दूर हुई। अंत में समर ने प्रभा से रोने की बात पूंछी। प्रभा ने बडे लाड प्यार दुलार भरे शब्दों से बताया कि आज तक उसके चरित्र पर किसी ने उंगली तक नहीं उठायी थी। इस प्रकार प्रभा और समर आगे के जीवनयापन के संदर्भ में योजना बनाने लगे। समर प्रभा के सलाह से ही आगे पढना चाहता है तथा अपने व्यक्तिगत खर्च स्वयं कमाकर पूरा करना चाहते थे। घर से खर्च नहीं लिया जायेगा। प्रभा ने किसी छोटे स्कूल में मास्टरनी बनने की चर्चा की तो समर ने उसे सावधान किया कि इससे घर में जो तूफान आयेगा, उसकी परिकल्पना प्रभा नहीं कर सकती। प्रभा को घर में फटी धोती पहने देखकर एक दिन समर माँ के पास गया और एक धोती की मांग क्या की कि घर में कुहराम मच गया। यद्यपि माँ से धोती मांगने का परामर्श भाभी ने दिया था। वह बावेला अंत में जाकर इस बात पर टूटा कि समर अपने विवाह के समय मिले कपडे और पैसे का हिसाब मांग रहा है क्योंकि अब उसे बडी घुटी रकम ने पढा लिखाकर भेजा है। बाबू जी भी बहुत नाराज हुए तथा प्रभा ने समर को समझाया कि उसके पास पर्याप्त कपडे है। दिनभर काम में व्यस्त रहने के कारण वह अच्छे कपडे नही पहन पाती। अब प्रभा पर इस बात के लिए ताने कसे जाने लगे कि उसे तो अपने खसम से बात करने से फुरसत नहीं मिलती इस चीख पुकार से उबकर समर अपने सभी प्रमाण पत्र ले इम्पलायमेंट एक्सचेंज जा पहुंचता है जहां हजारों की भीड देखकर वह हतप्रभ हो जाता है कि इस कार्यालय में कैसे उसका पंजीकरण होगा। रोजगार कार्यालय की सूचना पढकर उसने एक व्यक्ति से इतनी एकत्रित भीड का रहस्य जानना चाह तो पता चला कि बडे और उंचे पदों पर भर्ती पहले ही कर ली गई और 10 बढई 50 मजदूर और तीन क्लर्को के लिए ये भीड एकत्रित है। उस आदमी ने अपने तर्को से समर को प्रभावित किया कि स्कूलों कालेजों में भाषण देकर खोखले नारों के द्वारा किस प्रकार जवाहर लाल नेहरू बना जा सकता है आदर्श की बाते की जा सकती है। यहां यथार्थ को भुला दिया जाता है। निराश समर घर लौटता है तभी अमर उसे प्रभा का पत्र देता है। प्रभा उसे बक्से में रखने को कहती है। बक्से में प्रभा का रखा हुआ एक पत्र समर देखता है जिसमें विवाह पूर्व प्रभा की मनोरम कल्पनाओं का वर्णन था जिस उत्सुकतावश समर ने पढा। उसे लगा कि प्रभा में सचमुच ही बहुत दृढता और जीवन्त शक्ति है। अत: वह गम्भीरता से विचार विमर्श प्रभा से करना चाहता है। प्रभा ने बताया कि उसे यदि उंची शिक्षा प्राप्त हो जाए वह एम.ए. कर ले तो उसे अच्छी नौकरी मिलेगी और इस मध्य आर्थिक आभाव और कष्टों को किसी तरह वह सह लेगी। प्रभा की

सोच से उसकी सहन शक्ति और कार्य क्षमता से समर को बहुत बल मिला वह उत्साहित होकर दिवाकर से नौकरी दिलाने का आग्रह करता है। वही उसकी भेट शिरीष से होती है जिसे रोजगार कार्यालय में भाषण करते देखा था। वे दिवाकर के मामा है। शिरीष अपनी को देखने आये है जो पागलखाने में भर्ती है शिरीष की बहिन का विवाह अल्पवयस्क अवस्था में हुआ था और पतिदेव पढकर अब समझे कि उनकी पत्नी उसके अनुकूल नहीं है। इस प्रकार वह पति की मार पारिवारिक जनों के दुर्व्यवहार के कारण वह सामंजस्य स्थापित नहीं कर पायी। अत: पागल हो गयी। शिरीष एवं समर में पारिवारिक, सामाजिक समस्याओं पर बहस होती है और शिरीष के तर्को के आगे समर बौना प्रतीत होता है। शिरीष के यथार्थवादी एवं वस्तुपरक चिन्तन तर्को से समर के रूढिग्रस्त विचारों की धज्जियां उड गई। भारतीय संस्कृति शिक्षा सूत्र संयुक्त परिवार हिन्दू समाज की श्रेष्ठता धर्म, संस्कृति इत्यादि पर वास्तविक दृष्टि डलती गयी और इनकी व्यवहारिकता के चुकने की दृष्टि शिरीष प्रतिपादित की। दिवाकर ने उसे प्रेस में प्रूफ रीडर की नौकरी दिलाने का आश्वासन इस रात पर दिया कि समर आगे पढाई करेगा। घर आते समर ने सुना कि छोटा भाई अमर अपनी भाभी माँ पर यह आरोप लगाता है कि वह अपने खसम समर को सारा घी खिला देती है और उसे सूखी बाटियाँ मिलती है। इस प्रकार अमर की अशिष्टता के व्यवहार को देखकर समर उसे पीटता है। इस पर माता पिता अमर का पक्ष लेकर समर से वाक युद्ध करते है। परिवार वालों को जब यह पता लगा कि समर की नौकरी लग गई है तो समर और प्रभा के प्रति उनका व्यवहार बदल गया किन्तु प्रथम वेतन पूर्व ही अधिकांश पैसा समर की आवश्यकताओं की पूर्ति में ही खर्च हो गया। समर दो धोतियां खरीद ले जाना चाहता था, एक माँ और एक प्रभा के लिए किन्तु धनाभाव के कारण एक ही धोती खरीद सका और वह धोती माँ के माध्यम से प्रभा को देना चाहता था। तभी अमर ने बताया कि भैया भाभी के लिए एक धोती खरीदी है, बस फिर क्या था ? माँ का जो पारा चढा उसके विषय में कुछ कहना ही व्यर्थ था। प्राप्त नौकरी से समर आगे पढेगा और वह प्रोफेसर बनेगा। प्रात: चार बजे उठकर प्रूफ रीडर का कार्य करने जायेगा फिर वही से कॉलेज चला जाएगा। प्रभा उसके लिए बडे सबसे जगकर ताजा भोजन बना दिया करेगी। कष्ट के कुछ दिन ही रहेंगे जिन्हें वे दोनो खुशी खुशी सहन करेंगे। इस प्रकार माँ और समर भविष्य के सपने बुनने आनंदित होने लगे प्रभा ने बताया कि बाबूजी अम्मा साहब और भाभी समर से पैसा की अपेक्षा करने लगे है।

समर परीक्षा में द्वितीय श्रेणी उत्तीर्ण और अमर फेल हो गया है। इसी समय मामा जी आकर अमर को परिवार में सहयोग देने उसका बोझा उठाने का उपदेश अप्रयत्यक्ष रूप से देने

लगे और अमर के विवाह का प्रस्ताव प्रस्तुत किया। माता पिता का दायित्व है कि वह अपने सामने ही बच्चों का विवाह कर दें। समर ने इस विवाह का विरोध किया क्योंकि वह स्वयं अर्थाभाव से पीडित है और अब अमर भी ऐसी परिस्थिति से दो चार हा`रहा है। प्रेस का परिश्रम पढाई का बोझ प्रभा के साथ भविष्य के सुनहले इन सब द्वन्द्वों से घिरा समर कुछ सोच नहीं पा रहा था कि अचानक प्रभा के गुद गुदाने में उसे यह पता लगा कि प्रभा की कमर में डोरे से कोई ताबीज या गोली बंधी है। प्रभा के न बताने पर भी समर को यह बात समझ में आ गई कि सम्भवत: अंधविश्वास के फेर में पडकर किसी पीर वा मजार की भस्म को लाकर कमर में बांध लिया है। पता लगा शादी के इतने वर्षों के बाद भी उसके कोई संतान नहीं हुई। समर हतप्रभ सा रह गया।

परिवार में समर के वेतन को लेकर फिर चकचक प्रारंभ हो गई और छोटी मोटी बातों में माता-पिता से लडाई और तानेबाजी होने लगी कि समर ने बताया कि उसकी नौकरी छूट गयी। कुपित बाबू जी ने समर पर यह आरोप लगाया कि पत्नी के साज श्रंगार के लिए 50 रूपये तो रखता है किन्तु घर के खर्च के लिए बहाने बाजी करता है। आवेश में आकर वे समर को पीटने लगे और कहा कि अपनी पत्नी को लेकर यह घर छोडकर अलग रहे। समर ने रात में स्वप्न देखा कि वह घर से भाग गया है। माता पिता परेशान है। उसके आंखों के सामने जीवन की संपूर्ण घटनाएं तैरने लगी वह निराश होकर आत्महत्या करने हेतु रेलवे स्टेशन पहुंचता है और यह सोचता है कि किसी चतली गाडी के आगे कूद पडे। डिब्बे के आगे कूदे या न कूदे या गाडी में चढ जाए इसी संघर्ष में उसके कदम डगमागाने लगते है और वह सारे आकाश को देखता है बेहोश हो जाता है। यही ं उपन्यास समाप्त हो जाता है। यह बात लेखक ने अन्यत्र कहीं है कि समर आत्महत्या नहीं करता बेहोश हो जाता है इस उपन्यास के कथ्य के संदर्भ मं लेखक ने कहा कि सारा आकाश प्रमुखत: निम्न मध्य वर्गीय युवक के अस्तित्व के संघर्ष की कहानी है। राजेन्द्र यादव ने अन्यत्र लिखा है कि संयुक्त परिवार में जब तक यह चुनाव नहीं है संकरी गलियों और खिडकियों के पीछे लडकियों सारा आकाश देखती रहेंगी। लडके दफ्तरों को भटकते रहेंगे। एकान्त आसमान को गवाह बनाकर अपने आपसे लडते रहेंगे।

उखड़े हुए लोग :

प्रस्तुत उपन्यास राजेन्द्र यादव का दूसरा उपन्यास है जो 1956-57 राजकमल प्रकाशन से निकला। उपन्यास की संवेदना ऐसे लोगो से जुटी हुई है जो अपनी सरजमी से उखडे है। जो एक ओर रूढियों के कठोर पाश से व्याकुल है दूसरी ओर पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में निरंतर

लुटते रहने के कारण काम पाने में कठिनाई का अनुभव कर रहे है। वस्तुत: जिस आजादी की आकांक्षा में अगणित लोगों ने बलिदान दिया, संघर्ष किया वह महज स्वप्न भंग का बोध देती है। उच्च अभिजात वर्ग के हाथ में तो छत्ता आई निम्न वर्ग ने अपना संघर्ष तालाबन्दी हडताल के जरिए जारी रखा। किन्तु मंहगाई की भीषणता को झेला मध्यवर्ग ने। उपन्यास के पात्र शरद एवं सूरज दोनो ही मध्यवर्गीय है जिनका न तो अतीत ही सुखद था न ही भविष्य उज्जवल और न वर्तमान तोषदायक है। शिक्षित होने के कारण इनमें चिन्तन शक्ति के साथ उच्चाकांक्षा भी है। ऐसे राजनीतिक, आर्थिक विसंगतिपूर्ण स्थित में अपने परिवेश में उखडकर अन्यत्र स्थापित होने के उपक्रम में टूटने विखरने को अभिशप्त हो जाते है। सात दिनों में घटनाक्रम के सामाजिक आर्थिक सन्दर्भों के कटु अनुभवों ने शरद को दुखी कर दिया कथा का सार इस प्रकार है –

कथा का मुख्य पात्र शरद एल.एल.बी. पास युवक है। वकालत की लाइन उसे जलालत, फरेब और धोके से भरी लगती है। अत: उसमें नहीं जाता साक्षात्कार एवं आवेदन पत्रों में काफी पैसा खर्च में जाता है किन्तु नौकरी नहीं मिलती। उसको अपनी महत्वाकांक्षाएं ध्वस्त होती नजर आती है। वह आई.ए.एस. करना चाहता है किन्तु घर की आर्थिक स्थित गवाह नहीं देती। किसी सभा में शरद की मुलाकात कांग्रेस के नेता एवं एम.पी. देशबन्धु जी से होती है। देशबन्धु उसे नौकरी का आश्वासन देते है। देशबन्धु का तार आते ही शरद वहां जाता है वहां पचुंचते ही देशबन्धु का व्यक्तित्व उसके मन को प्रभावित करता है। देशबन्धु कार्य का स्वरूप बताये बिना उसे आ जाने को कहते है। वहीं शरद की मुलाकात देशबन्धु द्वारा चलाये जा रहे साप्ताहिक बिगुल के सम्पादक सूरज से होती है। बातो–बातों में दोनो में अन्तरंगता स्थापित हो जाती है। सूरज का व्यस्त एवं एकाकी जीवन शरद को उत्सुक बना देता है। सूरज देशबन्धु की बहन माया देवी के विषय मे कुछ संकेत देता है। खाने के दौरान जब सूरज की मुलाकात माया देवी की पुत्र उसकी सहपाठिनी पद्मा जी से होती है तो सूरज को वहां उपस्थित सदस्यों का व्यवहार रहस्यमय लगता है। उसे लगता है कि सभी कुछ कहना चाहकर भी नहीं कह पा रहें है और एक कहानी है जो सबके इधर से उधर घूमती है। दूसरे ही दिन शरद अपनी नौकरी को समझकर और यह समझकर कि इतने बडे बादमी है कुछ न कुछ काम अवश्य देंगे आगरा वापस आता है।

देशबन्धु के यहां नौकरी तय समझकर जया को जीवन साथी चुनता है। जया भी शरद की भांति मध्यवर्गीय परिवार की है – स्टेशन मास्टर की पुत्री जया एक स्कूल में टीचर है एवं बौद्धिकता में शरद के समान है। दोनो ही मध्य वर्गीय संस्कार से युक्त है दोनो नारी के सह

अस्तित्व को सह देते है। चूंकि शरद व्यक्ति की महिमा को खण्डित नहीं होने देना चाहता जो पारंपरिक विवाह संस्कार में सम्भव नहीं अत: दोनो विवाह के रीति-रिवाजों को निभाए बिना ही सम्मिलित जीवन बिताने का फैसला करते है। देशबन्धु के यहां पहुंचने पर शरद एवं जया को स्वदेश महल के एक क्वार्टर में ठहरा दिया जाता है। शरद एवं जया दोनो की इस बात की चिन्ता होती है कि अभी तब देशबन्धु जी से कोई बातचीत नहीं हुई उनका खर्च कैसे चलेगा सूरज के साथ बातचीत में ही उसे माया देवी एवं पदमा के विषय में जानकारी प्राप्त करने के पश्चात देशबन्धु का कारोबार देखने जाता है। कारोबार देखकर शरद को संतोष होता है कि वहां कोई न कोई कार्य अवश्य मिलेगा। प्रथम दिन ही यह भीजानकारी मिलती है कि मिल के मजदूरों ने किसी मजदूर की मृत्यु को लेकर हडताल कर रखी है जिसके कारण देशबन्धु परेशान है। देशबन्घु अपने व्यस्त जीवन की चर्चा करके शरद की सहानुभूति प्राप्त करने की चेष्ठा करता है। देशबन्धु के पास कितनी जिम्मेदारियां एवं बोझ है यह देखकर शरद को भी उनसे सहानुभूति होती है। शरद उनके बाह्य व्यक्तित्व से प्रभावित होता है जिसके प्रभाव से वह मन में उठने वाली हर उत्सुकता को दबा देता है। देशबन्धु के प्रति श्रद्ध को किसी पूर्वाग्रह से ग्रस्त नहीं होने देना चाहता फिर भी कुछ बाते ऐसी है जिससे उसकी सुसुप्त चेतना जागृत होती है। उसे ऐसा अहसास होता है कि देशबन्धु ने एक खाल ओढ रखी है लेकिन कही न कहीं कोई न कोई छिद्र दीख ही जाता है। उसके मानस में अनेक प्रश्न उदबुद्ध होते है कि आखिर इनका परिवार कहां रहता है ? सूरज और इनके बीच एक कांटेबाजी चलती है वह क्या है ? पदमा एवं माया देवी के व्यवहार में जो एक दबा-दबा सा रहस्य है वह क्या है ? इन सभी के बीच उसके कार्य की प्रवृत्ति क्या है ? वहां के रहस्यों को जानने के लिए देखने के पश्चात सूरज के साथ जया एवं शरद खरीददारी के लिए जाते है वहीं उन्हें मार्ग में पदमा आती हुई दिखाई देती है। ज्ञात होता है कि वह माँ से लडकर वापस आई। सूरज बताता है कि माँ बेटी में खास नहीं बनती है। शायद अब भी कोई बात हो गयी है तभी यह अकेले ही वापस आ रही है। खरीददारी के वक्त सूरज के दोस्त कपिल जो अर्थशास्त्र के प्रोफेसर और लेखक है से होती है जिनसे माया देवी के सम्बन्ध में नवीन तथ्यों की जानकारी होती है। उसे यह अहसास हो गया कि माया देवी एवं देशबन्धु में अनैतिक सम्बन्ध है और उसे यह संतोष होता है कि स्वदेश महल में होने वाले हर रहस्य की ताली मिल गयी।

इधर जया पद्मा एवं मायादेवी से मिलने जाती है। जया पद्मा से अत्यधिक प्रभावित होती है। पर वापिस आने पर माया देवी का संदेश लेकर केशव आता है कि माया देवी ने उन दोनों को सिनेमा जाने के लिए बुलाया है। किन्तु शरद न जाने का बहाना करता है फि र भी

अनमने उसे जाना ही पडता है । वहां पर शरद को ऐसा महसूस होता है कि माया देवी एवं पद्मा देवी में कोई लगाव नहीं है । शरद सिनेमा देखने के दौरान माया देवी की हरकतों को देखकर उसकी इच्छा होती है वह वहां से चला जाए । माया देवी को हरकते जया को बताकर वह अपनी भडास निकालता है किन्तु उसके अर्न्तमन में माया देवी के प्रति घृणा की आग लग जाती है । उसे ऐसा लगता है कि स्वदेश महल का कोई भी आदमी नार्मल नहीं है । वह वहां से जाना चाहता है किन्तु उसे जया का ख्याल हो आता है जो अपना सर्वस्व छोडकर आयी है । ऐसे ही में उसे एक ही आधार नजर आते है – देशबन्धु उसे जया का समर्पण सब सहने को मजबूर करता है । उसे लगता है कि सचमुच जया के विश्वास और प्यार की तुलना में वह बौना है । वह उसे छू भी नहीं सकता । यदि वह लडकी होता तो वह इतना साहस नहीं कर पाता उसे स्वयं पर भी आश्चर्य होता है कि आखिर उसने रूढियों को तोडकर इतना साहसिक कदम कैसे उठाया शायद वह जया का प्यार ही था ।

दूसरे दिन शरद काम पर जाता है तो उसे यह जानकर धक्का लगता है कि जहां पर उसे काम करना है उसी कमरे से लगा हुआ एक कमरा था जिसके बारे में देशबन्धु जी ने कहा था कि वह उससे उस कमरें में जब चाहे मिल सकता है । किन्तु आज उस कमरे का दरवाजा बन्द है, आखिर आज वह कमरा क्यों बन्द है ? चपरासी से ज्ञात होता है कि नेता जी की तबियत खराब है उन्हें दिल का दौरा पडा है । किन्तु शरद स्वयं से यह निर्णय लेता है कि आज वह पैसों के बारे में नेता से बात अवश्य करेगा । यही सोंचकर उसने नेता को फोन किया किन्तु वह अपनी बात नहीं कह सका और नेता ने उसे पुन: घुमा दिया और एक काम सौंप दिया कि उनकी तबियत स्वस्थ नहीं है । अत: मंत्री के आगमन पर उनके स्वागतार्थ एक भाषण लिख दे । वह शरद की सहानुभूति अर्जित करके उसे पुन: चुप कर देता है ।

इधर शरद को सूरज को से मिलने की बेचैनी होती है वह पिछले दिन सिनेमा में घटित घटना सूरज को बताना चाहता है । किन्तु जब सूरज आता है तो पूर्ण निर्धारित बात सामने आ ही नहीं पाती और उसे एक नया रहस्य ज्ञात होता है उसे सूरज से इस प्रश्न का उत्तर मिलता है कि जिस कुर्सी पर शरद को काम करना है उस पर स्वयं नेता भइया क्यों नहीं बैठते है । शरद को कुर्सी का नया रहस्य मालूम होता है । उस कुर्सी पर सत्यबाबू की पुत्री सत्या स्टेनों और टाइपिस्ट बैठती थी । देशबन्धु बोलते और वह लिखती । शायद उन दोनो के सम्बन्धों की जानकारी माया देवी को हो गयी और उस लडकी को नौकरी से निकाल दिया गया । और तब से यह कुर्सी खाली पडी है । सूरज बिगुल का मैटर लकर जाते जाते शरद को कपिल के यहां शाम सात बजे दावत की सूचना दी ।

शाम कोशरद एवं जया सूरज सहित कपिल के यहां पहुंचते है । वहां पहुंचकर शरद को

इस बात पर आश्चर्य हुआ कि माया देवी के साथ सिनेमा जाने की सूचना इन्हें कैसे मिली। उसी सिनेमा में प्रो. कपिल भी सिनेमा देखने गये थे और उन्होंने माया देवी के व्यवहार भी देखे है। कपिल शरद को माया देवी की विभिन्न चर्चाए सुनाता है और आगाह करता है कि वह माया देवी से दूर रहे क्योंकि बाद में चूसकर यो गडेली की तरह फेंक्र देगी कि बाद में बस मक्खियां ही भिनभिनायेगी। सूरज जी स्वयं इसके शिकार है। कपिल के द्वारा कुछ ऐसी बाते ज्ञात होती है जिनसे उनका भी सबका हुआ है। शरद सोंचता है कि वास्तव में उस औरत को क्या दण्ड दिया जाए। लम्बी वार्तालाप के पश्चात खाना होता है अन्दर बैठी जया बार-बार जाने का आग्रह करती है शरद को आश्चर्य यह होता है कि उसे अन्दर क्या परेशानी है। वस्तुत: अन्दर का जो माहौल जया ने पाया उससे वह जया उब रही थी, चारो ओर अस्त व्यस्तता थी। कपिल की बीबी का व्यवहार भी अजीब था, वह कहती है पता नहीं रांड किस जाति की है भागकर आये है उसकी ऐसी बातों एवं प्रतिगामी विचारों से उब जाती है लेकिन शिष्टाचारवश उसे खाना खाना पडता है। सभी वहां से वापिस घर को जाने के लिए निकलते है लेकिन रास्ते में ही सूरज रेल के पुल के पास चलने का आग्रह करता है जहां पर क्षणिक शान्ति प्राप्त करता है। इच्छा न होने पर भी शरद को इच्छा एव शिष्टतावश जया चलने को तैयार हुई। वहां खुले एवं शान्त निर्बन्ध वातावरण में जया का विषाद जो उसे कपिल के घर से मिला था घुलने लगा और प्रसंगवश सूरज उन लोगों के साहसिक कदम की प्रशंसा करता है और कहता है कि काश ऐसी हिम्मत सभी में होती। तो यह सुनकर शरद एवं जया सूरज के जीवन के बारे में जानने को उत्सुक होकर पूछते है कि एक ओर तो आप प्रचण्ड तर्कवादी दूसरी ओर इतने भाग्यवादी है कि जीवन और जगत के भविष्य का हथेली के मोड से पडने वाली रेखाओं में खोजने की कोशिश करते है। आपमे विचित्र अन्तविरोध है और हम उन विवशताओं को जानना चाहेंगे। जिन्होंने आपको इस तरह बना दिया। शरद को ज्ञात होता है कि जबकतरों से जीवन प्रारंभ करने वाला युवक पुस्तक के एजेण्ट के रूप में कार्य करता है उन्ही दिनों उनकी मुलाकात चन्दा नामक लडकी से होती है जो उसके मकान मालिक की लडकी किन्तु दोनो का विवाह नहीं हो पाता। चन्दा का ब्याह होते ही प्रेमभंग सूरज शहर-शहर मारा मारा फिरता है। हतास पराजित सूरज 1942 में क्रान्तिकारियों के संपर्क में आकर पत्रकार बना और यहीं पत्रकारिता उसे देशबन्धु के मुताबिक करना पडता। वहीं सीमा ताई के स्नेह ने उसके जीवन में एवं सोच में परिवर्तन ला दिया लेकिन कुछ दिनों के उपरान्त वह भी चली गयी। और अब यहां वह भाटगिरी कर रहा है लेकिन अतीत से विरक्त एवं भविष्य से निराश होने के कारण विवशतावश वर्तमान से चिपका है।

अचानक सत्यामिल से गोलियां चलने की आवाज आयी है। सूरज यह कहता हुआ आवाज की तरफ उसी दिशा में चला जाता है कि शायद गोलियां चल गयी। शरद एवं जया भी वापस आते है।

दूसरे दिन प्रात: काल देशबन्धु का बुलावा आते ही शरद मंत्री जी से मिलने के लिए जब देशबन्धु के साथ जाता है तभी बातों बातों में उसे ज्ञात होता है कि हडताल कर रहे मजदूरों पर गोलियों चली है। अत: उन्होंने हडताल कर दी मजदूर अपने अधिकार की मांग कर रहे है। रात्रि को चली गोलियों से तीन मजदूरों की मृत्यु हो गयी। अत: मार्ग में ही अस्पताल में उन मजदूरों के प्रति सहानुभूति एवं दुख प्रकट करने जाते है। लाशों को देखकर शरद का हृदय चीत्कार उठता है इस पर देशबन्धु कहता है कि पांच क्यों मरे ? पांच हजार क्यों नहीं मरे बडे लक्ष्य के लिए सिर्फ 5 आदमी मरे। मुर्दाबाद के नारों के बीच से देशबन्धु के साथ जाते हुए शरद को लगता है कि जैसे वह भी इस घृणित कार्य में संलग्न है। कामरेड एवं चम्पक जी से मुलाकात करके शरद की तबियत उस दमघोटू वातावरण से निकलने को व्याकुल हो जाती है। मार्क्सवादी कामरेड को देशबन्धु के समक्ष कम्युनिस्ट की आलोचना में समर्पण शरद को झकझोर देता है। साथ ही उसे देशबन्धु पर भी आश्चर्य होता है कि जो झेला है वहीं कितनी बौद्धिकता एवं प्रसन्नतापूर्वक बहस कर रहा है। शरद को देशबन्धु का वह रूप सुनाकर शरद को नया काम सौंप देते है कि वह उनकी आत्मकथा लिखे। स्वदेश महल के रहस्यमयी वातावरण से घुटते शरद को बेचैनी होती है। उसे हर सदस्य उलझा नजर आता है – देशबन्धु मायादेवी पदमा देवी किन्तु शरद एवं जया इस बात को शिददत से महसूस करते है कि पद्मा बहुत दुखी है। दूर के रिश्ते के लडके से प्यार करती है लेकिन प्यार में प्रतिदान नहीं चाहती बस उसे चाहते रहना चाहती है। शरद को लगता है कि लोगो को यह दु:ख आखिर प्रिय क्यों है ? क्या वह इनसे नहीं निकल सकते ?

सातवे दिन मंत्री जी के आगमन पर भव्य चाय पार्टी आयोजित की जाती है, जिसमें नाच गाने कविता पाठ आदि के कार्यक्रम का आयोजन होता है। पदमा को भरतनाट्यम करना है और शरद को विशिष्ट अवसरों पर देशबन्धु जी का फोटो लेना है। वहां का दमघोटू वातावरण पदमा को नहीं भाता किन्तु शिष्टतावश वह मिलने जुलने की औपचारिकताएं करती है। जब कार्यक्रम चल रहा होता है फोन की घंटी आती है और शरद को ज्ञात होता है कि देश के उप प्रधानमंत्री सरदार पटेल का निधन हो गया है। लेकिन देशबन्धु उपर से दु:ख व्यक्त करता है और शरद से कहता है जो होना था हो गया अब रंग में भंग न डालो सुनकर शरद का मस्तिष्क कोकीन लगे इंजेक्शन की तरह सुन्न हो गया और वह क्वार्टर चला आया।

किन्तु पार्टी से निकलते ही सूरज से मुलाकात के बाद उसके सामने देशबन्धु के कुकर्मों का पर्दाफास होता है। देशबन्धु रंगा भेडियां है जो जनता के बीच में भैया बना अपने निकट आने वालों को पतन के कगार पर पहुंचा देता है। सत्ता में पकड बनाकर आधिकारिक लाभ कमा रहा है। उसकी नैतिकता की कोई अवधारणा नहीं है। वह दान भी देता है तो इनवेस्ट करने के लिए। रूपये के खातिर उसने मायादेवी को फंसाया। मायादेवी के पति करोडपति थे किन्तु माया देवी अपने पति से संतुष्अ नहीं थी अत: कामतृप्ति के लिए देशबन्धु के यहां आती। गहनों से लदी आती और खाली जाती देशबन्धु का सारा करोबार उसी की मेहरबानी है। मिले एवं सिनेमा मायादेवी के पैसे से ही बने। धन के लिए देशबन्धु ने उसके पति को जहर देकर मरवा दिया। वह मायादेवी तथा अन्य स्त्रियों से अनैतिक सम्बन्ध रखता है। होटलों में लडकियों का व्यापार भी करता है। पुत्रवधू के साथ कुकृत्य किया यही बजह है कि जिससे बाप बेटे में संगति नहीं है। मजदूरों की मृत्यु को रफा दफा करने के लिए ही मंत्री के स्वागतार्थ चाय पार्टी का आयोजन किया गया है। देशबन्धु का यह रूप देखकर शरद घृणा से भर उठता है। विगुल के खिलाफ लिखने के कारण सूरज को निकाल दिया जाता है। मिल के मजदूरों पर हो रहे अत्याचारों के कारण सूरज की आत्मा फतनाकर सारे समझौतों को तोड देती है और लोगों को क्रांति के नये पथ पर चलने का मंत्र फूंकता है। किन्तु शरद जम न पाने के कारण हताश होकर दूसरी नौकरी करने की सोचता है। सिद्धान्त और व्यवहार की दूरी उसे झकझोर देती है। जैसे ही देशबन्धु की अनैतिकता एवं कामुकता का क्लाइमेक्स पदमा के बलात्कार के प्रयास में होता है जिससे पदमा खिडकी से कूदकर आत्महत्या कर लेती है दोनो वहां से भाग खडे होते है। शोषण का विरोध करने की शक्ति शरद में नहीं होती उसमें इतनी शक्ति नहीं कि रूढियों से जूझ सके। परिणामत: पूंजीवादी अर्थ व्यवस्था की घातक मार से चकनाचूर हो वापिस लौटते है। शायद वह अपने परिवेश से उखडे हुए और दिशाहीन जीवन में विवश है।

कुलटा –

प्रस्तुत उपन्यास 1957 में कमलेश्वर के प्रकाशन से प्रकाशित हुआ। अभिजात्य वर्ग मुक्ति का चुनाव स्थापित नैतिकता का विरोध कुलटा का प्रतिपाद्य है। फौज के अनुशासनबद्ध अभिजात परिवेश में जकडी संवेदनशील नारी की परिवेश में मुक्ति की व्याकुलता, उसकी दुर्दमनीय जिजीविषा, तीन सम्बन्धों का असंतुलन और सैनिक जकड बन्दी के बीच विसंगति में अपनी मुक्ति की तलाश अन्तत: परिणाम की चिन्ता न कर वायलनिष्ट के साथ अनिश्चित भविष्य का चुनाव इसके प्रतिपाद्य बिन्दु है। इसकी कथा संक्षेप में इस प्रकार है –

मिलिट्री के कर्नल तेजपाल अनुशासनप्रिय एवं क्रूर व्यक्ति है। वे खूंखार, धनी और

फौजी अफसरशाही की प्रतिमूर्ति है तो मिसेज तेजपाल अति सुन्दरी, सरल हृदया और बौद्धिक तथा संगीत प्रेमी है। यद्यपि इनकी सामाजिक एवं आर्थिक स्थित बहुत अच्छी है लेकिन ताड प्यार और रोब में पली स्वच्छन्दवादी साहित्य प्रेमी मिसेज तेजपाल को मिलिटरी अफसर तेजपाल पसंद न थे क्योंकि उन दोनो में प्रकृति की भिन्नता है। एक ओर गोलियों के फूल दूसरी ओर कुहकती आवाज हर समय एक आतंक सारे वातावरण में छाया रहता है वह मिसेज तेजपाल पर भी यह जादू चलाना चाहते है लेकिन संवेदनशील मिसेज तेजपाल बंधे बधाये नियमों दिनचर्या में स्वयं को जकडी महसूस करती है। बंधीबंधायी जिन्दगी बधे बंधाए लोग हंसने बोलने, उठने बैठने के सभी अप्राकृतिक ढंग एवं आने जाने की अनावश्यक औपचारिकताएं, निरर्थक चाय पार्टियां उन्हें रास नहीं आती। मिलिटरी के रीति रिवाजों की यांत्रिकता से वह असंतुष्ट है। उनकी यह खीझ, अन्तर्मन की व्यथा, उनके स्वच्छन्द व्यवहारों में परिलक्षित होती है जिन्हें भुलाने के लिए गीत गाती है, पडोसी की लडकी के साथ खेलती है अंग प्रदर्शन करके अपने अहं को तुष्ट करती है। नि:संतानता के अभाव को गुडडी (मिसेज रूद्रा की लडकी) को खिलाकर पूरा करती है। मेजर तेजपाल उनके चपल, स्वच्छन्द एव निस्संग व्यवहार को बर्दाश्त नहीं करते। दोनों में न कोई सामंजस्य होता न प्रेम का स्पन्दन। मि. तेजपाल तो पत्नी को प्यार करते है लेकिन मिसेज तेजपाल का झुकाव पति की ओर तनिक भी नहीं होता वह ऐसे काम करती है जिन्हें मि. तेजपाल पसन्द नहीं करते। मि. तेजपाल को लम्बे बाल पसंद है व उन्हें चिढाने के लिए बाल कटवा लेती है। हमेंशा गाती रहती है जिससे पडोसी उनका नाम रेडियोग्राम रख देते है। किन्तु उन पर किसी रिमार्क या व्यंग का कोई प्रभाव नहीं पडता सबकी उपेक्षा करती है। बांब कट बाल को झटकती हुई सभी को मुग्ध करती रहती है, सदा खिलखिलाती रहती है। जिन्दगी के अवसाद को उनकी बलबलाती जीवनी शक्ति स्वीकार नहीं कर पाती गोलियों के फूलों की छाया में मिस्टर तेजपाल को उनकी कुहकती आवाज को सुनने का अवसर न मिसेज तेजपाल को लगता कि जैसे अपने शौक अपना सम्पर्क अपना नाम सब पीछे छोड आयी सामाजिक स्तर पर वे मिसेज तेजपाल बनकर जी रही थी किन्तु घोर वैयक्तिक स्तर पर उन्हें यह बनना बर्दाश्त नहीं था। वह आत्म संघर्ष नैरन्तर्य में सुख महसूस करती है। यहां तक कि गाने की प्रक्रिया भी उत्तेजना से अक्सर बांधित हो जाती है। वस्तुत: मिसेज तेजपाल अपने वर्तमान से समझौता नहीं कर पाती उनमें दरकते सम्बन्धों को लेकर एक शीत युद्ध जारी रहता है। उनके बीच अजनबीपन और अकेलेपन की दीवार खिंच जाती है। किन्तु दोनो की लडाई नकली है। जैसे मिसेज तेजपाल का चहचहाना गाना नकली था। उसी प्रकार तेजपाल का दबदबा खुंखारपन नकली था असली मोर्चा उनके अन्दर था जो उन्हें पराजित कर देता है।

स्वच्छन्दता में पली मदमस्त लडकी मिसेज तेजपाल विघुटन की भोक्ता बन जाती है । यह विघुटन पहले उनके व्यक्तित्व को तोडता है फिर परिवार को और अब दोनो में दिनोदिन तनाव की दूरियां बढती जाती है । शत्रुओं को पराभूत करने वाले मेजर पत्नी को निमंत्रित नहीं कर पाते । विखराव बढता जाता है क्योंकि दिन भर गाना गाकर पति की उपेक्षा करके और अन्य क्रिया कलापों से अपने विरोध को प्रकट करती है किन्तु उनके कैम्प में चले जाने पर उनके स्वभाव में अभूतपूर्व परिवर्तन आ जाता है । उनका गाना गाना बन्द हो जाता है । किन्तु अल्शेसियन कुतिया को लेकर घूमने की पुरानी दिनचर्या नहीं भूलती । मिसेज रूद्रा उनके बांझपन के कारण अपनी गुडिया को भी नहीं भेजती है । अत: अपने आसपास से एकदम कटकर स्वयं में सिमट जाती है । किताबों की दुनिया में स्वयं को उलझाने की कोशिश करती है । अपनी उदासी को दूर करने के लिए वायलिन सीखती है । तनाव इस सीमा तक बढ जाता है कि अतृप्त मिसेज तेजपाल का प्रेम वायलिन वादक से हो जाता है और सारी मर्यादाओं को तोडकर पलायित हो जाती है । कैम्प में जब मिस्टर तेजपाल को मिसेज तेजपाल का पत्र मिलता है तो मेजर तेजपाल की यह स्थिति अविकल हो जाती है । नैरेटर जो मिसेज तेजपाल के अनेक भावुक क्षणों का भागीदार था उसे तेजपाल का पत्र मिलता है जिससे सारी स्थिति ज्ञात होती है । मेजर तेजपाल पर नामर्द होने का आरोप लगता है जिससे उनकी अच्छी खासी जिन्दगी नर्क हो जाती है । एबनार्मलटी (मांनसिक असमान्यता)में वे पहाडी में जाकर अधाधुन्ध गोलियां चलाते है । स्त्रियों को देखकर भददी गालियां देते है । पत्नी का प्रेम के पास जाना अपने पुरूषार्थ को चुनौती गलती है वे पागल हो जाते है । उन्हें कैम्प से बाहर लाकर रांची भेज दिया जाता है इस प्रकार विघटन की कई अनुगूजे उनके एकल परिवार को खण्डित कर देती है । अपनी दुर्दमनीय जीवन शक्ति के कारण मिसेज तेजपाल रूढियों एवं परम्पराओं को ताक में रखकर मुक्ति की कामना से घर छोड देती है । अत: बीनू जैसी अभिजात महिला उसे कुलटा का सम्बोधन देती है ।

मिसेज तेजपाल चाहे जितनी स्वच्छन्द और उन्मुक्त होकर व्यवहार करें लेकिन उनकी हर बात में एक ऐसी संयत उंचाई का भाव होता है जिससे उनके बारे में मि. रणधीर एवं बीनू तथा मि. रूद्रा आदि ऐसी वैसी बात नहीं सोच सकते है ।

4. शह और मात –

प्रस्तुत उपन्यास प्रथम डायरी के रूप में लिखा गया । जिसमें घटना सीधे रूप में न आकर स्मृतियों और मूड्स के रूप में प्रतिफलित होकर आयी है । उपन्यास व्यक्ति और

लेखक का द्वन्द्व अर्थात कर्ता और दृष्टा के आपसी सम्बन्धों और संघर्षों का रूपक है, जिसे आज की भाषा में विषय निष्ठता और पात्र निष्ठता की समस्या कहेगे । लेखक का अन्तस अनेक अन्तर्विरोधों के कारण तनावग्रस्त रहता है । व्यक्ति और लेखक की विभाजक रेखा उसके अन्त:करण में कील बनकर हमेशा खटकती रहती है क्योंकि लेखन का भूत उसे चैन से रहने नहीं देता और निजी व्यक्ति जीवन का गला घोट देता है । इस प्रकार यह उपन्यास खण्डित व्यक्तित्व का दस्तावेज है । किस तरह दो रचनाकार, अपनी मित्रता को पीछे धकेल अपने माध्यम तलाशते है । यह उपन्यास से बखूबी प्रस्तुत हुआ है । संक्षेप में इस कथा का सार इस प्रकार है ।

सुजाता डॉ. की बेटी है जो ग्रामीण परिवेश से आकर बम्बई में बसी है, अच्छी कहानीकार होने के साथ-साथ अच्छी अभिनेत्री भी है । उदय से उसकी मुलाकात एक कहानी कार के रूप में होती है । उदय भी बम्बई में आजीविका के लिए आकर बसा है । अमीर बनने के सपने को साकार करने के लिए बंबई आया ताकि अपनी कथित प्रेमिका को उत्तर जीवन दे सके । स्टेशन पर सामान ढोते ढोते उपन्यासकार बनता है । जीवन यापन बमुश्किल ही हो पाता है । धनाभाव के कारण वह कभी अनुवादक बनता है, कभी स्क्रिप्ट तैयार करता है । कभी फिल्मों के सीन एवं डॉयलॉग लिखने में अपनी प्रतिभा का दुरूपयोग करता है । सुजाता उदय से लेखन के दायित्व के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना चाहती है । वह उदय से फिर मिलती है और अपने द्वारा अभिनीत नाटक को देखने के लिए आमंत्रित करती है । वह उदय से फिर मिलती है किन्तु उदय स्वयं न जाकर अपनीबहिन प्रिन्सेस अपर्णा को भेज देता है क्योंकि वह चाहता है कि सुजाता एवं प्रिन्सेस अपर्णा में दोस्ती हो जाये । प्रिन्सेस अपर्णा द्वारा पुरस्कृत होने पर सुजाता बहुत प्रसन्न होती है । धीरे-धीरे दोनो में अन्तरंगता स्थापित होती है प्रिन्सेस से मिलकर उदय को उसका किस्सा सुनाती है क्योंकि वह चाहती है कि समय मिले एवं दोनो ने आत्मीयता स्थापित हो । वह इस बात से अनभिज्ञ है कि उदय की कथित बहन अपर्णा ही प्रिन्सेस अपर्णा । प्रिन्सेस अपर्णा परित्यक्ता नारी है । आरोपित स्वर में वह सुखी जीवन का प्रतीक है किन्तु वास्तविकता यह है कि सामन्ती सभ्यता, आडम्बर, मृत संस्कार और खोखली मान्यताओं के अन्दर उसकी चेतना पिसती है । अत: वह साहित्य में अपनी रूचि रखकर अपना मन बहलाती है, सुजाता के रूप में उसे एक अच्छी दोस्त मिलती है । उदय और सुजाता दोनो की नियति हर क्षण लेखक बने रहने की होती है । अत: संपर्क में आने वाला हर व्यक्ति सम्भावित कथा पात्र होता है । वह प्रिन्सेस अपर्णा से मिलकर शीघ्रतिशीघ्र अपनी अनुभूति उदय को समर्पित करना चाहती है, साथ ही वह लेखक उदय

का अध्ययन कर उसे अपने कहानी का पात्र बनाना चाहती है । इस सिलसिले में वह उपन्यासकार उदय का अध्ययन करते करते व्यक्तिगत उदय में केन्द्रित होने लगती है । उदय को देखकर उसे अपने प्रेमी तेज की स्मृति होती है, जो उसे भूल चुका है । प्रथम प्रेम की असफलता के कारण सुजाता उदय के सानिध्य में अपना हर कदम फूंक फूंककर रखती है । उदय और सुजाता दोनो ही अपर्णा में दिलचस्पी लेते है ताकि अधिक प्रामाणिकता से उच्च वर्ग की विडंम्बना जान सके । इसी के चलते दोनो में निकटता स्थापित होती है । व्यक्ति उदय भी सुजाता में प्यार की गर्माहट महसूस करता है किन्तु वह स्वयं को हर क्षण लेखन से प्रभावित होकर उसे लेखन के दायित्व के संदर्भ में कहता है कि रचनाकार को निष्ठुर होना चाहिए उसे अपने विषय के प्रति तटस्थ होकर अध्ययन करना है । उसे पात्र के सुख दुख में हंसना या रोना नहीं है । फलत: सुजाता के प्रति ईमानदार नहीं रह पाता । लेकिन इस बात से सुजाता अनभिज्ञ रहती है और उसे यह महसूस होने लगता है कि उदय उसकी निकटता चाहता है । किन्तु जैसे जैसे वह रचनाकार के दायित्व को शिद्दत से महसूस करती है तो उसका अन्तर्द्वन्द्व तीव्र होता जाता है । उसे खुद अश्चर्य होता है कि उसकी चेतना के दो पहलू कैसे ? उसकी मित्र रेखा उसे लेखकीय दायित्व के प्रति सजग करती है उसे यह चेतना कोचती रहती है कि लेखकीय स्तर से उतरकर व्यक्ति उदय में दिलचस्पी लेना अनुचित है । वह कभी आत्मभर्त्सना करती है कभी आत्मालोचन कभी आत्म निरीक्षण करती है और कभी उदय की सारी प्रक्रियाओं को सजगता से तौलती है । वह उदय को अपनी कहानी का विषय बनाकर मात देना चाहती थी किन्तु मात उसे ही खानी पडती है । जब सुजाता को यह ज्ञात होता है कि प्रिन्सेस अपर्णा एवं उदय की कथित बहन अपर्णा एक ही है और दोनो पूर्व परिचित है तब उदय से पूछती है कि उसके साथ यह धोखा क्यों हुआ ? वस्तुत: उदय स्वयं सुजाता को इस तथ्य से अवगत कराना चाहता था किन्तु सुजाता पहले ही जान गयी । उदय डायरी लिखकर उसे बताता है कि यह सब कैसे एवं क्यों हुआ । वह बताता है कि प्रिन्सेस अपर्णा द्वारा उस वर्ग का अध्ययन कर सके क्योंकि वह स्वयं प्रिन्सेस अपर्णा से रोज नहीं मिल सकता अत: उसने सुजाता को माध्यम बनाया । जब सुजाता को यह ज्ञात हो जाता है कि उदय उसे बिसात बनाकर अपर्णा के वर्ग का अध्ययन कर रहा है तो उसे धक्का लगता है लेकिन उदय को आत्मग्लानि होती है और वह कहता है कि वह किसी का दूत होकर यह सब कर रहा था । यद्यपि वह जानता था कि सुजाता जैसी सरल हृदय को कुमंद बनाना अनुचित है किन्तु खेल शुरू हो चुका था । वह डायरी में लिखता है – ।अपने बेटे की मौत के समय भीतर का बाप रोता है और यह क्रूर दूत उस समय भी बैठा बैठा यह

नोट करता है कि बेटे के मरते समय बाप को कैसा लगता है। कभी कभी तो दूत उसे मजबूर कर देता कि वह बेटे को मार कर देखें। वह कहता है कि आज वह स्थिति आ गयी है कि वह दिन के हाथों मजबूर हो गया है और सुजाता के समक्ष आत्मसमर्पण करता है वह स्वयं को ऐसे मात्रिक का दूत समझता है जो उसे यहां छोडकर जाने कहां चला गया। उसे यहा याद भी नहीं रहा कि उसे यह काम सौंपा गया था।

5. अनदेखे अनजाने पुल :

यह लेखक का पांचवा उपन्यास है जिसमें लेखक ने निम्न मध्यम वर्गीय परिवार की मर्मान्तक संवेद्य और अनछुए पराग को उपन्यास का प्लाट बनाया है। आदिकाल में समकालीन रचनाओं तक में नारी की सुन्दर देह यष्टि के माध्यम से ही सौन्दर्य निरूपित किया गया। किन्तु उपन्यासकार ने सौन्दर्य के प्रचलित प्रतिमानों को न मानकर अनदेखे अनजाने पुल से गुजरकर जिस सौन्दर्य की लब्धि की है वह है आंतरिक सौन्दर्य। निन्नी नामक कुरूप स्त्री अपनी कुरूपता के कारण हीन भावना ग्रस्त रहती है। सभी उसको दया या घृणा की दृष्टि से देखते है उसको तिरस्कृत करते है। युवावस्था में उसमें सम्पूर्ण नारीत्व की आकांक्षा बलवती हो जाती है जिसके कारण वह अनदेखे अनजाने पुल से गुजरकर जोखिम उठाकर भी अप्राप्य सुख को पाने के लिए ललक उठती है। जब वह इस यथार्थ से परिचित हो जाती है कि पुरूष का सुख उसके नसीब में नहीं है तब वह अपनी व्यर्थता के कारण स्वयं को पीडित करने का प्रयास करती है। इसी प्रयास मे वह बीमार हो जाती है बीमारी के पश्चात उसमें दर्शन नामक युवक के संस्पर्श से पुन: जीवन्तता आ जाती और वह वास्तविक सौन्दर्य क्या है समझ जाती है और अपनी योग्यता को सही दिशा देती है। कथा का सार निम्न प्रकार से है –

निन्नी एक निम्न मध्यवर्गीय परिवार की कुरूप लडकी है परिवार में वही एक ऐसी सन्तान है जिसे यह अभिशाप मिला। बचपन में ही बच्चे काली कलूटी बैगन कहकर चिढाते। वह कहती काले काले राम के प्यारे किन्तु जब असहाय हो जाती तब रोने लगती उसमें अपनी कुरूपता के कारण हीन ग्रन्थि बचपन से ही पैदा कर दी जाती है। कोई उपाय न सूझने पर दिशाहीनता की स्थित में अभिशाप मुक्ति हेतु दैवीय चमत्कार की उम्मीद बांधती है। सुनी कहानी के आधार पर अपने कायाकल्प होने की कल्पना में डूबी रहती है। गंगा में डुबकी लगाती तो सोचती की नि:संदेह उसका रंग दूधिया हो गया होगा। हमेशा स्वप्न देखती कि परी लोक के तालाब में स्नान करने से वह निर्मल एवं सुन्दर हो गयी है। सरोजिनी नायडू की महानता का कारण कालेपन को बताती है। उसके अर्न्तमन में उठने वाली किशोरी की

आकांक्षाओं को कटूक्तियों का बुलडोजर कुचल देता । वह सभी की नजरों से बचना चाहती है । समाज की कटूक्तियां उसमें हीनता की भावना कूट–कूट कर भर देती है । हीनता का बोध युवास्था में तीव्र हो जाता है । कई देखने वाले आते है अस्वीकार करके चले जाते । कॉलेज में अक्सर उसे तिरस्कार और अपमानजनक वाक्य सुनायी देते है । उसे दया की पात्र भी बनना पडता है – गली की मोड का इस्माइल दर्जी कहता है वकील साहब की यही संतान ऐसी है जो बेचारी काली है । बाहर तो बाहर घर की चहारदीवारी में भी उसे कुरूपता बोध से मुक्ति नहीं मिल पाती । सारा दिन माँ माथे पर हाथ मारती कि इसका विवाह कैसे होगा । इस तरह घर बाहर की सरहदो ंपर एक साथ उसे युद्धरत होना पडता । घृणा तिरस्कार दया तथा चिन्ताभाव उसके व्यक्तितव को क्षरित करते है । यन्त्रणा की स्थिति में उसे विश्वास हो जाता है कि वह काली है । उसके काले रंग में आंखे एवं दात ही चमकते है । वह कुरूप है किन्तु वह सकारात्मक सोंच का पल्ला पकडे रहती है और उसमें इस स्थिति से जूझने की क्षमता आ जाती है और वह सोंचती है कि देखती है कौन उसे नारीत्व के सुख से वंचित करता है । वह गोरे लोगों में दोष देखकर संतुष्ट होती और स्वयं को समझाती रूप सौन्दर्य अपने में कुछ नही, सलीका ही आदमी को सुन्दर बनाता है । कभी अपने जीजा जी की बात याद करके अपने को बहलाने की कोशिश करती कि – भीतर की प्रसन्नता ही तो सुन्दरता है । अत: प्रसन्न रहने का प्रयत्न करती है और वह इसे भी अच्छी तरह जानती है कि झटका खाने के बाद दया या घृणा के भाव उभरंगे । अत: प्रत्येक नए व्यक्ति के सामने जाने में परीक्षा की मन: स्थिति से गुजरना पडता । फिर भी उसे विषमालिंगी आर्कषण से प्रेम के सीखचों में कसने को आतुर हो जाती है । विवाह की आशा भर चुकी थी क्योंकि तमाम लोग उसे अस्वीकार करके चले गये थे । न तो कोई उससे विवाह करेगा न कोई प्रेम इस हीनत्व से छटपआती निन्नी के जीवन में मोड आता है । बैजल के चुम्बन से बैजल उसी के कॉलेज में पढने वाला एम.एस.सी. का छात्र है जो साधना नामक सुन्दर स्त्री से प्यार करता है । एक दिन विवाह समारोह में बैजल साधना और निन्नी तीनों ही उपस्थित होते है । साधना और बैजल दोनो के बीच हो रहे मूक प्रेम संवाद को देखकर निन्नी को ऐसा लगता है कि जैसे वह साधना है बैजल साधना को किसी काम से भेजता है । किन्तु निन्नी साधना को यह कहकर रोक देती है कि उसकी साडी गन्दी हो जायेगी और स्वयं चली जाती है । किन्तु यह बात बैजल को नहीं मालूम होती और वह निन्नी को साधना समझकर आलिंगनबद्ध कर लेता है और वह चला जाता है । इस घटना से एक मध्यवर्गीय परिवार की लडकी होने के नाते एक ओर उसमें अपराध बोध जाग्रत होता है और दूसरी ओर कामेच्छा । इसी कामेच्छा की उत्तेजना के

कारण वह वर्जित और कुत्सित करने को मचल उठती है। यह सनक उसे पडोस के एक रिश्तेदार सागर के पास ले जाती है और वह स्पर्श की उत्तेजना का आस्वादन करती है। यह जानते हुए भी कि सागर महज छेडखान का साधन है वह तो उससे घृणा करता है किन्तु किसी न किसी बहाने नित्य वहां जाती संकोचशीलता के स्थान पर उदण्डता का व्यवहार करती। लेकिन निन्नी की वह उददण्डता तब शीलता में परिवर्तित होती है जब वह अपने दादा (भाई) के दोस्त दर्शन से मिलती है। दिल्ली में रहने वाला दर्शन एक साधारण चित्रकार है वह कमरे में ही अपनी चित्रकारी की सारी सामग्री फैलाकर रखता है और अत्यत्न मिलनसार तथा साफ दिल का इंसान है। निन्नी अपने भाई रम्मी से दिल्ली साथ ले जाने की जिदद करती है। उसने शहरी जीवन के बारे में सुना था अत: देखने की ललक पैदा होती है। वह दादा के साथ दिल्ली पहुचती है लेकिन जब उसे ज्ञात होता है कि रम्मी किसी दर्शन नामक युवक के यहां रूकेगा तो उसे भय का तिलचट्‌टा डराता है। उसे लगता एक बार फिर परीक्षा की घडी से गुजरना पडेगा फिर किसी की दया या घृणा का पात्र बनना पडेगा किन्तु दर्शन के चेहरे में निन्नी की कुरूपता के प्रति कोई भाव नहीं आता। निन्नी सुबह उठकर दर्शन के लाख मना करने पर रसोई का काम सम्भालती है दर्शन निन्नी के हाथ का खाना खाकर उसकी तारीफ करता है, निन्नी एक ही दिन में उसके बिखरे घर को व्यवस्थित कर देती है। जिससे दर्शन अत्यधिक प्रभावित होता है। रम्मी के पास समय नहीं मिलता अत: दर्शन ही निन्नी को नुमायश दिखाने ले जाता है। भीड में निन्नी दर्शन के स्पर्श का सुखानुभव करती है। दोनो गहरे मित्र बन जाते है। बचपन से अपमानित तिरस्कृत निन्नी जब दर्शन से अत्मीयता का संस्पर्श पाती है तो वह स्वयं को निरीह नहीं पाती। दिल्ली से लौटकर आने पर वह सदा प्रसन्न रहती है। इस विश्वास के सहारे कि आंतरिक प्रसन्नता चेहरे को सौन्दर्य प्रदान करती है। दर्शन एवं निन्नी के बीच पत्रों का जो सिलसिला चलता है वह निन्नी की दिनचर्या बदल देता है। वह हर क्षण दर्शन को लेकर सपने देखती है और उसके साथ परिवार बसाने की सोचती है। उसे लगता कि शायद परीलोक के जिस तालाब को वह स्वप्न में देखती थी यह वही तालाब है जिसमें नहाकर वह सुन्दर एवं निर्मल हो गयी है। यह जानकार भी दर्शन किसी से शादी के लिए कृत संकल्प है। अपने सपने को सुरक्षित रखते हुए दर्शन का दिल जीतने का प्रयास करती। लेकिन उसकी भावनाओं को तब जबरजस्त चोट पहुंचती है जब दर्शन के विवाह की सूचना मिलती है। उस क्षण उसे ऐसा नहीं महसूस होता कि जैसे कुछ असाधारण घट गया हो। किन्तु धीरे–धीरे यह दु:ख उसे खोखला करता जाता है। वह यह समझ जाती है कि कुरूपता ही उसका प्रारब्ध और नियति है। उसे दर्शन जैसे सुन्दर

युवक के साथ विवाह की कल्पना नहीं करनी चाहिए। धीरे-धीरे परिवार के प्रति विरक्त होती जाती है। पिता की मृत्यु पर भी उसे कोई दु:ख नहीं होता, किसी प्रकार का आभाव भी नहीं महसूस करती और स्वयं को पीडित करती है। अपनी व्यर्थता के कारण मौत के उपाय सोचती है स्वयं को पीडित करने के प्रयास में एक दिन भीषण ठण्ड में उसे डबल निमोनिया हो जाता है वह सोचती है कि इसी बीमारी में उसकी मौत हो जाए ईश्वर से मौत की कामना करती। इसी बीच दर्शन आता है। उसे देखकर और यह जानकर की निन्नी के व्यवहार असामान्य हो गए है उसे समझाता है कि वह अपनी योग्यता को सही दिशा दे। सौन्दर्य क्या है उसे समझाता है कि सौन्दर्य प्रसन्नता, उत्साह और आस्था का ही नाम है। जाते समय वह निन्नी के मुरझाए होठो को चूमता है निन्नी को लगता है कि दर्शन का आना सपना था, उसे लगता है कि इस चुम्बन में बैजल के चुम्बन का अर्थ नहीं था और न ही दूसरे को निवेदित था। जिसे गलती से निन्नी ने प्राप्त कर लिया था। दर्शन का चुम्बन आत्मीय और अन्तरंग सम्बोधन था, जो निन्नी को बन्धनों में और मनुष्य मानकर समस्तरीय भावना के आधार पर प्राप्त हुआ था। फलत: उसमें पुन: जीवन्तता आ जाती है। कल्पना प्रवण निन्नी कुण्ठा से मुक्त होती है। वह अंधेरी और तंग सुरंग की सीमाओं को हटाकर उजाले में उसके पास जो पूंजी है उसका उपयोग करती है आगे अध्ययन जारी करके नौकरी करती है। किन्तु घर बसाने की कचोट बनी रहती है। इस तरह यह उपन्यास अपने से उपर उठने की क्रिया का दस्तावेज है।

6. मन्त्र विद्ध -

प्रस्तुत उपन्यास लघु उपन्यास के रूप में प्रकाशित हुआ था। यह 1966 में अक्षर प्रकाशन से प्रकाशित हुआ। इसमें ऐसे विवाहित युवक और अविवाहित युवती की कथा है जो प्रेम मंत्र से बंधे हुए है। इसमें एक बंगाली परिवेश का दम्भ भरने वाले निराश्रित विवाहित पुरूष का अभिजात्य कुल में पली पंजाबी कुडी सुरजीत की प्रणय गाथा है। परिवार से भागकर विवाह करके सामंती घुटन से मुक्ति प्राप्ति की कथा है। मूलत: परिवेश से मुक्ति का चुनाव और परिणाम भोगने का संकल्प मन्त्र विद्ध की मूल मनोवैज्ञानिक व्यथा कथा है। यद्यपि यह एक लम्बी कहानी के रूप में दिखाई देती है, जिसे उपन्यासकार ने औपन्यासिक परिवेश देकर एक नया प्रयोग किया है इसकी संक्षिप्त कथा इस प्रकार है -

मोहन तारक दत्त से बंगला सीखने के लिए एक होटल में मिलता है क्योंकि उसे कलकत्ता में रहकर नौकरी करनी है। एक होटल वाले की संस्तुति पर प्राइवेट रूप में अंग्रेज़ी एवं इतिहास

पढाने वाले तारक दत्त से बंग्ला भाषा सीखने का प्रयास करता है किन्तु घटनाक्रम कुछ इस प्रकार प्रवाहित होता है कि दोनो के मध्य गुरू शिष्य का सम्बन्ध न होकर मैत्री भाव पनपने लगता है क्योंकि बंगाली पढते समय मोहन का यह मोह भंग हो गया कि तारक बंगाली जानता है।

इधर लगातार सिगरेट फूकने वाला हल्लेदार, कांच के चश्में से कीचड बहाने वाला तारक धीरे–धीरे अभिजात्य वर्ग की पंजाबी सुरजीत के प्रेम पाश में कुछ इस तरह बंधा कि विभिन्न बहानों के माध्यम से मिलने पर भी वे अपने भावुक प्रेम को छिपा नहीं सके। प्यार में सुरजीत इस तरह उन्मादिनी हो जाती है कि वह प्रेम के लिए सब कुछ दांव पर लगा देती है और क्रूर रोबीले पंजाबी संस्कृति विशेषता सम्पन्न लडाकू पिता के खौफ से सुरजीत खडे पैर अचानक घर छोडक तारक के साथ मंदिर में विवाह कर कलकत्ता भागने का निर्णय कर लेती है। क्योंकि उनकी धारणा यह मूलबद्ध हो गयी थी कि नये–नये प्रेमी प्रेमिका बम्बई में शरण लेते है। बंगाली तारकदत्त को कलकत्ता सुरक्षित लगता है तीव्र घटना प्रवाह में मुगल सराय स्टेशन निकलने के बाद वे विश्लेषण करने लगते है कि उन्होंने आवेश में आकर कैसा अनर्थ कर डाला। यह भ्रम टूट जाता है कि बंगाली औरते जादू से पुरूष को भेडा बना देती है। यहां तो पंजाबी कुडी ने भी इस मन्त्र को सहज रूप से सिद्ध कर दिखाया। सद्य: नवविवाहित तारक और सुरजीत कलकत्ते में किसी मारवाडी की धर्मशाला में शरण लेते हैं। अचानक उनकी भेंट पूर्व परिचित मोहन से होती है। मोहन और उसकी पत्नी इन्दू सुरजीत की व्यथा कथा से प्रभावित होकर कुछ दिन के लिए उन्हें अपने यहां शरण देने का निश्चय करते है। एक कमरें में तारक और सुरजीत रहने लगते है और प्राय: चाय नाश्ता कर दम्पति नौकरी के लिए बाहर निकल जाते है। किन्तु तारक सुरजीत के पिता के आतंक से मुक्त नहीं हो पाता औरयहीं से कथा में मनोवैज्ञानिक संवेगों का उद्देश्य उपन्यासकार बडी कुशलता संप्रेषित से करता है। तारक सुरजीत को भी नौकरी नहीं करने देता, क्योंकि उसे भ्रम है कि उसकी खूबसूरत पत्नी को कोई छीन न ले। तारक सुरजीत के बाप से आतंकित रहता है उसे हर सरदार और टैक्सी वाला सुरजीत के बाप द्वारा भेजा गया गुण्डा लगता है। इसी आतंक के चलते नौकरी नहीं ढूंढ पाता फ लत: मानसिक तनाव का शिकार होने लगता है। निर्णय दुर्बलता के कारण तारक कुछ नहीं कर पाता। दूसरी ओर महानगरीय जीवन की जटिलता के चलते मोहन एवं इन्दु उनका खर्च वहन करने में सक्षम नहीं है। बात यह है कि मोहन के यहां स्थान का आभाव था और उसकी पत्नी इन्दु किसी भी अतिथि को ज्यादा दिन सहन नहीं कर सकती है। अपने घर में ही स्वयं को मेहमान जैसा महसूस करते है लेकिन मोहन को

तारक से लगाव है क्योंकि वह स्वयं को उसमें इन्वाल्व महसूस करता है अत: उसे उससे सहानुभूति होती है। वह विवाह जैसी परम्परा को स्वीकार नहीं करता। अपनी और उन दोनों की समस्या का भेद भूल जाता है वह सुरजीत की जगह पूर्णिमा को देखने लगता है। पूर्णिमा को लेकर इन्दु और मोहन दोनो ही तनाव ग्रस्त रहते है। फिर भी वे विवाह जैसी संस्था को निभाते है। इनमें स्थायित्व तो है लेकिन प्रेम की घनिष्ठता नहीं। लेकिन तारक एवं सुरजीत के आ जाने से वे दोनो नजदीक आ जाते है। तनावमुक्त हो जाते है। तारक को जब गलती का अहसास होता है तो सुरजीत के पिता की नाराजगी दूर करने के लिए सुरजीत से पत्र लिखवाता है। सुरजीत का पिता बेटी को स्वीकारने को राजी होता है लेकिन तारक को सजा देना चाहता है। अत: तारक निर्णय लेता है कि वह दिल्ली जाकर पहले शादी को अनछुआ सिद्ध करेगा एवं पहली बीबी से तलाक लेकर पुन: सुरजीत से विवाह करने के बाद दिल्ली में ही स्थापित होगा। लेकिन चूंकि शादी की बात सभी जानते है अत: यह निर्णय उचित नहीं लगता मोहन द्वारा बताये गये विभिन्न रास्तों में निर्णय दुर्बल तारक नहीं चल पाता है। यथार्थ का साक्षात्कार होते ही उसका साहसिक कदम हवा में मुट्ठी भांजने जैसा व्यर्थ एवं हवाई लगता है। वह असहाय निरूपाय एवं त्रस्त हो जाता है। उखडा हुआ अनुभव करता है। सामाजिक विधानों रूढियों से बोझिल अर्थ की चक्की में पिसता हुआ ऐसा संज्ञा शून्य हो जाता है कि न तो वह प्रेम को पढ पाता न विवाह का दायित्व संभाल पाता। जीवन संघर्ष में अपने को पराजित पाकर फैटेंसी की दुनिया में मन्त्र एवं जादू टोने से अपनी समस्याओं का समाधान करने का असफल प्रयास करता है। उसके बाद उस पर सुरजीत के पिता का आतंक इतना बढ जाता है कि वह सुरजीत को कहीं बाहर जाने नहीं देता। उसे अपने सामने ही बैठाये रहता है। सुरजीत भी विमूढावस्था में आ जाती है। तारक उस विवाह का दायित्व नहीं संभाल पायेगा यह जानकर उन्हें अपना कदम मूर्खतापूर्ण लगता है। उनका घर मौसमी बुखार होने लगता है। आर्य समाजी ढंग से हुआ विवाह उन्हें कोई सुरक्षा नहीं दे पाता। अन्तत: वह संघर्ष से परे हो जाता है और उसे लौटने के सिवा कोई विकल्प नहीं दीखता सुरजीत के पिता अपने मित्र मि. घई को सुरजीत को लेने के लिए भेजता है। मोहन को खबर मिलती है कि दिल्ली जाने पर तारक की खैर नहीं है। अत: वह तारक को रोकता है किन्तु वह मन्त्र के सम्मोहन की भांति से बिधा हुआ था। अत: दिल्ली पयालन के समय भी उसकी स्थित मोहच्छन्नता की ही थी। जिससे परिणाम काबिले गौर नहीं होता। और वह मन्त्र विद्ध की भांति सुरजीत के साथ दिल्ली चला जाता है। मोहन एवं इन्दु के बीच फासला पुन: लौट आता है। उनकों जोडने वाला सूत्रपात अनुपस्थित हो जाता है। वस्तुत: मोहन ने तारक के रूप में स्वयं को देखा।

7. एक इंच मुस्कान –

यह उपन्यास राजेन्द्र यादव एवं मुन्नु भण्डारी का सम्मिलित लेखन है। परम्परागत अर्थ में मुस्कान भीतर की खुशी जाहिर करती है। किन्तु मुसकान की अवधारणा इतनी इकहरी नहीं रह गयी है। मुसकान विवशता और शिष्टाचार की आवश्यक शर्त बन गई है। कृति की संशक्त पात्रा अमला अपने दुख को मोहक मुस्कान से ढंकती है। संवेदनशील रचनाकार अमर उसकी एक इंच मुस्कान को बेधकर उसके दर्द का परिज्ञान करने में सफल होता है। अमर की पत्नी रंजना अमला के प्रभाव से अमर को बचाने के लिए असफल प्रयास करती है। फलतः उसका वैवाहिक जीवन नष्ट हो जाता है एवं अन्त में अमर स्वयं अकेला रह जाता है। कथा का सार इस प्रकार है –

अमर एक सजग रचनाकर है किन्तु धनभाव के कारण वह जयपुर छोडकर दिल्ली आ जाता है। दिल्ली आते ही उसे अपनी प्रेयसी रंजना का अभाव खलता है। रंजना को भी वह यह कहकर दिल्ली बुला लेता है कि वह भी दिल्ली में नौकरी करेगा और फिर दोनो विवाह करके दिल्ली में ही सेटल हो जाते रंजना परिवार के समस्त सदस्यों की अवहेलना करके दिल्ली आ जाती है और वहीं एक कॉलेज में पढाने लगती है। रंजना के आ जाने पर अमर उसकी प्रेरणा प्राप्त करके लिखता रहता है और धनाभाव में भी संतोष का अनुभव करता है। इसी दौरान वह स्कालरशिप की परीक्षा देने कलकत्ता जाता है और रंजना अपने कॉलेज की लडकियों के साथ टूर में चली जाती है। जुडू में सूर्यारत देखने के लिए वह रंजना को बम्बई बुलाता है। कलकत्ता में अमर की प्रशंसिका अमला के यहां वह ठहरने का प्रोग्राम करता है। अमला उच्च वर्ग से सम्बद्ध एक ऐसी नारी है जो जल में भी रहकर प्यासी है पति परित्यकता है और पुनर्विवाह के पक्ष में नहीं है। प्रवंचन पति का व्यवहार उसे ऐसे मोड पर ले जाता है जहां पहुंचकर वह नारीजन्य संस्कारों को तहस नहस कर देती है। वह विद्रोहिणी हो जाती है। पुरूषों के साथ विचरण करती है किन्तु अपनी विशिष्टता एवं अहं को सुरक्षित रखती है। अपने त्रासद पहलुओं को छिपाकर मोहक मुस्कान से संतुष्ट दिखने का अनुभव करती है। अमर यह सब देखकर जहां रह जाता है वहीं दूसरी ओर अमला की मोहक मुस्कान के पीछे छिपी पीडा उसे छूने लगती है। वहां पहुंचने पर अमला अमर को अपने मित्र कैलाश से मिलवाती है किन्तु कैलाश को अमला का इस तरह से सभी से मिलना जुलना पसंद नहीं फलतः दोनो में बहस हो गयी किन्तु अमला इस बात को गम्भीरता से नहीं लेती है। अमर को लेखकीय चेतना अमला के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उसे गहराई से देखना चाहती है।

अमला के चुम्बकीय व्यक्तित्व से सम्मोहित अमर अपनी एवं रंजना की प्रेमगाथा भी बता देता है। भविष्य मं दोनो शीघ्र ही विवाह करेंगे यह जानकर अमला अमर को उसके लेखन के प्रति सचेष्ठ करते हुए कहती है कि विवाह का बन्धन तुम्हारीकला को नष्ट कर देगा तुममे वह सब कुछ है जिससे तुम एक दिन अमर हो जाओगे। अमला उसे अपने व्यक्तित्व से प्रभावित करती है। रंजना उससे उदासीनता का कारण पूंछती है किन्तु वह कुछ नहीं बता पाता। रंजना के साथ विवाह के निश्चय से डगमगाने लगा और रंजना के प्रति मन में प्यार होते हुए भी वह विवाह से इन्कार करता है। उसके विचार में हर प्रकार का समझौता कला को पथ भ्रष्ट कर देता है। विशिष्ट होने को रंजना अमर से कुछ नहीं चाहती वरन अमर को ऐसा वातावरण देगी जिसमें निश्चिन्त होकर वह लिखेगा और उसके यश में ही वह अपनी सार्थकता मानेगी। लेकिन अमर का स्वाभिमान इसे स्वीकार नही करता। फलत: रंजना की स्निग्धता कडुवाहट से बदल गई एवं एक साथ मित्रता के छ: वर्ष रंजना की आँखों के आगे घूम गये। आहत रंजना दिल्ली वापस आ जाती है। दिल्ली में रंजना की कोई सूचना न पाकर व्याकुल अमर तरह-तरह की आशंकाओं से युक्त हो जाता है और तभी एक दिन टण्डन जो कि अमर का चिर परिचित दोस्त है अमर से बताता है कि रंजना उसके घर आयी थी और अमर को इस बात से आश्वस्त कर देता है कि जब तक रंजना को धोखा देने की पीडा में ही वह उपन्यास लिखता है। रंजना और अमर विवाहित होने के बाद भी रंजना अमर के मन से अमला का व्यक्तित्व को मोह को छुडा नहीं पाती और उसने अमर अमला को किस परिस्थिति में देखा उसे लगा कि उसे दोनो के बीच से हट जाना चाहिए और वह अमर को छोडकर अपनी सहेली मीरा के घर चली जाती है। तभी उसे भानुभव होता है कि वह गर्भवती है। अब इस समस्या के समाधान हेतु मंदाकिनी उसे पुन: अमर से समझौता कराने का प्रयास करती है। अमर बच्चा नहीं चाहता है। अत: रंजना ने अस्पताल जाकर उससे मुक्ति पाली और पुन: अमर का साथ छोड देती है। अमला रंजना और अमर के बीच अपने को अनावश्यक समझ कलकत्ता लौट जाती है। एकाकी अमर दिशाहीन सा हो जाता है। रंजना के अतिशय पति प्रेम से तथा अमला का वर्गीय स्वभाव के कारण अमर अकेला रह जाता है। अमला आत्महत्या करलेती है और वह पुरी के समुद्र तट को देखता रह जाता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची अध्याय -3

1. हिन्दी साहित्य खण्ड तीन पृ. 338
2. आधुनिक कहानी संग्रह डॉ. सरोजनी शर्मा पृ. 25
3. डिक्सनरी इंगलिश एण्ड संस्कृत मोनियर विलियम पृ. 538
4. हिन्दी शब्द सागर पृ. 125
5. हिन्दी लधु उपन्यास डॉ. घनश्याम पृ. 12
6. दा न्यू इन साइक्लोपीडिया - भाग 7
7. न्यू इण्टरनेशनलन डिक्सनरी ऑफ इंग्लिस लैंगवेज पृ. 1670
8. ए ट्रीजिट आन दि नावेल - पृ. 13
9. दा क्वेस्ट फार लिटरेचर पृ. 354
10. रीडिंग ए नावेल पृ. 15
11. साहित्यलोचन पृ. 143
12. हिन्दी उपन्यासों में चरित्रचित्रण का विकास डॉ. रणवीर रांग्रा पृ. 14
13. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास पृ. 510
14. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास पृ. 510
15. हिन्दी उपन्यास शिव नारायण श्रीवास्तव पृ. 60
16. हिन्दी उपन्यास साहित्य ब्रज रत्न दास पृ. 151
17. हिन्दी साहित्य का इतिहास रामचन्द्र शुक्ल पृ. 532-35
18. आलोचना (उप विशेषांक) विजय शंकर मल्ल पृ. 80
19. हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन गणेशन पृ. 58
20. आलोचना (उप विशेषांक) राम रतन भटनागर पृ. 81
21. हिन्दी साहित्य हजारी प्रसाद द्विवेदी पृ. 286 -87
22. हिन्दी साहित्य का इतिहास रामचन्द्र शुक्ला पृ. 541
23. हिन्दी साहित्य भाग 3 सम्पादक धीरेन्द्र वर्मा पृ. 290
24. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास पृ. 716
25. हिन्दी साहित्य का अघतन इतिहास डॉ. मोहन अवस्थी पृ. 225
26. हिन्दी भाग तीन धीरेन्द्र वर्मा पृ. 297
27. हिन्दी साहित्य का अद्यतन इतिहास पृ. 210-31

अध्याय-4

- आलोच्य कथाकरों की प्रमुख नारी स्वरूप

आलोच्य कथाकरों के प्रमुख नारी स्वरूप

नसीबन

सन्दर्भ एवं परिचय :

व्यक्ति हो चाहे देश जगत् जगड़्व्राल की कुछ ऐसी परिस्थितियां चाहे वो सुखात्मक हो या दुखात्मक हमेशा कलेजे में लगे कांटे की तरह कसकती रहती है और समय-समय पर उसकी टीप व्यक्त होती रहती है। कवि, साहित्यकार इस परिस्थिति को सकारात्मक या नकारात्मक अथवा अन्य किसी दृष्टि से देखकर उन परिस्थितियों का विश्लेषण करता है। हिन्दू और मुस्लिम धर्म के आधार पर जो देश का बंटवारा हुआ जिस पर शताधिक कवितायें काव्य, उपन्यास कहानियां लिखी गई है फिरभी यह नहीं कहा जा सकता कि उस ऐतिहासिक घटना को समझ लिया गया या विश्लेषण कर लिया गया है। कमलेश्वर ने स्वयं लिखा है कि जब देश का विभाजन तय हो गया था और जगह-जगह साम्प्रदायिक मार काट शुरू हो गई थी पूरी कौम की किस तरह गुमराह किया गया यह यथार्थ परिदृश्य मेरे सामने है... लेकिन गलत इतिहास और उसका अहंकार स्वयं अपनी ही सहनशीलता और संस्कृति को कैसे नष्ट करता है इसका नजारा मेरे शहर ने ही पेश किया था और तब आती हुई जिन्दगी में फिर से जीवित होती संवेदनाओं को सहेजा था और वह मुसाफिर जो चले गये थे उनके बेटे अपने घरों को तलाशते हुये फिर लौट रहे थे।[1]

नसीबन लौटे हुये मुसाफिर उपन्यास की मुख्य पात्री है यद्यपि कथाकार ने प्रतीकात्मक चरित्र के रूप में उसका पात्रगत उपयोग किया है तथापि कटुता, विद्वेश, दुश्मनी, जहरीली भावनाओं के रेगिस्तान में नसीबन एक छोटा सा नखलिस्तान प्रतीत होती है। बात यह है कि अपनी धरती से उखड़ कर जो पौधा दूसरी जगह लगाया जाता है वहां वो फलता फूलता भी है। है किन्तु उसको वास्तविक खुशी अपने मूल मातृ भूमि में ही मिलती है। नसीबन मुस्लिम महिला होकर भी मिट्टी से अपने संस्कारों से, अपने मूल से इतनी सम्प्रक्त थी कि डर के कारण भागे हुये मुसलमान जो मुसाफिर बनकर पुन: हिन्दुस्तान अपने गांव आये तो उन्हें नसीबन ने ही अपने आंचल की छाँह दी।

इस विवरणात्मक कहानी में नसीबन के कुछ ही पक्ष उजागर हुये हैं कहीं उसके प्रौढ़ सौन्दर्य तो कहीं उसके मन में हिन्दू मुस्लिम वैमनस्य के प्रति खीझ और झुझलाहट तो कहीं बच्चन हिन्दू के पुत्र को स्वत: पालन पोषण की जिम्मेदारी लेकर एक नये रूप में प्रस्फुटित हुई है जिसे मुसलमानों द्वारा दिया गया लालच और शंघियों द्वारा दी गई धमकियों की कोई चिंता

नहीं है। कथाकार ने इसी परिवेश में नसीबन के चरित्र को एक नये दृष्टिकोण से चित्रित किया है कि उसने जिस मिट्टी में जन्म लिया है उसी की गोद में खाक हो जायेगी और जो मुसलमान धर्मांध होकर पाकिस्तान भाग गये थे पुन: गुलामी की जंजीर में फंसकर मुसाफिर के रूप में अपने गांव लौटे। यहाँ उसके व्यक्तित्व के कुछ पहलुओं को चित्रित किया जा रहा है।

सौन्दर्य-

सत्तार का नसीबन से बहुत मेल जोल था। पहली बार नसीबन को देख उसके प्रौढ़ सौन्दर्य पर वह मोहित हुआ। वस्तुत: यह युवा सौन्दर्य नहीं जिसमें रूप लावण्य, सौकुमार्य, कोमलता या सुचिकणता है अपितु सौन्दर्य की मूल्य परक दृष्टि का कथाकार ने चित्रांकन जिस शब्दों में किया है वह सौन्दर्य के प्रति एक नया नजरिया प्रस्तुत करता है- ''वह नसीबन को सचमुच पहली बार देख रह है उसके सब नक्श, कानों में पड़ी चांदी की बालियां, उलझे हुए बाल और चेहरे की उभरी हुई झुर्रिया, गर्दन के पास ऊभरी हुई नसें और सूखी हुई छातियां.... हाथों की उंगली की काले और टूटे हुये नाखून, सूखी बाहों में तार की तरह उभरी हुई नसें और सांस से जीवित होने का भ्रम पैदा करता हुआ पूरा शरीर- जैसे सब कुछ उसके लिये एकदम नया था। उस काया से वह नसीबन का नाम जोड़ ही नहीं पा रहा था। [2]

कथाकार ने सौन्दर्य के माँसल उद्दाम अदुनियायुक्त सौन्दर्य के देदिप्यमान रूप का उल्लेख न कर सौन्दर्य की वस्तुपरकता के साथ दृष्टिगत मूल्य बोध की परिभाषा प्रस्तुत की है।

हिन्दू, मुस्लिम वैमनस्य से निरपेक्ष -

नसीबन की मान्यता थी कि यह भूमि हम सबकी अपनी है। वासना पूजा पद्धति भिन्न होने पर भी अन्त में मिलना तो इसी मिट्टी में ही है। किन्तु अंग्रेजों के शोषण की अतिवादिता, औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप फूट डाल कर राज्य करने की प्रवृत्ति और देश की स्वातन्त्र भावना को लेकर गांधी, नेहरू, सुभाष जिन्ना इत्यादि, नेताओं द्वारा किये गये जागरण के विरूद्ध अंग्रेजों ने धार्मिक विद्वेश का बीजारोपण कर उससे नसीबन के गांव में भी बाहर से आने वाले मुल्ला मौलिवी पाकिस्तान के काल्पनिक सुखों की याद दिलाकर साथ ही राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के द्वारा कट्टर हिन्दुत्व की भावना के परिणामस्वरूप देश विभाजन की जो नींव पड़ी, नसीबन उसका विरोध करती रही और उसके देखते-देखते उसके सभी परिचित भयभीत होकर नसीबन के गांव को छोड़ पलायन करने लगे। मंदिरों में घण्टे-घड़ियाल से आरती होने लगी तो मस्जिदों में गला खोलकर अजान गूँजने लगी। फिर भी नसीबन इन

सबकी उपेक्षा करती वह तो परिस्थिति के मारे बच्चन के बच्चों को अपने साथ रखती थी। कुछ लोग तो बच्चन से उसके शारीरिक संबंध की चर्चा भी करते जो तथाकथित कट्टरपंथियों को अच्छा नहीं लगता था। नसीबन साई से कहती है। – इसी प्रकार संघियों के द्वारा की गई पूंछतांछ में नसीबन कहती है कि उसने बच्चन के पुत्रों को पालन पोषण के लिये रख लिया है। धर्म परिवर्तन की बात उसके ख्याल में ही नहीं आई आप पुलिस को खबर कर दें मैं इन्हें आपके हाथ कैसे कर दूं, काहे को कर दूं, कल को इनका बाप आयेगा तो। ये भी हंसी ठठ्ठा है अरे हम काहे को बनायेंगे किसी को मुसलमान हमारे क्या बाल बच्चे नहीं हैं।'' (3)

देश प्रेम –

ऊपर लिखा जा चुका है कि जन्म निवास जहाँ उसकी नाल गड़ी होती है उस भूमि का आकर्षण व्यक्ति के संस्कार रूप में अचेतन मन में स्थिर रहता है बाह्य परिस्थितिवश लोभ या लालच के कारण भले ही उसका परित्याग कर दे। यह इतिहास सिद्ध है कि भारत–पाकिस्तान का बंटवारा द्वि राष्ट्र सिद्धान्त के आधार पर हुआ पर हिन्दुस्तान में रहने वाला मुसलमान अपेक्षाकृत अधिक सुखी है जो लोग यहां से पाकिस्तन के आर्कषणवश गये उन्हें वहां मुहाजिर मान गया और उनकी नागरिकता द्वितीय श्रेणी की रही। परिणामस्वरूप पाकिस्तान से सौटने वाले मुसाफिर जब अपने जन्मभूमि को मात्र देखने के लिये आते हैं तो उनका मन उनकी आँखें गलअश्रु हो जाती है। कथाकार ने इस द्वि राष्ट्र के सिद्धान्त के परिणाम स्वरूप हुये बंटवारे में यह निरुपित किया है कि नसीबन सहित एक दो मुसलमान पूरे गांव में रह गये शेष परिचित प्रतिवेशी पलायन कर गये हैं।

सांई कहने वाला कहा करें...... पर मेरा अल्लाह जानता है दिल पे हाथ रखकर ईमान से कहना सांई, अब पचास के आस पास आकर क्या यही सब बाकी रहता है मेरे लिये इस उमर में हूँ और लोगों को शरम नहीं आती ऐसी बातें करते हुये क्या अब आसनाई करने के दिन है मेरे।''(4)

ममतालु –

नारी जो कोमल, भाव प्रमुख, सदल–हृदया और समर्पण शिला होती है उसके व्यक्तित्व का अग्रिम सोपान वात्सल्य है। ममत्व की ऐसी छाँह होती है जिसके देश, जाति, कुल, धर्म सब बेइमान लगते है। नसीबन ऐसे ही ममतामयी मां है जिसने पुलिस के क्रूर अत्याचार, भय, आतंक को सहन कर भी बच्चन के पुत्रों की रक्षा और सेवा करती है। सांई उसे समझाता है– मैं काहे को कुछ कहूंगा पर नसीबन यही समझाने आया था कि वक्त बहुत बुरा आ गया है। पूरे मुल्क में हिन्दू कौम मुसलमानों के खून की प्यासी पड़ी है और तू है कि

बच्चन के लौंडो को घर पर उठा लाई है ।[5] इतना ही नहीं पुलिस के कहर को बर्दास्त कर वह स्पष्ट रूप से स्वीकार करती है कि उसने बच्चन के पुत्रों को संरक्षण दे रखा है । अन्य मुस्लिम सहायक पड़ोसी समझाते हैं कि बच्चन के बच्चों को लेकर पूरी बस्ती पर आफॅत टूट पड़ेगी जिसके प्रत्युत्तर में बड़े दृढ़ शब्दों में नसीबन उत्तर देती है– सांई, असल बात यह है कि ये बच्चे तुम्हारी आंखों में करक रहे हैं मेरे लिये धरम करम का सवाल नहीं है । सीधी सी बात है कि मुझसे इन बच्चों को बिलखता नहीं देखा गया, जो ले आई ।[6] और अपने पुराने घरों को खोज रहे हैं । चलते वक्त उनके अब्बा या घरवालों ने बताया था उधर अपने घर में नसीबन खुशी से रो पड़ी थे । वे जब बच्चे बसीर, बाकर, रमजानी, फत्ते वगैरह जवान हो–होकर लौटे थे । नसीबन उन्हें अपने साथ ले गई थी उन निशानों के पास जो अब भी बाकी थे । उनके रात गुजारने की व्यवस्था करती हुई नसीबन दौड़ कर घर गई और जो भी मिला था उठा लाई थी बोरा फटी दरी, मैली चादर वगैरह और बोली लो यहीं पेड़ के नीचे बिछा लो और आराम करो ।

तार्त्पय यह है कि हिन्दू मुस्लिम बंटवारे में हुये खून खराबे हत्या लूटपाट, बलात्कार, निशृंस घटनाओं की चर्चा न कर कथाकार ने इसे पृष्ठ भूमि में डालकर सर्वधर्म सर्वभाव तथा अपने हुये पराये के प्रत्यागमन पर जिस असीम आनन्द की अनुभूति होती है कमलेश्वर ने उसे एक नई दृष्टि से देखा है, और एक नये आयाम से चित्रित किया है जिसमें अपने विरूद्ध लगे सामाजिक कलंक की परवाह नहीं जो मृत्यु को मानव का प्रमुख गुण समझती है । उसका चित्रांकन अत्यन्त सूक्ष्म ढंग से मानवीय पृष्ठभूमि में नसीबन के माध्यम से हुआ है । और आज भी पाकिस्तान ट्रिनिडाड मारीशस इत्यादि देशों के लोग हिन्दुस्तान की मातृभूमि को जिस आदर भाव से देखते हैं विदेश में रहकर अपने प्राकृतन संस्कारों को जीवित रखते हैं इन सब की केन्द्र बिन्दु नसीबन है यह भावनायें आज भी प्रासंगिक और जीवन्त है ।

''नसीबन घर बैठी–बैठी कुढ़ रही थी दिमाग खराब हो गया है इन लोगों का अरे पूछों कोई क्या बदलेगा, अपना नसीब जो है वही रहेगा ।[7] देश के स्वतंत्र होते ही नया शासन तब स्थापित हुआ । चिकवा और मुसलमानों की बस्ती से धीरे–धीरे लोग पलायन कर गये । उसका मित्र सत्तार भी नसीबन को छोड़कर चले गये । यहां तक कि सलमा और मसूद भी अपना घर बार छोड़ पाकिस्तान चले गये । किन्तु शासन तंत्र बदलने पर हिन्दू अनेक स्थानों पर मशीनें, सड़कें, भवन निर्माण देश के विकास के संसाधन लगाये जाने लगे । धीरे–धीरे नसीबन का गांव भी कुछ आबाद होने लगा । पता लगा कि कुछ जर्मन मशीनों के साथ मजदूर के रूप में नई जिंदगी की उमंग लेकर नसीबन के गांव में भी कुछ हलचल होने लगी और उन्हीं

के बीच में से कुछ ऐसे मुस्लिम व्यक्ति भी मिले जिनके पुरखे कभी इस गांव में रहते थे। नसीबन का देश प्रेम उच्छाविलित होने लगा। कथाकार ने इस भावना को बड़े सूक्ष्म एवं मनोवैज्ञानिक ढंग से निरुपित किया है। ''नसीबन की आंखों में चमक भर आई और उसका बदन खुशी से थरथराने लगा इधर तुम्हारे घर में..... अरे तू बसीर तो नहीं है लगता तो वैसा ही है और मिनट भर में सारी पहचानें उभर आई उन्हीं गये हुये और बिखरे गये घरानों के बच्चे अब मजदूरी करने के लिये फिर लौटे थे।

चित्रा–

''प्रियेषु सौभाग्य फलाम चारुताम'' कहकर कालीदास ने प्रिय के सामीप्य में ही सौन्दर्य और सौभाग्य (काम एवं प्रेम की चर्चा की है। जहाँ प्रिय पिया का अद्वैत होता है वहां ही सौन्दर्य एवं प्रेम अनस्यूत रहता है। किन्तु वर्तमन परिवेश की विडम्बना में द्वाभ्यांम तृतीयो की स्थिति कितनी त्रासद होती है इस विडम्बना का चित्रण तीसरा आदमी नामक उपन्यास में हुआ है। इस संदर्भ में श्री कमलेश्वर ने लिखा है कि ''परिवार क्या, पति, पत्नी और पति का एक मित्र। संत्रास, घुटन और उमस वाली भीड़ भरे इस महानगर के एक छोटे कमरे में इन तीनों का रचाव, बसाव, मनमुटाव, द्वन्द, संशय और स्पर्धा इस उपन्यास का खास कथ्य है।[४]

कथानायक का द्वन्द्व (अभी–अभी) विवाह चित्रा से होता है। ट्रेन में ही नायक की उत्सुकता उसके मित्र सुमन्त की चित्रा के स्वागत की तत्परता, पति पत्नी का मिलन पत्नी के आग्रह से नायक का रेडियो स्टेशन दिल्ली में नौकरी करना, और स्थान के अभाव में सुमन्त के साथ ही दम्पत्ति का ठहरना, पारिवारिक परिवेश एवं तीसरे की उपस्थिति में पत्नी पति के मिलन के अभाव एवं उस पूर्ति हेतु बाहर एकान्त स्थलों की खोज, कार्यालय के कार्य से कथानायक का बाहर जाने के कारण, सुमन्त और चित्रा का एकान्त में रहने के कारण, नायक का संशय, और लौटकर अपने और सुमन्त के प्रति चित्रा के सतर्कता पूर्ण व्यवहार, संदेह के कारण नायक का पत्नी छोड़कर पटना चला जाना, गर्भवती चित्रा का मायके में प्रसव कार्य सम्पन्न कराना, चित्रा और उसके पति में बच्चे को लेकर पुन: प्रेम का पल्लवन, और दूसरे बच्चे की बात सुनकर नायक का पटना चला जाना, सुमन्त की आत्महत्या तथा चित्रा के दृढ़ता संबंधी प्रमुख घटनायें हैं। जिनमें चित्रा के चरित्र या व्यक्तित्व संबंधी अनेक पक्ष उद्घाटित तो हुये हैं किन्तु पति पत्नी के मिलन की संक्षिप्त अवधि में सौन्दर्य, काम एवं प्रेम की नई परिभाषा उपन्यासकार ने प्रस्तुत की है। वस्तुत: उक्त घटनाओं में पति पत्नी के मध्य सौन्दर्य और काम तो प्रमुख रूप से चित्रित ही हुआ है। क्योंकि सद्य: विवाहिता सुन्दरी युवती का सानिध्य

किस पति को पुलकित नहीं करेगा । किन्तु प्रेम के लिये जिस प्रगाढ़ अन्तरंगता और त्याग की, समर्पण की आवश्यकता होती है उसका यहां चित्रण अपेक्षा रूप में कम हुआ है । भौतिक या नारी भूगोल के प्रति पुरुष की कामना आगे चलकर जैसे ही पुत्र की प्राप्ति के कारण प्रगाढ़ होता है । वैचारिक वैभिन्न के कारण वह उथला का उथला ही रह गया है । चित्रा के जीवन के अनेक घटनाओं का उल्लेख कर उसके व्यक्तित्व का विभिन्न पक्षों का रेखांकन बाद में किया जायेगा । यहां सर्वप्रथम सौन्दर्य काम और तद्जन्य प्रेम की चर्चा पहले आवश्यक है । महानगरीय सभ्यता में जिस कमरे में पति पत्नी और तीसरे की उपस्थिति शयन के समय हो ऐसी परिस्थिति में पत्नी के भूगोल को समझने के लिये छटपटाते हुये पति का उसे लेकर उद्यान में कामाविभूति होना अत्यन्त दारुण त्रासदी का विषय है ।

काम, सौन्दर्य एवं प्रेम -

उपन्यासकार ने विवाहित होकर बारातियों के साथ रेल डिब्बे में बैठी चित्रा की एक झलक पाने के लिये लालायित पति की तत्परता का चित्रण साथ ही उस दर्शन में पत्नी के सौन्दर्य का चित्रांकन उपन्यासकार ने किया है । जिसमें शिथिलता जागरण के कारण अवसाद और प्रसन्नता से चमकते चेहरे का चित्रण उपन्यासकार ने इस प्रकार किया है ''उसने एक नजर मुझे देखा था, और मैं उसे देखता रह गया था । भरे हुये सिन्दूर की लाली उसके माथे पर झलक रही थी और बालों की कुछ कुछ शेष लटे बाहर निकल आई थी । माथा पसीने से भीगा हुआ था और चेहरा भी पसीजा हुआ था ।[9] पति प्रथम दर्शन का मोहक मादक सौन्दर्य से अभिभूत ही नहीं हुआ वह चित्रा की आंखों की गहराई में डूब जैसा गया । उपन्यासकार ने चित्रा के नख शिख सौन्दर्य का चित्रण तो नहीं किया, किन्तु उत्सुक पति द्वारा देखी गई जल्दी-जल्दी में नायिका के सूक्ष्म सौन्दर्य का बहिरन्तर रूप और उसके प्रभाव का चित्रण इस प्रकार किया है ।

कमलेश्वर ने लिखा है कि इतने पास से उसकी नजर का वह पहला सम्मोहन मैं सह नहीं पाया था। आंखों के सिवाय कुछ और दिखाई ही नहीं दिया उन आंखों में सागर जैसी गहराई थी फिर उसने पलके झुका ली थी तब मैंने उसे अच्छी तरह से देखा- ''उसके महावर लगे पैरों को, पीली पीली गुदाज हथेलियों को और माथे पर पसीने से चिपके रोओं को ''।[10] पति पत्नी में प्रथम वार्तालाप के कारण नायिका की सलज्ज मुस्कान और संकोच झिझक के कारण चेहरे में आई अरुणिमा तथा श्वेद का चित्रण इस प्रकार किया गया है - ''चित्रा ने एक बार फिर भर आंख मुझे निहारा और हल्की सी मुस्कराहट उसके होठों पर फैल गई कनपटी पर चिपके रेशमी रोओं पर एक बूंद और ढरक आई थी होंठ के नीचे पसीने के छोटे-छोटे मोती उभर आये थे ।[11]

प्रथम मिलन में काम का आधिक्य होता है उपन्यासकार ने नायक की आंखों में रचे बसे चित्रा के अपरुप सौन्दर्य, उसकी देहयष्टि अत्यन्त प्रिय मादक नशीली देह परिमल और नायिका की शटपटाहट तथा लज्ञारूढ़ सौन्दर्य का वस्तुपरक चित्रण इस प्रकार किया गया है ''पति सोचता है कि मेरा स्पर्श पाते ही जैसे उसका शरीर पसीजने लगता और बड़ी मोहक सी गंध उसके बदन से उठती ती बहुत-बहुत देर तक मैं उसके अंग प्रत्यंग को देखता रहता था। उसके पैरों के नाखूनों को देखता, हथेलियां हाथ मे लेकर अंगुलियों को निहारता और जब उसकी आंखों में झांकता तो वे आंखे एक क्षण बाद ही झपक जाती।[12] उपन्यासकार ने लज्ञाविभूति पत्नी के सौन्दर्य को पति की दृष्टि से वस्तु रूप में प्रस्तुत किया है।

सुमन्त के साथ रहने के लिये नायक अपनी पत्नी चित्रा को लेकर दिल्ली आ जाता है और उस छोटे से कमरे में तीसरे की उपस्थिति में जब काम अतृप्त रह जाता है, तब प्रणय युगल विवश होकर बाहर पार्कों कुञ्जों में एकान्त स्थलों की खोज करते हैं। जहां प्रेम का पहला ज्वार अपनी उम्दा को प्राप्त कर सके। रात्रि के समय पति के दाहिने तरफ मित्र सुमन्त सोता, तो बायें तरफ पत्नी और रह रहकर छेड़खानी करते हुये पति के हाथ कितने व्याकुल और तनावग्रस्त हुये होंगे इसका एहसास तो पति ने तब किया जब वे एक शाम घर से निकल कर इण्डिया गेट के खुले मैदान पर पहुंचे ऐसा लगा जैसे दोनों को मुक्ति के पंख लग गये हो पत्नी के शरीर को ऐसे निभृत्त (एकान्त) स्थल में पाकर दोनों कितने कामाविभूति हुये होंगे उपन्यासकार ने इस भौतिक या दैहिक प्रेम को काम के परिपेक्ष्य में इस प्रकार चित्रित किया है - ''महीनों बाद ऐसी मुक्ति का एहसास हुआ था। मैंने चित्रा के कमर में हाथ डाल दिया था और चलते-चलते गुदगुदी घास पर पहुंच गये थे। घास पर हम दोनों ही लेट गये थे और मैंने उसकी बाँह पर हाथ रख लिया था। नरम घास हमें धीरे-धीरे पास लाने लगी और मैं उसकी कमर के गिर्द बांहे डाल कर अधलेटा सा हो गया था चित्रा ने भरी-भरी आंखों से मुझे देखा था। उसकी आंखों में बल्बों के अक्स चिनगारियों के तरह फूट रहे थे उसका शरीर हमेशा की तरह पसीज आया था और घास की भींगी महक के साथ उसके तन की महक चारों ओर गई थी उसके होठों से जैसे रस फूटने लगा था, और होठों तथा कानों की किनारियों से लौ सी निकल रही थी। मैंने उसी मदहोसी में उसके होठों पर अपने होंठ रख दिये थे।[13] इसी समय पुलिस के हस्ताक्षेप के कारण उनके काम का पारा कितनी शीघ्रता से नीचे उतर आया होगा क्योंकि यह मिलन शुद्ध भौतिक स्तर पर था। वस्तुत: यह काम प्रकट या प्रछन्न रूप में प्रेम में परिमत ही नहीं हो सका। यह तो सौन्दर्य का उपभोक्ता वादी दृष्टि से चित्रण है, क्योंकि जब कभी सुमन्त सेकेण्ड शो सिनेमा देखकर लौटने की बात करता तो अल्प अवधि में ही

नायक द्वारा नायिका के श्रृंगार हेतु फूलों की लाना, नायिका का केश विन्यास करना, हाथ में हाथ डालकर कनाटप्लेस घूमते हुये आंख में आंख डालकर यहां से घर पहुंच कर सो जाने की बात कहने पर भी दोनों की आंखों में जो शरारत भरी दुष्टता की परिकल्पना मन को गुदगुदाती थी उसकी व्यंजना हेतु पति पत्नी दोनों एक दूसरे से कतराते रहते थे। शीलन भरे कमरे में गंदे कपड़े, राशन की गंध के बीच चित्रा के देह परिमल पति को कितने मादक लगती है इसका चित्रांकन करते हुये कमलेश्वर ने लिखा है– कि मैले कपड़ों की भभक और उनमें से फूटती हुई चित्रा के बालों में तेल एवं बंधी हुई वेणी की खुशबू..... उसका तन पसीजने लगता और उस मिली जुली गंध के ज्वार ने हम डूब जाते.... उसका पसीजता शरीर मेरी बांहों में घुलता होता फिर जैसे बदन जलने लगता और मैं चित्रा के होंठो पर होंठ रख देता।[(14)] खाना बनाने के कारण लहसुन, प्याज, हींग की गंध स्वभाविक रूपसे नारी के हाथों में बस जाती है किन्तु कामाविभूति प्रणय उससे ऊपर उठकर नारी परिमल गंध में आप्लावित हो जाता है। कथाकार ने पति पत्नी के मध्य उत्पन्न इस काम का लेखा जोखा अनुभावों एवं कामिक अनुभावों से चित्रण किया है –''हल्का सा प्याज महकता और उसी में वेणी के फूलों की गंध समा जाती दोनों छातियों के बीच सूखे हुये पसीने और सुबह लगाये हुये पाउडर की चिकनाहट का एहसास होता.... उसका रोम–रोम उभर आता.... जांघों से ऊपर और जांघों पर जैसे कोमल कॉचे उभर आते और फिर सब महके..... घुल मिलकर जिंदगी की एक अजीब महक में समा जाती। चारों ओर जैसे सितारे फूटने लगते..... शरीर चटकने लगते। सांसे गुथ जाती और हाथों से पके हुये चावल की गंध फूटने लगती। शरीर उस गंध में समा जाता और हम पसीने से लथपथ अपने बंधनों को ढीला करने लगते। हम विस्तार की सलवटें साफ करते मैं कहता बड़ी गर्मी हो रही है चित्रा। चित्रा एक क्षण शरारत से मुस्करा कर मुझे देखती उसकी आंखों में बेहद मासूमियत होती और चेहरे पर ताजगी।[(15)]

इस प्रकार के स्थलों में उपन्यासकार ने सौन्दर्य को वस्तु न मान कर उसे मूल्य की दृष्टि से विशलेषित किया है। यहां नायिका के अंग प्रत्यंगों या देहयष्टि की कान्ति का स्थूल चित्रण न कर कामाविभूति प्रणय की अवस्थाओं का चित्रण कर जहां महानगरीय स्थान के आभाव की विडम्बना का चित्रण किया है वही परिस्थिति के कारण उपलब्ध सीमित समय में काम एवं प्रेम की विवृति तृप्ति का सुखद और सार्थक चित्रण किया है और प्रेम इसी में से अंकुरित होता है। उपन्यासकार ने लिखा है कि ''अपने पर विश्वास होता और जिंदगी की सार्थकता कुछ कुछ दिखाई देने लगती चित्रा उन क्षणों में बेहद सुन्दर दिखाई देती। मैं उसके शरीर के एक–एक खम को निहारता और कभी–कभी एकदम ठिठक कर उसे देखता, कितना

सुडोल था उसका बदन मेरा मन जैसे पूर्णता प्राप्त करता और गली से बाहर आते जाते चित्रा कुछ गुनगुनाने लगती।[16]

चित्रा धीरे–धीरे सुमन्त के नजदीक होती गई और पति के मन में संदेह का बीज बपन ही नहीं हुआ अपितु दोनों की अतिशय सर्तकता के कारण हुये व्यवहार में परिवर्तन दिखाई देने लगा इस कारण उसमें (पति) धीरे–धीरे संशय के बादल उठे ही नहीं अपितु पति के हृदयाकाश को आच्छादित कर लिया। परिणामस्वरूप वह आसन्न प्रसवा चित्रा को छोड़कर पटना चला जाता है। सुन्दर पुत्र को गोद में लिये हुये पत्नी (चित्रा) का चेहरा एक ओर सुहाग की दीप्ति से आक्रान्त था तो दूसरी ओर मातृत्व गरिमा जन्य सौन्दर्य से आप्लावित था। जिसे देख पति के ह्वदयाकाश के बादल सौन्दर्य के एक ही झोके में विलीन हो गये। पुत्र जन्म के बाद नारी का यौवन कुछ शिथिल होता है उसकी लावण्य या मोहकता गर्व भरी दीप्ति में परिवर्तित हो जाती है ; जिसे देख पति अविभूत हो उठता है। उपन्यासकार ने लिखा है –

''पहली नजर में चित्रा भी खुद बहुत निष्कलुष लगी थी उसका शरीर पहले से कुछ निखरा और दुर्बल था कुछ अजीब तरह का निखार था उसमें। बच्चे के जन्म के बाद उसमें वह उद्दाम खिंचाव नहीं रह गया था। उसकी जगह अद्भुत सा सौन्दर्य फूटा था उसमें शान्त मासूम और पावन सा। उसके अंगों में नये घुमाव आ गये थे नये सौन्दर्य कोण फूट आये थे। अजीब सी गरिमा व्याप्त थी पूरे व्यक्तित्व में उस गरिमा ने मुझे अभिभूत कर लिया था।''[17] यही तो सौन्दर्य और काम के पश्चात् प्रेम का प्राकट्य है मनोवैज्ञानिकों ने इस सौन्दर्य को दृप्त मांसल सौन्दर्य की अपेक्षा गरिमा युक्त सौन्दर्य को एक मूल्य माना है, क्योंकि शारीरिक और दार्शनिक विज्ञानियों के यह मत है कि पति ही पत्नी के गर्भ में से पुत्र रूप में स्वयं ही प्रकट होता है और आत्मस्वरूप को देखकर कौन ऐसा नारी या पुरुष है जो आत्म मुग्ध नहीं होगा। दाम्पत्य प्रेम की यह सुदृढ़ भिति है।

निष्कर्ष यह है कि कमलेश्वर ने नायक और चित्रा के मध्य नायिका के सौन्दर्य के उद्दाम रूप का चित्रांकन भले ही न किया हो किन्तु पुरुष को वशीभूत करने वाले नारी लावण्य शारीरिक उच्चावच्च स्थितियों का चित्रण कर युवा सुन्दर मांसल आकांक्षाओं से आप्लापित नारी देह की गंध को पाकर कौन पुरुष मद्विह्वल नहीं हो जायेगा। भले ही उसकी परिणति त्रासद रूप में रही हो क्योंकि पति के मन में पत्नी के प्रति निष्ठा जन्य संदेह ऐसे बीज को पल्लवित एवं पुष्पित करता है। जिसकी नियति नारी परित्याग में होती है। इसके साथ ही कमलेश्वर ने चित्रा और सुमन्त के बीच पनपने वाले काम का स्पष्ट चित्रांकन तो नहीं किया किन्तु चित्रा की झिझक, सकपकाहट और पति से झूठ बोलकर अपने बचाव का प्रयास प्रच्छन्न

काम को ही चित्रित करता है। फिर चाहे वो पति के बाहर चले जाने पर बिल्ली की घटना का नाटकीय वर्णन बारम्बार पति के आने पर उसकी आवृत्ति कर यह सिद्ध करने का प्रयास करना कि पति के बाहर रहने पर चित्रा कमरे की सिटकनी अन्दर से ही नहीं बन्द कर लेती थी अपितु सुमन्त भी बाहर से सिकटनी लगाकर बाहर सोता था। चित्रा के काम, प्रेम एवं सौन्दर्य की यही द्विविविध मयी स्थितियों का स्वभाविक चित्रांकन उपन्यासकार सटीक रूप में किया है।

सुगृहणी –

चित्रा उपन्यास ''तीसरा आदमी'' में एक सफल गृहणी की भूमिका निभाते हुये अपनी भूमिका को सफल बनाया है। नारी की कुछ प्रमुख विशेषताओं में जैसे अच्छी पत्नी, बेटी, बहू के रूप के साथ-साथ उससे एक सफल अच्छी गृहिणी की भी आशा की जाती रही हैं। प्रसिद्ध कहानीकार एवं उपन्यासकार शिवानी जी ने स्वयं अपनी कहानी किशनुली में एक जगह सुगृहिणी के विषय में कहती है- ''पहाड़ों में यहनियम था कि लड़के की नाल कचेहरी में गाड़ी जाती थी जिससे वह डिप्टी कलेक्टर बनें और लड़की की नाल चूल्हे के नीचे जिससे वह दक्ष गृहिणी बने।''(18) इस कथन को परिद्दष्ट में रखते हुये उपन्यासकार कमलेश्वर जी ने किसी ऐसे नियम की व्याख्या तो नहीं की लेकिन उनके उपन्यास की नायिका चित्रा भी एक सफल नायिका के साथ-साथ दक्ष गृहिणी के रूप में उपस्थित होती है। कथाकार कहता है कि शादी के बाद चित्रा की सास अपने जिस काम को अधूरा छोड़ देती उसको पूरा करने के लिये चित्रा के ऊपर छोड़ दिया जाता है और तब कथानायक के पिता के द्वारा यह कहने पर कि ''नरेश की मां, चित्रा इतनी पढ़ी लिखी है कि उसका मन तुम्हारे इन कामों में नहीं लगेगा.... ।'' लेकिन मां कहती – ''वो ऐसी लड़की नहीं है। पढ़ी लिखी चाहे जितनी हो पर घर के काम सब लड़कियां करती हैं... समझें।''(19)

चित्रा ने उपन्यास में एक सफल गृहिणी का परिचय तब दिया जब वह अपने पति के साथ दिल्ली गई और वहॉ पर रहने की उचित व्यवस्था न होने पर वे दोनों सुमंत के यहां चले जाते हैं और वहां पर एक कमरे को देखकर पहले तो चित्रा उदास हो जाती है लेकिन धीरे-धीरे वह उस कमरे की सफाई वगैरह करके उसे सुव्यवस्थित बना देती है।

कमलेश्वर जी ने चित्रा की गृहस्थी का वर्णन करते हुये कथानायक के माध्यम से क़हता है- ''जब मैं ड्यूटी से लौटता हूं तो देखता कि सुमंत और चित्रा साथ-साथ किसी काम में लगे हुये हैं। अगर वह खाना पका रही है तो सुमंत बैठा सलाद ही बना रहा है या सुमंत दीवार में कील गाड़ रहा है तो चित्रा उसका स्टूल पकड़े खड़ी है। खिड़कियों और दरवाजे के लिये

सुमंत पर्दे का कपड़ा भी ले आया था और चित्रा ने सामने वाली दर्जिन से सिलवाकर उन्हें सुतली में पिरोकर टांग भी दिया था।''(20)

सुशिक्षित -

कथानायक की पत्नी एक पढ़ी लिखी नारी है। उपन्यास के प्रारंभ में चित्रा का विवाह एवं ससुराल आने तथा मायके चले जाने के बाद उसके श्वसुर द्वारा यह बात कहने पर कि ''नरेश की मां, चित्रा इतनी पढ़ी लिखी है उसका मन तुम्हारे इन कामों में नहीं लगेगा.....।''(21) इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि चित्रा एक सुशिक्षित नारी थी। हर पति की कामना यही होती है कि उसकी पत्नी रूपवान, गुणी के साथ-साथ सुशिक्षित भी हो और उसके जीवन में शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक सभी सहयोग प्रदान करें इस बात को कथाकार ने नये पति के द्वारा अपनी नयी पत्नी के साथ कुछ सपने संजोने तथा उन्हें पूरा करने का उत्साह पूर्ण रूप से चित्रांकन किया है। जब कथानायक अपने नये विवाहोपरान्त दिल्ली जैसे बड़े महानगर में रहने की बात सोचता है तो वह एक बार सहम जाता है, क्योंकि वह अच्छी तरह जानता था कि ''मेरे काम की तनख्वाह भी कोई अच्छ नहीं थी पर इलाहाबाद जैसे सस्ते शहर में उतनी तनख्वाह से गुजारे की बात सोची जा सकती थी दिल्ली जाते मुझे यही डर लगता था कि इतने कम पैसों में वहां गुजारा कैसे होगा ? फिर भी कथानायक की आंखों में सपना था, शायद वह पूरा हो जाये और मेरी किस्मत का सितारा चमक जाये। और कुछ न भी हुआ तो कम से कम वहां चित्रा तो कुछ काम कर ही सकती थी। उसने इतना जो पढ़ा लिखा था उसका कुछ फायदा तो उठाया ही जा सकता था।''(22)

कथानायक का अपनी पत्नी के प्यार का उन्माद एवं महानगरों में रहने की अतृप्त अभिलाषा को लेकर वह दोनों दिल्ली चले जाते हैं और वहां सुमंत के कमरे में ही रहने लगते हैं, और चित्रा के द्वारा छोटी मोटी नौकरी करने के प्रस्ताव में सुमंत ने प्रूफ रीडिंग के काम करने की सलाह उसे दी और उसे काम भी ले आता था। चित्रा घरपर ही प्रूफ रीडिंग का काम करती और उससे कुछ आमदनी भी हो जाती। कथानक कहता है कि ''कभी-कभी तो लौटता तो देखता कि चित्रा प्रूफ पढ़ने में लगी हुई है मेरे आते ही वह उठती थी उसका ध्यान उस काम में ही रहता। मैं हाथ मुंह धोने जाता तो वह एक पैराग्राफ और पढ़ लेती और सुमंत के आते ही उससे उलझ जाती। और उसी बहस के दौरान एक दिन सुमंत ने चित्रा को सख्ती से बोला था,'' छोड़ो इस बहस को। समझ में नहीं आता कि तुमने पढ़ा लिखा क्या है।''(23) यह बात चित्रा को बहुत चुभ गई थी और वह बहुत रोई थी तथा कथानायक के द्वारा समझाने पर भी चित्रा ने डबडबी आँखों से कह था,'' सुना नहीं तुमने.... सुमंत मेरे

पढ़ने लिखने पर.....''।(24) शायद चित्रा अपनी शिक्षा पर यह कटाक्ष सहन नहीं कर पाई थी। शायद इसीलिये लड़कियों को शिक्षा बहुत आवश्यक होती है। ताकि वो अपने जीवन में कभी भी आवश्यकता पड़ने पर सबल हो सके। उपन्यास की नायिका ने भी संघर्षरत जीवन में अपनी शिक्षा के माध्यम से नौकरी करके अपने बच्चों का भरण पोषण कर पति एवं प्रेमी दोनो के द्वारा मझधार में छोड़ देने के बाद भी अपना जीवन यापन करने का साहस किया है। उपन्यास के अन्त में छोटी सी नौकरी के द्वारा ही अपनी जीवन की नइया की पतवार बनाती हैं। यहां पर उपन्यासकार ने शायद दाम्पत्य जीवन के प्रेम की त्रासदी के साथ–साथ संघर्षरत जीवन में लड़कियों की शिक्षा पर भी बल दिया है ताकि वह अपने जीवन में कभी भी असहाय न बनें और विषम परिस्थितियों में खुद भी कुछ कर सकें।

लज्जालू एवं कूतूहल प्रिय :-

लज्जा एवं शील की प्रतिमूर्ति का नाम ही नारी है। नारी की प्रकृति ही लज्जालु एवं कुतूहल प्रिय होती है। वह हर वक्त पुरुष वर्ग के सामने लज्जा शील की प्रतिमूर्ति होती है। और हर बात एक नये उत्साह से एवं उत्सुकता के साथ करती है। नारी का वह समय जब वह विवाह योग्य से लेकर विवाहोपरान्त तक लज्जा के आवरण से ढकी रही रहती है। उपन्यासकार ने यहां एक नव दम्पत्ति के उमड़ते नवीन प्रेम एवं उसमें मिला हुआ संकोच, लज्जा एवं कुतूहल को बाखूबी समझा है और यहां स्पष्ट रेखांकन किया है। कथानायक का विवाह एक पढ़ी लिखि नारी (चित्रा) से हो जाता है। जो सुन्दर सुशील एवं पढ़ी लिखी है। कथानायक अपनी बारातवापसी एवं ट्रेन में चित्रा के स्पर्श एवं दृष्टि में पहली बार ही खो जाता है और वह प्रेम के समुद्र में हिलकोरे लेने लगता हैं। कथा नायिका चित्रा जो प्रथम स्पर्श एवं दृष्टि स्पर्श से ही अपने विवाहिता पति से लजा जाती है और वह परिवार के सभी सदस्यों से घुल मिल जाती है तथा कथानायक का दोस्त सुमंत से भी हंस बोल लेती हैं। लेकिन कथानायक के सामने वह बहुत ही शर्माती है। कथाकार ने जिस प्रकार से नव दम्पत्ति के बीच समाये हुये लज्जा एवं शील को प्रस्तुत करते हुये कथानायक कहता है– इतने दिनों के बीच कई बार ऐसा हुआ कि मैं भीतर कमरे में पहुंचा तो वह बाल काढ़ रही थी। मेरे पहुँचते ही वह बाल लपेट लेती और साड़ी ठीक करके खड़ी हो जाती या बैठ जाती।''(25)

कथाकार ने यहां पर विषम परिस्थितियों के कारण एक नव दम्पत्ति को अपने काम एवं प्रेम का इजहार करने के लिये उचित समय एवं अवसर न मिलने पर जीवन की रिक्तता को दृष्टिपात करने की कोशिश की है। तथा नायिका जो अपने पति के प्रेम के प्रति लज्जा शील थी। अचानक पति के टूर वापसी के बाद नितान्त एकान्त पा कर जब कथानायक ने चित्रा

को प्यार करना चाहा तो कथानायक कहता है,'' प्याले धोकर लौटी तो मैंने बहाने से उठकर उसे पकड़ा था और बाँहों में ले कर प्यार कर लिया था। वह जैसे विभोर हो गई थी यह उसके लिये लगभग एक अनहोनी सी बात थी।''[26] विवाहोपरान्त जब पहली बार उसके पति ने कुछ मीठी बातों के दौरन चित्रा से यह प्रश्न किया था कि- चित्रा ! किसी और को प्यार किया है कभी ?'' और उसने अपने पति से कहा था, ''आपने किया होगा !'' और कुतूहलता वश जानने के लिये बैठी थी।''[27]

कर्मठ निडर एवं चतुर -

नारी तू ही अबला-सबला समर्थ है तू ही अरुन्धती तू ही मृदुला गर्ग है।'' उपन्यासकार ने चित्रा नायिका को अपने उपन्यास में जितना आश्रित एवं धैर्यशील प्रस्तुत किया है, उतनी ही कर्मठ निडर एवं चतुर भी। चित्रा उपन्यास में एक पढ़ी लिखि मध्यवर्गीय परिवार की बहू के रूप में होती है और पति के साथ बड़े महानगर में रहने की इच्छा उसे कर्मठ बना देती है जिस समय उसका पति उससे सरकारी क्वार्टर मिलने की बात करता है तो चित्रा के पंख लग जाते हैं और वह कहती,'' एक दफा घर ठिकाने का हो जाये तो मैं भी कहीं छोटी मोटी नौकरी कर लूँ.... सारा दिन अकेले यहाँ मन भी तो नहीं लगता।''[28] सभी को परिस्थितियां शायद सभंलना सिखा देती है। तथा इसके साथ ही साथ व्यक्ति को कर्मठ भी। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार चित्रा बनी थी। चित्रा गर्भवती होने के बावजूद अपने बेटे गुड्डू को बीमार होने की वजह से डॉक्टर के पास ले जाती है और कथानायक की फोन पर न मिलने के बाद वह निडर होकर सुमंत को बुलाती है।

कथानायक के पास पर्याप्त भौतिक साधनों की कमी एवं आर्थिक तंगी के कारण उसके जीवन पर बड़े प्रभाव को चित्रा बड़ी कर्मठता एवं साहस से स्वीकार कर लेती है। लेकिन अपन`दूसरे बच्चे को न जन्म देने से साफ इंकार कर दिया था और वह बड़ी निडरता से कथानायक को उत्तर देती है कि- ''हर बच्चा दो हाथ लेकर आता है और वे दो हाथ दस को सहारा देते हैं। मेरे लिये कोई भी बच्चा कभी भी अनचाहा नहीं होगा।''[29]

मजबूरियों के चलते आखिरकार चित्रा ने एक छोटी मोटी नौकरी स्कूल में वैकेन्सी लीव पर पढ़ाने लगी थी। तथा उपन्यास के अन्त में सुमंत की मौत की खबर सुनने के बाद भी चित्रा ने अपने पति को एक बार भी नहीं बुलाया और न ही उसने किसी प्रकार की सूचना ही दी।

विश्वासघाती छलिनि एवं पर पुरुष से संबंध –

सृष्टिकर्ता ने नारी की रचना तो कर दी लेकिन स्वयं ब्रह्मा भी उसके स्वभाव एवं चरित्र को नहीं जान सके तो उनके द्वारा रचित पुरुष की क्या मजाल जो स्त्री के स्वभाव को समझ सके। जब कोई नारी किसी एक पुरुष के प्रेम में बंधकर उसे अपना पति परमेश्वर मान कर उसे प्यार करती है तो वह स्त्री उस पुरुष की प्रेरणा, प्राणदायिनी एवं जिन्दगी होती है। लेकिन यही नारी जब उसे छलने लगती है, पर पुरुष से संबंध या पति से ज्यादा उस पर-पुरुष से हंसने बोलने लगती हैं तो वही नारी उस पुरुष के मधुरमय जीवन को विष्प्राण बनाकर निष्प्राम जीने को मजबूर कर देती है। उपन्यासकार ने इस उपन्यास के माध्यम से पति का पत्नी के ऊपर अपने एकाधिकार को छिनते एवं उस पर पति के मन एवं इच्छाओं को घुटते दिखाने की कोशिश के साथ-साथ वर्तमान समाज में नारी के खुलते परिवेश एवं दाम्पत्य जीवन में उचित समय एवं अवसर न मिल पाने तथा तीसरे आदमी के साथ अपनी पत्नी की निकटता को सहन न कर पाने पर भी उन्हीं परिस्थितियों में रहने एवं घुटन सी जिन्दगी में घुट कर भी जीता रहता है वह रोज एक नई मौत मरता है। कथानायक का एक सप्ताह के लिए टूर में जाना एवं चित्रा एवं सुमंत का एकान्त पाकर निकट आना तथा चित्रा का सुमंत के प्रति खुले व्यवहार से अचानक संकोच भरे व्यवहार में परिवर्तित होने से कथानायक को शक हो जाता है और एक दिन घुटन भरे विचारों वाली जिन्दगी से तंग आकर कथानायक दफ्तर से जल्दी आता है यह सोचकर कि आज वह सभी बातें खुलकर स्पष्ट कर लेगा लेकिन घर आकर बंद ताला देखकर वह हैरान हो जाता है। टाइमपास घूमते नई दिल्ली के स्टेशन पर जाता है और अचानक स्टेशन की सीढ़ियों के पास पहुंचते ही ऊपर से सुमंत और चित्रा दिखाई देते हैं उस स्थिति के एहसांस को उपन्यास कर स्वयं कथानायक के माध्यम से कहता है। कथानायक कहता है- सुमंत और चित्रा को एक साथ यूं देखकर मेरी साँस जहाँ की तहाँ अटकी रह गई बदहवासी में कुछ सोच भी नहीं पाया..... यह भी नहीं हुआ सीढ़ियों पर चढ़कर उनके सामने पहुँच जाऊ।''[30] और कथानायक एकाएक टेलीफोन बूथ पर घुस जाता है। वहां से उसने जो देखा वह इस प्रकार कहता है- ''सुमंत चित्रा के कंधे पर हाथ रखे हुये बड़े मुक्त भाव से धीरे-धीरे चल रहा था और चित्रा हँसती हुई उससे कुछ कह रही थी। उसके बाद दीवार का कोना आया था और वे मेरे दृष्टिपथ के परे हो गये थे।[31]

निष्कर्षत: उपन्यासकार कमलेश्वर जी ने तीसरा आदमी नामक उपन्यास में प्रेम और प्रतिद्वन्द्विता के नाते स्त्री तथा पुरुष के मध्य तीसरे आदमी के रोल की अभिव्यक्ति की गई है। और उस अभिव्यक्ति में बिखरते हुये परिवार में नारी के विभिन्न स्वरूप की अभिव्यक्ति हुई

है। वर्तमान युग में नारी स्वतंत्रता एवं स्वायत्ता का प्रकरण यद्यपि विसंगतियों को ही जन्म देता है और परिणाम सुखद न होकर दु:खद एवं त्रासद हुआ करता है। चित्रा अपने अहंकारवश छद्म स्वातंत्र्य प्राप्त करती है। वर्तमान समाज में कमलेश्वर जी ने शादी जैसे संबंध में विश्वास एवं नि:संकोच जैसे तत्वों को आवश्यक दिखाने की कोशिश की है। वर्तमान औद्योगिक समाज में यह आवश्यक नहीं कि शादी इस बात की गारंटी है कि पुरुष और स्त्री प्यार भी करेंगे वहीं दूसरी ओर चित्रा और नरेश के बीच केवल यौवनाकर्षण मात्र था। वर्तमान समय में विवाह वह परम्परागत स्वरूप अब नष्ट हो चुका है। उसकी सामाजिक अपेक्षायें बदल गई है। चित्रा के व्यक्तित्व के माध्यम से कमलेश्वर जी ने एक पति एवं पत्नी के संदर्भ में आवश्यक पहलुओं को समक्ष लाने का अथक प्रयास करते हुये लिखा है– ''जो बात समाज के संदर्भ में सभ्य और शालीन है, वही बात पति–पत्नी में गलत और अवास्तविक हो सकती है।''(32)

पति पत्नी के संबंधों का आधार ही दूसरा है– इस संबंध में एक नैसर्गिक कोमल पशुता है। यह संबंध बुद्धि से उतना संतुलित नहीं होता जितना कि हृदय से और इसलिये तर्क की उतनी गुंजाइस इसमें नहीं है।

औद्योगिक समाज में आवश्यक आवश्यकतायें बहुत बढ़ गयी हैं। उनकी पूर्ति के लिये घर का प्रत्येक प्राणी धनोपार्जन के लिये मूल जगह से बड़े शहरों की तरफ पलायन करता जा रहा है। आत्मीय संबंध भी अर्थ पर केन्द्रित होते जा रहे हैं। सगे संबंधी भी अवसर की ताक में रहते हैं कि कब मौका मिले और वे समस्त मर्यादाओं का त्याग कर अनुचित संबंध स्थापित कर सकें। प्रवंचना का एक अनिश्चित दौर ही चल पड़ा है। इसी तरह वैवाहिक संबंध में भी इस बात की कोई गारंटी नहीं रह गये है कि पुरुष और नारी एक दूसरे के प्रति हृदय से समर्पित रहेंगे। इसी का प्रतिफल है नरेश चित्रा और सुमन्त जैसे पात्रों का प्राकट्य। सामाजिक मूल्यों का क्षरण और आदर्शों का ह्रास परिवार विघटन जैसी बातों को कमलेश्वर जी ने अपने उपन्यास के माध्यम से समाज का यथार्थ चित्रण किया है।

समीरा–

''समीरा'' ''कमलेश्वर'' जी द्वारा रचित उपन्यास ''समुद्र में खोया हुआ आदमी'' में एक अहम भूमिका रखने वाली नारी है जो उपन्यास में आदि से अन्त तक एक महत्वपूर्ण भूमिका का योगदान देती है। यह उपन्यास रोजमर्रा का संघर्षमय जीवन जीने वाले एक परिवार की करुण गाथा है। समीरा एक निम्न मध्य वर्गीय परिवार की बेटी है। वह उपन्यास में एक शान्त समझदार चंचलता से परिपूर्ण एवं अपने परिवार के प्रति प्रेम एवं स्नेह रखने वाली नारी है। समीरा सभी संघर्षों को देखते हुये अपने भाई की मौत को बर्दाश्त करते हुये अन्त में

अपने अस्तित्व को पा लेती है और समाज में ''समीरा नर्स'' के रूप में आती है।

बेटी के रूप में –

समीरा उपन्यास में शुरू से लेकर अन्त तक अपने माता–पिता के साथ रहती है। श्यामलाल और रम्मी की दो बेटी तारा औ समीरा तथा एकबेटा वीरन था। समीरा तारा से छोटी एवं बीरन से बड़ी है। जब श्यामलाल को हरबंस का आना तथा उनके साथ लड़कियों का उठना–बैठना खलने लगता है तब वह स्वयं बूटों के नमूने का काम तारा और समीरा की मदद से करना चाहते हैं और एक सुबह जब वो समीरा से कहते हैं तब समीरा कहती है– ''कि उसे अपने बाल धोने हैं।[33]और चली जाती है। वह एक बेटी के रूप में हमेशा खरी उतरती है उसने कभी किसी चीज के लिये मांग नहीं की अगर पढ़ाई शुरू करा दी गई तो वह कॉलेज जाने लगी और जब मजबूरियों के चलते बंद करा दी गई तो उसने कभी भी हठ नहीं किया।

एक दिन समीरा ने चादर बदलने को दरी उठाई तो सिरहाने से वही तस्वीर निकल आई जो बाबू जी और अम्मा ने शादी के ऐन बाद खिंचवाई थी तब समीरा भीतर से चीखी–

''यह कहां से आ गई ?''[34] इससे यह स्पष्ट होता है कि वह इतने संघर्ष भरे वातावरण में भी कभी–कभी खुशी के एक दो पल ढूंढ़ लेती थी।

जब बीरन का दोस्त चरनजीत उसके खो जाने की खबर लेकर घर आता है औरसमाचार देता है तब रम्मी काँपती हुई उठ खड़ी होती है और समीरा इस घड़ी में अपनी माँ को संभालने के लिये उसकी बाँह पकड़ लेती है। और चरनजीत के चले जाने पर घर में रोना पीटना शुरू हो गया समीरा जो अपने भाई को बहुत चाहती थी खूब रोई थी। जब से समीरा के भाई बीरन की मौत हो गई थी और तारा की शादी तब से समीरा बहुत ही शांत रहने लगती है। और जब तारा ने बीरन की मौत का स्थापा घर में करवाया उसके बाद से घर में जो कुछ हो रहा था, वह उसकी समझ में नहीं आ रहा था। और जब एक दिन सुबह समीरा के पिता श्यामलाल फैक्टरी से घर वापस नहीं आये तब समीरा को चिंता हुई कुछ देर तो वह इंतजार करती रही, जब काफी देर हो गई तब उसने माँ से कहा – ''आज बाबूजी को बहुत देर हो गई। इतनी देर तो कभी नहीं होती थी।'' ''हाँ... आज वह नहीं आयेंगे।''रम्मी ने आहिस्ते से कहा।

''क्यों ?'' ''कुछ बात है।''

''क्या बात है अम्मा.... बताओ न।''

''आज शायद पुलिस वाले तहकीकात के लिये आयेंगे ....।''

''तो बाबू जी का होना और जरूरी है।''(35) और जब उसकी माँ रम्मी उसे समझाती हुई कहती है कि मेरी समझ में भी कुछ नहीं आता बेटी। जो कुछ तेरे बाबू जी और हरबंस कह रहे हैं। वहीं मैं करती जा रही हूँ।'' रम्मी ने आँसू भरी आँख से कहा तब समीरा बहुत दुखी हुई और उसने अपनी माँ से कहा-

''पहले मुझे तुम कहीं भेज दो, तब यह सब करना.... हम लोगों की जिन्दगियाँ सिर्फ खिलवाड़ के लिये रह गई हैं। जो खो गया है, वह भी खिलवाड़ बन गया है। मुझसे यह सब बर्दाश्त नहीं होता...'' समीरा बहुत ज्यादा गुस्सा में थी। वह माँ के सामने पहली बार फूटी थी- ''मैं भारी पड़ गई हूँ तो कहीं चली जाती हूँ..... मुझसे कहा होता बाबूजी को जाने की क्या जरूरत थी.....''(36)

श्यामलाल को फैक्ट्री से घर न लौटने पर समीरा को हमेशा उनकी चिन्ता बनी रहती और उसका रहना मुश्किल हो जाता। समीरा ने कभी सोचा नहीं था कि बगैर आदमी के घर में कभी रहा जाता है। समीरा अपने बाबू जी की अनुपस्थिति बर्दाश्त नहीं कर पाती थी। इतने कष्टों के बाद भी उसने कभी अपने माँ बाबू जी का दु:ख नहीं दिया। और एक आदर्श बेटी बनी। जब समीरा हास्टल में रहने लगी थी तब उसके बाबू जी छठे सांतवें दिन उससे मिलने पहुंच जाते थे कभी-कभी उसकी हथेली पर दो चार रुपये भी रख देते थे और सुख दुख की बातें करते हुये अपनी कमजोर पड़ती नजर और कमर दर्द की बात बताते तब समीरा उन्हें अपने कमरे से लाकर कभी दस बीस गोलियाँ देती, कभी दवाई की कोई शीशी।

बहन के रूप में :-

औरत चाहे जो हो लेकिन वह किसी की माँ किसी की बेटी किसी की बहन और किसी और किसी की पत्नी या प्रेमिका होती है। समीरा एक बेटी होने के साथ-साथ एक बहन भी थी वह बीरन जैसे भाई की बहन थी बीरन समीरा से छोटा था और उसे सभी बहुत चाहते थे। जब भी बीरन का कोई खतआता था, समीरा बड़े प्यार से उसको पढ़कर सभी को सुनाती थी वह अपने भाई को बेहद प्यार करती थी।

जिस समय बीरन का दोस्त चरन जीत उसके खो जाने की खबर लेकर आता है समीरा बहुत रोई थी और उसकी याद में हमेशा गली देखती थी। जब तारा ने बीरन का स्थापा कराया था और समीरा रोने वालियों की इस बारात के आने का कोई मतलब नहीं समझ पाई थी। मन ही मन दीदी के इस व्यवहार पर दुखी भी थी। वह सोचे कर बैठा कि हुई थी जब

सब चले जायेंगे तब वह आज दीदी को जरूर फटकारेगी। इस शाम जैसे उसके आन्तरिक दु:ख का तमाशा बना दिया गया था।

समीरा तारा के प्रति भी आदर एवं प्रेम रखती थी लेकिन कभी-कभी तारा के कामों पर उसे गुस्सा भी आ जाता था लेकिन उसने उस गुस्से को कभी जाहिर नहीं होने दिया।

समीरा शायद ही अपने भाई की मौत को भुला सके वह जब उसका सामान लेने रम्मी और बाबू जी के साथ जाती है उसके बाद वह बहुत रोई थी।

प्रेम का आभाष न होने पर भी प्रेम को समझना -

वैसे तो देखा जाये तो उपन्यास के आदि से अन्त तक में समीरा का किसी से प्यार नहीं दिखाया जाता लेकिन नमता की आँखों में बीरन के लिये जो प्यार था उसे सिर्फ समीरा ही पढ़ सकी थी वह किसी से प्यार न करते हुये भी नमता का बीरन के लिये प्यार समझ गई थी। नमता द्वारा बीरन की चिट्ठियों को दे जाना और शान्त तरीके से सुनना ये सभी देखकर समीरा समझती थी। एक बार तो जब नमता खत उठाकर समीरा को देने आयी और बोली- ''यह गली में पड़ा हुआ था।'' और समीरा ने खत खोलते हुये कहा था- ''तुम हर वक्त गली पर नजर रखती हो।''[37] लेकिन नमता द्वारा कभी जिक्र न करने पर समीरा ने भी कभी उससे पूछा नहीं। जब अन्त में वह बीरन की मौत के बाद उसके बक्से में नमता के द्वारा लिखे गये खतों को संजोये रखे देखकर सब कुछ समझ जाती है लेकिन वह किसी से कुछ भी नहीं कहती और मन ही मन दु:खी होती है।

समीरा होस्टल के अपने कमरे में पड़ी थी बार-बार उसे यही लग रहा था कि नमता ने उसे कभी कुछ क्यों नहीं कहा।

दार्शनिकता से पूर्ण विचार -

समीरा जो उम्र में केवल 17 वर्ष की थी और यह उम्र चंचलता की होती है मस्ती की होती है लेकिन शायद समीरा के घर की हालत ने उसे दार्शनिक बना दिया था। अपना शहर छोड़कर नया दिल्ली जैसे शहर में जहाँ न कोई सहेली न ही कोई साथी था और समीरा पूर्ण रूप से अकेली थी। लेकिन वह फिर भी उस नये शहर के नये घर में उसने अपने लिये एक छोटा सा वह स्थान ढूंढ़ लिया था जहां पर वहसमय मिलते ही बैठ जाती और उन परछांइयों में उलझ जाती जो सामने की दीवार पर लोगों की पड़ती। कभी-कभी वे छायायें एक दूसरे को काटती कभी उनके आकार बहुत डरावने हो जाते। लेकिन इन परछाइयों में समीरा को उलझे रहना बहुत अच्छा लगता। समीरा सोचती-.....जब से परिवार दिल्ली आया था,तब से

सब लोग परछाई की तरह ही लगने लगे थे । जिनसे दिल की कोई बात न की जा सके, जिनके साथ सुख–दु:ख की और अकेलापन बांटा न जा सके, उन्हें सिवा परछाई के और क्या समझा जाये ! जो साथी–सहेलियाँ उस छोटे से शहर में छूट गये थे, वे खुद छायाओं में तब्दील हो गये थे । उनकी शक्लें सामने आतीं और गुजर जातीं । बातचीत का कोई सिलसिला ही नहीं रह गया था और जो इतने बहुत से लोग यहां दिल्ली में थे, वो भी उतने ही अपरचित और अनपहचाने थे,जितनी कि परछाई होती है । इतने शोर और कोलाहल के बीच भी जैसे सब कुछ बहुत खामोश था । कभी–कभी तो इतनी गहरी खामशी छा जाती कि समीरा का मन ऊबने लगता मन होता कि वह मकान से निकले और सड़कों पर–चीखती हुई भागती रहे। सचमुच जब अपनी आवाज ही आदमी को नहीं सुनाई देती, तब सिर्फ शोर बाकी रह जाते । एक दूसरे से टकराती हुई आवाजें । और इन सब आवाजों के ऐन बाद एक गहरा सन्नाटा । बहुत गहरी खामोशी ।(38)

रञ्जन कहा करता था– कवितायें पढ़ो समीरा ! क्योंकि कविताओं के बाद गहरी खामोशी पीछा करती है । इसके सिवा और कुछ नहीं बचता । लेकिन कविताओं के बाद की खामोशी बहुत खूबसूरत होती है समीरा । और यही तो वह चीज है जिसे जिन्दगीभर आदमी खोजना है.....।

पर यहां तो वह खामोशी भरी हुई है– कमरों में, गली में, सड़कों और बाजारों में । आदमियों में चीजों में !... अगर इसी की खोज थी, तो अब शांति क्यों नहीं मिलती?''(39)

जब समीरा घर से नर्स होस्टल पहुँची तब उसे पता लगा था कि इस महानगर में यह अकेला मसला नहीं था । यह अकेला घर नहीं था जो डूबते हुये जहाज में था । यह अकेला परिवार नहीं था जिसका कोई समुद्र में खो गया था । होस्टल की छत पर चढ़कर जब भी समीरा चारों ओर देखती तब समुद्र ही समुद्र नजर आता.... भीड़ का समुद्र ।

फैशन की चाह –

समीरा जो 17 वर्ष की नवयुवती नायिका है और जैसा कि यह उम्र ही होती है सजने संवरने की, ठीक उसी प्रकार समीरा को भी कहीं न कहीं मन में यह चाह थी ।

जब हरवंश तारा को आकर ले गया था तब एक क्षण के लिये समीरा को बड़ा अटपटा लगा और – उसने एक बार अपनी तरफ देखा– गंदे टूटे हुये नाखून..... फटी–हुई एड़ियाँ और बांहों पर अजीब सा रुखापन.....।(40) जब कि तारा जब से हरवंश के साथ काम करने लगी थी तब से उसकी अलमारी में ताला बंद हो गया था और उसके पास सौन्दर्य प्रसाधन भी होते थे। जिन सबको देखकर समीरा मन ही मन सोचती रहती है ।

जिस समय समीरा का भाई वीरन नौकरी में चला जाता है और वहां से पैसे मनीआर्डर करता है। तब समीरा कॉलेज जाने लगती है। और एक दिन उसकी माँ तारा की वजह से परेशान होकर समीरा को डाँटकर कहा था – ''सीधी घर आना..... ढाई बजे छुट्टी होती है, साढ़े तीन तक घर पहुंचो। रोज-रोज मैं नहीं सुनूंगी कि बस नहीं मिली।''[41]

''तो मैंने क्या किया है जो मुझ पर बिगड़ रही हो ?'' समीरा ने तुनक कर कहा– ''यह खूब रही ..... उसकी माँ बड़बड़ाती रही लेकिन वह चुपचाप गुनगुनाती रही, और जब रम्मी बिफर रही थी– ''ज्यादा फैशन करने की जरूरत नहीं है सीधी चोटी करो ! और साड़ी का पल्ला सीधा पड़े.... समझी।......''

''अच्छा !'' समीरा ने कहा और सिर पर पल्ला डालकर तैयार हो गई। गली में उतरी तो उसे बड़ा अजीब-सा लग रहा था, इस तरह जाना। चुपके से वह नमता के घर में घुसगई और दस मिनट बाद उल्टा पल्ला डाले और जूड़ा किये चुपके से खिसक गई।''[42]

मालती–

कमलेश्वर समकालीन कथाकारों में ऐसे उपन्यासकारहैं जिनकी यथार्थवादी दृष्टि बहुआयामी अनेक छवि से युक्त बहुधरातलीय दृष्टि सम्पन्न हैं। काली आँधी ऐसा ही प्रतीकात्मक राजनीतिक उपन्यास हैं, साधारण आँधी की अपेक्षा काली आँधी ऐसा झंझावात होती है जिसमें बड़े से बड़े पेड़ों का समूलोच्छेदन हो जाता है फिर छोटे तिनकों की क्या सामर्थ्य हैं। मनोविज्ञान में विश्लेषणवादी ''युंग'' ने कहा है कि–''सत्ता की भूख जितनी ही प्रबल होगी महत्वाकांक्षा जितनी ही उद्दाम होगी वैयक्तिक विखराव उतना ही तीव्र होता है।

प्रस्तुत उपन्यास काली आँधी ऐसा राजनीतिक उपन्यास हैं जिसमें महत्वाकांक्षा का विस्तार, आयाम, सफलता, अधिकार, सुख की मादकता, राजनीतिक विद्रूपता के कारण चुन-चुन कर छोटे-छोटे भावना रूपी तिनकों से बनाये गये प्रेम घोसलें बिखर ही नहीं जाते, अपितु दाम्पत्य जीवन की दिशायें ही बदल जाती हैं। स्वयं कमलेश्वर ने लिखा है– ''काली आँधी राजनीति के विद्रूप चेहरें को उजागर करने के उद्देश्य से भी लिखि गई थी। भारतीय राजनीति में अवसरवादिता बढ़ने गरीबी और भूख मिटाने की खोखली मुहिम चलाने और खास तौर पर भ्रष्टाचार पनपने का दौर रहा है। वोट के वक्त जिस प्रकार के वादे किये जाते हैं और उसके परिणाम वास्तविक तौर पर क्या होते हैं काली आँधी यह भी एक प्रकार का मुद्दा है।''[43]

मालती काली आंधी की सशक्त दबंग महत्वाकंक्षिणी ऐसी नायिका है, जिसने अपनी गृहस्थी के दाम्पत्य के भावुक और कोमल नैकट्य सम्बन्धों की अपेक्षा, पद (कैरियर) कार्य

को महत्व दिया है। जगदीश बाबू से उनका प्रेम हुआ, पिता के विरोध के बावजूद विवाह हुआ एक कन्या भी सन्तान के रूप में हुई । ऐसे सम्बन्धों के कोमल तन्तु के सामने राजनीतिक महत्वाकांक्षा की आंधी ने दबला कुचला ही नहीं अपितु घोसलें के तिनके तिनके बिखेर दिये। जहाँ कैरियर की अपेक्षा प्रेम नगण्य हो महत्वाकांक्षा और सत्ता की भूख के आगे प्रेम अवस हो जायें वहाँ बिखराव अलगाव आता ही आता है।

मालती एक ओर सश्क्त महिला की प्रतीक हैं तो दूसरी ओर समाज को दिखाने के लिए ही सही अपने दाम्पत्य जीवन की सफलता का मिथ्याडम्बर भी रचाती है। छोटे – छोटे राजनीतिक के सोपानों को पार कर शीर्ष नेत्री बनती है। यही उसके चरित्र के केन्द्र बिन्दु है। सत्ता लिप्सा के प्रारंम्भिक दौर में पति जगदीश उर्फ जग्गी बाबू एक आध सोपान ही चल सकें फिर तो उनका स्थान छद्म मुखौटे की तरह हो गया जिसको मालती ने अपनी सफलता हेतु ओढ़ा था। किन्तु अन्त में पराजित हताश अपमानित लज्जित जगदीश बाबू अपनी कन्या को ले कर पत्नी मालती के विपरीत दिशा में जाने वाली गाड़ी में बैठकर लक्ष्यहीन हो कर उनके जीवन से दूर चले जाते हैं।

कमलेश्वर ने आँधी का प्रतीकात्मक प्रयोग कर कहीं प्रत्यक्ष शैली तक कही परोक्ष शैली के माध्यम से मालती के चरित्र के विभिन्न कोणों को उभारा हैं। फ्रायड ने अचेतन मस्तिष्क के क्रिया कलापों के सन्दर्भ में कहा है कि ''जिस प्रकार बर्फ का टुकड़ा जल में 1/10 भाग करता है उसी प्रकार व्यक्ति के अचेतन मन की गहरायी को हम 1/8 भाग ही जान पाते हैं।(44)

उपन्यास कार ने मालती के उद्दाम प्रबल महत्वाकांक्षा सम्बन्धी चारित्रिक पक्षों का वर्णन तो प्रत्यक्ष एवं विकास शैली के रूप में किया हैं तो अवचेतन तथा चेतन मस्तिष्क में प्रेम के कोमल भावुक क्षणों का वर्णन अप्रत्यक्ष रूप से किया हैं ऐसे चित्रण मालती के साथ बचपन से रहने वाले मित्र के माध्यम से किया है। मालती के चरित्र की प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष पक्षों को इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है।

काम एवं प्रेम –

मालती के जीवन में कैशोर्यवय में प्रेमी जगदीश का आगमन हुआ था यह वर्णन अप्रत्यच्छ प्रणाली से हुआ है। मुग्धा नायिका मालती किशोर वय के जगदीश से मिलती है। किशोर जगदीश व्यंजना से मालती के औत्सुक्य अपने प्रेम तथा मालती के सद्य: प्रस्फुटित यौवन जनित कान्ति नेत्रों की लालिमा से पीले गुलाबों का लाल रंग में परिवर्तित होने के रहस्य का

उद्घाटन कर अपने प्रेम की व्यंजना करता हैं। उपन्यास कार ने अत्यन्त अल्प संवाद में प्रेमी प्रेमिका की भेंट प्रेम की व्यंजना मालती द्वारा किशोर जगदीश के प्रेम की स्वीकृति का वर्णन इस प्रकार किया है। मूलत: यह वर्णन अप्रत्यक्ष या अन्य पुरूष के कथन से होता है।

''उस बाग में कोई कुछ बातें कर रहा था .... ये गुलाब लाल क्यों हो जाते हैं ? लड़के की आवाज थी ......

सच ! लड़की बोली।

हाँ और इन्हें यादों भरी आँखे देखना छोड़ दे तो ये फिर पीले पड़ जाते हैं। लड़के ने कहा था।

सच ! लड़की बोली थी।

हाँ ! तो मैं एक पीला गुलाब तुम्हें देती हूँ..... देखती हूँ यह लाल होता है या नहीं।

नहीं। तुम्हारे जूड़े में यह पीला गुलाब लगाऊँगा जब तुम छतरपुर पहुचना तब देखना, मेरी यह यादों भरी आँखें इसे ही ताकती रहेंगी और यह लाल हो जायेगा।

सच ! लड़की बोली थी।

अन्य पुरूष में घटना का परिणाम इस प्रकार कहा गया है मैंने मुड़कर देखा था सूरज का लाल गोला मंदिरों के पीछे डूब रहा था और मालती तथा जग्गी बाबू गुलाब बाग से निकल कर लक्ष्मण मन्दिर की ओर जा रहे थे। मालती के जूड़े में एक बड़ा सा पीला गुलाब लगा था फिर हर रोज एक पीला गुलाब मैंने मालती जी के जूड़े में देखा था।''(45)

विवाह–

मालती के पिता बैरिस्टर प्रताप राय थे जो मालती को उच्च शिक्षा हेतु विदेश भेजना चाहते थे। किन्तु मालती ने द्रढ़ता से बात को अस्वीकार कर दिया वे तो जगदीश बाबू से विवाह करना चाहती थी। अन्त में वात्सल्य पुत्री के सामने पराजित हुआ। उपन्यास कार ने लिखा है – ''लेकिन मालती जी नहीं मानी थी और मालती जी की इच्छा के मुताबिक ही उनकी शादी जग्गी बाबू से हो गई थी।''(46)

दाम्पत्य जीवन– बिखराव के अनेक पहलू –

मालती और जगदीश बाबू का दाम्पत्य जीवन कुछ ही वर्षों का चित्रित है, क्यों कि जगदीश बाबू होटल व्यवसाय से जुड़ी मालती राजनीतिक क्षेत्र में कदम बढ़ाने लगी, दोनों के बीच में वात्सल्य तन्तु था, जो बहुत क्षीण था। दोनों के वैचारिक मतभेद होने पर पुत्री को हास्टल (छात्रावास) में डाल दिया गया जहाँ मालती यदा कदा पुत्री से मिलने जाती थी। पति पत्नी के बीच दामात्य का नखलिस्तान राजनीति के मरूस्थल में क्रमश: लुप्त हुआ।

मालती को यह पसन्द नहीं था, कि उनका पति होटल वाला कहलाए जिसके विषय में अनेक भ्रांतियां अफवाहें फैली हुई थी। मालती और जगदीश के सम्बन्धों की कडुवाहट की प्रथम सीढ़ी उस समय से प्रारम्भ हो जाती है जब मालती को पहली राजनीतिक सफलता का स्वाद चखनें को मिलता है कथाकार ने अन्य पुरूष के माध्यम से इस बिखराव के सूत्रपात का अंकन इस प्रकार किया है – मालती के भाषणों की आवाज का दायरा ज्यों-ज्यों बढ़ता गया, सत्ता के शिखर पर ज्यों- ज्यों वे कदम नापती रही जग्गी बाबू उस अनुपात में पिछड़ते गये।

उपन्यास कार ने लिखा है- ''पहली बार जब मालती जी जीती थी तो शहर की जनता ने उनका स्वागत समारोह किया था। दोनो एक ही जीप पर साथ – साथ बैठकर आये थे मंच पर मालती जी और जग्गी बाबू एक साथ ही बैठे थें। जिला परिषद वाला चुनाव जीतने पर फिर स्वागत समारोह हुआ था। कारो की कतार में इस बार जग्गी बाबू पीछे आने वाली कार में थे असेम्बली चुनाव में जग्गी बाबू कारों की कतार में सबसे पीछे वाले कार में थे और मंच पर बैठने के लिए बढ़ने लगे तो एक वालिन्टयर ने उन्हें रोक दिया था, यह कहते हुए कि यहाँ सभी मालती जी के घर वाले ही थे।(47)

किशोर वय का भावुक प्रेम राजनीतिक ऑधी में कपूर की तरह क्षणिक गन्ध छोंड़कर उड़ गया। दोनों के मध्य किसी न किसी बात को ले कर पहले हलकी सी दरार चिटकन और फिर खाई के रूप में दिखाई देने लगी। उपन्यास कार ने मालती के माध्यम से कहा है –

आप यह होटल बन्द कर दीजिए

लेकिन क्यो ? जग्गी बाबू चीखे थे।

इस लिए कि मैं पब्लिक में यह नहीं सुनना चाहती कि हम लोगों ने होटल को बहाना बना रखा है, कि यह होटल हमारी काली आमदनी का जरिया है कि यह गन्दें कामों के लिये इस्तेमाल होता है इससे मेरी पब्लिक इमेज पर धब्बा लगता है।

लेकिन मालती जीने के लिए आमदनी का यह एक इज्जतदार जरिया है। और मेरी बदनामी का भी यही एक जरिया है।(48)

मालती राजनीतिक महिला है दर्जनों आदमी उनसे अपना काम निकालते है अत: मालती यह प्रस्ताव करती है कि पति जगदीश बाबू भी उनसे पति होने के नाते नही, अपितु सामान्य आदमी की तरह उनसे फायदा उठा सकते हैं। प्रथम वय का प्रेम जब विवाह में परिवर्तित हो जाता है तो आगे चलकर अहम की समस्या खड़ी हो जाती है। ऐसा ही झूठा अहम मालती

और जग्गी बाबू के बीच पनपने लगता है। उनकी धारणा है कि रिश्ते कामों को आसान करने के लिए होते है। बेड़िया डालने के लिए नहीं। मालती कहती है – क्यों मेरे साथ मेरे काम में हाथ नहीं बँटा सकते गैर लोग मुझसे फायदा उठा सकते है पर आपके लिये मैं किसी लायक नहीं ? मैं तुम्हारा पति हूँ फायदा उठा सकने वाला गैर आदमी नहीं मैं तुमसे फायदा उठाऊँगा। कोई गलत बात तो नहीं कही अगर औरत इस लायक हो जायें तो इससे पति पत्नी का रिश्ता.......।

सही बात यह है कि आप अभी तक मेरी इस सेवा और त्याग की जिंदगी पब्लिक सर्विस की जिंदगी से अपने को जोड़ ही नहीं पाये।[49]

यह मनोमालिन्य जग्गी बाबू को यह कहने के लिये विवश करता है – मालती तुम समझती हो मैं धमकी देता हूँ मैं बेचारा हूँ, तुम समझती हो मुझमे कुछ करने की शक्ति नहीं रह गई है, मैं लाचार नहीं हूँ।[50]

इस प्रकार मालती की महत्वाकांक्षा से जग्गी बाबू का दाम्पत्य प्रेम कुचल गया। और उपन्यासकार ने बडी ही सजीदगी से इस समय के आन्तरिक मनोवेग का चित्रण करते हुए लिखा है –जग्गी बाबू की तकलीफ गहरी है तो मालती जी की महत्वाकांक्षा भी उतनी ही गहरी हैं दोनों ने अपने को बहुत संभाला है। मालती जी के चेहरे पर कभी शिकन नहीं दिखाई दी। जग्गी बाबू ने कभी शिकायत नहीं की। सफलता कितनी क्रूर होती है कितनी जालिम होती है इसका नशा कितना गहरा होता है और खुद अपनी सफलता में व्यक्ति कैसे कैद हो जाता है इसका जीता जागता उदाहरण है मालती जी। दुख और त्याग कितना जालिम होता है और इसमें व्यिक्त कैसा बुझ जाता है, इसका जीता हुआ उदाहरण जग्गी बाबू है।

यद्यपि जग्गी बाबू और मालती के बीच वैचारिक मतभेदों की दरार ही चौड़ी नहीं हुई, रिश्तों की मिठास कड़ुवाहट मे ही नहीं बदली उनके बीच की दूरी भी बढ़ती गयी। तथापि जग्गी बाबू के मन में मालती के प्रति एक कोमल तन्तु विद्यमान है। जब भी मालती उनके नगर आती वे उनकी लहसुन की प्रिय चटनी अलग से बनवाकर उनके टिफिन में रखते और कोशिश करते हैं कि मालती को ये बात पता ना लगे। धीरे–धीरे यह मतभेद परस्पर विपरीत दिशा मे जाने वाले परिवर्तित हो गये। एक होटल मे दोनों की भेंट होती है तो दोनों यह स्वीकार करते हैं कि उन दोनों के रास्ते अलग–अलग हो गये है। उपन्यासकार ने लिखा है–

''जग्गी बाबू ने उन्हे बहुत गौर से देखते हुये कहा जी और शायद आप भी यह अच्छी तरह जानती है कि मेरे और आपके रास्ते अलग हो चुके है। आपके चाहने के मुताबिक मैंने

हर काम किया है जो–जो आप चाहती गई है वह वह होता गया है।[51] जग्गी बाबू अपने और मालती के प्रेम विवाह संतान की उत्पत्ति और वैवाहिक जीवन के सुखद से दुखद में परिवर्तित होती हुई परिस्थितियों का विश्लेषण करते हुये कहते हैं– कि देखो मालती मेरी बात का बुरा मत मानना तुमने– यह सब लिया है जो चाहा है जो तुम्हे सीधे–सीधे मांगने से नहीं मिला वह तुमने प्यार से हासिल किया है जो प्यार से नही मिला वह तुमने जिद से लिया जो जिद से नहीं मिला उसे तुमने हक से लेना चाहा और जहाँ तुम हक से कुछ हासिल नहीं कर पाई वहाँ तुमने आँसुओ से सबकुछ पाना चाहा।[52]

बात यह है कि प्रथम प्रेम ऐसे भावुक कोमल क्षणो में होता है जिस समय दोनों या तो अबोध, अज्ञान होते हैं या प्रेम की अनुभूति इतनी गहरी एवं तीव्र होती है जहाँ बुद्धि का परिवेश नही होता। कालान्तर में विवाह के पश्चात वह ऊष्मा वह कोमल मादक सुखद स्पर्श वह उद्दीपक क्रियायें यथार्थ के धरातल से टकराती है और नारी मनोविज्ञान की यह विशेषता है कि वह प्यार जिद और हक के बाद प्राप्त वस्तु के लिये आँसू बहाकर पुरुष को जीत ही लेती है। कभी प्रेम की प्रथम अनुभूति के नाम पर तो कभी बच्चों के माँ होने के अधिकार के नाते नहीं तो अबला होने का प्रर्दशन कर अपना स्वत्व या अस्मिता की रक्षा का ढाल बनाकर वह प्राप्य हस्तगत कर लेती है। जग्गी बाबू ने इसी मनोविज्ञान के अनुरूप मालती को वह वस्तु दी जिसकी उसे अंजाने ही सही चाहत थी।

उपन्यासकार ने इस मनोविज्ञान पर टिप्पणी की है–''मुझे अंदाज था कि मालती जी इसघटना के बाद दुखी होगी पर, ऐसा नहीं हुआ वह शांत थी यद्यपि जग्गी बाबू ने यह कहा था कि उन्होंने मालती को ठीक–ठाक समझा है कि वे कब क्या चाहती रही है और जो चाहती रही है उसे कैसा पाया है इसलिये दोनों के रिश्ते टूट गये यद्यपि दोनों ने संतुलन बनाने का कुछ प्रयास अवश्य किया, किन्तु दोनों इस बात से सतर्क थे कि लिलि उनकी बच्ची अपनी बाल्यावस्था के समय दुनिया की चालाकियो को असमय ही न जान ले इसलिये पालिटिक्स की कुरुपता का शिकार वह न बने इसका उन्होंने भरपूर प्रयत्न किया क्योंकि उन्हें यह विश्वास होने लगा कि जो स्त्री अपने पति के ऐकान्तिक जीवन तथा मधुर क्षणो में अपनी मांग उपस्थित कर पूरा करने की जिद ठान ले वह अपनी औलाद के रिश्ते को भी इस्तेमाल कर सकती है। संभवत: जग्गी बाबू को यह पूर्ण आभाष हो गया था कि जग्गी बाबू के साथ शारीरिक रूप में जुड़ने की मालती को कोई जरूरत नहीं कोई तमन्ना नहीं उन्हें success (सफलता) चाहिये। पति एवं पुत्री कहीं उसके मार्ग मे अवरोध न बन जाये। जीवन के बिछुड़न की घटना को उपन्यासकार ने प्रेम की एक भावुक अनुभूति से चित्रण किया है।

मालती जग्गी बाबू के पास पहुँची क्योंकि उन्होंने सुन रखा था कि उनकी तबियत खराब है। इस दृश्य का विवरण देकर उपन्यासकार ने जिस मनोविज्ञान का परिचय दिया उसका विश्लेषण आगे किया जायेगा जा रहा है।

सुना आपकी तबियत कुछ खराब हो गई है। मालती जी ने पूछा। आपको गलत खबर मिली है। जग्गी बाबू बोले। आप बैठने के लिये भी नहीं कहेंगे।

बैठिये ! कहते हुये जग्गी बाबू ने कुर्सी खिसका दी थी पर मालती जी बिस्तर के एक कोने पर बैठ गई थी। और कोई हुक्म ? जग्गी बाबू ने व्यंग्य से पूछा था।

मुझे बहुत अफसोस है ......।

किस बात का ? मैंने जिंदगी में जो कुछ किया है या जो कुछ मेरे साथ हुआ है मुझे किसी बात का अफसोस नहीं है।

लेकिन मेरी वजह से आपको जो कुछ सुनना पड़ा है मुझे उसका अफसोस है। मैं हमेशा यह चाहती रही हूँ कि हमारे साथ रहना या अलग रहना हमारे बीच की बात रहें। मैं हमेशा यही सोचती रही कि पति पत्नी के रूप में या उस रूप में न भी सही,मेरा और आपका अलग होने के बाद मैंने अपने व्यक्तिगत जिंदगी में कभी कोई ऐसा कदम नहीं उठाया जो आपके लिये अपमान का कारण बनता मेरी जिंदगी में कोई पुरुष या प्रेमी या पति कभी भी रहा है तो वह सिर्फ आप ही रहे हैं।[53]

जग्गी और मालती के मध्य चले सुलह सफाई और विश्वास की इस घटना से कौन कितना आहत हुआ इसका भी विश्लेषण उपन्यासकार ने बड़ी बारीकी से किया है। नारी के मनोविज्ञान में एलिस हैवलाक ने कहा है कि ''नारी पुरुष को रिझा कर मना कर मनुहार कर जब सफल नहीं होती तब वह अपनी अन्नयता या एकनिष्ठा का प्रदर्शन कर पुरुष को जीत ही लेती है।[54]

जग्गी बाबू ने कभी मालती पर अविश्वास नहीं किया। मालती के विषय में गलत अफवाहों से उन्हें तकलीफ अवश्य हुई है और अन्त में उन्होंने यह बात स्वीकार कर ली कि वे मालती के जीवन से बहुत दूर चले जायेंगे। मालती ने प्रतिवाद करते हुये उनसे इसरार (आग्रह) किया था कि वे मालती के विषय में अनेक बातें सुनकर बर्दाश्त करें या अपनी वास्तविक जिंदगी से पलायन कर उनसे दूर चले जायें। जगदीश बाबू ने ऐसे कोमल क्षणों में भी अपना निर्णय सुनाया कि वे अब मालती के न तो प्रेमी ही रहे न ही पति। अब तो वे मालती के लिये एक रास्ता है। उन्होंने भी अपन प्रथम प्रेम पीले गुलाब वाली घटना का

स्मरण मालती को दिलाया कि कुछ पलों के लिये ही सही वे आदमी बन जाते हैं। उनमें भी कुछ देर के लिये सुख दुख प्यार ममता सब उमड़ता है। उमड़न के इस अवसर पर उन्होंने मालती के लिये जो कुछ भी किया उसके जरिये कुछ करने की कोशिश की थी वे कहते हैं– ''पीले गुलाब की कली ने शायद तुमसे कुछ कहां होगा पर शायद उससे मतलब यह नहीं था कि तुम लौट आओ या मैं पलट आऊँगा। हमारी तुम्हारी जिंदगी में एक खूबसूरत क्षण कभी आया था उसे मैंने एक बार और जी लिया।''(55)

जग्गी बाबू का मत था कि मालती यह नहीं चाहती कि वे उनकी बीबी कहलावें क्योंकि पिछले बारह वर्षों में वह अनेक बार बीमार पड़ा उसका आपरेशन हुआ तब मालती ने सहानुभूति व्यक्त करने की बात तो दूर रही, उनकी करूण पुकार को अनुसनी कर दिया था, क्योंकि मालती के व्यक्तित्व के केन्द्र में यह था कि समय और जरूरत के अनुरूप व्यक्ति को कैसे सीढ़ी बनाना चाहिये। इस प्रकार उपन्यासकार ने मालती और जग्गी बाबू के प्रेम से भरे दाम्पत्य की सुखद अनुभूति का चित्रण ही नहीं किया वरन् ऐकान्तिक और मधुर क्षणों में नारी पुरुष से अपनी जिद कैसे पूरी कर लेती है। इसका सम्पूर्ण मनोविज्ञान मालती और जग्गी बाबू के माध्यम से चित्रित किया है।

स्त्री प्रेम का वास्ता देकर वह पुरूष को विवश कर देती है कि वह उसी के अनुरूप आचरण करे और यही क्षण बारम्बार आकर दाम्पत्य भित्ति में दरार पैदा करते हैं। सेवा त्याग माधुर्य समर्पण की सीमेन्ट से बनी दाम्पत्य की दीवार किस तरह दरकती है जिसकी ध्वनि एवं अनुभूति दोनों को होती तो है किन्तु प्रेम के आवेग के कारण वे उससे आँखें चुराते हैं और यह दरकन एक दिन दिवाल को ही तोड़ देती है या दो भागों में विभक्त कर देती है। उपन्यास के अन्त में सफ लता एवं दाम्पत्य के अन्तर्द्वन्द्व के साथ–साथ उपन्यास कार ने दोनों के बिछुड़न को भी बड़े नाटकीय ढंग से व्यक्त किया है। मालती जी और जग्गी बाबू अपनी पुत्री को लेकर रेलवे स्टेशन पहुँचते हैं दोनों विपरीत दिशाओं में जाने वाली गाड़ियों में बैठते हैं चलते समय भी जग्गी बाबू ने मालती के टिफिन में उनकी प्रिय लहसुन की चटनी की पुड़िया रखकर अपने प्रेम की सुगन्ध की स्मृति दिलाना चाहा था। जिसमें वह संभवत: सफल नहीं हुये क्योंकि हींग में चाहे कितना कपूर रखें कपूर की गंध दबी ही रहेगी।

आत्म विश्वास से परिपूर्ण –

वस्तुत: स्वभाविक रूप से मानव आत्म संघर्ष कर अपने जीवन के सफर को पूर्ण करता है। लेकिन आत्मविश्वास अगर इसमें समाहित हो जाता है तो जीवन और भी सुचार हो जाता है व्यक्ति का इरादा और भी दृढ़ हो जाता है।

20वीं शदी एवं राजनीति के विद्रूप चेहरे के साथ-साथ वर्तमान समाज में नारी के बढ़ते अवमूल्यों को दिखाने क सफल प्रयास किया गया है। नायिका मालती में आत्म विश्वास कूट-कूट कर भरा हुआ था और उसी का परिणाम था कि मालती अपने कैरियर में सफलता की सीढ़ियां चढ़ी जा रही थी- किसी दूसरे पुरुष, द्वारा उसके आत्मविश्वास के बारे में उपन्यासकार के द्वारा कहता है- मालती जी में अद्‌भुत आत्मशक्ति और धीरज है। ऐसे मौके बहुत कम आये हैं जब उनकी व्यक्तिगत जिन्दगी के दर्द का अहसास किसी को हुआ हो। लिळि को लेकर भी उन्होंने कभी ज्यादा बात नहीं की। शायद उन्हें भरोसा था कि जिन्दगी में वे जब भी चाहेंगी लिली को भी जीत लेंगी। ताज्जुब यही होता था कि जग्गी बाबू को जीतते जाने तथा वक्त आने पर जीत लेने का आत्मविश्वास उनकी बड़ी शक्ति रही हैं।''(56) लोकसभा के चुनावों के लिये जब उन्हें भोपाल क्षेत्र मिला और बातें हुई कि हमें अभी से कुछ प्रभावशाली लोकल सामाजिक और राजनीतिक लोगों से वहां सम्पर्क करना चाहिये तो उसी 'जीत' वाले आत्मविश्वास से मालती जी ने कहा था- ''उन्हें जीत लेना मुश्किल नहीं होगा। वक्त आने दीजिये..... अभी से अगर उन लोगों को यह अंदाज हो गया कि हमें उनकी जरूरत हैं तो उन्हें जीतना मुश्किल हो जायेगा। उन लोगों को यह एहसास होना चाहिये कि उन्हें हमारी जरूरत है।''(57)

नायिका मालती कहनी में एक सशक्त महिला के रूप में समाज में उभर कर आती है। मालती राजनीति के सभी दावपेंचों को पूर्ण आत्मविश्वास के साथ करती थी।

धैर्यशालिनी -

मालती एक सफल राजनेता के साथ-साथ आत्मविश्वास एवं धेर्यता से परिपूर्ण थी। मौका चाहे जब भी रहा हो चाहे वो चुनाव संबंधी हो या फिर जीवन संबंधित मालती जी ने कभी भी अपना धैर्य नहीं खोया। पुत्री प्रेम पत्नी प्रेम एवं राजनीति के बीच के उथल-पुथल को धैर्यता के साथ सुलझाती है। राजनीतिक प्रारंभ प्रवेश में मालती अपनी इमेज पर धब्बा बताते हुये जग्गी बाबू को खजुराहो होटल बंद करने पर बहस हो जाने, एवं अचानक जग्गी बाबू के द्वारा होटल बन्द कर देने पर एवं मालती जी के नौकर बिन्दा द्वारा छतरपुर आकर होटल बंद करने की खबर देने पर-कि जग्गी बाबू ने खजुराहो के होटल में तीसरे दिन ही ताला डाल दिया था और लिलि को लेकर वे कहीं चले गये थे। एक क्षण के लिये वे उदास हुई थी उन्होंने आँखें बंद करके अपने आँसू छुपाये थे और बच्चों के अनाथाश्रम की नई इमारत का उद्‌घाटन करने चली गयी थी।''(58) पुत्री के बिछोह में कोई भी माँ व्याकुल हो जाती है लेकिन मालती मन में ही अपने दुख को समेट लेती हैं।

राजनीति परिपेक्ष्य में जिस समय भोपाल में विरोधी पत्र के वजह से उथल-पुथल मची थी, लेकिन मालती पूर्ण विश्वास के साथ वहां की स्थिति को धैर्यता के साथ सुलझाती है- ''सचमुच कितना धीरज चाहिये...वक्त आने दीजिये ! उन्हें जीतना मुश्किल नहीं होगा।''[59] गुरुसरन के साथ-साथ सभी लोग आश्चर्य से उनकी नीति को देखते रहे थे गुरुसरन कहता है- मालती जी की यह नीति बेहद सफल साबित होती रही। वक्त ! जरूरत ! और जीत ! इन तीनों बातों पर ही वे टिकी हुई थी। वक्त की नब्ज को पहचानती थी। और जरूरत के हिसाब से वे सब तय कर लेती थीं, उनकी यही शक्ति थी और इसी शक्ति मे उनकी जीत निहित थीं।

मालती एक परिपक्व नेता के रूप में सामने आती हैं क्योंकि धैर्यता व्यक्ति का सबसे बड़ा गुण है और वो गुण उपन्यास की नायिका मालती में है। भोपाल में जिस समय मालती कैंडीडेट होने का कागज भरने आती है उस समय मालती जी एक अतरंग मीटिंग लेकर चुनाव के उत्सुकता के साथ बड़ी चतुराई के साथ कहती है। मालती जी को इतने पास से पहली दफा देखा था जब उन्होंने कहा-''देखिये, हमें विरोधी दलों के हथकण्डे नहीं अपनाने हैं। चुनाव एक पवित्र कार्यक्रम है ! हम जनता के पास अपना असली कार्यक्रम लेकर जायेंगे और जनता की समझ पर ही निर्भर करेंगे। पैंतरेबाजी और उठा पटक का सवाल नहीं है। हम जातियों के आधार पर भी चुनाव नहीं लड़ेंगे, क्योंकि हमारी नीति किसी खास जाति के लिये नहीं, पूरी जनता के लिये है।[60] और छोटे-छोटे कार्यकर्ता मालती जी की धैर्य की नीति की वाह-वाह करने लगे थे।

भोपाल चुनाव के दौरान मालती जब जग्गी बाबू से मिलती है और अपने गिले शिकवा दूर करने के लिये अपने कमरे में बुलाती है और जग्गी बाबू के व्यंग्यात्मक जवाबों के साथ चले जाने पर मालती शून्य में देखती रह गई थी। उस समय गुरुसरन ने सोचा था कि मालती जी बहुत दु:खी होगी। गुरुसरन कहता है- मुझे अंदाज था कि मालती जी इस घटना के बाद दु:खी होंगी, पर ऐसा नहीं हुआ। वे शांत थी। ऐसा नहीं कि उनके आँसू झूठे थे या उन्हें पीड़ा नहीं हुई थी.... पर इतना ही था कि सहना भी उन्हें आता था और पाना भी। क्या सहकर क्या पाना है, यह वह शायद अंदाज लगा लेती थीं। हम आप जैसे लोग सहने और पाने का संतुलन नहीं बना पाते। या तो हमें लगता है कि हमने बहुत सहा है और बहुत कम पाया है या फिर हमने सहा तो कुछ भी नहीं, खोया बहुत ज्यादा है। मालती जी की विशेषता यही है कि उनमें सहने खोने और पाने का एक विचित्र संतुलन बना रहता है। ऐसा नहीं था कि लिलि की उन्हें याद न आई हो या जग्गी बाबू के आने पर वे डांवाडोल न हुई हों- पर उस

वक्त जो कुछ उन्होंने सहा या खोया, उसके मुकाबले उन्होंने क्या पाया, यह वे अच्छी तरह जान रही थी.... और यह जानना भी उनकी सफलता का एक अहम जरिया था।

मालती सम्पूर्ण नारी के गुणों से सम्पन्न महिला थी। भले ही महत्वाकांक्षा के कारण उनका दाम्पत्य जीवन सफल भले ही न हो लेकिन से उन्होंने धैर्यता के साथ राजनीति और दाम्पत्य जीवन के बीच सामंजस्य स्थापित किये रहती है।

सफल राजनेता–

मुख्य नायिका मालती एक सफल वैरिस्टर की बेटी थी। पिता की चाह होने पर भी मालती विदेश पढ़ाई के लिये तैयार नहीं होती है और जग्गी बाबू से प्यार करती रहती है और बीस साल की उम्र में शादी भी कर लेती है। साल के अंदर ही मालती के पिता की मृत्यु हो जाती है और उनका कारोबार देखने के चक्कर में मालती राजनीति में उतर जाती है। और सफलता उनके कदम चूमने लगती हैं। कमलेश्वर उनकी सफलता को कहते हैं– मालती जी एक धमाके के साथ राजनीति में आई। सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ती हुई। जहाँ से उन्होंने शुरू किया, वहां से पीछे मुड़कर देखने की जरूरत उन्हें नहीं पड़ी। पहला चुनाव उन्होंने शुरू किया, वहां से पीछे मुड़कर देखने की जरूरत उन्हें नहीं पड़ी। पहला चुनाव उन्होंने म्युनिस्पल बोर्ड कमेटी का लड़ा.... हंगामा बहुत हुआ।(61)

मालती की सफलता के प्रारंभिक दौर में जग्गी बाबू भी खुश होते हैं। प्रारंभिक दौर पर जग्गी बाबू खुद मालती के लिये स्पीच (भाषण) लिखते हैं। मालती के डरने पर जग्गी बाबू उसे हिम्मत बंधाते हैं – ''मालती जी कमरे में घूम–घूम कर स्पीच करती रहती थी और जगह–जगह पर अटककर पूछती जाती थी– यह क्या लफ्ज है ? ये ऑक्टराय, यानी महसूल.... चुँगी जो टैक्स लगाते हैं।''(62)

राजनेता के रूप में मालती जी पहले तो स्पीच देने से डरती है लेकिन जग्गी बाबू द्वारा हिम्मत बंधाये जाने एवं भाषण बोलने के क्रम को बताते हुये समझाते हैं। कमलेश्वर कहते हैं– और यह क्रम चला जो चला तो रुकने को नहीं आया। सफलता मालती जी के कदम चूमती चली गई। आवाज गूँजती रही एक चुनाव से दूसरे चुनाव तक। चुंगी की मेम्बरी से पार्लियामेन्ट के चुनाव तक।''(63)

मालती जी का प्रमुख सहायक गुरुसरन उनकी सफलता को इस प्रकार वर्णित करता है– मैंने मालती जी के हर चुनाव अभियान में हाथ बंटाया है और वे आवाजें अब तक मेरे कानों में गूंजती हैं जो एक दिन खजुराहो म्युनिस्पल बोर्ड के चुनाव से शुरू हुई थी– मेरे इस

गरीब खजुराहो शहर के भाइयों और बहनों ! मेरे जिले के भाइयों और बहनों ! मेरे प्रदेश के भाइयों और बहनों ।''[64]

गुरुसरन कहता है कि यह आवाज फैलती गई । आवाज का दायरा बढ़ता गया । आवाज की गूंज गहराती गई । पहली बार जब मालती जी जीती तो शहर की जनता ने उनका स्वागत समारोह किया ।... जिला परिषद वाला चुनाव जीतने पर फिर स्वागत समारोह हुआ था।'[66]

मालती राजनीति में उतर चुकने के पश्चात् चुनाव जीतने के लिये साम दाम दण्ड भेद का उपयोग सही समय और सही जगह में करते हुये लोकसभा चुनाव जीत सकने में सफल होती है । जीवन में कई ऐसे पड़ाव एवं मौके आते हैं जब मालती अपने परिपक्व नेता होने का एक सशक्त उदाहरण पेश करती है । नई उम्र की नई पीढ़ी मालती समाज में एकसफल राज नेता के रूप में उभर कर आती हैं ।

कूटनीतिज्ञ –

उपन्यास के प्रारंभ से ही मालती एक सफल राजनेता के रूप में उभरती है । धैर्यता, आत्मविश्वास के साथ-साथ मालती एक सफल कूटनीतिज्ञ नारी है कूटनीति उसमें कूट-कूट कर भरी हुई थी । भोपाल चुनाव के दौरान खुलेआम जाति को महत्व न देकर आन्तरिक महत्व देना, उन सभी छोटे-छोटे लोगों को झेलना जिनके पास वोटो का संग्रह है । अपने कार्यकर्ताओं के साथ बैठक बुलाने के पश्चात चलते-चलते गुरूसरन को अलग बुलाकर आदेश देना- देखिये, इस चुनाव क्षेत्र में बनियों की अक्सरियत है । खास तौर से शहरी इलाकों में । गांवों के जो इलाके हमारे क्षेत्र में है, उनके गरीब किसानों को भी सभी बनिये वक्त जरूरत रुपया वगैरह कर्ज देते हैं- यानी उन इलाकों में भी इनकी बाँहें फैली हुई हैं । इसलिये जरूरी है कि बनियों के बीच से भी कोई कैंडीडेट इस चुनाव में खड़ा हो.....।''[67]

उनकी इस नीति को न समझ पाने पर गुरुसरन आश्चर्य से कहता है कि यह तो खुद अपने पैर से कुल्हाड़ी मारना हुआ लेकिन मालती तनिक भी विचलित नहीं होती है और एक सफल कूटनीतिज्ञ का परिचय देती है । गुरुसरन कहता है- मालती जी मुस्कराने लगी थीं । धीरज और आत्म विश्वास उनके चेहर पर था । बगैर किसी तनाव के उन्होंने कहा था- सुनिये, मेरी बात सुनिये..... बनियों में लाला दीनानाथ का बहुत असर है । आप उन्हें तैयार कीजिये कि वे चुनाव के मैदान में आयें.... पर्चे परसों तक दाखिल हो सकते हैं.......वक्त आने दीजिये..... जो कह रही हूँ वह करने की कोशिश कीजिये । समझे ! मालती जी का वही ब्रह्मस्त्र- वक्त आने दीजिये.....।''[68] कुछ देर बाद सारी बात गुरुसरन जी को समझ में आ

गई थी जब उन्होंने अपने लहजे में सब कुछ समझा दिया था– देखिये, हम जातिवाद के सहारे चुनाव नहीं लड़ेंगे यह बात साफ है। पर सच्चाई को भी देखिये। चुनाव मैदान में इत्तफाक से बनियों का कोई अपना कैंडीडेट नहीं है। लाला दीनानाथ के खड़े होते ही सारे बनिये उनके इर्द–गिर्द जमा हो जायेंगे... यह शर्तिया होगा,क्योंकि लोगों के मन में अपनी जाति के लिये लगाव होना लाजिमी है। लाला दीनानाथ के खड़े होते ही सब बनिये एकजुट हो जायेंगे और उनका समर्थन करेंगे। और मालती की बात न समझ आने पर मालती ने कहा था– जब सारे बनिये लाला दीनानाथ के झण्डे के नीचे जमा हो जायेंगे, उस वक्त लाला दीनानाथ चुनाव मैदान से मेरे लिये बिड्रा करेंगे। समझे आप ! तब बनिया कहीं टूटकर नहीं जा सकता......।

गुरुसरन के द्वारा जातिवाद के आधार पर चुनाव न लड़े जाने की बात को लेकर कहने पर मालती जी कहती है– हम जातिवाद के आधार पर कहां चुनाव लड़रहे हैं ? मैं उनकी जातिकी नहीं हूँ। हूँ.... जनता के बीच काम करने वाले की कोई जाति नहीं होती..... समझे आप ? लाला दीनानाथ अगर अपने जाति भाइयों को अपनी मुट्ठी में ले लेते हैं और वक्त आने पर हम लाला दीनानाथ को जीत लेते हैं तो इसमें हम कहां जातिवादी हो जाते हैं ? बताइये! हम पर कौन इल्जाम लगा सकता है इस बात का ?

इस एक नीति से ही चुनाव संचालन एवं उनकी कूटनीतिज्ञता के दर्पण पर झलक दिखती है।

वन्दा–

प्रख्यात कथाकार मीडिया मैन कमलेश्वर जी का सातवां उपन्यास ''आगामी अतीत'' पूंजीवाद समाज के स्पर्धामूलक परिवेश की विडम्बना इसका मुख्य थीम बनाया गया है। शीर्षक में प्रयोगवाद का संभ्रम अवश्य हो सकता है, परन्तु हमारे मध्यवर्गीय जनजीवन की बेतहाशा आपा–धापी की यह सत्यकथा है। यह बड़ा विजन है।

उपन्यासकार कमलेश्वर जिन्होंने स्वयं जीवन के कडुवे समय को बड़े साहस से जीते हुये जीवन के उस कटु सत्य को समाज के सामने लाने का प्रयास किया जिसे शायद समाज भी सहर्ष स्वीकार करने के लिये साहस नहीं कर पाता है। सामान्य रूप से परिकथा में रोमांटिकता दृष्टिगोचर होती है, जो पूँजीवाद के तहत दबा दिया जाता है, या फिर कहा जाये कि वह दब जाता है लेकिन उस पूंजीवादी जीवन में ऊपर से दिखने वाली रोमांटिकता के भीतर जो टीस उभरतीहै उस टीस को पूंजीवाद के लिबास से निकाल कर यथावत हमारे

समक्ष रखा गया है आगामी अतीत के माध्यम से इसीलिये कमलेश्वर जी को जमीन और जिन्दगी से सीधे जुड़े स्त्री पुरुषों के जीवन, प्रेम, भावना, संवेदना एवं वे सारे पल, बातें, दृश्य का चित्रण करने और उनकी छोटी-छोटी आशा, आकांक्षाओं, संघर्ष, त्याग, समर्पण, विद्रोह इत्यादि को व्यक्त करने में कमाल हासिल किया है।

कलकत्ता का प्रसिद्ध मानसी ''कैमिकल्स दवाओं का निर्माता कमल बोस डॉक्टर चिकित्सा क्षेत्र में बड़ी उपलब्धियां अर्जित करता है और प्रसिद्धि एवं भौतिक साधन सम्पदा सुख से मिलन निरुपमा से शादी करने के पश्चात् हुआ क्योंकि कमल बोस डॉक्टरी की पढ़ाई अव्वल नम्बरों में पास की थी और निरूपमा के पिता एक बड़ी दवा निर्माता कम्पनी के मालिक थे और उन्होंने कमल बोस को यह प्रस्ताव (ऑफर) अपनी लड़की निरुपमा से विवाह करने पर दिया था प्रसिद्धि की लालसा लिये हुये कमल बोस अपने पढ़ाई की तैयारी के समय प्रथम प्रेम जो उसने चन्दा से किया था और उससे किये गये वादों को भूलकर निरुपमा से शादी कर लेता है।

इधर कलकत्ता जैसे महानगर में प्रसिद्धि की सीढ़ियां चढ़ता हुआ कमल बोस आगे बढ़ता जा हा था और उधर दार्जिलिंग जैसे छोटे से हिल स्टेशन की सौम्य, सुन्दर, सुशील चन्दा जो अपने प्रेम पर अटूट विश्वास किये हुये कमल बोस की आशा लगाये हुये अपनी जिन्दगी नरक से भी बदत्तर बना लेती है। लेकिन कभी भी अपने प्रेम को कोसती नहीं है, यहां तक कि वह कभी भी कमल बोस से मिलने या उसकी जिंदगी में खलल डालने की भी कोशिश नहीं करती है। समाज के अपमान रूपी विष पिता की मृत्यु को भी सहनकर एक लकड़हारे से शादी करके भी अपने जीवन को सुखी नहीं बनाती है। अन्तोगत्वा एक लड़की को जन्म भी देती है लेकिन यह समाज उसे स्वीकार नहीं करता वह पागल हो जाती है और इस जन्म मरण के सागर में से पार चली जाती है।

उपन्यास के कथानक के आधार पर चन्दा जो कि प्रेम का एक उदाहरण समाज के सामने प्रस्तुत करती हुई सम्पूर्ण कथाक्रम में अमिट छाप छोड़ जाती है।

प्रेम सौन्दर्य एवं काम –

उपन्यास की नायिका चन्दा उपन्यास नायक कमल बोस से दार्जिलिंग में मिलती है चन्दा के पिता बैद्य है और कमल के पैर में मोच आ जाने पर वह उनसे दवा करवाता है। अगले दिन चंदा और कमल की मुलाकात जंगल में होती है और दोनों के बीच बातों-बातों में कुछ ऐसा घटित होने लगता है कि वे दोनों एक दूसरे से प्रेम करने लगते हैं।

जहां एक ओर कमलेश्वर जी ने वाह्य प्रेम की अभिव्यंजना में प्रेम चंचल है, मस्ताना है, एक नशा है की व्याख्या की है। वहीं दूसरी ओर उसी प्रेम के कारण चंदा के व्यक्तित्व की छाप अमिट कर दी है।

कमल और चंदा के बीच पनपते प्रेम एवं रोमांटिकता के पलो को व्यक्त करते हुये कमलेश्वर जी लिखते हैं- चंदा जंगल में फिर मिली थी, तो कमल ने उसकी बाँह मरोडते हुये पूछा था, ''मेरा नाम क्या है ?''

''कोई मरीज ! नहीं .....? वह शोखी से बोली थी, ''बाबा को और क्या बताती ? छोड़ो मुझे....! कहे हुये उसने उसकी बाँह पर काट लिया था। कटखनी कहीं की। जा के अपनी जड़ी बूटियाँ बीन।[69] और चंदा मान करके चल दी थी, तो कमल बोस ने उसे लपककर पकड़ लिया था और वह शरमा कर सिमट गई थी।[70] चंदा ने कमल की खिताब खोली थी तो उसमे एक तसवीर निकल आयी- कमल की तस्वीर। उसे लेने पर कमल पूछता है कि आखिर तुम क्या करोगी ? रखोगी कहां.... किसी ने देख ली तो ?'' और तब चन्दा ने बड़ी दृढ़ता से अपने प्रेम के बारे में कमल की तस्वीर को लक्ष्य करके कहा था- कोई नहीं देख पायेगा... जब तक मै न चाहूंगी, कोई नहीं देख पायेगा।'' कहते हुय उसने वह तस्वीर अपने प्लाउज में छुपा ली थी। तब कमल के द्वारा कब तक छुपाये रहोगी मुझे ? कहने पर, चन्दा कहती है जब तक तुम चाहोगे।''[71]

वास्तव में तत्सुखी प्रेम यही होता। फ्रायड के अनुसार समवय: प्रेम स्वभाविक है। और चन्दा अपने प्रेम के लिये कुछ भी करने को तैयार हो जाती है। चंदा अपने और कमल बोस के बीच पनपे प्रेम को अपने पिता से छिपाने का अथक प्रयास करती है और डांट फटकार सुनने के बाद भी वह जड़ी-बूटियों के बहाने कमल से मिलती है। दूसरे दिन वे दोनों अपनी मस्ती मे डूबे हुये चले जा रहे थे और आक के पत्ते फूल और टहनियां जमा करके लौट रहे थे तभी अचानक बारिश शुरू हो गयी और वे दोनों एक दूसरे ढांपे एक पेड़ के नीचे दुबक गये थे। चन्दा और कमल दोनों प्रेमी का एकान्त मिलन उनकी निकटता एवं सुदृढ़ प्रेम का कारण बनता जा रहा था। उपन्यासकार लिखते हैं- बारिश थमी थी, तो चंदा अपनी बांहे देखते हुये कहा था, ''अब मैं तुमसे दूर नहीं रह पाऊंगी ..... इस बारिश ने....'' कहते-कहते वह रुक गई थी।

''मैं भी नहीं रह पाऊंगा चंदा ![72] और फिर लौटते समय बारिश के कारण पहाड़ी नाला भर गया था और चंदा के द्वारा नाले के उस पार जाने में असमर्थता व्यक्त करने पर कमल वहीं चट्टान पर पसर जाता है, चंदा भी बैठ जाती है तब कमल ने उसे अपने कंधे से

चिपका लिया था..... और एकाएक कमल ने उसे गोद में उठा लिया था, ''ऐसे !'' और वह चंदा को लिये पानी का उमड़ता नाला पार कर आया था।''(73) कमल के जो का दिन आ गया था और उस रात चंदा सबसे बचते बचाते कमल के पास आई और कमल के द्वारा न जाने का मन सुनकर चंदा उसे समझाती रही तब कमल और चंदा के बीच काम और प्रेम के पल को रेखांकित करते हुये उपन्यासकार कहते हैं– कमल उसे बाहों में भरकर बिस्तर पर ले आया था.... ''ओह चंदा !....'' और तब चंदा से उसे बहुत प्यार से समझा लिया था, ''देखो यह कमजोरी बहुत जल्दी व्यापती है। मुझे कमजोर न बनाओ। यह तब ठीक है जब तुम लौटकर आओगे।''(74)

उपन्यास में चंदा और कमल के बीच पनपे प्रेम में स्वसुखी न होकर तत्सुखी के रूप में प्रकट होकर समाज में प्रेम की एक नई परिभाषा प्रस्तुत करने की कोशिश की है।

शोख, चंचल एवं जिद्दी –

उपन्यास के आरंभ में चंदा एक शांत लड़की के रूप में नायक कमल के सामने उपस्थित होती है। कमल जब पढ़ाई के लिये दार्जिलिंग आया था। और पढ़ते हुये सीढ़ियों से उतरते समय पैर फिसला था और पैर में मोच आ गई थी। गुजराती चार पांच लड़कियां खिलखिलाकर हंस पड़ी थी। पर सीढ़ियों के नीचे खड़ी लड़की उस हंसी में शामिल नहीं हुई थी और बाद में पता चला कि चंदा यही थीं।

लेकिन तीसरे दिन कमल बोस जंगल में एक खुली जगह पर बैठा पढ़ाई कर रहा था और तब एकाएक एक लड़की की बेसाख्ता हंसी ने उसका ध्यान खींचा था और कमल के पूछने पर ''उस दिन..... उस दिन..... तुम सीढ़ियों से लुढ़के थे न....? वह हंसते हंसते बोली थी।''(75)

चन्दा हंसमुख स्वभाव वाली थी वह कमल से मजाक करती हुई कहती है– ''सुनो तुम्हारी कुछ मदद करूँ ? बस्ती में एक घोड़ा डॉक्टर रहता है, उससे पढ़ लिया करो। मैं कह दूंगी।''

''घोड़ा डॉक्टर !''

''हां ! और वह फिर हंस दी थी। जो अपना इलाज नहीं कर सकता वह दूसरों का क्या करेगा ?'' कमल के द्वारा चंदा को घर पर न दिखाई देने पर चंदा बड़ी शोखी से जवाब देते हुये बोली थी– मैंने तो तुम्हें देखा था। यों घर पर कोई लड़की किसी को खुलकर.... सामने आकर देखती है क्या ? यह तुम्हारे कलकत्ते में होता होगा....''(76) स्त्री का स्वभाव चंचल

होता है चंदा भी अपने प्रेमी कमल के साथ शोखी एवं चंचलता से पेश आती है क्योंकि कहीं न कहीं यह माना जाता है कि स्त्री में सात साल की छोटी बच्ची हमेशा जीवित रहती है और स्त्री का वही बचपना पुरुष को रिझाता है। कमल बोस जीवन के अग्रिम दिनों में चन्दा के साथ बिताये गये पलों को याद करते हैं जिसमें कमलेश्वर कहते हैं– वह सेब का बाग भी उन्हें याद आया था, जहां घूमते–घूमते वे पहुंच गये थे। चंदा का बचपना उभर आया था– '' तोडूं ?''

''चोरी करने में ज्यादा मजा आता है ?''

हाँ ! ''कहते हुये वह सेब के बाग में घुस गई थी और जल्दी से चार सेव तोड़कर भाग आती थी।[77] एक उसने कमल को थमा दिया और दूसरा खुद खाने लगी तो कमल ने उसे टोका था और छीनकर ऊपर का हिस्सा तराश कर उसे दिया था।

''तुमने तो सेब खाने का सब मजा ही खराब कर दिया।'' चंदा ठुनकी थी, ''मैं तो बिना काटे खाऊंगी। यह तुम्हीं खाओ। ...... और उसने बिना कटे सेब में फिर अपने दांत गड़ा दिये थे। और तब कमल बोस ने प्यार से कहा था ''जिद्दी कहीं की ![78]

उपन्यासकार कहते हैं ''चंदा कमरे में बैठी थी। उसने दियासलाई से तीली निकाल कर कान कुरदेना शुरू ही किया था कि कमल ने टोका था, ''यह बहुत बुरी आदत है ..... इस तरह तीली से कान कुरेदना। पस पड़ जायेगा, फिर आपरेशन होगा कनकटी हो जाओगी।'' चंदा बड़ी चंचलता के साथ कहती है– हो जाने दो !...... फिर उसने माचिस से दूसरी तीली निकाली थी। कमल ने फिर मारा था। उसने फिर मारा था। आखिर कमल ने पूरी माचिस ही खिड़की से बाहर फेंक दी थी।''[79]

सहृदया नारी –

नारी त्याग की प्रतिमूर्ति होती है उसका हृदय बहुत ही भावुक एवं सहृदया होती है। और शायद इसीलिये मानव जगत में गॉड मदर (God mother) तो हुई लेकिन अभी तक कोई भी पुरुष गॉड फादर (God fatter) के नाम से विख्यात नहीं हो पाया। चंदा वैद्य की बेटी थी उपन्यास में वह एक सहद्या नारी का परिचय देती है। लेखक कहते है– ''चलते–चलते उसकी नजर फूलों से भरी झाड़ियों में उलझी तितली पर पड़ी थी। एक हाथ से झोली संभालते हुये चंदा ने उसे हल्के से उसे उठाया था.... मरी हुई तितली को उसने उठाकर फूलों के एक गुच्छे पर नरमी से रख दिया था.... और माथे पर आयी लट को समेटते हुये वह चुपचाप आगे बढ़ गयी थी। कुछ भी बोली नहीं थी।

उपन्यास के बीच में जिन्दगी के कई पड़ाव निकल जाने पर कमल बोस चन्दा को ढूंढ़ने निकलते हैं और तब कमल बोस को लोगो के द्वारा उसकी सहृद्रयता के बारे जानने को मिलता है। चन्दा के द्वारा नि:शुल्क दवा एवं किसी का कष्ट न देख पाने के कारण दूसरों की सेवा करती थी।

सच्ची प्रेमिका –

चन्दा सम्पूर्ण उपन्यास में एक सच्ची प्रेमिका के रूप में उपस्थित होती है। कमल बोस उसका प्रथम और अग्रिम प्यार होता है। चन्दा अपने प्रेम में विश्वस्त रहती है वह अपने और कमल के बीच प्रेम को लेकर एवं कमल के द्वारा बड़े–बड़े वादों को लेकर चंदा हमेशा कमल से कहती है कि उतनी ही बात करना जितने पर तुम्हारा मन विश्वास करे।[80] चंदा वर्तमान में विश्वास करती थी उसने कभी भी अपने प्रेम को कमल के ऊपर बोझ नहीं प्रतीत होने दिया था। चन्दा और कमल के बीच प्रेम के पल बहुत ही सुखद बीत रहे थे। नव प्रेमी युगल अपने भावी जीवन के सुखद सपने सजोने की बातें करते हैं। उस वार्तालाप को लेखक ने एक सफल कलाकार के रूप में रेखांकित करते हुये चन्दा के व्यक्तित्व को उभारने का प्रयास किया है। चाय का पानी चढ़ा कर चंदा बोली थी– ''अच्छा सुनो, कुछ रस्मी बातें करें ? 'रस्मी' बातें ? ये क्या होती है कमल ने पूछा था। ''अरे यही .... जैसे कि तुम डिस्पेंसरी चले जाया करोगे तो''.... हमारे लड़का होगा तो उसका नाम हम कमल रखेंगे.... और लड़की हुई तो नाम रखेंगे चांदनी।''[81]

चंदा और कमल जिस समय प्रेमी बनते हैं तब कमल भी पढ़ाई करता रहता है और आर्थिक रूप से कमजोर रहता है। अपने प्रेम का इजहार करते हुये चंदा को एक सस्ता सा सफेद मोतियों का हार लाकर खुद पहनाया था तो वह बिगड़ी थी और साधिकार उसने कमल के पैसे गिन कर उसके कलकत्ता वापस जाने तक का हिसाब लगाती है। उस अनूठे प्रेम भरे साधिकार प्रेमिका का चित्रण करते हुये लेखक चन्दा के माध्यम से कहता है–पैसे पास नहीं हैं और हार खरीद लाये.... क्या मतलब हुआ इसका ? दिखाओ मुझे कितने पैसे हैं।'' उसने जेबों की तलाशी लेकर पचपन रुपये गिने थे और बोली थी, ''कैसे पहुंचोगे कलकत्ता ? कहां से आयेगा पैसा ? दो रुपेय रोज से ज्यादा जेब खर्च नहीं मिलेगा। यह तो रखो। और शेष रुपये उसने अलमारी में बिछे कागज के नीचे रख दिये थे, ''इन्हें हुआ तो देखना।''[82] कथा उपन्यास में चन्दा कमल के वापस न आने पर भी जिन्दगी भर उसी का इंतजार करती है, यहां तक कि अपने जीवन के अग्रिम चरण में वह अपने प्रेम में विह्वल हो जाती है और वह स्कूल के बच्चों से पूछती है तुम्हारे इम्तहान खत्म हो गये, तुमने डॉक्टरी पास कर ली।''[83]

अपने जीवन पर्यन्त अपने प्रेम की कसक को सहते–सहते अन्तोगत्वा वह मानसिक अवसाद से ग्रसित हो जाती है और पागल होकर मर जाती है।

प्रेम के कारण जीवन विखराव–

आगामी अतीत के माध्यम से उपन्यासकार कमलेश्वर ने एक सफल प्रेम की गूढ अभिव्यंजना की है वहीं इस प्रेम के सफल न होने पर समाज द्वारा कसे गये तानों के कारण उसका जीवन श्रापग्रस्त हो जाता है। कमल का चले जाना एवं चंदा के द्वारा शादी न करने की जिद, एवं उसके प्रेम के बारे में समाज को पता लगना और बूढ़ा व्यक्ति एक क्षण रूककर कमल बोस से बताता है – बैद्य जी का बुढापा खराब हो गया। बहुत बदनामी हुई।विरादरी ने हुक्का पानी बंद कर दिया। इसी फिकर में तबियत भी खराब रहने लगी x x x। विरादरी में तो बदनामी हो ही चुकी थी। कौन करता शादी उससे ? अफवाहें फैलने और फब्तियाँ कसने से कौन बाज आता है ? चंदा निकलती तो छेडने वाले लोग उसे डाक्टरनी कह के चिढाने लगे थे।'' (83)

कमलेश्वर ने इस लघु उपन्यास के माध्यम से हमारे देश के उस भौगोलिक स्थिति का वर्णन किया है जहां क्षणिक सैलानी आते है और कमल जैसे महत्वाकांक्षी प्रेमी, प्रेम करके कभी वापस नहीं आते है। प्रेम करना तो आसान है लेकिन निभाना कितना मुश्किल है। कमल के वापस न लौटकर आने पर, अपने प्रेम को न भुला पाने पर चंदा का जीवन तहस नहस हो जाता है और उसके साथ–साथ उसकी बेटी चांदनी का जीवन भी नष्ट हो जाता है। चंदा के जीवन के बिखरते पलों को उपन्यासकार इस प्रकार लिखते है – ''होना क्या था बाबू जी, जैसे तैसे एक लगडे हरकारे से उसकी शादी कर दी गई। आखिर किसी घर तो उसे डालना ही था। और कौन करता उससे शादी ?'' (84)

अन्तोगत्वा चंदा का संपूर्ण जीवन भर विषम परिस्थितियों से गुजरती हुई अन्त में कमल के ही प्रेम की कसक को लिये हुए मांनसिक रूप से विक्षिप्त हो जाती है और एक दिन अपनी बेटी को अकेला छोडकर चल बसती है। और कमल बोस जैसे लोगों द्वारा अब पछताये होत क्या जब चिडिया चुन गई खेत।'' उक्ति सिद्ध होती है कमल बोस जैसे प्रेमी जो महत्वाकांक्षा में फसकर चंदा जैसी लडकियों का जीवन बबार्द कर देते है और जब चेत आता है तब तक सब कुछ नष्ट हो चुका होता है।

शान्ता –

कमलेश्वर रचित यह उपन्यास अन्य उपन्यासों की तरह सामान्य एवं सामाजिक परिवेश में न होकर भारत वर्ष में हो रहे राजनैतिक उथल पुथल को प्रस्तुत करता है। अंग्रेजी सत्ता अखिल भारतवर्षीय हो चुकी है जिसके कारण घर, परिवार, ग्राम समाज और राष्ट्र के चिन्तन में परिवर्तन घटित होने लगता है। युगो-युगो की संचित आस्था खण्डित होने लगी है। 1857ई. की क्रान्ति ने वर्तानिया सरकार के क्रियाकलापों और चिन्तन में भी परिवर्तन कर दिया था। डाक तार और रेल का प्रचार प्रसार तेजी से होने लगा था। जिनके पूर्वज अंग्रेजों से लड़ते हुए भारत माता की गोदी में अपने प्राण अर्पित कर शहीद हो गये थे, उनके वंशज उन्हीं अंग्रेजो की गुलामी करने को व्यग्र हो गये है। अंग्रेज अधिकारी समस्त भारतीय संस्कृति और सभ्यता को पददलित करते हुए भारतीयों को गुलामी श्रृंखलाम में बांधकर प्रति क्षण अपमानित करते रहते है। इसके प्रतिशोध में क्रांतिकारियों की एक सशक्त अर्न्तधारा बहने लगती है। जिसमें स्त्री पुरूष बौद्धिक वर्ग जमींदार सभी कोई न कोई भूमिका पूर्ण करते दृष्टिगोचर होते है। जीवन मूल्यों के परिवर्तन पर घर परिवार में विभेद होते उग्र हो जाता है। देश पर प्राण न्योछावर करने वाले के उत्तराधिकारियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपने अग्रगामी पिता पितामहों के पदचिन्ह्यों का अनुसरण करेगे किन्तु ऐसा न होने पर घर की मुखिया पितामही (बडी दादी) के मानस पटल पर वज्राघात होता है और वह अपने जाये पर तो विश्वास को खंण्डित होते देखकर अपनी बहू के जाये पर भरोसा करती है किन्तु वहां भी धोखा प्राप्त होता है। ऐसे में अपनी प्रपौत्री को आत्म स्वरूप देखकर आश्वस्त होती है जो अन्तत: वृद्धा प्रपिता जो बडी दादी की संज्ञाभाक है कि आशाओं के अनुरूप खरी उतरती है। बाला शान्ता को प्रदान की गई शिक्षा युवती में जब वह आशा क्रियान्वित होती है तब बूढी दादी की दोपहर युवती विवाहिता शान्ता,शाम दो बच्चों की माता प्रौढा एवं अनुभवी शान्ता की ही स्वरूप सुबह, दोपहर शाम में पूर्ण रूप से दृष्टिगोचर होता है।

यह उपन्यास देशभक्ति के जज्बातों से लैस यानी कि स्वाभिमान और अपनी मिट्टी की पहचान जज्बा इस उपन्यास का प्रमुख तत्व है। इसके साथ-साथ इस बात का साक्षी भी है कि आजादी के आन्दोलन के दौरान केवल केन्द्रीय स्तर पर प्रखर क्रांतिकारी ही देश सेवा में नही लगे थे बल्कि दूर दूराज के छोटे गॉव परिवार के लोग भी अपने-अपने स्वाभिमानी कर्त्तव्यों और त्याग की भावनाओं से आजादी की अलख में योगदान कर रहे थे।

सुबह... दोपहर... शाम पारिवारिकता और क्रान्तिकारिता का एक संगम है। यह अनुभूत सत्यों का रूपांतरण है एक ही परिवार में सिद्धांतों और आदर्शों की विभिन्नता का यह यथार्थ

वादी रूपक.... । यह रूपक भले ही तब के समाज के हो किन्तु इसकी प्रवृत्तियों का नजारा अब के समाज में भी देखा जा सकता है । और शान्ता इसका जीता जागता उदाहरण समाज के सामने लाकर रख देती है ।

उत्सुक एवं कौतुहल प्रिय –

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और वह स्वभाव से जिज्ञासु प्रवत्ति का होता है उपन्यास की प्रमुख नायिका शान्ता (शन्तो) भी बचपन से उत्सुक एवं कौतुहल प्रिय थी । शान्ता बहुत चंचल नहीं थी वह हमेशा अपनी बडी दादी के पास रहती सोती और कहानी सुनती । जब जसवन्त रेलवे महकमे में नौकरी करने के लिये जाने की अनुमति बडी दादी से लेकर चला जाता है उस रात बडी दादी बहुत दु:खी होकर सन्तो के साथ लेटती है बडी दादी को यूँ रोते हुए देख एकदम परेशान हो जाती है और उत्सुकतावश उनके आँसू पोछते और झुर्रियों से भरे मुहँ को अपनी नन्ही नन्हीं हथेलियों में दबाते हुए सन्तो ने पूछा – बडी दादी ! का हुआ ? सन्तो के पिता जसवन्त जिस समय अपने पिता से ट्रेन के बारे में बात करता हुआ गाडी के बारे में बता रहा था और अम्मा तुनक कर चली जाती है उस समय गाडी को लेकर सन्तो के मन में भी कौतूहल जागता है और उत्सुकतावश वह अपने पिता जसवन्त से कहती है – बाबू तुम्हारी रेलगाडी कैसे चलती है ? कोयला खाती है और पानी पीती है । अगले अड्डे पर पानी की बहुत बडी टंकी बनाई है... वहीं रूक के पानी पीती है । सीटी देती है और आगे चली जाती है । दिन भर पच्चीस कोस लांघ आती है ।'' (85)

सन्तो और तमाम छोटी छोटी बाते पूछती रही है और जसवन्त उसे बताता जा रहा था । जब हरकारे के द्वारा बडी दादी की खबर मिलती है तो सभी लोग उनको लेने निकल पडते है और जब दादी को जानवरों के बीच बैठे देखते है तब सन्तो को दादी द्वारा सुनाई गई रूस्तम मामा और चीते की लडाई वाली बात याद आ जाती और तब दादी उस चीता को मारने आये गोरे (अंग्रेज) को लगुंर कह कर बहुत हंसी थी । लेकिन प्रत्यच्छ रूप से चीते के साथ साथ अन्य जानवरों के साथ बडी दादी को बैठे देखकर उत्सुकता वश सोचती है – तब सन्तो बहुत छोटी थी । बडी दादी की बात नहीं समझती थी । आज तो कुछ समझती है । पर बडी दादी को उसी चीते के पास बैठा देखकर सन्तो सहम गई थी । वही डरावना चीता फिर जाग गया था क्या ? और बडी दादी ने उसे हिला मिला लिया है क्या ?'' (86) संपूर्ण उपन्यास में धीरे धीरे सन्तो बडी दादी सरीखे परिपक्व होती नजर आयी है ।

समझदार –

सन्तो बचपन से ही भरे पूरे परिवार में रहती थी वह बडी दादी के सबसे निकट रहती है। वह उनकी सभी बातों को गौर से सुनती, सारे क्रिया कलापों को गौर से देखती। पिता (जसवन्त) का रेलवे महकमे नौकरी करने पर बडी दादी बहुत दुःखी होती है सन्तो के द्वारा पूछने पर बडी दादी अपने दुःख को टाल तो देती थी पर वह सब समझती थी। और बडी दादी को दिलासा भी देती थी। बडी दादी के बिना बताये कहीं चले जाने के बाद कभी कभी जसवन्त की माँ को अपनी सास की याद आती थी तब ही सन्तो को बुलाकर पास बैठा लेती थी – मेरे पास बैठ आ के। और सन्तो के द्वारा काहे कहने पर बस कहा न .... कह देती थी माँ कुछ बताती नही थी लेकिन सन्तो इतनी समझदार तो हो ही गई थी वह माँ के मन के दुःख को समझती थी। और तब बडी समझदारी के साथ सन्तो कहती – अम्मा ! मेरे पास से बडी दादी जैसी महक आती है ? ... इसीलिए तुम बुला के पास बैठाती हो। ठीक बात है न ? सन्तो ने माँ से पूछा था। वह जानती थी कि पूजा की बडी दादी वाली महक अब उसमें आने लगी लगी। हथेली का चन्दन दूसरे दिन तक हल्का हल्का महकता रहता था।''(87)

और जब जब आम्मा गहरी सास लेकर कहती कि इस रेल ने हमारा घर विगाड दिया। सब बारह बांट हो गया। और सबकी चिन्ता करके फफक –फफककर रो पडी थी तब शान्ता ने पुरखिन की तरह सम्भाला था – नही अम्मा ... नही। बडी दादी का तो सब कोई है .... सूरज ... पेड परिन्दे उन्हे जब हमारी याद आएगी तो लौट आएंगी। हम भी तो उन्हीं के है अम्मा ! तुम रोती काहे को हो।''(88) और सन्तो बडी समझदारी से सब को सम्भालती थी।

सन्तो की शादी होती है वह एक नये परिवार में जाती है जहां उसे सारे रिश्ते सास, श्वसुर, देवर, ननद मिलते है। सन्तो का देवर नवीन एक क्रान्ति कारी रहता है वह सन्तो को बहुत चाहता है अपनी जान खतरे में डालकर जब वह अपनी भाभी सन्तो एवं भतीजा मुन्ना से मिलने आता है और तब एक क्षण के लिए मुन्ना को न देखकर सन्तो विह्वल हो जाती है और तब अपनी सास के दुःख को समझते हुए उसने अपने देवर नवीन को समझाते हुए कहा था – मैने एक पल के लिये मुन्ना को नही देखा था तो क्या हाल हुआ था मेरा।

हॉ –

– तो सोचो !

– क्या ?

अम्मा जी ने तुम्हे बरसो से नही देखा, क्या हाल होता होगा उनका ? क्या बीतती होगी उन पर ! कभी सोचा है तुमने ?''(89) और तब नवीन यादों की नइया में डूबने उतराने लगता है। अंग्रेजी हुकुमत के साथ भी सन्तो बडी समझदारी के साथ काम लेते हुए बार बार अपने देवर को बचा लेती है। होली खेलते समय अचानक गारद का आ धमकना और नवीन की मांग करना सब घबडा गये थे पुलिस रंग से पुते चेहरों में नवीन को नहीं पहचान पर पा रही थी और तब बडी समझदारी से काम लेते हुए शान्ता ने नवीन को बहादुर नौकर के रूप में अन्दर ले जाती है और उसे भगा देती है। संपूर्ण उपन्यास में ऐसे कई अवसर आए जब शान्ता ने बडी समझदारी का परिचय दिया था।

वात्सल्यता की अधिकारिणी –

सन्तो अपने माता पिता की अकेली सन्तान है। उपन्यास की प्रारंभ में वह अपनी बडी दादी के साथ ज्यादा रहती है इसके साथ ही साथ वह अपनी अम्मा एवं माँ दोनो की भी चहेती रहती है। बडी दादी के चले जाने पर सन्तो को याद आता है कि किस प्रकार बडी दादी उसे प्रेम करती थी देखभाल करती थी। सन्तो प्रकृति में धूल की चादर में सूखी पतियों को उलझी हुई चले जाते देखकर दादी के वात्सल्य प्रेम जो उसे मिलता था याद कर बैठी – ''बडी दादी की पुरानी दोहर हो, जिसमें उन्होने खुद फूल पत्तियॉ काढी थी और जब कटकटाती सर्दी पडती थी, तभी वह उसे निकालती थी। उसी दोहर में सन्तो को लपेट लेती थी और अपनी थुल थुल छातियों से चिपका लेती थी।''(90) सन्तो सब की लाडली रहती है। वह अपने पिता जसवन्त के साथ अपनी मॉ के पास जहां उसके पिता काम करते है जाती है तो उसकी माँ उसे छाती से चिपका लेती है – तू आ गई .... माथे और गालों पर बहुत प्यार लिया। (91) धीरे धीरे सन्तो वही गुमटी वाले घर में रहने लगती लेकिन उसे वहां अच्छा नही लग रहा था। और दिवाली का त्योहार जब साथ मनाने के उद्देश्य से जसवन्त के माता पिता गॉव से आ जाते है। इतने दिनों के बाद मिलने पर भी जसवन्त की माँ का प्रेम सन्तो के प्रति कम नही होता है उपन्यासकार कलेश्वर जी ने लिखा है – नरक चौदस के लिए क्या–क्या करना है, यह सब बहू को बता कर सन्तो को छाती से लगा के लेट गई।

बडी अम्मा सन्तो को छाती से लगाये लेटी थी तो बार–बार सन्तो के छितराए बाल उनके नथुनों में घुस जाते थे .... आखिर उसके सिर को सूंघकर बडी अम्मा ने पूछा था –

''कब से तूने बाल नहीं धोए ?

बहुत दिन हो गये बडी अम्मा।'' (92) और तब बडी अम्मा ने नरक चौदस को बडी आत्मीयता के साथ बाल धोने को कहा था। सन्तो में चचंलता कम परिपक्वता अधिक थी।

उसकी बडी दादी को उसी से आश थी। प्राण विसर्जन से एक रात पहले बडी दादी ने उसे अपने पास लिटाकर कहा था – देख बेटा ! अब हम तो कभी भी चली जाएंगी ... पर अपने घर परिवार का कुछ नेम होता है ... तेरी बडी अम्मा और तेरी अम्मा भी तुझे बताएंगी। पर बेटा मेरी इन आँखो में एक ही सपना कौधता है .... तेरे बडे बाबा की मर्जाद रखने वाला अब कोई नहीं है ! अपने बड़े बाबा को याद रखना बेटा और उनकी मर्जाद की रक्षा करना .... बस बेटा।'' (९३) बड़ी दादी को सबसे ज्यादा बडी अम्मा और सन्तो समझती थी इसलिए सन्तो से ही बड़ी दादी जाते जाते अपने दिल की बात कह गई थी और सन्तो ने उसे पूरा भी किया था।

प्रेमिका के रूप में –

सन्तो बहुत ही समझदार लड़की थी वह अपने गाँव वाले घर से जब गुमटी में रहने लगती है तो वहाँ सूरज नाम के लड़के से दोस्ती हो शान्ता और सूरज दोनो गुड्डे गुड़िया का खेल खेला करते थे और उसी खेल में न जाने कब दोनो में आत्मीयता हो जाती है।

सूरज अपने गुड्डे की बारात लेकर दरवाजे पर आ गयाथा लेकिन सन्तो की गुड़िया अभी सज के तैयार भी नहीं हो पाई थी। उपन्यासकार कहता है – ये सन्तो जल्दी कर ! बारात आ गई है। सूरज ने तुनकते हुए कहा – वह देख रहा था, सन्तो की गुड़िया अभी तैयार ही नहीं थी। यह भी कोई बात हुई .... वह तो बारात लेके आ गया था। पण्डित जी साथ थे। बाजे वाले कागज की नपीरिया फूंके जा रहे थे। जीतू दबादब ढोल बजा रहा था। x x x सन्तो के द्वारा यह कहने पर कि तेरे गुड्डे की फिकर किसे है। हमारी गुड़िया को बहुत मिल जाएंगे। यह सुनकर सूरज सन्तो से कहता है कि ऐसा ही मुझसे बोलेगी ! और शान्ता के द्वारा यह उत्तर देने पर तू भी एकदम पागल है सज्जू। और सूरज की आँखो में पानी आ गया था। और सूरज ने कहा था मुझे सच सच बता। तब सन्तो ने कहा था अरे उसमे तो बहुत देर है।'' और फिर एक दिन परिस्थितियां बदल गयी थी और सन्तो की शादी प्रवीन से हो रही थी सूरज भी वहां था और जनाती लड़के के द्वार शरबत के कुल्हड़ आगे बढ़ाते हुए कहा था– सूरज भइया ..... शरबत पिएं ! तब सूरज ने इंकार करते हुए कहा था – नहीं मन नही है। सूरज ने कहा और अपनी आँखे बचा के पोंछ ली उसकी आँखो में बार–बार पानी का परदा पड़ जाता था। पता नहीं उसे क्या हो गया था – रह रह के असकी आँखों के सामने बहुत बरस पहले वही गुड़िया गुड्डे का व्याह तैर जाता था जब सन्ता ने कहा था मेरी गुड़िया पीछे–पीछे चलेगी – तब सूरज ने अपना गुड्डा आगे कर दिया था गुड्डे –गुड़िया भांवरे लेटे जाते थे और सच पूंछो तो अपने–अपने हांथो में उन्हें पकड़े और उन्हें भांवरो पर

घुमाते शान्ता और सूरज ने ही फेरे लिये थे।'' (94) और इससे पहले की सूरज यह सब याद करके फिर से सूरज की आँखो में पानी की दीवार उतर आये ... वह विवाह मंडप की ओर देख कर वास्तिवकता से अपने दिल को मिलाना चाहता है और वह देखता है कि शान्ता के पैर दो अंजाने पैरों के साथ-साथ अग्नि के फेरे ले रहे थे .... और प्रवीन के साथ सात फेरे लेने के बाद जब शान्ता विदा होकर अपने ससूराल जा रही थी - गाड़ी चली थी तो शान्ता ने भर ऑख चारो तरफ देखा था x x x और एक पल के लिए उसे सूरज का ध्यान आया था, पर वह कहीं नही था सच पूंछो शान्ता को अच्छा भी लगा था और बूरा भी।'' (95) उपन्यास के सम्पूर्ण कथानक में शान्ता और सूरज के बीच वीते ये कुछ दिन आत्मीयता से पूर्ण थे। वे दोनो कहीं न कहीं एक दूसरे से प्यार करते थे लेकिन दोनों ने ही कभी इस बात को समाज एवं घर वालो के सामने व्यक्त नहीं किया था। सूरज एक सच्चे प्रेमी के रूप में नजर आता है। वह कभी भी ऐसा व्यवहार या बात नहीं करता जिसमें दोनो में से किसी के सम्मान पर आंच आये। यहॉ तक कि बाद में सूरज को बेनाम रिश्ते को भाई के रिश्ते का दर्जा दिया जाता है।

स्वदेश प्रेमी -

अंग्रेज और क्रांतिकारियों के बीच की जंग के साथ-साथ परिवार एवं समाज की यथार्थता को व्यक्त करते हुए कमलेश्वर जी ने यह भी दिखाने का प्रयास किया है कि केवल क्रांतिकारियों के सहयोग से ही नहीं बल्कि भारत देश के हर घर की स्त्री बच्चे सभी में देश भक्ति का जोश एवं जज्बा दिखाई देता है अपने गॉव, देश की मिट्टी घर एवं परिवेश से प्रेम को शान्ता के द्वारा प्रस्तुत किया गया था। सन्तो की बड़ी दादी, बड़ी अम्मा यहां तक कि देश के प्रति स्वामी भक्ति की भावना नजर आती है। सन्तो जो अपने गांव से बहुत प्रेम करती है जिस समय वह अपने पिता जसवन्त के साथ रेलवे महकमे में जाने के लिए तैयार होती है। तब गांव के सीमा तक जसवंत के बापू दोनो को छोडने आते है और उस समय सन्तो के दिल में अपने गांव को छोडने के दु:ख को उपन्यासकार कुछ इस प्रकार व्यक्त करते हुए कहते है - सन्तो ने आंसू भरी ऑखो से अपने गॉव को छूटते हुए देखा - पके खेत और जगह जगह छोटे-छोटे खलिहान। दायें चलती हुई हवा में वही बगुले उड़ते हुए। इकौआ की बोड़ियां हमेशा की तरह फटती हुई और उसमें से बुढिया के बाल उडाते हुए। चिलचिलाती धूप में लहलहाता हुआ जवासा ... कटैया के खिले हुए पीले फूल और झरबेरी की झाडियों में उलझा कांपता हुआ मकडी का झिलमिल जाला .... धूल से भरा। जहॉ तहॉ मटमैली पंक्तियों के बीच लाल मोतियों की तरह लगे हुए झरबेरी के सूखे बेर। दूर पर छूटता हुआ शिव मंदिर। फ

टी हुई पताका और गर्म हवा के झकोरो से कापता शिव जी का त्रिसूल .... नीम, शीशम और इमली के पेड़ .... आमो से लदे बगीचे .... अनकटी सरसो की बजती हुई बालियां जैसे हवा बज रही हो .... । पेड़ो की छाया में हांफ ते कुत्ते ... सीप की तरह उड़ती शीशम की पत्तियां । सन्तो पता नहीं कहां खो गई थी । बडी दादी के बोरसी में सुलगते कण्डों की महक और भुनती शकरकन्दी और आलुओं की महक –और फिर उस मटमैली दोहर की महक । x x x ऑसू भरी ऑखो से उसने गांव की ओर देखा था ।'' (96) शान्ता जब शुरू–शुरू मे आई थी तब उसे बहुत सूना सूना लगता था । तब उसे अपने गॉव की याद आती है वह बड़ी दादी की काहानियों को याद करती है । जब वह गॉव के बाहर आई थी और जसवन्त ने नहर चलने के लिये पूंछा था और तब सन्तो ने मना कर दिया था उस समय गॉव से दूर जाने के कारण उसके मन में एक हूक सी उठती है – अब गॉव आना होगा या नहीं ? बडी अम्मा और बड़े बापू से मिलना होगा भी या नही .... इन रास्तो को, इकौआ ओर झरबेरी की झाड़ियों को दुबारा कभी देख भी पाएगी या नही .... । अगली किसी गर्मी में गोबर लिपी तिदरी में ठडंक में बैठ भी पाएगी या नही .... ।'' (97)

सन्तो गॉव से चली तो आती है लेकिन उसका अपने गॉव के प्रति एवं गॉव के लोगो के साथ –साथ जानवरों के दुख दर्द की बाते याद करती रहती है । उपन्याकार उसके इस प्रेम को लिखते है – बड़ी दादी जब कहानी सुनाती थी तब लगातार हामी भरवाती जाती थी । सन्तो 'हू' नहीं भरती थी तो वह झकझोर कर जगाती थी – सो गई क्या ? x x x कभी कभार गॉव से कोई आदमी आता तो बड़ी अम्मा की खबर आ जाती । फसल पर बड़ी अम्मा चने का साग, गन्ने का रस, सिघाडे का आटा, सन के फूल या दरारी की कोसी भिजवा देती । गुड़ सत्तू और खटाई आ जाती । x x x गॉव वाले घर से दुःख सुख का लेना देना खत्म सा हो गया ।'' (98) सन्तो को अपने घर के किवाड़, दीवार और ओस तक की याद सताती थी – गॉव से इतना ही संबंध रह गया था और यहॉ सब न जाने कैसा पराया सा लगता है, अन्धेरे में दीवार, किवाड भी तो नहीं पहचाने जाते .... और फिर इस गुमटी के किवाड़ भी तो बड़ी जोर से हाथ पर मारते है । इन किवाड़ो में वह घर वाली बात ही नहीं । गॉव के घर की मोटी कच्ची दीवारे तो जाड़े में गरम रहती थी और गर्मी में ठण्डी पर गुमटी की दीवारे तो उल्टी ही है – जाड़े में ओले की तरह ठण्डी और गर्मी में भट्टी की तरह गरम । यह कैसा घर है ? वहा घर में ओस गिरती थी .... यहां तो कोयले का भूरा गिरता है ।''(99) किसी भी तरह सन्तो अपने गांव को नहीं भुला पाती है । हर पल यहां तक कि ससुराल में भी वो सारे पत्थर, कुऑ घर की ईटे, पेड़ देखकर उसे गॉव की याद आती है और वहॉ की सारी चीजे उसे पहचानी सी लगती है ।

बहु के रूप में -

विदित है कि यह उपन्यास सामाजिक परिवेश को लिए हुए एवं अंग्रेजो के प्रति घर घर में हिकारत भरी हुई थी और प्रत्येक घर स्वाभिमान एवं देश भक्ति के जज्बातो से लैश था। उपन्यास में सन्तो सुबह बाला का सूचक है तो दोपहर ... प्रौढ़ शान्ता अपनी सभी जिम्मेदारियों को बाखूबी निभाती है फिर वह चाहे वह मायके की हो या फिर ससुराल की। भारतीय संस्कृति में विवाह एक ऐसा बन्धन है जिसमें पति के साथ - साथ उसके परिवार से स्त्री भावानात्मक मानसिक एवं सामाजिक रूप से जुड जाती है। शान्ता भांवरे लेने के पश्चात अपने श्वसुर का आर्शीवाद लेने जाती है और तब उसके श्वसुर उसे सुखी रहो सदा सौभाग्यवती रहो बेटी ! का आर्शीवाद देते हुए अपने परिवार में शामिल कर लेते है। जिस समय शान्ता प्रथम विदाई में जाती है और उसका क्रांतिकारी देवर नवीन वेश बदलकर उससे मिलने आती है और अचानक पुलिस के आने पर एवं नवीन का उससे पहले ही निकल जाने पर तब बारात के सभी लोगो ने एकाएक देखा था नई व्याही बहू शान्ता घुघट खोले सार्जेण्ट के सामने खडी थी।'' और सार्जेण्ट पर चीखी थी।''(100) इस बात से ही स्पष्ट हो जाता है कि शान्ता अपने ससुराल के प्रति कितनी समर्पित रहती है। एक बहू के रूप में शान्ता ने हमेशा सबका सम्मान किया था। पहली बार में ही जब उसकी पालकी मिर्जा साहब के यहॉ रूकी थी और बेगम साहिबा ने बहू की बलैया लेकर प्यार किया था तब शान्ता ने एक अच्छी बहू का परिचय देते हुए पालकी से उतर कर बेगम साहिबा के पैर छूने चाहे थे तो उन्होने उसे वही रोक लिया था। और आर्शीवाद दिया था तब शान्ता ने कहा था पैर छूती हूँ।

भारतीय परम्परा के अनुसार जब नई बहू घर आती है तो कुछ नेग दस्तूर भी होते है। और कुछ रस्मों के साथ वादे भी दिये लिये जाते है। जिस समय शान्ता ससुराल में नई बहू के रूप में आती है तो कुआं पूजा के समय दादी उससे कहती है - बहू ! तेरी सास कुए मे कूदने आई है। का पता बहू के राज में इज्जत आराम मिले न मिले .... अपनी सास को वचन दे बेटा ... कि इज्जत से रखेगी ... बुढ़ापे मे आराम देगी .... बड़े बूढ़ो का ख्याल रखेगी .... वैसे ही इस कुल को चलाएगी जैसे तेरीसास ने चलाया है ..... छोटों को प्यार करेगी, बड़ो का लिहाज.... और अन्नपूर्णा की तरह सबको खिला के खाएगी। .... दे बेटा ... सारे वचन सास को दे। कहते बताते हुए दादी ने प्यार से बहू के सिर पर हाथ फेरते हुए उसे अम्मा के चरणों में झुका दिया। और तब शान्ता एक कुशल बहू की तरह-शान्ता ने सास जी के पैर छूते हुए कहा-अम्मा जी .... वचन देती हूँ इस कुल में जो हुआ है वही हमेशा करूंगी।''(101) उपन्यासकार कमलेश्वर शान्ता जैसे पात्र को वर्तमान समाज के सामने एक उदाहरण के

समान प्रस्तुत करते है वर्तमान समाज में रिश्तों के विखराव का मुख्य कारण अनुभूतियो एवं सामीप्यता में कमी। शान्ता के माध्यम से उपन्यास कार ने नई नवेली दुल्हन की उन अनुभूतियों को व्यक्त करता है जिसके कारण उसे मायका एवं ससुराल का माहौल काफी कुछ मिलता जुलता लगता है और जीवन में आये बदलाव को व्यक्त करते हुए कथाकार ने लिखा है – शान्ता ने हाथ पैर ढीले करके थोडी आराम की सांस ली – अजीब सी नशीली थकान पूरे बदन पर छाई हुई थी गहनो और कपड़ो का इतना बोझ तो उसने कभी उठाया नही था।एक पल के लिए शान्ता ने पूरी ऑखे खोल के कमरे को देखा था और अचरज में पड़ी सोचती रह गई थी – यह सब कैसे एक ही दिन में अपना हो गया। पराया तो कुछ भी नहीं रह गया। एक ही दिन में वंश बदल गया और सब कुछ ऐसा लगने लगा जैसे सदियों से अपना हो। घर द्वार अपना लगने लगा .... कुँआ अपना हो गया .... आंगन की ईंटे पहचानी लगने लगी। अम्मा जी के पैरों में सीप से नाखून कितने सुन्दर लग रहे थे .... जो पैर छुते समय देखे थे बाबू जी की छड़ी के नीचे लगी पीतल की ठोकर कितनी अपनी लगी थी, जिसमें दूब के दो तिनके उलझे हुए थे। यहां भी वैसी ही चीटियां थी और उतने ही बडे चीटें।

x x x x x x x x x

यह इतना गाढ़ा अपना पन कैसे समा गया मन में। ये सारी आवाजे इतनी अपनी कैसे हो गई – पलक झपकते ही सारी ननदें उसी तरह वैसे हंसतीहै, जैसे वहां बहनें हंसती थी। हॅसी की आवाज में कोई फरक नहीं। सबके गहने उसी तरह खनखते है, सब सुहागिनों के पैरों में वैसा ही महावर है और यहॉ की नाइन चाची की अंगुली भी उसी तरह लाल है, जैसे घर में थी, जिसमे उन्होने सुहागिनों के महावर लगाया था और लोढ़े पर महावर की वही लकीरें सूख गई थी। लगता है यहॉ की इक्कीस या तेईस सुहागिने होगी सो बाइस या चौबीस करने के लिए लोढ़े को महावर लगाया होगा।

बच्चे भी उसी तरह रो रहे है। उसी तरह नाक सुड़क रहे है। उसी तरह डाट और प्यार पा रहे है। कमरे की दीवारे में भी उतनी ठण्डक है .... बाहर वैसा ही अंधेरा है, उसी रंग का। पेड़ में उसी तरह पखेरू बसेरा ले रहे है। घर में उसी तरह चूहे दौड़ रहे है ..... शान्ता न जाने कहां खो गई थी। क्या व्याह होते ही इतनी बड़ी और सुन्दर दुनिया मिल जाती है। यह शरीर फूल की तरह खिलने लगता है .... यही मन इतना बड़ा हो जाता...... अभी उनसे तो मिली भी नहीं है, बस देखा भर है .... ।''[102] सन्तो को बहू के रूप में पाकर ससुराल वाले भी बहुत खुश थे। बहू के आते ही हवेली का मुकदमा जीत जाने पर बाबू जी खुशी से कहते है – बहू के पैर घर में पड़ते ही सब कुछ अच्छा हुआ है। कथा का विकास क्रम बढ़ता गया और

शान्ता अपने ससुराल में पूर्ण रूप से खुश थी और जब शान्ता की ससुराल से पहली विदाई होकर मायके गई थी और नवीन के प्रकरण में अंग्रेज द्वारा धमकाये जाने पर जसवन्त (शन्तो के पिता) बिना किसी सूचना के उसे ससुराल ले गये थे और तब सारी बात को जानकर शान्ता के श्वसुर ने सबसे पूछने के बाद शान्ता से भी पूछा था – बहू ! तुम भी बता दो ? अब तुम इस घर की धुरी हो और नवीन तुम्हारा देवर होता है कभी वह हारा थका रात बिरात, भूखा प्यासा जान बचाता तुम्हारे घर की देहरी पर आ गया तो तुम उसे अपना मानोगी या नही ? और तब शान्ता की बहुत साफ गहरी आवाज आई थी – कोई कुछ कहे ... नवीन लाला जी हमेशा हमारे रहेंगे ...... इस घर के रहेंगे।'' (103) और तब बाबू जी ने शान्ता को कहा था कि तू मेरी बहू नही ..... तू मेरी लक्ष्मी बाई है। सम्पूर्ण उपन्यास की कथावस्तु में शान्ता एक समझदार और शालीन बहू के रूप में उपस्थित होकर आज की नई पीढ़ी को अपने ससुराल के प्रति समर्पित होने का सन्देश प्रस्तुत करती है।

पत्नी के रूप में –

शान्ता उपन्यास में प्रत्येक भूमिका को सफलता से निभाती है। सामाजिक बन्धानों में बंधी शान्ता अपने पत्नी धर्म को भी बाखूबी निभाती है लेकिन वह रूढिगत नारी भी नहीं बनती जो ऑख मूंदकर अपने पति का कहना मान जाए। शान्ता प्रारंभिक विवाह के पश्चात जब पहली बार नवीन के आने की आहट पाई थी वह घबरा गई थी। पहली बीती रात की सनसनाहट एक झोंके की तरह उसके सारे शरीर को झकझोरोती निकल गई। और सुबह-सुबह कही हुई उनकी (प्रवीन) की बात उसे याद आई। प्रवीन ने उससे कहा था – देखो .... नवीन अपनी जान पर खेलकर तुमसे मिलने आया था .... उसके मन में जरूर प्यार उमडा होगा .....। मैं तो सोच भी नहीं सकती थी कि वो इस तरह मिलने आएंगे। मजूं बीबी पास न होती तो मैं पहचान भी न पाती ..... यही क्या कम है कि वह आया .... नही तो चार बरस हो गये उसने घर का रास्ता नही देखा ..... अब शायद तुम्हारा मोह बांध सके ! मैं तो आपके बहाने ही सबसे बंधी हूॅ .... वह शायद फिर आए .... उससे ज्यादा मिलने और बात करने का मौका मिलेगा नहीं , लेकिन उसे किसी तरह रास्ते पर ले आओ – मुझे मेरा भाई मिल जाएगा तुम्हे तुम्हारा देवर।'' (104) कहते कहते प्रवीन मोम की तरह पिघलने लगे थें और शान्ता का मन भी गीला हो आया था।

प्रवीन शान्ता को प्रारंभ से ही नवीन को वापस लाने जैसी बड़ी जिम्मेदारियों से परखा था और पाया भी कि शान्ता एक अच्छी पत्नी के रूप में उभर कर आती है। विवाह के प्रारंभिक दिनों में पति का पत्नी की तरफ और पत्नी का पति की तरफ स्वभाविक रूझान

होता है। जब शान्ता पहली बार अपने मायके जा रही थी उस समय दोनो के मन में अलगाव होने की आशा से जो प्रेम उमड रहा था उसे उपन्यासकार ने कुछ इस प्रकार व्यक्त किया है – मायके चले जाने से पहले शान्ता को प्रवीन से मिल लेने का एक पल मिल गया। गहनों से लदी, महावर लगाए, चुनरी पहने शान्ता प्रवीन से चिपक गई – जल्दी से बुला लेना .... अब हमसे तुम्हारे बिनारहा नही जाएगा। उसकी ऑखों में ऑसू थे। तुम पाठशाला के पते पर चिट्ठी लिखना .... कहते हुए प्रवीन ने दो तीन लिफाफे उसके टीन वाले बक्से की जेब में कुण्डा खोल के रख दिये।[105] और फिर दोनो की समझ में नही आ रहा था कि कैसे एक दूसरे से विदा ले। पिता जी के यह कहने पर कि तू छोडने क्यों नहीं चला जाता। यह सुनकर प्रवीन के पंख लग गये थे वैसे भी वह कोई न कोई बहाना करके स्टेशन तक जाने वाला था।''[105] लेकिन उसके बावजूद खुद उसे स्टेशन भेज दिया था परिस्थितिवश आगे चलकर प्रवीन एवं शान्ता के बीच नवीन को लेकर हुई बहस को व्यक्त करते हुए कथाकार कहता है कि – देश के लिए कलंक हो ! शान्ता ने कह ही दिया था। शान्ता उन नारियों में से नही थी जोपति के द्वारा किये गये कार्यो को इच्छा अनिच्छा से स्वीकार कर प्रतिरोध न करे।

भाभी के रूप में –

शान्ता ने अपने सारे पदो को बहुत ही निष्ठा से निभाया है फिर वो चाहे बेटी के रूप में हो या फिर बहू के रूप में। भारतीय समाज में भाभी को माँ का दर्जा दिया जाता है और देवर को पुत्र का। नवीन और शान्ता का भी यही रिश्ता परिपक्व होता है। नवीन एक क्रान्तिकारी देवर है और वह शान्ता भाभी से बिना मिले नहीं रह पाता है और अपनी जान खेलकर भी खेलकर भी अपनी नवविवाहिता भाभी से मिलने आता है ऐसा मत कहिए लाला जो ..... x x x आप इतना खतरा उठाकर क्यों चले आये लालाजी । और नवीन के द्वारा भूख लगी है कहने पर शान्ता अपने आंचल से उसकी आंखे पोछकर उसके मुह में कौर रख देती है।

शान्ता विवाहित होकर अपने ससुराल जाती है और वहां ननंदे पल–पल में मजाक करती है लेकिन शान्ता धैर्यता के साथ सबका उत्तर देती है – इस तरह से लेखक ने एक मध्यवर्गीय परिवार में नवविवाहिता सन्तो और प्रवीन के प्रति पत्नी प्रेम को दर्शाते हुए एक सामाजिक बन्धनों की मर्यादा को बनाये रखते हुए मन में एक दूसरे के प्रति उत्पन्न प्रेम को उत्साह एवं क्षणिक अवसर प्राप्ति के द्वारा उत्पन्न एवं सुखातृप्ति किये गये दाम्पत्य प्रेम को दिखाया है।

यह उपन्यास भले ही अंग्रेज और क्रांतिकारियों के बीच संघर्ष का प्रतिफल दिखाता है लेकिन दूसरी तरफ सम्पूर्ण उपन्यास के आदि से अन्त तक सभी स्त्री पात्र को शोषित न

कर उसने मुन्ना को आवाज लगाई .... तभी देखा मुन्ना नही था। शान्ता एकदम घबरा गई .... मुन्ना ! बिजली की कौंध की तरह उसने सोचा – मुन्ना तो अभी पलट भी नहीं सकता .... खटिया से लुढक तो नहीं गया ! उसने घबराहट में नीचे देखा, इधर उधर हाथ मारे उसे पुकारा और एकदम घबरा कर चिल्ला उठी – मुन्ना ! .... अम्मा ! मेरा मुन्ना ..... मुन्ना .... तभी नवीन एकदम किवाड़ के पीछे से बाहर आ गया। तब शान्ता कहती है – हाय ! मैं तो एकदम डर गई थी ! शान्ता ने अपनी छाती पर हाथ रख के गहरी सांस ली थी।

सुशीला –

सुशीला रेगिस्तान उपन्यास की प्रमुख नायिका के रूप में प्रस्तुत होती है यद्यपि कहानी के वाह्य स्वरूप के नायक विश्वनाथ का विवाह सुशीला नहीं होता हैं बल्कि उसका विवाह विस्सु के चचेरे भाई के साथ हुआ था लेकिन सुशीला से केवल एक ही मुलाकात के द्वारा अपना अप्रतिम सौन्दर्य एवं स्वभाव सौन्दर्य का स्पष्ट दृश्य विश्वनाथ के सामने प्रस्तुत करती है और उसकी इस चचंलता एवं निश्छलता का ही परिणाम है कि विश्वनाथ अपने जीवन के अन्तिम क्षणों तक सुशीला को नहीं भुला सका और उसी के द्वारा विश्वनाथ को जीवन की कमी का आभास होता है। सुशीला जो कि अप्रतिम सौन्दर्य वाली सुशीला चचंलता से परिपूर्ण एवं स्त्रीत्व के अस्तित्व को जगाने में सक्षम नायिका है।

नारी सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति –

उपन्यास रेगिस्तान की नायिका सुशीला में सौन्दर्य रग रग में बसा है सौन्दर्य की परिभाषा में सुशीला विश्वनाथ के अवचेतन तथा चेतन अवस्था से मृत्यु तक छाप में बना था जब विश्वनाथ अपनी जिंदगी से तंग आकर रहता है तभी उसे सुशीला की याद आती है। जिसका रिश्ता शायद कभी विस्सु से जोडे जाने की बात हुई थी लेकिन विश्वनाथ के दादा द्वारा न बताये जाने पर अन्त में सुशीला का विवाह उसके दादा भाई के साथ करा दिया गया था। लेकिन जब विस्सु और बारात के दौरान ट्रेन में फ स्ट क्लास के डिब्बे में बैठे थे और तब विश्वनाथ ने पहली बार किसी नारी या कह दे सुशीला का सौन्दर्य देखकर मंत्रमुग्ध हो गया था। जिस समय ट्रेन में सुशीला ने बाल खोल लिए थे। खिडकी से आती हवा से वे धीरे धीरे उड रहे थे। और पूरे डिब्बे में उनकी महक भर गई थी और विश्वनाथ उन्हे मंत्र मुग्ध सा देख रहा था। स्त्री और पुरुष दोनो ही जीवन को सुखद बनाने में महत्व पूर्ण होते है हिन्दी प्रचार की भावना के उद्देश्य से विश्वानाथ शादी नही करता और जब वह पहली बार सुशीला भाभी को देखता है तब उसे स्त्री सौन्दर्य का बोध होता है लेखक ने किसी पुरूष के द्वारा स्त्री के

सौन्दर्य का वर्णन करते है – जिस समय सुशीला ट्रेन में विश्वनाथ के साथ बैठी होती है और दरवाजा ठीक से बन्द करने को कहती है और भी बीच–बीच मे वाते होने के साथ–साथ विश्वनाथ ने उसके सौन्दर्य को परखा था – घुंघरूओं की तरह उनकी हलंकी हॅसी। x x x सुशीला भाभी के लाल – लाल ओठो पर मुस्कुराहट फैल गई थी। ऑखो में कुछ था। पर अब होठो पर मुस्कुराहट नही थी। एक क्षण बाद वे उठी थी तो चूडियों की आवाज लहरों की तरह आई थी। कुछ गहने भी खनके थे ..... हलकी गहरी सांस की सरसराहट भी हुई थी। साड़ी का पल्ला भी सरक कर कुछ बोला था। पैरो में पडी पायल का एक घुंघरू भी बजा था ...(106) और जब सुशीला नि:संकोच विश्नाथ से हार का हुक खोलने के लिए कहती है तब नारी को छूते हुए रोमांच का वर्णन करते हुए उपन्यासकार कहता है – विश्वनाथ को उन्हे छूते हुए अजीब सा रोमांच हो आया था। गर्दन के उपर बंधा हुआ जूडा कस्तूरी की तरह महक रहा था। नरम पसीजी हुई गर्दन पर रेशमी रोये चिपके हुए थे। ब्लाउज की किनारी नहर के भीगे किनारे से लग रही थी। बगलों के पास पसीने से भीगा ब्लाउज का टुकडा छोटे से पानी भरे बादल की तरह छलक रहा था। खुली हुई आधी पीठ केले के पत्ते की तरह फैली थी। सब तरह से फूटती गंध से वह बेहाल हो गया था जैसे वह सके हुए गेहूं के खेल में उतर गया हो।''(107) युवा सौन्दर्य के रोमांच के साथ साथ लेखक एक सुन्दर युवती के वृद्धवस्था के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए लिखते है – आज भाभी की चूडिया भी नहीं खनकी थी। उनकी एक बाह में कांच की एक पुरानी चूडी पडी थी और उसी के साथ चांदी की दो चूडियां दूसरी बांह खाली थी। आज तो उनके शरीर में वह लहरियॉ भी नही पडी थी – ई की मात्रा की तरह कंसी हुई भौंहे भी गेहूँ की सूखी बाली की तरह छितरा गई थी। कस्तूरी की तरह कसा और महकता हुआ उनका जूडा। भी वर्तनी मांजने वाले जूने की तरह बदरंग और उलझा हुआ था। नहर के किनारे की तरह भीगी हुई ब्लाउज की किनारी भी आज गीली नहीं थी उम्र की नहर सूख गई थी।''(108)

सुशिक्षित नारी –

सुशीला इलाहाबाद जैसे नगरीय क्षेत्र में रहने वाली लडकी थी तथा उसके बोल चाल एवं कालीकट कोचीन के बारे में उत्सुकता से जानने से विस्सु को लगता है कि वह एक सुशिक्षित नारी भी है। उस समय वर्ग स्थिति को स्पष्ट करते हुए लेखककार कहता है – आप तो कालीकट कोचीन में थे। तो वहां की बोली जानते है ? तो वही की बोली में कुछ बात कीजिए।

रेगिस्तान की स्त्री पात्र सुशीला एक संक्षिप्त भूमिका लिए हुए भी सश्क्त पात्र के रूप में उपस्थित होती है ।

कथाकार कमलेश्वर की प्रमुख कहानियो के प्रमुख नारी पात्र

मालती -

सृष्टि की रचना मनु एवं श्रद्धा से मानी जाती है । और समाज की रचना भी इनके विकास का ही परिणाम है । जिस प्रकार सृष्टि कर्ता ने अपने बन्दों को प्रेम, सौर्न्दय एवं काम से परिपूरित किया ठीक उसी प्रकार उसने मनु के द्वारा ही प्रेम की ईर्ष्या एवं काम की अतृप्ति वासना को भी परिलक्षित किया जिसका परिणाम मनु अपने प्रेम (श्रद्धा) को अपने ही पुत्र के साथ चुम्बन, अलिङ्गन आदि क्रियाओं के द्वारा बटते हुए न देख सके एवं वासना की अतृप्ति लिए हुए इड़ा के पास जा पहुंचते है । ठीक उसी प्रकार कमलेश्वर ने समाज में रह रहें शिक्षित सभ्य एवं शादीशुदा होने के बावजूद ऐसे लोगो की धारणायें तथा उनकी काम अतृप्ति को प्रदर्शित किया है ।

नारी समाज का अभिन्न अंग तो है, लेकिन इस 20वीं 21वीं सदी में नारी को केवल उपभोग की दृष्टि से देखते है, उसके तन को लालायित दृष्टि से देखते है उसके संकोच को समर्पण मान बैठते हैं और उस पर अपना सर्वसिद्ध अधिकार मान लेते है ।

किसी लेखन का प्रभाव भले ही समाज को न प्रभावित कर पायें लेकिन वह लेखन आने वाले समय का भविष्य बना होता है । कहानी कार की इस कहानी में यह देखने को मिलता है कि नारी चाहे कितनी भी सम्बल हों, पुरूष हमेंशा उस को सहाराहीन समझता हैं । और अपने पुरूषत्व के बल पर दबाव एवं एकाधिकार बनाये रखना चाहता है । इस कहानी में कहानी कार ने बहुत ही सूक्ष्म दृष्टि से एक विवाहित मनुष्य के मन की नारी सौन्दयृ के प्रति अतृप्ति एवं ललक की झलक दिखलाता है । समय-समय पर उसकी धर्म पत्नी द्वारा भावनाओं को मापते हुए सचेत भी होती दिखाई पड़ती है । इसके साथ ही साथ कहीं कहीं पर दोनो नारियों के द्वारा एक ही पुरूष पर अपने-अपने अधिकारों एवं क्षोभो को प्रस्तुत करने का सफल प्रयास कमलेश्वर जी ने अपनी कहानियों में बड़े ही कुशलता से दिखाया है । इस कहानी में वह शादी शुदा व्यक्ति जो पत्नी सुख से रसानुभूति हो कर भी नारी देह सौन्दर्य की काम वासना अतृप्ति को धारण किये मालती के निगाहों में अपने प्रति वासना को देखना चाहता है । आज लगभग समाज में हर तरफ वासना का रूप नजर आजा है जिसे प्रेम का चोंगा पहनाकर समाज में प्रेम की मिसाल के रूप में खड़ा कर दिया है । पटना के प्रोफेसर मटुकनाथ

एवं छात्रा जूली का प्रेम प्रसंग एक जीता जागता उदाहरण है। कहानी में मुख्य दो नारी पात्र है –मालती और विजया। जिनके चारों तरफ सम्पूर्ण कहानी चक्कर काट रही है। प्रमुख पात्र मालती का चरित्र कुछ इस प्रकार से कहानी को रोमांचक बनाता है।

सौन्दर्य से परिपूर्ण–

कहानी की नायिका मालती सुशिक्षित होने के साथ–साथ सौन्दर्य से परिपूर्ण है। जिस समय वह श्री एवं श्री मती सत्यपाल के साथ शोक सभा में जाती है और वीरेश के साथ–साथ वहां जितने भी लोग है सबकी नजर उसके सौन्दर्य को देखकर टिक जाती है।

गोरा रंग, रेशमी लिबास, इकलौती चूड़ी और कलाई के बीच फंसा हुआ, दूधिया रूमाल, ऑखों में लम्बी काली रेखा, ओठो पर नेचुरल लिपस्टिक : रूज पाउडर से संवारा हुआ रूप ! बहुत संक्षिप्त बात और उससे भी संक्षिप्त मुस्कुराहट। [109]

सुशिक्षित एवं सभ्य–

कहानी की प्रमुख नायिका मालती जो कहानी में मि. सत्य पाल एवं मिसेज सत्यपाल के यहां मेहमान बन कर आती है और उनके उपलक्ष्य में कई छोटी–छोटी पार्टियों का आयोजन किया जाता है, एवं इसके साथ ही साथ वह उन दोनों के साथ शोक सभा में भी भाग ले लेती हैं। जिस समय वह श्री और श्री मती सत्यपाल के साथ शोकसभा में जाती है वहां वह वीरेश से भी मिलती हैं और तभी सर्वदानन्द जी द्वारा वीरेश से यह कहना कि–

"मालती अध्यापिका रह चुकी है न ?"[110] इसके साथ ही साथ वह वीरेश से साहित्य और समाज के बारे में भी बातचीत करती है और वीरेश से असहमत होता है और वीरेश का उस पर प्रत्यारोप कि "साहित्य की आलोचना करना आधुनिक फैशन हो गया है .... और आप खुद उसी फैशन परस्ती की मोहताज है।"[111] और मालती सुनकर अप्रतिभ हो कर भी चकित थी। वह सभी लोगों से सभ्यता से पेश आती है।

धैर्यवान नारी–

सभ्य एवं सौन्दर्य से परिपूर्ण होते हुये मालती कहानी में धैर्यता का परिचय देती है फिर वो चाहे वीरेश के प्रति हो या श्री सत्यपाल के प्रति। मिस्टर सत्यपाल को मालती से वीरेश का मिलना रास नहीं आता था। वह मालती को जब किसी और के साथ शालीनता से बात करते देखते है तो न जाने कैसी चोट लगती है उनको और यह सब सहन कर सकना बहुत मुश्किल हो जाता है और इस घुटन ने नाटक का रास्ता पकड़ा – "लगता है मालती, जिन्दगी वीरान हो गई .... हॅसता हूँ, ठहाके लगाता हूँ पर यह सब मेरा रूप है अगर इतना सब्र

न करूँ तो बीमार पड़ जाऊँ। कुछ भी हाथ नहीं आया। हम लेखकों से तो मामूली आदमी अच्छे हैं जो संतोष से जी रहें हैं। कभी दिल होता है अपनी बनाई सृष्टि को तोड़कर कहीं चला जाऊँ। एक मजदूर की जिन्दगी जीऊँ, मेहनत से लस्त होकर गिर पड़ूँ .... रातों नींद नही आती ......।" (112) और मालती की नारी जागृत एवं धैर्य होकर श्रोता की भाँति सुन रही थी। टूटते को संभाल सकने में नारी अपनी सृजन सार्थकता अनुभव करती है। यहां तक कि मालती मिस्टर सत्यपाल को देखती रह जाती है और सोचती – विजया क्यों नहीं समझ पाती इन के अर्न्तमन के दु:ख को। वहीं सहायता दे वही अधिकारी हैं : मालती इन सब स्थितियों में घिरे रहकर सांस लेने के बाद भी धैर्य की सीमा नही तोड़ी थी।

फूलों की प्रेमिका –

कहते है फूलों से मोहब्बत बढ़ती है फूलों से ही दोस्ती बढ़ती है और फूलों से ही सम्मान एवं मानव जीवन में प्रेम बढ़ता है। मालती को फूल बहुत पसन्द थे यह बात श्री मती सत्यपाल अच्छी तरह जानती थी। और इसलिए उन्होने मालती के आने से पहले सायबान से ले कर फाटक तक गमलों की कतार सजवाई और हर सम्भव जगह गुलदस्ते रख गये। विजया ने खुद गुलदस्तों का चुनाव करके कहा था – ये दो ड्राइंगरूम में, डेलिया वाला स्डटी में और स्वीट पी डाइनिंग टेबल पर। सफेद गुलाब मेरी ड्रेसिंग टेबिल पर ... ।'' (113) और मालती का कमरा तो फूलों से ही सजाया गया था यहाँ तक कि खिड़की की सलाखों में फूल के गुच्छे रिबन से बाध दिये गये थे।

मालती के चाहने वालों को भी पता था मालती किन फूलों को पसन्द करती थी और दोनो ने ही मि. सत्यपाल एवं वीरेश ने अपने अपने प्रेम एवं निकटस्तथा का बोध फूलों एसे ही कराया था। कहानी कार कमलेश्वर ने आधुनिकता के वे सारे प्रेम एवं लगाव को जिसके पीछे सिर्फ औपचारिकता है, दिखावा है, वासना की प्रतिमूर्ति को यर्थाथता को प्रतिबोध कराने के दृष्टिकोण से सामने ला रखा है। फूल जिन्हें प्रेम का प्रतीक माना जाता है जहां कहानीकार ने फूलों को प्रेम एवं अपनी कोमल संवेदनाओं एवं भावनाओं को व्यक्त करने का सशक्त माध्यम दिखाया है वही दूसरी तरफ आधुनिकता के स्वार्थ को दिखाते हुए उन्ही फूलों के माध्यम से विजया एवं मालती के बीच झूठी औपचारिकता का संचार मालती एवं मि. सत्यपाल के बीच झूठे काम एवं प्रेम की सौन्दर्यानुभूति के साथ–साथ दो अनजाने दिलों (मालती एवं वीरेश) का प्रेम एवं निकटस्तथा का बोध दिखाया है। दिखावे की दुनिया वर्तमान में कितनी सार्थक है यह कहानी के सम्पूर्ण पात्रों एवं उनके झूठे दिखावे जो कि फूल के माध्यम से एक दूसरे को व्यक्त किये जा रहे है निकटस्तथा एवं सानिध्य का बोध कराने की एक झूठी एवं प्रपंचना मात्र

है और यह बात स्वयं कथाकार मालती के द्वारा कहलवाते है – सचमुच फूलों का कोई शौकीन न था , वे उदासीन और असुन्दर हृदयों की कृत्रिम सुन्दरता, झूठे उल्लास और धोधी सौन्दर्य प्रियता के सबूत थे। जैसे जलजात के नीचे उथला जल और उसके नीचे मर्म में फैला हुआ पंक।''(114)

सुधा –

सुधा अधूरी कहानी की नायिका है इसका प्रेमी प्रोफेसर विमल है। जिसकी छात्रा सुधा है। इस प्रकार गुरू और छात्रा के बीच पनपे इस आर्दश वादी प्रेम कहानी में गुनाहों के देवता की एक हल्की सी झलक है। प्रोफेसर विमल विश्व विद्यालय में राजनीति का प्राध्यापक है। विमल और सुधा परस्पर प्रेम करते है किन्तु विमल का यह प्रेम 'प्लैटोनिक लव' की तरह है। जिसमें मन का इड भाग नायिका के देह को चाहता है तो उसका 'सुपर इगो' उसे ऐसा करने में नैतिकता का पाठ पढ़ाता है। इस प्रकार सुधा का विवाह हो जाता है और प्रोफेसर उसे पत्र लिखकर अपने नैराष्य को व्यक्त करता है क्योंकि बिना सुधा के वह शक्तिहीन हो जाता है।

कहानी कार ने सुधा के चरित्र का चित्रांकन विमल के इंटिरियर मोनोलॉग – अर्न्तविवाद के माध्यम से किया है। इसे हम 'इड' और 'इगो' का आन्तरिक संघर्ष भी कह सकते है। प्रेम की इस अधूरी कहानी में सुधा के चरित्र के निम्न पत्रों की झलक दिखाई देती है –

सुन्दरी –

सुधा के विवाहित रूप का चित्रांकन कहानीकार ने इस प्रकार किया है – ''इस समय सुधा अपनी शादी के पूरे लिवास और गहनों में सजी विवाह मण्डप में बैठी थी यूँ भी वह क काफी सुन्दर है किन्तु उस समय उसकी सुन्दरता आसाधारणा थी।(115)

प्रेमिका–

सुधा का सौन्दर्य वस्तु नहीं मूल्य था। वह एक दृष्टि थी। जिससे प्रो. विमल आकृष्ट हुआ यह आकर्षण भाव दैहिक आकर्षण था जिसमें विमल का गुरूपन या शिक्षक भाव व्यवधान था। सुधा सौंदर्य को प्रेम से जोड़कर काम से रहित बनाकर विमल को एक नई दृष्टि देती है। वह विमल से कहती है – 'विमल मेरी शादी की चर्चा तुम क्यों करते हो मेरे पास किसी को देने के लिए अब शेष ही क्या है शादी यदि शरीर का व्यापार मात्र है तो उस सम्बन्ध में मैं कुछ नहीं कहना चाहती किन्तु इसका सम्बन्ध यदि हृदय प्रेम स्नेह और सहयोग की भावना से भी है तो तुम इतना क्यों नहीं समझते कि अब किसी अन्य पुरुष को ये सब देने की

स्थिति में मैं नहीं हूं।'' (116) वे दोनो एक साथ रहते मित्रता की सीमा पार कर एक दूसरे को अपने को समर्पित कर चुके थे दोनो अच्छी तरह समझते थे कि एक के आभाव में दूसरे का जीवन अधूरा रह जायेगा। प्रेम इस दशा तक कार्मिक हो उठती जब कि सुधा को सामाजिक मर्यादा की याद आती जहां नारी एक पुतली है उसका प्रेमी प्रेमिका के आंसू और सिसकन की गिनती नही करता अपितु दोने पत्तल और बैण्ड बाजों का हिसाब लगाता है सुधा कहती है - ''नारी पराधीन तो होती है चाहे जहां बैठा दी जाय बैठना ही पड़ेगा विमल ठीक ही तो कहते है चाहे खुशी से चाहे अनिच्छा से समाज की मर्यादा को तो स्वीकार करना ही होगा। ''(117)

वह अपनी विवश्ता भी जानती है और वह इसका कारण विमल को मानती है सुधा को भली प्रकार से ज्ञात है कि पुरूष समाज मे समर्थ माना जाता है सामाजिक रूढ़ियों एवं बेड़ियो को वह तोड़ सकता है। किन्तु नारी तो विवश है विवशता की इन बेड़ियों में विमल ने ही उसे बांधा है। वह कहती है - ''जीवन के रास्ते में इतनी दूर आगे बढ़कर लौटना हर आदमी के लिए कठिन होता है लेकिन यह बन्धन मैने तुम्हारी ही इच्छा से स्वीकार किया है तुम्हारे समाज का बन्धन हमारे उपर अधिक है। तुम पुरूष हो और किसी भी बन्धन को तोड़ने में समर्थ हो, किन्तु किसी स्त्री के पैरो में पड़ी तुम्हारे समाज की बेड़ियां उसके लाश के साथ टूटती है मैं तो यही समझती रही हूँ कि आज के चक्रव्यूह के रचयिता तुम्ही हो और तुम्हारे रचे चक्रव्यह में जा कर प्राण भी देना मेरा सौभाग्य भी होगा।'' (118)

तात्पर्य यह कि कमलेश्वर ने भावुक आर्दश वादी प्रेम के लिए विमल का चयन किया है तो प्रेमी के वचनों को हसकर दूसरा विवाह कर सुखी गृहस्थी या असफ ल दाम्पत्य की सम्भावनाओं के लिए सुधा का चयन किया है। क्योकि विवाह के समय नवयुवतियों के चेहरें में जो दीप्ति रागारूढ़ सौन्दर्य झलकता है उसका असाधारण उल्लास प्रेमी की पीड़ा को याद कर चेहरे को कलान्तिमय बना देता है। सुधा भी ऐसी ही अवसाद ग्रस्त प्रेमिका थी जिसकी प्रेम कहानी अधूरी रह गई थी। कहानी कार ने इस कहानी में सुधा के माध्यम से नारी प्रेम उसके मनोजगत की व्यवहारिक व्याख्या की है कि नारी का प्रथम प्रेम उसे यौवन जीवन स्मरण रहता है और नये परिवेश में सांमजस्य स्थापित करना उसके लिए बहुत कठिन हो जाता है। सुधा आदर्श वादी प्रेमिका तथा यर्थाथ वादी एवं व्यवहारिक पत्नी के रूप में चित्रित हुई है।

कुन्ती-

कुन्ती एक अश्शील कहानी की नायिका या मुख्य पात्र है। वह विवाहिता है। उसके घर

के सामने रहने वाला युवक चन्द्रनाथ उसके सौन्दर्य से आकृष्ट है। चन्द्रनाथ का मित्र उसे रोकता और टोकता है कि इस प्रकार का आकर्षण उचित नही है। कहानीकार ने कुन्ती के सौन्दर्य, देहयष्टि उसकी आत्म मुग्धता का मांनसिक विश्लेषण कर सौन्दर्य के प्रति एक नयी दृष्टि दी है। कभी कभी कुरूपता या विरूपता में एक विचित्र आकर्षण दिखाई पड़ता है क्योंकि चिदृष्टा को उस नग्नता में सुन्दरता दिखाई देती है। जिस युग में वाह्य एवं अन्र्त जगत के सभी प्रतिमानों में चिन्तन में विवाद उत्पन्न हो रहा था जैसे लगातार कुछ दिन तक मीठा ही मीठा खाते-खाते उसके प्रति अरूचि हो जाती है और खाने वाला अन्य कटुत्तीय कषाय की ओर आसक्त हो जाता है उसी प्रकार कोमल मांसल सुन्दर चीज देखते देखते व्यक्ति की दृष्टि में उसके प्रति विकर्षण पैदा हो जाता है और वह विरूपता को भी सौन्दर्य मान बैठता है।

प्रस्तुत कहानी में आवरण से युक्त कुन्ती चन्द्रनाथ को सुन्दरी लगती है किन्तु लगातार उसके इसी रूप को देखते देखते पतिक्षण घर से निकाली जाने वाली कुन्ती के अनावृत सौन्दर्य को देखकर चन्द्रनाथ को एक नया अनुभव होता है सौन्दर्य और काम के प्रति इसी दृष्टि भेद को कहानी कार ने कुन्ती के माध्यम से व्यक्त किया है। चन्द्रनाथ कुन्ती की ओर आकृष्ट होता है और उसे देखता भी रहता है। उससे मिलने की कल्पना भी करता लेकिन जब उसका कुन्ती से साक्षात्कार होता है तो वह उसके अनावृत सौन्दर्य को ही देख हतप्रद हो जाता है यहां कुन्ती के सौन्दर्य के कुछ पक्षों की झलक प्रस्तुत की जा रही है।

वाह्य सौन्दर्य –

चन्द्रनाथ के सामने रहने वाली कुन्ती के विषय में चन्द्रनाथ अपने मित्र से कहता है – ''आप सिर्फ इतना जान लीजिए की कुन्ती की उम्र लगभग तीस है, रंग गोरा ही नहीं उसके गोरेपन में रेशम सी आभा है। आँखों की पुतलियां बेहद काली है और आँखों के सिरे भूरे।'' [119] चन्द्रनाथ कुन्ती के अप्रतिम सौन्दर्य को विभिन्न कोणों से देखने का अभिलासी है और कुन्ती में अपने सैन्दर्य के प्रति जागरूक है। काम और सौन्दर्य के सैद्धांतिक चर्चा हम बाद में करेंगे पहले रूप गर्विता कुन्ती के सौन्दर्य की झलक प्रस्तुत करना अधिक समीचीन प्रतीत होता है।

रूप गर्वीता–

काम शास्त्र और नाट्य शास्त्र में नायिकाओं के अनेक भेद किये गये है। जिसमें से परिकीया नायिका का सौन्दर्यानुभूति की दृष्टि से रूप गर्विता भेद कहा गया है। जो नायिका अपनी देहयष्टि क्रान्ति के प्रति सजग और मोहित है, उसे रूप गर्विता नायिका कहा जाता है। कुन्ती ऐसे ही रूप गर्विता नायिका है। स्नान गृह में कुन्ती के इस रूप की एक झलक

चन्द्रनाथ ने देखी जिसका चित्रण कहानीकार ने इस प्रकार किया है –''हर रोज नहाने के बाद वह अधिक आत्मलीन दिखाई पड़ती जैसे वह अपने शरीर के रोम रोम में पानी देती है और प्रतिदिन उत्सुकता से अपने विकास को निहारती हो। बड़े ही हल्के हाथ से वह शरीर पोछती, तन के एक – एक अंग को सहेज सहेज कर रखती X X X श्रृंगार मेज पर खड़ी होकर वह सारे शरीर पर पाउडर छिड़कती और एक एक मोड़ को ध्यान से देखती। कपड़ पहनते ही उसकी यह तन्मयता समाप्त हो जाती वह एकदम कोई दूसरी औरत हो जाती। कभी–कभी सीसे के सामने खडे होकर बाल सवारते हुए तीन चार बालों को पकड़कर उनमें से एक तोड़कर पल भर देखती और फेक देती है। ''(120)

कहानीकार ने यहां स्वकीया नायिका के मुग्धा एवं आत्मलीना या रूपगर्वीता रूप का चित्रांकन कर रूप को संवारने और संजाने में नारी की ललक एवं क्रिया विदग्धा नायिका के रूप में प्रस्तुत किया है।

कहानीकार ने चन्द्रनाथ के माध्यम से स्त्री विषय सौन्दर्य दृष्टि का सैद्धांतिक विवेचन प्रस्तुत कहानी में किया है। यह एक पुरातन विवाद है कि सौन्दर्य क्या है वह कहां रहता है किस सीमा तक सौन्दर्य शील या अश्शील कहलायेगा। चन्द्रनाथ कहता है कि – ''स्त्रियों के सामने कौन सा आदर्श होता है जिसके लिये वे जीती है। इनके लिए वासना एवं ऐश्वर्य सब कुछ है। कहानीकार के शब्दों में – ''अभी आपने औरत की भूखी आँखे देखी नही है, एक बार देख लीजिए तो पसीना छूट जायेगा।

इनका यह श्रृंगार उसी भूख की खामोश आवाज है। आखिर इस बनने ठनने का क्या मतलब है। ये औरते सिर्फ आदमी के लिए बनती सवंरती है क्या जरूरत है कि आप सज सवर कर शाम को ही निकले और ऐसी जगहों में आये जहां हजार निगाहें हो। इन्हें वेवक्त जा कर घरों में देखिये – ''मसली हुई साढ़ियां फीके होठ और रूखे बाल, सौन्दर्य प्रियता का यह मतलब नही कि शाम चार बजे आपका वह जुनून जागे।'' (121)

कहानीकार ने विसन पात्र के माध्यम से सौन्दर्य के एक दूसरे पक्ष को प्रस्तुत किया है। विसन कहता है, जो चार बजे से मेकअप करते करते शाम को छः बजे तैयार होकर निकलती है इनके प्रति श्रद्धा तब हो जब हम इन्हें खेतों में काम करते देखें इंजनों को चलाते देखे, फैक्ट्री में खटते देखे, बिजली घरों में पसीना बहाते देखें, हम इन्हें काम में मसगूल देखें, रगे हुए नाखुन पुते हुए हाथ, खुले हुए पेट और आँख में काजल की लकीरें इस बात का भूलावा है कि इन्हें श्रद्धा की नही सिर्फ वासना की नजर से देखें।'' (122)

इसी पृष्ठ भूमि में एक प्रश्न और उभर कर सामने आता है सौन्दर्य, काम और नैतिकता चन्द्रनाथ कहता है कि नैतिकता या सहज सयंम व्यक्ति के हाथो के बाहर है सामाजिक और वैयक्तिक आचरण के स्तर आदमी ने समाज के संदर्भ में बनाये है सभी नैतिकताओं का जन्म समाज में हुआ है। नैतिकता की भावना समाज ने ही दी है। व्यक्ति में घोर अनैतिकता ही वस्तु जीवन के सब अच्छे मूल्य है। जिनमे नैतिकता भी एक है। समाज में जन्म लेते ही समूह के बोध के साथ ही अच्छी जिंदगी के नियम बनाये गये। उन नियमों का उपयोग भी समूह में ही है। नैतिकता आदमी की अपनी चीज है। समाज से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। आदमी नैतिक या अनैतिक होता है, पतित या महान होता है समाज नही काम एवं सौन्दर्य के क्षेत्र में यह दूसरा पक्ष है।

स्वाभिमानी-

कुन्ती एक भारतीय पत्नी होने के साथ-साथ एक स्वाभिमानी नारी के रूप में भी उपस्थित होती है। अपने से कही ज्यादा बड़ी उम्र के पति के साथ रहते हुए दाम्पत्य जीवन खुशहाल न हाने पर भी कुन्ती शान्त रहती है लेकिन एक दिन अचानक सब कुछ शान्त रहता है और फिर कुन्ती का पति उसे घसीटते हुए घर से बाहर लाता है और उसे गालियाँ देते हुए उसे अपने घर से निकल जाने को कहता है कुन्ती के अन्दर स्वाभिमानी नारी जाग जाती है और वह अपनी इज्जत की परवाह न करते हुए उसको, उसके द्वारा दी गई साडी भी उसे दे देती है।''

चन्दू की पत्नी :(जन्म)

नारी जीवन त्याग समर्पण प्रेम संवेदना सभी का द्योतक होती है फिर नारी ही नारी का कटाछ क्यों माना जाता है। संपूर्ण कहानी में कहानीकार अधिक जनसंख्या वाले परिवार का चित्रण किया है। जिसमें बच्चे माँ बाप तथा सास श्वसुर है। इस महंगाई के बढते जमाने में बढती हुई जनसंख्या पर चिन्ता नजर आती है और यह कटाछ एक सास के द्वारा बहु को इतनी अधिक मात्रा में दी जाती है कि वह अपने सातवें बच्चे के जन्म को लेकर बहुत अपमानित सा महसूस करती है। सास के द्वारा बार-बार लड़की होने के लक्षण बताये जाने पर तथा उसकी वेदना को उपेक्षित किया जाता है। यहां तक पति भी चिन्तित नजर आने लगता है और उसकी भी अपने होने वाले बच्चे के प्रति उदासीनता नजर आती है। तभी चन्दू की पत्नी को अपने पहले बच्चे के जन्म कोलेकर हुई तैयारियों, खुशियां एवं प्रेम याद

आता है। सातवें बच्चे की खबर सुनकर चन्दू की माँ के चेहरें पर स्याही पुत गई थी और दादी ने जहर भरा तीर मारा था।

'' अब यह सब अच्छा नही लगता। रोज पेट पकड़े पड़ी रहती है। घर में बच्चे समझदार हो गये, पर इन्हें शरम नही आती है। ''

और उस पीड़ा भरे व्यंग शब्दों के बीच शरम नाम के शब्द से चन्दू की पत्नी को वो दिन याद आ गये थे जब वह अपने पहले बच्चे को जन्म देने वाली थी। वह याद करती है –

''शरम तो उसे सचमुच पहले बच्चे के जन्म पर आयी थी जब मुहल्ले भर की औरतों के सामने उसकी गोद में नारियल मरवाने और बताशे डाले गये थे .....आर्शीवाद की वर्षा हुई थी दूधों नहाओं पूतो फलो ! .... तब दादी को शरम नही लगी थी हुलस – हुलस कर कहा करती थी, ''भगवान ने यह साध भी पूरी कर दी बहिनों ! पोते–पोतियों के सुख से बड़ा और कौन सा सुख है .... इसी दिन के लिए आदमी जिन्दगी भर का ठाठ खड़ा करता है ! और बाबा ने दरवाजे पर शहनाई बैठाई थी ...... वह फलवती हुई थी ..... रातों में उसने फलों से लदे वृक्षों के सपने देखी थी और एक चांद सी रोशनी नीले आकाश से उतर कर उसके गर्भ में समा गई थी जरा सी आह पर दादी दौड़ती थी '' बहू तू बैठ। मैं सब कर लूंगी। अरे पानी से भरी बाल्टी मत उठा बेटा ! धीरे धीरे उतर सीढ़ियां। संभाल के चल, धीरे–धीरे उतर सीढ़ियां संभाल के चल बेटा। ''(123)

यहां तक कि उसका पति चन्दू भी उन सब की आँख बचाकर उसे भीतर कमरें में पकड़ ले जाता है, आँखों में स्नेह भरकर पूछता था '' डर तो नहीं लगता। '' और वह चन्दू के कन्धे पर सिर रखकर डरी हुई हिरनी की तरह कापती थी। उसके श्वसुर भी उसकी बहुत चिंता करते थे और आँखों से ओझल होते ही कहते, ''देखे बूहूं कहां शायद अंधेरे कमरे में लेटी हैं ...... एक लालटेन तो रख आ।'' और दादी उसके कमरे में लालटेन रखकर उसे सन्तवना से हाथ फेरकर कहती थी '' घबरा मत बेटा। इस तरह अंधेरे में मत लेटा कर। कहीं खौफ समा गया तो ....। '' (124)

कमलेश्वर जी ने नारी के जीवन के बदलते अवमूल्यों को बहुत ही महीन तरीके से तरासा है। आपने नारी जीवन के बदलते पात्रों को बड़े परिवार के बीच में दमन होते दिखाया है। आज भी हर 3 मिनट में भ्रूण हत्या होती है और उस भ्रूण हत्या में लड़की ही होती है।

छह बच्चों को जन्म देने तथा उनमें लड़कियों की अधिकता को देखकर का मन व्यथित हो जाता है और पहले बच्चे की तुलना में सांतवे बच्चे की बारी में उसे हर तरह से ताना दिये

जाते है। उसकी सास उसे बात–बात पर कोसती थी और दादी ने अपने पति (श्वसुर) से बड़े चिरध्यात्मक स्वर में बताया था – ''मै कहती हूँ, लड़की होगी ! तुम चाहे देख लेना। ''

और चुन्दू की पत्नी के वे सभी सुख जो उसने पहले बच्चे की बारी में सुख भोगी थी ठीक उसके विपरीत सभी का व्यवहार हो गया था और वह इस बच्चे को जन्म देने में अपमानित सा महसूस कर रही थी और सभी दर्द वो अंधेरे में छिपकर सहन कर लेती थी। लेकिन प्रसव समय में जब लड़का पैदा हुआ तभी सभी के चेहरों में खुशी की लहर दौड़ आयी। और सब कुछ बदल गया वे कराहें खुशियों की आहों में बदल गयी। कुशल कहानी कार कमलेश्वर जी ने इस छोटी से कहानी के माध्यम से समाज में व्याप्त लड़के एवं लड़की के प्रति बदलती खुशियों को दर्शाने का प्रयास किया है।

शान्ता : (मेरी प्रेमिका)

शान्ता कमलेश्वर द्वारा रचित 'मेरी प्रेमिका' पात्र है। मनु भण्डारी के शब्दों में कवयित्री की अपेक्षा नारी कथाकार के साथ यह कठिनाई और भी बढ़ जाती है कि उसे बिना लाक्षणिक भाषा का सहारा लिये अधिक खुल कर सामने आना पड़ता है। वह घिसे पिटे कथानकों का भाव धरातलों को ही लेती रहे तब तक तो ठीक है लेकिन जहां जीवन और जगत के व्यापक क्षेत्रों को छूने का साहस उसने दिया कि प्रत्यक्ष और परोक्ष वर्जनाएं उसकी ओर उंगली उठाती सामने आ खड़ी होती है।''

कमलेश्वर की कहानियों के पात्र अधिकाशत : प्रेम करने वाले या उसी रोमैण्टिक जहानियत के अल्हड़ आर्दशवादी युवक है (जो कुछ कहानियों में प्रेम नही भी करते। और जब कहानी इन सपने देखने वाले नौजवानों के कोण से चलती है तब यथार्थ का चित्र रूमानियत से और भावनाओं का द्वन्द भावुकता से ढक जाता हैं।

मनु भण्डारी का यह कथन प्रख्यात कहानीकार कमलेशवर जी द्वारा लिखित कहानी मेरी प्रेमिका में यर्थाथ होता प्रतीत हो रहा है और जिस तरह से कमलेश्वर जी ने इस महानगर के भीड़ में सच्चे प्रेम की लालसा रखने वाली एवं उसमें असफल होकर भी जीवन के अग्रिम सांस तक सच्चे प्रेम की तलाश एवं जीने की चाह रखने वाली लड़की की शान्ता की कहानी लिखते हैं। कमलेश्वर जी ने प्रेम के जो आयाम प्रस्तुत किये है। तथा जिस ढंग से इस कहानी को सवांरा है, उसमें एक नारी के प्रेम का दिग्दर्शन होता है। जिसके मन में उददाम प्रेम की तलाश इतनी असीम होती है कि वह काम प्रेम से सम्बन्धित कहानीकार से प्यार करने लगती है और जीवन के उस मोड़ तक पहुंच जाती है जहां से लौटना मुश्किल हो जाता

है तथा सामाजिक अस्तित्व न मिलने पर भी उसे अपने प्रेम पर कभी भी कोई पछतावा नही होता है।

शान्ता एक रोमैण्टिक कहानियां एवं उपन्यास लिखने वाले लेखक को पढ़ते – पढ़ते एवं पत्र लिखते – लिखते प्यार कर बैठती है और जीवन में बहुत आगे भी निकल जाती है बाद में उसकी शादी की खबर सुनकर वह जड़वत हो जाती है लेकिन धीरे–धीरे वह समाज के अत्रियों का शिकार हो जाती है और सभी की नजर अपनी देह पर लगी देखकर आत्महत्या का नाटक करके गुम हो जाती है लेकिन जीवन के इन सभी दौरे में वह कहानी कार कमलेश्वर जी जुड़ी रहती है और कहानी के अन्त में वह कमलेश्वर के सामने उपस्थित होकर अपनी आत्महत्या का कारण स्पष्ट करते हुए दर्शन दे देती है और उसको देखकर कमलेश्वर को यह एहसास होता है कि वास्तव में इससे कोई भी कही भी प्यार कर सकता है। मैनपुरी के बेजान एवं छोटे से कस्बे में रहने वाले कमलेश्वर जी महानगरीय में होने वाले सभी प्रेम बन्धनों से अनस्यूत होते दिखाई दे रहे हैं। 1962 में मुम्बई में लिखि गई कहानी मेरी प्रेमिकां में लेखक संजीदा ढंग से एक ऐसी लड़की का चित्रण करते है जो केवल अपने पत्रों के माध्यम से और अपने खुलेपन व्यवहार से लेखक को इतना प्रभावित कर देती है कि लेखक उसे अपनी संगिनी मान लेता है और अपनी कहानी में वह स्वयं महसूस करता है कि, ''वह मुझसे दूर नहीं थी चौबीस घंटो में कुछ पल ऐसे अवश्य होते थे जब वह मेरे साथ रहती थी।''

कमलेश्वर ने अपनी कहानी नायिका शान्ता के माध्यम से प्रेम की अभिव्यंजना प्रस्तुत करने का प्रयास करते है और जीवन में अपने प्रेम की पूर्ण तृप्ति ले कर Enjoying every day your life की प्रेरणा को प्रदर्शित कर समाज में अपने प्रेम को खोने या पाने के बाद भी जीने की ललक पैदा करता है। दुष्यंत कुमार जी की दृष्टि में कथाकार कमलेश्वर के बारे में पता चलता है कि वह भी एक प्रेमी थे और एक प्रेमी ही प्रेम की अनुभूतियों को समझ सकता है। दुष्यंत जी ने अपने एक इटरंव्यू में बताया कि – ''अपने कालेज दिनों में कमलेश्वर कुछ–कुछ लिखा करते थे, खास तौर से एक डायरी। एक लड़की थी जिसके बारे में वह कभी–कभी बात भी किया करते थे और वह लड़की भी चाहती थी।'' (125) इससे स्पष्ट है कि कमलेश्वर के पास भी एक दिल और उन्होंने भी अपने इस दिल में किसी को बिठाया था। और शायद उसी की झलक उनके उपन्यासों एवं मेरी प्रेमिका जैसी कहानियों में देखने को मिल जाती है।

प्रेम के प्रतिरूप को समझने वाले प्रति रूप कमलेश्वर की यह कहानी भी नाम से ही यह प्रदर्शित कर देती है कि यह प्रेम की तृप्ति से परिपूर्ण है।

प्रेम के प्रतिफल का निदर्शन-

शान्ता जिसका सम्बन्ध लेखक से पत्रों के द्वारा बनता है और उन्ही पत्रों के माध्यम से शान्ता को पहचानने लगता है। कहानीकार की दृष्टि में शान्ता सामान्य लड़कियों से कुछ अलग भी है। वह लेखक के हर अहं से परिचित थी। उसने अपने पहले ही पत्र में सब कुछ साफ-साफ लिखकर अपने प्रेम प्रसंगो के बारे में सब कुछ खुल कर बता देती है। और वह कमलेश्वर से खुल कर अपने और प्रकाश के प्यार की हसीन पलों के साथ-साथ उन दुखद घटनाओं का जिक्र भी करती है। वह लेखक के अर्न्तमन को भलीभाँति समझती है और लेखक को इसकी झलक बार-बार वह अपने पत्रों के माध्यम से करा देती है।

कहानी में सौन्दर्य प्रेम एवं काम की अनुभूतियां-

कहानी नायिका के सौन्दर्य का पता हमें इसके पहले पत्र से ही आभास होने लगता है। या यों कहें कि प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर अपने सुन्दर होने की चाह होती है लेकिन व्यक्ति विशेष बहुत कम खुलकर अपनी सुन्दरता का बखान करते है लेकिन शान्ता बहुत ही खुली हुई रूप गर्विता युवती है और वह अपने पहले ही पल में यह स्वीकार करती है, '' मैं सचमुच सुन्दर हूं जब भी मैं अपने को देखती हूं तो लगता है कि मेरी ओर आकर्षित होने वाले गलती नहीं करते।''(126) शान्ता तन से खूबसूरत जरूर थी लेकिन सच्चा प्यार उसे नसीब नहीं हुआ था और समाज से अपने प्यार के कलंक को शान्त करने तथा शान्ति से जीवन जीने के लिये शान्ता ने आत्महत्या की अफवाह फैला दी थी और कहानी कार को हमेंशा यही खलता रहा कि काश वह शान्ता का सौन्दर्य देख पाता और कहानी के अन्त में जब शान्ता एक रात उसके यहां आती है और अपना परिचय बताती है और लेखक उसके सौन्दर्य को अपलक देखता रह गया था, '' सचमुच बहुत सुन्दर थी शान्ता, उसके चेहरे पर विषाद या पश्चाताप का कोई निशान नहीं था। भरपूर जिन्दगी जीने की चमक थी उस पर ऐसा लग रहा था जैसे वह अभी-अभी जवान हुई है।'' (127)

सन्तो-

कुशल कहानीकार कमलेश्वर ने अपनी यह कहानी अंग्रेजों के जमाने से सम्बन्धित है। इस कहानी में एक नई बस्ती का जन्म होता है। जहां प्रेम सौहार्द, ईमानदारी, इज्जत वो सब कुछ है जो एक सभ्य समाज में होना चाहिए लेकिन यह बस्ती में जहा हिन्दोस्तान की मर्यादा संस्कृति दीख पड़ती थी। भला अंग्रेजों की नजर से कब तक अछूती रहती और एक दिन वहां पुलिस चौकी तैनात होने का फरमान जारी हो गया। लोग कहते है कि उन्नति एवं

विकास से देश एवं जीवन बदल जाते है लेकिन यहां तो कुछ और ही मजूंर हो गया। यहां बड़े और छोटो के बीच से सम्मान खत्म हो गया दो प्रेमी का जीवन खत्म हो गया वो सामाजिकता राजनीति का स्वरूप ले लिया एवं सौहार्द दुश्मनी से बदल गई। इस छोटी सी कहानी के माध्यम से कमलेश्वर ने यह दर्शाने की कोशिश की। अंग्रेज तो चले गये लेकिन अपनी अंग्रेजी द्वेष, कटुता और चाटुकारिता भारतीय संस्कृति से मिला गये थे।

कहानी की उस बस्ती में कभी सन्तों और सरूपा जैसी प्रेमी रहते थे। जिनका मिलन तो नही हो पाया, लेकिन एक आदर्श प्रेम की अमिट परिभाषा छोड़ गये। और फिर से एक बार हमारा मन देवदास (संजय लीला भसांली) द्वारा लिखित जैसी फिल्म को सामने प्रस्तुत कर देता है। प्रेम दो अत्माओं का मिलन होता है न कि दो शरीर का। और यही प्रेम अमर होता है यह बात सन्तों ने अपनी जान देकर सिद्ध कर दिया था। एक सरूपा ने उस अथाह जमना के कक्षार में सन्तों को खोजते हुए अपनी सांसों को अवरूद्ध करके एवं उस दीवान की मौत करके।

सौन्दर्य से परिपूर्ण-

कहानी की नायिका सन्तों बहुत ही सुन्दर थी। अठारह साल की होते-होते उसे बस्ती के सबसे खूबसूरत नौजवान सरूपा से प्यार हो जाता है और सरूपा भी उसे मन ही मन चाहने लगता है। बात तो सिर्फ उसे एक ही खटकती रहती है वह है उसकी जाति। क्योंकि स्वरूपा और सन्तों दोनो ही अलग-अलग जाति के है और कहानी में कहानीकार ने यह स्वीकार किया है कि, ''सन्तों जैसी सुन्दर लड़की तो इस बस्ती में दूसरी हुई ही नहीं। दिन भर खिलखिलाती रहती थी और चारों ओर खुशी भी छायी रहती थी।''

सन्तो का प्रेमी सरूपा भी उसकी सुन्दरता पर फना था और एक दिन बातों ही बातों में सरूपा सन्तो के सुन्दरता का बखान ड्राइवर से कर देता है - ''मौजी लाल महाजन की सन्तो बड़ी सुन्दर है।''

आदर्श प्रेम की नायिका -

बदनाम बस्ती कहानी में सन्तो एक आदर्श प्रेम की डोर को लेकर चलती है। संपूर्ण कहानी में कहानीकार ने दोनो युगलों को कभी भी अधीर नहीं होने दिया और समाज में रहकर अपनी सामजिकता में ही रहकर उन दोनो ने प्यार किया। हाँ उन दोनो के बीच अपने -अपने प्रेम को व्यक्त करने के लिए छीटाकसी जरूर हो जाते थे और किलकारियों में सन्तो

के निरीह प्रेम की झलक झलक उठती थी। एक दिन सरूपा अपने प्रेम को ड्रावर के समक्ष रखता है और वह उस मधुर बातों को बताते हुए कहता, "मौजी महाजन की सन्तो बड़ी सुन्दर है। रोज जमना नहाने आती है। हम भी अपने ठोर उधर ही हांक ले जाते है.... एक दफा सनतों नहा रही थी कि हमने ढोरो को हुलकार दिया। तीन चार भैंसे जमना में उतर गई- ठीक वहीं, जहां सन्तो नहा रही थी बस फिर क्या था, आँखें तमकाकर सन्तो बोली, '' ये सरूपा अपनी भैंस हांक और सरूपा बोला था, '' नहीं हांकते। जानवर का भी नहाने का मन करता है।'' तो वह बोली थी, ''दुर्गा भवानी से यही मांगा है कि सरूपा के सब जानवर मर जाएं। इतना कहते-कहते वह खिलखिलाकर हंस पड़ी थी। ''

इन ठिठोलियों के बीच ही वे दोनो प्रेमी युगल अपने प्रेम का इजहार करते थे। इसके साथ ही साथ साथ दोनो का जमना कछार पर घण्टो बैठकर एक दूसरे का इंतजार करना उनके आदर्श प्रेम का सूचक है।

सामाजिक नारी-

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और वह समाज में प्रतिष्ठा एवं सम्मान से ही जीना चाहेगा। इसका बाखूबी उदाहरण कमलेश्वर ने अपनी इस छोटी किन्तु सार्थक कहानी के माध्यम से दिखाया है। प्रेम के बिगडते स्वरूप के बीच की ऐसी जीवन कहानी है जो आदर्श प्रेम का उन्नायक है ये कमलेश्वर की प्रतिभा शाली कौशल है जिन्होंने कहानी को सवांरा है। सन्तों सरूपा से बहुत प्यार करती थी लेकिन उसने यह प्यार केवल अपने तक ही सीमित रखा और गांव में भारतीय नारी के समान जीती रही। अंग्रेजी संस्कृति में प्यार हर सांस में बदलता है, लेकिन भारतीय संस्कृति में प्यार एक बार होताहै और प्रेमी प्रेमिका उसी के लिए जीते मरते है। बस्ती में पुलिस चौकी की स्थापना होने के बाद बस्ती में धीरे-धीरे अराजकता फैलने के साथ-साथ सरूपा एवं सन्तों के प्रेम की बाते भी फैल जाती है इसके साथ-साथ दबी जबान लोग कहने लगे थे कि दीवान जी की आँख भी संतो पर है। और फिर एक रात संतो का जमुना में डूबकर जान देने से तथा सरूपा के द्वारा दीवान की मौत करने से पता चलता है कि राम तेरी गंगा मैली हो गई। और संतो ने अपनी जान दे दी थी।

जाति पति का प्रभाव-

दो प्यार करने वालों का यह जमाना दुश्मन रहा है और विशेष रूप से समाज में जात पात आड़े आ जाती है। प्राचीन काल से ही हमारा सभ्य समाज जात पांत के बन्धनों में बंधा हुआ है और कई सुधारक ने इसे सुधारने का प्रयास भी किया है। लेकिन यह एक ऐसा रोग है

जो स्वस्थ्य समाज में बाधक होता है सन्तों सरूपा दोनो ही एक दूसरे से प्यार करते है लेकिन उनके आगे जाति पांत आड़े आ जाती है और जब सरूपा अपने प्रेम का बखान ड्राइवर से करता है तो ड्राइवर ने उससे पूछा था – "तो होगा क्या सरूपा ? वह तो तेरी जात विरादरी की भी नही है ।" अगर समाज में यह जाति पांत का बन्धन मिट जाये तो हर सन्तो जैसी लड़की को किसी और के कर्मों की सजा अपनी मौत से न चुकाना पड़ता और बुरी नियत का सामना करने से पहले वह अपने प्रेमी की हो चुकी होती ।

लिलि–

कहानीकार कमलेश्वर की कहानियों से यह एहसास होता है कि आधुनिक दौर में नारी पुरूष से पीछे नही है और घर के साथ–साथ सामाजिक सिखचों से बाहर निकलकर वह पुरूष से कन्धा से कन्धा मिलाकर चल रही है । पुरूष नारी के प्रेम में कितना मोहक हो जाता है और अपनी आदतों शौक को कैसे बदल लेता है । नाच कहानी शायद इसी का जीता जागता उदाहरण है । कि एक साधारण सी लड़की अपने चचंल अदाओं से किस प्रकार एक पुरूष को अपने वश में कर लेती है । इस कहानी में नायिका नायक के ऑफिस में स्टैनों का काम करने आती है पहली बार जब नायक चन्द्रकान्त ने उसके कपड़े सैडिंल एवं चेहरा देखकर तो उसे एक बार लगा कि शायद यह सफल स्टैनो न बन सकेगी लेकिन उसकी निगाहों से फूटते प्रेम के स्रोत को देखकर नायक उसमें हिलकोरें लेने लगता है और फिर एक दिन सब कुछ बदल गया ।

कहानीकार कमलेश्वर ने कहानी के माध्यम से महानगरों में चल रही इसी व्यथा को दर्शाने का प्रयास किया है कि किस प्रकार सीमित आय रखने वाले घरों की साधारण लड़कियों को अपनी बड़ी–बड़ी आकांक्षाओं की पूर्ति हेतु किस प्रकार से अपनी मोहक अदाओं से अपने दफ्तरों के मालिक या अपने से बड़े अफसरों को पटा लेती है । और जीवन के उन सभी स्वार्थों एवं आकांक्षाओं की पूर्ति कराती रहती है, कितनी चालाकी से वे औरते न तो उनके प्यार का इकरार ही करती है और न ही इन्कार, बस एक आदर्श प्रेम की भांति यह चलता रहता है । पैसा शायद ऐसी चीज ही होती है । आज इस विषय पर हमारे यहां कितनी फिल्में बन रही और लोगों को इस मूल व्यथा से परिचय भी उन्ही फिल्मों तथा कमलेश्वर के साथ–साथ अन्य कहानी कारों द्वारा लिखी गई कहानियों के माध्यम से सभी का ध्यान इस ओर केन्द्रित करने की कोशिश की जाती रही है । लेकिन जब बड़े महाऋषियों तक को अप्सराओं ने अपने प्रेम एवं सौन्दर्याकर्षण में फास लिया तो 21वीं सदी की अप्सरायें तो कयामत है और भला इनसे आज के प्रेम के भिक्षुक एवं ऋषि कहां बचेंगे ।

कहानी में प्रेम सौन्दर्य एवं सर्मपण-

नाच कहानी लव एट फर्स्ट साइट (Love at first Sight) है। कमलेश्वर जी ने छोटे से कस्बे से जा कर महानगरों में घटित होने वाले रोजमर्रे की जिन्दगी से लेकर नारी के दफ्तर तक में काम करने तक के पहलुओं में झांक कर अपनी कहानी लिख डाली। कहानी में चन्द्रकान्त ने अपना कारोबार शुरू किया और पैसे आते ही उसे एक सुन्दर सी स्टैनों रखने की सूझी क्योंकि एक सुन्दर स्मार्ट एक सफल विजनेस मैन की पहचान होती है। लिलि जो कहानी की मुख्य नायिका एवं प्रेमिका है, स्टैनों के पद का इटरव्यू देने आती है। वैसे तो चन्द्रकान्त को उसमें कोई खास बात नजर नही आती है। लेकिन नीचे से देखते-देखते जब उसकी नजरें लिलि की आँखो से चार होती है और उसकी निगाहों में जो प्यार फूट रहा था उसे चन्द्रकान्त नजर अन्दाज नही कर पाया था और चन्द्रकान्त ने मन ही मन कहा था, ''यह लड़की मेरी जिन्दगी में आ कर रहेगी ....'' और पूरी रात उसे रह रहकर उसकी वे प्यार भरी आँखे कचोटती रही थी। वह उसके प्रेम में पूर्ण रूप से रंग गया था। उसने लिलि का केबिन अपने ही कमरे में करवाया था और लिलि का शोखी एवं चुस्ती से काम करना फिर अपनी थकी हुई अंगुलियों को आपस में कसाकर खीचती और चन्द्रकान्त की ओर देखते हुए धीरे से मुस्करा देना ये सभी चीजे चन्द्रकान्त के प्रेम में अग्नि का काम कर देती थी।

धीरे धीरे लिलि ने ऑफिस खर्च से ही पूरे ऑफिस का हुलिया बदलने के साथ - साथ अपना भी बदल लिया था। काम से भरे दफ्तर में कमलेश्वर ने इन दोनो के प्रेम का चित्रण बहुत ही एक्सपर्ट की भांति किया है, उनके प्रेम की झलक कुछ इस प्रकार है -''कुछ ही दिनों में चन्द्रकान्त महसूस करने लगा था कि उसका डिक्टेशन लेना इतना जरूरी नहीं था जितना कि उसका मुस्कुराना और जब भी लिलि प्यार से मुस्कुराती और अपनी थकी हुई अंगुलियों को चटखाती तो बजर दबाकर चन्द्रकान्त चाय का आर्डर प्लेस कर देता था खुद पीने से पहले लिलि के सामने प्याला पेश करता है।''

चन्द्रकान्त जब उसके फर्स्ट साइट के (प्रथम दृश्य) के बारे में सोचता है तब वह उसके सौन्दर्य तथा पहनावे के बारे में इस प्रकार कहता है - '' जब लिलि पहली बार नौकरी के लिए उसके आफिस में आई थी। वह पर्दे वाले कपड़े का स्कर्ट पहने हुई थी। वैनिटी बैग का रंग उतरा हुआ था और सैडिल की ऊंची एड़ी तरबूज के डठंल की तरह भीतर घुसी हुई थी पुरानी सैंडिल पर नेकटाई जरूर बंधी हुठ थी तब उसके होंठो पर न ही लिपस्टिक की लाली थी और न ही चेहरे पर रूज पाउडर का लेप। कैमरे के स्टैंड की तरह लम्बी-लम्बी अंगुलियां थी और बैसाखी की तरह टांगे। लेकिन धीरे-धीरे ऑफिस के हुलिया के साथ साथ लिलि के

सौन्दर्य एवं पहनावें में अन्तर आ गया था। और उसके होंठों पर लाली छा गई थी पैरों में नई जूती आ गई थी रेशमी स्कर्ट और कमर के लिए बेल्ट आ गई थी। यह सब देखकर चन्द्रकान्त का दिल झूम उठा था और उसने खुद अपने पहनावे पर भी तब्दील ला दी थी। प्रेम में शायद ऐसा ही होता है।

प्रेम समर्पण की भावना लेकर चलता है और यही कमलेश्वर ने अपने इस कहानी में दर्शाया है। लेकिन अगर समर्पण दोनो तरफ से हो तो वह प्रेम मिसाल बन जाता है और एक तरफा समर्पण स्वार्थ।

'नाच' कहानी में सारा समर्पण चन्द्रकान्त की तरफ से ही होता है जिसमे निहायत ही प्रेम झलकता है। उसका लिलि के साथ होटल जाना और फिर पहनने की फरमाइस करना दूसरे से शादी कर लेने की इजाजत देना, उसके घरवालों की खातिर दारी करना और उनके आव भगत में पैसा पानी की तरह बहाना ये सब क्रियायें लिलि के प्रति चन्द्रकान्त के प्रेम का ही समर्पण है लेकिन लिलि के द्वारा उसके प्रेम का लाभ उठाने ताकि अपनी इच्छा पूर्ति करने के लिए उसके पैसों का इस्तेमाल करना यह सब प्यार का नाटक नही तो क्या है ? और कहानी के अन्त में यह उस नीले लिफाफे में प्रेम पत्र न मिलकर पार्टी के खर्चे का बिल होना एवं लिलि के हाथों का लिखा एक नोट – प्लीज अटैंड टू इज लिलि ! Please attend toit Lili ! व्यावसायिक पुरूष और कर्मचारी स्त्री में प्रेम का बाखूबी उदाहरण हैं।

कमला–

समसमायिक कहानी कार कमलेश्वर ने अपने लेखन के माध्यम से नई कहानी में चेतना लाने का सफल प्रयास किया। प्रेमिका एक ऐसी कहानी की सर्जना है जो कि आम आदमी के साथ घटित है। यह एक ऐसी प्रेम कहानी का रूप उपस्थित करता है जिसका न ही कोई भविष्य है और न ही कोई परिणति। कमला इस कहानी की प्रमुख नारी पात्र है।

वह वीरेन्द्र के पुराने पत्रों को सीने से लगाये सिसकती रही। कमलेश्वर जी ने इस छोटी सी कहानी को वर्तमान (आधुनिक युग) में प्रत्येक 14 से 21 साल तक के युवा वर्गों के द्वारा अपरिपक्व प्रेम के रसास्वादन की झलक दिखलाई पड़ती है। जिस समय कमल अपने प्रियतम को पत्र के द्वारा अपने प्रेम को चेत बनाये रखने के लिए उसे सचेत करती है। और प्रेम से भरे सम्बोधन लिखती है – ''मेरी हुस्न दुनिया के चमन राजा ! तस्लीमा किसी प्रेमिका का अपने प्रेमी के लिए यह सम्बोधन भाव विभोर कर देने वाला होता है। दसवीं कक्षा में पढ़ने वाली कमला के द्वारा बी.ए. में अध्ययनरत लड़के से प्रेम करना, घर से छुपाना एवं प्रेम का खुलासा होने पर कमला के द्वारा अपनी भावनाएं एवं संवेदनाओं का पत्रों के माध्यम से व्यक्त करना ये

सारी रचनाएं नितांत वैचारिक होते हुए की कहानी का स्वरूप प्राप्त कर एक नये रूप में उपस्थित होकर वर्तमान समाज में चल रहे अराजक तत्वों से एवं छिटपुटता का अंश लिये हुए एक अलग प्रकार के प्रेम अभिव्यंतना की है कहानी कार कमलेश्वर ने । कमला के भाई को कमला के प्रेम का पता अपने दोस्त रतन के द्वारा मालुम हो जाताहै और अपने प्रेम को खतरे में देखकर एक चतुर प्रेमिका की भांति कमला उसे बचाने के अथक प्रयास में तीन पत्रों के द्वारा बचाव करने का प्रयास करती है । पत्र लिखते समय कमला बहुत भाव विभोर हो उठती है -

'' आज मैं बहुत दुखी हूं मेरे राजा घरवालों को हमारे प्रेम का पता चल गया है । और अपने प्रेम को अटूट बताते हुए कहती है - '' वह चाहता है कि मैं इस हृदय में बसी हुई आपकी तस्वीर मिटा दूं । यह तो चिता पर ही होगा प्राणनाथ जब रोआ रोआ जल जायेगा तब दिल की बारी आयेगी ।

प्रेम की अभिव्यंजना

प्रेम सृष्टि का मूलाधार है पुरातन समय से माना जाता है कि प्रेम विरह की कसौटी पर ही खरा माना जाता है ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार कुन्दन को आग में तपाकर उसके सुनहरे पन की चमक बढ जाती है । प्रेम में जब तक विरह की घड़ी नही आती तब तक शायद प्रेम के अस्तित्व का ज्ञान नहीं होता । विरह में जल रही प्रेमिका जिस समय अपने प्रेमी को पत्र लिखती है उसके हृदयाकाश में सैकड़ों उमंगनाओं के बादल घुमडते है । और शायद कमला के बादलों को कमलेश्वर जी ने बहुत ही तल्लीनता के साथ पढ़ा है । और वह अपने पत्र में स्वीकार करती है कि मैं विरह की मारी करू भी क्या ? आपकी बातों के सहारे ही इस जीवन के दिन काट रही हूं । और इसी आग में जलते हुए वह अपने प्रेम को उलाहना भी दे डालती है - '' कैसे जीऊगी तुम्हारे बिना । सोचती हूं तो घण्टों रोती हूं पर तुम्हारी कठोरता को क्या कहूं । तुम इतने निर्दयी हो यह नहीं जानती थी आज शाम गली से क्यों नहीं गुजरे? मैं घण्टों सीखचों पर काम का बहाना लिए खड़ी रही पर आप नहीं निकले । जिस दिन तुम्हें नहीं देख पाती वह दिन और रात कैसे बीतती है, यह मैं ही जानती हूं पर तुम्हें क्या ? मैं मर भी जाऊ तब भी तुम्हें दु:ख नहीं होगा ।

सम्पूर्ण कहानी में कमला अपने प्रेम पत्र में एक शाश्वत प्रेमिका के रूप में उपस्थित है । वह मानती है कि यह समाज दो प्रेमियों का मिलन नहीं होने देता । ''हमारे प्रेम के दीपक को वह बुझाना चाहता है पर वह जलेगा ... । तकदीर बनी बन कर बिगड़ी दुनिया ने हमें बरबाद किया । '' और अच्छा विदा मेरे देव कहकर अपने करूण प्रेम पत्र का अन्त कर देती है ।

सौन्दर्य से परिपूर्ण–

नारी की कमनीयता कोमलता देह एवं अन्य साज सज्ज के साधन उसके सौन्दर्य में चार चांद लगा देंते है। युवावस्था की दहलीज पर कदम रखते ही नारी का सोन्दर्य सुकोमल पुष्प के समान खिल उठता है। कहानी की नायिका सोलह बरस की कमला अपने बालो में गोले का तेल डालती थी। माथे पर नेलपॉलिश की सुर्खी से बिन्दी बनाती थी। महीने में एक बार पेटीकोट बदलती थी। छोटे भाई बहनों के लिए काजल पूरती थी पर खुद इस्तेमाल करती थी। रोज धो धोकर बालों में रिबन बॉधती थी।

सुशील बहन–

मध्य परिवेश में पली बड़ी कमला प्रेम के पथ पर तो निकल पड़ती है लेकिन जब उसके बड़े भाई को अपने साथी रतन के माध्यम से अपनी छोटी बहन के प्रेम के बारे में पता चलता है तो वह एक जिम्मेदार पुरूष एवं भाई की तरह अपने फर्ज का निर्वाह करता है तो शब्दों में कहानी नायिका कमला भी पीछे नहीं हटती है।

जैसे ही कमला के बड़े भाई को कमला के प्रेम का संज्ञान होता है वह कमला को बुलाकर बहुत डाटा और कहा कि रतन कल शाम घर आया था और बता गया था कि वह वीरेन्द्र को छिप छिपाकर खत लिखती है। सुनकर कमला की आँखों में आंसू आ गये थे। रोते रोते उसने अपने भाई से कहा था कि यह एकदम झूठ है। लेकिन भारतीय संस्कृति की अमिट छाप किए हुए बड़े भाई से सामने न कह कर पत्र के माध्यम से वह अपनी बात कहने में समझाती दिखलाई है।

प्यारे दादा,

इतना बड़ा कलंक का टीका माथे पर लगाकर मैं कैसे जीऊंगी। जमीन फट जाती और मैं उसमें समा जाती या फिर मैं अभागिनी – जो अपने परिवार के लिए भार बन गई हूँ, कहीं डूब मरती। मेरे कारण घर बार बदनाम हो सकता है। X X X आपको मेरे सम्बन्ध में यह सब सुनना पड़ा। X X X आपको माथा झुकाना पड़े यह मैं अपनी इन आँखों से नहीं देख सकती। मैं आपकी बहन हूं X X X पर दादा, मैं सौगन्ध खाकर कहती हूं कि मैं जानती भी नहीं कि वीरेन्द्र कौन है। मैने पहली बार आपसे यह नाम सुना यह उस रतन की गढ़ी हुई बात है। वह खुद मुझसे तमाम तरह की बातें करता है मैं इस पवित्र लेखनी द्वारा वह सब आपको लिख भी नहीं सकती। स्कूल जाते वक्त वह मेरा रास्ता काटता और मुझे क्या–क्या इशारे करता है यह बताना बहुत मुश्किल है। आप खुद उसका आना जाना घर में रोक दें तो बहुत

अच्छा हो। X X X अभागिनी अगर मर भी गई तो आपके लिए दो बहने और है। X X X आपकी बहन आपकी इज्जत का हमेशा ध्यान रखेगी। दादा मेरी बात का विश्वास करना।

आपकी अभागिन किन्तु, आज्ञाकारिनी बहन ..(128)

निम्न लिखित सम्बोधन एवं पत्र में उमड़े हुए भावावेग शब्द एक भारतीय संस्कृति से परिपूर्ण कमला नजर आती है।

समाज से भय-

एक छोटे से कस्बे से निकल कर महानगर तक की यात्रा करने वाले कथाकार कमलेश्वर इस छोटी सी कहानी प्रेमिका के माध्यम से समाज में चल रहे छिटपुट प्रेम की भविष्य की परिणति से दूर प्रेम की अभिव्यंजना के साथ-साथ समाज को उपेक्षित नहीं किया है। कमला जो प्रमुख कहानी नायिका प्रेम के पपीहे के रूप में उपस्थित है कहा जाता है प्रेम के पंक्षी को किसी पिजड़े में नहीं बांधा जा सकता है लेकिन कमलेश्वर ने यहां समाज को परे नहीं किया है।

उपन्यासकार राजेन्द्र यादव के प्रमुख नारी पात्र

जया-

'उखड़े हुए लोग' राजेन्द्र यादव द्वारा कहानी शैली में लिखा गया उपन्यास है। कहानी शैली से तात्पर्य जिस प्रकार कथाकार कहानी का शीर्षक देकर कहानी लिखताहै। उपन्यास का प्रारंभ ही नायक एवं नायिका जया से होता है। जया अपने प्रत्येक बातों को शरद से बांटती है। एक सुशिक्षित एवं जागरूक महिला के साथ-साथ जया एक अध्यापिका रहती है। सामान्यत: हमारे समाज में कहीं न कहीं आज भी लड़की की चाह माता-पिता को नहीं होती है और हमारे मध्य वर्गीय परिवार में विशेष रूप से देखा जा सकता है। लड़की चाहें कितना भी पढ़ लिख ले अपने पैरों में खड़ी हो जाए लेकिन उसके विवाह एवं घर से बाहर रहने का लेखा जोखा आज भी मध्यवर्गीय परिवार की शाख बनी हुई है। उपन्यास की नायिका जया ट्रिपिकल मुंशी से विवाह नहीं करना चाहती है और शरद के साथ सात फेरों की रस्म को निभाये बिना पति पत्नी के समान रहते हुए दूसरे शहर देशबन्धु जैसे नेता के यहां काम के उद्देश्य से चले जाते है। यद्यपि रस्मों के बिना (अन्र्तजातीय विवाह)पर जया को सामाजिक स्तर पर कई जगह अपमानित भरे शब्दों को सुनना पडता है लेकिन शरद के सम्बलता देने पर जया भी संभल जाती है। कथानक के विकास में जया का सम्बन्ध देशबन्धु के यहां रहने वाली माया देवी एवं उसकी पुत्री पद्मा से होता है। एक दिन जब वह शरद के साथ कपिल के

यहां खाने पर जाती है और अपने और शरद के सम्बन्ध के विषय में उसकी पत्नी के द्वारा कहें गये शब्दों को सुनकर तमतमा जातीहै लेकिन शरद के द्वारा समझाने पर वह तटस्थ हो जाती है। वह शरद के साथ खुश रहती है। कथानक के अन्त में देशबन्धु के वास्तविक पाश्विक वृत्ति से जो उसने अपने बेटी समान पद्यमा से बलात्कार करने की कोशिश एवं पद्यमा के द्वारा खिड़की से कूद कर जान दे देने पर वह बहुत दुखी हो जाती है अन्तोगत्वा देशबन्धु की कोठी से जया भी शरद को ले कर चुपचाप चली जाती है।

प्रस्तुत उपन्यास में राजेन्द्र जी यह प्रश्न खड़ा करते है कि अपनी जड़ो से उखाड़कर जैसे पेड़ पनप नही पाता हराभरा नहीं हो पाता, मुरझा कर सूख जाता है, उसी प्रकार अपने समाज से उखडकर विद्रोहकर मनुष्य जहां भी जाएगा उसे सामाजिक विद्रोह का दण्ड अवश्य भोगना पडेगा। शरद एवं जया किसी सामाजिक रीतियों का पालन किये बिना एक साथ पति पत्नी बनकर अपने अपने घर से भाग जाते है, उन्हें देशबन्धु जैसे लोगों के यहां शरण तो मिलती है किन्तु देशबन्धु के वास्तविक पाश्विक वृत्ति से भयभीत जया पुन: भागने को विवश होते है। उपन्यास के आरंभ से अन्त तक जया के इर्द गिर्द घूमती है। संपूर्ण उपन्यास में जया के व्यक्तित्व को इस प्रकार स्पष्ट होता है।

काम प्रेम एवं सौन्दर्य-

जया एक सामान्य नारी है वह शरद से विवाह किसी कामुकता वश नही करती है। संपूर्ण उपन्यास में जया और शरद के बीच छिटपुट प्रेम एवं काम के मिले जुले संवाद देखने को मिलते है। आधुनिक युग की फैशन परस्ती से जया दूर एक सामान्य सौन्दर्य लिए उपस्थित होती है। राजेन्द्र यादव ने जया के सौन्दर्य का उल्लेख करते हुए लिखा है – ''जया क्रीम कलर का चैस्टर पहने थी कन्धे पर बैनिटी बैग था। दो लम्बी, चोटियों और हाथ में सिर्फ रिस्ट वाच पतला लम्बा चेहरा और खुलता गेहुंआ रंग और तीखे नक्श।[128]''

परिवार मनुष्य की प्रथम पाठशाला है और व्यक्ति के चरित्र एवं व्यक्तित्व के निर्माण में पारिवारिक पृष्ठभूमि का महत्वपूर्ण हाथ होता है। मध्य निम्न वर्ग के परिवेश को चित्रित करते हुए उपन्यास कार लिखते है – जया जिस वातावरण में पली है वहां सोलह सत्रह साल की उम्र में ही शादी कर दी जाती है जया शरद के साथ अर्न्तजातीय वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर लेती है और वह शरद के साथ देशबन्धु के यहां चले जाते है। शरद और जया जिस परिस्थितियों में भागकर आये है उन्हें इस स्थिति का भली प्रकार ज्ञान है। कभी प्रेम तो कभी रूठना बहुत स्वभाविक होता है। उपन्यास कार राजेन्द्र यादव जी ने उनके प्रेम प्रसंगों का

वर्णन करते हुए रूठने और मनाने को भी आकर्षक प्रेम में वर्णित किया है। ''शरद के साथ जया पहली बार देशबन्धु की हवेली के पीछे बने कमरों में रहने जाती है उस समय समान के नाम पर वहां केवल एक चारपाई होती है और जया थकी हुए लेट जाती है – खाया क्या हमने? नही आप तो ठाठ से सोती चली आई हैं यहां सारी रात आंखों में गई है। शरद भी फुर्ती से झपट कर उसके पास लेट गया सिर से जान बूझ कर उसने जया की बांह दबा ली। और तब जया मनुहार से कहती है – अरे, अरे हटिए न देखिए किवाड खुले है। जया झिडकती हुई बांह झटक कर उठने की कोशिश करने लगी। क्या है कौन आया जा रहा है ? शरद ने बांह और भी दबा ली। कॉफी जिद के बाद शरद जया की बांह पर सिर रखकर लेटा तो जंगले की टीन पर बूंदे बजने लगी।(130) जया का परिचय मायादेवी एवं पद्यमा से हो जाता है। माया देवी साथ पिक्चर देखने के लिए दोनो को चलने के लिए आमंत्रित करती है। शरद के आफिस से आने पर एवं जया के कहने पर शरद मना करने की कोशिश करते हुए लेट जाता है और आंखे बंद कर लेता लेकिन दो मिनट बाद ही जब सूं सूं की आवाज सुनी और कनखियों से देखा तो पाया कि जया रो रही ळै और शरद के पूछने पर जया के द्वारा प्रेम से भरी नाराजगी को रेखांकित करते हुए उपन्यास कार लिखते है – ''यहॉ लाकर ऐसे तंग करोगे ? जया उसकी छाती से लगकर फूट–फूट कर रो पड़ी।''(131)

जया और शरद आरंभ से दोस्त जैसे थे लेकिन उनके बीच में प्रेम की कोमल भावनाएं देखने को नहीं मिली। तत्पश्चात दाम्पत्य जीवन में बध जाते है। माना जाता है कि दाम्पत्य जीवन में प्रेम की अभिव्यक्ति में बड़े कौशल की आवश्यकता है। कभी स्पर्श मात्र या कभी उसकी कल्पना मात्र तन मन को रोमांचित और हलका कर देती है। राजेन्द्र यादव शरद और जया के मध्य ऐसे ही एक प्रसंग की योजना करते हुए लिखते है कि जिस समय शरद सूरज और जया कपिल के यहां से लौट रहे होते है तभी सूरज के साथ पुल से नीचे उतरते समय जया का शरद की गर्दन पर लटकना कितनी सुखद अनुभूति को जन्म देती है। उस सुखद अनुभूतियों को दृष्टित करते हुए लेखककार ने लिखा है – ''वह वहीं से दूसरा हाथ फैलाकर कूद पड़ी और जोर से शरद की गर्दन में लटक गई। शरद के नथुने उस चिर परिचित मादक सुगन्ध से भर गये और अचानक जाने क्या हुआ कि उसने दोनो हाथो से जया को भींचकर उसके गालों को चूम लिया। एक क्षण को उतरने भ्रम तथा भय से धडकती जया की छाती शरद के हृदय और नस–नस में बजती रही और उसकी इच्छा हुई की इस संगीत को वह यों ही युग–युग तक सुनता रहे।'' (132)

मध्यवर्गीय जीवन के यथार्थ एवं दिखावे के बीच के संघर्ष एवं अर्थ के अभाव के बाद भी

उपन्यास की नायिका जया एवं शरद के बीच प्रेम एवं काम का बीज प्रस्फुटित रहता है। हमारे भारतीय समाज में नैतिकता को ढोने की जिम्मेदारी मुख्यत: मध्यवर्ग पर ही रही। अत: इस वर्ग में विवाहेत्तर काम सम्बन्ध अमान्य है। इस वर्ग को स्त्री और पुरूष के बीच मित्रता का सम्बन्ध भी स्वीकार नहीं है। किसी को भी परिवार में कोई पुरूष किसी स्त्री तक पहुंच सकता है, तो वह कोई न कोई रिश्ता लेकर ही। परंतु प्रकृति रूकती नही। वह इस नाते से ही रास्ता खोज निकालती है। उपन्यास की मुख्य स्त्री पात्र जया शरद का दादा कहती थी किन्तु अंत में उसी के साथ भाग जाती है दोनो शादी किये बिना साथ रहकर काम (Sex) की तृप्ति पाते हैं। हमारे समाज में विवाहेत्तर काम सम्बन्ध को अत्यन्त घ्रणित समझा जाता है, इसलिए बिना किसी नाते स्त्री पुरूष को मिलने की इजाजत नहीं मिलती है। शरद जया से कहता है – ''एक हिन्दूस्तानी मध्यवर्गीय परिवार में बाहरी पुरूष के कितने गिने चुने रास्ते है। भाई बहन बन गए, मास्टर शिष्या, देवर भाभी या फिर जीजा शाली, कोई और रास्ता नहीं है। आखिर प्रकृति को भी तो इन्हीं में अपना रास्ता खोजना है – और शब्द पके फल छिलके की तरह व्यर्थ हो जाते है।(133)''

प्रेमिका :

जया और शरद का परिचय काफी पुराना है। जया अपनी वैयक्तिक समस्याओं पर खुल कर शरद से विचार विमर्श करतीहै। तूफान मेल पैण्ट्री कार में बैठकर प्राय: अपनी समस्या की चर्चा कर लिया करते थे। ऐसे ही वातावरण में जया ने बताया कि – ''उसके घर वाले ने उसका विवाह रूढि ग्रस्त संस्कार वाले मुंशी से करना चाहते है। शरद से वह इस पर विस्तृत चर्चा करती है और शरद उसके बौद्धिक विकास को देख जीवन संगिनी का प्रस्ताव रखता है और सिक्का उछाल कर निर्णय होता है कि वे दोनो सम्मिलित जीवन व्यतीत करेंगे।(134)''

बैद्धिकता–

जया वर्मा बी.ए. बी.टी. होकर अध्यापिका हो जाती है। सामाजिक पृष्ठभूमि एवं वैयक्ति चिन्तन के कारण वह प्रत्येक कार्य के पीछे तर्क, बुद्धि का प्रयोग करती है। जिस मध्यवर्गीय समाज वातावरण में वह पली है वहां सोलह सत्रह के बाद ही लडकियों की उम्र निकलने लगती है, तूफान आने लगते है, और वह पहाड, घोडी, हाथिनी, धीगडी न जाने किन–किन शुभ नामों से जानी जाने लगती है। एक–एक दिन में हजार–हजार बार विभिन्न मुखों से लगातार यह सुनकर कि इतनी तो बड़ी कर ली अब शादी कब करोगी ? शायद जया भी

अपनी इस इक्कीस बाइस की उम्र में ही यह अनुभव करने लगी है कि वह अपराधिनी है, निन्दनीय है कार्य कर रही है कि सचमुच चिकने सॉप की तरह उसकी उम्र पकड़ से निकल जा रही है और धीरे–धीरे सारी निकल जायेगी। ऐसी मानसिक अपराध बोध के पश्चात भी वह अपनी बौद्धिकता का परिचय देती है और जब उसके घर वाले सम्भवत: किसी मुंशी को वर हेतु चयन करती है ऐसी परिस्थिति में जया शरद के साथ विवाह समस्या पर विचार विमर्श करती है। पहले शरद इस समस्या पर प्रकाश डालता हुआ कहता है – कि इस शिक्षा ने जया को ज्यादा स्वतंत्र कर दिया है। विवाहिता हो कर जया जहॉ जाएगी वहां की स्थिति और जया के सपनों में कोई संगति नहीं होगी वह बने बनाए सपने चाहती है क्योंकि सपने बनाने में परिश्रम लगता है। और तब जया कहती है – कि सुबह से शाम तक भाग दौड छह–छह घंटे लगातार क्लास कॉपियां देखना घर की देखभाल क्या यह परिश्रम नहीं है। यदि परिश्रम का तात्पर्य शारीरिक श्रम है तो फिर बौद्धिक विकास की आवश्यकता क्या है ? और जहां उसका विवाह होने जा रहा है वे जन्म जन्मान्तर के पुराने रूढिवादी संस्कार ट्रिपिकल मुंशी जैसे वे खुद है उस घुटन और सडांध का ध्यान करके बेतहाशा रो पडने का मन करता है।''[135]

जया का अर्न्तद्वन्द्व–

माता–पिता या समाज की उपेक्षा कर विवाह की रस्म पूरी किये बिना शरद के साथ चली जाती है। और हमारे भारतीय समाज में इस कृत्य को भाग जाना कहते है। तथा सामाजिक निन्दा का तूफान खड़ा हो जाता है, ऐसा जया का विचार है या फिर कह दे कि उसके मध्यवर्गीय समाज के परिवेश एवं घर के संस्कारों की सोच है। अत: वह अर्न्तद्वन्द्व में फंस जाती है समय शरद उससे शादी का प्रस्ताव रखता है वह अपने अर्न्तद्वन्द्व के जाल में फंस जाती है वह शरद से कहती है – ''आप तो कुछ सोचते नही है। यहां आफत हो जायेगी। आसमान टूट पडेगा। अच्छा लगेगा जब अखबारों में मोटे मोटे नामों के साथ तस्वीरें छपेंगी, खबरे फैलेंगी। शहर के सारे बुढियां बुढ्ढो को साल भर के लिए मिल जाएगा।''[136] उपन्यासकार राजेन्द्र यादव जया के इस क्रांतिकारी कदम उठाने के पूर्व फैण्टेसी के माध्यम से जया के अर्न्तद्वन्द्व को चित्रित किया है। जया समय से पूर्व स्टेशन पहुंच जाती है और शरद को ढूढती है, तभी एक दूसरी लडकी उसके कंधे पर हाथ रख देती है। यह दूसरी लडकी जया के अर्न्तमन का दूसरा रूप है वह कहती है – जया रानी सारी दुनिया को इतना बेवकूफ समझती है। आप भूल गयी कि जिस नौजवान के साथ आज शाम साढ़े नौ बजे घर बार छोडकर जा रही है, आज सुबह तक उसके सारे पत्र मेरे ही केयर ऑफ आपको मिलते रहे है। जब से होश सम्भाला, साथ खेले, साथ पढ़े, साथ ही रहे, सो तो

आपको हमारे साथ आने में डर लगता है, और उस अनजान आदमी के साथ एक अनिश्चित भविष्य की राह पर चल पडने पर डर नही लगता है साढ़े नौ बजे की गाडी से शरद जी, जा रहे है आपकी भी तैयारी हो चुकी है। बस जाओं और कहीं घर बसाओ। मैने बहुत सोचा और निश्चय किया कि आज आपकों नहीं जाने दूंगी। कल आपकी माँ के सामने सब बाते कह दूंगी, तब मेरी जिम्मेदारी हट जायेगी। मैं नहीं चाहती कि कल जब लोग तुम्हारे उपर थूंके, तुम्हें गालियां दी जाये, वारण्ट निकले या अखवारों में लम्बी–लम्बी खबरें बनकर छपे तो उन सबका एक केन्द्र मैं भी होऊंऔर जब बाहर जाकर तुम्हारे मंजनू शरद जी नौकरी की तलाश में दर–दर भटकेंगे तब आस पडोस की औरतें उंगली उठा–उठा कर कहेंगी यही लडकी भाग आई है। जब पाई–पाई खत्म हो जायेगी तब तुम और तुम्हारा यह प्रेम शरद को गले का जंजाल बनकर उसे नोचेगा, जब वह चिडचिडाकर तुम्हें अपने पास से दूर धकेल दिया करेगा। उस वक्त की कल्पना कीजिए कि जब आप पीछे लौटना चाहेंगी और यहां का दरवाजाआपके लिए बन्द होचुका होगा। इस घटना के बाद तुम्हारे माँ बाप का क्या होगा ? उन्होने तुम्हें इसलिए पाला था कि तुम उनके मुख में कालिख लगा दो।(137)''

दृढ़ एवं परिश्रम शील–

जया के अर्न्तमन में द्वन्द्व अवश्य चलता है लेकिन वह अपने अर्न्तमन की इस आवाज, उसके द्वारा दिखाये गये भयावह चित्रों से भयभीत नहीं होती है उसकी दृढ़ता एवं निश्चित इरादों को व्यक्त करता हुआ उपन्यासकार लिखते है – ''जया कहती है – मैं कोई नया काम तो कर नहीं रही हूं। सती रूक्मणी, अम्बा अम्बालिका से लेकर संयोगिता तक हजारों देवियों और माताओं की लाइने मेरे पीछे है। जो हिम्मत तुम खुद नहीं करती उसे मैं कर रही हूँ और इस बात की जलन आपको है। जाओं अपने घर किसी बंद खिडकी के कमरे में बैठो, कोई देख लेगा तो व्यर्थ ही तुम्हारे निष्कलंक, शीलवान, चरित्र पर धक्का लगेगा। जाओं और माँ बाप के इच्छा के पुतले के साथ जिसे वे अपना घर बार बेचकर दहेज के नाम की कीमत देकर खरीद दें, आग की घुटती लपटों के चारों ओर घूमों और बाद में पतिव्रता की विडम्बना छाती पर लादकर उसके बंश को आगे बढाओं कुटो–पिटों और रात को विस्तर गर्म रखो। मुझसे यह नहीं होगा। उनके सपने उनका विश्वास और अपना साहस मेरे लिए बहुत है। (138)'' अन्तोगत्वा जया अपने अर्न्तमन के द्वन्द्व की दृढ़ता के साथ जीतकर शरद के साथ नया दाम्पत्य जीवन यापन करने चली जाती है।

जया एक शिक्षित एवं परिश्रम शील नारी के रूप में उपन्यास में उपस्थित होती है। वह एक अध्यापिका है। कॉलेज के कार्यों के साथ ही घरेलू कार्यों में भी वह हाथ बंटाती है। वह

शरद को उत्तर देती हुई कहती है – ''तो क्या आप कह सकते है कि मैं या हम परिश्रम से डरते है । यह सुबह से शाम तक की भाग दौड़ यह छह–छह घण्टे लगातार क्लास में खडे होकर भोंकना, कॉपियों देखना खुद तैयारी करना और इस सबके अलावा घर की जो भी देख भाल होती है वह तो करनी ही पडती है ।(139) ''

बदनामी से डर –

जया शरद के साथ सामाजिक मान्यताओं के विरूद्ध अपने माता–पिता का परित्याग कर विवाहिता होकर आती है । अत: उसे सामाजिक दृष्टि से कलंकिता माना गया है । वह कल्पना करती है कि अब उसके पीठ पीछे लोग उसकी निंदा कर रहे होंगे । ''कपिल की पत्नी के द्वारा निंदा भरे शब्दो को लिखते हुए राजेन्द्र जी ने दिखाया ''एइ हम तो पहलैई जाने भैना । उसके लच्छन क्या किसी से छिपे थे रण्डियों की तरह दिन–दिन भर घूमना या फिर भी तो कैसी हथिनी सी कर ली थी । हमने तो भैया पहलैई कही थी लडकी का ब्याह कराकै अलग करो । ऐसी बाते कही छिपी रहती है किसी से ।''(140)

कुशल गृहिणी–

जब जया शरद के साथ अचानक बिना किसी तैयारी के चल देती है । देशबन्धु जी के यहां उसे गार्हस्थिक समस्याओं से जूझना पड़ता है । गृहस्थी का सभी सामान वह सूरज जी के क्रेडिट पर लेना चाहती है । पूर्व का अनुभव तो नहीं है किन्तु घर की आवश्यकताओं का ज्ञान लड़कियों को सहज ही होता है । वह सूरज से कहती है, ''आज संध्या को आप हमारे साथ जरा बाजार तक चल सकेंगे आपके क्रेडिट पर कुछ चीजें लानी है ताकि आपकी खातिर के बोझ को लौटा सके ।''(141) और शाम में जया शरद और सूरज बाजार जाते है तब जया सोचती है – ''उसे मालूम नहीं है कि गृहस्थी में कौन–कौन वस्तु कितनी मात्रा में आवश्यक है । जया की शर्म इस बात की लग रही थी कि जिन चीजों से उसका कभी मतलब नहीं रहा – उन्हीं सबको एक दक्ष गृहिणी की सावधानी से खरीदना होगा । उसे तो ठीक से मालूम ही नही कि क्या–क्या चीजे लानी है, कितनी तक लेनी है ।''(142)

संपूर्ण उपन्यास में अपनी भूमिका अहम बनाते हुए राजेन्द्र यादव ने जया के माध्यम से एक ओर जहॉ कुछ नया करने की कोशिश की गई है वहीं दूसरी ओर समाज के विरूद्ध किये गये कृत्य के कारण कुछ सामाजिक आलोचनाओं का सामना करते हुए दिखाया है । जया के माध्यम से मध्यवर्गीय परिवार के संस्कार एवं सोच को भी सामने लाने का सुन्दर प्रयास किया गया है ।

प्रभा–

यह 'सारा आकाश' उपन्यास की नायिका है। शिक्षित, सुन्दर, लाड़ प्यार में पली समर के अनचाहे उसकी विवाहिता होकर ससुराल आती है। वहां उसे समर से घोर उपेक्षा मिलती है। यहा तक की समर उससे बोलना बंद करता है और अंत में उससे प्रेम करता है। उसकी आकांक्षाओं की पूर्ति हेतु परामर्श कर आगे पढ़ने एवं नौकरी भी करता है। उपन्यासकार ने उसके चरित्र का चित्रांकन बड़े कुशलता से करता है –

सुन्दरता एवं रूप रंग–

राजेन्द्र यादव ने प्रभा के रूप रंग का संक्षिप्त विवरण देकर उसे सुन्दर बताता है। पहली वार समर उसे देखता है अब मैने उसे पहली बार देखा ''हाथ गोरे थे और हथेलियों और नाखूनों पर मेंहदी लगी थी। दो अंगुलियों में सोने की नये डिजाइन की नौकाकार लम्बी–लम्बी अंगूठियाँ थी। एक हाथ में सोने की चूड़ियां कांच की चूडियों के बीच में और दूसरे में काले रेशमी फीते से बधी छोटी सी रिस्ट वाच। लगा जैसे हाथ काफी सुन्दर है, अंगुलिया पतली–पतली और नाजुक है। पहली बार उसका चेहरा भरपूर देखने को मन हुआ।''(143) समर के द्वारा प्रभा की सुन्दरता के बारे में कहता है। ''पांवों से महावर लगा था। गोरी एड़ियों पर चाँदी के तोड़िए झूल रहे जो कदम रखने पर साडी की किनारियों से ढंक जाते थे और उठाने पर झलक उठते थे।''(144)

शिक्षित–

प्रभा दसवी कक्षा उत्तीर्ण थी। समर सोंचता है कि जब वह शिक्षित है तो उसे अपना दृष्टिकोण समझाया जा सकता है, कोई कहता था, ''प्रभा दसवीं पास है ... कोई कहता था, बहुत पढ़ी लिखी है। बड़ी समझदार है। क्या उसे अपना सारा दृष्टिकोण समझाया नही जा सकता है।''(145) उसके शिक्षित होने पर भाभी व्यंग्य करती है। बस किताब ले आयी है, अपने घर से, सो उसे ही पढ़ती रहती है। जो सो है सो तो है ही पढ़ाई का दिखावा बहुत है। प्रभा लौट कर घर में समर की पढ़ाई की प्रशंसा की। यह बात समर को अमर से ज्ञात हुई।''(146)

स्वाभिमानी–

प्रभा यह अपेक्षा करती थी, कि प्रथम मिलन में समर और वे भावी, दाम्पत्य जीवन पर बात करेंगे किन्तु समर विवाह को अपने जीवन प्रगति में बाधक समझ कर प्रथम रात्रि उसकी

घोर उपेक्षा एवं अपमानित करने हेतु कमरे से बाहर निकल गया। बाद में उसका आचरण क्रूर से क्रूर होता गया। इससे प्रभा के स्वाभिमान को ठेस लगी और उसने अपना जीवन ऐसा दबा लिया कि समर से सामना ही न हो, बातचीत भी न हो। द्विरागमन के बाद वह सोने के लिए विस्तर तकिया लेकर जिठानी के कमरे में गई। तभी जिठानी उच्च स्वर में पूँछती है। आखिर तुम वहां सोना क्यों नहीं चाहती ? प्रभा उत्तर देती है उनके उत्तर में फिर प्रभा को काफी तेज तीखा दृढ़ उद्धत स्वर सुनाई दिया। जबरदस्ती वहीं जाकर सो जाऊं मुझसे तो नहीं होता जिठानी जी, कि कोई दुत्कारता रहे और पूंछ हिलाते रहो। ठोकर मारता रहे और तलुवे चाटते रहो। उनके बोर्ड के इन्तिहान है मै क्यों तंग करू।''(147)

उपेक्षिता–

समर विवाह बंधन में अभी नहीं पड़ना चाहता था, किन्तु पिता के दबाव के कारण उसे ऐसा करना पड़ा। अत: वह पत्नी प्रभा की घोर उपेक्षा करता है। सुहागरात के दिन उससे बोलता तक नही अपित कुपित होकर कमरे से बाहर जाकर सोता है। द्विरागमन के समय भी वह बातचीत करने की मानसिक तैयारी कर ही रहा था, कि प्रभा का कमरे में सोने से इंकार करने पर वह पुराने संकल्प पर दृढ़ रहने की सौगंध खाता है। आज मैं सारे देवताओं और स्वयं भगवान को साक्षी करके प्रण करता हूं कि इस स्त्री के साथ मेरा कोई संबंधनहीं रहेगा कभी समझौता नही होगा।''(148) वह प्रभा के लिए घर में उसके कमरे के अतिरिक्त और कोई कमरा नहीं था। समर कहता है कि जरा पढ़ लिख सके, इसके लिए तो अलग कोठरी साफ की अब उसमें भी इस उसको सारी दुनियां को ठौर दूगा तो वहां कोई पढ़ेगा कैसे ?(149) समर ऐसे अवसर की ताक में रहता जिसमें उसकी उपेक्षा की जा सके। देर तक वह कोई न कोई सबक सिखाने का रास्ता सोचता रहा मैं उसकी स्पष्ट उपेक्षा और अपमान तक कर डालने का अवसर को छोडने को जरा भी तैयार नहीं था। वह ''भाभी से कहता है भाभी तुम क्यों व्यर्थ में पिंसती हो ? यह समय आराम करने का है। आखिर मुन्नी है घर में और लोग है या सिर्फ तुम्ही ही अकेली रह गयी हो। अगर सबको खाने का हक है तो काम करने के लिए बाहर से आदमी तो नही बुलाए जाऐगा।''(150)

कर्मठता–

प्रभा कर्मठ महिला है पति द्वारा उपेक्षित होने पर उसकी ओर ध्यान देने वाला कोई नही रहा। वह घर के सभी काम गेंहू दाल चावल बीनना, खाना बनाना, बर्तन मांजना, सफाई करना इत्यादि अकेली करती। देर रात तक काम से जुटी रहती है क्योंकि उसकी

जेठानी आसन्न प्रसव भी है। उसे अपने बाल धोने, हाथ पैर की सफाई करने का समय ही नही मिलता। जाडे के लिए पर्याप्त कपड़े नही थे उसकी साड़ी मटमैली हो रही थी, फट भी गयी थी इन विषम परिस्थितयों में भी वह बड़ी कर्मठता का परिचय दे रही थी। समर क्रूर से क्रूर हो रहा था ताकि उसके आंसुओं को देख वह आनन्दित हो सके। सबसे ज्यादा आश्चर्य मुझे होता था यह देखकर कि वह सब कुछ ऐसी आसानी और चुप चाप करती चली जाती है, मानो मशीन हो और उसे यह सब करने में कोई कष्ट नही होता है। हर नये काम को ऐसी स्वाभाविकता से ग्रहण करती चली जाती कि लगता ही नही था कि उसे करने में कहीं भी अनिच्छा का लेश या थकान है।''(151)

हताश–

प्रभा ने घर वालों के न जाने कितनी अत्याचार। परदा वह करती नही थी इस पर बहुत बवाल मचा किन्तु वह अपने विचारों में दृढ़ रही। घर में उसके खाने पीने की चिन्ता करने वाला कोई नही। पिताजी छत पर बाल धोने अथवा छत पर बैठ कर काम करने को मना ही नहीं किया बल्कि उसके चरित्र पर भी लांछन लगा दिया, कि छत पर अकेले लोग आकर बैठते है। उनकी निगाहें बुरी है अत: बहू को कायदे से रहना चाहिए। यह प्रकरण सास, भाभी बड़े भइया के बीच पर इस बात पर खत्म हुआ कि प्रभा छत पर बैठ कर काम करते हुए किसी से नैना लड़ाती है। इस आरोप को सुनकर प्रभा निराश हो जाती है। अपने हृदय का दु:ख दर्द, अपमान उपेक्षा किससे कह कर अपना मन हल्का करें अत: निस्तब्ध रात्रि में चुपचाप आंसू बहाकर रोती है। तभी समर की नींद खुलती है। वह स्तब्ध रह जाता है। पानी पीकर पुन: लेट जाता है, किन्तु उसकी उत्सुकता व्याकुलता बन कर पुन: प्रभा के पास पहुंचा देती है। वह बड़े असमंजस में था, कि इतना कठोर परिश्रम करने के बाद प्रभा कभी रोई नही अब क्या हुआ ? अंत में वह प्रभा से आग्रह करता है कि बाहर ओस पड़ रही है, रात्रि भी अधिक हो गयी है। ऐसे में उसकी तबियत खराब हो जायेगी। प्रभा ने कहर भरी दृष्टि से उसे घूर कर सो जाने की बात कही। साल भर जब उसकी परवाह किसी ने नहीं की तो अब क्या जरूरत है ? अंत में वह समर से कहती है कि उसने समर का क्या बिगाडा है ? यदि वह उसके लायक नहीं तो उसका गला घोट दें और दूसरी शादी कर लें। समर बेहोश प्रभा को गोद में उठा कर कमरे लाता है और फिर दोनो में मान, मनौववल चलती है।

सत् परामर्श दात्री–

समर प्रभा में प्रेम बढ़ने पर समर अपने परिवार की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण करता है और ऐसी विषम परिस्थिति में उसे क्या करणीय है, यह प्रभा से परामर्श करता है। उस दिन रोने के कारण पूंछने पर प्रभा दृढ़ता पूर्वक कहती है कि अभी तक उसके चरित्र पर किसी ने एक शब्द नहीं कहा और उस दिन ...... जिस दिन तुम भी मेरे चरित्र पर सन्देह करोगे, उस दिन जहर खा लूंगी।''(152) कठिन परिस्थितियों के उत्तर में प्रभा कहती है मुसीबते तो हमेंशा नहीं रहती। तुम पढ़ लिख लो कुछ आसानी हो जाएगी। तुम्हारे साथ–साथ रहूंगी तो कुएं खाई कही भी डर नहीं लगेगा।''(153) समर कहता है कि वह चाहता है कि प्रभा विरोध करे और फिर खूब सोंच समझ कर एक नतीजे पर पहुंचे। तुम्हारी सलाह के बिना मैं कोई काम नहीं करूंगा। तुम भी तो पढ़ी लिखी समझदार हो।''(154) प्रभा कहती है कि अब तो मैं चाहती हूं कि तुम खूब पढ़ लिख लो। मुझसे जो कहोगे मैं करती जाउंगी।''(155)

आकाँक्षा–

समर से प्रभा अपने बाल्य –युवा काल की कल्पनाओं, आकॉक्षाओं की चर्चा करती हुई कहती है हम लोग सोचा करती थी, कभी शादी नहीं करेंगी , खूब पढ़ लिख कर गांव में चली जायेगी और वहा स्त्रियों को पढ़ाया करेगी, कभी सोचती थोडा सा सामान लेकर सारे हिन्दुस्तान का पैदल टूर करेंगी, खूब विस्तार से अपनी डायरी लिखा करेंगी। नये–नये गांव शहरों में तरह–तरह के लोग मिलेंगे। गुण्डो बदमाशों या जंगली जानवरों से अपनी रक्षा के लिए हम लोग लाठी और छुरी चलाना सीखने की योजनाएं बनायी।(156) विवाहित होने के बाद प्रभा रमा को पत्र लिखकर पूर्वकाल वैवाहिक जीवन की झांकी अंकित करती है, उससे प्रभा की आकांक्षाएं व्यक्त होती है, अब मैं अनुभव करती हूं कि हमारा चाहना कितना झूठा होता है। हम लोग जाने क्या–क्या चाहा करते है। कोई सीमा होती है हमारे चाहने की संसार की हर अच्छी चीज को चाहने की स्कूल के दिनों की कल्पना, वे भावुकता भरे सपने। किसी भी लड़की की शादी होती है और मैं जाकर उसके पति को देखती तो सोचा करती थी कि हिश मेरा पति ऐसा थोड़े ही होगा। मेरा पति तो प्रोफेसर होगा, कहीं अफसर होगा, किसी बडी कम्पनी का मैनेजर होगा देवर, भाभी, भतीजे कोई नही होंगे हम और वह बस दो ही प्राणी होंगे। खूब लम्बी चौड़ी एकदम नये ढंग की कोठी होगी। देवर भाभी, भतीजे लॉन होंगे, कहीं टेनिस या बैडमिन्टन कोर्ट होगा। तीन चार नौकर। सुबह ये मुझे बडे प्रेम से

उठायेगे मेरी देर से सोने की आदत को बुरा भला कहेंगे चाय पीते पीते, हंसते-हंसते अखबार पढते-बढते सारा समय निकल जायेगा। इनके दफ्तर जाने के बाद बडी मुश्किल से मेरा समय कट पाया करेगा। लेकिन रमा ! कल्पनाएं ही सच हो जाया करती तो फिर क्या ? हमारी हर हंसी पर भाग्य दांत पीसता।[157]

अंध विश्वास-

मानव जिस समाज, परिवेश में रहता है, तदनुकूल उसे अपने जीवन में विश्वास, आस्था आदि बनाकर रहना पड़ता है। कुछ ही लोग होते है जो इन आस्थाओं पर विश्वार न करें। समाज इन्हें नास्तिक आदि कहकर उनकी उपेक्षा करता है। प्रभा के साथ भी कुछ ऐसा ही घटित हुआ। विवाह के कई वर्ष होने के बाद भी उसकी गोद भरी नहीं। सास, जिठानी, पड़ोस की स्त्रियां उसे बांझ समझने लगी। अत: उनके जोर दबाव के कारण प्रभा व्रत रखती तथा सैयद बाबा की मजार की धूनी लाकर कमर में बांधती है। समर को जब यह पता लगता है कि प्रगतिशील वाली प्रभा कितनी अंधविश्वास पर आस्था रखने लगी है, उसे बहुत धक्का लगता है। मुझे लगा जैसे उसकी कमर में कोई गॉठ सी बंधी है शायद डोरे से बंधी है। उसे चुटकी में पकड़ कर पूंछा यह क्या है भाई ? कुछ नहीं, कुछ छोड दो। प्रभा घबराकर प्रार्थना के स्वर में बाली।

"तुम्हारे हाथ जोड़ती हूँ। छोड़ दो। कुछ नहीं है। मेरे पेट में तकलीफ रहती है सो अम्मा जी ने दबा बताई है। तब उसने डरते-डरते बताया, भाभी और अम्मा जी मानी ही नहीं। मैने बहुत कहा कि मेरा विश्वास नहीं है तो मुझे गालियां देने लगी। उनका मन रखने को करना पड़ता। प्रभा सचमुच रोने लगी अवस्थी जी की बीबी कहती थी कि शादी के चार साल बाद सैयद बाबा की धूनी से उनके प्रमोद हुआ था। घुटनों में सिर दबाए प्रभा रो रही थी, बताओं मैं क्या करूं ? सारा दिन मेरी जान खायी जाती है। बांझ - बांझ कहकर भाभी और अम्मा कोसती रहती है। भाभी अपनी विटिया के पास नहीं झाकने देती, छाया से बचाती है।

प्रेरणा स्रोत-

पत्नी के अनेक गुणों की चचाृ करते हुए नीतिशास्त्र में कर्येषुमंत्री की बात कही गयी है। समर प्रभा के समक्ष स्वीकार करता है कि वह अब तक अकेला था अत: निराशावादी बन गया है, यदि प्रभा का साथ उसे मिलेगा तब शायद वह कुछ सफलता प्राप्त करें। वह कहता है, सच प्रभा मैं सब कर लूंगा तुम मुझे हिम्मत बंधाती चलो। मैं दुनियां के सब काम कर लूंगा

जिन्दगी में बड़ा अकेला रहा हूं, बडा निराशावादी रहा हूं। कभी किसी ने प्रोत्साहन और प्यार का एक शब्द नहीं बोला। अगर तुम मेरी शक्ति और प्रेरणा बन सको तो मैं अपने और तुम्हारे सारे सपने साकार कर लूंगा। भावुकता के आवेश में मेरी आँखों में आसू भर आए। प्रभा उत्तर देती है – मैने तो कभी भी नहीं सोचा था कि तुम्हारे पैरों की बेडी बन कर आउंगी। जब भी तुम पाओं कि मैं तुम्हें पीछे घसीट रही हूं तो निर्मम होकर रास्ते की बाधा की तरह मुझे छोडकर अपने को अलग कर लेना। मेरी चीख पुकारों पर ध्यान मत देना।(158)

सुरजीत–

यह मंत्र विद्ध उपन्यास की नायिका एवं प्रमुख पात्र है। यह पंजाबी सरदार की लाडली बेटी है, जिसकी माँ बचपन में मर गयी। यह बंगाली प्रोफेसर तारकदत्त से प्रेम करती है, तथा उसके साथ घर–बार छोडकर कलकत्ता आ जाती है। यहां मोहन और इन्दु के साथ रहकर अपनी समस्याओं से जूझती है, किन्तु पराजित होकर पुन: दिल्ली चली जाती है। उपन्यासकार ने उसके चरित्र की निम्नलिखित विशेषताओं का उल्लेख किया है –

सौन्दर्य से परिपूर्ण–

पंजाबी सौन्दर्य का चित्रण करता हुआ उपन्यासकार लिखता है ''लम्बी स्वस्थ और सुडौल देह, कनपटियों पर झूलती, लहराते संपोलों–सी दो लटें, हल्का सुनहरापन लिए बाल। बनारसी साडी बिल्कुल भी ऐसा नहीं लग रहा था कि इसने जिन्दगी भर सलवार कुर्ता पहने है। साडी बांधने और सिर पर पल्ला रखने का, उसके पीछे की समृद्ध पृष्ठभूमि का संकेत दे रहे थे। मांग में झांकती चौडी सिन्दूरी रेखा, हाथों में चूडियों के साथ बंगाली कडे, पांवों में आलता वह शुद्ध पंजाबी या बंगाली की अपेक्षा उत्तर प्रदेश के किसी शिक्षित घराने की कुलबधू लग रही थी। उसके चेहरे और शरीर का लावण्य लोच उसे पंजाबी नहीं लगने दे रहे थे और पूरे व्यक्तित्व का आत्म विश्वास दृढता उसे बंगाली लगने से रोके थी। लडकी सुन्दर और सुसंस्कृत है।''(159)

प्रेमिका–

वर्तमान समाज में चल रहे प्रेम जिसमें उम्र का कोई महत्व नही होता है। सुरजीत एक नवयुवती होने के बावजूद अधेड उम्र के साथ प्रेम करती है। उन दोनो की उम्र में इतना फर्क होने के बाद भी उनके प्रेम के अटूट बंधन को उपन्यासकार अपने शब्दों के माध्यम से कहते है। सुरजीत और तारक का प्रेम आकर्षण से प्रारंभ हुआ। छिपकर पत्रों का आदान–प्रदान

होता था, किन्तु किसी तरह पिता को भनक लग गई । सुरजीत कहती है ''डैडी ने बहुत मारा । दो तीन दिन तो बिना खाना-पीना दिये कमरे में बन्द रखा । बडी मुश्किल से भागकर आयी हूं और अब वहां बिल्कुल भी नहीं जाउंगी ।''(160) इन्दु के हंसी करने पर सुरजीत कहती है - जादू मैंने इन पर किया था या इन्होंने मुझ पर । आप ही बताइये माँ-बाप की इकलौती लडकी डैडी इतना प्यार करते है कि बस पूछों नहीं, एक तरह घर-भर की मालकिन ..... सब छोड छाडकर इनके साथ यों ही चली आई । उन्होंने मेरे लिए एक मेजर से बात पक्की कर ली थी । बोलो. .... इज्जत, धन-दौलत, प्यार सभी कुछ छोडकर मैं हो आयी न इनका क्या गया ।(161)

कुशल गृहस्थिन-

सुरजीत तारक के साथ अतिथि बनकर इन्दु मोहन के घर आश्रय लेने आती है , तब वह घर के छोटे मोटे कार्य चाय, नाश्ता, बर्तनों की सफाई करके यह सिद्ध करती है कि वह गृहस्थी के सभी कार्यों में दक्ष है, मात्र अतिथि बनकर भार स्वरूप नहीं है । 'सुरजीत जब बाहर निकली तो उसके एक हाथ में झाडू और दूसरे में समेटा हुआ कचडा था । वह बैठक झाडकर निकल रही थी । क्या हुआ भाभी हम लोग बाहर के बनकर कब तक रहेंगे ।''(162) मोहन के कहने पर उसकी पत्नी इन्दु कहती है तो क्या हो गया मेरी छोटी बहन नहीं है यह ? अपना घर है । काम करती है तो क्या हो गया ।''(163) सुरजीत भी अपने घर के विषय में कहती है कि भाई साहब दिल्ली में तो मैं ही सारा घर देखती थी और कोई यों ही नहीं । भाभी को आए दो तीन साल हुए होंगे फिर भी अभी तक डैडी का सारा काम तो मेरे ही जिम्मे था । उन्हें किसी और के हाथ का काम पसन्द ही नहीं आता, रूमाल भी लेना होता तो आवाज देते ।(164)

पितृ प्रेम-

सुरजीत भले ही तारक के मोह जाल में फंसकर तारक के साथ भाग आयी हो, किन्तु पिता के प्रति उसके मन में प्रेम अंत तक बना रहता है । उसे पिता के सपने का भी पता था, कि वह कितने उत्साह से उसकी शादी करना चाहता था किन्तु इस अपमानजनक स्थिति में उन्हें कितना कष्ट हुआ होगा । डैडी ने पचास हजार निकाल कर मेरी शादी के नाम अलग रख दिये थे । मम्मी ने जाने कितना जेवर-कपडा तैयार करवाया था, जिसे डैडी किसी को छूने नहीं देते थे । रोज भाभी को सुनाकर कहा करते थे सुरजीत की शादी ऐसी करूंगा कि सारे रिश्तेदार, गली मुहल्ला वाले देखते रह जायेंगे । लेकिन डैडी को कैसा लगा होगा । मम्मी

होती तो चलो एक बात आपस में ही एक दूसरे का दु:ख बांट लेते। अब डैडी किसी से कुछ भी नहीं कह सकते मन की बात, इसलिए सारे दिन झल्लाते ही घूमते होंगे।''(165)

रंजना–

रंजना एक इंच मुस्कान की प्रमुख पात्र है, जो अमर से प्रेम करती है और आमंत्रण पर वह अपने माता–पिता की पुकार को अनसुना कर अमर के साथ जाती है। वह नौकरी करती है। टण्डन के कारण उसका विवाह अमर से हो जाता है। किन्तु उसके अतिशय प्रेम एवं समर्पण के कारण लेखक अमर विलुप्त सा हो जाता है, क्योंकि अमर स्वच्छन्द मनोवृत्ति एवं यायावरी प्रवृत्ति का लेखक है। जिसकी प्रेरणा अमला नामक युवती है। अत: रंजना अमर को छोडकर अपनी सहेली मीरा के यहां जाकर रहने लगती है। किन्तु गर्भवती होने पर उसे अमर के पास आना पड़ता है और न चाहते हुए रंजना को उससे छुटकारा पाना पडता है। अंतत: वह अमर को छोड़कर स्वतंत्र जीवन व्यतीत करती है। उपन्यास राजेन्द्र यादव ने प्रेम परिवार एवं समाज के परिप्रेक्ष्य में रंजना के अन्र्तमुखी व्यक्तित्व का मूल्यांकन विश्लेषण किया है। उसके चरित्र के अनेक पक्ष उजागर हुए हैं –

भावुक समर्पणशील नारी–

रंजना लेखक अमर से प्रेम करती है। वह अमर के आमंत्रण में बम्बई आती है। अमर समुद्र की तरंगो में आमंत्रण की बात कहता है परन्तु रंजना का मन्तव्य है – ''इनमें निमंत्रण कहा ? ये तो बडी सरल, सौम्य सी लहरे है, नैवेद्य की तरह सागर के तट पर आकर समर्पित हो जाती है और फिर शंवल सम्हाल कर लौट जाती है..... संयत शिष्ट।''(166) भाषा ही भावों की प्रतिध्वनि है। भावुक रंजना ने नारी पुरूष के सम्बन्धों को अत्यन्त संयत, शालीनता की दृष्टि से लहर एवं समुद्र प्रतीक से व्यंजित किया है।

अमला ने लेखक अमर से प्रेरणा श्रोत की बात की जिसके उत्तर में अमर रंजना का परिचय देता है और कहता है She loves me.। अमर के बीमार पडने पर वह उसकी सेवा करती है जाने किस आवेश में आकर उसने अपने सारे आंसुओं से भीगे अधर को अमर के तप्त ललाट पर टिका दिये। वह कैसे मंदा भाभी को समझाए कि उसे न सारी दुनिया चाहिए न दुनिया के अच्छे अच्छे लडके ...... उसकी दुनिया अमर ही है। टण्डन अमर को समझाता है कि अमला और उसमें क्या समानता है ? रंजना तुम्हें कितने गहराई से प्यार करती है तेरे लिए क्या करने को तैयार है। इन दोनो बीमारी में उसने तेरी जैसी सेवा की है, जिस ढंग से तेरे दु:ख दर्द को अपने पर ले लिया है उन सबने तो सचमुच हिला दिया है प्रतियुत्तर में अमर

कहता है कि ''मैं कही अपने भीतर इस मध्य कालीन नारी की पूजा से ही डरता हूँ .... हो सकता है, बांध डालने वाला यह प्यार मुझे अपने से भारी लगता हो ....।''(167)

पजेसिव–

अमर अमला के प्रस्ताव को स्वीकार कर लेता है, कि वह उसके आग्रह पर उपन्यास लिखकर देगा। अमला अपने पत्र में रंजना के संदर्भ में टिप्पणी करती हुई लिखती है रंजना की दृष्टि से सोचती हूं तो लगता है तुम्हारा व्यवहार धोखा लगता है ओर तुम्हारे कोण से सोचती हूं तो लगता है तुम कोई गलती नहीं कर रहे हो।''रंजना और अमला जिंदगी में बहुत आएंगी लेकिन न अमर की प्रतिमा आएगी ....। तुम्हारे विवरणों से लगता है तुम्हारी ये रंजना जो बहुत पजेसिव है .... वे आखिर क्यों तुम्हें सन्दूक में बंद करके रखना चाहती है वे इस सीधी सी बात को भूल जाती है कि कलाकार बांधकर नहीं रहता है।''(168)

अविश्वासी–

रंजना अमर की ययावरी वृत्ति को भली भाँति जानती है। माता पिता ने उसके विवाह के लिए प्रोफेसरों डाक्टरों का चयन किया किन्तु अमर को समर्पित रंजना उनसे विवाह करने को तैयार ही नहीं होता। यद्यपि अमर भी उसे इसका अश्वासन नहीं देता है ! वह अमर से ऐसा आश्वासन पाकर आश्वस्त होना चाहती वह कहती है। ''एक तो मैं भी सोचती हूं अमर ये इतने प्रोफेसर डाक्टरों या औरों के आफर ठुकराती चली जा रही हूं वो किस लिए .... एक आश्वासन होता है .... लेकिन तुम्हारा भी तो कुछ ठीक नहीं है। ..... अमर ने रंजना के कंधे पर हाथ रख दिया कैसी बाते करती हो रंजना ..... एक फार्मेल्टी या दिखावा ही तो बाकी है।''(169)

वैवाहिक जीवन–

अमर के प्रति रंजना का समर्पण उसकी भावुकता उसका घुलना देखकर टण्डन एवं भाभी मंदा अमर को विवाह के लिए जब उसके घर पहुंचाते है, तब अमर ज्वर के कारण नींद की बेहोशी में था। वे अमर को घर लाते है, जहां रंजना उसकी सेवा शुश्रषा करती है तथा टण्डन उसे विवाह के लिए विवश करता है। अमर कहता है टण्डन एक सुखी गृहस्थ जीवन के सुख का सपना मेरे मन में न कौधता हो यह नहीं कहूंगा। आखिर मैं भी एक आदमी हूं। रंजना के प्यार एवं समर्पण को मैं नहीं जानता हूं ऐसा नहीं है।''(170) अंत में रंजना का विवाह अमर से हो जाता है किन्तु दोनो का वैवाहिक जीवन सुखद नहीं रहा। रंजना को घर

में रहना अधिक अच्छा लगता है, जबकि अमर को बाहर घूमना। उसके मित्रों का व्यवहार घर को अव्यवस्थित करके चला जाना रंजना को अच्छा नहीं लगता। वह रविवार को अमर के साथ एकान्त रूप में बिताना चाहती है।''(171) रंजना अपने घर से अमर के लिए पूरी सुविधाओं की व्यवस्था करती है। इस दाम्पत्य जीवन में अपने इतने प्रतिबंध आने लगे अत: अमर को लगता है कि वह इस घर में मेहमान है वह सोंचता है – आदमी को यह तो मानकर चलना चाहिए कि अकेले रहने और किसी के साथ रहने में कहीं तो अंतर ही है। लेकिन रंजना के चेहरे पर पुलक और परितृप्ति को ऐसी अजनवी आंखों से क्यों देखता हूं। रंजना उसे आर्थिक तनावों से मुक्त कर लेखन मे प्रवृत्त रहने का अवसर देती है। धीरे-धीरे रंजना और अमर के बीच वैचारिक मतभेद उभरने लगे। अमर के बाहर जाने के प्रस्ताव के बदले कहती है – ''मैं क्या कहूं ! मुझे बाहर कहीं अच्छा ही नहीं लगता कहीं भी जाती हूं तो लगता है घर जाऊं .... मुझे मेरा घर स्वर्ग लगता है। पत्नी के कार्य को लेकर की गयी अमर की टिप्पणी पर रंजना अपना मन्तव्य इस प्रकार व्यक्त करती है, आप चाहते है कि पत्नी नौकरी तो करें साथ ही साथ घर की देखभाल करें, नौकरी में सिर मारे, कपडे संभाले, बटन लगाए, बच्चे खिलाए, फिर पति की सेवा करें उसका चौका चूल्हा करें हांथ पांव दबाए .... फिर भी पति को यही शिकायत कि वह न पति को देखती है न घर को। अच्छा, इतना ही नही पति को साझी छूटे है – वह दुनिया भर की खुराफाते करें मटर गस्ती करें दोस्ती में घूमें और अपने पर चाहे जितना खर्च करें।

ईर्ष्यालु-

अमर रंजना को बेहद शंकालु और ईष्यालु समझता है। अमला को लेकर रंजना अमर की छाती पर सिर पटक-पटक कहती है मुझे मार डालो अमर मुझे मार डालो नहीं तो मैं खुद मर जाउंगी। इस तरह मुझसे नहीं जिया जाता।''(172) तुम साफ-साफ क्यों नहीं कहते कि तुम अमला से प्यार करने लगे हो इसी लिए अब मैं तुम्हें अच्छी नहीं लगती।... मुझे बताओं अमर कुछ ऐसा बताओ की मेरे मन से संशय का दंश निकल जाए। पर देखों मुझे छलना मत मुझसे झूठ मत बोलना अमर रंजना को समझाता है कि सहानुभूति और अपनत्व के दो शब्दों के अतिरिक्त मेरे पास क्या है जो अमला को दे सकूं। पर वह भी तुमसे बर्दाश्त नहीं होता। .... रंजना प्रतियुत्तर में कहती है कि तुम दोनो का दुख एक ही है और वह शायद मैं हूं .... दोनो के बीच दीवार..... तुम्हारी पत्नी बनकर ही आखिर मैंने ऐसा कौन सा अपराध कर दिया है कि मेरे प्रति तुम्हारा सारा प्यार ही सूख गया।'' (173) और अमर उसे आश्वासन

देता है कि वह एक सद्‌गृहस्थ बन कर रहेगा। सब कुछ छोड देगा। अब अमर रंजना का पति होकर जियेगा किन्तु अमर पर विश्वास न कर रंजना उसे छोड कर चली जाती है।

कथाकार राजेन्द्र यादव की प्रमुख कहानियों की प्रमुख नारी पात्र

सविता-

'एक कमजोर लड़की की कहानी' ''प्राख्यात कहानीकार राजेन्द्र यादव जी की बहुचर्चित कहानियों में से दूसरे पायदान पर रही है। अपने साक्षात्कार में स्वयं राजेन्द्र यादव जी ने स्वीकार किया है कि इस कहानी के रचित समय पर मेरे ऊपर बहुत से लेखकों का प्रभाव था। चेखव, ज्विग, तालस्तोय, दास्तोवस्की, कैथरीन इत्यादि न जाने कितने लेखक रहे है जो संस्कार बनकर मेरे भीतर सांस लेते रहे है।''

कहानी की प्रमुख स्त्री पात्र सविता जिसका सम्बन्ध नायक से पूर्ण होता तो नही दिखाया गया लेकिन संपूर्ण कहानी का आदि अन्त उसी के समर्पण, त्याग एवं भावनाओं पर आधारित है। इस छोटी सी कहानी के माध्यम से राजेन्द्र यादव ने नारी के उन सभी गुणों को यथार्थ लाकर प्रस्तुत किया हैं। जिसे पुरूष वर्ण तो एक कमजोरी का नाम देता है। लेकिन अगर नारी विवेक से उस परिस्थितियों को देखते हुए अपने सवेदनाओं एवं भावनाओं का समर्पण न करे तो शायद परिवार, समाज ही क्या सृष्टि का ही अस्तित्व खतरे में नजर आने लगे। वस्तुत: यह छोटी सी कहानी एक प्रेम कहानी के शिवाय कुछ भी नही प्रतीत होती है लेकिन सविता नाम की स्त्री पात्र अपने नारी गुणों से इस सी कहानी की संपूर्ण धरातल को एक विशिष्ट परिवेश में मोड़ देती है।

कहानी में प्रेम एवं काम-

सविता इस छोटी सी कहानी की प्रमुख नायिका है। प्रेम मानव जीवन का आधार होता है और उस आधार को चरम सीमा पर ले जाता है काम। सविता प्रमोद की पडोसन है और वह प्रमोद से प्रेम करती है। प्रमोद विदेश से पढाई कर लौटने के पश्चात अपने घर आता है और सविता पढाई के बहाने उसके घर एवं उसके कमरे में जाती है। समवयस्क प्रेम स्वभाविक होता है। प्रमोद एक सफल नेता बन जाता है और सविता की शादी लोकेश के साथ हो जाती है तभी सविता के द्वारा आमंत्रण भेजने पर प्रमोद के सामने अपने और सविता के बीच बीते हुए प्रेम के लम्हें आंखों के सामने तैरने लगते है। समवयस्क प्रणय में छिटपुट बाते रूठना मनाना सभी कुछ प्रेम का विषय माना गया है। जिस समय सविता और प्रमोद अकेले कमरे में रहते है - ''सचमुच, शर्म तो आपको आ रही होगी ? किस बात की ? ''

''किस बात की ? '' उसने चिढकर मुंह बनाते हुए दुहराया बडे आए हमें अपनी जूठी कॉफी पिलाने वाले ! X X X जाइए, हम नहीं पीते ।'' वह ठनक उठी ।'' उसके रूठने पर प्रमोद प्रेम से झिडकते हुए कहता है – बहुत बक–बक मत कर खोपडी तोड दूंगा । X X X सविता के द्वारा खिलखिलाकर हंस पडने पर प्रमोद जबर जस्ती कॉफी पिलाने की बात करने लगता है और तब प्रमोद –''ने झपटकर उसकी बांह पकड ली और अपना प्याला उठाकर उसके मुंह से लगा दी बाह छोडकर प्रमोद ने गर्दन पकड ली और दूसरे हाथ का प्याला खट से उसके होठो से लगा दिया ।'' (174)

कहानी के प्रारंभ से अन्त तक सविता और प्रमोद ऐसी छिटपुट वक्तव्य के माध्यम से अपने प्रेम को व्यक्त करते है । प्रेम की कसक दोनो ओर होती है । प्रमोद अपने प्रेम का इजहार करने का सशक्त माध्यम लेखनी को चुनकर अपने दिल की बात लिखकर सविता तक पहुंचाता है – ''सविता मेरी, X X X मैं जानता हूं कि शादी मेरी होगी बस एक के साथ, नहीं तो नहीं होगी । आजीवन यों ही रहूंगा । तुम मेरा साथ दो तो मैं यम से भी नहीं डरता ! तुम मेरी प्रेरणा हो, दिग्दर्शक यंत्र हो, शक्ति हो । X X X तुम जहां भी रहोगी मेरे सपनों में सुरभित रहोगी मेरी वाणी में मुखरित रहोगी । सविता तुम मेरी पूर्णता हो, और अपनी पूर्णता को पाकर ही मैं शेष जगत की शोषित जनता की अपूर्णता का निदान खोज सकुंगा ।'' (175) प्रेम तत्सुखी होता है जहां प्रेम में स्वसुखी की भावना है वह प्रेम फलित नहीं होता है । प्रेम मिलन का नाम नही है । प्रथम प्रेम मानव जीवन की वो पूंजी होती है जिसे चाह कर भी खोया नहीं जा सकता है । सविता अपनी शादी के बाद प्रमोद को अपने पति की इच्छा से खाने पर बुलाती है और जिस समय प्रतिउत्तर में प्रमोद के हाथो की लिखाबट में सविता शब्द को देखती ही तो अपने मन में गर्व के साथ–साथ अपने प्रेम के धूमिल पन्नों पर जा सोचती है अपने प्रेम के सिहरन को महसूस करती हुई प्रमोद के शब्दों को याद करती है – तुम्हारी आत्मा चिर कुमारी है और उसका किसी के साथ विवाह नही हो सकता । उस पर तो मेरा और केवल मेरा ही अधिकार है ।'' (176) इन शब्दों की गूंज से उसके (सविता) के प्राण रोमंचित और गदगद हो उठते हैं और मन के किसी कोने में सविता बोल उठती है – ''हाँ प्रमोद उस पर सिर्फ तुम्हारा ही तो अधिकार है ।''(177) वह स्कूल पर बैठा रहा और सविता उसके मुड़ें घुटनों पर कनपटी टिकाए उससे सहारा लेकर धरती पर बैठी थी । प्रमोद के हाथ उसके खुले बालों पर थे–लेकिन जैसे निर्जीव निस्पन्द! सांझ का अंधेरा गहरा आया था और दोनो चुप थे–जैसे कुछ भी कहने को नहीं है ।''सम्पूर्ण कहानी में सविता एवं प्रमोद के प्रेम का चित्रण खुले रूप में उपस्थित भले ही न हुआ हो लेकिन स्मृतियों के मानस पटल पर अवश्य देखने को मिलते है ।

सफल पत्नी के रूप में-

सविता को दोनो पुरूष ने अपने अपने जगह एक कमजोर लड़की का सम्बोधन दिया है लेकिन सविता अपनी जिम्मेदारियों को सामाजिक मर्यादा के साथ निर्वाह करती है। सविता एवं लोकेश के बीच में प्रमोद जैसे संवेदनशील विषय पर बात चीत करते समय जिस चतुरता के साथ उत्तर देती जाती है। उसी बीच लोकेश के द्वारा यह कहने पर कि - बस और सविता द्वारा अबोधता के साथ दुहराये जाने पर लोकेश कहता है - '' कोई खास नहीं है जैसा कि हम उम्र लड़के लड़कियों में होता है वैसा ही शायद तुम लोगों में था ......कम से कम मैने ऐसा ही सुना .... '' और तब सविता बड़ी समझदारी के साथ उत्तर देते हुए कहती है - ''जब लड़की घर से आती है तो सारे संपर्कों और सम्बन्धों को वहीं छोड आती है उसमें बहुत से अच्छे होते है और बहुत से बुरे, बहुत से आवश्यक होते है, बहुत मधुर होते हैं, लेकिन उनमें कुछ को भूल जाती है, कुछ को वह भुला देती है। इस तरह ससुराल वह बिलकुल ही नई होकर जाती है और ऐसी कौन लडकी कह सकती है कि उसके किसी भी तरह से कोई सम्बन्ध पहले थे ही नहीं ? (178) उसके इस वाक्य से ही उसके और लोकेश बीच बने रिश्ते को और मजबूती में बांध लेती है। लोकेश के द्वारा प्रमोद को खाने पर बुलाने एवं उसे जहर देने की बात एवं सविता के द्वारा जब चाहें कह के स्वीकृति करने पर लोकेश कहता है - ''जब का सवाल नहीं है। यह बहुत अच्छा मौका है। तुम आज ही उसे बुलाओगी। मैं बहुत ही गम्भीरता पूर्वक यह बात इसलिए कह रहा हूं कि हमारा दाम्पत्य सुख इसी घटना पर आधारित होने जा रहा है।'' और इन शब्दों को सुनकर भी सविता तटस्थ होकर सुनती रहती है।

इन सभी परिस्थितियों में सविता पूर्ण पत्नी का पद सफल एवं निष्ठा से निर्वाह करती हुई लोकेश के प्रति पूर्ण समर्पित एवं वफादार रहती है। कहानी के बीच में प्रमोद की बात लेकर लोकेश सविता को एक सच्ची प्रेमिका एवं पत्नी के रूप में पूर्ण वफादार न होने की बात करता है लेकिन कहीं न कहीं वे दोनो जानते थे कि सविता ने सफल रूप से अपने पत्नी पद का निर्वाह किया है।

सच्ची प्रेमिका के रूप में-

सविता प्रमोद से प्यार करती थी और प्रमोद ने भी अपने पत्र में सविता को अपने जीवन की शक्ति मानते हुए अपने प्रेम की स्वीकृति करता है। जैसा कि सर्वविदित है कि प्रेम

नि:स्वार्थ होता है। और इस बात को सविता ने सिद्ध भी किया। जिस समय प्रमोद की भाभी सविता से प्रमोद को शादी करने के लिए समझाने की बात यह जानते हुए भी कि वे दोनो एक दूसरे से अपार प्रेम करते है, समझाने के लिए कहती है। प्रमोद के घर की परिस्थितियों को समझते हुए प्रमोद को समझाने के लिए तैयार हो जाती है। सविता कहती है –''उसे दिया गया काम कितना कठिन है, इसे सविता ने उस समय तक नहीं जाना जब तक वह प्रमोद के सामने न आ गई। X X X पता नहीं क्यों बार–बार आंखों में आसू भर आते थे। फिर भी उसने दृढ़ निश्चय कर लिया था कि यहां नहीं रोना।'' (179) जिस समय सविता अपने प्रेम का त्याग करने का साहस कर रही थी उस समय वह प्रमोद के आलिङ्गन में हो कर ही अपनी बात कहती है। और उसके इस समर्पण एवं त्याग से नि:स्तब्ध प्रमोद उसे एक कमजोर लड़की कहकर सम्बोधित कर देता है। कहानी के अन्त में भी सविता लोकेश से अपने और प्रमोद के रिश्ते में भाव इमोशनल जैसी भावनाओं एवं संवेदनाओं को साफ इंकार कर देती है लेकिन लोकेश भली–भाँति जानता है कि प्रेम का प्रभाव इतना निर्जीव नहीं होता है। सविता लोकेश के कहने पर प्रमोद को जहर देने के लिए तैयार तो हो जाती है लेकिन दूसरी तरफ वह ईश्वर से प्रार्थना भी करती है कि कहीं कुछ ऐसा घटित हो जाए जिससे प्रमोद न आए। लेकिन अन्तोगत्वा प्रमोद आ जाता है और सविता पुडिग देते समय बेहोश होकर नीचे गिर जातीहै। आखिर कार कैसे दे सकती थी वह अपने प्रथम प्रेम से पूरित प्रेमी को जहर। वो भी तो प्रमोद से अपार प्रेम करती थी। प्रमोद भी खुशी खुशी सविता के हाथों से जहर खाने को तैयार हो जाता है –कहानी के संपूर्ण कथानक में दोनो के अत्यन्त प्रेम को देखकर ये लाइन अक्षरश: मन को छू जाती है –

छू कर मेरे मन को किया तूने क्या इशारा।

बदला ये मौसम लगे प्यारा जग सारा ॥

नीराजना –

नीराजना इन्दौर शहर की रहने वाली एक चंचल नायिका है। वैसे तो कहानी में मिसेज दास, रोजी एवं मधु भी है लेकिन संपूर्ण कहानी का आदि एवं अन्त इसी से है। नीराजना एक ऐसी नायिका है जिसके अन्दर अपने परिवार एवं समाज से सामना करने की एवं आत्मनिर्भर बनने की चाहत है कहानी के अन्त में वह प्रोफेसर रवि के यहां मंसूरी चली जाती है और फिर कभी वापस न लौटने का निर्णय भी लेती है।

खुले विचारों वाली–

नीराजना एक खुले विचारों वाली लड़की है। वह बहुत ही चंचल एवं तेज थी यहां तक कि रवि कुमार जो उसके कालेज में टेम्परी लेक्चर नियुक्त हो कर गया था वह उससे बहुत प्रभावित था और मंसूरी में मि. कैप्टन से नीराजना के बारे में जानकारी देते हुए कहता है – '' फ़र्स्ट इयर में एक लड़की थी नीराजना वह क्लास में लड़कों की तरह हंसती थी और बिलकुल बेझिझक कोई ऐसी वैसी बात आ जाने पर शरमाती झेंपती लडकियो की तरफ वह जैसे निर्लिप्त – एक बार उपेक्षा से उन्हें देख लेती और बस फिर वही खूब जोर से बोलती और बात–बात में मुझसे बहस करती। कभी कभी पूरे पीरियड में मैं कुछ न पढ़ा पाता।'' नीराजना के इस प्रकार खुले व्यवहार के कारण लड़कों में भी बडी हलचल थी और वह उसके यों सबसे बात करने पर लड़के भी अफवाह उड़ाने लगे – '' नीराजना अपने सामने वाली सीट के लडके को देख देखकर यों मुसकाती है, उससे यों आंखे लडाती है वह लडका उस पर जान देता है।''

तीव्र बुद्धि एवं प्रतिभावान–

नीराजना जो कहानी की मुख्य नायिका है वह तीव्र बुद्धि वाली लड़की थी उसकी बुद्धि एवं उत्साह को देखकर उसे कभी–कभी कोच करने वाला प्रो. रवि कुमार स्वयं चकित थे और मि. कैप्टन से अपने और नीराजना के पिछले दिनों के बारे बताते हुए कहते कि –''दास साहब मैं क्या बताऊ, उसके बारे में! कैसा तेज उसका दिमाग चलता था। जिस चीज को पढ़ाता, लगता वह पढ़े बैठी है उसमें लिखने की शक्ति और प्रतिभा थी, उसे मैंने काफी उभारने का प्रयत्न किया। अभी तक इतने लड़के लड़कियों को पढ़ाने का मौका आया है लेकिन उतनी इन्टेलिजेंट लड़की मुझे नहीं मिली।''

विवाह के प्रति विद्रोही–

नीराजना जो शिक्षा के प्रति सजग एवं उत्साही थी लेकिन वह विवाह के प्रति हमेंशा विद्रोही स्वभाव अख्तियार किये थी। यहां तक कि जब कोच करते समय प्रो. रवि हंसकर कहता, ''पढ़ ले, शादी के बाद तो इन किताबों में घुन लगेंगे और जो पढ़ा है, सब सडेगा वह कहती – ''मैं शादी करूंगी ही नही ! ''

जब नीराजना के पिता जी रिटायर हो जाते है और वो लोग इलाहाबाद आ जाते है और जब उसकी शादी का चक्कर आया उसने सत्याग्रह कर डाला कि, ''चाहे दुनिया इधर

की उधर हो जाए, वह पढ़ेगी और शादी किसी भी हालत में नहीं करेंगी फासी लगाकर मर जायेगी, भाग जाएगी, भीख मांगेगी चौका बरतन करूंगी लेकिन पढूंगी शादी नहीं करूंगी।''

फैशन से पूर्ण आधुनिक महिला के रूप में-

जब नीराजना इलाहाबाद से मंसूरी के लिए जाती है और देहरादून में मि. रवि उसे लेने आते है और वह इण्टर क्लास के एक डिब्बे से आंखों पर काला चश्मा और हाथ में पर्स लिए, गहरे पीले रंग की जार्जट की साडी में खोजते हुए देखकर रवि ने सोचा सचमुच नीरा अब बदल गई है। इसी प्रकार जब नीरा एवं रवि बस पर चाय एवं टोस्ट ले रहे थे उस समय रवि को बडा आश्चर्य था कि -''इन्दौर की दबी ढंकी सीधी लड़की एकदम इतनी फारवर्ड कैसी हो गई !'' और जब नीरा ने एक बार हंसकर पूछ, ''आप बार-बार मुझे क्या देख रहे हैं !''

रवि ने उत्तर दिया, ''देख रहा हूं इलाहाबाद में तो पूरी फिल्म एक्ट्रेस बन गई हो। बिलकुल चारों तरफ से मेम साहिब लगती हो।''

पारिवारिक दबाव से ग्रस्त-

नीरा जो इतने खुले विचारों वाली लडकी थी वह अपने जीवन को अपने ढंग से जीना चाहती थी लेकिन परिवार द्वारा बार-बार शादी का दबाव डालने पर एक दिन वह तंग आ कररवि के पास मंसूरी आ जाती है और फिर कभी वापस न जाने का निर्णय ले लेती है।

जमाने से लड़ने के प्रति सजग-

नीरा से यह साफ जाहिर होता है कि एक लडकी के जीवन में शिक्षा का कितना महत्व है। वह बिना शादी करके स्वयं अपने पैरा में खड़े होकर कुछ कर दिखाने की चाह रखती है, वह बिना जमाने की ओर देखे हुए रवि के पास मंसूरी आ जाती है और फिर वही रहने का निश्चय करती है।

सहयोगी के प्रति कृतज्ञ-

नीरा रवि कुमार का एहसान मानती थी कि उन्होंने उसको आगे पढ़ने में बहुत मद्द की है जिस समय नीरा से रवि पैसे लौटाने पर अपने अपमान की बात कहता है तब नीरा कहती है, '' बस अपनी तरफ से बात देख ली और दूसरा चाहे भाड़ में जाए। आपकी समझ में यह बात नहीं आई कि जब आपके रूपये लौटाए, तो कम से कम गले तक पानी आ गया होगा।''

नीरा अपने सभी दुखों को रवि के साथ बाटना चाहती थी और वह रवि के प्रति कृतज्ञ भी थी।

रश्मि-

कहानी 'साइकिल ' में दो नारी पात्र है । एक थडानी की बहन दूसरी आनंद की पत्नी रश्मि । रश्मि कहानी में मुख्य्य भूमिका अदा करती है । वह एक इंजीनियर आनंद की पत्नी है और न चाहते हुए भी आनंद के दोस्त मि. थडानी से उपहार एवं जबरजस्ती शिष्टाचार निभाना पड़ता है ।

भारतीय संस्कृति का पूर्ण प्रभाव-

रश्मि एक पढ़ी लिखि भारतीय नारी है । भारतीय संस्कृति का यह महत्व है कि एक भारतीय नारी अपने पति के सिवाय पराये मर्दों से सीमित रहती है । ठीक उसी प्रकार रश्मि को भी अपने पति आनंद के दोस्त थडानी से मंहगे-मंहगे उपहार लेना, खिसनिपोरी करना बिलकुल नहीं आता है । रश्मि को यह कतई नहीं भाता था कि कोई तीसरा व्यक्ति और खासकर थडानी जैसा व्यक्ति उसके और आनंद के बीच में आये । रश्मि एक भारतीय नारी की तरह अपने अस्तित्व की रक्षा के प्रति हमेंशा सचेत रहती थी खासतौर पर जब वह थडानी की आंखों में छिपी हुई बुरी मनसा (हवस) को रश्मि महसूस करती थी ।

मर्यादित पत्नी-

रश्मि जो कि कहानी में एक मर्यादित पत्नी की भूमिका बहुत ही सजीदा ढंग से प्रस्तुत करती है । रश्मि हमेंशा अपनी पति का कहना मानती थी । यद्यपि कुछ बातों में खासतौर से मि. थडानी के साथ घूमने जाने पर रश्मि और आनंद के बीच बतरसन भी हो जाती थी लेकिन अन्तोंगत्वा रश्मि को तैयार होना पड़ता था । जब आनंद मि. थडानी का इन्तजार करते हुए रश्मि को तैयार होने के लिए कहता है, तब रश्मि दबे स्वर में कहती है, ''भई मैंने तो कह दिया कि मेरा मन नहीं है ।'' और आनंद के जोर देने पर रश्मि ने ठिनक कर कहा, ''पिक्चर अच्छी नहीं मिसेज बत्रा कह रही थी किसी काम की नहीं है आप हो आइए ।'' जब मि. थडानी हीरे की अंगूठी ले कर रश्मि से कहता है , ''आपको पता है, आपकी राशि पर हीरा है ? देखिए आज मुझे यह चीज बहुत पसन्द आ गई .... ।'' यह सुनकर रश्मि पीछे हट गई । सबसे ज्यादा झुंझलाहट उसे आनंद पर आ रही थी कि क्यों इतना सिर चढा रखा है इस लंफगे को ? आए हो, ड्राइंग रूम में बैठो । उसके मन में हुआ, जोर से डांटकर बाहर भगा दे । लेकिन उसने प्रशंसा पूर्ण नेत्रों से डिब्बी की ओर देखते हुए अनजान बनकर पूछा, ''किसके लिए ? रानी के लिए लाए हो ? ''

महत्वाकांक्षा से परे-

यद्यपि रश्मि एक पढ़ी लिखि नारी है और उसका पति भी एक इंजीनियर है। पढ़ी लिखि होने के बावजूद भी रश्मि महत्वाकांक्षा से बिलकुल परे थी वह आनंद के पीछे एक निरीह गाय सी चलती रहती है वह न चाहते हुए भी आनंद की इच्छाओं के लिए मि. थडानी से फार्मेलिटीस करती है और अन्दर ही अन्दर घुटती रहती है। इस कहानी में रश्मि अपने पति आनंद की इच्छाओं में कैद है। रश्मि बैलगाडी एवं उस नवविवाहिता जोड़ी में एक बहुत बड़ा साम्य दिखता है।

नारी अस्मिता की सोच-

रश्मि साइकिल कहानी में मुख्य नारी पात्र है यद्यपि वह कहानी में विचारों से स्वतंत्र नहीं है, वही दूसरी तरफ दिखता है कि रश्मि नारी के अस्मिता के बारे में भी सोचती है। और जब आनंद के द्वारा पिक्चर देखने जाने पर जोर देता है तब रश्मि कहती है, '' मेरी तरफ से एप्वांइटमेण्ट करते वक्त जरा पूछ ही लेते फोन से।''

जब आनंद क्रोध के मारे सिगरेट को बुरी तरह ऐश ट्रे में ठूंसते हुए कहा, ''फिर वहीं अपनी जिद ! उस दिन साइकिल वाली बात की तरह आज फिर .....'' अभी तक रश्मि जरा चुप थी, दब रही थी, अब एकदम तेज स्वर में बोली, ''साइकिल-साइकिल ! मैने बीस बार कह दिया मुझे नहीं सीखनी साइकिल ! फिर क्यों मेरे पीछे पड़े हो ? कॉलेज जाती थी तब तो सीखी नहीं - अब सीखूंगी ?''

जब रश्मि खिडकी से लदी हुई बैलगाडी को बैलों द्वारा घीसटते हुए नवविवाहित जोड़े में पीछे जाती है। दुल्हन को देखकर वह सोचती है कि कैसी गाय सी वह पीछे पीछे चुपचाप चली जा रही थी और रश्मि मन ही मन नारी के अस्तित्व के बारे में सोचती रहती है।

परतन्त्र नारी के रूप में-

यादव जी ने जिस समय ये कहानी लिखि उस समय शायद देश स्वतंत्र हुआ था नारी नहीं। इसकी स्पष्ट छाप रश्मि है जो कि कहानी में एक पढ़ी लिखि होने के बाद भी अपने इच्छा को स्वतंत्र रूप से सामने नहीं रख पाती और सिर्फ सोचती रहती है। जब रश्मि आनंद से अंगूठी लेने से इन्कार करती है और आनंद उसे समझाता है और वह एक परतंत्र नारी की तरह अंत में मुस्कुरा देती है और उसकी आंखों में स्निग्धता छा जाती है।

पुष्पा–

'मेहमान' कहानी राजेन्द्र यादव जी द्वारा रचित कृतियों में से एक कृति ढोल और अपने पार में संग्रहीत कहानियों में से एक है। पुष्पा एक मध्यम हैसियत वाले आदमी की पत्नी है जिसको पति अपनी आमदनी के हिसाब से ऊपरी दिखावा करता है। लेकिन पुष्पा वही साधारण वेशभूषा वाली व्यस्त एवं एक सामान्य एवं मिलन सार महिला के रूप में उपस्थित होती है और एक साधारण पत्नी एवं घरेलू परिवार के रूप में कहानी में एक अहम भूमिका ले कर उपस्थित होती है।

सामान्य एवं घरेलू महिला–

हालाकि पुष्पा का पति जो था तो एक साधारण क्लर्क लेकिन अपने उस विशिष्ट मेहमान के सामने एवं उसकी पोजीशन के सामने हर चीज में अपने आपको तुच्छ समझता है जबकि उनके आने के पहले वह घर की हर चीज की करीने से लगा देता है। क्योंकि उसकी पत्नी पुष्पा एक सामान्य घरेलू महिला है जिसे उपरी टीप टाप का ज्यादा ख्याल नहीं रह पाता है। जिस समय मेहमान उसके घर में आते है उनको बैठक में बैठाकर उसका पति चौके में पुष्पा को देखने आता है और झुझलाकर मिचें स्वर में कहताहै – ''पुष्पा तुम भी अजीब औरत हो ! वे आ गये हैं और तुमने अभी तक साडी भी नहीं बदली ! '' और एक सामान्य महिला की तरह व्यवहार करते हुए बोली – ''आ गये ? '' पहले तो वह चौकी फिर अपनी व्यस्तता से बोली, ''अभीबदलती हूं ! चाय का पानी रख दूं .....''पुष्पा बहुत ही शांत स्वभाव की महिला है।

जबकि पुष्पा का पति उसके इस सामान्य व्यवहार से कभी कभी तंग आ जाता है क्योंकि वह महसूस करता है कि – यह कभी भी किसी मेहमान को उसकी हैसियत के अनुसार व्यवहार नहीं करती है सभी को घर की मुर्गी दाल बराबर की तरह देखती है और वह कहता है – ''इस औरत से मैं इसलिए परेशान हूं कि मुझे कही भी सहयोग नहीं देती हमेंशा यही सिद्ध करेगी जैसे मैं दुनिया का सबसे बडा बेवकूफ और कम हैसियत वाला आदमी हूं और जो हमारे यहां आया है वह सडक पर सफाई करने वाला जमादार है। यह शायद जानबूझ कर यह मानने को तैयार नहीं है कि इनके हमारे यहां आने का क्या अर्थ है।''

पुष्पा बहुत स्मार्ट नही थी वह घर की अधिक अधिक जिम्मेदारियां अपने पति को ही दी थी मेहमान जब चाय पी चुके होते है तब उसका पति सोचता है – कि ''पुष्पा ने एक बार भी इनसे किसी चीज को लेने का आग्रह नहीं किया होगा जो खुद ही ले लिया सो ले लिया।

आप संकोच करे तो आपकी बला से अजीब खुद गर्ज औरत से मेरा पाला पडा है । मैं अगर जरा हाथ खींच लूं तो न घर में कोई व्यवस्था रहे न सिलसिला । घर के ज्यादातर काम अपने जिम्मे ले कर मैंने इसकी आदते खराब कर दी है ।''

व्यवहार शील-

पुष्पा घरेलू होने के साथ-साथ व्यवहार शील महिला थी जिस समय उसके घर में वह विशेष मेहमान आते है पुष्पा उनसे घर के लोगो जैसा व्यवहार करती है वह मेहमान से कहती है, ''हाँ यहीं तो मैं कहती हूं कि आ रहे हैं तो आएं । उनका घर है । उसे लेकर इतना तूफान मचाने की क्या जरूरत है ? देखिए, मैं तो आपके लिए कुछ भी खास नही करूंगी । जैसे हम खाते रहते है उसी तरह आपको भी रहना पड़ेगा .....।''

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. समग्र उपन्यास (लौटे हुए मुसाफिर) पृ. 87
2. वही – पृ. 126
3. वही – पृ. 130
4. वही – पृ. 130
5. वही – पृ. 137
6. वही – पृ. 143
7. समग्र उपन्यास (तीसरा आदमी) – भूमिका
8. वही – पृ. 160
9. वही – पृ. 161
10. वही – पृ. 161
11. वही – पृ. 164
12. वही – पृ. 170–71
13. वही – पृ. 174
14. वही – पृ. 174
15. वही – पृ. 175
16. वही – पृ. 199
17. रति विलाप, शिवानी पृ. 46
18. समग्र उपन्यास (तीसरा आदमी) पृ. 167
19. वही – पृ. 164
20. वही – पृ. 167
21. वही – पृ. 177
22. वही – पृ. 177
23. वही – पृ. 165
24. वही – पृ. 188
25. वही – पृ. 166
26. वही – पृ. 176

27. वही – पृ. 205

28. वही – पृ. 193

29. वही – पृ. 193

30. वही – पृ. 193

31. समग्र उपन्यास (समुद्र में खोया आदमी) पृ. 296

32. वही – पृ. 304

33. वही – पृ. 349

34. वही – पृ. 349

35. वही – पृ. 308

36. वही – पृ. 394

37. वही – पृ. 394

38. वही – पृ. 299

39. वही – पृ. 306

40. वही – पृ. 306

41. समग्र उपन्यास – काली ऑंधी – भूमिका

42. मनोविज्ञान स्वप्न विशलेषण – फ्रायड

43. समग्र उपन्यास – काली ऑंधी पृ. 371–72

44. वही – पृ. 372

45. वही – पृ. 367

46. वही – पृ. 368

47. वही – पृ. 368

48. वही – पृ. 369

49. वही – पृ. 394

50. वही – पृ. 395

51. वही – पृ. 414

52. यौन मनोविज्ञान रूपान्तर मन्मनाथ गुप्त

53. समग्र उपन्यास काली ऑंधी पृ. 415

54. वही – पृ. 372

55. वही – पृ. 373
56. वही – पृ. 369
57. वही – पृ. 373
58. वही – पृ. 373
59. वही – पृ. 375
60. वही – पृ. 366
61. वही – पृ. 366
62. वही – पृ. 366
63. वही – पृ. 367
64. वही – पृ. 367
65. वही – पृ. 374
66. वही – पृ. 375
67. वही – पृ. 375
68. समग्र उपन्यास (आगामी अतीत) भूमिका से उद्धृत
69. समग्र उपन्यास (आगामी अतीत) पृ. 454
70. वही – पृ. 454
71. वही – पृ. 454
72. वही – पृ. 455
73. वही – पृ. 457
74. वही – पृ. 452
75. वही – पृ. 452
76. वही – पृ. 451
77. वही – पृ. 452
78. वही – पृ. 457
79. वही – पृ. 457
80. वही – पृ. 458
81. वही – पृ. 496
82. वही – पृ. 466

83. वही – पृ. 466

84. समग्र उपन्यास (सुबह दोपहर, शाम) पृ. 588

85. वही – पृ. 605

86. वही – पृ. 587

87. वही – पृ. 587

88. वही – पृ. 652

89. वही – पृ. 591

90. वही – पृ. 592

91. वही – पृ. 597

92. वही – पृ. 611

93. वही – पृ. 612

94. वही – पृ. 614

95. वही – पृ. 592

96. वही – पृ. 592

97. वही – पृ. 620

98. वही – पृ. 623

99. वही – पृ. 691

100. वही – पृ. 708

101. वही – पृ. 624-25

102. वही – पृ. 633

103. वही – पृ. 642

103. वही – पृ. 635

105. वही – पृ. 651-52

106. समग्र उपन्यास (रेगिस्तान) पृ. 691

107. समग्र कहानियाँ (आधुनिक दिन आधुनिक राते) पृ. 34

108. वही – पृ. 35

109. वही – पृ. 32

110. वही – पृ. 35

112. वही – पृ. 34

113. वही – पृ. 36

114. समग्र कहानियाँ (अधूरी कहानी) पृ. 81

115. वही – पृ. 77

116. वही – पृ. 78

117. वही – पृ. 79

118. समग्र कहानियाँ (एक अश्शील कहानी) पृ. 119

119. वही – पृ. 225

120. वही – पृ. 222

121. वही – पृ. 223

122. वही – पृ. 222

123. समग्र कहानियां (जन्म) पृ. 42

124. वही – पृ. 43

125. समग्र कहानियाँ (बदनाम बस्ती) पृ. 320

126. वही – पृ. 321

127. उखडे हुए लोग पृ. 15

128.वही – पृ. 109

129. वही – पृ. 230

130 वही – पृ. 323

131. वही – पृ. 26,28

132. वही – पृ. 19-26

133. वही – पृ. 78

134. वही – पृ. 81-85

135. वही – पृ. 85

136. वही – पृ. 10-20

137. वही – पृ. 130

138. वही – पृ. 99-135

139. सारा आकाश पृ. 26

140. वही – पृ. 44
141. वही – पृ. 42
142. वही – पृ. 45
143. वही – पृ. 46
144. वही – पृ. 51
145. वही – पृ. 54
146. वही – पृ. 77-79
147. वही – पृ. 96
148. वही – पृ. 96
149. वही – पृ. 96
150. वही – पृ. 98
151. वही – पृ. 109
152. वही – पृ. 169-170
153. वही – पृ. 111
154. मत्रविद्ध और कुलटा पृ. 24
155. वही – पृ. 12
156. वही – पृ. 13
157. वही – पृ. 49
158. वही – पृ. 49
159. मंत्रविद्ध और कुलटा पृ. 13–14
160. एक इंच मुस्कान पृ. 6
161. वही – पृ. 94
162. वही – पृ. 63
163. वही – पृ. 68
164. वही – पृ. 109
165. वही – पृ. 131
166. वही – पृ. 8
167. वही – पृ. 9

168. वही – पृ. 13

169. वही – पृ. 11

170. वही – पृ. 15

171. ढोल और अपने पार पृ. 26

172. वही – पृ. 27

173. वही – पृ. 24

174. वही – पृ. 28

175. वही – पृ. 28

176. ढोल और अपने पार (साइकिल) पृ. 32

177. वही – पृ. 31

178. वही – पृ. 34

179. वही – पृ.33

अध्याय–5

■ आलोच्य कथाकरों के गौण नारी पात्र

आलोच्य कथाकारों के प्रमुख गौण नारी पात्र

सलमा-

इतिहास का अहंकार कैसे मनुष्य को भावनाशून्य बनाता है .....और धर्म को नही धार्मिक उन्माद को किस तरह मानसिक हिंसा का औजार बनाया जाता है यह लौटे हुए मुसाफिर के कथानक से स्पष्ट हो जाता है। उपन्यास की स्त्री गौण पात्र में सलमा प्रमुख है। सलमा का निकाह मकसूद से होता है। अज्ञात कारण वश सलमा मकसूद को छोडकर चली आती है और इधर सलमा को सत्तार से प्रेम हो जाता है वह सबकी आंखे बचाकर सत्तार से मिलती है। सत्तार उसके बारे में नसीबन को भी बताता है। यद्वपि दोनों के प्रेम एंव मिलने पर जुम्मन साई नापसन्द करता है। सलमा के पति मकसूद के आने से वह सत्तार से रोजाना नहीं मिल पाती ओर सत्तार उसकी इस परेशानी को उपेक्षिता की भावना महसूस करता है। लेकिन उपन्यास में एक ओर तो सलमा अपने प्रेम सत्तार के लिए छटपटाती है तो दूसरी तरफ अपने निकाह पति मकसूद के समलैगिंक सम्बन्ध के बावजूद उसके लिये मन में दया चिंता एवं पीडा लिए रहती है।

प्रेम की अनुभूति-

सत्तार किसी दूसरे शहर आया था। और शहर में उसकी मुलाकात जुम्मन साई से हो जाती है और फिर उसे इस बस्ती में ले आया था और सत्तार ने अपने खेल दिखाकर बस्ती भर के बच्चों के साथ-साथ सलमा का भी चहेता बन गया था। जुम्मन साई के कान खडे हो जाते है। जब उसने सुना था कि सत्तार और सलमा के बीच ताक झाक चल रही है। लेकिन सलमा के मुंहफट होने के कारण जुम्मन साई की हिम्मत उससे पूंछने की नहीं पड रही थी। सलमा अपने पिता के यहां रहती है लेकिन वह स्वंय आत्म निर्भर महिला बनकर अपना और अपने बूढ़े पिता का भरणपोषण करती है। प्रत्येक स्त्री को पुरूष का सामीप्य अच्छा लगता है और पति मकसूद को पांच वरस पहले ही छोड आने के कारण फिर अचानक सत्तार जैसे नौजवान को देख सलमा भी अपने आप को रोक नहीं पाती है। उन दोनो के प्रारंभिक प्रेम मिलन को चित्रित करते हुए उपन्यासकार लिखते है - वे एक दूसरे को इशारे करते है और सलमा जब अस्पताल की तरफ जाती है तो सत्तार कुछ दूर पीछे - पीछे जा कर फिर उसके साथ हो लेता है।'' सामाजिक परिस्थतिवश सलमा और सत्तार समाज की निगाहों से बचकर प्रेम करने की कोशिश करते है लेकिन एक दिन जब जुम्मन साई सत्तार को पीपल वाली गली में जाते हुए देखकर एवं जानू वाले भूतहा मकान में घुसते हुए देखा इसके साथ ही साथ तेजी से एक औरत को भी दाखिल होते देखकर कुछ और समझता है लेकिन तभी

बदरी के द्वारा सलमा और सत्तार के बीच पनप रहे प्रेम के बारे में सुनता है बदरी कहता है – ''साई वह रूह नहीं हाड मांस की सलमा थी। अपने प्रेम के बारे में सलमा और सत्तार दोनो एक दूसरे से प्रेम करते है। सलमा का पति मकसूद के आ जाने के कारण सलमा सत्तार से नहीं मिल पाती है और तब सत्तार बेचैन हो जाता है। दोनो एक दूसरे की चिंता करते और एक दूसरे के बारे में जानना चाहते है। नसीबन के द्वारा सलमा और मकसूद के रिश्ते के बारे में सुनकर सत्तार आग बबूला हो जाता है लेकिन सलमा के इजाजत के बिना कुछ नहीं पाता।

नौकरी-

सलमा एक आत्मनिर्भर युवती के रूप में उपस्थित होती है अपने पति को छोडकर वह अपने अंधे पिता के साथ रहती है। साई कहता है – ''वैसे भी बाप का खौफ सलमा को नहीं था। क्योकि वह जनाने अस्पताल में डाक्टरनी की निजी नौकरानी थी और खुद कमाती थी।''

निशंक एवं निडर-

सलमा अपने पति को छोड देने के बाद अपने अंधे पिता के घर में रहती है और जनाने अस्पताल में काम करती है। सलमा के दैनिक परिस्थितियों को देखते हुए एवं समाज में उचित जीवन जीने के लिये वह बिल्कुल निशंक एवं निडर रहती है। उपन्यास के आरंभ में सलमा और सत्तार के प्रेम के बारे में पूछने के लिए जुम्मन साई की हिम्मत नहीं पडती है वह सलमा के मुंहफट जबाव से डरता है। लेकिन जब साई के यहां सलमा और सत्तार की पेशी होती है और साई के द्वारा सत्तार से प्रश्न पूंछने एवं सत्तार के द्वारा इधर उधर के जबाव देने एवं साई के नाराज होने पर सलमा बडी निडरता के साथ बोल पडती है और उसकी इस निडरता का जिक्र करते हुए राजेन्द्र यादव जी ने कहा है – तभी सलमा की आवाज आई – यह सब मुझसे पूछिये मेरे बारे में बात पूछनी है तो मैं खुद हूँ जो पूंछिए उसका जबाव मैं दूंगी।

''तू ही बता इसे जनती है ? साई ने और भी गुस्से से पूछा खूब अच्छी तरह, और पूछिए। सलमा ने जबाव दिया। .... सलमा ने नजर भर सत्तार को देखा और बोली मैं बताये देती हूं ..... मैं इसके साथ भुतहें मकान में गई थी .....[1] और तब साई के द्वारा क्यों गई थी ? का प्रश्न करने पर सलमा निडरता के साथ उत्तर देती है –''मिलने और अपनी वेइज्जती की परवाह किये बिना उसने जिस तरह से बेहिचक उसने जबाव दिया था, उससे सभी के चेहरे फक पड गये थे।''[2]

पतिनिष्ठा-

सलमा प्रेम चाहे जिससे भी करती हो लेकिन सत्तार से प्रेम करने के पहले और बाद में भी बह अपने पति की ही रहती है । मुस्लिम सम्प्रदाय जहॉ तुरन्त निकाह एवं तुरन्त तलाक होता है ऐसे सम्प्रदाय की सलमा अपने वैवाहिक जीवन को निभाती है । पति मकसूद के वापस आ जाने के बाद वह सत्तार से मिलना जुलना बन्द कर देती है यद्यपि उसे सत्तार की भी चिंता होती है लेकिन वह पहले अपने पति की और फिर बाद में सत्तार की प्रेमिका है। मकसूद के समलैंगिक सम्बन्ध को भी स्वीकार किये हुए वह पतिनिष्ठा बनाये रहती है । नसीबन सलमा के बारे में सत्तार से कहती है – उस दिन रो-रो कर सलमा ने बताया था कि शाम होते ही मकसूद औरतों की तरह सजता है । आंखों में काजल डालता है, अपने गाल पर मस्सा बनाता है । बालों में तेल डालता है । आईने के सामने खडे हाकर बालों में छल्ले बनाता है, गालों पर भी लाली पोतता है और गिलौरियां दबाकर यासीन के साथ जा बैठता है । तब दोनो शराब की बोतल खोलकर बैठ जाते है । उनकी रंगरेलियाँ चलती है और सलमा मक्के भून-भून कर लाती है कलेजी तलकर लाती है ....यासीन मकसूद को अपने गिलास से शराब पिलाता है और सलमा यह सब देखती है । खून के आंसू रोती है उन्हें यह सब करते देखकर भी बर्दाश्त करती है । इन सारे कृत्यों के पश्चात भी सलमा मकसूद को नहीं छोडती है सलमा की पतिनिष्ठा देखकर सत्तार भी आश्चर्य चकित रहता है लेकिन सलमा जो वर्षो से यह सब सहने के बाद भी बाहर कुछ नहीं कहती और अपने पति की निष्ठा बनाये रहती है ।

सहनशील-

इतना सब कुछ होने के पश्चात भी सलमा अपने पति के साथ रहती है । मकसूद उसे पीटता है उसी के सामने यासीन से सम्बन्ध बनाता लेकिन वह चुपचाप सबकुछ सहती जाती है ।

रम्मी-

कमलेश्वर जी द्वार रचित उपन्यास समुद्र में खोया हुआ आदमी की सभी नारी पात्र एक अहम भूमिका लिये हुए प्रस्तुत होती है । रम्मी जो इस उपन्यास की धुरी है । उपन्यास में रम्मी एक सहनशील और संघर्ष शील औरत के रूप में प्रस्तुत होती है और उपन्यास के अन्त तक वह अपनों मे ही पिसती रहती है और उसी में सुख मानती रहती है उसका जहाज रूपी परिवार इन आर्थिक परिस्थितियों के समुद्र हिलकोरों में डूबता और उतराता है और रम्मी पत्नी माँ सभी रूपों में एक जिम्मेदार नाविक की भांति इसको बचाने की कोशिश अपने पति श्यामलाल के साथ करती रहती है और अन्त में इन पाँच सदस्यों वाला परिवार एक एक हो कर तितर बितर हो जाता है ।

1. पत्नी के रूप में – रम्मी उपन्यास में एक सफल पत्नी है। उसका पति और बच्चों से पूर्ण परिवार में व्यस्त रहती है वहीं उसकी जिन्दगी है उसके सिवा वह कहीं और किसी से भी मतलब नहीं रखती है। जब से श्यामलाल अपना शहर छोडकर दिल्ली में आये थे और उनका ट्रांसपोर्ट भी बन्द हो गया था और घर बहुत ही मुश्किल मे था, फिर भी रम्मी एक पत्नी होने के नाते हमेशा अपने पति को समझाती रहती और किसी तरह घर को कम पैसों में ही चलाये रखती थी।

जब रम्मी का प्यारा इकलीता बेटा वीरन के मरने को मान लिया जाता है और श्यालाल ने फैक्ट्री में काम करना शुरू कर दिया था और जब एक दिन श्यालाल फैक्ट्री से घर वापस नहीं आये और समीरा द्वारा पूंछने पर रम्मी बोल उठती है – ''मैं क्या करू बेटी ..... खुद कहॉ चली जाउं.....अरे मेरा दु:ख समझने वाला अब कोई नहीं है इस दुनिया में ......[3] इस प्रकार दोनो पति एवं बेटा के बिना रम्मी बहुत अधूरी महसूस करती थी रात में खाते समय रम्मी ने कहा था –'' पता नहीं उन्होने खाना खाया होगा या नहीं ......'' और कौर को पानी से गले में नीचे उतारा। ''[4] जब बीरन की मृत्यु के बाद रम्मी और श्यामलाल मजबूरियों के चलते अलग–अलग रहने लगे और श्यामलाल अपनी पत्नी रम्मी से मिलने आता है। दोनो बैठकर सुख दु:ख की दो बाते करके फिर चलने को तैयार हो जाते है और रम्मी लगाव वश कहती है –''कोई दिक्कत हुआ करे तो चले आया करो .....कोई आता जाता रहे तो खबर ही भिजवा दिया करो। मेरा निकलना तो मुन्नी के मारे नहीं हो पाता है।''[5]

2. माँ के रूप में – रम्मी एक पत्नी के साथ –साथ उपन्यास में एक सफल है। वह दो लडकियों तारा और समीरा तथा एक लडके बीरन की माँ है वह सभी को बहुत चाहती है।

जब तारा हरबंश के साथ समीरा को लेकर घूमने जाता है और श्यामलाल के पूंछने पर रम्मी एक जिम्मेदार माँ की तरह श्यामलाल से कहती है –

''सब कहां गए ? ''

''जरा बाजार तक का चक्कर लगाने ......'' रम्मी ने कहा।

''किसके साथ ......''

''हरवंश ले गया है ....''

''तुम भी चली जाती ! श्यामलाल के रूख में टेढापन '' आया था।

तब रम्मी ने कहा था – ''तो क्या हो गया ..... तारा अब अपना भला बुरा समझने लगी है .... सारा दिन काम करके लौटती है तो उसे कुछ मन बहलाव भी चाहिए।[6]''

जब तारा ने हरबंश के साथ अपनी अपनी शादी की बात कही थी तब रम्मी को सारी रात नींद नहीं आई थी और रात गुजरने के बाद सुबह रम्मी ने तारा से कहा –''तेरी तबियत ठीक नहीं लग रही है । और तारा के ठीक कहने पर वह कहती है लगती तो नहीं ठीक न हो तो मत जा ! [7] वह इस बात से परेशान भी और एक शाम तारा हरबंश के साथ लोओी तो उस दिन सभी को पहली बार बहुत गुस्सा आया था । उसे देखते ही वह तमाम उन बातों के लिए मन से तैयार हो गई थी और रम्मी हरबंश को सामने खडा देखकर अपना दु:ख नहीं संभाल पाई और कुछ समझ में नहीं आया तो वह बोल उठी ''यह दुश्मनी तुमने काहे को निबाही हरबंश ? हम लोगो ने तुम्हारा क्या बिगाडा है ?[8] और जब हरबंश रम्मी से तारा के कहता है तो रम्मी को लिये यह यकीन नहीं हो पाता है । जैसा कि हर माँ अपनी लडकी देने से पहले सौ बार सोचती है वैसे ही रम्मी को भी यकीन नहीं हो पा रहा था और वह सोचती कि कहीं यह फरेब तो नहीं है ..... पर हरबंश किस स्वार्थ के लिए ऐसा करेंगा ? सिवा लडकी के और है ही क्या उनके पास .... ''बेटा ! हम लोग बहुत गरीब आदमी है !'' रम्मी ने सोच कर बोली थी ।''[९]

रम्मी को अपनी बेटी तारा के साथ – साथ समीरा की भी जिम्मेदारी थी । जिस समय –तारा की शादी को लेकर वह परेशान थी और समीरा को भी डॉट लगा दी । उसका दिल घबराने लगा था । उसकी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था । समीरा कालेज जाने लगी तो उसने डांटकर कहा था – ''सीधी घर आना...... ढाई बजे छुटटी होती है साढे तीन तक घर पहुंचों । रोज रोज मैं नहीं सुनुगीं कि बस नहीं मिली ।'' और समीरा द्वारा उत्तर देने पर वह गुस्से में आ गई क्योंकि वह पहले ही क्रोध में उबल रही थी – ''क्या कहा ? रम्मी ज्यादा जबान चलाने की जरूरत नहीं है जो कहा है उसे खुले कान सुन लो । अगर रोज छ: बजते है तो जरूरत नहीं कॉलेज फॉलिज जाने की ।'' और समीरा द्वारा बात पर ध्यान न देने एवं गाना गाने पर वह और भडक उठती है – ''क्या बात है .... आज कल ये तराने बहुत फूट रहे है ! रम्मी से जब बर्दाश्त नहीं हुआ तब उसने कमरे में जा कर कहा । समीरा बाल संवार रही थी । माँ की आवाज सुनकर वह एकदम चुप हो गई । '' ज्यादा फैशन करने की जरूरत नहीं है सीधी चोटी करो ! .... और साडी को पल्ला सीधा पडे ..... समझी .... रम्मी बिफर रही थी ।''[10]

रम्मी तारा की शादी के बाद बीरन के नौकरी में लगने के बाद घर में खुशी का महौल आ गया था । रम्मी अपने बेटे की मौत से बहुत दु:खी हो जाती है । इस झझावांत से उसकी

सम्पूर्ण आशाएं विखर जाती है । महानगरीय जीवन आर्थिक परिस्थितियों के चलते सभी जीने के लिए मजबूर रहते है और एक संयुक्त परिवार समुद्र के हिलकोरों में अर्न्तविलीन होता सा प्रतीत होता है ।

चांदनी-

चांदनी आगामी अतीत की गौण पात्र है । माँ चन्दा की प्रेम जो आदर्श प्रेम की ओर उन्मुख होकर अपने जीवन के आने वाले सुखों को भी त्याग देती है और बेटी को अन्धकार भविष्य में जीने के लिए छोड देती है। चांदनी जो कि बिना पिता के जीने वाली बेटी है चांदनी अपनी माँ के साथ मजदूरी करके पेट पालती थी और फिर माँ की विक्षिप्त अवस्था एवं पागलखाने में उसकी मौत चांदनी के जीवन को भी बदल कर रख देती है । चांदनी पात्र के माध्यम से उपन्यासकार ने एक निर्बल नारी का समाज में शोषण एंव समाज में वेश्यावृत्ति की उत्पत्ति को दिखाया है । माँ की मौत के पश्चात एवं पागल अस्पताल में उसी रात अपने साथ हुए दुष्कर्म के बाद चांदनी वेश्या के धंधे में आ जाती है । जैसा कि विदित है कि इस पेशे मे स्त्रियां स्वछन्द और कामशील होती है ठीक उसी तरह चांदनी भी स्वभाव से बहुत ही स्वछन्द शोख एवं चंचल स्वभाव वाली रहती है । कमल बोस से मिलकर एवं पुरूष आत्मीयता पा कर वह अपनी आप बीती भी सुनाती है और उपन्यास के अन्त में भौतिक साधनों की चाह होने पर भी वह यह जान कर कि यह वही डॉ. है जो मेरी माँ की जिन्दगी बर्वाद कर दी है वह कमल बोस के साथ जाने से इंकार कर देती है ।

वेश्या वृत्ति में दक्ष-

चांदनी वेश्या वृत्ति में पूर्ण रूप से दक्ष हो गई थी । पहली बार जब कमल बोस चांदनी को देखता है उस समय वह अपने कोठे वाले सीढियों के चौखट पर एक हाथ रखे बीडी का कश लेकर बकते हुए पूर्ण वेश्या के लहजे में कहती है – ''चले आते है मरदुए ! इश्क लडायेंगे .... अबे, यहां धंधा होता है, धंधा । इश्क नहीं ..... अगली बार आना बच्चू तो जेब गरम और कमर पुख्ता करके आना .... ।'' कमल बोस बहुत हिम्मत करके चांदनी के पास जाते है और चांदनी को बेटी कहकर सम्बोधित करते है और चांदनी सकपका जाती है और फिर एक पल का इंतजार करके बोल उठी – बैठे सोच क्या रहे हो बाबू .... जो करने आये हो, वह करो और अपना रास्ता नापो समझे रात भर का बीस और एक बार का पांच । सस्ता सौदा चाहिए तो यहां से उतर कर पीछे गली में चले जाओ । और कमल बोस के नाम पूछने पर वह कहती है –अरे साला ! इसमें नाम वाम से क्या लेना देना ! तुम तो मगज चाटने लगे .... आज साले

सब मरदुए ही आ रहे है .... मरद होता तो लौट जाता ?(11) चांदनी बोली और भीतर चली गई थी ।

चांदनी रगरग से कोठे वाली बन गई थी उसकी बोल चाल एवं निधडक पन उसके धंधे की ही सीख है । इसके साथ-साथ कमलबोस एवं चांदनी के बीच संवादो के माध्यम उपन्यासकार ने वर्तमान समय में वेश्याओं के गिरते अवमूल्यों के साथ-साथ आर्थिक तंगी की ओर भी इशारा करते है । उपन्यासकार ने लिखा है कि जब बार बार कमल बोस चांदनी के कोठे में पहुंचता तो उन्हें देखते ही चांदनी भडक गई थी और अपने उसी वेश्या अन्दाज में बोली थी - फिर आ गया धंधा खराब करने । इधर चक्कर काटने से क्या होगा .... फिर वही साली बेटी बेटी की रट ! अरे यहां बेटियां नहीं बीवियां मिलती है घंटे भर की बीवियां .... वह बिगडी थी - जा जा शिलाजीत खा के पहले हौसला पैदा कर समझा बुडढे ।''(12)

बेटी के रूप में-

चांदनी उपन्यास की गौण पात्र एवं मुख्य पात्र चन्दा की बेटी है वह अपनी पागल माँ की देखभाल करती है उसकी मृत्यु पश्चात भी वह उसे बहुत याद करती है कमल बोस के काटेज में रहते समय वह अपनी माँ की बातों को याद करती है । वह कमलबोस से अपनी माँ के द्वारा कहीं गई बातो को याद करके बहुत रोती है ।

मुन्नी : (रेगिस्तान)

साहित्य जगत में शिरोमणि कमलेश्वर द्वारा रचित रेगिस्तान में मुन्नी जिसका व्यक्तिव संपूर्ण उपन्यास में छाया रहता है । जबकि उसकी भूमिका उपन्यास में ज्यादा न होते हुए भी वह सम्पूर्ण उपन्यास में एक बहन के रूप में अन्त तक चलती है और उसके ताऊजी का लडका विश्वनाथ अपने बुढापे में मुन्नी की बातों को याद करता है । मुन्नी संक्षिप्त कथावस्तु रखते हुए भी सम्पूर्ण उपन्यास में एक शुभचिन्तक बहन एवं एक सफल पत्नी तथा एक विद्रोही लडकी की भूमिका सफल रूप से दर्शाती है ।

विद्रोही बेटी-

मुन्नी जो कि विश्वनाथ के चाचा की बेटी थी । लेकिन अपने ताऊजी की मृत्यु के बाद उसकी पूरी प्रापर्टी मुन्नी के पिता जी के द्वारा हडप लेने पर वह विरोध करती है । और वह अपने आंखों में आंसू भर कर अपने चचेरे भाई विश्वनाथ से कहती है -मैं तो खुद कहती हूं कि पिता जी अम्मा और बडे दादा तो विश्वनाथ भइया के साथ बेइमानी की है ......।''तथा इस कृत्य में जगदीश के द्वारा कटाक्ष किये जाने पर मुन्नी कहती है - '' मैं कब उन्हें अच्छा

कहती हूं। कब मैके जाती हूं ....जाने को मन ही नहीं करता मेरा ...।''(13) मुन्नी एक पारिवारिक घर से सम्बन्धित थी और जब उसने अपने पिता जी का स्वार्थ ताऊजी के मरने के बाद देखा तो उसका दिल उठ जाता है और वह इसको अच्छा नहीं समझती थी।

सुशील बहन के रूप में-

मुन्नी जो कहानी का मुख्य पात्र न हो कर भी एक मुख्य भूमिका निभाती हुई उपन्यास के अन्त तक अपना प्रभाव बनाए हुए है। आज के नवीनतम परिवेश एवं स्वार्थ की रोटियों सिकती हुई देख कर भी समाज में सभी व्यक्ति चाहे वह बहन, भाई, दोस्त या फिर वो चाहे दादा, चाचा या मामा, मौसा सभी रिश्ते स्वार्थ में लगे रहते है। लेकिन कमलेश्वर जी द्वारा लिखित उपन्यास रेगिस्तान में खून से ज्यादा वंश के अपनत्व की झलक प्राप्त होती है और मुन्नी जो कि विश्वनाथ की सगी बहन न होते हुए भी अपनत्व और प्रेम की झलक देखने को मिलती है। जिस समय विश्वनाथ कालीकट कोचीन से कुछ दिनों के लिए नागपुर आता है और मुन्नी तथा उसके पति जगदीश द्वारा मुन्नी के अम्मा बाबू को दोषी ठहराया तो मुन्नी ने भी तहे दिल से साथ दिया था एवं कुछ क्षणों के बाद मुन्नी ने बडे अपनत्व से कहा था - '' भइया एक बात कहूं ? तुम ऐसे कब तक ही भटकते रहोगे ?(14) और चिन्ता व्यक्त करते हुए विश्वनाथ को गहरी नजरों से ताका था। तथा विस्सु के द्वारा बार-बार कहने पर कि तू ताऊ जी द्वारा हडपे गये जयदादो के बारे में भूल जाय तो मुन्नी कह उठती है -''इतनी ही बात नहीं है भइया ! बात इससे भी बडी है .... वह इलाहाबाद वाले रतन लाल है न .... और वह सुशीला के बारे में याद दिलाने का प्रयत्न कर रही थी।''(15) उन्हीं बातों के दौरान मुन्नी विश्वनाथ से कहती है -''जब से भाभी मरी है तब से खडे दादा की शादियॉ आती ही नहीं कौन करेगा शादी अपनी लडकी से अब मुनिया न होती तो शायद कोई लडकी भी दे देता .... और वह सुशीला का नाम लेते लेते रूक गयी थी।''(16)

सुशील पत्नी के रूप-

कमलेश्वर द्वारा लिखित उपन्यास रेगिस्तान में मुन्नी की भूमिका एक सुशील एवं प्रिय पत्नी के रूप में हुई है। जब विश्वनाथ मुन्नी के घर मिलने गया था एवं जगदीश के द्वारा यह कहना कि -''अरे मैं खूब जानता हूं। तुम्हारे घरवालों ने इसके साथ क्या किया है ? दर दर का भिखारी बना दिया इन्हें .... और तब मुन्नी ने आंखों में आंसू भर कर कहा था बताया तो तुम्हें मैने ही था ......मैं तो खुद कहती हूं कि पिता जी, अम्मा और बडे दादा ने विश्वनाथ भइया के साथ बेइमानी की है ....।''(17)

तभी जगदीश उबल कर कहा था '' ऐसे ही है तुम्हारे घर वाले ! और दोनो में झगडा विश्वनाथ ने ही समाप्त करवाया था और जगदीश हॅस पडा था मुन्नी भी ठुनकते हुये बोली थी '' देख लिया भइया ! ये इसी तरह बुलाते रहते है ! हाँ ... नहीं तो .... ।''(18)

जैसा कि कहा जाता है कि दाम्पत्य जीवन में छुटपुट झगडा प्रेम की डोर बाधता है और यह प्रेम जगदीश एवं मुन्नी दोनो के बीच झलकता है ।

निष्कर्षत: मुन्नी उपन्यास में संक्षिप्त भूमिका निभाते हुए भी सम्पूर्ण उपन्यास में विश्वनाथ के विचारों के माध्यम से अन्त तक छायी रहती है ।

सूरज की माँ : (कुछ नही कोई नही)

नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत नग पग तल में ।

पीयूष श्रोत सी बहॉ करो, जीवन के सुन्दर समतल में ।।

मानव जीवन रिश्तों की डोर से बंधा होता है । मानव जन्म एवं स्वभाव से एक सामाजिक प्राणी होता है । उसका समाज में कुछ पारम्परिक रिश्ते होते है जिन्हें वैध कहा जाता है और समाज की परम्परिकता एवं रीति रिवाजों से परे रिश्तों को अवैध कहा जाता है । यह वैधता विशेष रूप से स्त्री एंव पुरूष सम्बन्धों की विवेचना के परिप्रेक्ष्य में आता है । कुछ नहीं कोई नहीं एक ऐसी कहानी है जिसमें कहानीकार कमलेश्वर ने एक सरकारी दीवान जैसे पद पर आसीन व्यक्ति को नारी (गौरी) के प्रति कामुकता को व्यक्त किया है जो उसकी पुत्री के समान है । वैध रिश्तों की डोर से बंधा हुआ दीवान एक वैध पत्नी एवं युवा पुत्र होने के बावजूद गौरी जैसी स्त्री के पास काम की वासना लिए हुए रोज रात में जाता है । युवा पुत्र सूरज को अम्मा के रहते पिता के किसी अन्य स्त्री से सम्बंधो को सहन करने में असमर्थता महसूस करता है । अम्मा के प्रति असीम प्रेम को लिए हुए सूरज रोज दीवान को गौरी के घर में जाने से रोकने के उद्देश्य से गौरी के घर के पास पहरेदारी करता है । कई बार दीवान को उसकी हिकारत का सामना कर लौटना पडता है तभी काम की तृप्ति न होने पर दीवान और सूरज के बीच झडप एवं मारपीट होती है । सूरज चाहते हुए भी अपनी माँ से कुछ नहीं कह पाता ।

पतिव्रता नारी-

माँ दृष्टिहीन पतिव्रता के समान अपने पति की करतूतों से बेखबर रहती है – हाय क्या दुर्दशा कर डाली बदमाशों ने ! इतनी रात में हाय अकेले फंस गए ! सूरज, जल्दी से किसी को बुला बेटा बहुत चोट आयी है । और वह खून पोछने के लिये कपडे की तलाश में बिल्ली सी दौड भाग रही थी । सूरज द्वार यह कहने पर अम्मा, तू सीधी तरह बैठ कुछ नहीं हुआ है

पडा रहने दे यहीं । और वह बिफर पड़ती है कैसी बात कर रहा है, निर्दयी ! देख नहीं रहा कितना खून आ रहा है । जरा सी फिटकरी ही पीस दे । सूरज की माँ ने खून पोछते हुए कहा था पर सूरज ने बडी आसानी से टाल दिया था बहुत चोट नहीं है खाल छिल गयी है ।

जाते वक्त कह रहे थे आज किले के पीछे डयूटी देनी है ...... बडा खराब इलाका है । आग लगे सिपाही की नौकरी में ... अपनी जान तक का कोई ठिकाना नहीं .... सूरज की माँ ने दीवान को जगाने के लिए हिलाते हुए कहा था , सूरज ये तो बेहोश है । x x x x अम्मा न जाने कब तक सेवा करती रही ।''(19)

मातृत्व से परिपूर्ण-

माना जाता है कि नारी अपने को पूर्ण तभी मानती है जब वह माता बनकर मातृत्व से पूर्ण हो जाती है । सूरज की माँ जहां एक तरफ अपने पत्नी होने का धर्म निभाती है वहीं दूसरी तरफ एक माँ की भूमिका सफल निभाई है हाँ कहानी दिखाया है सूरज का पिता सूरज को उसकी माँ के सामने चाहे जितना गिराना चाहे लेकिन सूरज की माँ का मातृत्व सूरज के लिए पसीज उठता है । जिस समय सूरज के पिता दीवान ने नशा उतरने के बाद अपना परेड वाला जूताउठाकर सोते समय जुट पडा था – ''दौडी दौडी अम्मा ऊपर आयी हाय हाय यह क्या कर रहे हो ! मत मारी गयी है तुम दोनो की ।''(20) एक सूरज के रात-रात तक वापस न लौटने पर एवं अचानक एक दिन दिवान के द्वारा पूंछ बैठने पर एवं चार बजे तक रात आंखों में ही बीत गयी तो सूरज की माँ ने उसे (दीवान) जगाते हुए चिन्तापूर्ण भारी स्वर में कहा था ''सूरज नहीं आया पिछले तीन चार दिन से गायब रहता है ..... डर के मारे तुमसे कहा नहीं ।''(21) दीवान के द्वारा बार बार डॉटने पर एवं सूरज के घर वापस लौटने पर दरवाजे पर आहट सुनकर अम्मा ने जाकर चुपके से किवाड खोल दिये थे । थक हुआ सूरज चुपचाप जाकर लेट रहा था और वह कोठरी के सूने अंधेरे कोने में आठ आठ आंसू रोती रही ।''(22) सूरज के द्वारा अपनी माँ को सच्चाई से अवगत न कराना एवं दीवान के द्वारा बेटे के बारे में नाक कटवाने की बात सुनकर उसे शहर जाने की सलाह देती है लेकिन सूरज द्वारा इन्कार करने पर सूरज की माँ को चिन्ता हो जाती है । सूरज की माँ धडकते दिल से उसका जवाब सुनती रही और भयंकर आशंकाओं से उसका मन दहल उठा – ''बाप बेटे की दुश्मनी ! यह हो क्या रहा है । हाय भगवान कौन किनारे लगाएगा । कमलेश्वर जी ने इस छोटी सी कहानी के माध्यम से नारी का एक महत्वपूर्ण गुण ममता को जिस निपुणता से साथ उठाया है उसका बेजोड अवर्णनीय है । कहानी के अन्त में सूरज का एक डाकू के रूप में मारा जाना एवं उसकी

लाश का दाह संस्कार अन्य लोगो के द्वारा करते समय –माँ की ममता छटपटाती हुई आखिर कार बोल उठती है। ए बैटा चरनू महीन सी आवाज सुनायी पडी। चरना ने इधर उधर ताका कोई नहीं था। चरना बैटा ! आवाज बहुत छूटी हुई थी। सुमेर ने देखा सूरज भान की माँ चरना के घर में बैठक के सीखचों की छडे पकडे डबडबाई आंखों से देखती हुई पुकार रही थी।

''अरे चाची का है ? '' X X X ''जरा सा मुहं खोल दे मेरे लाल का।'' और मुंह खोलने से पहले खुद अपना मुंह छिपाकर दहाड माकर रो पडी थी।''वास्तव में पूत कपूत भले ही होवे माता भई न कुमाता।'' समाज में कितनी भी आधुनिकता आ जाये कितनी भी अराजकता आ जावे किन्तु माता के मातृत्व में मिलावट नहीं हो सकती।

चिन्ता शील नारी–

'नारी एक रूप अनेक नारी अपने' जीवन की सभी भूमिकाओं को बाखूबी निभाना जानती है पति के दुष्कर्मों से बेखबर बेटे के सतकर्म से नि:सोच सूरज की माँ अपने पति एंव बेटा (सूरज) के बीच बढती बहस से सदैव चिन्तित रहती थी। सूरज के द्वारा दीवान को पीट कर घर लाने पर घर आने पर दौडी दौडी उसकी माँ आयी थी हाय क्या दुर्दशा कर डाली बदमाशों ने। इतनी रात में हाय अकेले फंस गये। सूरज जल्दी से किसी को बुला बेटा बहुत चोट आयी है। और वह खून पोछने के लिए कपडे की तलाश में बिल्ली सी दौडी भाग रही थी। और उसकी उस दशा पर चिंता जताते हुए कह रही थी – जाते वक्त कह रहे थे – आज किले के पीछे डयूटी देनी है ..... बडा खराब इलाका है आग लगे सिपाही की नौकरी में .... अपनी जान तक का कोई ठिकाना नही .....।'' पति के साथ साथ सूरज की माँ सूरज की भी दिन रात चिंता करती रहती थी सूरज के समय पर घर न आने एवं बाप बेटे में लडाई को लेकर वह हमेशा चिन्तित रहती थी।

कुछ नहीं कोई नहीं कहानी में रिश्तों के बन्धन का पति पत्नी का पुत्र पिता का माता पुत्र का एवं अन्य रिश्तों की बजह से एक सम्पन्न परिवार का टूटन दिखाने की कोशिश की है कहानीकार कमलेश्वर ने।

बीनू–

नैरेटर की बहन बीनू कुलटा उपन्यास की एक ऐसी नारी पात्र है जो आदि से अन्त तक अपनी सजीवता एवं सार्थकता को स्पष्ट बनाये रखती है। बीनू एक सामान्य एवं सामाजिक पत्नी है वह मेजर रणधीर की पत्नी एवं नैरेटर की बहन तथा मिसेज तेजपाल की पडोसन है।

उपन्यास के प्रारंभ में जब उसका भाई कॉफी शॉप में मेजर तेजपाल को देख अचम्भित रह जाता है और घर आकर बीनू से पूछता है तब बीनू घुटने पर बुनाई को रखकर उसे एक जगह दबा दबाकर कुछ सोचती रही, फिर बडे बेमालुम ढंग से गहरी सांस लेकर जरा होठ सिकोडती हुई, उपेक्षा से बोली – अरे ऐसी ही थी वो भी । और नैरेटर के द्वारा बीनू को मिसेज तेजपाल की भक्त कहने पर वह नाराज हो जाती है और फिर तडपकर वह बोली, ''अब मुझे क्या पता था कि भीतर से वो कैसी है ? कुलटा कही की !''

बीनू उपन्यास में एक सफल पत्नी एवं बहन के रूप में घर संभालती, रणधीर को संभालती और उसके साथ पिकनिक पर दोस्तों के यहां एवं अन्य पार्टियों मे भी जाती है एक भारतीय स्त्री के समान वह अपने पति से प्रेम भी करती और सफल दाम्पत्य जीवन बिताती है। बीनू नैरेटर की बहन है । वह अपने भाई की खूब खातिर दारी करती है । जब नैरेटर कॉफी हाउस में मेजर तेजपाल की विक्षिप्त अवस्था देखते है तो वह घर आते हुए भी उन्हीं के बारे में सोचकर उलझा रहता है। लेकिन घर आया तो बीनू देखते ही बोली ''मैं जाने कब से बैठी राह देख रही हूं। अपना पुलोवर जरा पहनकर देख लो ।

सामाजिक रितियों से बद्ध-

सामान्य पत्नी बीनू अपने पति को सेक्स की स्वतंत्रता नहीं देना चाहती । उसका पति रणधीर पिकनिक के समय जब मिसेज तेजपाल की चाल और खूबसूरती को मोहित होकर देखता रहता है तो उसकी पत्नी बीनू को बुरा लगता है। अत: बीनू उपालम्भ देती है – ''घर की मुर्गी दाल बराबर । इधर उधर न ताकें तो आदमी ही किस बात के ।''

बीनू भावुक एवं चिंताशील-

बीनू एक भावुक एवं चिंताशील स्त्री है वह मिसेज तेजपाल के फटीचर वायलिन के पास चले जाने के बाद मेजर तेजपाल के विक्षिप्त जीवन के लिए बहुत दुखी रहती है। वह नैरेटर एवं रणधीर से मेजर तेजपाल के हाल समाचार पूछती है और उनके प्रति चिन्ता जाहिर करती है।

उपन्यास कार ने दो विरोधी चरित्रों का रेखांकन कर अपने उपन्यास को सजीवता प्रदान किया है ।

प्रमोद की भाभी : (एक कमजोर लड़की)

प्रमोद की भाभी कहानी एक कमजोर लडकी की गौण पात्र एवं दूसरी स्त्री पात्र के रूप में उपस्थित होती है । यह अपने घर की मान मर्यादा तथा सभी के दुख-सुख का ध्यान

रखती है कहानी में यह एक सफल बहु एवं मर्यादित भाभी का किरदार बहुत ही संजीदा ढंग से प्रस्तुत करती है। अपने देवर प्रमोद तथा सविता के प्रेम को जानते हुए भी अनजान बनी रहती है। यह अपने घर की परिस्थिति को ध्यान में रखकर सविता से प्रमोद को विवाह के लिए समझाने की बात करती है और इसी के साथ कहानी में एक सफल भाभी एवं बहू के रूप में अपनी सशक्त भूमिका निभाती है।

भाभी के रूप में-

जैसा कि कहावत है कि नारी एक रूप अनेक ठीक उसी प्रकार हर नारी किसी की बेटी किसी की पत्नी, किसी की बहन, किसी की भाभी, किसी की बहु के रूप में होती है। प्रमोद की भाभी भी एक मिलनसार भाभी है वह अपने देवर तथा पडोसन बेटी सबिता से बहुत ही दोस्ताने तरीके से रहती है। कहानी में भाभी के प्रवेश होने से कहानी में थोडा गम्भीरता आ जाती है और जब सबिता दुहरी होकर कहती है – ''हाय राम रे, मार डाला तभी भाभी प्रवेश करती हुई कहती है– ''क्यों मारे डाल रहे हो लाला जी, परायी लडकी को ? सारी दुनिया में घूम आये यह आदत नहीं छोडी। अरे अब तो कुछ ढंग सीखा होता अभी कुछ हो गया तो उसके बाप भाई जान लेने आ जायेगे, वैसे ही हमे तो काले पानी की सजा है।'' और जब प्रमोद एवं सबिता बचकियाने प्यार से आपस में झगड रहे थे और सबिता द्वारा पीठ दिखाने पर भाभी कहती है– ''हाय सच्ची लाला जी, कुछ तो सोचा करो। बेचारी के गोला बन गया है। अभी हडडी पसली टूट जाती तो कहीं शादी ब्याह भी नहीं होता ....'' इसके साथ ही वह सहानुभूति दिखाई रही।

बहू के रूप में-

प्रमोद की भाभी एक जिम्मेदार बहू के रूप में कहानी में उपस्थित होती है। जब वह प्रमोद एवं सबिता के प्यार भरे झगडे का निपटारा कर रही थी, उसी समय दरवाजे पर नौकर आकर बताया, ''बहू जी छोटे बाबू जी ने बुलाया है।'' तब प्रमोद की भाभी ने कहा –''अरे हाँ लाला जी, मैं तो भूल ही गई, तुम्हारे भाई साहब ने तुम्हें बुलाया है। बाबू जी भी वहां बैठे है, इस बचपने को छोडो जरा जल्दी चलो, कुछ जरूरी काम है। और फिर वह जिम्मेदार बहू के रूप में जल्दी से चली गई।

जिम्मेदार नारी-

प्रमोद की भाभी एक जिम्मेदार नारी है। वह अपने सभी पद बडी जिम्मेदारी के साथ निभाती है। फिर वह जिम्मेदारी चाहे देवर के प्रति हो या फिर पडोसन सबिता के साथ, या

घर के अन्य सदस्यों के साथ या फिर मेहमानों की जिम्मेदारी, वह हर जिम्मेदारी के निभाती है। जब बैठक में कुछ मेहमान आये थे उस समय रसोई में भाभी प्लेटे फैलाकर नाश्ता रख रही थी, सबिता को देखते ही बोली, ''सवित ये सेब काटकर इनमें लगा दो, मार हल्ला मचा दिया, चार बार भेज चुकें है नौकर को नाश्ता भेजो, नाश्ता भेजो। जरा जल्दी से ये नाश्ता की तश्तरियों में तैयार कर ले मेरी बिटियां। सविता नाश्ता लगाने लगी, भाभी ने चाय केटली में भरी और नौकर जब दो बार में उठाकर सारा नाश्ता ले गया। '' और कहो, तुम्हारे यहॉ क्या हो रहा है ? बहुत दिनों से मौसी को लाई नहीं तुम। '' और सविता के द्वारा मेहमानों के बारे में पूछने पर भाभी कहती है – ''कुछ नहीं सविता हमारा तो सारा घर परेशान है, बाबू जी, तुम्हारे भाई साहब, अम्मा जी, सभी एक सिरे से पागल है। पता नहीं, लाला जी क्या चाहते है। जब से इंग्लैड से होकर आए है, सारी दुनिया तो बिरादरी भी खार खाए बैठी है सब कुछ हमारा उठना बैठना, हुक्का पानी बन्द कर दिया है। और लाला जी है कि अपनी जिद पर अडे है कुछ समझ में नहीं आता। अब तुम्ही सोचो दो–दो छोटी बहने है उन्हें कहा देंगे ? यो ही चलते फिरते के साथ तो पकडा नहीं देगे। उनकी इच्छा तो जरूर पूरी हो जायेगी लेकिन देख लेना सारा घर बरबाद हो जायेगा, अम्मा तो शर्तिया जहर खाँ लेगी। और अपनी जिम्मेदारी का ध्यान रखते हुए भाभी ने बडे झिझकते हुए सबिता से कहा –''तुम समझाकर देखो जरा ! सच रानी हमारा घर बन जायेगा।''

एक कमजोर लडकी कहानी के माध्यम से राजेन्द्र यादव जी ने नारी के उस सश्क्त रूप को व्यक्त करने की कोशिश की है जिसे हर पुरूष कमजोरी का नाम दे देता है जिस प्रकार प्रमोद की भाभी सविता एवं प्रमोद के प्यार को समझते हुए भी सविता से वो त्याग करने के लिए तैयार कर लेती है जो एक नारी के लिए मुश्किल होता है और प्रमोद की भाभी सब कुछ जानते हुए भी अपनी जिम्मेदारियों का निर्वाहन करती है हुई कहानी को एक नया मोड देने के सहायक होती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. समग्र उपन्यास (लौटे हुए मुसाफिर) पृ. 96
2. वही – पृ. 96
3. समग्र उपन्यास समुद्र में खोया हुआ आदमी पृ. 3
4. वही – पृ. 350
5. वही – पृ. 357
6. वही –पृ. 356
7. वही – पृ. 358
8. वही –पृ. 360
9. वही –पृ. 362
10. वही –पृ. 363
11. समग्र उपन्यास आगामी अतीत पृ. 384
12. वही –पृ. 487
13. वही – पृ. 678
14. वही – पृ. 683
15. वही – पृ. 683
16. वही –पृ. 684
17. वही – पृ. 684
18. समग्र कहानियाँ (कुछ नही कोई नही) पृ. 296
19. वही –पृ. 296
20. वही – पृ. 296
21. वही – पृ. 296
22. वही –पृ. 297

अध्याय-6

- आलोच्य कथाकरों के साहित्य में विकृत मानसिक नारी चित्रण

''अपारे काव्य संसारे कवि रेक : प्रजापति'' के अनुसार कवि भी अपनी सृष्टि का कर्ता होता है जिस प्रकार इस दृश्य मान संसार में अनेक लोग विकार, उन्माद अथवा विकृत मनोवृत्ति के होते हैं उसी प्रकार साहित्य गत पात्र भी असामान्य आचरण करते हुये किसी न किसी कारक तत्व के कारण विकृत चरित्र वाले कहलाते हैं। यहां इस विकृति के मूल रूप का का सैद्धांतिक विश्लेषण संक्षिप्त में किया जा रहा है।

असामान्य पात्र मनोविज्ञान के क्षेत्र से संबंधित पात्र होते हैं। बाह्य कार रूप से ऐसे पात्र देखने में सामान्य दिखाई देते हैं, किन्तु आचरण में विकृति आ जाने के कारण इन्हें असामान्य पात्र कहा जाता है। इसके मूल में कुण्ठा या दमित वासनायें रहती हैं अत: इस प्रकार के चरित्र को समझने के लिये पूर्व पीठिका के रूप में मनोविज्ञान, उसके क्षेत्र, पात्रों के आन्तरिक क्रिया कलापों के कारक तत्व का संक्षिप्त परिचय आवश्यक प्रतीत होता है।

मनोविज्ञान मन का विज्ञान है यह मानव मन की विभिन्न दशाओं का अध्ययन प्रस्तुत करता है। मनोविज्ञान शब्द अंग्रेजी भाषा के शब्द Psychology हिन्दी रूपान्तर है। अंग्रेजी का यह शब्द लैटिन भाषा के दो शब्दों Psyche एवं Logos से बना है, जिसका अर्थ आत्मा का विज्ञान है। प्रारंभ में मनोविज्ञान की आत्मा से सम्बद्ध कर एतद् विषयक विचार धारणायें प्रस्तुत की जाती रही हैं। बाद में चेतना का विज्ञान, जीवित प्राणी के व्यवहार का विधायक विज्ञान माना जाने लगा।

बात यह है कि मनुष्य हो या कलाकार वह अपने आदिम आवेगों से संचालित और प्रभावित रहता है। यह आदिम अनुभूति कलाकार की सर्जनशीलता का स्रोत होती है। इस प्रकार की अनुभूति का विश्लेषण शास्त्र के अन्तर्गत आता है। मूलत: मनोविश्लेषण एक प्रविधि है, जिसके माध्यम से एक व्यक्ति के मानसिक जीवन के गयात्मक चेतन एवं अचेतन की खोज की जाती है। इस प्रकार असामान्य पात्र के व्यवहार क्रियाकलापों का अध्ययन वर्णन इसी मनोविश्लेषण शास्त्र के माध्यम से किया जाता है। मनोदौर्वस्थ, मानसिक कुण्ठा, हीनभावना के कारण मनुष्य ऐसा व्यवहार करता है जो उसे असामान्य पात्र बना देते हैं।

1. इदम् :

फ्रायड के अनुसार व्यक्तित्व के गयात्मक पहलू का अर्थ वह साधन है, जिसके द्वारा मूल प्रवृत्तियों से उत्पन्न संघर्षों का समाधान होता है। इस दृष्टि से व्यक्ति की गतिशीलता एवं व्यवहार की समग्रता तीन शक्तियों पर निर्भर करती है।[1] इदम् (Id) फ्रायड के अनुसार इदम् मनोजैवकीय ऊर्जा (Psychol Bialogical Energy) स्रोत है।

यह सहज प्रवृत्तियों का भण्डार तथा अचेतन होता है। मनुष्य जो कुछ आनुवांशिक रूप में प्राप्त करता है, या जो कुछ उसके संघटन में वर्तमान रहता है, वह सब इदम् में संचित रहता है। वाह्य वस्तुस्थिति की परिस्थिति की चिन्ता किये बगैर इदम के आवेग तात्कालिक संतुष्टि के लिये विकल रहते हैं। यह समय, तर्क, नैतिकता तथा नियमों की परवाह नहीं करता। इसका संबंध शारीरिक इच्छाओं की पूर्ति से होता है। यह एक प्रकार से कामेच्छा को जन्म देने वाली शक्ति है जो समय-समय पर व्यक्तित्व के विकास में सहायक होती है। बिना इसके व्यक्ति शक्तिहीन हो जाता है तथा उसके व्यवहार में विकृतियां उत्पन्न होती है। शारीरिक स्तर से संबंधित इच्छाओं को उत्पन्न कर संतुष्ट के लिये यह सुख के नियम से नियंत्रित होता है। इसका निवास स्थान अवचेतन होता है।

2. अहम् (Ego) :

फ्रायड ने अहम् को स्वचेतन-बुद्धि के रूप में व्याख्यायित किया है इसका संबंध वाह्य वातावरण से होता है इसकी उत्पत्ति भी वाह्य वातावरण से ही होती है। यह पूर्वत: चेतन होता है। इदम् की इच्छाओं तथा वास्तविकता के बीच यह एक संतुलन कायम रखता है। तथा समझौता करता है। यह वाह्य व्यवहार पर नियंत्रण रखता है साथ ही चेतन मन की सुरक्षा के लिये उत्तरदायी होता है। संक्षेप में यह कि अहम् व्यक्ति और उसके वाह्य परिवेश में समायोजन करने वाला व्यक्तित्व विकास का एक महत्वपूर्ण चेतना पक्ष है, जिसका प्रमुख कार्य है इदम् से उत्पन्न मूल प्रवृत्तियों और मूल आवेगों को वास्तविकता के अनुरूप नियंत्रित और संशोधित कर मानसिक तनाव को दूर करना जिससे सुख प्राप्ति हो सके।

3. परम अहम् (Super Ego) :

फ्रायड ने परम अहम् को आदेश अहम् कहा है। यह संस्कृति, परम्परा, आदर्श, नैतिक नियम तथा सामाजिक बंधनों से मिलकर बनता है। यह सदैव व्यक्तित्व के नैतिक पक्ष का प्रतिनिधित्व करता है। इसी को अन्तरात्मा की आवाज भी कह सकते हैं। इसके कारण ही व्यक्ति में पाप पश्चाताप आदि भावनायें जागरित होती हैं। इस प्रकार इदम् जैवकीय शासित, अहम् भौतिक वातावरण से शासित तो परम अहम समाज एवं संस्कृति से शासित रहता है।''(2)

असामान्य पात्र का अर्थ शारीरिक स्तर पर विकलांग व्यक्तियों का अध्ययन न होकर मानसिक संघर्ष के कारण अस्वाभाविक आचरण करने वाले पात्रों का अध्ययन यहाँ किया जा रहा है। इदम् अहम् परम अहम् का संघर्ष मन के चेतन, अचेतन स्तर पर होता है, अत: अति

संक्षेप इस संघर्ष की भूमिका के रूप में चेतन अचेतन पर सामान्य जानकारी प्रस्तुत करना युक्ति संगत प्रतीत होता है ।

चेतन : (Conscious)

चेतन व्यक्ति के मन का ऊपरी भाग है, जो वाह्य वातावरण या तात्कालिक ज्ञान से संबंधित होता है । युग के अनुसार चेतन मन (Conscius Mind) अहम (Ego) विचार (Ideas) अभिवृत्तियों (Atlitudes) स्मृतियों (memories) प्रत्ययीकरण (Preception) तथा भावनाओं (Feelings) के मेल से बनता है । इस प्रकार व्यक्ति अपनी अनैतिक इच्छाओं का दमन कर लेता है, जिसके चलते उसमें मनोग्रंथियाँ जन्म लेती हैं । वह कुण्ठित हो जाता है तथा उसमें दुहरा व्यक्तित्व पनपने लगता है ।

अचेतन :

अचेतन मन, मन का सबसे बड़ा भाग है, जो चेतन तथा अचेतन के नीचे स्थित होता है । चेतन मन अतृप्त इच्छाओं को अचेतन में धकेल देता है । यहां ये इच्छायें मरती नहीं हैं, बल्कि समय की प्रतीक्षा करती रहती हैं और समय आने पर चेतन के क्षेत्र में प्रवेश कर जाती हैं। इस प्रक्रिया में वे इच्छायें अपने वास्तविक रूप में प्रकट न होकर छद्म वेष में प्रकट होती हैं । यही भावनायें ग्रंथियों के रूप में प्रकट होकर अचेतन मन में एकत्रित रहती हैं । जिन इच्छाओं का दमन जिस सीमा तक होता है भावना ग्रंथि उसी सीमा तक प्रबल होती रहती है । जब ये ग्रंथियाँ चेतन मन में आने का प्रयास करती हैं तभी व्यक्ति तनाव में आ जाता है और इस प्रकार अत्यधिक तनावों से वह मानसिक विकार से ग्रस्त हो जाता है। व्यक्ति का आचरण अस्वाभाविक हो उठता है ।

तात्पर्य यह कि साहित्य गत पात्र जब अन्य पात्रों से सहज व्यवहार नहीं कर पाता उसके क्रिया कलापों से किसी न किसी मनोग्रंथि से पीड़ित होकर असामान्य व्यवहार करने लगता है । व्यक्ति के मन में अर्न्तविवाद (Interier monolog) चलने लगता है तब वह पात्र असामान्य कोटि का हो जाता है । फ्रायड ने इस असामान्य या विकृत व्यवहार के पीछे काम (Sex) को माना है । जबकि उसके व्याख्या कर्ता युंग ने यशोभिलाषा को स्वीकार किया है ।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि साधारण मनुष्य की तरह काम, मोह लोभ मद आदि संवेगों के प्रति अभिव्यक्ति जब समाज विरुद्ध नीति या सदाचार विरुद्ध होती है तब ऐसे पात्र को असामान्य या विकार ग्रस्त पात्र कहा जाता है । पहले हम काम से कुंठित दमित वासना के कारण पात्र गत क्रिया कलाप और उसके कारक तत्वों की चर्चा करेंगे ।

कथाकार कमलेश्वर के साहित्य में विकृत मांनसिक नारी चित्रण

बंसिरि-

यह एक सड़क सत्तावन गलियां नामक उपन्यास की मुख्य पात्र हैं जिसके जीवन में काम और प्रेम के विचित्र अनुभव अवतरित हुये हैं। मनोविज्ञान के क्षेत्र में लिविडो के संबंध में यह मान्यता उपन्यस्त है कि काम प्रेम विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण के लिये यही ग्रंथि जिम्मेदार हैं वस्तुतः काम और प्रेम की गलियॉ इतनी संकीर्ण इतनी जटिल और इतनी उच्च-अवच्च रूप से दिखाई देती हैं कि जिसमें चलना अत्यन्त दुष्कर प्रतीत होता है। नारी का मन यदि पुष्प से भी अधिक कोमल है तो वज्र से भी अधिक कठोर कहा जाता है। अपना सर्वस्य हरण करने वाले व्यक्ति की दुर्दशा देखकर वह अविभूत हुये बिना नहीं रह सकती। बंसिरि एक ऐसी ही नायिका है जो न्याय अन्याय के बीच खिची महीन या सूक्ष्म तन्त को पहचान नहीं पाती। डकैतों द्वारा सब कुछ लूट लेने पर भी बंसिरि जितनी दृढ़ता से अपने घरवालों को बचाने के लिये डकैतों के सामने आती हैं और उसके प्रबल पराक्रम से अविभूत होकर कचेहरी में उसे पहचान भी नहीं पाती। इसी प्रतिहिंसा में वह सरनाम के प्रति आकृष्ट हो जाती है।

फिर उसे जीवन यापन हेतु नौटंकी में काम करना पड़ता है तो कभी सरकस में सरनाम का सम्पर्क उसे कल्पनालोक में ले जाता है और बंसिरि सरनाम के साथ जीवनयापन करने की प्रतिज्ञा भी करती है किन्तु सरकस के उठने पर सरनाम पहुँच नहीं पाता और बंसिरि दलालं के चंगुल में पड़ जाती है। सरनाम दलालों से रंगीले के लिये बंसिरि को खरीद लेता है रंगीले को सजा होने पर बंसिरि और उसके बच्चे की रक्षा सरनाम ही करता है। इस प्रकार बसिरि का प्रेम संरक्षण या वात्सल्य के अभूत पूर्व स्थितिमें पहुंच जाता है बसिरि बारम्बार सरनाम की कुरूर दुर्दान्त कमर में कारतूस की पेटी बांधे डकैत की प्रतिमूर्ति का स्मरण कर कभी उसके प्रेम में विहवल तो कभी उसके प्रति हिंसा का अनुभव करती रहती है। कथाकार ने प्रेम और हिंसा के इस द्वंद्व में काम को डालकर जिस कौशेयपट को बुना है, वह बहुत स्वभाविक तो नहीं प्रतीत होता किन्तु काम की दुंभर्सता और जटिलता में कुछ भी असंभव नहीं है। यहॉ हम बसिरि के रूप में प्रेम कामजन्य मुक्तता के साथ उसके जीवन के अन्य पक्षों का विवहागोहन करेंगे।

सौन्दर्य काम एवं प्रेम-

डकैती के आतंक के साये में हिरणी की तरह भयभीत तो दूसरी तरफ निःशंक बंसिरि के ग्राम्य सौन्दर्य का यथार्थ किन्तु संक्षिप्त चित्रण किया है। सौन्दर्य जो पुरुष को अविभूत न

कर दे, उसके क्रोध और आतंक को जड़ न बना दे, वह सौन्दर्य, सौन्दर्य नहीं होगा। उपन्यासकार ने नायिका के सौन्दर्य का प्रभाव परक उल्लेख इस प्रकार किया है। ''आग की लपट में चमकता हुआ बंसिरि का कुंदन सा तन...... रस से सराबोर.... एक आंच लगते ही जैसे रन्ध्रों से सुगंधित रस रिस आयेगा, चिकनी खाल भी पके टमाटर की तरह फूट जायेगी।''(3)

डकैत और पुलिस जैसे अर्ध सभ्य लोगों के मन में स्वस्थ्य तारुण्य लालिमा से ओताप्रोत बंसिरि मटर की तरह भरी हुई युवती लगती है जिसे मसलना या उसके देह को भोगना तृप्ति दायक निसीम होगी। यही बंसिरि जब नौटंकी में नाचती है तो उसका सौन्दर्य उतना आकर्षक नहीं रह पाता जितना श्रृंगार प्रसाधनों से मुक्त उसका प्राकृतिक सौन्दर्य था। साधुओं के नाटक मण्डली में बंसिरि को जब सरनाम ने गोपी के रूप में देखा था तो उसमें सलज्ज और मद के आधिक्य से बंसिरि को एक नया रूप भी प्राप्त हो गया था सरनाम तो ऐसे सौन्दर्य को देख हतप्रभ हो जाता है – ''कितनी निखर आई थी बंसिरि, गजरों से लदी, बनी ठनी बंसिरि उसकी चाल में मद था काजल रची ऑखें सरनाम के दिल में उतरनी चली गयी, चवर डुलाते समय उसकी गोरी बाँह मुडती तो जैसे रोशनी बिखरती थी।''(4)

ऐसे अपरूप सौन्दर्य से सराबोर मदालस तारुण्य के कारण मुखमण्डल में आयी लालिमा एवं युवाजन्य देह गंध से अविभूत बंसिरि के संदर्भ में सरनाम सोचता है– ''अगरवत्ती की धूप की सुगन्ध में बसी बंसिरि। वृन्दावन की ग्वालिन बंसिरि....चन्दन सा रंग और पवित्र हँसी.... काजल लगी कजरारी आँखे, मन में बसे कृष्ण की सहचरी जैसे सपना हो।''(5)

बंसिरि भी सरनाम को देखकर अपने पुराने प्रेम की याद करती है और जानना चाहती है कि जब उसे सरनाम भगा कर ले जाना चाहता था तो फिर वो धोखेबाज कैसे निकल गया। सरनाम और बसिरि के प्रेम का प्रार्दुभाव बड़ी विचित्र और विषम परिस्थिति में हुआ था, दुर्दान्त हत्यारे डकैत सरनाम को देखकर बसिरि कचेहरी में पहचानते हुये भी जज के सामने उसे नहीं पहचान पाई और यही बसिरि के मन में पौरुष पराक्रम से युक्त सरनाम की मूर्ति उसके घर कर गई। नौटंकी में काम करने वाली बसिरि सरनाम के आग्रह पर एकान्त में आकर उससे मिलती हैं सरनाम उसे बहुत पहले गद्दे में बैठाकर बंसिरि से प्रेम की याचना करता है। दोनों के सामीप्य ने बंसिरि के मन में मदहोसी जैसी स्थिति उत्पन्न कर दी। यही से बसिरि और सरनाम में काम परिपक्व होकर प्रेम में परिवर्तित होने लगता है। उपन्यासकार ने इस परिरर्तन को रेखांकित करते हुये लिखा है– ''सरनाम ने उसे अधलेटा कर लिया उसकी आँखे अंधेरे में भी लौ की तह चमक उठी थी गर्वीले गहरी साँस उसने खींची।''

गद्दी तो इतनी पतली है तुझसे सीधी तरह बैठा भी नहीं जाता... बंसिरि कह रही थी कि उसका कंधा गद्दी के नीचे आ रहा था वह बोली ये भी नहीं देखता इधर कांटे है खाल छिल गई इतनी टूटन थकान और हारी हुई झनझानहट सरनाम ने उसे मरोड़ दिया था उसके थके हुये शरीर में कुछ ऐसी सनसनाहट भर गई थी जो उसे आपे से बाहर किये दे रही थी।''(6)

पुरुषों के संसर्ग ने बसिरि को स्वच्छन्द एवं उन्मुक्त बना दिया था और बंसिरि कवि गेंदा लाल के चक्कर में पड़ गई जो अपने कवित्व जालमें अनाथ बेसहारा युवतियों को अपने वागजाल में फसाकर उन्हें किसी के हाथ बेच देता। बंसिरि के साथ भी ऐसा हुआ। सरनाम ने रंगीले के लिये किसी न किसी स्त्री की व्यवस्था करना चाहता था और चार सौ रुपये देकर सरनाम रंगीले के लिये जिस स्त्री का क्रय किया, नाम सुनते ही उस पर बज्रपात हो गया क्योंकि वह तो बसिरि ही थी। सरनाम नौटंकी की बंसिरि, सत्तारकी कृष्ण मण्डली के साथ रहने बाली बंसिरि, गेंदा के साथ रहकर बिकने वाली बंसिरि, उसे पहचान कर न पहचानने वाली बंसिरि के प्रति वहसीपन और प्रतिहिंसा से भर उठा, क्योंकि उसके मन में बंसिरि के प्रति एक ओर असीम प्रेम तो दूसरी ओर असीम घृणा थी और बंसिरि सरनाम के क्रिया कलापों से कुछ सर्पिणी की तरह सर पटकती कि वह कितना बेइमान दगाबाज इज्जत से खेलने वाला कमीना मेले में मिलकर भविष्य के सुनहले सपने दिखाने वाला सरनाम दगा देकर भाग जाने वाला सरनाम और उसे खरीद कर रंगीले को भेंट करने वाला सरनाम इन सबमें से बंसिरि समझ नहीं पाती कि सरनाम उसे कितना जलीलकरना चाहता है। प्रति हिंसा के कारण औरत कितनी खूंखार हो सकती है यह बंसिरि सरनाम को दिखा देगी। बारम्बार उसका यह संकल्प हाथ से निकल जाता और उसके मन: पटल पर सरनाम की मूर्ति अंकित हो जाती– ''बलिष्ठ सरनाम, पत्थर की लाट की तरह खड़ा होता है..... सीने पर कसी हुई कारतूसों की पेटी, बंदूक से खिलौने की तरह खेलता हुआ धाय....धाय....दस बीस तीस.....धाय.... धाय..... अविचलित सरनाम खतरे में भी सरदार की लाश को चादर की तरह कंधे पर डाले हुये हाथी डुबाऊ तालाब में झम्म से, सौ आदमियों का घेरा पर वह यह गया वह गया, रोंआ तक न छू पाया कोई दिलेर सरनाम का।''(7)

बंसिरि उस पत्थर के शरीर को संभालने का मन बनाती, बनाये रखने को उसका जी करता उसे छुये उस पर हाथ पटके और चट्टानी सीने के नीचे दबकर मर जाये, कुचल कर मर जाये पर उसे बिखरने न दे। उस चट्टान पर एक खरोंच तक न आने दे, अड्डे पर वो रोज उसे देखती टाट का पर्दा हटाकर खड़ी देकती रह जाती और करेगी भी क्या।''(8)

इस प्रकार बंसिरि और सरनाम का प्रेम विचित्र परिवेश में पलता है और बंसिरि सरनाम के सामने ही डाकू लूटेरा न जाने कितनी गालियाँ देकर अपनी प्रतिहिंसा को व्यक्त करती हैं। अन्त मे बंसिरि अस्पताल में पुत्र को जन्म देकर माँ बन जाती है। उस समय उसे सरनाम की याद भी आती है जिसे उसका तथाकथित प्रेमी शिवराज छोड़कर चला गया हैं वह प्रसन्न होती है कि बेहाल एकांकी सरनाम आखिर बंसिरि की तो याद करेगा ही, बंसिरि के लिये दिल में हूक उठेगी, तड़पेगा, पछतायेगा और बंसिरि लस्त पड़े शेर को देखेगी कितना अनिर्वचनीय आनन्द होगा उस दृश्य में हारा हुआ आदमी। औरत बेबस हो सकती है तो आदमी हार सकता है। दिल कड़ा करके एक बार देखेगी जरूर अगर आँख भर आयी तो चुरा कर रो लेगी पर देखेंगी जरूर। परास्त शक्ति को भी देख सकने की एक अनोखी उत्कण्ठा होती है।''(१)

और सरनाम असहाय बंसिरि के बच्चों को सहारा देता है उसे अस्पताल से लाकर रंगीले के घर में छोड़कर वह बसिरि को निश्चित सा कर देता है। उसके इस आचरण से बसिरि हल्के हल्के स्वरों में रोने लगती है। तात्पर्य यह है कि उपन्यासकार ने काम और प्रेम के प्रत्यच्छ रूप से सरल किन्तु परोक्ष रूप में तीखे और मादक चित्र अंकित किये हैं। अनाविद्ध रत्न की तरह अनखिले फूल के समान मुग्धा बसिरि के मन में तेजोद्दप्त सरनाम की प्रतिमूर्ति कुछ इस तरह स्थापित होती है जिससे न तो वह उन्मुक्त भाव से प्रेम कर पाती न ही समर्पण क्योंकि वह उसके घर का लुटेरा है असहाय बनाने में सरनाम का ही हाथ था फिर भी आकृष्ट बसिरि उसे पाना भी चाहती है और उसे पराजित भी करना चाहती है क्योंकि कचेहरी में जज के समक्ष सरनाम को सजा मुक्त कराने में बंसिरि का ही हाथ था शिवराज के छोड़ जाने पर वह सरनाम को पराजित भी देखना चाहती है ऐसे काम और प्रेम के अन्तर्द्वन्द्व में फँसने वाली बंसिरि न तो अच्छी पत्नी न ही प्रेमिका बन पाती है। रंगीले की जरखरीद पली बनकर भी वह उसे अपना देह तो सौंपती है। किन्तु रहरहकर पौरुष पराक्रम से भरे सरनाम को विस्मृत नहीं कर पाती उसके चरित्र के यही दो पक्ष प्रमुख है जिसमें उसका क्रोध उसकी प्रतिहिंसा उसकी जिजिविषा, प्रेम प्राप्ति के प्रयास और विश्वासघात के कारण उपजी कुण्ठा ने उसे सहज नारी नहीं बनने दिया।

सच्ची प्रेमिका-

कमलेश्वर जी का यह पहला उपन्यास - ''एक सड़क सत्तावन गलियां'' के सभी नायक-नायिका प्रेम की एक अतृप्ति जीजिवषा लिये हुये अपने जीवन के संघर्षरत काम की कामुकता से ओत-प्रोत होकर भी प्रेम के खोज में छिछले फर्श में फिसल रहे हैं। उपन्यास की नायिका बंसिरि जो जीवन में भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में भिन्न-भिन्न कार्यों के द्वारा अपनी जिन्दगी

का निर्वाह करते हुये और उन पर परिस्थिति में नायक सरनाम का मिल जाना एवं कहीं न कहीं अपनी उस जिन्दगी के लिये जिम्मेदार मानने वाली बंसिरि अपने प्रतिशोध हिंसा के अन्तर्द्वन्द्व के अग्नि में ज्वलित होने के बावजूद भी बंसिरि का सरनाम के प्रति प्रेम बार-बार जाग जाता है । फिर वह चाहे उसे लाख छिपाये लेकिन अन्तोगत्वा सरनाम के प्रति प्रेम ही झलकता है । यहां तक कि यह प्रेम एकांकी नहीं है बल्कि सरनाम भी बंसिरि से प्रेम करता है जिस समय गेंदा कवि बंसिरि को बेचता है और सरनाम अनजाने ही उसे अन्य स्त्री समझ कर रंगीले के लिये बंसिरि को पांच सौ रुपये में खरीदने के बाद बंसिरि का नाम सुनते ही सरनाम के पैर डिग जाते हैं । कहीं न कहीं वे दोनों एकदूसरेसे अत्यन्त प्रेम करते थे । जब बंसिरि रंगीले की पत्नी बनकर बस स्टैण्ड के एक कच्चे घर में रहने लगती है और सरनाम के द्वारा बैन्जो बजाने पर बंसिरि सोचती है- ''मुझे सुनाता है... बड़ा जुझारू बना है । शराबी कवाबी.... डरपोक.....। x x x x

...... यह हाय न होती तो तू आज फलता.... किसी कच्चे घर के आंगन में बैठकर गाता कोई सुनता । इमली के सूखे फूल नहीं काजल लगी आँखों से रसधार झरती । धूल के उड़ते हुये बवण्डर नहीं गोबर लिपि ठंडी धरती होती.... महावर रंगे पैर होते और लिखना से भरी ऐपन की दीवारें.... हर तीज त्यौहार होता । रास रंग होता । जीने......मरने वाला कोई साथ होता ।''[10] बंसिरि की सरनाम के प्रति चिंता फिर वो चाहे कटु शब्दों में ही क्यों न हो लेकिन प्रेम की हूक ही इन विशाल काय शब्दों की धारणा बनाता है ।

बंसिरि अपनी बरबादी का कारण सरनाम को मानती है और उससे हर वक्त बदला या नीचा दिखाने की ताक में लगी रहती है । नारी पुरुष के सौकुर्माय देह को हमेशा नापसंद करती है वह तो पुरुष के बलिष्ट देह एवं पुरुषत्व से भरे पौरुष को ही अपनाती है उपन्यास में बंसिरि भी कई पुरुषों से मिलने के बाद भी सरनाम के पुरुषत्व से भरे बलिष्ट शरीर पर ही रीझती है । और उस रात जब सरनाम बंसिरि को रंगीले के लिये पांच सौ रुपये में खरीदने पर केवल चार सौ रुपये ही उस रात देता है तो वह बंसिरि को उस रात रंगीले के साथ नहीं ले जाता है । और फिर उस रात उसने शहर के जाहिद दिवान को खुश कर लिया था लेकिन उसका मन सरनाम के ऊपर ही रीझ रहा होता है- वह उसकी निडरता, बहादुरी से प्रेम करती है । निडर सरनाम उसकी आँखों के सामने घूम जाता है । बलिष्ठ सरनाम पत्थर की लाट की तरह खड़ा होता है..... सीने पर कसी हुई कारतूसों की पेटी, बंदूक से खिलौने की तरह खेलता हुआ- धाँय....धाँय.... दस बीस तीस.... धाँय....धाँय... अविचलित सरनाम । खतरे में भी सरदार की लाश को चादर की तरह कंधे पर डाले हुये वह ओझल हो जाता है

और तब हाथी दुबाऊ तालाब में झम्म । सरनाम नहीं कोई चट्टान तालाब की छाती पर गिरि थी.... गांव भर गूँज गया, चार सौ आदमियों का घेरा, पर वह यह गया... वह गया.... रोआँ तक न हूँ पाया कोई, दिलेर सरनाम ।....[11] x x x x

अंधेरी रातों में घुरघुराते इंजन के ऊपर बैठा सरनाम । खाई खड्ड..... उबड़-खाबड़ सड़क..... पर उसकी बाँहें है कि ट्रक उछलता चला जाता है । उसकी बाँहों की उभरी हुई नसें, पसीने से चिपकी हुई कमीज और थरथराती हुई माँसपेशियाँ-पथरीला शरीर..... पिस गई थी वह.... रग रग निचुड़ गई थी, हड्डी-हड्डी चटक गई थी, और उस हड़फूटन का अनिवर्चनीय सुख । कैसे लड़ेगी वह उससे...। मन क्यों....डूब-डूब जाता है- उस पत्थर के शरीर को संभालने का मन होता है, बनाये रखने को जी करता है । उसे हुए उस पर हाथ पटके और चट्टानी सीने के नीचे दबकर मर जाये.... कुचलकर मर जाये; पर उसे न बिखरने दे। उस चट्टान पर एक खरोंच तक न आने दे ।''[12]

वस्तुत: बंसिरि एक सफल औरत नहीं बन पाई लेकिन उपन्यास कथानक में बार-बार सरनाम के प्रति मन के किसी न किसी कोने में प्रेम दबाये हुये हैं । शिवराज से बार-बार सरनाम के बारे में पूछना और उसकी फिक्र करना प्रेम नहीं तो क्या है ? जहाँ एक ओर उपन्यास में उपन्यासकार ने एक छोटे लोगों के जीवन के उतार चढ़ाव को दिखाया है, वहीं दूसरी ओर सभी पुरुष के जीवन में प्रेम के भी उतार चढ़ाव को बाखूबी दिखाया है । कथा नायिका बंसिरि का कई पुरुषों के मिलन के बाद भी अन्तोगत्वा उसका हृदय सरनाम के नाम का ही स्मरण करता है शायद प्रथम प्रेम यही होता है बंसिरि भी अपने सम्पूर्ण जीवन में सरनाम के प्रति ही समर्पित रहती है लम्बे समय तक सरनाम का पता न चल पाने एवं उसके लिये चिंता और भगवान से उसके लिये प्रार्थना करना वो भी किसी की (रंगीले) की पत्नी होने के बावजूद उसके प्रथम प्रेम (first sight of love) के बारे में ही निर्देशन करता है- बंसिरि बेहद परेशान थी इधर शिवराज भी कई दिनों से नहीं आया । सरनाम भी अड्डे पर नहीं दिखाई दिया, न जाने कैसी बात थी- जब वह आँखं के सामने होता, उसका होना अनुभव में होता तो प्रति हिंसा धधकती रहती और आंख ओट होते ही व्याकुलता भरी छटपटाहट कुरेदने लगती । न उसका जीना सह पाती थी,न मरना । जब जब वह इस तरह ओझल होता तो उस एकांकी व्यक्ति को एकांतिक व्यथा और दु:खों की गोपनीयता दिल में कसक-कसक जाती.... चंचल सम्मोहन सा रबर की तरह खींचता और उसके आते ही जब वह रबर एकाएक छूटकर चपेट मार जाती तो मन बौखला उठता न जाने वह कहाँ होगा.... किस बीहड़ जंगल

में.... काली नदी या चम्बल के भीटों में... किसी अस्पताल में या न जाने शायद किसी बंजर बीरान ऊसर में उसका निर्जीव शरीर... जीभ दांतों से कट जाती है..... हे देवी ! उसकी कुशल तेरे हाथ है माई ! उसने किसी का बिगाड़ा है, खुद बिगड़ गया है माई ! दया करना.... उसे क्षमा करना, सब पापों का बदला इस तन से ले लो दयावती !''

यह प्रेम एक तरफा नहीं था बंसिरि जितना सरनाम को चाहती थी उतना ही सरनाम भी बंसिरि को चाहता था फिर वो चाहे सर्कस में वह मुलाकात हो या फिर रास मण्डली में सरनाम को प्यार की भूखी आँखों द्वारा बंसिरि की तलाश। उपन्यास के अन्त में भी रंगीले का जेल चला जाना एवं सरनाम के द्वारा बंसिरि की देखभाल एवं बंसिरि का उसके द्वारा दिये गये सहारों को चुपचाप स्वीकार कर लेना दोनों का प्रेम ही है।

जीवन के संघर्ष में विषम परिस्थितियों का सामना करने के बाद भी उन परिस्थितियों का सामना करने के बाद भीउन परिस्थितियों में प्रेम की इतनी सफल अभिव्यंजना कर उपन्यास कार ने एक आर्दश प्रेम की जो वासना जनक न होकर त्याग एवं समर्पण ने पूरित प्रेम को यथार्थ जीवन में प्रत्यच्छ लाने का सफल प्रयास कर स्त्री और पुरुष को प्रेम के प्रत्यच्छ या अप्रत्यच्छ बंधन में जोड़ने का प्रयास किया है।

उदार दृढ़ एवं स्वाभिमानी :

उदारता नारी का प्रमुख गुण होता है। उपन्यास की नायिका भले ही एक सफल प्रेमिका, पत्नी, दोस्त या बेटी न बन पायी हो लेकिन नारी वंशानुगत गुणों से भी अछूती नहीं रही है। कथानायक ने जीवन चक्र के कठिन दौर से गुजरते बंसिरि को नारी के स्वभाविक गुणों को भी प्रस्तुत करने की एक सफल प्रयास किया है और जिस समय थाने में थानेदार बंसिरि के द्वारा शिनाख्त करवाई और बंसिरि के द्वारा सरनाम को पहचानने से इंकार करना उसकी उदारता का ही परिचय मिलता है– ''सरनाम ने माथे का पसीना पोंछने के बहाने मुँह ढक लिया था, कटघरे की बाढ़ से टेक ले ली थी और तब बंसिरि ने कहा था– ''मैं इसे नहीं पहचानती !''(13) यह सुनकर सरनाम का शरीर खोखला हो गया था। जिस डकैती के कारण बंसिरि का सम्पूर्ण परिवार एवं जीवन बर्बाद हो गया था फिर भी डकैती के दौरान सरनाम द्वारा कहीं न कहीं बंसिरि के इज्जत की रखवाली हुई थी और उसी सरनाम के मन में नारी के प्रति उदारता देखकर कहीं न कहीं दोनों के बीच प्रेम या लगाव या फिर कहे समसरता आने लगी थी और अदालत में बंसिरि के द्वारा सरनाम को पहचानने से इंकार बंसिरि की उदारता नहीं है तो फिर क्या ?

जीवन सुख और दुख का संगम है । एक सड़क सत्तावन गलियाँ नामक उपन्यास में बंसिरि नारी जो कि एक अच्छे घर परिवार की लड़की है डकैती के दौरान उसका जीवन छिन्न-भिन्न हो जाती है लेकिन वह बड़ी दृढ़ता के साथ अपने जीवन को जीती है ।

पांच नटनियाँ दो तम्बुओं में थीं । नट उन्हीं की अगल-बगल थे । एक नट ने कुछ कहा था तो बंसिरि एकदम बिफर उठी थी ''जा..जा... अपने तबेले में सो, इधर का रुख किया तो जान सलामत नहीं.....'' .... एक रोज मेले में नौटंकी शुरू होने से पहले बंसिरि मिली थी। देखते ही बोली, ''डाका मारना है ?'' सरनाम हँस दिया । बोला- ''अब तेरे यहां रह क्या गया ?'' और उसने बेहद गहरी नजरों से बंसिरि को ताका था ।

''तेरे लायक सब कुछ है । है दम ?'' बंसिरि ने कहा और खिलखिला पड़ी.... पान से रंगे दाँत सरनाम को भा गये । कितनी मुँह फट हो गई है । हया शरम खोकर औरत बनी है अब[14] इन सब आदतों के साथ-साथ वह एक स्वाभिमानी स्त्री थी उपन्यास में सरनाम से अगाध प्रेम करने के बाद भी स्वाभिमान बस उसने कभी भी स्वीकार नहीं किया है ।

पश्चाताप की भावना -

बंसिरि भले ही एक सफल श्रेष्ठ प्रेमिका, पत्नी या नारी भले ही न बन पाई हो लेकिन सरनाम के प्रति प्रतिशोध, क्रोध की आग हमेशा से उसके सीने में धधकती रही है और उसी के चलते वह अपने त्रियाचरित्र के माध्यम से अपने पति रंगीले को सरनाम के प्रति झूठी गवाही देने के लिये मना लेती है लेकिन उल्टे ही रंगीले को झूठी गवाही देने के आरोप में बंदी बना लेते एवं प्रसव से असहाय समय पर सरनाम द्वारा उसकी देखभाल करने एवं अस्पताल से उसे घर लाकर अपनेपन के साथ कहते हुये कि दीया बत्ती जला ले । मैं चल रहा हूँ । रंगीले नहीं तो अकेला मत समझना अपने को ! कुछ जरूरत हो तो मुंह खोल के कह देना... जा... भीतर जा.....।''[15]

और इन शब्दों को सुनकर बंसिरि की क्रोध प्रतिहिंसा कहीं न कहीं विलुप्त हो चुकी थी और अपने घर में घुसते ही रो पड़ी थी । और उन आँसुओं में बंसिरि का शायद सारा क्रोध सरनाम के प्रति बह गया ।

क्रोध, प्रतिहिंसा एवं परपीड़क अनुभूतियों से ग्रसित -

कथानायक सरनाम के द्वारा की गई डकैती के कारण कथानायिका बंसिरि का जीवन व्यवस्थित से अव्यवस्थित में परिवर्तित हो गया था और इसलिये सम्पूर्ण उपन्यास में बंसिरि के द्वारा की गई चिंता में भी सरनाम के लिये कहीं न कहीं क्रोध एवं प्रतिहिंसा झलकती है

जिस समय सरनाम रंगीले के साथ डकैती की योजना बना रहा होता है और बंसिरि को इस बात का पता चलता है– ''काली माई का रूप धारण किये बंसिरि सारी शरम लिहाज छोड़ कर सामने आ गई, सरनाम पर आँख पड़ते ही प्रतिहिंसा की ज्वाला में उसका रोम–रोम झुलस उठा।''डकैती तुम करो, खतरा हम उठायें......''(16) सरनाम के द्वारा– कहीं व्याहता होती तो अब तक चबा गई होती...'' एवं बुरा भला कहने पर बंसिरि कह उठती है– ''थूक तू अपनी करनी पर ! अपने करमों पर चाण्डाल ! डाकू ! लूटेरा....'' न जाने कितनी गालियाँ बंसिरि के मुँह से निकलती चली गई और आग बरसाती आंखों से सरनाम और रंगीले की तरफ देखा।''(17)

नारी कितनी भी वज्र हद्दय वाली क्यों न बन जाये लेकिन अपने गुण दया परपीड़क से भी दूर नहीं हो पाती है। बंसिरि का सब कुछ नष्ट करने वाला सरनाम के प्रति बंसिरि को न कहीं मन में क्रोध के साथ परपीड़ा भी थी। बंसिरि रंगीला की पत्नी बन वही बस स्टैण्ड के पास रहने लगती है और सरनाम का वहीं बस स्टैण्ड पर बैंजों बजाने एवं उसी में डूब जाने पर बंसिरि से सह नहीं जाता। टाट के पीछे खड़ी कुढ़ती हुई बंसिरि सोचती– ''मुझे सुनाता है.... बड़ा जुझारू बना है। शराबी–कवाबी....डरपोक।''(18) अपने ऊपर द्दष्टि दौड़ाती– ''इस तन पर पड़े हुये इतने दाग, इतने घाटों का पानी और यह मन की जलन,कहाँ ले जायेगी तुझे। हाय तुझे राख करके छोड़ेगी। पर चिन्ता के साथ–साथ बंसिरि को सरनाम के उन कृत्यों की सुध आ जाती जिस कारण बंसिरि की परपीड़ा क्रोध में परिवर्तित हो जाती – यह हाय न होती तो तू आज फलता किसी कच्चे घर के आँगन में बैठकर गाता,कोई सुनता। इमली के सूखे फूल नहीं, कागज लगी आँखों से रसधार झरती ! धूल के उड़ते हुये बवण्डर नहीं गोबर लिपि ठंडी धरती होती.... किसे अपना कहेगा ? किसी दिन मोटर में बैठा बैठा मर जायेगा,कोई पेट्रोल छिड़क कर जला देगा या भागते भागते किसी गहराती नदी में घड़ियाल, कछुओं के बीच फेंक आयेगा। .... और यही परपीड़ा क्रोध एवं प्रतिशोध का रूप धारण कर लेती है– कितना बड़ा एहसान किया था मुझ पर। शरम नहीं आयीथी कहते हुये– सौदा खतम। मगन मिस्त्री नहीं ले सकता इस औरत को।'' औरत को! किधर से औरत थी मैं तेरे लिये। औरत समझकर अहसास कररहा था.... तेरी मैं कोई नहीं थी। बाजारू समझा था। जब तक ये रुपया पूरा नहीं चुका देगा, तब तक तू रख इसे। कहते हुये तेरी जीभ नहीं गिर गई।..... ढाल तलवार माँगता है..... कामिनी को बचायेगा.... मेहरा।'' और बंसिरि की आँखें क्रोध से जलते–जलते न जाने क्यों रुआँसी हो गई....। और इसी क्रोध प्रतिहिंसा के चलते बंसिरि रंगीले को सरनाम के खिलाफ गवाही देने के लिये भी तैयार करती है।

निष्कर्षत: उपन्यासकार कमलेश्वर ने बंसिरि के अवचेतन मस्तिष्क पर पूर्ण रूप से सरनाम के प्रेम के बादलों से आच्छादित दिखाने की कोशिश की है। विकृत प्रेम के कारण बंसिरि न तो एक सफल पत्नी ही बन पायी और न ही एक सफल प्रेमिका। उपन्यास के प्रारंभ से लेकर अन्त तक काम की वासना लिये हुये भी सरनाम के प्रेम से तृप्त नहीं हो पाती और प्रेम की अतृप्ति लिये वह रंगीले से भी काम की तृप्ति नहीं कर पाती। रंगीले से काम वासना की तृप्ति एवं बच्चे को जन्म देने के पश्चात् भी बंसिरि सरनाम से ही प्रेम करती रही और कहीं न कहीं सरनाम के दिलोदिमाग में भी बंसिरि छायी रही।

सम्पूर्ण उपन्यास में उपन्यासकार ने एक विशिष्ट प्रेम जिसकी उत्पत्ति एवं निष्पत्ति तो अप्रत्यच्छ रही लेकिन दोनों के प्रेम की टीस शब्दों के माध्यम से व्यक्त होती रही। एक ऐसे प्रेम की अभिव्यंजना की गई है जिसमें नायिका के जीवन की बर्वादी का श्रेय तो नायक को होता है फिर भी जिस प्रकार से व्यक्ति के जीवन में पहले प्रेम की महत्वा को एवं जीवन की विभिन्न परिस्थितियों से गुजरते हुये, एक न होते हुये भी एक है।

इरा-

इक्कीसवीं सदी के सफल उपन्यासकारों की अग्रिम पंक्ति में विराजमान समसामायिक कमलेश्वर जी का डाक बंगला नामक उपन्यास एक नूतन कथानक का सृजन किये हुये है, जिसमें नर-नारी संबंधों का मार्मिक चित्रण, विशिष्ट वातावरण और परिस्थिति में सामंजस्य का अनोखा चित्रण है। डाक बंगला- एक ऐसा उपन्यास है जिसमें बार-बार पुरुष के द्वारा छलि गई स्त्री के उन भावनाओं का यर्थाथ चित्रण है जो किसी भी स्त्री के लिये बार-बार सहन करना एक नई मौत मरना है। उपन्यास की नायिका ''इरा'' एक ऐसी महिला है जो स्वत: वाह्य और आभ्यन्तर सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति होने के साथ-साथ अपने में बहुत कुछ संजोये हुये हैं।

उपन्यासकार का साहित्य समाज का दर्पण होता है। इस कर्तव्य का निर्वाहन किया है कमलेश्वर जी ने। आधुनिक युग में नारी की सम्बलता पर प्रश्न चिन्ह लगाता है यह उपन्यास सृष्टि प्रारंभ से ही नारी का कवच पुरुष को माना गया है और इतने आधुनिक समय में भी इरा- जो कि सुशिक्षित, संभ्रान्त एवं समझदार होने के बाद भी नारी की उन सुकोमल भावनाओं पर नियंत्रण न रख पाने पर एक सुव्यवस्थित जीवन की चाह लिए हुये भी बार-बार अव्यवस्थित जीवन जीने को मजबूर रहती है। इस उपन्यास का प्रमुख कथ्य है एक स्त्री की व्यथा और डाक बंगला है। आती जाती जिन्दगी का प्रतीकार्थ है डाक बंगला। समाज के उस वर्ग को

दिखाया गया है जिसमें नारी सदैव काम दृष्टि से ही परखी गई है और काम निकलते ही उसे बुरा न कहकर बल्कि कोमल भावनाओं एवं संवेदनाओं का लिबास पहना दिया जाता है। इरा की व्यथा का संवेग बहुत गहरा है और यह संवेग भौतिक तथा भावनात्मक दोनों ही स्तरों पर लक्षित है । अनेक तरह की उपेक्षाओं से त्रस्त वह सम्पूर्ण स्त्रीत्व के साथ जीने की ललक रखती है लेकिन उसकी ललक उसकी जिजिविषा को अंगीकार हो जाती है । उसका स्त्रीत्व सिर्फ काम–भावना और बंधनहीन प्रकृति की तमन्ना नहीं रखता, बल्कि ऐसे पुरुषत्व की तलाश में व्याकुल रहता है जो कि शरीर के साथ–साथ संवेदना के स्तर पर उसे प्यार दें ।

19वीं सदी की नारियां बोल भाषा के साथ–साथ हर क्षेत्र में बढ़ती हुई दिखाई दी है वहीं दूसरी तरफ समाज में नारी देह के प्रति काम वृत्ति के सिवाय कुछ भी नहीं रहा और इस यथार्थ को दिखाया है कमलेश्वर जी ने अपने उपन्यास के माध्यम से ।

''डाक बंगला'' दमित स्त्री का इकरारनामा भी है । जरूरी तौर पर उसकी वासनात्मक कुण्ठा को स्त्री पुरुष के संबंधों की एक नयी परिभाषा तैयार करती है । पुरुषविहीन सुन्दर स्त्री के विश्रृंखलित जीवन की टूटन को इरा जैसी शहरी स्त्री ने एक संवेदनशील आयाम दिया है । कथा के प्रारंभ से लेकर इरा नायिका के माध्यम से उपन्यासकार ने पुरुष की विचित्र विडम्बना से ग्रसित मानसिक अवसाद को व्यक्त किया है जहाँ एक ओर नारी पुरुष को जीवन सुरक्षित में कवच के रूप में सहायक मानती है वहीं दूसरी तरफ पुरुष बिना स्त्री के जीवन की नश्वरता को सहन करने में असमर्थ पाया जाता है और मानसिक अवसाद से ग्रसित होता जाता है । शहर की व्यस्तता एवं उचित मार्गदर्शन न मिल पाने की वजहसे इरा जैसी स्त्री इतनी पद दलित एवं जीवन सुरक्षा के द्दष्टिकोण से पुरुष की संवेदनाओं से प्रेम कर उस कवच को अपने इर्द गिर्द रखने की कोशिश में प्रारंभ से अन्त तक प्रयास में रहती हुई दिखाई पड़ती है ।

वहीं दूसरी ओर देह द्दष्टि से पद दलित स्त्री के बलिष्ट प्रेम को निखारा है कमलेश्वर जी ने । इरा का प्रथम प्रेम विमल अन्तोगत्वा आखिरी प्रेम तक रहता है । बतरा, सोलंकी डॉ. चन्द्रमोहन तो शायद कवच रूपी हेलमेट के शिवाय कुछ भी नहीं है जो जिन्दगी चालक में सुरक्षा के द्दष्टिकोण से पहने जाते हैं ।

सौन्दर्य प्रेम एवं काम–

नारी का सौन्दर्य उसका आभूषण माना जाता है । सृष्टि में नारी में कमनीय एवं सुकोमल सौन्दर्य को परिद्दश्य देखा जाता है तो पुरुष में बलिष्ठाता को सौन्दर्य का प्रतीक माना है ।

कथा नायिका इरा एक सुन्दर युवती है उसके अंग–अंग से सौन्दर्य फूट रहा है पुरुष

चाहे जितना सम्बल हो नारी सौन्दर्य के सामने विह्वल हो जाता है। पहलगाम की पहाड़ियों से घिरा हुआ गांव नींद में डूब उतरा रहा था। तिलक और इरा के बीच में बात हुई सुबह घूमने जाने की और इरा द्वारा यह कहने पर कि तुम नहीं जग पाओगे।'' तिलक कहीं न कहीं इरा की खूबसूरती पर फना था शायद इसीलिये उसके सानिध्य को प्राप्त करने के लिये वह सुबह जाग जाता है और उसे जताने के लिये एवं अपने जाग जाने का संकेत देने के लिये टार्च की रोशनी से सिगनल देने एवं खिड़की खुलने और कमरे में मोमबत्ती की भरी हुई रोशनी के परदे पर इरा का छाया चित्र की तरह दिखाई देने पर तिलक कहता है– ''मैंने उसके ओठों को पहचाना.... और वह बनघास की भीगी–भीगी महक, जो हमेशा उसके चिकने नम शरीर से उठा करती थी.... उसकी अलग आँखों की कोर में सोये उन्माद की लहरियों को जागता हुआ महसूस किया।[19] तिलक उसकी इस अलसाई हुई सौन्दर्य को देखकर मुग्ध हो जाता है वह इरा के बालों को मोमबत्ती की लौ में उसके बाल गोटे के झीने तारों कीतरह चमक उठे थे।''[20]

तिलक अपने तम्बू से निकल कर चलने के उद्देश्य से इरा के होटल की तरफ जाता है और कहता है यहां खड़ी हो वहां मैं इंतजार कर रहा था और वह मेरे कंधे से सट गई थी। उसके सुडौल रेशमी कंधों पर हाथरखते ही उंगलियां चारों ओर से अपने आप सिमटने लगती थी और कंधे से कुछ नीचे पीठ पर वे स्वत: सड़सी की तरह बंद हो जाती थी। इरा का शरीर लहर की तरह सिहरता और व्यर्थ मुक्ति की सारहीन चेष्टा आंखों में आकर पूछती, क्या ? और उनमें झांकते हुये प्रश्न और उत्तर एक ही बिन्दु पर आकर मिल जाते। प्रश्न और उत्तर से परे एक सहज चेष्टा और उससे उत्पन्न एक मोहक प्रक्रिया–भरी स्वीकृति।[21] कोल्हाई की तरफ जाने के लिये तैयार इरा और तिलक दोनों साथ–साथ निकल पड़ते हैं रास्ते में इरा के द्वारा स्वप्न वादी बातों को सुनकर तिलक ने व्यवहारिक ढंग से मुस्करा दिया था इरा इस उपेक्षा को सहन नहीं कर पाई थी और उस समय उसका सौन्दर्य कुछ दूसरै ही तरह से झलक रहा था– ''बाँह में पड़ी चूड़ियाँ सरकाने का उपक्रम करते हुये उसकी बाँह पर पहली बार हाथ रखा था इरा की त्वचा में खिंचाव था। उसका रोम–रोम भर आयाथा जैसे रेत के कण उसके शरीर पर चिपक गये हों। उसकी आँखों में उमस थी और होंठो पर मादक सूखापन। उसके शरीर का सारा रस निचुड़कर कही भीतर समा गया था रुखा तन सूखी टहनी की तरह कड़ा था पर ऐसा कड़ापन जो उंगली के इशारे मात्र से चटाख से टूट जाये।''[22]

तिलक इरा की आंखों के सौन्दर्य को देखकर कहता है– ''इरा ने अपनी काली काली आँखों से मेरी तरफ देखा, बादामी पुतलियों में जाले की तरह महीन तार चमक रहे थे और

केन्द्र का काला दृष्टि बिन्दु मोती की तरह झलमला रहा था। उनकी बरौनियों के बाल कंटीले तारकी तरह खड़े थे। न जाने क्यों मुझे उन आंखों को देखकर लगा कि जैसे सारी गलती इन्हीं की हो। इरा की सौन्दर्य पूर्ण जीवनी को बियावन में घसीट लाने का दोष इन बहशी आंखों का है।''(23) मुगल काल में कश्मीर को कहा गया कि यदि कहीं स्वर्ग है तो यहीं पर है। शंकराचार्य की पहाड़ियों के साथ-साथ महादेव हरि पर्वत की सुन्दरता के साथ इरा कीसुन्दरता पागल बना रही होती है तिलक को। लेकिन सब बेबसी के क्रम में आबद्ध था तिलक कहता है सचमुच इस तरह मैं नहीं रह पाऊँगा.... यह पानी की आग.... यह झुलझन या तो इसमें कूदना होगा या इस अग्नि देश से भागना होगा। प्रकृति के साथ-साथ इरा की सुन्दरता तिलक को उद्विग्न कर रही थी। इरा की पीठ मेरे सामने थी... पानी की शक्ल में तराशी हुई माँस की नरम चट्टान। और तब छिटपुट प्रेम एवं काम का सफल प्रयास की भावना तिलक के मन में आ जाती है इसकी इस भावना को उजागर करते हुए उपन्यास कार लिखते है - ''और तब नहीं जानता कैसे उसके जूड़े के नीचे गरदन पर मेरे तपते हुये होंठ थे... धुले हुये केशों की ठण्डक पलकों से आँखों पर उतर गई, स्निग्ध शीतलता बनघास की भींगी गंध.... मधुनाभि पर रखे हुये अधरों का अलस-अस्तित्व.... या ओस से भीगे कमल पर रखी हुई चेतन पर मदहोश इन्द्रियाँ, पंखुड़ियों की नरम शीतलता और पराग की भीनी गंध....तभी कमलपांखों सी रेंगती हुई उसकी उंगलियाँ मेरे कान पर थरथराई थीं।..... और कहीं हवा के साथ प्रतिध्वनित होते शब्दों की मौन झंकार चारों ओर समा गई थी...।''(24) तिलक इरा के शारीरिक सौन्दर्य की उपमा प्रकृति के मनोरम दृश्यों एवं चीजों से देता है। लिद्दरवट का पहाड़ किसी विशाल डबल रोटी के कटे हुये टुकड़े की तरह जमीन पर खड़ा था चीड़ देवदार के पेड़ सटे-सटे से खड़े थे सिर्फ शायद बाँहे पकड़ने की देर थी.... खामोश सच्चाइयाँ उनमें से फूटने लगती। और ठीक इरा भी तिलक के साथ अंधेरी रात में उसके सानिध्य का सहारा लिये हुये अपने जीवन की सच्चाइयों से रूबरू करा रही थी और उसके द्वारा यह कहने पर कि सभी ने विलास किया है मेरे साथ....। उस समय तिलक इरा की सौन्दर्य को कुछ इस प्रकार व्यक्त करता है- ''पीठ पर रखा हुआ मेरा हाथ जैसे संगमरमर पर थरथरा रहा था.... देवदार की पत्तियों की बिछावन की तरह चिकनी देह से सौंधी महक फूट रही थी। और नदी का पानी चट्टानों पर खामोश पछाड़े खा रहा था, जिसकी झनझनाहट मैं उसकी पीठ पर महसूस कर रहा था।''(25) अपने जीवन के दुखद चरणों को बताते हुये अपने यौवन कालके आरंभिक कदमों के स्पर्श को व्यक्त करती हुई स्वयं आपने सौन्दर्य के बारे में कहती है- देखने वालों की आँखें मुझे सौन्दर्य की अनुभूति देती थी।..... मेरे बालों में रेश्मीपन आ रहा था और आँखों

के किनारे नदी के तट की तरह गीले होकर खुलते जा रहे थे। बाँहें चन्दन की लकड़ी की तरह चिकनी और गंध भरी होती जा रही थी।(26) नारी का सौन्दर्य परख करने वाला इस सृष्टि में केवल पुरुष है और पुरुष की भावनाओं एवं संवेदनाओं को बांटने एवं संजोये रखने का कार्य सिर्फ नारी ही करती है। इरा के द्वारा अपने जीवन की घटनाओं से तिलक को परिचित कराने एवं तिलक के द्वारा सोलंकी के बारे में पूछने पर इरा का खिलखिलाकर हंसने पर इरा का सौन्दर्य और निखर जाता है- ''पीठ पर पड़े रेशमी बाल सरसराने लगे..... और उसके चेहरे पर एक-एक रेखा हंसते हुये उभर आई। उसके होठों में जैसे रस भर आया और नख्स तीखे हो गये। ......मैं उसकी हँसी की आवाज को पीतारहा और एकटक उसके बेहद खूबसूरत चेहरे को ताकता रहा।''(27) तिलक के सवाल पूछने पर इरा खिलखिलाकर हँसी थी.... रसवंती इरा। हँसते-हँसते उसके अंग-अंग में रस भर आया था अंगों की चिकनाहट बढ़ गई थी.... कानों की लबे गुलाबी कोपल की तरह नरम और गुदारी हो आई थी। फैले हुये ओठों से पड़ती लकीरों ने गालों को अछूती-अनदेखी नरमी से भर दिया था। उसकी बाँहें केले के खुलते हुये पात की तरह कोमल हो गई थी और उंगलियाँ रुई की बनी लग रही थी, जिनमें नाखूनों की जगह गुलाब की लम्बी पंखुड़ियाँ चिपकी हुई थी आँखों की पलकें नरम सीप की तरह थीं और कानों के पास बालों की लट सेम के अंकुर की तरह लिपटी हुई झिझक रही थी। उसके शरीर के अंग-अंग, पोर-पोर में जैसे लाखों-करोड़ों गोरी-गोरी कोपलें विकसित हो आई हों ...... भीतर लाखों रसश्रोत फूट पड़े हों और उनकी गंध-धार ओठों के तट तक आकर भीतर-भीतर लौट जाती हो। गीले तटों से ओंठ और आँखों के पारदर्शी पानी में उन लहरों की पड़ती हुई प्रतिच्छाया...... तन की घुमड़ती लहरियों से मांसल गहराइयों में पड़ती हुई भंवर। कमर के ऊपर भंवर नाभि की परिधि में पड़ती सर्पिल मांसल लहरें और अथाह गहराइयों की तह थरथराता हुआ रस-प्लावित सागर शरीर.... सचमुच उस क्षण बसंती रसवंती थी इरा....।''(28)

और उसके रूप का वह रुख....जो डल पर चश्माशाही की पहाड़ियों को देखते हुये उभरा था जब धीमी आग में जलते हुये मैंने उसकी चूड़ियाँ सरकने का उपक्रम करते हुये उसके शरीर पर पहली बार हाथ रखा था- उसकी यही चिकनी त्वचा तनाव से भर गई थी। शरीर का सारा रस जैसे निचुड़कर भीतर समा गया था। उसका रोम-रोम भर आया था। आँखों में नीलापन भरने लगा था और ओठों पर मादक सूखापन छा गया था, जैसे रसधार भीतर समा गई हो और तटों की किनारियाँ रुखी हो गई हों। सौन्दर्य के बिखरने में भी अद्भुत सौन्दर्य होता है।(29) इरा इतनी सुन्दर थी कि तिलक उसकी हर एक अदाओं को

प्रकृति से तुलना करके उसके सौन्दर्य को झांकने की कोशिश करता है। तिलक कहता है- पतझर का सौन्दर्य। वैसी ही थी इरा उस दिन। माथे पर बालों की लटें रस रिक्त वन-घास की तरह हिल रही थी। जैसे पतझर में दूर-दूर के दृश्य साफ हो जाते हैं, दृष्टि की सीमा बढ़ जाती है, उसी तरह इरा के पतझरे-तन की एक-एक टहनी साफ थी....और आँखों का नीलाकाश दूरियों तक खुल गया था.... पतझर के रूखे वैभव की तरह था इरा का सौन्दर्य..... उसके शरीर में गरम हवाओं की सनसनाहट थी और शब्द उड़ते पत्तों की तरह बोल रहे थे। उसके बालों की फिसलन में सूखी घासों से बहती हवा की उदास आवाज थी।[30] और तिलक इरा के सौन्दर्य का चौथा रूप भी देखता है। जब वह सोलंकी पर बिफर उठी थी- उसका अंग-अंग पलाश फूलों की तरह दहक उठा था और उसकी देह की चमक बिछलती धूप की तरह चौंधिया रही थी। उसके भीतर का शीशा एकाएक झनझनाकर टूटा था और उसकी किरचों से बिंधा इरा का शरीर चमक कर रहा था।

आँखों में आग जल रही थी। ओंठ अंगारों की तरह दहक रहे थे.... मुख के उठे हुये हिस्से उस आग की तपिश में ताँबे की तरह दमक रहे थे। कंधों से नीचे आई हुई बालों की लटें छाती पर नीली लपटों की तरह मचल रही थी। कानों की लबे जैसे उस गरमी में पिघलकर बूँद की तरह चू पड़ने के लिये और गोल हो रही थी और उसके शब्द आग में चटखती बड़ी चिनगारियों की तरह बिखर रहे थे x x x x उसकी बाँहों की नीली नसें चमक आई थीं.... और गरदन से पसीने की बूँदें ऐसे ढरक रही थीं जैसे शमा की शिखा के नीचे गरम मोम पिघल कर ढरकता है।''[31]

स्वभाविक रूप से जो नारी इतनी सुन्दर हो वह पुरुष की प्रेम भरी नजरों से कैसे बच सकती है। सौन्दर्य ही काम एवं प्रेम की भावनाओं को उदिग्न करने में सहायक होती है। इरा का सौन्दर्य ही जीवन में ऐसी उथल-पुथल मचा देता जिससे शायद इरा भी संतुष्ट नहीं रह पाती है वहीं दूसरी ओर जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में इरा का सौन्दर्य ही उसके जीवन यापन का सहारा बन बार-बार किसी पुरुष के सामीप्य लाने में सहायक बनते हैं।

इरा अपने नाटक सहयोगी विमल से प्यार करने लगी थी नाटक समारोह में शिमला विमल और इरा दोनों साथ-साथ जाते हैं इरा कहती है- वहीं, एक दिन.... अब नाम बता ही दूँ तुम्हें-विमल था उसका नाम। मैं उसे कुछ कुछ चाहती थी। .... वह मुझे अच्छा भी लगता था।[32] और तभी जब दोनों के हृदय में प्रेम के बीज का अंकुरन हुआ तभी दोनो शिमला में इरा कहती है विमल ने मुझे जीवन में पहली बार छुआ था। मेरा रोम-रोम सिहर गया था, वह सिहरन मैंने फिर कभी महसूस नहीं कीं।[34] विमल के द्वारा दोस्त के यहाँ

चलने के लिये कहने पर इरा इंकार नहीं कर पाती है– मैं अस्वीकार नहीं कर पाई थी, सपनों में जैसे कोई राजकुमार मुझे सहारा देकर ले जाता था वैसे ही मैं उसके सहारे चली गई थी।''[35] पिता के द्वारा नाटक एवं विमल के लिये सहमति न मिलने पर एवं विमल से लौट आने का वादा करने पर इरा अपने पिता से विद्रोह करके आर्थिक तंगी की वजह से इरा और विमल के जीवन में विषमता आती जा रही थी। विमल कुण्ठित एवं उदास होता जा रहा था लेकिन कभी–कभी इरा जब बतरा के यहाँ से लौट कर आती और विमल को अपने नाटक के प्रति पाती है। कहा जाता है नारी पुरुष का सम्बल (ताकत) होती है और उस ताकत को काम का रूप देते हुए उपन्यासकार कहता है –''तभी तो हताश विमल बीमारों की तरह दिन–दिन भर पड़ा रहता। और रात को जब इरा लौटती उसे बहलाने की कोशिश करती.... कुछ देर बाद वह मेरे शरीर की ओर चाहत से देखकर हँसने मुस्कराने लगता। उसके मन पर जमा हुआ अवसाद और पराजय जैसे कुछ–कुछ हटने लगती। .... हम साथ–साथ लेटे हुये फिर सपने बुनते।[36] इरा कहती है कि विमल जब सपनों की बातें बड़ी गंभीरता और जोर–शोर से करता था तब उसकी बाहें भी सेमल की बाँहों की तरह मजबूती से फैली होती थी..... उसके शरीर पर पसीने के काँटे उभर आते थे और मैं मुग्ध सी देखती रह जाती थी– एक दम सम्मोहित। मन होता था उन मजबूत बाहों के विस्तार में मैं फैल जाऊँ और पसीने के सब काँटे मेरे शरीर में दहकते दंश की तरह विंध जायें और मांसल लाल फूल मेरे शरीर से खिल उठें.......।''[37] परिस्थितियों के चलते एक दिन जब इरा तिलकके साथ होती है– ''नीली झील का पानी छिटक रहा था..... जब मैंने अपने ओंठ इरा के जूड़े के नीचे रख दिये थे और धुले हुये केशों की भीगी–भीगी ठंडक पलकों से आँखों में उतर गई थी, तब इरा की पलकें नम हो आई थीं।''[38] इरा का सौन्दर्य एवं खुला व्यवहार ही कुछ ऐसा था। तिलक स्वयं अपने आप काम और प्रेम को नहीं रोक पाता– ''इरा की पीठ मेरे सामने थी तब नहीं जानता कैसे उसके जूड़े के नीचे गरदन पर मेरे तपते हुये होंठ थे..... धुले हुये केशों की ठण्डक पलकों से आँखों पर उतर गई, स्निग्ध, शीतलता, वनघास की भीगी गंध..... मधु नाभि पर टिके हुये अधरो का अलस अस्तित्व या ओस से भीगे कमल पर रखी हुई चेतन पर मदहोश इन्द्रियाँ, पंखुड़ियों की नरम शीतलता और पराग की भीनी–भीनी गंध.... तभी कमलपांखों सी रेंगती हुई उसकी उंगलियाँ मेरे उंगलियों ने मेरे बालों को बुरी तरह खींचा था और काँपकर उनकी पकड़ ढीली हो गई थी। ..... और कहीं हवा के साथ प्रतिध्वनित होते शब्दों की मौन झंकार चारों ओर समा गई थी।''[39] तिलक को इरा अपनी कहानी बताते हुये औरत की मजबूरी एवं पुरुष की स्वतंत्रता पर बात करती है और तभी प्यार भरे अकेलेपन

की भी बात करती है तिलक कहता है– मेरी बाँहों पर अपने नाखून गड़ाते हुये वह बोली, दिन और वक्त खास नहीं होता– कोई बात ऐसी होती है जिसके सहारे कोई दिन या क्षण याद में उलझा जाता है।...... इरा ने बड़े प्यार से मेरी तरफ देखा था। अंधेरी रात में उसकी पुतलियाँ मोती सी झिलमिलाने लगी थी। नजदीक खिसकते हुये उसने कहा था–तिलक ! अपनी बाँह रख लो मुझ पर... या मेरी बाँह पकड़ कर पूछो यही बात। कहते कहते वह बहुत तरल सी हो आई थी।''[40] यौवनावस्था में काम की भावना आना स्वभाविक सी बात है। और इरा को जब ये भावनायें समक्ष नहीं व्यक्त कर पाती थी तो वह नाटक के माध्यम से महसूस करती एक दिन रंगमंच पर अभिनय करते हुये उसकी सहेली ही राजकुमार का वेश पहनकर मंच पर आई थी– मेरा मन कांपने लगा था। शरीर का अंग–अंग पुलकित होकर शिथिल हो गया था...... बड़ी अजीब से अनुभूति हुई थी। हफ्तों मेरा रोम–रोम पसीजता रहा,गला सूखता रहा, और मन नीले आकाशों में भटकता रहा। फूलों के गहने पहने मैं घूमती।...... कभी–कभी मैं अकेले में मैं बेला और मोतियों के गहनं से अपने को सजाकर घंटों खुली छत पर आँखें बंद किये बैठी रहती। इस इंतजार में कि कोई आकर मुझे धीरे से छुए। आँखें बंद किये–किये ही मैं सपनों के राजकुमार का स्पर्श महसूस करती। मेरे शरीर में गुदगुदी होती थी.... तब मैं अपने आप ही घुटनों में अपना मुंह छिपाकर तन कस लेती थी।''[41]

उपन्यास के प्रारंभ से ही नायिका कल्पनाओं में ही सही कहीं न कहीं अपने सौन्दर्य को लेकर कामाविभूषित होती है। काम की कड़ी सौन्दर्य एवं प्रेम है। इरा जो अप्रतिम सुन्दर थी। कामासक्ति के कारण वह शादी जैसे बंधन में बंधने से पहले विमल के सामने समर्पित हो जाती है और रहने भी लगती है।

निरूद्देश्य जीवन –

इरा उपन्यास की प्रमुख नायिका है। प्रारंभिक दौर पर इरा पढ़ाई के दौरान नाटक आदि लिखती है और उन्हें रंगमंच पर अभिनय भी करती है लेकिन इन सभी नाटकों का धीरे–धीरे असफल होना एवं विमल की आशाओं का टूटना एवं इरा को जीवन का उद्देश्य क्षण–क्षण परिवर्तित होते हुये परिस्थितियों के गर्भ में विलीन हो जाता है। कथा के आरंभ से ही इरा का जीवन सिर्फ अपने जीवन को सुरक्षित करने में लगी रहती है फिर भी शंका एवं परिस्थितियों के कारण विमल के द्वारा छोड़ कर चले जाने पर बतरा के साथ एवं बतरा के द्वारा चन्द्रमोहन के साथ रहना केवल पुरुष प्रेम की व्याकुलता लिये हुये जीना इरा के जीवन के निरूद्देश्यता को प्रकट करता है।

मायावरी प्रवृत्ति एवं नाटक प्रेम :

इरा जो कि प्रारंभ से ही अपने पिता से दूर रहती है क्योंकि उसके पिता फौजी रहते हैं बचपन से ही आया एवं नौकरों के हाथ पलने वाली इरा नाटक अभिनय के संबंध में शिमला एवं जीवन यापन के उद्देश्य से दिल्ली रहती है। अपने जीवन का लक्ष्य सुनिश्चित न कर पाने की वजहसे इरा पहले तो नाटकों से प्रेम दिखाती है क्लब के सदस्य के रूप में जब वह विमल के साथ शिमला जाती है और वहां दोनों का प्रेम अंगीकार होता है विमल के यह कहने पर– ''इरा हम तुम दोनों रंगमंच लिये समर्पित हैं हम जीवन भर इसी में लगे रहेंगे। लेकिन इरा के डैडी को यह सब अच्छा नहीं लगता था इरा कहती है सचमुच कितनी प्यारी दुनिया है रंगमंच की। जिन्दगी के सारे उतार–चढ़ाव, दुख–सुख, पाप–पुण्य सब दो घंटों की परिधि में सिमट आते हैं पूरा जीवन घर गृहस्थी सब रिश्ते घृणा और प्यार, भावनायें और कल्पनायें इस छोटी सी दुनिया में क्षणों में परवान चढ़ती है। जीवन को गति मिलती है और विविधता वह विविधता जो और कहीं नहीं मिलेगी।''(42) इरा प्रारंभ से ही नाटक लिखती है और स्वयं अभिनय भी करती है। इरा कहती है– मैंने एक नाटक लिखा–सपनों का राजकुमार। हमारी पत्रिका में वह छपा। उसके बाद मैंने कई नाटक लिखे। इरा अपना सर्वस्य न्यौछावर कर देती है नाटक प्रेम में , किन्तु दुर्भाग्यवश नाटक न चल पाने पर एवं आर्थिक तंगियों से परेशान होने पर तथा विमल के कहने पर इरा नाटक से अलग होकर नौकरी करने लगती है। नाटक काम्पटीशन में इरा और विमल दोनों हताश हो जाते हैं और विमल उसे हेमेन्द्र बतरा के यहां चार सौ रुपये की काल अटैण्ड की नौकरी ढूढ़ देता है। कथा के प्रारंभ से अन्त तक इरा अपने सम्पूर्ण जीवन भर अपनी जीवन की सुरक्षा के लिये दर–बदर घूमती रहती है। इरा की जिन्दगी में ठहराव नहीं आ पाता है।

सजग, नि:स्संकोच, भावुक एवं उन्मुक्त स्वभाव –

इरा एक पढ़ी लिखी सुशिक्षित नारी है। उपन्यासकार ने नारी के प्रत्येक गुणों से विभूषित इरा को दिखाया है जहाँ एक ओर वह सौन्दर्य से परिपूर्ण है वहीं दूसरी ओर वह प्रेम एवं काम रूपी भावनाओं से अतृप्त दिखाई देती है। जीवन में कई पुरुषों से उसका सरोकार होता है। विमल, बतरा से जीवन की सुरक्षा की आशा करती रही लेकिन इन दोनों ने मझधार में इरा को छोड़ दिया। हालांकि डॉ. चन्द्रमोहन ने जाते–जाते वित्तीय सहायता देकर इरा में सजगता एवं आत्मविश्रास को जगाने में सहायक बनता है और तब से संकोची इरा सजग हो जाती है वह पुरुषों– (सोलंकी, तिलक) के बीच में रहते हुये भी उन्मुक्त स्वभाव वाली है। इरा और तिलक कोल्हाई ग्लेशियर तक जाने के लिये साथ–साथ तैयार होती है। स्वभाविक रूप से

समाज में अकेली स्त्री को देखकर हर पुरुष उसके सामीप्य का आनन्द लेना चाहता है और तिलक द्वारा ''तुमने बिस्तर बेकार लिया।.... मेरे पास सब चीजें एक्स्ट्रा है। इस बात में मेरा कुछ आशय था।[43] लेकिन इरा के चेहरे पर कहीं भी संकोच नहीं था। न जाने क्यों, सामान्य स्त्रियों की भाँति ऐसी बातों पर उसमें कोई हलचल नजर नहीं आती थी, जैसे कुछ भी अनुचित न हो वह स्त्री-पुरुष की इन तमाम छोटी-छोटी सामाजिक और नैतिक धारणाओं को बड़ी सरलता से नकार देती थी। जिन्हें मैं महत्वपूर्ण समझता था। इससे मुझे बल मिलता, मैं और खुलता, इरा और उन्मुक्त हो जाती। तिलक कहता है- ''मैंने अपनी पेंट की जेब से लेमनड्राप्स निकालकर उसकी ओर बढ़ाए। एक मुँह में डालकर दो तीन बार- चूसकर उसने फेंकते हुये कहा, कहाँ से उठा लाये।.....सौंफ और धनिया वाले, मुँह का जायका बिगाड़ दिया। टॉफी दूँ ? कहते हुये मैंने जानबूझकर आधी टॉफी दाँत से कुतर ली और आधी उसकी ओर बढ़ाता हुआ बोला, मैं जानता था, इसीलिये लेता आया। और उसके उत्तर में इरा ने सहज भाव से मुँह खोलकर इलायची दिखा दी, मैं इलायची खा रही हूँ, आप ही खाइये इसे।''[44] ..... यह सुनकर तिलक को अपनी गलती का पता चला और संकोच से गड़ गया। इरा की ऊपरी सहजता से जितना बढ़ावा मिलता था, क्षण भर में उसकी भीतरी सजगता से व्यर्थ हो जाता था। वह ऊपर से जितनी नि:स्संकोच, मुक्त, निर्बन्ध दिखती थी, शायद अंदर से उतनी संकोचशील, परम्परानुरागी और भीरू थी।

तिलक और इरा बॉध पर पहुंच कर उतर जाते हैं और इरा के द्वारा माँझी को पैसे देते हुये कहती है। साहब को पहले पुल तक पहुँचा आओ, इनको उधर जाना है अपने होटल में इसको सुनकर तिलक को कुछ बुरा लगता है लेकिन इरा ऐसे ही असम्बद्ध हो जाती थी। ..... इरा यह सब ऐसी सम्मान-भावना से करती थी कि सहज ही अवहेलना करने का साहस नहीं हो पाता था।...... पल-पल परिवर्तित प्रकृति वश सच- बिलकुल ऐसी ही थी इरा।[45] इरा जितनी ही सौन्दर्य से परिपूर्ण थी उतनी ही प्रेम एवं काम में नि:स्संकोच दिखाई देती है तिलक बिना परवाह किये बिना वह पुरुष प्रवृत्ति के बारे में नि:संकोच बातें करती है औरनारी के प्रति पुरुष प्रकृति के उस यथार्थ को तिलक के सामने ला देती है जिसे स्वीकार मात्र से तिलक झिझकता है इरा कहती है, ''तुम आदमी लोग ! अच्छी तरह जानते हो कि इस वक्त तुम मेरे साथ किसी भी तरह पेश आ सकते हो.... मुझे बाँहों में घेरकर अच्छी सी बात कह सकते हो, या मेरी बाँह मरोड़कर नाराज हो सकते हो।''[46] इरा का तिलक एवं सोलंकी के साथ का व्यवहार इरा के चरित्र की महत्वपूर्ण विशेषता दिखाई दी है। यदि समाज में अकेली नारी है और लज्ञा, शील एवं संकोच का आभूषण पहने रहती है तो घर से निकलना

मुस्किल हो जाता है। इरा के यह गुण उसकी शक्ति को प्रदर्शित करता है क्योंकि जिस समाज में इरा रह रही है वहाँ सहजता और नि:स्संकोच का गुण होना आवश्यक है।

जीवन अस्तित्व की खोज-

इरा अपने अस्तित्व की रक्षा के लिये अनवरत संघर्षशील है। नृत्य संगीत प्रिय होने के कारण उसे नाटक से अत्यधिक प्रीति हैं। इरा स्वयं नाटक लिखती है और उसके द्वारा लिखित नाटक के मंचित होने पर वह स्वत: उसमें नायिका बनती है और सफल होने पर सप्ताह पर्यन्त उसके प्रभाव से अक्रान्त रहती है। उसी दौरान विमल के सामीप्य आने पर दोनों में प्रेम हो जाता है और इरा और विमल का प्रेम शारीरिक संबंध में बदल जाता है। विमल एक प्रस्ताव करता है- इरा हम तुम दोनों रंग मंच के लिये ही समर्पित है। हम जीवन भर इसी में लगे रहेंगे...बात तो छोटी सी थी, पर वह विश्वास बहुत बड़ा था तिलक।''[47]

विश्वविद्यालय की परीक्षा होते ही इरा अपने फौजी पिता के पास चली जाती है लेकिन उसके पिता नाटकों में भाग लेना और नंगे होकर नाचने गाने में कोई अन्तर नहीं मानते थे। वे कभी भी ये सब पसन्द नहीं करते थे। किन्तु इरा अपने विश्वास को लेकर जीना चाहती है। नाटक की दुनिया में अस्तित्व का बोध होता है वह काल्पनिक ही सही किन्तु नूतन उत्साह का सृजन करता है। दो घण्टे के नाटकों में इरा सम्पूर्ण जीवन जी लेती थी। रंग मंच की दुनिया में अस्तित्व का संकट अहर्निश बना रहता है। इरा और विमल के द्वारा जी तोड़ कोशिश करने पर एवं असफल होने पर वे दोनों हताश हो जाते हैं तो विमल इरा से कहता है- ''तुम अपने पैरों पर खड़ी हो सकती है, कहीं नौकरी क्यों नहीं कर लेती है ?[48]

जीने के लिये इरा विवश होकर नौकरी के इस प्रस्ताव को विचारार्थ स्वीकार कर लेती है- इरा का फौजी पिता अपने अस्तित्व की रक्षा के लिये दूसरा विवाह कर चुके होते हैं, अस्तु इरा उनके पास नहीं जा सकती। कारण फौजी पिता एक बाप की तरह पेश आने की मजबूरी में कैद था। कभी भी मित्र की तरह व्यवहार नहीं कर सकता था, इसलिये- ''यार यही जवाब देने के लिये मैं (इरा) गहरे पानी में उतर गई। बातें तो बहुत छोटी होती हैं, पर उनके जवाब बहुत बड़े हो जाते हैं और जिस घर में मां न हो,उस घर के बच्चों को जिन्दगी भर बड़े-बड़े जवाब देने पड़ते हैं अपने अस्तित्व के लिये, आकांक्षाओं और सपनों के लिये, व्यवहार और सामाजिक स्थिति की गरिमा के लिये- यहां तक कि रहन-सहन और खाने पीने के लिये भी।[49] इरा इन सबका उत्तर देने के लिये तैयार हो जाती है और हेमेन्द्र बतरा के यहां काल अटेन्डेन्ड की नौकरी कर लेती है और उन चार सौ रुपये में दोनों (इरा और विमल) के

अस्तित्व की रक्षा होने लगती है। विमल के द्वारा इरा को छोड़ कर चले जाने के बाद बतरा से संबंध बनाना इरा की मजबूरी थी और उससे भी बड़ी मजबूरी डॉ. चन्द्रमोहन जैसे बुड्ढे व्यक्ति के साथ विवाह कर अपने जीवन को सुरक्षित बनाना था।

मानवतावादी-

डाक बंगला की नायिका 'इरा' मानवतावादी की मानों प्रतिमूर्ति है। जो भी उसके सम्पर्क में आता है और कुछ कालपर्यन्त साथ-साथ जीवन के कतिपय क्षण व्यतीत कर लेता है उसके प्रति इरा के मन में एक महती आत्मिक मानवीय संवेदना का योग बन जाता है। परिणाम में भले ही सानिध्य प्राप्त व्यक्ति इरा को धोखा ही क्यों न देवें। इरा कभी किसी के दुःख से, कभी बुराइयों से या कभी बेइमानियों से भले ही ठगी जाती रही हो लेकिन हर आदमी उसे मासूम ही प्रतीत होता है। बतरा के यहां चार सौ रुपये मात्र की नौकरी करने वाली इरा जब बतरा के द्वारा अपना ली जाती है और वे दोनों पति पत्नी की तरह रहने लगते हैं तब इरा पूर्णतया समर्पित हो जाती है किन्तु शीला नाम की खलनायिका आकर उसके जीवन में विष घोल देती है। सुखी इरा एक बार फिर चतुष्पथ पर आ जाती है। तथापि वह बतरा के प्रति मानवीय दृष्टिकोण रखती है- ''तिलक ! मेरी सबसे बड़ी मजबूरी यह है कि जो भी आदमी मेरे निकट आया, उसमें सुन्दरता की कोई न कोई किरण मेरे लिये फूटने लगती है। या तो उसका मन मुझे जीत लेता था या उसके दुःख मुझे हार मानने को मजबूर करते थे, या उसका अपनापन मुझे मार देता था। आज भी मैं बतरा की घृणा नहीं कर पाती। उसके दुःखों ने मुझे जीत लिया था। अपनी सारी बुराइयों, बेईमानियों और बेवफाइयों के बावजूद हर आदमी मुझे मासूम लगता है जब भी मैंने आदमी को अकेले में देखा है मेरा मन उसके लिये करूण हो आया है क्योंकि हर आदमी जीवन में बहुत दुःखी है औरउसके दुःखों के बदले सिर्फ प्यार ही दे सकती हूँ - मैं हर आदमी से अच्छी तरह बोलने के लिये, प्यार करने के लिये मजबूर हूँ।''(50)

इरा का मन इतना निश्चल है कि वह किसी के प्रति भी हीन भावना से ग्रसित नहीं होती। वह तिलक से कहती है कि-''मैं तुम्हें देखती हूँ.... तुम्हारे इन बढ़े हुये बालों को देखती हूँ तो ममता सी उपजती है मन में। तुम साँस लेते हो, तुम्हारे उठते, बैठते सीने की इस गति से मुझे लगाव होता है। तुम जब बार-बार पलकें झपकाते हो, तो तुम्हारे चेहरे से मासूमियत बिखरती हैं। यही सब मुझे प्यारा लगता है। जरा गौर से देखो किसी को आँख भर देखने के बाद जिसका मन ममता से न भर जाये वह हृदय हीन है।''(51)

इरा इतनी सहृदय है कि अपराधी भी उसे अपराधी नहीं लगते। इसी संदर्भ में आगरा स्टेशन पर पकड़े गये एक अपराधी को देखकर इरा का मन उसके प्रति सहज ही दयार्द्र हो

गया था। उस अपराधी की मन:स्थिति और पुलिस के अधीन होने की परिस्थिति उससे सहन न हो सकी, तब वह वहां से हट जाती है।''(52)

मानवतावादी अस्तित्ववाद की उद्दाम तरंगें इरा नायिका में कितनी गहरी है इसके और भी उदाहरण द्रष्टव्य है– ''सोया हुआ आदमी मुझे इतना भोला और प्यारा लगता है कि मैं रात उसके सिरहाने बैठकर काट सकती हूँ मेरा मन करता है,उसकी पलकों पर उंगलियाँ फेरूं, उसके बालों को सहलाऊँ, चेहरे के एक–एक हल्के स्पर्श से लकीरें खींचती रहूँ, उसे धीरे–धीरे छुऊँ और अपनी छाती से चिपकाकर सो जाऊँ। बांहों की मांस पेशियों की उथली गहराइयों में रोओं की जो लहरें सी बनती हैं मुझे बड़ी सुन्दर सी लगती हैं। बांहें जहाँ से मुड़ती हैं वहाँ पर भीगी–भीगी सी लकीर पड़ती है, बड़ी प्यारी लगती है। आँखं के कोने में जो नीलापन है न, उसमें मासूमियत सी फैलती है चेहरे पर। और बात करते हुये जब होंठ किसी बात के न कह सकने के कारण पत्ते से काँपते हैं तब मन होता है, उन पर हॉथ रख लूँ– अब बताओ, मैं आदमी से कैसे घृणा करूँ ? मिनट दो मिनट की बात और है, किसी गुस्सा भरे क्षण की बात मैं नहीं करती, पर दुनियाँ में जितना सुन्दर आदमी है उतना और कुछ भी नहीं है तिलक। और जब वह आदमी बाहें फैलाकर मुझसे कुछ मांगता है..... या मेरी तरफ भरी–भरी निागहों से देखता है तो मैं अपने को रोक नहीं पाती। यह जानते हुये भी कि कल वह मेरी बदनामी करेगा, कल वही मेरी बुराई करेगा। और जब–जब वह ऐसा करके मुझे उस पर दया आती है। बहुत बेचारा लगता है। तब वह आदमी।''(53)

शीला के कहने पर बतरा द्वारा बेदखल किये जाने पर भी इरा उसके प्रति घृणा का भाव नहीं ला सकी थी क्योंकि बतरा भी आँखों में मजबूरियाँ लिये हुये बेचारा ही लगा था। ऐसा कौन है जो गलत काम करने के बाद पछताता नहीं ? और पछताते हुये आदमी को देख लेने के बाद सिवा ममता और प्यार के कुछ भी नहीं दिया जा सकता।

डॉ. चन्द्रमोहन के मातृत्वहीन बच्चों की ट्यूटर गार्जियन बनते ही इरा ने बच्चों को एक नूतन स्वरूप प्रदान किया था। किसी प्रकार का कोई संबंध न होते हुये भी एक ऐसा स्थायी संबंध बन जाता है कि शेष जीवन पर अमिट प्रभाव अंकित हो जाता है।

विमल की पुर्नवापसी से इरा विमल को पूर्णतया समर्पित हो जाती है। उसके स्वास्थ्य होने के लिये पूर्ण मनोयोग से सेवा करती है। विमल किसी प्रकार से विकृत मन वाला न हो सके, इसके लिये इरा काम चिकित्सा करवाती है–''और विमल के लिये मैं अग्नि परीक्षा देकर नितान्त अकेली बनकर लौट आयी। नया जीवन हुआ था मेरा और मन में द्दढ़ विश्वास जम गया था कि अब मैं विमल को पूरी तरह बचा लूँगी। जो कुछ मैं उसके लिये कर सकती थी ज

मेरे वश में था वह मैंने किया था। भ्रम संशय और दुविधा के सारे सीमा मिटा दिये थे और मैं एकान्तिक रूप से उसके लिये तैयार हो गयी थी, यही सोचकर कि कम से कम वह मुझसे तो निराश और हताश नहीं होता।''(54)

निरर्थक प्यार-

इरा जो कि मानवतावादी थी उसे प्रत्येक पुरुष फिर वा चाहे किसी दुख से पीड़ित हो या मासूम लगे वह उससे प्यार करने लगती थी लेकिन सम्पूर्ण उपन्यास में इरा का प्रेम सफल नहीं होता है। तिलक का इरा से यह पूछने पर कि आखिर तुम चाहती क्या हो सच सच बताना इरा !

''इरा ने बड़े प्यार से मेरी तरफ देखा था। ..... मैं इन जंगलों को, पहाड़ों को.... नदियों, झरनों और झीलं को प्यार नहीं करती, बिलकुल नहीं। मुझे फूल भी अच्छे नहीं लगते, इतने कि मैं उन्हें प्यार कर सकूँ। नदी एक सी बहती है और डूब जाती है। पहाड़ ऐसे ही खड़े रहते हैं लेकिन मुझे याद आती है उन स्वरों की जिसमें प्यार था और जो अब डूब चुके हैं।''(55)

कुशल अभिनेत्री-

इरा पढ़ाई के दिनो से ही नाटक लिखती थी और मंचित होने पर स्वयं नायिका बनती है यहां तक कि स्कूल के बाद यूनिवर्सिटी में भी वह भाग लेती थी। इरा कहती है- मैंने एक नाटक लिखा- सपनों का राजकुमार। हमारी पत्रिका में वह छपा। उसके बाद मैंने कई नाटक लिखे। ..... वार्षिक समारोह पर कॉलेज की सहेलियों ने मिलकर एक नाटक खेला- वही पहले वाला। उसमें मैं राजकुमारी बनी थी तिलक ! कालीदास की शकुन्तला की तरह भोली और लज्रा विनत।''(56)

नाटक प्रिय एवं उन्हें मंचित करने में निपुण इरा सिर्फ इसी कारण अपने पिता का घर छोड़कर चली जाती है। तिलक से अपनी जीवन गाथा बताते समय एवं तिलक के चेहरे में अपनी जीवन के प्रति झूठ के अंश को समझकर वह तिलक से कहती है- तिलक मुझे बाँहों में कस लो, तब मैं सब कुछ सच सच बता दूँगी। अगर मुझसे हटकर दूर बैठोगे तो मैं नाटक करूँगी-इतना अच्छा अभिनय कर सकती हूँ कि तुम भुलावे में पड़ जाओगे और मैं अनजाने ही तुमसे छल करूँगी।(57)

स्वप्नवादी-

यद्यपि स्वप्न मनोदृष्टि का प्रसंग इस उपन्यास में आंशिक ही है तथापि प्रभावशाली है।

इरा और तिल के मध्य होने वाले संवाद में इसकी एक-दो स्थलों पर झलक दृष्टिगोचर होती है। श्रीनगर (काश्मीर) में डल झील में शिकार पर सैर करते हुये कल्पनाशील दार्शनिक की भाँति आधी आँखें मूँदते हुये इरा का कथन- प्रकृति में जो यह जंगलीपन है तिलक। यह भी कितना खूबसूरत है।..... मैं बहशियों की तरह जीना चाहती हूँ।.... प्रकृति के इस जंगलीपन की तरह। कभी-कभी सोचती हूँ। ......आसाम की जंगली जातियों में ही मेरा जन्म होता। वन पक्षियाँ के पंख मुकुट लगा कर घूमती।.... कहते कहते उसने पूरी आँखें खोलकर एक पल की खामोशी के बाद कहा था देवदार देखे हैं ? मन करता है नंगी चट्टानों के बीच देवदारों की तरह उग सकूँ। बस, खड़ी हूँ। तूफानी हवायें मुझे झिंझोड़ जायें बारिस में सिहर सिहर कर भीगूँ और नंगी बाँहें पसार कर बर्फ का स्वागत करूँ। .... नासमझों की भांति हँसते क्या हो? मुर्दे नहीं सोच सकते यह सब।...... डल के तीनों ओर खड़ी ये पहाड़ियाँ.... तुम्हें नहीं पुकारती। इन चिकनी चट्टानों पर चढ़कर इन्हें रौंद डालने की इच्छा नहीं होती, कैसे आदमी हो तिलक। शिकार में बैठे-बैठे डल के जल को बच्चों की तरह उछालते हुये वह बोलती जा रही थी, उसके तल तक जाकर पानी उलीचने का मन होता है। सिवार के जाल में फंसकर तड़-पड़ाने मे कितना सुख होगा। या उस कमलनाल में घुस पडूं उसे रौंद डालूँ। ..... कमलानालों को तोड़ मरोड़कर बिखेर दूं डल के पानी को गंदला कर दूं।''[58]

इरा प्रकृति के उपादनों को प्यार नहीं करती। वह इसे गूंगे की संज्ञा प्रदान करती हुई कहती है- ''मैं इन जंगलों को पहाड़ों को..... नदियां, झरनों और झीलों को प्यार नहीं करती, बिल्कुल नहीं मुझे फूल भी अच्छे नहीं लगते, इतने कि मैं उन्हें प्यार कर सकूँ। नदी एक सी बहती है और घूम जाती है। पहाड़ ऐसे ही खड़े रहते हैं..... लेकिन मुझे याद ाती है उन स्वरों की जिनमें प्यार था और जो अब डूब चुके हैं। स्वरों की आत्मायें अभी भी मेरे चारों ओर भटका रही है तिलक। सीधे-सीधे कहूँ..... मैं सिर्फ आदमी को प्यार करती हूँ उसे ही कर सकती हूँ। यह पूरी प्रकृति मुझे अच्छी लगती है, पर मैं इसे प्यार नहीं कर पाती.... कोई उस चीज को कैसे चाह सकता है जो बदले में कुछ न बोले। मैं सोच नहीं पाती उस प्रेम को, गूँगा हो। जो कुछ दे न सकें। देने को फिर चाहे भौतिक और शारीरिक सुख हो या आत्मिक वैभव। उसका चाहे जो कुछ अर्थ हो...पर हो.... निरर्थक प्यार विलास लगता है मुझे। और मेरी जिन्दगी की त्रासदी सिर्फ यही है कि मुझे निरर्थक प्यार ही मिला.... जो मुझसे खुलकरनहीं कह पाया कि जिन्दगी की रातें प्यार ही मिला... जो मुझसे खुलकर नहीं कह पाया कि जिन्दगी की रातें प्यार से बड़ी होती है.... लेकिन प्यार की जिन्दगी के मुताबिक काटते, सिलते और उधेड़ते रहे.....।[59]

समीरा : (वही बात)

सृष्टि का उद्‌गम एवं विकास मुख्य दो बीजों– पर ही केन्द्रित होता है और वह दो बीज है – स्त्री और पुरुष । स्त्री और पुरुष ये जीवन के ऐसे दो पहलू हैं जो एक के बिना दूसरा अधूरा है। सम्पूर्ण जीवन भर दोनों अथक कष्ट झेलने के बाद भी एक दूसरे के प्यार से सहयोग से इस जीवन के कटु संघर्ष को जीवन के रूप में जीते हैं। सृष्टि विकास क्रमेत्तर में मनुष्य फिर वह चाहे स्त्री हो पुरुष देखने का सोचने का एवं जीवन जीने का ढंग भी बदलता गया। वर्तमान शोध के द्वारा यह पता चला कि प्रेम या विवाह के बाद स्त्री एवं पुरुष में अलग–अलग तरीके से बदलाव होता है स्त्री के भावना के क्षेत्र तो पुरुष के उत्तेजना के क्षेत्र में। समय के बदलाव एवं युग के विकास के साथ–साथ स्त्री पुरुष के संबंधों में भी बदलाव आता गया। कई शोध के पश्चात् मनोवैज्ञानिकों ने यह खोज निकाला कि पुरुष एवं स्त्री में हासिल करने की चाह होती है । किसी भी वस्तु एवं व्यक्ति को वह अनवरत प्रयास से जीतता है । और सामान्य रूप से जब कोई लड़का किसी लड़की से एवं पति अपनी पत्नी से प्रथम सम्पर्क जोड़ता है तो वह उसकी भावनाओं की चिन्ता करता है उसे अनवरत अपने तक ही सीमित रखने के लिये अनवरत प्रयास करता है उसके मन पर उसकी भावनाओं पर एकाधिकार करने के तत्पश्चात् वह सफलता एवं काम में व्यस्त होने लगता है अपनी सम्पूर्ण समस्यायें, उलझनें भी स्त्री को दे देता है लेकिन स्त्री की भावनाओं को नहीं लेता है । और स्त्री कुण्ठित होने लगती है। एकांकी अवसाद है, ऐसा अवसाद है जिसे स्त्री और पुरुष पूर्ण सहयोग के बिना नहीं पूरा कर सकते हैं।

वर्तमान hurry up (जल्दी करो) परिवेश में जीने वाला व्यक्ति महत्वाकांक्षा की होड़ में इस कदर भाग रहा है कि उसे जीवन के उन अमूल्य पलों को भी नहीं जी पाता है जिसे जीकर स्त्री एवं पुरुष संतुष्ट हो पाते हैं।

वही बात एक ऐसे नये समझौते की तरफ संकेत किया है जो वर्तमान समाज में चले आ रहे लगातार स्त्री पुरुष पति पत्नी प्रेमी प्रेमिका के बीच विघटन का कारण बनता है। उपन्यास के कथ्य में प्रशान्त जैसे महत्वाकांक्षी पति जो सफलता की ऊँचाइयों पर पहुँचता तो है लेकिन उसके साथ बहुत कुछ पीछे छूट जाता है जिसकी कमी उन सारी सफलताओं को स्वादहीन बना देती है। इस सम्पूर्ण उपन्यास में महत्वाकांक्षी को स्वादहीन बना देती है। इस सम्पूर्ण उपन्यास में महत्वाकांक्षी पति और उसकी दमित पत्नी का द्वन्द्व है। पति के स्थानांतरण के पश्चात् पत्नी का एकान्त और भी गहरा हो जाता है। ऐसी अवस्था में पत्नी अपनी एकान्तता

कहीं खत्म कर लेती है। फिर दोनों में तलाक हो जाता है तथा पत्नी पुनर्विवाह रचाती है और पहला पति अपनी महत्वाकांक्षा की दुनिया में अकेले लौट जाता है। इस सम्पूर्ण उपन्यास में स्त्री की इच्छाशक्ति और पुरुष की महत्वाकांक्षा के द्वन्द्व को प्रकाश में लाने का ही प्रयास रहा है।

समीरा जैसे अनेक नारी जो महत्वाकांक्षा के पीछे भागने वाले पति से प्राप्त एकांकी अवसाद के ग्रहण से निकलकर मुक्त होने की कोशिश करती है तो दूसरी तरफ खजांची बाबू की पत्नी शाशि जैसी स्त्रियाँ अपने एकांकी अवसाद में डूबकर ही अपने प्राणों को समर्पित कर देती है। लेकिन जीवन के किसी मोड़ पर दोनों पुरुषों को इस बात का एहसास होता है कि आखिर उन्होंने क्या खो दिया है और उसी पीड़ा दर्द को झेलते हुये दोनों खजांची बाबू और प्रशान्त उपन्यास के अन्त में नकुल को समझाने की कोशिश की है।

भागदौड़ की जद्दोजहद में पत्नी को प्रशान्त समय नहीं दे पाता और दमित समीरा धीरे-धीरे नकुल के सामिप्य पहुंच जाती है। पति और पत्नी दोनों ही एक दूसरे के अधूरेपन को पूरा करने में सहायक होते हैं।

सिर्फ इतनी-सी कहानी वाले इस उपन्यास में स्त्री की इच्छाशक्ति और पुरुष की महत्वाकांक्षा के द्वन्द्व को प्रकाश में लाने का ही प्रयास है। कथा की परिणति में समझौते के दूसरे रास्ते को एक नवीन क्रांति की संज्ञा दी जा सकती है।..... उपन्यासकार समाज के सामने यह संदेश देने का अथक प्रयास किया है कि स्त्री की भावना को दमित करके न रखा जाये। यदि वह उपेक्षित और अकेलापन महसूस करती है तो इसका दोषी निश्चित तौरपर पतिही होना चाहिये। ऐसी हालत में स्त्री को क्या अपना खालीपन भर लेना उचित नहीं है? इस बात को समीरा ने उठाने का साहस किया है। समग्र उपन्यास की कहानी समीरा पर ही केन्द्रित होती है। समीरा नारी भावनाओं से जुड़ी हुई एक सामान्य महिला लेकिन अपनी जिन्दगी की आवश्यकता को पति की उपस्थिति, निकटता एवं स्पर्श से पूरित करना चाहती है। और इसी की कशिश में एकांकी अवसाद से ग्रसित पश्चाताप की अग्नि में जलती हुई प्रेम के अर्न्तद्वन्द्व में सफल होती है।

काम, प्रेम एवं सौन्दर्य-

उपन्यासकार कमलेश्वर वर्तमान समाज में महत्वाकांक्षा को प्रेम के बीच में लाकर एकांकी अवसाद से जोड़ दिया था। उपन्यास के प्रारंभ से प्रशान्त और समीरा चीफ साहब के रूप में कंस्ट्रक्शन कॉलोनी जाता है वहाँ की प्राकृतिक दृश्य वादियाँ एवं पहाड़ों को देखकर समीरा

और प्रशान्त मंत्रमुग्ध हो जाते हैं। रात में दोनों खाना खाकर लॉन में जाते हैं और समीरा एकाएक आह्लाद से भर उठती है। माना जाता है कि प्रेम का सूत्रपात काम से होता है और काम देवता स्वयं फूलों का श्रृंगार करता है। इसी लिये माना जाता है कि दो दिलों में प्रेम का उद्‌भव में प्रकृति सहायक माना जाता है। और समीरा भी हर तरफ दुधियां चाँदनी छिटकी हुई देखकर खुश होती है। हर चीज जैसे दूध की झरती नदी में नहा उठी थी... नीचे घाटी दुधिया रोशनी में झिलमिला रही थी। उपन्यासकार कहते हैं– एकदम साँस रोके समीरा हर ओर देखती रह गयी थी– मुग्ध सी। उसने अनजाने ही अपने पति के सीने से पीठ टिका दी थी।

– समी....!

– प्रशान्त....! वह बुदबुदायी थी।

– क्या हुआ, समी ? ..... कहते हुये प्रशांत ने समीरा को अपनी बाँहों में भर लिया। समीरा बेसुध हो गयी। और तब समीरा ने धीरे से अपने–आपको प्रशांत की बाँहों से मुक्त कर लिया– मुक्त नहीं केवल इतना कि वह उसके चेहरे को देख सके। बड़े प्यार से बोली– यह तो स्वर्ग है प्रशांत।[60] प्रेम की तलाश में ही समीरा प्रशान्त से नकुल को चुनती है काम के कारण प्रशान्त बाहर चला जाता है और समीरा अकेली पड़ जाती है एक दिन वह अकेली रेलिंग में खड़ी रहती है और तब नकुल आता है और उससे घूमने चलने की बात करता है और तब दोनों साथ ही बरामदे मे बैठकर कॉफी पीते हैं और फिर घूमने जाते हैं। नकुल ने उसे अपना हाथ बढ़ाया तो समीरा ने अनायास ही अपना हाथ उसके हाथ की ओर बढ़ा दिया, पर अगले ही क्षण वह बुरी तरह सिहर–सी गयी थी। उपन्यासकार ने उस नकुल और समीरा के बीच बीते उस प्रेम के छोटे से पल को व्यक्त करते हुये कहते हैं– नकुल उसे कुछ दूर तक ले गया। जीप के पास आ कर समीरा ठिठक गई। एक पत्थर पर उसने पैर जमाया कि पत्थर ढीला होकर फिसल गया। नकुल ने उसे संभाला तो ढलान पर दोनों चार–छह कदम और फिसलते चले गये। संतुलन की कोशिश में और भी अधिक फिसलती समीरा को नकुल ने अपनी बाँहों में समेट लिया।...

– ओह, नकुल !

– मीरा !.... मीरा !.....

सन्नाटा.... फिर भारी साँसें ! अस्त–व्यस्त होकर समीरा अलग हुई तो पास झुके पेड़ के तने से लिपटकर रो पड़ती है। नकुल निर्द्वंद्व शेर की तरह खड़ा था। उसकी आँखें चमक

रही थीं। प्रकृति खामोश थी। नकुल ने उसे पेड़ के तने से अलग करके अपने सीने पर सहारा दे दिया।''[61]

धीरे-धीरे प्रशान्त अपने काम में और अधिक व्यक्त होता जा और अन्तोगत्वा एकांकीपन से ऊबकर जब समीरा नकुल के साथ विवाह तो कर लेती है लेकिन घर से समाज से कहीं न कहीं भयग्रस्त रहती है। समीरा नकुल के साथ सो रही होती है तभी अचानक बुरा सपना देखने के कारण जाग जाती है और नकुल और अपने संबंध को घर के द्वारा अस्वीकृति रूप में बताती है। नकुल समझाता है और तब समीरा की भयातुर आवाज सिसकी में बदल जाती है तब उस समय एक पति के द्वारा पत्नी को प्यार से समझाता है -''और उस समय नकुल द्वारा समीरा के सात बिताये गये पल को उपन्यासकार कुछ इस प्रकार कहता है-''चलो, बाहर घासपर बैठते हैं....घास ओस से भीगी होगी... चांदनी भी है.... आओ.... कहकर नकुल ने उसे उठा लिया।......नकुल ने उसकी पीठ पर अपना हाथ रख दिया। उसे सहलाया, उसके सर को अपनी जाँघ पर रखकर उसके बालों में उंगलियाँ फिराने लगा। धीरे-धीरे समीरा की सिसकियां थम गयीं और वह नींद की आगोश में चली गयी। नकुल को भी नींद आ रही थी, पर कहीं समीरा की नींद न टूट जाये, इस डर से वह घुटना तक नहीं हिला रहा था। उसके इस प्रेम को समीरा देखती रह गयी थी। उसने धीरे से नकुल के माथे को चूम लिया और उसे वहीं हल्के से लिटाने की कोशिश की तो नकुल एकदम जाग गया।.... तुम्हारे साथ मैं कितना पूरापन महसूस करती हूं नकुल।''[62] और नींद खुलने पर समीरा उसके प्रेम को देखती रह गयी थी। सम्पूर्ण उपन्यास से कभी समीरा और प्रशान्त के बीच तो कहीं समीर और नकुल के बीच प्रेम के छिटपुट क्रिया कलाप देखने को मिलते हैं क्योंकि समग्र उपन्यास में महत्वाकांक्षा की भावना के सामने प्रेम और काम समय की आवश्यकता महसूस करता हुआ प्रेम की मांग करता रहा है।

प्रकृति प्रेमी-

सर्वविदित है कि मनुष्य प्रकृति से जुड़ा हुआ है। ''वही बात'' की प्रमुख स्त्री पात्र समीरा भी प्राकृतिक दृश्यों को देखकर बहुत खुश होती है। जंगली आमो को देखकर, पहाड़ियों को, वादियों को तथा वहाँ के ठेढ़े मेढ़े रास्तें को देखकर मुग्ध हो जाती है। उपन्यासकार कहता है- हर तरफ दूधिया चाँदनी छिटकी हुई थीं। हर चीज जैसे दूँध की झरती नदी में नहा उठी थी.... नीचे घाटी दूँधिया रोशनी में झिलमिला रही थी।''[63] यह सब देखकर समीरा आह्लाद से भर उठती है। समीरा प्रकृति के सौन्दर्य के प्रति सचेत भी दिखाई देती है

जब वह प्रशान्त के साथ प्रकृति के उस सुन्दर दृश्य का आनन्द ले रही होती है तबी अचानक ब्लास्टिंग से दूँधिया चांदनी मे नहायी शांत प्रकृति हिल जाती है और तब एकाएक समीरा छिटककर अलग खड़ी हो गयी। बड़ी शोखी से बोली- और ये सुन्दरता कहाँ मिलेगी.... और इस सुन्दरता में इतने सपने कहां से आयेंगे।''(64) .... शाम को प्रशांत लाइट से लौटा तो नया बंगला जंगली फूलों से सजा हुआ था। समीरा ने फूलों से ही श्रृंगार किया था।''(65) कथन से ज्ञात होता है कि समीरा प्रकृति के साथ प्रेम एवं उसे साज-सज्ञा में भी रुचि रखती है।

भावुक एवं दया से युक्त-

नारी भावनात्मक बंधनों से जुड़ी रहती है वह भावनाओं की नदी में तैरती है। उपन्यास की नायिका समीरा भी नारी के इस गुण से अछूती नहीं रह पाती जिस समय प्रशांत कंसट्रक्शन के काम से स्थानांतरण होता है समीरा भी उसके साथ जाने को उद्वत होती है तब समीरा को प्रशांत प्रेम से समझाने के कोशिश करता है। एकांकीपन की वजह से समीरा के स्वभाव में काफी बदलाव हो रहा था और यह प्रशांत अच्छी तरह समझ रहा था। प्रशांत के द्वारा यह कहने पर कि सब कुछ तुम्हारे लिये है। और असफल आदमी की जरूरत किसी को नहीं होती यह सुनकर समीरा एकदम भावुक हो उठती है।

नकुल आदिवासियों की बस्ती में उन्हें समझाने जाता और वहीं पीट दिया जाता है नकुल जख्मी हो जाता है रास्ते में समीरा मिल जाती है और नकुल के जख्मों को देखती है और उसके लिये कच्ची हल्दी भी पीस कर भिजवाती है और उसे बार-बार डॉक्टर से ड्रेसिंग करवाने की हिदायत भी देती रहती है।

सफल पत्नी-

समीरा महत्वाकांक्षा के सामने दमित नायिका के रूप में प्रस्तुत होती है उसने भले ही प्रशांत और फिर नकुल के जीवन में प्रवेश किया हो लेकिन जब तक वह प्रशांत की पत्नी रहती है तब तक वह प्रशांत के प्रति वफादार चिन्ताशील एवं समर्पित रहती है। समीरा प्रशांत के भावनाओं के साथ कभी खिलवाड़ नहीं किया था। कथानक के आरंभिक पर जब प्रशांत और समीरा पहली बार साइट पर जाते हैं तो उपन्यासकार कहता है- ''प्रशांत साइट पर गया तो समीरा को भी साथ लेता गया। पहले उसे प्रोजेक्ट के तीन हिस्सों के बारे में बताते हुये उसने समझाया कि कैसे एक-एक करके तीनों हिस्से पूरे होंगे। फिर वह उस बाँध से सारे प्रदेश को होने वाले फायदों के बारे में बताने लगा...... समीरा साथ चली तो आई, लेकिन

गर्मी धूल और शोर के कारण वह बदहवास थी । प्रशांत जब किसी खास चीज की तरफ इशारा करते हुये उसके बारे में समीरा को बताने लगता तो वह सुनती भी जाती और मुस्कुरा कर आश्चर्य भी प्रकट करती जाती, पर उसका मन वहाँ नहीं लग रहा था ।''(66) नारी का एक विशेष गुण होता है कि वह अपनी चिन्ता जगजाहिर नहीं करती और अपने थके हुये पति की चिन्ताओं को बांटकर उसे आराम देने की कोशिश करती है । आदिवासियों की जिद को लेकर प्रशांत काफी परेशान रहता है । आदिवासी द्वारा बाँध कॉलोनी पर हमला सुनकर सबके होश उड़ गये थे खजांची बाबू, बेलदार और गैंग वाले सभी तैनात होकर पहरा देते हैं और प्रशांत को भी नींद नहीं आती तब समीरा एक सफल पत्नी का परिचय देती है- प्रशांत को नींद नहीं आ रही थी । समीरा ने उसके बाल सहलाते हुये उसके सर को गोद में रख लिया था। फिर जैसे प्रशांत को सहारा देने के लिये उसने कहा-परेशान होने से होगा भी क्या, प्रशांत ? तुम कर भी क्या सकते हो ?..... यह तो सरकार का काम है । तुम्हारा काम है डैम बनाना सिविल प्रॉबलम्स को सुलझाना तुम्हारा काम थोड़े ही है....।''(67) समीरा भी प्रत्येक पत्नी की तरह प्रशांत को धैर्यता देने का काम करती । समीरा एकान्ततिकता से परेशान हो जाती है प्रशान्त काम के कारण उसे समय नहीं दे पाता है । इधर काम बढ़ता जा रहा था उधर समीरा दूर होती जा रही थी । लेकिन काम बढ़ता जा रहा था उधर समीरा दूर होती जा रही थी । लेकिन इसके बावजूद भी जिस समय प्रशांत को समीरा थका हुआ देखती और प्रशांत उसकी ओर देख फीकी सी, थकी हुई मुस्कान मुस्कुराता तो समीरा का मन पिघल जाता- ''सचमुच प्रशांत कितना काम करता है । साइट से थका हुआ घर लौटता है तो कितना मासूम लगता है ।''(68)

जब समीरा नकुल से विवाह करती है तो पूर्णरूपेण नकुल को समर्पित हो जाती है । समीरा नकुल की पत्नी के रूप में नकुल के साथ-साथ घर के सारे काम जिम्मेदारी से करती है । उपन्यासकार कहता है- ''नहाकर नकुल पैंट के बटन लगाता हुआ बाथरूम से निकला । उसने वहीं से आवाज दी- मीरा ! समीरा किचन से निकल रही थी । नाश्ते की ट्रे उसके हाथ में थी । ...... समीरा भीतर से सुई जागा और बटन निकाल लाई । धागे में गाँठ लगाकर वह बटन की आँख को सुई में फंसाकर पैंट में टाँकने लगी ।''(69) समीरा एक अच्छी पत्नी की तरह घर के साथ-साथ अपने पति को संभालती है ।

शकांलु प्रवृत्ति-

सम्पूर्ण उपन्यास के कथानक में सामान्यत: तो समीरा शंका प्रधान नहीं दिखाई देती है

लेकिन जिस समय प्रशांत आदिवासियों के द्वारा बस्ती न खाली करने एवं बाँध के पूरा होने में आई रुकावटों को लेकर परेशान होता है तब प्रशांत को परेशान देखकर वह नकुल के बारे में शंका व्यक्त करती हुये प्रशांत से कहती है- एक बात तो बताओ....। तो ..... नकुल बहुत दिनों से दिखाई नहीं पड़ रहा है। कहीं बाहर गया है क्या ?

वो आदिवासियों को समझाने के लिये गाँव-गाँव भटक रहा है। भाषा की भी दिक्कत है। हमारी बात में लोग समझते नहीं। नकुल उन्हें उन्हीं की भाषा में समझा सकता है। शायद उसके समझाने से वे लोग मान जायें ......।

और भड़काने से भड़क जायें। एकाएक समीरा के इस वाक्य से प्रशांत बौखला सा गया। साथ ही समीरा ने जोड़ दिया-तुम्हें क्या मालुम कि वह समझा रहा है या भड़का रहा है?[70] इस तरह की शंका सुनकर प्रशांत चिढ़ जाता है और सामान्य होकर समीरा से कहता है- खामख्वाह किसी के इंटेशंस पर शक करना कोई अच्छी बात नहीं है। नकुल समझदार और वैल मीनिंग आदमी है। यह सुनकर समीरा कहती है- ''तुम्हें इतना ही विश्वास है। समीरा ने कहा तो प्रशांत ने बात का रुख मोड़ दिया।''[71] और फिर ये बात यही समाप्त हो जाती है।

विद्रोही स्वभाव-

व्यक्ति स्वभाविक रूप से विद्रोही होता है और यह विद्रोह परिस्थिति अनुसार प्रकट होता है। उपन्यास की नायिका स्वभाव से विद्रोही नहीं थी वह मानसिक तौर पर एकांकी अवसाद से ग्रसित होकर विद्रोही हो जाती है। प्रशांत और समीरा के बीच बढ़ती दूरियां आगे चलकर प्रशांत से समीरा विद्रोह कर बैठती है। प्रारंभिक कथानक में नकुल शहर से समीरा के लिये थर्मस, अचार, पापड़ के साथ-साथ कुछ पत्रिकायें लाती हैं लेकिन समीरा को ये बिलकुल अच्छा नहीं लगता है और वह चिड़ कर पत्रिकाओं का पुलिंदा बाहर फेंक देती है। वह यह भी नहीं सोचती कि आखिरकार नकुल को कैसा लगेगा। प्रशांत समीरा को छोड़कर बाँध के काम से बम्बई जाता है और समीरा को नहीं ले जाता है। समीरा का मूड अभी तक खराब ही था कि ठेकेदार के इतना कहने पर ही कि वह पर्दों के लिये कपड़ा लेकर आया है, समीरा उस पर बरस पड़ती है- आप क्या समझते हैं ! इस तरह मुझे रिश्वत देकर आप अपना उल्लू सीधा कर लेंगे ? उठा ले जाइये ये कपड़े ![72]

ठेकेदार कुछ समझ ही नहीं पाया था कि समीरा बोल पड़ी-''आपने फिर कभी इस बंगले में कदम रखा तो बाहर फिंकवा दूंगी।.....[73] तैश में आकर समीरा अपना आपा भूल गई थी। कथा विकास के क्रम में जब समीरा नकुल के साथ विवाह कर लेती है और उसके

साथ भी वही एकांकीपन का आभास होने लगता है उधर समीरा मन में प्रशांत नकुल सबके संबंधों को उधेड़ बुन एवं पश्चाताप के बीच गलती जाती है। एक दिन समीरा बरामदे में बैठी एक पत्रिका के पन्ने पलट रही थी तभी चपरासी डाक लेकर आता है। सरकारी लिफाफों की मोड़ में एक पत्र जिस पर श्रीमती समीरा नकुल आर्य द्वारा श्री नकुल...। और फिर समीरा विद्रोहित हो गई थी और उसका यह कार्य (रूप) उसके विद्रोह को ही अप्रत्यक्ष रूप से व्यक्त होता है- ''समीरा बाल खोले, आँखें सुजाये बैठी थी-सामने ढेरों खत फटे पड़े थे उनके टुकड़े हवा में उड़ रहे थे.... और समीरा एक-एक खत फाड़ती जा रही थी।''[74]

निष्कर्ष: वही बात एक ऐसा उपन्यास है जिसमें स्त्री का एकांकीपन उसे मानसिक अवसाद से ग्रसित कर देता है और स्त्री के द्वारा उस एकांकीपन से निजात पाने के लिये पुर्नविवाह कर लेती है।

सुमन-

सुमन सफेद तितलियों की नायिका है जिनके चरित्र में रहस्यात्मकता और यथार्थ मय का एक साथ दिखाई देती है। इसके पिता सरदारी लाल ने इसका विवाह जसवन्त से कर दिया जो असमय काल कौशलित हो गया। युवावस्था में सुमन का प्रेम वेद प्रकाश नामक व्यक्ति से हुआ। चतुर सुमन पति प्रेम को आवरण बनाकर अपने प्रेमी से मिलती है और नारी कि चरम सीमा मातृत्व पद पाकर वह अपने प्रेमी के साथ नया संसार बनाने के लिये अज्ञात स्थान पर चली जाती है। इसकी सूचना वह अपनी सहेली देवबाला को पत्र द्वारा सूचित करती है। कमलेश्वर ने अपनी प्रारंभिक कहानियों में रहस्य रोमांच अलौकिकता का भरपूर उपयोग किया है जो बाबू देवकी नन्दन खत्री के अय्यारी प्रधान उपन्यासों का युग था इसके चरित्र की निम्न कहानीकार ने चित्रित किये हैं।

पत्नी रूप-

सुमन का विवाह जसवन्त नामक लड़के से हुआ वह अपने पति को सर्वाधिक चाहती थी किन्तु पति उसके यौवन नष्ट होने की आशंका तृष्त होकर उसे माँ नहीं बनने देना चाहता था जबकि सुमन भावुक पत्नी से बढकर माँ बनने के लिये अत्यन्त लालायित थी वह कहती है- ''मेरी सुन्दरता का उपयोग केवल उसके लिये था मेरे लिये क्या था मैं अपनी सुन्दरता का प्रतिरूप अपने लिये चाहती थी लेकिन उसने ऐसा नहीं होने दिया।''[75]

रहस्यात्मकता-

पति की मृत्यु के पश्चात् सुमन वैधव्य जीवन व्यतीत करने के लिये पिता के पासचली

आयी किन्तु यौवन जन्य आकांक्षायें उसे जीने नहीं देती थी अत: उसने अपने प्रेमी वेद प्रकाश के ऊपर पति जसवन्त की आत्मा का आवरण डाला। और इस प्रकार उसका प्रेमी जसवन्त की आत्मा के रूप में प्रतिदिन रात्रि में मिलने आता था। सुमन ने बड़ी चतुराई से रहने वाले महलको भूतहा महल बताया। और रात्रि को सफेद कपड़े पहनकर कभी पागलों की तरह चीखती चिल्लाती कभी रोती थी। कहानीकार ने लिखा है- कभी रोती थी कभी बेतहासा हँसती हुई पागलों की तरह उस अंधेरे में चली जाती और पुकारती मेरे पास आओ और उस अंधेरे में सफेद साड़ी में लिपटी पानी में तैरती सफेद मछली की तरह दिखती....... बादलों ने तुम्हें भिगो दिया नागफनी के फूलों की पंखुरियों ने तुम्हारा कैसा श्रृंगार किया है......नागफनी के कांटों की चुभन अभी तक बांहों में बाकी है क्या हम हमेशा इसी तरह दिवारों में घिरकर जियेंगे मुझे खुले में ले चलो खुले आसमान के नीचे नीली नदियों के और तुम्हें अपने साथ ले चलूँगा समय आयेगा सुमन हम इस तरह प्यासे नहीं रहेंगे।''(76)

इस रहस्यात्मकता को बनाये रखने के लिये शायन काल आते ही सुमन असामान्य हो जाती कहती-देखों आसमान में सफेद तितलियाँ उड़ रही है कितनी नाजुक और खूबसूरत। शाम आने से पहले वह अपना श्रृंगार करती सफेद फूलों से अपने को सजाती सफेद साड़ी पहनती जूड़े में सफेद फूल लगाती तब सफेद कपड़े में जसवन्त की आत्मा धुंये में लिपटी मनुष्यता की तरह आती और बेआवाज कदमों से सुमन के कमरे में घुस जाती।''(77)

प्रेमिका-

सुमन भावुक प्रेमिका से पहले वह पति के प्रेम की याद करती रही किन्तु जब उसे वेद प्रकाश से प्रेम हुआ उसने एक ओर रहस्यमयता की चादर ओढ़ ली तो दूसरी ओर अपने को भवुक प्रेमिका के रूप में सिद्ध करती है। इनके पंख झुलस जाते हैं। मैं उन्हें खोना नहीं चाहती वे नहीं आ सकते सितारों की रोशनी में वे इसीलिये आते हैं।''(78)

धीरे-धीरे यह भावना निराशा में बदलती जाती हैं यद्यपि यह नैराश्य, मिथ्या, बनावटी और ढोंग था किन्तु संसार या माता पिता से ओझल या दूर होने की लिये इसकी अत्यन्त आवश्यकता थी वह अपने पति जसवन्त के अभाव में अपने मरने की कल्पना करती है तो वह कहती है- ''मेरा अन्त निकट आ गया है एक दिन मैं यही समाप्त हो जाऊंगी मेरा कोई ठिकाना नहीं है बाऊ जी पता नहीं वह कौन सा दिन होगा और दिन की कौन सी घड़ी होगी जिसमें यह सब खेल समाप्त हो जायेगा। बाबू जी मैं ऐसी आवाजें सुन रही हूँ जो मुझे बुला रही है मुझे जाना पड़ेगा।''(79)

इसी भावावेश में आकर सुमन ने आत्म हत्या करने का प्रयास किया अपने मकान की तीसरी मंजिल से जैसे ही कूदने वाली थी कि पिता ने उसे पकड़ लिया ।

तात्पर्य यह है कि सुमन सुन्दरी युवती मात्र सुख अभिलाषणी, असमय प्राप्त वैधव्य को, अभिसप्त जीवन न स्वीकार कर अपने लिये एक प्रेमी की खोज कर और योजनबद्ध ढंग से उसमें पति की आत्मा को आगोहित करके अपनी चतुराई से उसके साथ अज्ञात स्थान पर चली जाने वाली चतुरा स्त्री है । जिसे हम प्राचीन नायिका भेद की दृष्टि से विदग्धा नायिका कहते हैं । किन्तु उसमें स्पष्टता निश्चछलता थी अपने नये जीवन के प्रारंभ की सूचना अपनी सखी देवबाला को पत्र लिखकर करती है । उसका यह चिंतन भारतीय नारियों पर सटीक उतरता है– ''कि मुझ विधवा पर रहम तो सब जताते हैं पर वे मेरी दूसरी शादी के पक्ष में नहीं है यह मैं बहुत अच्छी तरह से जानती हूँ इसीलिये अब मैं यहां से वेद प्रकाश के साथ किसी ऐसी जगह जा रही हूँ जहां मैं मां बन सकूँ और अपनी नई जिन्दगी जी सकूं ।''[80]

मीना–

मीना 'तीन दिन पहले की रात' कहानी की केन्द्रीय पात्र है । आज के प्रगतिशील समाज में पुत्री को विवाह हेतु अच्छे वर की सुलभता कठिन प्रतीत होती है माता पिता सुदर्शन युवक धनाढ्य या उच्च सरकारी नौकरी वाले युवकों को किस प्रकार प्राथमिकता देते हैं यह इस कहानी का केन्द्र बिन्दु हैं मीना के पिता पहले दिवाकर को अपना दामाद बनाने की बात सोचते हैं किन्तु इसी मध्य जितेन्द्र के अमर के प्रवेश से वे अमर को दामाद बनाने की सोचने लगते हैं क्योंकि वह पुलिस विभाग में ऊंचा अफसर कैसी मन:स्थिति है ।

प्रस्तुत कहानी में मीना के निम्न पक्षों को कहानीकार ने चिन्तन और आचरण के माध्यम से व्यक्त किया है ।

वाह्य रूप–

मीना सुन्दरी युवती है । उसकी सुन्दरता, प्रसाधन प्रियता पर यत्र तत्र चर्चा कर कहानीकार उसके मानसिक धरातल को विशेष रूप से स्पष्ट का प्रयास करता है । कहानीकार ने लिखा है– ''मैं साड़ी बदलती, उसका रंग चुनती आंखों में काजल डालती फिर ढेर सा सेन्ट छिड़क कर रेशमी हवाओं पर तैरने लगती ...... (दिवाकर के आने की सूचना पर) बिन्दी लगाते लगाते मेरा हाथ कांप गया उसे मेरे माथे पर दीपक की लौ जैसी रेखा इतनी पसन्द हैं मैंने साड़ी का पल्ला ठीक किया, उसकी निचाई ठीक की और उतावली से नीचे उतर आई ।''[81]

चिन्तक-

मीना के पिता डॉक्टर है। आर्थिक दृष्टि से वे सम्पन्न हैं मीना को सामाजिक प्रतिबंधों का अनुभव नहीं हुआ क्योंकि नारी स्वातंत्र की, उसकी अस्मिता की वह पक्षधर है। माता-पिता के इस सोच का वह विरोध करती है कि पुरुष ही पति बनकर नारी को सुरक्षा दे सकता है। मीना इस पर विचार करते हुये कहती है- ''कितने बड़े झूठ और प्रवंचना में हम सांस ले रहे हैं। सुरक्षा काहे की ? जीवन की और यह पैसा और पद ? क्या यही जीवन की सम्पूर्ण प्राप्ति हैं ? मुझे घृणा होती है क्या यही जीने का मतलब है और क्या यही आवश्यक है कि एक पुरुष अपनी बाहों की प्रतिष्ठा में घेरकर भौतिक सुविधाओं से भर दें, जीवन की यह झूठी सुरक्षा दे दे ? प्यार करें, शारीरिक संबंध रखें, क्लब एवं होटलों में ले जायें, पार्टियों में पत्नी को अप्सरा बनाकर औरों की ईर्ष्या में सुख पाये ? यही हमारा जीवन है। स्वतंत्रता और सभ्यता का जीवन। यह नारी स्वतंत्रता हाथी के दांत है जिन्हें हर घराने खूबसूरती के लिये लगाये हैं। सारी लड़कियां स्वतंत्रत है, वे प्यार कर सकती है, घृणा कर सकती है, लेकिन जो चाहती है वे नहीं कर सकती। वे शादी से पहले एकान्त स्थानों में घूम सकती है। प्रेम का हर नाटक कर सकती है। ये आजादी नहीं तो क्या है।''(82)

प्रेयसी-

मीना के जीवन में दिवाकर, जितेन्द्र और अमर तीन लोग आयें। दिवाकर आर्दशवादी सुरुचि सम्पन्न साँवले रंग का सुन्दर युवक हैं। जितेन्द्र धनाढ्य और प्रगतिशील युवक है जबकि अमर पुलिस विभाग का उच्च पदाधिकारी है। परिस्थिति के कारण साहचर्य जन्य मीना पहले दिवाकर से प्रेम करती हैं वह दिवाकर के भोलेपन कुछ लज्जालु प्रकृति होने के कारण मीना को पसन्द आ जाता है। संकेत से वह दिवाकर के समक्ष अपनी बात व्यंजना में कहती हैं- ''एक रोज मैंने बड़े संकोच से उससे कह दिया था- सबके सामने तुम्हारे साथ बैठते हुये मुझे न जाने कैसा लगता है। तुम भोले बन जाते हो जैसे कुछ जानते ही नहीं।''(83) दिवाकर के शब्द जाल में मीना भावविभोर हो उठती है मीना सोचती हैं- ''उसके शब्दों में जादू था इस जादू में मैं खो जाती थी उसके पास लहराते जीवन और विचारों के अपार सागर में डूब जाती।''(84)

मीना दिवाकर के आकर्षण में बंधी ऊहापोह में डूबी रहती कभी सोचती कि वह दिवाकर के साथ सुरक्षित हैं। कहानी कार ने उसके इड और इगो के संघर्ष से अर्न्तवाद (इण्टियर मोनोलाग) से उसकी मन:स्थिति स्पष्ट करता है-''उस दिन से अजीब कशमकश रहती मेरा मन होता कि सबको छोड़कर दिवाकर का हाथ जोड़ लू और कहूं कि चाहे जहॉ ले चलो मैं

स्वतंत्र हूँ तुम्हें अपना मान चुकी हूँ तुम्हारी बाते मुझे आकर्षित करती है सचमुच जीवन में सुरक्षित क्या है ? तुम अपनी मुक्ति में मुझे भी बॉध लो मेरे जीवन का छूटा हुआ सत्य मुझे दे दो ।''(85)

स्वप्न शैली में दिवाकर के साथ अपने प्रेम के क्षणों को व्यतीत करते हुये कहानी कार ने मीना की मनोदशा को इस प्रकार व्यक्त किया है –''एक रात सपना देखा..... मैंने पीछे से जाकर उसके छितराये हुये बालों को चूम लिया फिर उसकी बाहों के घेरे ।...नहीं इसे पूरा कर लो दिवाकर... और देर बाद थककर वह मेरी गोद में पड़ा निष्षंख निर्द्वन्द्व सो रहा है ।''(86)

दिवाकर की मौलिकता से मुक्त सटीक टिप्पणियों पर मीना मोहित रहती और वह सोचती कि वह सचमुच में दिवाकर को बेहद चाहने लगी है। परिस्थितिवसात मीना के माता-पिता द्वारा दिवाकर के कुछ भी न बन सकने के कारण उसके प्रति रुखा व्यवहार होने लगा और फिर दिवाकर का आना बंद हो गया।

इस प्रकार मीना के जीवन में जितेन्द्र का प्रवेश हुआ वह मीना की बड़ी प्रशंसा करता अपने संक्षिप्त बातचीत में भारत के अतीत गौरव गाथा का ऐसा वर्णन करता पुरानी इमारत के पुरानी इमारतों खण्डहरों की ऐसी प्रशंसा करता तथा इंजीनियर होने के कारण जितेन्द्र ऐसे नई तकनीकि के भवन खुद बनाने की चर्चा करता कि मीना मोहित हो उठी । कहानीकार ने लिखा है– 'सुनकर मैं विभोर हो गई। जितेन्द्र के हाथ से इतना निर्माण होना है कैसा जादू है मैं जितेन्द्र के पास अपने जीवन की सार्थकता मुझे दिखाई देने लगी । जितेन्द्र को संभाले रहूंगी और जितेन्द्र इमारतें बनाता जायेगा। जितेन्द्र के साथ मैं घूमती तो गर्व के साथ मस्तक ऊंचा रहता मुझे लगता कि देखने वाले मुझसे ईर्ष्या कररहे हैं। अद्भुत संतोष मिलत।''(87) और एक दिन पुन: परिस्थिति बदली, जितेन्द्र लोकल सेल्फ गर्वनमेन्ट में मामूली सा पद पाकर बाहर चला गया। मीना की आँखों में बने ताज महल कुतुम्ब मीनार और गर्वीली इमारतें ढह गई और वह इतनी निराश हुई कि उसने माता पिता के समक्ष शादी करने से ही इंकार कर दिया क्योंकि यह बात उसके समझ में आ गई कि आर्कषण प्रेम नहीं होता उसे प्यार का नाम नहीं दिया जा सकता जो फलीभूत न हो वह कुछ भी नहीं है। जीवन का स्वरूप और उसकी उपयोगिता नष्ट कर देने से प्रेम का आदर्श नहीं खड़ा होता और उदास हताश मीना के जीवन में पुलिस का उच्च अधिकारी अमर स्थानान्तरित होकर मीना के जीवन में आता है अमर की स्वस्थ कलाइयां, गुलाबी हथेली,दांत की चमक, होठों में स्मितजन्य सरल वक्र रेखायें मीना को पुन: बांधने लगी । उसका पौरुष मीना को आकृष्ट करता किन्तु प्रेम के कुटिल कुरूप, जटिल परिस्थितियों से मीना का हृदय इतना कुण्ठित हो गया था उसका

''इगो'' इतना दृढ़ हो गया था कि वह अपने सामने पुरुष को छोटा समझने एवं देखने में सुख का अनुभव करने लगी। प्रेम की असफलता जन्य कुण्ठा ने ऐसा रूप लिया। कहानीकार लिखता है –''अमर के प्रति मेरा दूसरा ही रूख था न जाने क्यों मन:स्थिति कुछ ऐसी हो गई थी कि जी चाहता था कि इसे तड़पा कर छोड़ दूं मैं खूब सजती उससे घुल मिलकर बातें करतीं और उसे रौ में बहाकर अलग हट जाती। एक क्रूर मकड़ी की तरह मक्खी को छटपटाते देखती न जाने कैसा संतोष मिलता है।''(88)

फ्रायड ने लिखा है कि कुण्ठित, दमित, वासना मुक्त व्यक्तित्व पर पीडक (sydist) स्वपीड़क बन जाते हैं। यह मीना का प्रेयसी रूप अमर के साथ पर पीड़क रूप में दिखाई देता है। कुण्ठित मीना सोचती है– ''मैं केवल एक मोम का आदमी चाहती थी जिसे मैं अपना कह सकूँ जिसे अपनी तरह बना सकूँ उसका निर्माण कर सकूँ जिससे मेरी सार्थकता सिद्ध हो जाये। अमर मेरी इस तृप्ति का साधन बन सका।''(89)

वस्तुत: नारी का प्रथम प्रेम अत्यन्त भावुक काल्पनिक एवं आदर्श रूप लिये होता है भले ही वह सफलन हो सके किन्तु कुण्ठित होने पर भी स्त्री की सार्थकता समर्पण, त्याग और प्रेम में ही है। अमर भावावेश के क्षणों में उन्माद भावापन्न होकर जिसरूप में मीना के समक्ष व्यंजनाओं से अपनी आसाक्ति का अपनी विवशता का चित्रण करता कि धीरे–धीरे मीना की कुण्ठा पाषाण (पत्थर) तिल तिल कर गलने लगा और वह पुन: अपने मन का उदात्तीकरण कर कोमल प्रेयसी रूप में उपस्थित होती है। कहानीकार ने मीना की भावनाओं के विषय में लिखा है–''अपना दिल खोल दो, अपना सब कुछ देकर इसे पा लूं समर्पण से बड़ा और क्या प्राप्य होगा। यही जीत हैं इतनी बड़ी जीत के बाद सब कुछ हार जाने को मन करता था। फिर मेरी सांस–सांस ने रोम–रोम में उसे प्यार किया मैं सार्थक हुई मेरा प्रत्येक क्षण केवल उसके लिये था।''(90) और तीन महीने बाद मीना की शादी अमर से हो जाती है। इस मिलन को कहानीकार ने बड़े सयंत तरीके से लिखा है–''वह मेरी पहली रात थी मैंने कमरे में कदम रखा और अमर ने अपनी बलिष्ठ बाहों में भर लिया हम मित्र की तरह बैठे थे पति–पत्नी की तरह बैठे थे मैंने जिसे हृदय से चाहा था वह मेरा होकर मेरे पास था उसने मेरी आंखों में झांक कर आज इंतजार खत्म हुआ और वह बड़े उल्लास से उठकर कहता हुआ मुझे जीवन में एक साथी मिला है आज अपना सब कुछ दिखा लूं।''(91)

कहानीकार ने अमर के जीवन की शौर्य और वीरता से पूर्ण घटनाओं का वर्णन करता है जिससे मीना पर कुछ ऐसा प्रभाव पड़ता है कि वह अमर के सुदर्शन रूप के प्रति विरक्ति सा अनुभव करने लगती है। उसकी देह परिमल मीना को व्याकुल करने लगती है और उसे लगता है कि अमर की बाहें किसी मुर्दे की ठण्डी बाहों के समान है।

सारांश यह है कि कहानीकार ने सौन्दर्य, काम और प्रेम के उदात्त, उज्ञवल आर्कषण रूप चित्रण के लिये दिवाकर का आश्रय लिया है तो उसके कुण्ठित और विकृत रूप के लिये अमर को। कहानीकार की दृष्टि में सौन्दर्य वस्तु के साथ दृष्टि में रहता है। वह वस्तु के साथ मूल्य भी है यह आवश्यक नहीं कि काम, प्रेम बनकर विवाह में परिणत हो जाये लेकिन प्रेम वह उच्च स्वरूप है जो मनुष्य को त्याग और समर्पण सिखाता है। क्योंकि वैवाहिक जीवन के विचित्र रात्रि के पश्चात प्रात: काल मीना को यह भ्रम हुआ कि दिवाकर जो उसका प्रथम प्रेम था अभी-अभी सड़क से उसके सामने से निकल गया।

जुगनू -

यह मांस का दरिया कहानी की प्रमुख स्त्री पात्र है। व्यवसाय की दृष्टि से यह वेश्या है। विश्व साहित्य में यह विचित्र वैशिष्ट्य है कि वेश्याओं की जिंदगी पर लिखने वाले साहित्यकार बहुत उत्सुक रहे हैं। यहां तक कि विश्व प्रसिद्ध लेखिका सुश्री कुप्रिन ने छ: महीने वेश्या के कोठे में रहकर उनके कटु यथार्थ को देखा ही नहीं अपितु भोगा भी है। इसी प्रकार हिन्दी फिल्म साहित्य में वेश्याओं के चरित्र पर सजीव मूर्तन करने हेतु चोटी की चरित्र अभिनेत्रियां आज भी उत्सुक रहती है। प्रगतिशील कथाकार किसी न किसी रूप में साम्यवादी विचारधारा से जुड़े हुये हैं। अत: स्वछन्द यौन चित्रण पर वे विश्वास भी करते है वस्तुत: प्राचीन काल से दुनिया की आधी आवाजें स्त्रियों की है जिसमें से वेश्याओं का जीवन अत्यन्त गर्हित कुत्सित होते हुये भी अपने शारीरिक भूगोल से या मोहक अदाओं से पुरुष को संतुष्ट कर जीवन यापन करना उनकी नियति मानी जाती रही है। ''मांस के दरिया'' में जुगनू का चरित्र और उसके व्यक्तित्व के आलोक में पुरुषों की नारी परख भोग्या दृष्टि का वस्तुगत विश्लेषण हुआ है। इस कहानी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि अश्लीलता को कथाकार ने प्रतीकात्मक शब्दों से व्यक्त कर वेश्याओं के जीवन में आई हुई नारकीय त्रासदी का चित्रांकन कथाकार ने सफलता पूर्वक किया है।

वेश्या सजीव काम पुत्तलिका मानी गयी है। अति प्राचीन काल में गायन वादन नर्तन से वहअपना जीवन निर्वाह करती थी। दैहिक भोग या वासना का कोई स्थान नहीं था। धीरे-धीरे संगीत पक्ष कमजोर होता गया और वासना या काम पक्ष प्रबल होता गया। कमलेश्वर ने जुगनू के माध्यम से काम के जिस नग्न रूप का चित्रांकन कर पुरुषों की विकृति मनोवृत्ति को परिचय दिया है। वहीं हल्की सी कोमल प्रेम की भावना से युक्त एक श्रमिक छोटे स्तर के नेता की चर्चा कर वेश्या के प्रेम पक्ष को भी उजागर किया है। प्राय: धन, लोभ में इस वर्ग को प्रत्येक रात्रि में चाहे अनचाहे या अवांछित परिस्थितियों में भी अनेक पुरुषों की वासना को

संतुष्ट करना पड़ता है। इसलिये कहानीकार ने वासना जन्य मांसल सौन्दर्य या रति क्रियाओं के चित्रण से परहेज किया है। जुगनू के काम पक्ष को लेकर उसके चरित्र का यहां मूल्यांकन करफिर उसके अन्य पक्षों का भी विश्लेषण किया जायेगा।

जुगनू की काम जन्य विवशता-

प्राय: किशोरी लड़कियों को अपहृत कर अथवा किसी की गरीबी का लाभ उठाकर दलाल वेश्याओं के यहां इनको डाल जाते हैं। जहां इन्हें पुरुषों के रीझाने, मनोरंजन करने और अधिक से अधिक धन कम समय में कमाने की शिक्षा दीक्षा दी जाती है। कहानीकार ने ढलती वयस्क में जुगनू के वाह्य सौन्दर्य का चित्रण बड़े विरुप ढंग से किया है। कहानीकार ने लिखा है-''जुगनू के चेहरे पर सस्ते पाउडर की परत थी, गर्दन में पाउडर की डोरिया सी बन गई थी, होठों पर खून सूखकर चिपक गया था कानों के टाप्स मेढ़क की आँखों की तरह उभरे हुये थे। बाल तेल से भीगें थे।''(92)

ढलती वयस्क की काया का एक चित्रण द्दष्टव्य हैं- ''उसने जुगनू की जांघ पर हाथ रख लिया जांघ बासी मछली की तरह पुलपुली और खद्दर की तरह खुरदुरी थी।''(93) सायंकाल से लेकर अर्ध रात्रि तक वेश्याओं का जीवन व्यस्त रहता है। ऐसे समय यदि कोई आवांछित ग्राहक या व्यक्ति आ जाये और वह उससे तन की संतुष्टि न करना चाहे तो जो झुंझलाहट या समय की व्यर्थता का बोध वेश्याओं को होता है। कहानीकार ने जुगनू के माध्यम से उसके काम की तीव्रता और अर्थ की आवश्यकता पर कितना बल दिया है यहां द्दष्टव्य है। किसी कर्मचारियों का छोटे स्तर का नेता झिझकता हुआ संभवत: जुगनू के पास बैठकर मात्र बातचीत कर अपना मन बहलाकर चला जाने वाला था किन्तु जुगनू की द्दष्टि तो काम एवं अर्थ पर थी उसने उसके क्रिया कलापों को देखकर झुंझलाते हुये कहा-''यही कमाई का वक्त होता है इतने में तो चार खुश हो गये होते जुगनू ने कहा और दोनों बाहों में कसकर उसे भींच लिया था।''(94) बात यह हुई थी कि यह व्यक्ति निहायत गंदा मटमैला कुछ कुछ शर्मीला था। आते ही जुगनू के शरीर पर बाज की तरह झपटा न मारकर उसके समीप धीरे से बैठ उससे पूछा कि वह कहां की रहने वाली है। और जुगनू को क्या यह पेशा पसंद है। इसी बीच सरकार ने वेश्याओं के लिये डॉक्टरी परीक्षण और लाइसेंस लेने का प्रावधान घोषित किया गया और जुगनू डॉक्टरी परीक्षण में टी.बी. की मरीज निकली अत: उसे अपना भविष्य अंधकार मय लगने लगा उसने इब्राहिम दलाल से आग्रह किया कि वह

जुगनू को भी किसी अच्छी इज्जतदार कानूनी के पास व्यवस्थित कर दें। ताकि वह ढंके मुदें कालगर्ल के रूप में अपना जीवन यापन कर सकें। किन्तु गति यौवना नारी को कौन पूछता है।

रुग्णारूप–

प्रायः वेश्याओं की गलित जिंदगी में कुष्ट या टी.वी. अथवा ऐसी ही भयंकर असाध्य बीमारियां आती है और जुगनू भी टी.बी. के चक्कर में आ गई। अस्पताल से निराश होकर अपनी सहेलियों और संरक्षिका से कुछ पैसे लेकर सीनेटोरियम में भर्ती हो जाती है। किन्तु कुछ दिन के बाद उसे फिर आर्थिक तंगी से दो–चार होना पड़ा और वह अपने पुराने आसामियों या ग्राहक से कुछ पैसे उधार लेकर पुनः तपेदिक अस्पताल में भर्ती हो गई। उसकी इस अवस्था का चित्रांकन कहानी कार ने अत्यन्त मार्मिक रूप में किया है।''जुगनू की समझ में नहीं आता था कि वह कहां चली जाये, पैसा भी पास नहीं था। उसका बदन झुलस सा गया था बाल बहुत झीने हो गये थे और चेहरे पर सुर्खी गायब हो गई थी जुगनू जब भी सीसे में अपने को देखती तो घबरा उठती थी। अब क्या होगा ? कैसे बीतेगा यह पहाड़ सी बीमार जिंदगी कोई और सहारा भी तो नहीं कोई हुनर भी तो नही है।''(95)

कृतज्ञता–

वैसे वेश्या जिंदगी में यह भाव बहुत विरोधाभाषी होता है रूप और यौवन गर्हिता वेश्यायें पुरुषों को चाहे कितना अपमानित करें किन्तु रूप की चमक और यौवन के दमक के लोभी पुरुष अपमानित होकर भी वहां जाते हैं इसके विपरीत जुगनू का पूर्व व्यवहार अत्यन्त उदार, कोमल था जिससे उसके नियमित ग्राहक मदनलाल, फत्ते, मनसुख किरानी वाला कंवर जीत होटल वाला संतराम फीटर जैसे लोगों से रुपये ऋण रूप में लेकर जब वह ठीक होकर आई तो उसने सबके प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित की और उधार चुकाने के लिये पैसा न देकर तन देने का वचन दिया इस प्रकार जुगनू ने अपने सभी ग्राहकों का पैसा चुकता कर उनके प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित की।

जिजिविषा–

मनुष्य ज्यों–ज्यों जीवन की शांत बेला में पहुंचता है उसकी जिजिविषा और अधिक बढ़ती जाती है। प्रौढ़ वेश्या को कौन पूछेगा। यथार्थ रूप में इनकी जिंदगी अत्यन्त नारकीय होती है फिर भी जुगनू जीना चाहती है उसकी जांघ में फोड़ा हो गया है। ऐसे समय भला वह किसे अपने पास बुला सकती है किन्तु वासनाभिभूत पुरुषों की क्या कमी थी। पके फोड़े के

समय कंवरजीत उसके पास आया और बड़ी संकोच वश मना करते-करते जुगनू को उसकी बात माननी पड़ी। क्योंकि उसकी जिंदगी ऐसे ही भोगों से पार होनी थी। कहानीकार ने ''मांस के दरिया'' का द्विअर्थक प्रतीक रूप में प्रयुक्त कर वेश्या की विवशताओं का चित्रांकन जुगनू के माध्यम से किया है जैसे वर्षा ऋतु में नदी उफनती तट बंदों को तोड़ती ग्रीष्म काल में अत्यन्त छिछली और उथली हो जाती है। ऐसे ही यौवन से भाराकान्त वेश्यायें अपने मद और गर्व में चूर होकर पुरुषों का जितना अधिक अपमान करती है उसके पुरुषार्थ को जितनी उदण्डता के साथ चुनौती देती है। उतना ही अधिक धन उन्हें प्राप्त होता है और इसका नैराष्य परक यह अर्थ हुआ कि गति यौवना नदी की भांति वेश्या का शरीर भी अत्यन्त लिजलिजा और काठिन्य रहित हो जाता है। कहानीकार ने मांसके दरिया के समापन से नारी की विवशता का विभत्स दशा का चित्रांकन किया है। जैसे ही कंवरजीरत पर शैतान सवार हुआ कि वह जुगनू के जांघ के फोड़े के दर्दको भूल गया और फोड़ा फूटने पर चीख मारकर बेहोश होने वाली जुगनू की शान्ति तथा बहते हुये मवाद (पीव) के पोछकर निराशचले गये अपने उस श्रमिक मजदूर को पुन: बुलाने का प्रयास करती है जिसे उसने फोड़े के दर्द के कारण उसे निराश वापस कर दिया था।

सारांश यह है कि कहानीकार ने साम्यवादी वस्तु परक दृष्टिकोण रखकर प्रमुख पात्र जुगनू के माध्यम से वेश्याओं के सौन्दर्य प्रेम के ढोंग रति क्रिड़ाओं के कुछ अश्लील प्रसंग, जीने की जिजिविषा तथा स्वभाविक रूप अर्थ लोलुप नारी के मन में कहीं दूर छिपे कोमल भावों का भी एहसास पाठकों को कराया है। इसीलिये जुगनू का पात्र भोगे हुये यथार्थ और वणिक वृत्ति के रूप में चित्रित किया है। क्योंकि गति यौवना नारी वेश्या को बाद में कोई पूछने वाला नहीं होता और इनकी दशा बहुत दयनीय हो जाती है। ज्यों-ज्यों मुट्ठी के रेत की भांति इनका यौवन कण-कण कर सरकता रहता है, त्यों-त्यों वाह्य प्रसाधनों अश्शील शारीरिक मुद्राओं और क्रियाओं के प्रति इनकी जागरुकता बढ़ती जाती है। जुगनू चरित्र का यही वैशिष्ट है।

उपन्यासकार राजेन्द्र यादव के साहित्य में विकृत मानसिक नारी पात्र

निन्नी-

मानसिक विकृत अवस्था का सैद्धांतिक निरूपण करते हुए यह कहा जा चुका है कि प्रेम प्राणी मात्र की नैसर्गिक एवं व्यापक वृत्ति है। प्रेम वृत्ति मनुष्य की सभी चित वृत्तियों के मूल में है और अत्यन्त व्यापक एवं गहरी होने के कारण प्रत्यक्ष परोक्ष रूप से यह मनुष्य की सभी चित्त वृत्तियों का स्वरूप निर्धारण नियमन और संचालन करने वाली है। इस प्रेम के मूल में एक ओर सौन्दर्य की पिपासा दर्शन की आकांक्षा एवं प्राप्ति की लालसा है तो दूसरी ओर वर्जना या नैतिक मूल्यों के कारण जब प्रेम का प्रक्कट्टी करण नहीं हो पाता तब चेतन अचेतन में संघर्ष होने लगता है। जब उक्त भावनाएं दमित हो जाती है तब मन की अवस्था विकृ त हो जाती है और पात्र नैतिक, सामाजिक मूल्यों का परित्याग कर या तो विकृत आचरण करने लगता है अथवा उन्माद ग्रस्त या विक्षिप्त हो जाता है।

निन्नी अनदेखे अनजाने पुल की नायिका है जो मूलत: अपने परिवार में कुरूप ही नहीं अपितु परिवार जनों के साथ अपने सामाजिक दायरे में उपेक्षित भी है। इसकी भूमिका में राजेन्द्र यादव ने यह कहा है कि निन्नी वर्तमान समय के भारत सरकार के अंतर्गत किसी उच्च पद पर आसीन है और लेखक को नैनीताल के प्रवास में उसने अपने जीवन की इस कुण्ठा का, साथ ही अपने जीवन में प्रमुख घटनाओं को इस अनुरोध के साथ बताया था कि कथा कार होने के नाते लेखक उसका दुर्पयोग नहीं करेगा। मध्यम परिवार में पैदा हुई निन्नी कल्लो परी के नाम से जानी जाती थी। विश्व विद्यालय पहुंचने पर उस पर जो छीटाकशी हुई। उच्चश्रृंखल युवकों द्वारा उसका जो उपहास उड़ाया गया जिसके कारण निन्नी हीन भावना से ग्रस्त हो गई। काम प्रेम वासना उसके लिए वर्जित थे। अत: वे समवयस्कों के बीच बैठ येन केन प्रकारण काम की तुष्टि सौन्दर्य प्रप्ति के लिये भूखा रहकर शंकर पार्वती की आराधना करती और यह हीन भाव इस तरह विकास ग्रस्त हो गया कि अनचाहे चुम्बन से आन्नदित इस लिए नही हो सकी कि बैजल ने निन्नी को पहचान कर अपना मुंह न जाने कितनी बार साबुन से धोया था। यौन पिपासा की अदम्य लालसा ने निन्नी के जीवन में दर्शन के प्रवेश और नुमाइश दिखाने के समय अपने शारीरिक उभारों का बोझ उन्मुक्त भाव से दर्शन के ऊपर डालने पर जिस असीम आनंद की तृप्ति का अनुभव करती बही तृप्ति उसे मोह भंग के कारण आत्म हत्या के लिए प्रेरित करती है किन्तु सौभाग्या वसात मर्ष अवस्था में

पपटाये अधरों को चूम कर दर्शन ने जिस विकृत के प्रति उदात्तीकरण करके निन्नी के जीवन का लक्ष्य प्रशस्त किया। कथाकार राजेन्द्र यादव ने फ्रायड की लिग्डो ग्रंथि से उत्पन्न काम (सेक्स) के दमित रूप तथा विक्रय होने पर प्राप्ति के जाने अनजाने तरीकों का उल्लेख कर सौन्दर्य के प्रति एक नई धारणा विकसित की है। शोध कर्त्री ने सौन्दर्य का निरूपण करते हुए उसके भारतीय एवं पाश्चात्य मापदंडो की चर्चा करते हुए Nude और Naked की भी चर्चा की है जो निन्नी के जीवन पर पूर्णत: घटित होता है निन्नी के उक्त जीवन गाथा के साथ उसके चरित्रगत विभिन्न आयामों की यहां चर्चा की जायेगी।

सौन्दर्य निरूपण-

कथाकार ने कुरूपता में भी सुन्दरता को देखने का प्रयास किया है। क्योंकि जब कुरूपता नहीं होगी तो सुन्दरता का कोई महत्व नहीं है। इसलिए राजेन्द्र यादव ने कुरूपता को वस्तु एवं दृष्टि दोनो दृष्टियों से परिभाषित किया है। युवती निन्नी के विवाह की चर्चा के समय उसे देखने वाले आते है। सज संवरने के नाटक की आवृत्ति होती और खोटे सिक्के की तरह निन्नी के विवाह का प्रस्ताव बड़ी निर्ममता पूर्वक वापस कर दिया जाता। दिल्ली आयी हुई निन्नी इस कुरूपता को समझ तो गई है, किन्तु उसका अचेतन मस्तिष्क कभी इस तर्क को स्वीकार नहीं कर सका। रात्रि के समय दर्शन के घर पहुंचने पर निन्नी का दिल धसकने लगा। कथाकार ने लिखा है – एक बार फिर उसी अपमान का सामना करना होगा। एक बार नये सिरे से अपने को नये आदमी की आंखों में कुरूप देखना होगा। एक बार फिर तराजू पर बांटों की जगह यही दया रखी जायेगी। निन्नी अनजाने ही तांगे की आड़ में एक ओर सरक गई। एक हाथ से दूसरे की उंगली साधे धीरे-धीरे निचले होठ को नोचती रही मन होता था अंधेरे में चुपचाप कॅही खिसक जाये।''[96]

उपन्यास कार ने निन्नी के मन में छिपी कुण्ठा को बड़े ही स्वभाविक तरीके से चित्रित किया है क्योंकि जब निन्नी के बडे भाई दादा अपने मित्र दर्शन से बहन के रूप में निन्नी का परिचय करायेगें तो फिर निन्नी को आत्मघाती ग्लानि को भोगना पड़ेगा। अनेक बार ऐसा निन्नी के साथ हो चुका है कुण्ठित या हीन भावना ग्रस्त व्यक्ति अपने उस मूल कारक तत्व के प्रति सजग रहता है दूसरा उसे चाहे देखे या न देखे। कई बार सिनेमा घर में बैठे-बैठे निन्नी मार्क करती कि कोई उसे बार-बार देख रहा है कई बार दूर से नजर को समेट कर लाता और उसकी ओर मोड़ देता आँख गडाकर उसके सीलुऐट (Seluate) को तौल रहा होता तब निन्नी के भीतर गुदगुदी नहीं एक अथाह निराशा भर जाती अभी अंधेरा है इस लिए इतनी दिलचस्पी दिखा रहा है सभी इण्टरबल होगा तो बेचारे को कितना धक्का लगेगा इस

ख्याल से ऑसू और भी वेग से उमड़ आये कि दर्शन कलाकार आदमी है कितना धक्का लगेगा बेचारे को इस असुन्दर काली कलूटी लड़की को देखकर।''(97)

दर्शन के साथ कमरे में व्यतीत रात के पश्चात जब निन्नी दर्शन के चप्पलों को पहनकर स्नान ग्रह गई। लेखक ने लिखा है - उसे सचमुच लगा कि दर्शन के तलुवो की गरमाई उसके तलुवों को छू रही है और यह छुअन रोमांच की लहर की तरह उसके रोम - रोम में तैरती चली गई। ''(98) तात्पर्य यह कि कुरूपा निन्नी पुरूष की ऊष्मा के में संम्पर्क आते ही कितनी रोमांचित हो उठती है परन्तु जब स्नान घर के कांच में उसने अपने रूप को देखा तब अब चेतन मन में कहीं यह बात अवश्य उभरी कि वह दर्शन की आंखों में देखना चाहती थी कि निन्नी के प्रति उसका कैसा भाव है जब कि यथार्थ रूप में दर्पण उसके रूप को इस प्रकार प्रतिबिम्बत कर रहा था कथाकार ने लिखा -''उसे लगा अचेतन में जाने कब से सीसा देखने की इच्छा मचल रही थी रूपहले कांच में वहीं काली कलूटी शक्ल थी वहीं चमकते दांत और आंखों की सफेदी भी, वही जरूरत से ज्यादा लाल मसूड़े और सावले होठ थे और मन में वही घिनौना लिलचट्टा (अवचेतन मन का प्रतीक) मूछे हिला हिलाकर आंखे चमका रहा था नही-नहीं तलुवो से उस गर्मी को महसूस करने का कोई हक निन्नी को नहीं है उसने खूब कस कस कर तौलिये से मुँह पोछा।''(99)

इस कुरूप सौन्दर्य का वस्तु परक चित्रांकन कथाकार ने अनेक बार पिष्टप्रेषण के रूप में किया है सम्भावत: वह कथा निविष्ट पात्र निन्नी के मन की कुण्ठा की आवृत्ति करना चाहता है। इसी दर्शन के परिप्रेक्ष्य में निन्नी की स्वीकारोक्ति का चित्रण कथाकार ने इस प्रकार किया है - '' यह तीव्र बोध था कि उसका रंग काला है वह सुन्दर नहीं है उसके होठ सांवले है और मसूढ़े जरूरत से ज्यादा लाल है और सारे चेहरे पर दातों और आंखों के कोयों की सफेदी बड़ी डरावनी लगती है यह बोध रात दिन उसके ऊपर सवार रहता है।'' (100)

इस कुरूपता बोध के पीछे निन्नी का यथार्थ रूप प्रमुख था अथवा इस बोध को बनाने में दूसरों का हाथ है यह जानना निन्नी के लिए बहुत कठिन था यद्यपि वय: सन्धि की किशोरी स्वत: अपने को सुन्दर समझती है उसके मन की तरंग निकल कर सप्त रंगी इन्द्रधनुष करवटे लेती सुप्त आकांक्षाये शारीरिक और मानसिक मद उसे एक दूसरी दुनिया में ले जाता है इस लोक से उतार कर यथार्थ के धरातल में लाने का श्रेय दूसरे को ही ज्यादा होता है। हीनतानुभूति जब भी पहले पहल निन्नी के मन में आई होगी उसे लाने का श्रेय दूसरे को ही रहा होगा। क्योंकि कथाकार कहता है कि वह अक्सर भूल भी जाती लेकिन जब जब दूसरे की आंखें उसकी निगाहें देखती उसकी निगाहें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष संकेत समझती तो यह

कुरूपता की बात झटके से उसकी चेतना पर छा जाती । उस दया और हिकारत की निगाहों को घर से स्कूल जाते और अब कालेज आते जाते हुए उसे हर समय सहना पड़ता था । परिचितों की दया और हिकारत सह पाना शायद सबसे कठिन होता है । ''(101) कथाकार ने स्माइल दर्जी, पन्ना परचूनियां की बात कहता कि ईश्वर ने निन्नी के साथ कितना अन्याय किया है जाने कैसे बेचारी की शादी होगी । कालेज में तो अक्सर सुनना पड़ता, ''सत्यानाश हो इस कल्लो परी का सारा शगुन ही विगाड़ दिया । निन्नी अपमान संकोच से गड़-गड़ जाती उसकी ऑखों से ऑसू बहने बहने को हो आते सिमट कर इतनी छोटी हो जाना चाहती कि अदृश्य हो जाय निरीह भाव से एक तरफ सरक जाती कि देख लो भाई आरती निगम का प्रोफाइल देख लो सुधा शर्मा की आंखे देख लो अर्चना शूद का जूड़ा देख लो मीर चन्दायनी की मैचिंग देख लो ।''(102) घर के लोग भी लम्बी सांसे लेते कि भगवान जाने कैसा इसका बेड़ा पार लगायेगा । राम जाने क्या-क्या दिन दिखाएगी यह लड़की । कथाकार ने एक ओर निन्नी की कुरूपता का उल्लेख जितनी सजगता से किया है उतनी ही तत्परता से निन्नी के अनुभाव और क्रियाओं का चित्रांकन भी किया है कथाकार ने लिखा है - ''निन्नी बहुत दूर भाग जाना चाहती थी जहॉ सामने पड़ जाने पर मुंह का स्वाद विगड़ जाने की विक्रति जिनके चेहरों पर न आये । सुबह सुबह सगुन विगड़ता न लगे और उसे देखकर उसके विवाह और भविष्य के लिए फिक्र और दया न दिखाये । ऐसा ही अनुभव उसे लड़की दिखाई के समय होता जिस समय वह सुनती कि लड़की हमें पसन्द नहीं है सारी-सारी रात रोती रहती अनेक सम्भव असम्भव कल्पनाएं करती, अपने को मार डालने के अनेक तरीके सोचती उसके अचेतन मन पर अपमान की आशंका जूझती । कथाकार ने इस परिप्रेक्ष्य में सौन्दर्य और कुरूप की परिभाषा में निरूपित किया है । कथाकार की धारणा है कि लड़कियों को जहां अच्छा घर वार मिला कि अपने आप सुन्दर हो जाती है आदमी जब भीतर से खुश होता है तो बाहर भी चेहरे पर चमक आ जाती है निन्नी का रंग काला नही सावला है चेहरा अगर मनहूस और मुर्दा हो तो कुरूप और भद्दा लग सकता है और भीतर की पुलक कुरूप से कुरूप चेहरे पर विश्व मोहनी मुस्कान के इन्द्र धनुष खिला सकती है । निन्नी हर व्यक्ति का चेहरा देखकर सोचती सुन्दरता वास्तव में क्या है ? भीतर की ही प्रसन्नता तो है । निन्नी अपने को विश्वास दिलाये रहती कि वह जितनी खुश रहेगी उतनी ही अपने को प्रभावशाली बनायेगी वह प्रसन्नता में कारण तलाश करती और प्रसन्न रहने का अभ्यास करती मुस्कुराती रहती और कारण अकारण हंसती कभी मन में संदेह उठता कि प्रसन्नता तो सच्ची होनी चाहिए तब अनेक युक्तियों से कारण का औचित्य सिद्ध करके प्रसन्नता का सच्चे पन का

विश्वास दिलाती रहती कि सचमुच कुछ मधुर है जो उसे प्रसन्न बनाये हुए है हर क्षण उसे लगता जैसे वह सुन्दर होती जा रही है और उसका रंग निखरता आ रहा है वर्षों पहले छोडे हुए प्रसाधन क्रमशः फिर प्रयोग में आने लगते सोते समय चुपचाप साबुन से चेहरा धोकर मलाई से मालिश संतरे के छिलके का उबटन नहाने पहले बादाम के तेल की मालिश ।''(103) निन्नी की इस अकारण हंसी के कारण उसे एक सहेली टोकती है कि निन्नी के चेहरे पर नमक आ गयी है । निन्नी अपने को समझाना चाहा कि हो सकता है कि इसकी ही बात सच हो रंग से तो आदमी सुन्दर असुन्दर नहीं होता एक चीज होती है नमक सलोना पन लावण्य और वहीं सारे चेहरे पर चमकता है । खुद निन्नी को ही सैकड़ों ऐसे चेहरे याद है जो देखने में तो सावले है लेकिन ऐसा नमक उन पर कि हजारों गोरे चेहरे पानी भरे ।''(104)

सौन्दर्य की इस दृष्टि ने निन्नी के मूल्य बोध को ही बदल दिया उसकी दृष्टि में सौन्दर्य वस्तु में न हो कर एक मूल्य है । हर सावले चेहरे में सौन्दर्य और नमक खोजने का प्रयास करती हर सफेद चमड़ी में कुरूपता खोजकर उसे बड़ी कुरूर सत्वांना मिलती जैसे नीलिया सूद का रंग साफ है तो चीक बोन्स ऐसे निकले है जैसे जबड़े टूट गये हो । अर्चना के बाल चुहिया की पूछ सी सुधा शर्मा का सिर लकड़ी पर घडा के समान है और निन्नी मन को समझाती कि वह इतनी कुरूप नहीं है तात्पर्य यह कि कथाकार ने निन्नी के कुरूप सौन्दर्य का चित्रांकन परिस्थिति तथा निन्नी की स्वयं की हीन भावना एवं परिवार समाज की निराशा और कटु उक्तियों से निर्मित हुई है और इस कुरूपता के कारण वह कही बहुत क्रूर, कही बहुत हठी उदण्ड, और अपनी अस्मिता को बनाये रखने के लिए अनेक प्रत्यन्न करती हुई चित्रित हुई है ।

निन्नी में काम का स्वरूप और उसकी विकृति-

पहले कहा जा चुका है कि नाना अनुकूलताओं प्रतिकूलताओं के मध्य एक प्राणी दूसरे प्राणी के निकट आता है यह नैकट्य विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण को जन्म देता है जिसे हम काम (Sex) कहते है । काम यदि कमल है तो सौन्दर्य तालाब है । काम यदि मयंक है तो सौन्दर्य उसकी कौमुदी है इस प्रकार भारतीय आचार्यो से ले कर पश्चिमी मनोविज्ञान वेत्ताओं ने प्रजनन वृत्ति के मूल में काम को स्वीकार किया है । यह काम ही प्रेमी प्रेमिका गत पारस्परिक सौन्दर्याकर्षण, पारस्परिक संयोगेच्छा और मधुर मिलन की बलवती आकांक्षा रूप में प्रकट होती है । वयः सन्धि से लेकर यावत जीवन मनुष्य के शरीर में उसके मन में काम का अधिवास रहता है और इसकी अप्रप्ति व्यक्ति को कुण्ठित ही नहीं करती उसे मानसिक विकार ग्रस्त बना देती है ।

निन्नी कुरूपा बालिका थी। माता पिता परिवार प्रतिवेशियों तथा अध्ययन के समय सहपाठियों से उसकी कुरूपता क्रमश: उसके मन में सौन्दर्य और तदजन्य आकर्षण को एक नये रूप में प्रसतुत किया है। वय: सन्धि के समय शारीरिक परिवर्तन के साथ ही साथ उसके मन में सुप्त काम का जागरण हुआ तब उसके मन में यह विचार आता क्या किसी कुरूपा स्त्री को काम के विषय में सोचने का कोई हक नही है ? क्या उसके लिए विधाता ने काम सुख के अवसर ही नही रचें तो फिर आखिर पढ़ लिख कर परीक्षा पास होकर वह क्या करेंगी उसके लिए न तो कोई प्रेमी है और न ही कोई पति। इस हताशा ने निन्नी के मन में ऐसी कुण्डा उत्पन्न कर दी कि जो अपने स्वस्थ रूप में न प्रकट होकर विक्रत रूप धारण करने लगा और इस धारणा के पीछे उसकी सहेली की शादी में भ्रम वश एक स्वस्थ्य सुदर्शन पुरूष की देह परिमल की गन्ध उत्तप्त चुम्बन, बलिष्ठ बाहों का आलिङ्गन प्राप्त हुआ और इस चोरी के संयोग सुख परिणति निन्नी ने बड़े विचित्र रूप में देखा। उपन्यास कार ने प्रथम प्रेम की आवेग प्राप्ति और अनुभूति की परिस्थितियों का चित्रण बड़े ही स्वभाविक रूप में किया है। जैसे ही निन्नी पत्तल निकालने के लिए कमरे की दो छत्ती में प्रविष्ट हुई उसका परिचय काम की अनुभूति से हुआ इसका चित्रांकन करते हुए राजेन्द ने लिखा है – '' जब तक निन्नी पीछे मुड़कर कुछ समझे या चीखे कि किसी ने झटके से उसे दोनो बाहों में भर लिया और उसका माथा नाक कनपटी टटोलते दो धड़धडाते होठ उसके होठो से चिपके और तब हाथों और छाती के बालों के स्पर्श और हिना की गन्ध होनो ने ही एक साथ यह बताया कि ये तो बैजल है। '' (105)

लिबडो ग्रंथि में बसी यह काम भावना अतृप्त रह जाने पर उसकी अनुभूति का चित्रण कथाकार ने फ्रायड से प्रभावित पद्वति के अनुकूल किया है। उपन्यास कार ने लिखा है – '' उसके अचानक यों छोड देने पर निन्नी गिरते गिरते संभली, हाथ से दीवार ली टेक की और छाती की धडकन कानों की सनसनाहट और होश की घबराहट में समझने की कोशिश करने लगी कि यह अचानक हुआ क्या ! उसकी बाहों में बंधकर जिस क्षणांश उसने जाना कि यह बैजल है तो अनचाहे ही शरीर अपने आप ढीला हो आया। एक समर्पित कली की तरह वह झुक आई ...। उसकी आवेश तप्त सांसो और उद्वीप्त आतुर होठों का यह पागल स्पर्श कुछ ऐसा अप्रतिरोध्य और बेधक था कि निन्नी के तन और मन की परत परत को पार करता हुआ आत्मा की सतहों में उतरता चला गया और जाने किन अँधियारी गहराइयों में कैद रोमांच की सिहरन से उसके शरीर प्राण को लाद गया। वह सोचती कि काश मैं संध्या होती तो कैसे एकाग्र अभिभाज्य रूप में इस रोमांच की सिहरन को पीती.... तो इसे कहते है

चुम्बन.... यही हैक वह अनुभूति की अनी जो नारी के अन्तं वाह्य अस्तित्व को यों चीरती चली हाती है जैसे मुलायम साबुन के टुकडों को तेज चाकू चीर डालता है यही है वह क्षणांश का आप्लावनकारी बोध जो बिजली की कौंध की तरह सारे मनोनभ पर आर पार छा जाता है और एक ज्योतित उद्भाष की गर्जन से रगरग चमत्कृत हो कर वीणा के तारों की तरह झनझनाने लगती है।''(106) कथाकर ने आश्रय के काम जनित अनुभूतियों का छायावादी भाषा में जिस प्रकार चित्रण किया है वह अत्यन्त मनोमुग्ध कारी है इस चित्रण में न तो कहीं अश्शीलता है न तो कहीं मान्सलता है अपितु हृदय को आप्यायित करने वाली आर्वजक अनुभूति का सहज चित्रण है। यही काम अपने प्रकृत अवस्था में यदि स्वभाविक रूप से प्राप्त होता तो निन्नी का मन कमल की तरह खिल जाता। दृश्य की अनुभूति सिहरन बनकर एक अतीन्द्रिय आनंद की सृष्टि करती किन्तु यह काम की प्राप्ति एक वर्जना के रूप में उसे मिली थी अत: निन्नी के मन में काम एवं आनंद के स्थान पर ईर्ष्या, द्वेष और कुण्ठा ने जन्म लिया क्योंकि निन्नी सोचने लगी कि जब वैजल बारह उसे देखेगा तो घ्रणा से मुंह बिचकायेगा, उबकाई देने का भाव दिखाकर और कुल्ला किया हो। यही से निन्नी के मन में कुण्ठा पनपने लगती है और उसने सोचा कि बाहर जाकर अपनी बहन संध्या का झोआ खींचकर सबके सामने बताए कि जितनी सीधी यह दिखती है उसकी असलियत कुछ और है वह परिवार की आंखों में धूल झोटा रही है। इस कुण्ठा की प्रतिक्रिया भी विचित्र रूप में हुई जिसे उपन्यास कार ने इस रूप में चित्रित किया है – ''लेकिन बैजल का उस दिन वाला वह चुम्बन होठों की गीली गर्म चुनचुनी के रूप में ही नहीं रह गया वह तो मन के अनेक स्तरों पर उतरता चला गया। क्या हुआ किसी और के लिए था ? क्या हुआ अप्रत्याशित मुहुर्त पर मिले इस रस को निन्नी ने चोरी से लिया और क्या हुआ उस विशिष्ट क्षण वह उसके अर्थ और प्रतिक्रिया को समझ नहीं पायी लेकिन था तो वह चुम्बन ही – एक पुरूष का आवष्टि अवर्जनीय दुर्निवार सम्मोहक आवाहन अपने आप में यह क्रिया चाहे जितनी छोटी क्षण कालीन हो लेकिन संम्पूर्ण को सौंप देने और संम्पूर्ण को समेट लेने का यह प्रतीक कितने गम्भीर अर्थों से भरा होता अच्छा क्या वह संध्या बन कर नहीं महसूस कर सकती कि चुम्बन मन को कहां गुदगुदाता है कौन सी पुलक है जो इन्द्रधनुष बन कर आँखों में समाई रहती है।''(107) मानसिक दृष्टि से निन्नी के मन में इस काम के प्रति अर्न्तद्वन्द्व के झंझावात उठने लगे। इसी उपन्यास कार ने इड और इगो के संघर्ष के रूप में प्रस्तुत किया है। स्त्री चाहे कितनी सुन्दरी या असुन्दरी हो अपने सौन्दर्य के प्रति वह अत्यन्त सजग होती है। प्रत्येक नारी में ऐसी विचित्र दृष्टि होती है जिसके कारण वह दूसरी स्त्री से भिन्न और पुरूष के लिए उसकी आंखों की चमक आकर्षण

की केन्द्र बिन्दु होती है। यथार्थ की बात तो यह है निन्नी को जिस काम की प्रथम अनुभूति जिस क्रिया व्यापार से प्राप्त हुई थी निश्चित ही भविष्य में उस पुरूष से नहीं प्राप्त होती थी। इड भावना अनेक तर्को से उसको सही सिद्ध करने का प्रयास करती है। निन्नी की इसी सोच को राजेन्द्र यादव ने इस प्रकार व्यक्त किया है – ''कभी –कभी एक चोर विचार बहुत धीमे से मन में सिर उठाता ... यह भी तो हो सकता है कि उस क्षणांश में बैजल को निन्नी के होठो के स्पर्श में ऐसा कुछ मिल गया हो जो संध्या में न हो ....बहुत बार ऐसा होता है कि पुरूष या नारी की निगाहें किसी में ऐसा कुछ पा लेती है जो उन्हें दूसरे से मिलता ही नहीं है। अत्यन्त सुन्दर पत्नीके रहते हुए पुरूष किसी दूसरे औरत में आखिर क्या चीज पाता।

अप्राप्त वस्तु के लिए मन अत्यधिक लालयित रहता है क्योंकि मनोवैज्ञानिकों एवं अर्थशास्त्रियों ने कहा है कि दुर्लभता में ही आकर्षण होता है। निन्नी के मन में उस अनधिकृत काम की प्रति प्राप्ति की आकांक्षा बलवत्तर होती गई। यह भावना चेतन मन से उतर कर अचेतन स्तर तक पहुंच गई और फिर उसकी आवृत्ति अवचेतन स्तर पर होने लगी। उपन्यास कार राजेन्द्र यादव ने संध्या और उसके प्रेमी बैजल की अनेक झलकियां दिखाकर निन्नी की दमित काम की भावनाओं को उदीप्त करती रही – '' बहरहाल महीनों निन्नी उसी सुख की मन ही मन जुगाली करती रही कभी–कभी हडबडाहट और आवेश में उसका माथा नाक, कनपटियाँ टटोल कर होठो तक आते, कभी बडी देर तक उसकी रोमिल छाती से सटी बाहों में बंधी अपने को प्रचुम्बित अनुभव करती .... फुसफुसा कर कहती बैजल .... बैजल... और जब कभी होश आता कि हर बात को कितना बढा चढा कर सोच रही है तो शंका होने लगती कहीं ऐसा तो नहीं कि वह सब घटा ही न हो, और वह यों ही अपने मन में सोचे बैठी हो। सुख सार्थकता अपराध और पाप का बडा मिला जुला अनुभव था वह जिसने निन्नी को एक तीखी ग्लानि और मर्मान्तक लल्जा के किनारे ला छोडा था।''(108)

उक्त यथार्थ और उसके कल्पित आदर्श में इतना विरोधाभास–पन होने लगा। स्वप्नाकांक्षाओं और सन्त्वांनाओं की पूर्ति में जो घुटन वर्जना और यातना निन्नी ने सही उसके पीछे निन्नी की कुरूपता और बढ़ गई। उसने यह सोच लिया कि यह कुरूपता ही उसकी नियति और प्रारब्ध है। बीच–बीच में विवाह के प्रसंग, चर्चे, प्रदर्शन तथा अस्वीकृति के पश्चात रोना पीटना अन्त में आत्म हत्या करने की प्रवृत्ति की ओर निन्नी का मन मुड गया क्योंकि बैजल के इस प्रसंग के कारण उसकी मन की भावना या काम को इतना उदीप्त कर दिया कि वह उदण्ड हो गई। इसे ही फ्रायद के व्याख्याकार युंग ने उदण्डता का भाव कहा है। निन्नी के सामने यह प्रश्न उभर कर आया क्या इस सुख की सम्पूर्णता को वह कभी नहीं

जान पायेगी और भीतर से उदण्ड मन पुकारता मै भी देखूंगी मुझे कौन रोकता है। कथाकार न लिखा है – ''उन दिनों स्वभाव में एक अजब उद्वत अशिष्टता आने लगी, कालेज में अब सकुचाती देह चुराती सी नहीं तन कर बैठती और सीधे ऑख से ऑख मिलाकर देखने का प्रयत्न करती और पल्ला इधर–उधर सरक जाता तो संस्कार गत लज्जा से लड़ती हुई उसे यों ही पड़ा रहने देती पहले हिम्मत नहीं पड़ी लेकिन बाद में बहुत हल्का पाउडर और क्रीम भी शरीर पर आ गया। हमेंशा मन कुछ दुष्ट कुत्सित और वर्जनीय कहने और करने को मचलता रहता ... छिप छिप कर चटखारे दार प्रेम और रोमांस की किताबें पढ़ती उनके चुम्बनों आलिङ्गनों वाले वर्णनों को अनेक बार दोहराती और आँखे बन्द करती तो बैजल के गर्म गर्म सांसे और अंधेरी ग्यानि सामने आ जाती X X X कमरे का दरवाजा झटके से खोलती मानो कमरे में दो प्यार करते आलिङ्गन बद्ध प्राणी गुथे लेटे है दरवाजा खोलेगी तो अस्त व्यस्त कपड़ो को ठीक करने से पहले ही उन्हें देख लेगी। स्त्री पुरूष के शरीर सम्बन्धों केबारे में जानकारी उसने उन्हीं दिनों में प्राप्त की।''(109)

वय: संधि से किशोरी होती हुई युवास्था को प्राप्त युवतियों के मन में पुरूषों के प्रति आकर्षण अत्यन्त स्वभाविक माना गया है यह एक स्वस्थ दैहिक प्रवृत्ति है किन्तु वर्जना के कारण जब यह दमित अवस्था को प्राप्त होता है। तब इसकी अभिव्यक्ति दिवाकल्पना अथवा कुठिंत आचरणों से प्रगट होने लगती है। काम का यह स्वरूप अपने मूल रूप से विक्रय हो जाता है। काम का जो महासुखवाद ब्रम्हानंद सहोदर माना गया है। वासना के कारण यह विकार ग्रस्त हो जाता है और व्यक्ति के समूचे चरित्र को उसके चिन्तन व्यवहार को विकृत ही नही करता अपितु उसे समाज द्वारा निर्धारित नैतिक मूल्यों के उलघंन करने के लिए विवश कर देता है। दुर्भाग्य वश निन्नी कुरूपा थी और उसके जीवन में यह प्रेम सहज रूप से न आकर अचानक प्रगट हुआ। वह मुग्धा से अधीरा मध्या नायिका बन गई। जो काम उसे जीवन की प्रगति की ओर अग्रसर करने में सहायक होता दमन के कारण वह इतनी विक्रय अवस्था की पहुंच गया कि निन्नी दिवास्वप्न ही नहीं बल्कि पुस्तकों में लिखे या चित्रत घटनाओं की आवृत्ति वह अपने यथार्थ जीवन में करने लगी। उपन्यास कार ने पहले प्रच्छन्न और फिर प्रगट रूप में उस अतृप्त सुख की प्राप्ति के साधनों का उल्लेख बड़े ही सूक्ष्म निरिक्षण पद्धति से किया है। दमित वासना की प्रतिक्रिया के कुछ उदाहरण यहॉ दिये जा रहे है – निन्नी प्रतिवेशी (पडोसी) त्रिपाठी जी के डेढ वर्ष के बालक को गोद में भीचने उसके गालो को नोचने में निन्नी को बडा आनंद आता संयोगवसात उनका एक भतीजा सागर गरमी की छुट्टियां व्यतीत करने आ जाता है। जिसे अबोध किशोरियों को बहकाने के

महारथ हासिल थी वह जानकर अनजान बनता हुआ निन्नी के सामने किताबों के उन पृष्ठों को खोलकर रख देता जो कामसूत्र पर आधारित स्त्री पुरूषों के नग्न व मिथुनरत चित्रों की झांकी अंकित होती है । क्योंकि बड़ा स्वभाविक और सहज अभ्यास था सागर का । इस क्रिया कलाप के द्वारा वह निन्नी को भी चारा चुगने के लिये विवश कर देता है । क्योंकि निन्नी को यह विश्वास ही नहीं होता था कि किताबों में भी इस प्रकार से अश्शीक नगे कुत्सित भद्दी भाषा का प्रयोग हो सकता है निन्नी इन किताबों को पढ़ती और खेल खेल में वह जान कर भी अनजान बनती हुई अपने घुटने या जांग में नीचे सागर का पंजा या घुटना दबाये रहती उसकी सारी चेतना वही रहती और दिल धक धक करता रहता कि कहीं कोई ताड़ न रहा हो । कभी कभी सागर की कोहनी या पंजा निन्नी के पाव के नीचे सरक आता और वह जोर से उसे दबाकर आगे बढने से रोकने का निर्बल प्रयत्न करती रहती .... फिर हार कर विरोध छोड़ देती ।''(110)

इस विकृत के पीछे निन्नी का सुपर इगो भी सुप्त नहीं होता । वह उसे टोकता आवश्य किन्तु इड अवस्था का काम इतना प्रबल होता कि उसके आगे सुपर इगो असहाय सा हो जाता राजेन्द्र यादव ने लिखा है – ''लेकिन सारी ग्लानि मानसिक प्रतिरोध और लज्जा के बावजूद यह उत्तेजनात्मक सनसनाहट उसे मजबूर कर देती थी ..... कहीं भीतर हल्की सी सन्त्वना भी मिलती देखो कितने लोगो को मैं धोखा दे सकती हूं ऊप्रर का सीधापन कायम रखते हुए भी उन सब अनुभवों को अपने आप प्राप्त कर सकती हॅू । लेकिन अर्न्ततन से उभरती परिताप और अपराध भावना रात दिन कचोटती रहती यह सब बहुत बुरा हो रहा है ..... यह नहीं होना चाहिए ।''(111) निन्नी कभी–कभी तो इस सुख को प्राप्त करने के लिए जान कर भी अनजान बनने का नाटक करती क्योंकि दोपहर के समय अर्धनिद्रित सागर के पास पहुंच उसके सिरहाने या अलमारी के निचले खाने में झुक–झुक कर किसी काल्पनिक किताब की खोज करती और सागर को अवसर मिल जाता कि वह निन्नी के पीठ या नाजुक अंगों को छू लेता तब किचिंत भौह मोड़कर वह कुपित होने का नाटक कर कहती यह क्या होता सागर हम शिकायत कर देंगे । नारी सुलभ लज्जा वीणा और पुरूष में साकेतिक काया भिव्यक्ति को साधारण रूप से नारी अस्वीकार तो करती है किन्तु उसकी इस अस्वीकृति में भी स्वाभाविकता होती है किन्तु जानबूझकर आमत्रित कर और फि र अस्वीकृति का नाटक विक्रय मानसिकता का ही कारण है । कथाकार ने यह बताने का प्रयास किया है कि दिन की ग्लानि और पश्चाताप रात्रि के अंधेरे में गायब हो जाता । निन्नी और सागर की वासना की क्रियाओं के कुछ कृत्य का भी वर्णन लेखक वे किया है – वर्जना रात्रि के अंधेरे में घुलकर

गायब हो जाती और शरीर का जो भाग अंधेरे की आड़ में पड़ता सागर की अंगुलियां जाने कैसे घूमती फिरती वहीं आ जाती .... कभी वह उन्हें पीठ के चिकने पन पर महसूस करती और कभी साड़ी के सलवटों के नीचे घुटने के अन्दर वाले मोड़ पर .... ''(112)

इस प्रकार निन्नी सागर से दिन में तो कभी मिल न पाती जाने में लिये अनेक बहाने ढूढती श्रृंगार पटार में उसका बहुत मन लगता यद्यपि वह जानती थी चाहे जितना पाउडर लगा ले चाहे जितना तेल फुलेल लगा ले दिन में तो बहुत कुरूप दिखती है निन्नी सागर से विवाह की कल्पना करती पढ़कर वह उसे विलायत ले जायेगा और उसकी सुन्दरता के लिए अवश्य कुछ करेगा। लेकिन निन्नी का भ्रम भी एक दिन टूट गया क्योंकि एक दिन सारे आम सागर ने उसकी कुरूपता का मजाक उड़ाया था निन्नी के रिश्ते (बहते) नासूर में जैसे सूई घस गई हो उसे समझ में ही नहीं आता कि क्यों सागर उसके शरीर से खिलवाड करता था। चौपड़ की अपेक्षा निन्नी के शरीर पर हाथ फेरना उसे क्यों अधिक रोमाण्टिक लगता था। एक दिन में जिसे देखकर विरक्ति और जुगुप्सा जगे अंधेरे में उसी शरीर को क्यों सहलाता और गुदगुदाता।''(113)

सागर के जाने के बाद भी उसके मन का ज्वार कम नहीं हुआ और निन्नी की धुन पैसा कमाकर रूप सवांरने की ओर लग गई और इस धन की प्राप्ति के अनेक स्वरूप की वह कल्पना करती। किन्तु इसके बावजूद भरे भीड में घुसकर अपने वक्षस्थल पर अनजाने लोगो का दबाव अनुभव करना एक सिहरन भरी रोमैण्टिक समनसनाहट का चस्का निन्नी के मन में जगा दिया। कथाकार ने लिखा है – ''पसली से सरक कर छाती को छूलती अनजान कोहनी या आदृश्य अंगुलियों की चिकोरी एक रहस्य मय गुदगुदाहट से तन मन को झनझना जाती और उसी झनझनाहट की खोज में वह भीड़ में जाने के अवसर खोजती। शायद यह सागर द्वारा दिया गया चस्का था जो अब अनेक रास्तों में फैलकर अपनी परितृप्ति में किये फूट पड़ा था।''(114)

वासना की यह विकृति अनुचित अनैतिक वर्जित और निसिद्ध रास्तों की खोज में व्यस्त हो गई जैसे मंदिर में भगवान की झांकी देखते समय किसी के कन्धे का अर्थ भरा स्पर्श अपनी बॉह छाती या पीठ पर अनुभव करती तो झाकी देखने के बहाने वह अग्रसर होकर उन प्रयत्नों का मन ही मन स्वागत करती। यद्यपि उसे यह समझ आ गई थी कि इन सबसे कुछ नहीं होगा तृप्ति का भी यह रास्ता नहीं है। इससे आग और भडकेगी लेकिन निषद्र अनुभव का यह स्वाद था गोरी और सुन्दर लड़कियों के विरूद्ध यह उसकी नि:शब्द ललकार थी कि जिसको उन्होने कम बार पाया होगा निन्नी उस सुख को अनेक बार और अनेक व्यक्तियों से

जान लिया है और तभी उसे पता लगा कि दिल्ली में प्रदर्शनी लगी हुई है और निन्नी को उस सुख की आवृत्ति कितनी बार हो सकती है यह यहां कहने की आवश्यकता नही है लाखो लोगो की भीड़ और उसमें से निन्नी को प्राप्त असीम आनंद की आवृत्ति उसे दिल्ली जाने के लिए विवश करती है ।

दिवा कल्पक एवं वास्तविक प्रेम की अनुभूति-

पहले कहा जा चुका है कि निन्नी कुरूपा थी, तथा कैशोर्य अवस्था या वय: सन्धि में ही उसे काम की अनुभूति एवं उसकी प्राप्ति हुई जो उसके लिए प्रतिनिषद या वर्जित था । अत: इस कुण्ठित काम भावना की प्राप्ति देखे अनजाने रूपों में उसने किया । दिल्ली प्रदर्शनी देखने के लिए वह अपने बड़े भाई के साथ दर्शन के यहां ठहरती है । चित्रकार दर्शन की मूर्तियों एवं निरावरण चित्रों को देख निन्नी सौन्दर्य के प्रति वितृष्णा न दिखाकर उसके आन्तरिक सौन्दर्य को पहचाना और उसकी अनुभूति निन्नी को करायी । अत: निन्नी दिवा कल्पक बन गई । प्रदर्शनी जाते समय तथा प्रदर्शनी स्थल पर अनेक बार निन्नी ने पूर्व में अपनाई क्रिया का प्रदर्शन कर दर्शन के प्रति अपनी भावना को जानना चाहती थी । अपनी आगिंक उभारों के भार को दर्शन की पीठ पर डालकर निश्चित रूप से जिस अप्राप्ति काम की प्राप्ति कर रही थी उसने निन्नी के मन में दर्शन के प्रति सहज सरल स्वभाविक औदर्य प्रेम जागृत हुआ और वह दर्शन को पति मानकर नाना प्रकार के व्यंजनों से उसे परितृप्त कर पत्नी रूप में अपनी भावनाओं को साकर होते देखने लगी । निन्नी के इस रूप की परिणति तीन चरणों में हुई है । प्रथम चरण में दर्शन द्वारा पहनी गई चप्पलों को पहन कर उसकी सुखद ऊष्मा का अनुभव करना निन्नी द्वारा बनाये भोजन की प्रशंसा सुन गदगद एवं आप्यायित निन्नी जिस समय बस में बैठकर प्रदर्शनी देखने जाती है उस समय संकोच एवं झिझक के साथ शरीरिक स्पर्श का सिहरन इसका प्रथम चरण है कहानीकार ने लिखा है – ''पहली बार जब दर्शन का कंधा उसके कंधे से टकराया मानो सारे शरीर में एक करंट दौड गई । एक नया अनुभव था जिसकी उसे उम्मीद भी थी और आशंका भी दूसरी बार बस के मुडने पर उसने जानबूझ कर सम्भलते – सम्भलते अपने कंधे और शरीर का हल्का सा बोझ उस पर डाला अगले झटके पर तो मानो साथ ही सट गया । निन्नी के माथे पर भाप जम आई और सीना बुरी तरह धडकता रहा ध्यान हटाने को व्यस्त भाव से कभी बाहर देखती और कभी भीतर उसकी तो सारी संवेदना शक्ति कंधों की मांसल टकराहट में आ समाई थी एक अनबूझ अनकही बात चीत थी जो कंधों की भाषा में लगातार हो रही थी ।''(115)

अपने खाने की प्रशंसा सुनकर निन्नी के मन की गांठ खुल गई अभी तक जो कुंठा हीन

भावना या अदम्य इच्छा परितृप्ति की राह देख रही थी मानो उसे एक नया मार्ग मिल गया उसकी भावना का चित्रण उपन्यास कार ने इस प्रकार किया है –''जब छोटी सी रेल में वे दोनो सरकार पास बैठे नि:संकोच उसने अपना हॉथ दर्शन की सीट पर उसकी पीठ के पीछे फैला लिया था और इस तरह मुड़कर उसकी ओर बैठी थी कि उसका कंधा निन्नी के गले तक आता था बार–बार उसके मन में उठता कि अपनी छोडी दर्शन के कंधे पर टिका दे और जब वह अपना सिर इधर घुमाये तो उसकी कान की लौव को धीरे से कांट ले और फिर खिल खिलाकर हस पड़े।''(116) दर्शन की चित्रकारी सम्बन्धी पुस्तकों को पढ़कर उसने यह सोचा कि क्या सचमुच में नारी अंगो में कोई ऐसी चीज है जिसे बिना ढके नही देखा जा सकता। नग्न सौन्दर्य की बात करते करते निन्नी के भीतर जैसे कोई रहरहकर उसके मन को गुदगुदा रहा हो पुलक उन्माद मोह मुग्ध स्थिति से वह ऊपर आ कर इस स्थिति पर पहुंच गई कि वह सचमुच में कुरूपा नही है और वह ऐसे स्थितियों की कल्पना करने लगी यद्यपि निन्नी का एक मन यह कह रहा था कि दर्शन चित्रकार है जो रूप को दृश्य सौन्दर्य को पहले देखता है और इस अनदेखे अनजाने पुल को पाकर आन्तरिक सौन्दर्य लोक में जाना दर्शन न पसन्द करें फिर भी वह ऐसी कल्पना करती जिसे हम दिवास्वप्न के रूप में परिभाषित करते है कलाकार ने लिखा है –''एक छोटा सा घर होगा एक कमरे में बैठकर दर्शन पेंटिंग किया करेगा और वह रसोई में बैठी–बैठी रोज एक से एक स्वादिष्ट खाना बना कर कमरे में जा कर कहेगी अब उठिये कलाकार महाराज सुबह उसके उठने से पहले सारे कमरे की सफाई कर दिया करेंगी सब कुछ करीने से लगा देगी घर को ऐसा सजायेगी कि दूर से ही लगेगा कि हाँ है किसी आर्टिस्ट का घर। सांझ को हम दोनो घुमने जाया करेंगे कभी कॉफी हाउस कभी नुमाइश खूब सजाकर। x x x हर करवट बदलने के साथ ही उसे अपने पर गुस्सा आता आखिर इतना आगे तक जा कर सोचने की उसे जरूरत क्या थी ।

प्रथम प्रेम की अनुभूति–

दर्शन के घर पर जिस अपनत्व को निन्नी ने अनुभव किया उसे उसके हृदय में प्रेम की पुलक भर दी उसे अपना रूप कुरूप नहीं लगा क्योंकि निन्नी को देखकर दर्शन के चेहरे में दया करूण जन्य भावना का अनुभव उसे नहीं हुआ। निन्नी के उनींदे मन में एक सवाल उभरा – प्रथम दृष्टि में प्यार की आभास के प्रति अनजाने विश्वास का ही तो यह परिणाम नहीं है कि ये सब दिमाकी फितूर उसे तंग कर रहे है ? लेकिन दर्शन के बोलने में उनके हंसने में कॅही व्यवहार में एक ऐसा खुलापन जरूर उसे लगता जो कहीं अपनत्व की अनुभूति जगाता वह बात कर रहा होता तो मन होता कि निन्नी उसके चेहरे को देखें उसकी मुद्रा आँखों और

होठों की चंचल बनावट को देखें और मार्क करें कि कोई विशेष बात करते हुए उसके होठ कैसे बने थे । प्रथम दृष्टि में प्रेम जैसा तो कुछ नही, हाँ उसके लिए सबसे नया अनुभव तो यही अवश भाव से चेहरे को देखना या देखते रहने की दुर्दमनीय इच्छा को महसूस करना और इसी अनुभव का नया पन था, जो हुए उसे छाये हुए था ।

जिद्दी-

निन्नीअपने बड़े भाई से नुमाइश दिखाने का आग्रह करती है । दादा ने अपनी व्यस्तता बतायी फिर भी निन्नी दिल्ली जाने की जिद करती है । दादा से जिद करने लगी थी, मैं भी जाऊंगी नही इस बार जरूर जाऊंगी दिल्ली । आप हर बार टाल जाते है । दादा ने तर्क रखा था देख मैं सारे दिन बाहर भटकूंगा पता नहीं किसके साथ कहां ठहर जाऊं। तू उन लोगो में घूल गिल पायेगी भी या नहीं सारे दिन तू या तू मेरे साथ चलने की हठ करेगी या वहां बैठी-बैठी अनजान लोगो के बीच बोर होगी लेकिन वह जिद पर अड़ी रही । नहीं मैं तुम्हारे साथ नहीं लगूंगी जितना घूमना फिरना होगा खुद ही घूम फिर लूंगी ।

सौन्दर्य की मान्यता : सलीका एवं सौम्य व्यवहार

सौन्दर्य मानव की प्रथम आवश्यकता तो नही किन्तु अपरिहार्य अवश्य है । दर्शन मनोविज्ञान वेत्ताओं सौन्दर्य को अनेक विधि से परिभाषित किया है । वह वस्तु में है या दृष्टि में ? वह मूल्य है ? प्राय: बाह्य व्यक्तित्व ही सौन्दर्य का प्रतिमान आधार मान लिया जाता है । निन्नी कुरूप है अत: उसे जितनी प्रताड़ना सहनी पड़ी उसी क्रम में उसका मन आहत होता रहा । यह बोध रात दिन उसके ऊपर सवार रहता और घिनौने तिल चिट्टे की तरह अपनी उपस्थिति से उसकी नींद हराम किये रहता । यह बताना मुश्किल है कि इस बोध को बनाने में दूसरों का हाथ कितना और अपनी हीनतानुभूति कितनी ? फिर भी इतना वह जरूर जानती है कि जब भी पहले पहल यह बात उसके मन में आई होगी उसे लाने का श्रेय दूसरों को ही रहा होगा । ''[117] इस बोध से छुटकारा पाने के लिए उसने अपना चिन्तन बदला कहते है सुन्दरता अपने आप कुछ नही होती, सलीका ही आदमी को सुन्दर बनाता है । अत: वह दर्शन के घर में सबसे पहले जगकर हाथ मुंह धोती और चेहरे को जरा ढंग का करती है ।

प्रशंसा की भूख -

निन्नी दर्शन के यहां रहती है । बिना किसी औपचारिकता वह रसोई में जाकर खाना बनाती है । पहले उसकी इच्छा थी कि वहय स्वयं थाली सजाकर दर्शन के पास ले जाए

किन्तु शर्म के कारण चन्दू नौकर से भेज देती है और उसके कान दर्शन की खाना सम्बन्धी टिप्पणी सुनने को उत्सुक हो उठे । तभी दर्शन का उल्लास भरा स्वर सुना अरे आज तो निन्नी जी ने ऐश करा दिए .....भाई आह ! अरसे बाद खाना खाने को मिल रहा है । आप गलत मत समझिए चाहे माँ हो या बहन या कोई हो खाने में नारी का स्पर्श ही कुछ अजब सार्थकता ले आता है । आज आपने एक नई सी अनुभूति जगा दी । निन्नी के भीतर एक बड़ी गहरी तृप्ति की भावना हुई । युग-युग के नारी संस्कार थे जो पुरूष को खिलाकर सार्थकता की व्यापक अनुभूति में पुलक उठे । पुरूष की प्रशंसा के दो शब्द सुनकर कौन नारी है, जो पुलक न उठे । उपन्यासकार ने अत्यन्त सटीक शब्दों में निन्नी का आन्तरिक पुलक को रेखांकित किया है हाँ वह दोपहरी स्वप्न लोक के लम्बे-लम्बे हराते रंग विरंगे परदों वाले अंतहीन पुल से गुजरते बीत गई । न निन्नी मुंह से कुछ बोलती थी न उसके भीतर कोई बोलता था । पता नहीं दर्शन की किस बात के जबाव में उसने भीतर किसी को कहते पाया मैं तुम्हें रोज-रोज अनन्त काल तक यों ही रसोई में बैठकर खिला सकूंगी ।''(118)

स्पर्श सुख की अनुभूति-

कुरूपा निन्नी को अभी तक किसी ने प्रेमभरी दृष्टि से देखा ही नहीं था । कामावेश से भरा पुरूष-स्पर्श जन्य सुख से वह अभी तक वंचित थी । दर्शन के साथ नुमाइश देखने जाते समय बस में बैठे निन्नी का कंधा दर्शन के कंधे से टकरा है और निन्नी उस अनुभूति में डूब जाती है, पहली बार जब दर्शन का कंधा उसके कंधे से टकराया मानो सारे शरीर में करंट दौड़ गई । एक नया अनुभव था जिसकी उसे उम्मीद भी थी, और आशंका भी । दूसरी बार बस के मुडने पर उसने जान बूझकर संभलते-संभलते अपने कंधे और शरीर का हल्का सा बोझ उस पर डाला फिर इस तरह खिड़की की तरफ सरक आई । मानो बस के झटके में असावधानी से हो गया है । लेकिन प्रतीक्षा करती रही उदग्र ... फिर कंधा टकराया और देर तक छूता रहा । अगले झटके पर मानो साथ ही सट गया । (निन्नी की) उसकी तो सारी संवेदना शक्ति कंधों की मांसल टकराहट में आ समाई थी ।''(119) रम्मी के न मिलने पर दर्शन और निन्नी ही नुमायश देखने गये । भीड़ से बचने के लिए दर्शन कभी उसका हाथ पकड़ लेता कभी उसके कंधे पर हाथ रखकर दूसरी दिशा में चलने का संकेत करता । निन्नी के लिए यह सब कुछ अकल्पनीय लगता । वह सोचती जब छोटी-सी रेल में वे दोनो सट कर पास-पास बैठे तो नि:संकोच उसने अपना हाथ दर्शन की सीट पर उसकी पीठ के पीछे फैला दिया था और इस तरह मुड़कर उसकी ओर बैठी थी कि कंधा निन्नी के गले तक आता था । बार-बार उसके मन में उठता कि अपनी ठोडी दर्शन के कंधे पर टिका दे और जब वह

अपना सिर इधर–उधर घुमाये तो उसकी कान की लौ को धीरे से काठ ले और फिर खिल खिला कर हंस पड़े। ''(120)

सरल हृदय–

निन्नी के साथ बिताये समय को सुखद मानकर कलाकार दर्शन उसका एक प्रोफाइल बनाना चाहता है किन्तु निन्नी उसके विवाह सम्बन्ध को सुनकर व्यथित थी, अत: उसने उत्तेजना वश कहदिया कि वह बहुत कुरूप है इसीलिए प्रोफाइल चाहिए। इस प्रकार की बातचीत से दोनों के मध्य पनपने वाला वातावरण गम्भीर हो गया। निन्नी के घर लौट जाने पर दर्शन से मॉफी मागते हुए पत्र लिखा कि निन्नी के पत्र से उसके हृदय का बोझ हट गया। वह निन्नी के लिए लिखता है तुम्हारा हृदय सरल है और सरलता ही सबसे बड़ा सौन्दर्य हे। तुम्हारा दिल दुखाकर मुझे क्या मिलता।''(121)

सम्बन्धों की दृढ़ता–

निन्नी कुरूपा है यह भावना उसके हृदय के गहरे अंतस्थल तक धंसी हुई है अत:प्राय: वह परिचितों से कटती दूर रहने का प्रयत्न करती। किन्तु दर्शन के दर्शन ने उसकी धारणा को बदल सा दिया है। उसके पत्र व्यवहार वह अपराध बोध और पुलक दो भावनाएं जिद्दी चीलों की तरह उसके मन आकाश पर मंडराया करती। वह सोचती कि आमना सामना होने पर सबसे पहले साक्षात्कार रूप का पता है, फिर शील और व्यवहारिक शिष्टाचार आते हैं तब गुण आते है और अंत में ... लेकिन सबका लक्ष्य बनकर आती है भावना और वही भावना का वास्तविक सम्बन्धों का रूप स्थिर करती है जाने क्यों उसे लगने लगा कि जो काम शील और रूप नही कर पाये, उसे वह शायद भावनात्मक स्तर पर कर सकेगी। मैं चाहती हूं कि आप खूब सुन्दर चित्र बनाएं आपका खूब नाम हो आपके चित्रों की प्रदर्शिनियां हुआ करें अखबारों में चर्चा हो, हम इसी में गर्व किया करेंगे कि आपको जानते है।''(122)

जनजारी ईर्ष्या–

निन्नी ने जब से सुना कि दर्शन किसी पंजाबी सौन्दर्य पर मुग्ध है उससे विवाह करेगा, तबसे उसके मन में एक दबी छिपी ईर्ष्या होने लगी। वह दर्शन से पत्र व्यवहार करती, उसके व्यवहार में संकोच कम होता जा रहा था। दिल्ली दर्शन जन्य अनुभूतियों को स्मरण कराकर दर्शन को अपने यहां आमंत्रित करती। वह सोचती भीतर कही दबी छिपी दुष्ट सी आशा अब इतनी स्पष्ट हो गयी थी, कि वह बाकायदा उसे ही लक्ष्य बनाये हुए थे। शायद अब धीरे–धीरे अपनी इस भावनात्मक पकड़ से उसके मन में अपनी जगह बनाकर उसके मन में उस लडकी

को निकाल फेकने में सफल हो ही जाए .... वह कोई भी काम करती कपडे धोकर सुखाती तो मन ही मन में उस लडकी को चुनौती देती कि वह इस तरह कपडे धोकर सुखा सरती है।

हीनभावना जन्य से ग्रसित-

दशृन के पत्र से निन्नी को पता लगा कि उसने विवाह कर लिया है। इसके पूर्व वह उल्लसित होकर जीने की कल्पना करती क्योंकि उसने अनुभव किया था कि आन्तरिक प्रसन्नता से ही बाह्य सौन्दर्य विखरता है। एक दिन उसकी सहेली ने उसके चेहरे पर नमक की चर्चा की तो निन्नी को याद आया कि रंग से तो आदमी सुन्दर असुन्दर नहीं होता एक चीज होती है, नमक, सलोनापन, लावण्य और वही सारे चेहरे पर चमकता है। दर्शन की सूचना पाकर न तो निन्नी को धक्का लगा न आँखों के आगे तारे नाचे। सच पूछों तो कुछ भी तो नहीं लगा। इसमें अप्रत्याशित कुछ कहां हुआ है वह खुद ही पहले से जानती थी कि यही होगा। उसने दर्शन के सभी पत्र जला डाले। अब उसका हर मोर्चा ध्वस्त था, हर विश्वास चूर था और चुपचाप स्वीकार कर लेने के सिवा कोई चारा नही था कि उसके लिए इस दुनिया में कोई सुख नहीं है। यह यथार्थ बोध उसके अन्दर मरण प्रवृत्ति को जन्म देता है। एक उद्धत भाव धीरे-धीरे मन में आ गया था - हाँ मैं कुरूप हूं काली हूं, करो किसको क्या करना है ? उसे किसी से शादी नहीं करनी किसी से प्यार नहीं करना ये रास्ते अब उसने हमेंशा हमेशा के लिए बंद कर दिए हैं।''(123)

वह सोचती है - माना वह कुरूप है उसका चेहरा काला है, उसके नाक-नक्श अच्छे नही है तो क्या उसे मन में भी कुछ सोचने का हक नही है। भ्रम ही सही लेकिन अपने जीवन की कड़ुवाहट और दुर्भाग्य को अगर एक भ्रम मन में पालकर ही भुलाएं रख तो क्या बहुत बुरा है ? किसी को यों मेरे सुख छीन लेने का क्या अधिकार है ? उसने इस कुरूपता को दूर करने के लिए न जाने कितने देवी देवताओं से प्रार्थना की कितने क्रीम पाउडर लगाये किन्तु निष्कर्ष वहीं ढाक के तीन पात। परिणाम स्वरूप उसके स्वभाव में एक उदण्डता अथवा मरण की कल्पना एक साथ पनपने लगी। वह सोचती इस तरह बोझ और अभिशाप बनकर जीने से क्या लाभ ? मरने के तरह-तरह के तरीके दिमाग में आते आत्म हत्या की विधियां सोचती और इस बारे में जानकारी इकट्‌ठा करती कि सबसे कम कष्टप्रद मरण कौन सा है। बस यही कामना करती कि एक दिन सोये और सोती ही रह जाये।

आत्मभर्त्सना–

इतना अनीव करने के बाद निन्नी को लगा यह सब कुछ मधुर झूठ और छलावा है। अत: उसके मन में ग्लानि या किये गये पापों के प्रति दु:ख एंव अपने प्रति तीव्र भर्त्सना एवं विरक्ति जागृत होती है। अब वह अक्सर आँख मूंद कर भगवान का ध्यान करती, पूजा पाठ की ओर उसकी प्रवृत्ति बढ़ने लगी। इस आत्म ग्लानि को मनोविज्ञान में मेसोसिज्य कहते है। वह शरीर को जितना कष्ट देती उतना ही उसे उनके मन में अध्यात्मिक संतोष भरता जाता है। उसके सारे विकारों का खान नारी शरीर लगता। इस प्रकार एक वर्ष के अन्दर उसमें आत्म विश्वास भर गया। पिता के मरने के बाद सबको रोता हुआ देखकर सोंचती शरीर को तो एक दिन जाना है, चाहे आज चाहे दस वर्ष बाद, फर्क क्या है। वह समझती कि यह अवस्था या ज्ञान स्थिति प्रसन्नता है। वह सोंचती है कि मैं निष्काम, कामना रहित, निर्लिप्त और परम हंस हो रही हूं। और निन्नी बीमार पड़ गई।

सौन्दर्य बोध के प्रति नयी दृष्टि एवं जीवन–

शारीरिक यंत्रणा मानसिक कुंठा के कारण निन्नी गम्भीर रूप से बीमार हो गई। कई दिनों बेहोश रही। तभी अचानक दर्शन उससे मिलने आता है, वह उसको सौन्दर्य की परिभाषा बताता है और चलते समय निन्नी के पपड़ाये सूखे होठो को चूम कर उसे नई ऊर्जा और नया चिन्तन का धरातल प्रस्तुत करता है। इस प्रकार अपना घर संपूर्ण नारीत्व के अभाव को स्वीकार कर निन्नी कुरूपता की कुंठा से पार पा जाती है। क्योंकि दर्शन उसे समझता है कि सुन्दरता अनुपात नाम है या प्राणों उल्लास एक सुडौल सानुपातिक नाक नक्शा, रंग रूप वाले चेहरे को सुन्दर कहेंगे या सब मिलाकर जो मन को छोड़ जाता है, उस प्रसन्न प्रभाव का नाम सुन्दरता है और अगर सुन्दरता प्रभाव का नाम तो वह जरूर कोई चीज है जो अनुपात ढले नाक नक्शा को माध्यम बना कर अभिव्यक्त होती है अपना उन्मेष करती है ... मगर निन्नी तुम्हारी नहीं हम सभी को ट्रेजड़ी है कि हम सुन्दरता के उपादनों को ही सुन्दर समझते है –''मानते है कि ढले – ढलाए अवयव नाक – नक्श ही सुन्दर है। निन्नी के चरित्र का मूल्यांकन करते हुए डॉ. शशिकला त्रिपाठी ने लिखा है – निन्नी के व्यक्तित्व की रचनाकार नेजिश संवेदनीयता से उकेरा है उससे उसकी क्षमता पर सुखद आश्चर्य होता है। तिल चट्टे और मकड़ी के प्रतीकों से निन्नी की हीनता की दृष्टि ग्रंथि का सूक्ष्म विश्लेषण सम्भव हुआ है। समय–समय पर अन्दोलित और बदले हुए भावों को, मानसिक द्वन्द्व और जद्दोअहद को रचनाकार ने बड़ी महीनी से रेखांकित किया।''[124]

सुजाता–

शह और मात राजेन्द्र यादव जी का प्रसिद्ध उपन्यास है। यह उपन्यास दूसरे प्यार की जटिल और कटु कहानी है। जहां अपराध भावना से पीडित प्रत्येक पात्र अपना पुनरान्वेषण करता है और अंत में अपने को एक यंत्रणादायक भ्रांति और छलना से घिरा पाता है।

सुजाता शह और मात की मेधावी कथा लेखिका है जो कुशाग्र ब्रद्धि सम्पन्न और कालेज के मंच पर उच्च कोटि की अभिनेत्री है। सुजाता अपने सहपाठी उदय की प्रतिभा और लेखन से प्रभावित है। उदय को लेकर वह विशिष्ट प्रकार की मानसिक उथल पुथल से युक्त है। सुजाता का व्यक्तित्व उदय की तुलना से अधिक संवेदन शील और भावुक है, किन्तु उपन्यास कार राजेन्द्र यादव का मत है कि यह शह और मात मेरी समझ में उदय की और केवल उदय की मानसिक उलझन की कहानी है न सुजाता की।''[125]

नारी मन पुरूष के लेखक व्यक्तित्व को समझाने में कहां तक सफल असफल हो पाया है, इसका चित्राकन सुजाता के द्वारा उपन्यास में बिखरा पड़ा है। व्यक्ति उदय सुजाता से प्रेम करता है तो लेखक उदय से अपने लेखन का केन्द्र बनकर एक्सप्लांयर करता है। सुजाता पूर्व तेज से विद्रोह के बाद उसकी प्रतिच्छवि उदय में खोजती है। उदय के प्रति अपने व्यवहार में भावोत्तेजना देखकर वह कहीं आत्म नियंत्रण करती है, कहीं आत्मलोचन करती है। उदय से मैत्रीपूर्ण संबंधों की प्रगाढ़ता पर हर कदम सोच समझ कर उठाती है। कभी–कभी उसे उदय के व्यवहार पर संदेह भी होता है। किन्तु वह गहराई से इस विषय पर चिंतन करना नहीं चाहती। अतीत की स्मृतियों से जुड़ी सुजाता ऊपरी सतह पर उदय से प्रेम में पगी सी रहती है। उदय के साथ काल्पनिक प्रेम की क्रिडाओं में डूबी हुई सुजाता सतरंगी स्वप्न लोक में विचरण करती है। अंत तक पहुंचते –पहुंचते उदय की वास्तविकता को जानने के बाद वह आक्रोश पूर्ण हो उठती है। जब उदय द्वारा छली जाने की वास्तविक स्थित का आभास होता, तब आत्म समर्पण की मानसिक तैयारी से युक्त सुजाता सिर से पांव तक कसमसाती है क्योंकि उसे प्रयोग का चूहा बनाना मंजूर नहीं है। उसकी व्यक्तित्व की अनेक विशेषताओं का परिचय लेखक ने आत्म स्वीकृति या परोक्ष कथन रूप में किया है।

सौन्दर्य प्रेम एवं अतृप्त काम :

मनुष्य स्वभाव से सुन्दर होता है। प्रत्येक व्यक्ति सौन्दर्य के प्रति सचेत होता है जिसमें नारी विशेष में सृष्टि प्रारंभ से ही स्पष्ट होता है कि सृष्टि उदभव के मूल में स्त्री एवं पुरुष का एक दूसरे के प्रति आकृष्ट होना एवं उस आकृष्टता में सबसे अधिक नारी सौन्दर्य सहायक

होता है । तेज के प्रेम से वंचित सुजाता उदय के संपर्क में आने पर एवं समवयस्क होने के कारण कहीं न कहीं अपने हाव भाव एवं सौन्दर्य से अपनी ओर आकर्षित करने की चाह मन में लिए रहती है । उदय सुजाता के घर मिलने के लिए आता है और तब बातचीत के दौरान सुजाता स्वयं सोचती है रेखा कहती है – कि दाहिने कान को ठीक कन्धे के उप्रर लाकर बायी कनपटी के एंगिल से देखने पर तेरे फीचर्स बड़े आकर्षक लगते है । इस समय मैं उसी पोज में खड़ी थी मैने देखा कि उदय ने उस चेहरे को प्रशंसा भरी निगाहों से देख किया है।''[126] X X X X मैने अपनी दोनो मोटी मोटी चोटियां सामने की ओर कर ली । इन पर मुझे काफी गर्व है ऐसा हो नही सकता कि देखने वाला प्रभावित न हो । मैने उनकी निगाहें पकडी कि वे देख रहे है ।''[127] काम एक प्राकृतिक भूख है, जो तृप्ति की तलाश में रहती है । मन कामेच्छा का केन्द्र है । काम की तृप्ति से मन प्रकृत रहता है परन्तु उसकी अतृप्ति से वह विकृत हो जाता है । इससे व्यक्ति का जीवन अशांत हो जाता है और कभी वह निषिद्व कर बैठता है तो कभी मानसिक रोग का शिकार हो जाता है ।

सुजाता काम की अतृप्ति के कारण अशांत रहती है । वह एक प्रेम भंग युवती है । उसका प्रेमी तेज जब लंदन चला जाता तब वहीं का हो बैठता है । सुजाता के मनोदशा का चित्रण करते हुए उपन्यासकार कहता है –''तेज मेरे जीवन में अब कहॉ रह गया है ? लन्दन में अंग्रेज मेम के साथ जाने उसे अब मेरी याद आती भी होगी या नही .....उसने मेरे साथ विश्वास घात नहीं किया ? ''[128]

सुजाता को वह न मिलने आता है न एक खत तक लिखता है । इससे सुजाता की बेचैनी बढ़ती जाती है । इसी बीच उसका परिचय लेखक उदय से होता है और परिचय का रूपांतर प्रेम में होता है । परन्तु लेखक होने के कारण उदय सुजाता का केवल साधन के रूप में उपयोग करता है उससे प्रेम नहीं करता । लेकिन उदय से घनिष्ठता होने के पश्चात सुजाता की काम भावना उद्दीप्त होती है और प्रथम प्रेम भंग होने के पश्चात एवं उदय पुरूष से सम्पर्क में एवं प्रेम की कपोल कल्पनाओं में सुजाता कुछ वर्जनीय अनैतिक सोच कर तृप्ति का अनुभव करती है । कैमिल्स इंक रोड पर पहुॅच कर एक दृश्य के माध्यम से उपन्यास कार ने सुजाता के विकृत प्रेम एवं उसकी मानसिक स्थिति का वर्णन करते हुऐ लिखा है – मेरे सामने कसा ब्लाउज और जीन्स पहने बिलकुल लड़को जैसे सुनहले बाल कटवाए धूप का चश्मा लगाए एक पारसी या ऐग्लो इंडियन लडकी खडी थी । एक बस आई लेकिन मुझसे तीन आदमी पहले ही कंडक्टर ने लाइन रोक दी । लोग घूर–घूर कर जब इसकी निकली छातियों को देखते होंगे तो इसे थोडी बहुत झेप आती होगी । हो सकता है संतोष और आनंद

की गुदगुदी महसूस होती है ।''[129] सुजाता उपन्यास कार उदय की आप बीती सुनकर विभोर हो उठती है और उदय के प्रति उसका प्रेम उमड़ पडता है वह कहती है – ''और जाने किस लहर में उस क्षण मेरे मन में आया कि इस निर्बल व्यक्ति को बाहों में भरकर प्यार से इसका माथा चूम लूं और कहूँ तुम बहुत भटके हो बहुत थके हो । आओ तुम्हारी भटकन और थकन को एक समर्थ दिशा दे दूं । उदय के साथ बढते सम्पर्को से सुजाता की मानसिक दशा और भी विकृत काम से ग्रसित होती जाती है । सुजाता का काम के प्रति उद्दिपन कल्पनाओं को चित्रित करते हुए राजेन्द्र यादव लिखते है – बत्ती बुझते ही मन में अजीब सा कल्पना चित्र आता है .... । बांहों की जकड़ में पिसता कसमसाता शरीर ...... निरावृत करते और उसकी गतिविधि को वरजते दो हाथो की लिपटी लिपट आलस्य भरी छीना झपटी.... । नि:शब्द ... लम्बी – लम्बी हॉफती सी सांसे और चार चिपके होठ..... मुंदती पलके । x x x अफसोस होता काश, जरा पहले मेरा ध्यान चला गया होता तो शायद शीशों पर कुछ छाया चित्र देखने को मिलते ।''[130]

उदय से घनिष्ठता होने के पश्चात सुजाता की काम भावना उद्दीप्त होती है । पर उदय को तटस्थ देखकर वह सोचती है ''छि:! यह व्यक्ति तो बड़ा ही कमजोर और डरपोक है । इसमें तो इतना भी साहस नहीं आया कि आगे बढ़कर मेरे कंधे पर हाथ रख देता ।''[131] सुजाता के इस विचार से उसका अतृप्त काम प्रकट होता है । रात के समय जब उसकी कामेच्छा बढ़ती जाती है तो बालकनी में आकर वह निषिद्ध बाते सोचने लगती है – किसी खम्भे की टेक लगाए किसी युगल को आलिंगन बद्व देखूंगी .... । इच्छा हो रही थी कि कुछ वर्जनीय कुछ निषद्व देखूं ..... । कैसा सन्नाटा है । ऐसे में इक्का दुक्का लड़की को कोई पकड़ ले तो बचाने वाला भी न पाए ...... । अपने अपने पलंगो पर सुख से सोए हुए ये लोग एक भी उठकर नहीं आएगा । .... कैसा लगता होगा बलात्कार के समय ...... ? क्या एक बार इस अनुभव से ही नहीं गुजरा जा सकता ?''[132] सम्पूर्ण उपन्यास में सुजाता को लगता कि उदय उससे प्यार करने लगा है हालाकि उदय तटस्थ रहता है । एक दिन जब सुजाता उदय से मिलने उसके घर जाती है । उस वक्त वह और उदय लम्बे समय तक अकेले ही उस कमरे में बैठे बाते करते है । सुजाता के हृदय में उपजे प्रेम एवं शंका का चित्रण करते हुए यादव जी लिखिते है – चटखनी खोलते वक्त मुझे ऐसा क्यों लगा जैसे किसी ने मेरे जूड़े को बहुत हौले से हुआ हो ..... जैसे मरे कन्धे पर रखते रखते हाथ रह गया हो । और तत्पश्चात सुजाता अपने मन के अतृप्त काम एवं प्रेम की स्थिति को समझते हुए कहती है – मेरे मन में क्या नहीं आया था कि जब वे सिगरेट पी रहे थे इन पतली पतली सलवटों सी धारियों वाले होठो से

होठ छुलाकर देखूं ? सुजाता के अतृप्त काम का एक और उदाहरण स्वयं उसी के शब्दों में – ''बहुत दिन हो गए होठों का स्वाद चखे भी ..... । पहले तेज के साथ .....। अच्छा, उदय ने अभी तक कितने होठो का स्वाद देखा होगा ......।''(133)

सुजाता एक कहानी लेखिका थी वह आधुनिकता के सभी परिवेशों में रहते हुए आन्तरिक अन्तर्द्वन्द से जूझती हुई काम एवं प्रेम के प्रति अतृप्ति लिये होती है। यद्वपि सम्पूर्ण उपन्यास में उसके हावभाव एवं बातचीत से पता नहीं चलता है लेकिन उसका आन्तरिक द्वन्द उसके अतृप्त काम का परिचायक बना हुआ है। तेज से अपार प्रेम एवं तेज का विदेश चले जाने एवं उसके वापस न आने पर सुजाता मानसिक रूप से प्रेम की कोमल भावनाओं से अतृप्त रहती है और वाहय प्रकटीकरण न कर पाने से प्रेम एवं काम के प्रति अतृप्त विचार लिए हुए अद्विग्न रहती है। उदय के साथ सर्म्पक उसे बार–बार अपने प्रथम प्रेम तेज की याद कर वह विह्बल हो जाती है उसकी मानसिक दशा का चित्रण करते हुए उपन्यसकार लिखते है – ''इनकी भौंहे देखकर मुझे तेज की याद पहले क्यों आया करती थी ? एक दिन जाने किस झोक में मैने खत लिखा था फिर फाड़ दिया :'' तेज तुम मेरे जीवन के एक करूण प्रसंग रहे हो। क्या क्या सपने मैने तुम्हारे साथ नहीं देखे थे ? कौन–कौन से महल मैने तुम्हारे लिए नहीं बनाए थे ? और तुमने जो कुछ किया बदले में जो एक अविश्वास एक तल्खी एक ऐसी चिड़चिडाहट मुझे दे दी कि मेरा सारा व्यक्तित्व ही बिखर उठा और मैं टुकडों – टुकड़ों में बंट गई। और क्या बहूँ अब तुम्हें ? तुम मेरे अस्तित्व के अंश थे, मैं तुम्हारे ख्यालों में रहा करती थी। खैर, भगवान करें तुम जहां भी रहो सुखी रहो x x x x ...... अंग्रेजी लड़कियों तरह हमारा प्रेम न तो किलकारियों और कहकहों वाले उन्मुक्त आलिंगनों में निकलता है न हमारा क्रोध हिस्टीरिया के दौरों जैसी चीखों में। चाहो तो कह लो कि हम लोगो के जीवन की कमी है। इसीलिए न तो खुले और सम्पूर्ण मन में प्यार कर सकती है न क्रोध इसीलिए चुपचाप रातों रोती रही थी। ''(134) सुजाता का यह रूदन बाहर न निकल पाने के कारण वह मानसिक अर्न्तद्वन्द्व में उलझ जाती है। सुजाता का इस तरह की भद्दी भद्दी बाते सोचना उसके अतृप्त काम का और उससे उत्पन्न उसके अशांत मन का प्रमाण है। सुजाता के मानसिक आशांति का चित्रण करते हुए सुजाता कहती है – कभी – कभी जाने कैसा भूत सवार होता है मन होता है कि कमरे के सारे किवाड बन्द कर लूं और दूर से जोर से भागकर आऊॅ एक एक को ठोकर मारकर खोल दू – भडाकू। बेतहाशा कडैल रोड पर भॉगू .... भागती ही चली जॉऊ.... भागती ही चली जाऊँ ....। सारे कपड़े अस्त व्यस्त हो जाए। बाल्कनी के खम्भे को ध्रतराष्ट्र के भीम की तरह ऐसी जोर से भीचूं कि चूर चूर होकर विखर

जाए .... । पता नहीं.... क्या – क्या करने को मन करता है .... हर पुरूष से हर छोटे बड़े लड़के से खिलवाड़ करने की इच्छा होती है ।

कहानी लेखिका –

सुजाता छात्रा है साथ ही वह कहानियां भी लिखती है । कुछ कहानियां प्रकाशित भी हुई है । अत: साहित्य जगत में नवोदिता लेखिका के रूप में चर्चित है । उदय अर्पणा के बीच (शतरंजी भाषा अरदन) आ जाती है । कहानी लेखिका के रूप में सुजाता परिचय लाइब्रेरियन उदय से इस प्रकार कराता है ''आओ उदय तुम्हारा परिचय एक बहुत बडी कहानी लेखिका से करा दे । ये है सुजाता है । हमारे यहां सिक्थ इयर की स्टूडेण्ट है । पिछली बार अर्न्तविश्वविद्यालय कहानी प्रतियोगिता में इनकी कहानी सर्वश्रेष्ठ थी ।अभी दो तीन कहानियों से ही इन्होंने कालेज और बाहर धूम मचा दी है । कालेज ड्रामा – यूनियन की ज्येष्ट सेक्रेटरी है । अभी हमारे यहां एक नाटक होने वाला है, उसमें ध्रुव स्वामिनी यही बन रही है ।''(135) उदय द्वारा घर आने का निमंत्रण स्वीकार करने पर पुलकित होकर सोंचती है नारी का निमंत्रण हो और पुरूष वह भी कलाकर अस्वीकार कर दें ? सारे दिन जाने क्यों मन पर प्रसन्नता छायी रही । आखिर लोग कहानीकार के रूप में जानने ही लगे ही है मुझे ।''(136) आगे चल कर सुजाता उपन्यास लेखक उदय को अपनी कहानी की विषय वस्तु बनाना चाहती है किन्तु उदय अर्पणा के मध्य सेतु का कार्य करती मूल तथ्य से भटक जाती है ।

कलात्मक अभिरूचि–

सुजाता डाक्टर की पुत्री है । बम्बई जैसे महानगर में उसे सभी सुविधाएं प्राप्त है । अत: बालपन से ही उसमें कलात्मक का विकास दिखाई पड़ता है । लेखक उदय को निमंत्रित कर अपनी अभिरूचि का परिचय देना चाहती है । मन ही मन देख उन्हें खिडकी की तरफ बैठना ज्यादा ठीक रहेगा । मेरी मेज, किताबें, खिडकी से दिखता शिव जी का पार्क हरियाली से भरा मैदान और नारियल के कुंजों की गोटोवाला लाल सागर की आवाज सामने एक रमणीक वातावरण रहेगा । पर्दा हटाना पडेगा किसी बहाने । पहले से हटा दूंगी तो सुन्दर पर्दे और मेरी रूचि की प्रशंसा में बाधा पड़ेगी । अगरवत्ती पीछे जलानी चाहिए ताकि धुंआ मंथर गति से खिडकी की ओर लहराए । कोई तसवीर तो ऐसी नहीं है जो अच्छे बेस्ट की न हो ।..मगर उन्हें खिडकी की ओर मुह करके बैठना चाहिए, ताकि रोशनी मेरे चेहरे पर भरपूर पडे ।''(137)

प्रेमिका–

सुजाता तेज की प्रेमिका रही है । वह इसे छोड लन्दन चला जाता है । सुजाता प्राय:

उसकी याद करती रहती है। उपन्यास में इसका उल्लेख मात्र है। परिस्थितियां क्रिया कलापों तथा जाने के कारण वितरण अनुपलब्ध है। यहां प्रेम अप्रत्यक्ष रूप में चित्रित है कुछ अंश द्रष्टव्य है –''जाने क्यों तेज की बहुत याद आ रही है रह –रह कर मन उचट जाता है। पता नहीं इस वक्त कहाॅ होगा ? लंदन ? कोई कहता था लंदन उसने दो तीन महीने पहले छोड दिया। कैसे हो गया होगा जाने ? कैसी होगी वह व्रिटिश मेम.... यह सब कल्पना करके अब न पहले जेसी कसक होती है न उससे मिलने की तडप में रूलाई आती है उदय का भौंहों की समानता तेज है। सुजाता सोंचती है इन भौहें बहुत पास से देखा है ये तो मेरे दिल के बहुत निकट रही है..... हाँ याद आया ये तो तेज की भौंहों से कितनी मिलती है .... लेकिन तेज मेरे जीवन में अब रह कहां गया है ? उसने मेरे साथ विश्वासघात नहीं किया।अिक्षरों में बार–बार तेज की आकृति उभरने लगी है ...... मैं सिर्फ तुम्हारी ही तो थी तेज .... सुजाता और तेज यह प्रेम किशोरावस्था का था जिसे मान–मनुहार की अधिकता होती है। सुजाता स्मरण की डायरी में एक घटना का विवरण इस प्रकार से लिखती है – तेज तुम मेरे जीवन के एक करूण प्रसंग रहे हो क्या–क्या सपने मैंने तुम्हारे साथ नहीं देखे ? कौन–कौन से महल मैने तुम्हारे लिए नही बनाये थे और तुमने जो किया बदलें में जो एक अविश्वास, एक तलखी एक ऐसी चिडचिडाहट मुझे दे दी कि मेरा सारा व्यक्तित्व विखर उठा और मैं टुकडों–टुकडों में बंट गयी और अब क्या कहूं तुम्हें ?''(138) तुम मेरे अस्तित्व के अंश थे, मैं तुम्हारे ख्यालों में रहा करती थी कभी सुजाता की ऐसी अवस्था थी, कि तेज के लिए उसने आत्म समर्पण था वह लिखती है – यह स्वर मुझे आत्म समर्पण करने के लिए मजबूर कर देता है। मैंने एकदम कहा था अरे वाह ! जैसे हमें कुछ काम ही नहीं है। अक्सर तेज कहा करता था सज्जी जब तक मैं नही आउंगा तब तक तुम खाना नहीं खाओगी समझी। और मैं भी थी कि सामने लाख लडती, लाख विरोध करती ठीक करने की धमकी देती, जिसे वह न चाहता, लेकिन ऐन मौके पर पता नहीं मन अपने आपको किस तरह समझा लेता था, कि मैं उसकी इच्छा ही कर डालती।''(139)

स्वछन्द एवं उन्मुक्त स्वभाव–

सुजाता का जीवन स्वच्छन्द था। इसका अर्थ उच्छंखृलता नहीं है। उन्मुक्त विचारों की होने के कारण उसके व्यवहार में एक प्रकार का खुलापन था। दुराव छिपाव या निरंकुश थी। वह उदय से कहती है – ''देखिए मैं कॉलेज और घर में खुलेपन के लिए कॉफी बदनाम हूँ। अक्का भी कहती है शर्म हया उसे छू नही गई है , लेकिन आपके सामने मुझे कॉफी तमीज से रहना पड रहा है, लगता है इससे काम चलेगा नहीं।''(140) एक जगह वह कहती

है मैं खुद मुंहफट हूं। सारे कॉलेज में मर्दानी लडकी कह-कह लोगों ने बदनाम कर रखा है। मैं तो आपसे खुद कहने वाली थी, कि अगर मेरी कोई बात आपको बदतमीजी लगी हो तो माफ कर दें। उसने मिलने के कई प्रोग्राम बनाये। बिना चारा डाले कबूतर पास कैसे आएगा, अपने पर कैसे गिनने देगा। पहले तो उसे थोडा विश्वास में लाना होगा। मूर्ति बनाने के लिए मिटटी में थोडे हाथ भी तो सामने पडते है।''(141)

अभिनेत्री-

सुजाता को विद्यालय के सांस्कृतिक कार्यक्रम में आयोजित नाटक में ध्रुवस्वामिनी का अभिनय करने का प्रस्ताव मिला। वह लिखती है - दिमाग पर नाटक छाया है। हर वक्त ध्रुव स्वामिनी मन के आगे तैरती रहती है। कापी लेकर डॉयलॉग रटते समय ऐसा लगता कि मेरा यह विशेष वाक्य सुनकर उदय को कैसा लगेगा।''(142) उसे प्रिंसेस अपर्णा उच्छे अभिनय के लिए स्वर्ण पद प्रदान करती है।''(143) प्रिंसेस अपर्णा कहती है कि आप ऐसी मंजी हुई अभिनेत्री भी है यह मैं नहीं जानती थी।''(144)

निषिद्र आकांक्षाए-

प्रिसेस अर्पणा एवं उदय से मिलकर सुजाता आजीवन द्वन्द्वों में घिर जाता है। पढने में मन नहीं लगता। मन में अनेंक बुरे बर्जित विचार बार-बार आते रहते है उदय से बातचीत के मध्य सुजाता ने यह अनुभव कि एकाकी उदय कभी उसका हाथ पकड ले मुह बन्द कर लें, तो वह क्या करेगी ऐसे ही विचार उसके मन में तैरते रहते है। वह लिखती है। मैं इस आशा से खडी खडी देखाती रही जैसे कही कुछ रहस्यमय होगा, मरे सामने ही किसी अकेले जाते आदमी को अचानक पीछे से छुरा मार कर कोई भाग जाएगा। या किसी खम्भे की टेक लगाये किसी युगल को आलिंगन बद्ध देखूंगी। इच्छा हो रही थी कि कुछ वर्जनीय कुछ निषिद्व देखूं कैसा सन्नाटा है ऐसे में से इक्का कोई पकड ले तो बचाने वाला भी न आ पाए। अपने-अपने पलंगों पर सुख से सोते हुए ये लोग एक भी उठकर नहीं आएंगे। उस दिन उदय से मुझे कितना डर लगा आया था। कैसा लगता होगा बलात्कार के समय .... क्या एक बार इस अनुभव से नहीं गुजरा जा सकता। छि: मेरे मन में भी कैसी-भद्दी बाते आने लगी है।''(145)

अमला-

यह एक इंच मुस्कान की प्रभावशाली पात्र है। यह उच्च वर्ग से संबन्धित है इसके पति ने इसका परित्याग कर दिया है अत: अमलाजी स्वतंत्र, स्वच्छन्द जीवन यापन करती है।

उसके अनेक पुरूष मित्र है। उपन्यास लेखक अमर को यह आमंत्रित करती है। अमला के व्यक्तित्व के अनेक पक्षों का उद्घाटन राजेन्द्र यादव जी ने किया है।

सौन्दर्य प्रेम एवं काम-

राजेन्द्र यादव ने उसके लम्बे लम्बे बालो, श्वेत वस्त्रों उसकी मुस्कराहट जन्य प्रभाव का वर्णन किया है कैलाश ने एक बार कहा था अमला तुम्हारी इस मुस्कराहट में जाने ऐसा क्या जादू है कि बरबस ही मन बंध जाता है। अमला स्वयं जानती है कि बाई ओर से अधिक दाई ओर से तनिक से होठ फैलाते ही उसके चेहरे का लवण्य और चेहरे की मोहकता बढ़ जाती है।''(146) अमर उससे प्रश्न करता है तुम सादगी से क्यों रहती है अमला ? ऊपर से नीचे तक श्वेत वस्त्र यह अलंकृत रूप वहीं श्वेत वस्त्र और लम्बा पल्ला पर शिरे से तैयार होने पर ताजगी आ गई थी, लवण्य निखर उठा था''(147) अमला की कुलीनता जन्य चाल पर लेखक कहता है - उसकी सफेद रेशमी साड़ी का लम्बा सा पल्लू जमीन पर घिसट रहा था और कदम दृढ़ आत्म विश्वास युक्त लपरवाही से पड़ रहे थे। मेजर कपूर कहता था अमलाजी अपनी इस चाल और जमीन पर घसीटते हुए आचल की ताकत जानती है।''(148)

परित्यक्यता-

अमला अमर को अपना परिचय देती है 'मुस्करते हुए बोली बात यह है कि मैं परित्यक्ता हूं पति द्वार त्यागी हुई। विवाह के एक साल बाद ही मैं फिर यहां लौट आई। इतना तो शायद तुम भी जानते हो कि जिस स्त्री को पति ने छोड़ दिया हो, उसके लिए रंग बिरंगे कपड़े पहनना, सजना-संवरना एक तरह से निषिद्ध होता है।''(149)

भाग्यवादी-

अमला के जीवन में इतना उतार - चढ़ाव आते है कि वह प्रगतिशील होकर भी भाग्यवादी बन गयी है। वह कहती है - भविष्य के बारे में कौन दावे के साथ कह सकता है भला ? मन की बनाई योजनाएं पूरी हो न हो। इससे बेहतर है कि कुछ बनाओं नहीं। बस निरूउद्देश्य जीते चलो, जो कुछ भी सामने आ जाए उसे स्वीकार करते चलो। अमर ने अविश्वास से पूछा तो तुम्हारा मतलब है कि अपने को भाग्य के भरोसे छोड़ दो। मुस्कान लपेटे अमला ने कहा - जो अपने भाग्य को हाथ में ले लेते है वे ही क्या तीर मार लेते है ? ''(150)

स्वतंत्र स्वच्छन्द नारी-

अमला ने अमर को बताया था कि परित्यक्ता बनने के बाद उसने जो कुछ पाया, उससे उसका विषाद धुल गया। अमर की उत्सुकता को शान्त करती हुई अमला कहती है - इस

घटना के बाद ही मैने पढ़ाई की, संगीत सीखा, चित्रकारी का भी थोड़ा बहुत शौक फर्माया, घूमना फिरना सीखा, स्वतंत्र रूप से कुछ सोचना सीखा, लोगों, से मिलना जुलना सीखा यो समझ लो नई जिन्दगी पाई।''(151) कैलाश अमला से शिकायत करता है कि कलकत्ता लेक में अमर के साथ पान खाया, घूमी, फिरी, जबकि अमर उसके समाज का व्यक्ति नहीं है। वह अमला की स्वच्छन्दता की प्रशंसा करता हुआ कहता है – ''तुम इतनी पार्टियों में जाती हो, क्लबो में जाती है, पुरूषो से मिलती जुलती हो, मुझे कभी बुरा नहीं लगा, बल्कि मैं चाहता हूँ, तुम और अधिक जाओ आओ बराबरी के लोगो से मिलो बात करने का सलीका तुममे ऐसा है कि अच्छे-अच्छे तुम्हारा लोहा मानते है। ऐसी सोसायटी में भूल करके सारे ढंग तुम बखूबी जानती हो। प्रत्युत्तर में अमला ने कहा – मैं नहीं समझ पा रही हूं कैलाश कि एकाएक ही तुमने यह धारणा कैसे बना ली कि तुम्हारी पसन्द नापसन्द के अनुसार चलने के लिए मैं बाध्य ही हूं।''(152) कैलाशने विवाह करने का प्रस्ताव किया, जिसके प्रत्युत्तर में अमला निर्भीक स्वरों में कहती है, कि विवाह और मित्रता अलग-अलग चीज है। विवाह करके मैने उस आदमी को दस वर्षों से नहीं देखा और तुमसे मित्रता करके अभी भी मिलती हूँ। मैं मानती हूँ कि एक अच्छे मित्र की तरह तुमने मुझे बहुत कुछ दिया। मुझे तुम्हारा साथ, तुम्हारा साहचर्य, संगति सभी कुछ बहुत अच्छा लगता है, पर इस सबके बावजूद मैने कभी विवाह की बात नहीं सोची। मैं नहीं जानती यह भ्रम तुम्हें कैसे हो गया।''(153)

साहित्य प्रेम-

अमला अमर के उपन्यासों को पढ़कर उससे प्रभावित हुई और उसे साहित्य चर्चा हेतु अपने यहाँ आमंत्रित करती है। उसने अमर को लिखा मेरे अनेक मित्र है, किसी से ब्रिज के क्लब स्पेड की बाते होती किसी से साड़ियों और सिनेमाओं की, आप आज्ञा दें तो आपसे समय-समय पर लिखने – पढ़ने की बाते कर लिया करूं।''(154) अमला अमर को परामर्श देती है कि कलाकर के लिए ये (पारिवारिक) जिम्मेदारियों घातक हैं, वह मुक्त प्राणी है। अमर मुझे सचमुच तुम्हारी प्रतिभा और लेखन पर बड़ी आस्था है, अगर तुम भटक गए तो मुझे कितना दु:ख होगा । तुम्हें कितनी स्कालरशिप मिलेगी मैं देती हूं लेकिन कम से कम दो साल में एक रचना देनी होगी। अमर को कला के साथ समझौता नहीं करना है।''(155) वह अमर को दो हजार का चेक भी देती है, अमर अच्छा लिखता है, और अमला चाहती है, कि वह एक से एक सुन्दर कृतियों का सृजन करें।

मित्रता एवं प्रेम-

एक स्वच्छन्द, उन्मुक्त नारी की तरह अमला अनेक मित्र बनाती है। वह अमर को पत्र

लिखकर अपनी भावनाओं से अवगत कराती है, कि हममें से कोई भी जब ऊब जायेगा तो चुपचाप परिधि से निकला जाएगा और दूसरा उसका कारण नहीं पूछेगा। मेहरा एवं कैलाश की अंतिम परिणति इसी प्रकार हुई किन्तु अमला अमर की प्रेरणा बनती चली गयी वह अमर की प्रेमिका बन रंजना पर टिप्पणी करती है, ''कि वह बहुत पजेसिव है। कलाकार को बांध कर नहीं रखा जा सकता है। रंजना और अमला बहुत ऑएगे लेकिन न अमर की प्रतिभा आएगी न प्रतिभा के स्फुरण के क्षण आएंगे। यदि रंजना को वह भ्रम हो, तो वह अमर के जीवन से तत्काल हट जाने का निश्चय व्यक्त करती है।''(156) वह तो लेखक अमर की प्रशंसिका है। यद्यपि व्यक्तिगत अमर को लेकर उसने कैलाश से झगड़ा किया है। अमला ने सब से झगड़ा किया है। अमला कहती है जब से अमर को देखा है, यह भी इच्छा होती है कि वह अमर के साथ कुछ समय काटे, घूमें फिरे, घंटो बात करे। उसके साथ बात करने से अमला की मानसिक भूख तृप्त होती है। यद्यपि वह जानती है कि अमर की मित्रता अपनी सारी घनिष्ठता, आत्मीयता और एक मित्रता के बावजूद उसके जीवन में अमर का कितना महत्व है अमर उसके जीवन का संबल नहीं बन सकता है।

दृढ़ता–

अमला का जीवन भले ही सामाजिक दृष्टि से उपेक्षित या दु:खद रहा हो, पर उसमें विचारों पर उन पर अमल करने की दृढ़ता झलकती है। दु:खी निराश अमला के पिता ने बताया कि उसका पूर्व पति आया था पश्चाताप की आग में जलकर उसका प्रेम कुन्दन के समान चमकने लगा था ग्लानि परिताप का अनुभव करने वाले व्यक्ति को क्षमा दान मिलना ही चाहिए। किन्तु अमला पिछले दस वर्षों को अनुछुआ नहीं मान सकती। वह अपने पिता से कहती है कि जीवन में आपने मुझे बहुत कुछ दिया है। उस सबका बदला शायद मैं कभी नहीं चुका सकूंगी। पिता के सारे अधिकार आपके पास है। अपने को यों अपमानित करने का अधिकार शायद मैं आपको भी नहीं दे सकूंगी। यद्यपि स्वर भर्राया हुआ था, पर उसमें भी जाने कहां की दृढ़ता थी। मैं किसी से विवाह करना नहीं चाहती किसी से भी नहीं। मैं इतनी निर्बल और निरीह नहीं हूं कि जीवन बिताने के लिए कोई सहारा चाहिए।''(157)

उदासी–

कैलाश से कटकर रह जाने के बाद अमला के जीवन में एक रिक्तता आ गई और अपनी उदासी को दूर करने के लिए घूमने निकल गई। अपने अठठाइसवे जन्म दिवस को

अकेले मनाया। वह अपनी डायरी में लिखती है – ''कल मैंने जीवन के अठ्ठाइस वर्ष पूरे किये .... और अकेले घूमकर चुपचाप अपना जन्म दिवस मना लिया। न किसी का उपहार आया न स्नेह मिला न स्नेह सिक्त शुभकामनाएं। मन बहुत–बहुत उदास हुआ था। पहाडियों में अकेले भटकते हुए मैने बार–बार अपने मन से प्रश्न किया कि स्नेह और अपनत्व का दावा करने वाले उसकी हर बात की प्रशंसा करने वाले सब के सब व्यक्ति क्यों एक–एक करके छूटते गये क्योंकि अपने को किसी एक में बांध नहीं पायी।''(158)

विशिष्टता का अंह भाव–

अमला उच्च वर्ग की महिला है। क्लबों, पार्टियों में लोग उसे प्रशंसा भरी निगाहों से देखते। अत: यह स्वाभाविक है कि उसमें उच्च भावना भर गयी। वह अपने को विशिष्ट बनाना चाहती है। पति के घर से आने के कुछ समय बाद से ही एक बात मरे मन में धीरे–धीरे घर करती गई थी कि मुझे सब प्रकार की सीमाओं को तोडना है, सब प्रकार के बन्धनों से मुक्त होना है। पति और परिवार ही नारी का सबसे सशक्त बंधन होता है, जब वही टूट गया तो और किसी बन्धन में मैं अपने को क्यों बांधने दूं। मुझे सामान्य से उपर उठकर विशिष्ट बनना है और मैं विशिष्ट बन गई। मैं साधारण लोगों के बीच अपने वर्ग के कारण और अपने वर्ग के लोगों के बीच बौद्धकता और अपने साहस के कारण पर विशिष्ट बनने की भावना से प्रेरित होकर जहां मैं अनेकानेक बंधन तोड़ती चली गई, सीमाओं का अतिक्रमण करती चली गई, वही उससे भी सशक्त बंधन अपने चारों ओर लपेटती गई दिव्याभिमान और झूठे अहं की दीवार अपने चारों ओर खडी करती चली गई। यह एकाकी जीवन बहुत बोझिल और निरर्थक सा लग रहा है। ''(159)

प्रेयसी–

अमला स्वतंत्र विचारों की नारी है। प्रस्तुत उपन्यास में उसके अनेक रूप चित्रित हुए है, किन्तु वे सार्थक रूप नहीं पा सके। वह सोचती है – वह पत्नी भी बनी है, प्रेयसी भी और मित्र भी, पर न वह किसी के जीवन को संवार सकी न कोई उसके जीवन को संवार सका सारे सम्बन्ध एक असफल प्रयोग की तरह मन पर एक असहाय बोझ सा छोडकर टूटते चले गये। किशोरी लाल की पत्नी बनी, कैलाश बाबू की एक प्रकार से प्रेमिका थी, तथा क्लबों, पार्टियों में अनेक मित्र बने थे। अब इस निरर्थक जीवन में अमर का प्रवेश हुआ है। मन के गहरे अन्तरतल में अमर के प्रति तीव्र आसक्ति बैठी है। किन्तु उसकी प्रेयसी बनने में वह डरती है।

प्रेरणा स्त्रोत–

अमर की प्रेमिका अमला भले ही न बन सके किन्तु उसके लेखन की प्रेरणा स्रोत तो बन ही सकती है। वह उसे उपन्यास लिखने के लिए प्रेरित करती है, आर्थिक सहायता भी करने का प्रयत्न करती है। वह निश्चय करती है कि अब वह अमर की प्रेरणा बनेगी इस प्रयोग में चाहे सम्बन्ध टूट जाए, चाहे वह स्वयं टूट जाए, पर यह टूटना सार्थक होगा क्योंकि यह सृजनात्मक होगा।''(160) अमर स्वयं रंजना से कहता है कि अमला का व्यक्तितव सब पर छा जाने योग्य है। वह रंजना से कहता है – रंजना अमला से तुम्हें ईर्ष्या नहीं सहानुभूति होनी चाहिए। इतने ऐश्वर्य है और वैभव के बीच वह कितनी निर्धन है उसका दर्द मुझे छूता है।''(161) अमर रंजना को अमला से अपने सम्बन्धों की व्याख्या करता है कि अमला का दर्द उसे व्यथित करता है। मैं उसके नारीत्व के नहीं जीवन के सामने अपना विवेक खो बैठता हूं। अक्सर लगता है कि मेरी जो कृति सचमुच मुझे अमर कर देगी वह अमला को लेकर ही होगी चाहे उसके जीवन को लेकर, चाहे उसकी प्रेरणा को लेकर।''(162)

अन्र्तद्वन्द्व–

अमला के मन में रंजना को लेकर अनेक प्रकार की दुविधाएं है। वह सोचती है –''एक ही बात उसके मन में रह–रह कर घुमड रही थी – क्या सचमुच ही वह अमर और रंजना के बीच की बाधा है ? और अंत में अमला अमर के जीवन परिधि से निकला जाती है। डॉ. राधा गिरधारी ने लिखा है कि अमला एकांगी, स्वाभिमानी उन्मुक्त एवं आधुनिक विचारधारा की नारी है। जिसने अमर को पथभ्रष्ट किया। रंजना से अमर को छीन लेने में उसका अपना स्वार्थ था। अमला का मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध अनेक पुरूषों से रहा, पर वह किसी की न हो सकी। वह अपने जीवन को उन्मुक्त धारा प्रवाह की तरह बहते हुए बढना चाहती थी।(163) डॉ. शिव नारायण श्रीवास्तव ने उसकी मूल संवेदना को रेखांकित करते हुए लिखा है कि अमला का मन सहज गति से पुरूष मित्रों की ओर दौडता है किन्तु वह अपने का असाधारण रूप से नियंत्रित कर लेती है और अपने उपर एक रहस्य जाल सा ओढे हुए उन्हें भ्रमों में भटकने को छोड देती है।''(164)

मिसेज तेजपाल : (कुलटा)

जिन्दगी – साढ़े तीन अक्षर एवं दो पाइयों की सहायता से बना हुआ यह शब्द कितना बेतरतीब हो सकता है, शायद ही इसकी कल्पना की जा सकती। कुलटा एक ऐसा ही

उपन्यास है जिसमें ठाठ बाट, ऐशों आराम एवं चंचलता, व्यवहारिकता, सामाजिकता सभी कुछ प्रेम की नश्वरता में मात्र छलावा प्रतीत होता है। वास्तव में प्यार क्या है, कब होता है कैसे अनुभूति होती है यह कहना मुश्किल ही नहीं असम्भव सा जान पडता है। सृष्टि का उदभव ही इस प्यार से ही आरंभ होता है। जयशंकर प्रसाद ने कामायनी के माध्यम से सृष्टि विकास एवं उस सृष्टि विकास में प्रेम आर्कषण की महत्वा को मनु एवं श्रद्धा के माध्यम से दिखाता है। जयशंकर की कामायनी प्रेम सौन्दर्य एवं काम एक सुन्दर समन्वय लिए हुए सुन्दर सृष्टि में पुरूष एवं नारी के प्रेम सहयोग त्याग समर्पण के साथ साथ स्थिति एवं समय प्रतिकूलता के दौरान काम वासना का कुत्सित रूप दिखाकर एक अनूठे प्रेम की अभिव्यजना का भी संकेत दिया है।

आधुनिक काल के समसामायिक राजेन्द्र यादव ने भी आधुनिकता का पुट देते हुए एक अनूठे प्रेम की अभिव्यंजना की है कुलटा के माध्यम से। प्रेम ईश्वर है और ईश्वर की दी हुई ईबादत कभी विषाक्त नहीं होती है विषाक्त तो इसे समाज परिस्थिति एवं सोच विचार बनाते है। कुलटा एक स्त्री के अपने चुनाव की कहानी है। इस चुनाव को सामाजिक मान्यता नहीं प्राप्त है। इसका प्रारंभ मूल संवेदना से ही होता है। कथा का प्रारंभ बीनू के द्वारा यह – मिसेज तेजपाल कुलटा है यह बात सुनकर सचमुच दिल को बडा धक्का लगा। कथा का प्रारंभ नायिका के चरित्र चित्रण से हुआ है। इसमें अन्त की घटना का उल्लेख प्रारंभ में कर दिया लेकिन रहस्यता को बनाये हुए शेष घटनाओं को उस चरित्र के द्वारा एवं उस चरित्र को सिद्ध करने के लिए पूर्व काल की घटनाओं के अंकन के साथ हुआ है। इसका समापन लेखक ने नैरेटर राजन के चिन्तन के रूप में किया है। बीनू और रणधीर की मान्यता थी कि मिसेज तेजपाल कुलटा थी और जानबूझ कर उसने तेजपाल को नार्मद कहकर उसकी सारी जिन्दगी बरबाद कर दी।

संपूर्ण कथानक में उपन्यासकार ने विवाह जैसे एक सामाजिक बन्धन को प्यार से कही ज्यादा छोटा दिखाया है। पृथ्वी पर प्यार जितनी बार घटित होता है एक नये अंदाज में उपस्थित होता है। अक्सर वह विचित्र भी दीखता है। भारतीय समाज में विवाह पहली और प्यार दूसरी सीढी होती है। कोई विवाहोत्तर प्यार की तलाश करें तो उस स्त्री को भारतीय समाज में कुलटा के नाम से पुकारी जाती है।

कथाकार ने इस लघु उपन्यास में मिसेज तेजपाल को जो नारी सोन्दर्य के प्रति उदात्त संगीत, प्रकृति प्रेमी के साथ–साथ उन्मुक्त भावना रखने वाली एवं जीवन के यथार्थ को जीने की चाह के साथ–साथ प्रेम के प्रति उदार विचार रखने वाली नारी के रूप उपस्थित किया है

– ''नौकरानी और खान समि के बीच पनपे प्यार को तेजपाल द्वारा उसे सस्ता एवं पिक्चरों द्वारा दिमान खराब होने की बात पर मिसेज तेजपाल द्वारा आक्षेपण होता है कि खुद तो निकाल दिया और मान लो वह शादी ही कर ले ? ''

प्रेम न ही बंन्धनों में बंध सकता है और न ही कोई समाजिकता नाम की बेडी किसी प्रेम के पंक्षी को बांध सकती है । इस लघु उपन्यास में राजेन्द्र जी ने धन धान्य एवं मान सम्मान के साथ रहने वाली स्त्री जो क कहीं न कहीं पति प्रेम में उपेक्षित दीख पडती है अन्तोगत्वा एक फटीचर बायलन के साथ चले जाना एवं एक सुरक्षित जीवन को छोडकर असुरक्षित जीवन जीने चल देती है । सामाजिक परिवेश में जीवन की गाडी में सवार होने के लिए प्रत्येक व्यक्ति स्त्री एवं पुरूष इन दो सीढियों से गुजरता है । ''[165]

सौन्दर्य–

नारी सौन्दर्य के प्रति उदारता को दिखाया है राजेन्द्र यादव ने अपने इस उपन्यास में । कथानक के प्रारंभ से ही कथा नायिका के सौन्दर्य का वर्णन किया गया है । संपूर्ण उपन्यास में नायिका सौन्दर्य के माध्यम से उसके संपूर्ण व्यक्तित्व को उभारने का सफल प्रयास हुआ है । बीनू के मुंह से जब मैने यह सुना कि ''मिसेज तेजपाल कुलटा है तो सचमुच दिल को बडा धक्का लगा । मैं तो स्वप्न में भी नहीं सोच सकता था कि ऐसी सुन्दर, हसमुंख और सौम्य शिष्ट महिला भी कुलटा हो सकती है । कैसी मस्त थी, कैसी अच्छी तरह मिलती कितनी आत्मीयता से गप्पे लडाती थी वे ! x x x दांतो में मिस्सी लगी होती काजल की लम्बी–लम्बी लकीरे ऑखों से बाहर अगर खिंची होती पाउडर पुते गालों पर रूज लगा होता पान से होठ और खासतौर से मुंह के कोने रंगे होते, पत्तीदार बालों के नीचे ईयररिंग झूल रहे होते और भौंहे मटका मटका कर बातें करती तब तो कोई बात ही नहीं थी । पहली मुलाकात में ही मैं भाप जाता कि वे कुलटा है ।''[166]

कथन से स्पष्ट हो जाता है कि मिसेज तेजपाल का सौन्दर्य कृतिम नहीं था बल्कि उनका सौन्दर्य उनका व्यक्तित्व की अलग ही रूप को अंकित करता है । एक तरफ जहां मिसेज तेजपाल की सुन्दरता लोगों के दिलों में प्यार उत्पन्न करता था वहीं दूसरी ओर उनकी वहीं सुन्दरता एवं रख रखाव उसके पति मिसेज तेजपाल को दाम्पत्य जीवन के उपहास के रूप में एहसास कराते थे । आरंभ से मिसेज तेजपाल बहुत ही उन्मुक्त महिला दिखाई दी है मेजर की पत्नी होने के बावजूद भी सामान्य जीवन के प्रति अभिरूचि रखने वाली नायिका के रूप में उपस्थित हुई । दाम्पत्य जीवन एक उपहास मात्र दिखाई पडता है मिसेज एवं मिस्टर

तेजपाल के बीच में। मिस्टर तेजपाल का कैम्प में जाना एवं जीवन के पूर्व एकाग्रिक दिनों में प्रेम भी पिपासा लिये हुए मिसेज तेजपाल जहां शक्ति पुरूष का सौन्दर्य माना जाता है वहीं दूसरी तरफ कमनीयता कोमलता नारी देह सौन्दर्य जाना जाता है। मिसेज तेजपाल का सौन्दर्य तो अवर्णनीय सा प्रतीत होता है। जिस समय अचानक मिस्टर और मिसेज तेजपाल अचानक सुबह धडघडाते हुए आ पहुंचते है और उस समय मिसेज तेजपाल का सौन्दर्य को नैरेटर के शब्दों में व्यक्त करते हुए उपन्यास कार लिखते है –हल्के क्रीम कलर की क्रेप की साडी उसी रंग का शर्ट ब्लाउज और कंधों पर हल्का काम किया हुआ ढीला– ढाला पश्मीने का केप और कानों के उपर खुंसा हुआ नरगिस का एक छोटा सा सफेद फूल। नाखूनों पर पॉलिश दोनो हाथ मोटी मोटी बंटी हुई रेशमी डोरियों के फुंदनों से खेल रहे थे और छोटा सा पीले चमकदार मखमल का पर्स घुटनों के बीच में पीले सैडिलों तक लटका था।''(167)

बीनू रणधीर नैरेटर एवं अन्य लोग खाने पर मिस्टर एवं मिसेज तेजपाल के यहां गये थे और खाने के साथ–साथ बैठक में गप्पे और कहकहे भी लगाए जा रहे थे और सभी लोगों के साथ–साथ मिसेज तेजपाल भी उन्मुक्त होकर हंस रही थी और उस हंसी में उनके सौन्दर्य का जिक्र करते हुए उपन्यास कार ने अपने नारी सौन्दर्य की परख का चित्रण करते हुए लिखा है – ''लम्बी लम्बी बरौनिया सुती हुई नुकीली नाक और चाकू से तराशे हुए से पतले पतले होठ और उभरे हुए गाल – जिन्होंने उनके चेहरे को ऐसी अभिव्यंजना दे दी थी मानो वे मुस्करा रही हों माथे पर छोटी सी बिन्दी और कटे हुए बाल।''(168) नेरेटर मिसेज तेजपाल के सौन्दर्य एवं उन्मुक्त स्वभाव से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका महफिल में जिस समय सब हंस रहे होते है उसके सौन्दर्य का जिक्र करते हुए नेरेटर कहता है – मैं उनकी पतली पतली सुन्दर अंगुलियों रंगे हुए नाखूनों और अंगूठी पर निगाह जमाए रहा। वास्तव में मिसेज तेजपाल बहुत सुन्दर है किसी को भी मंत्रमुग्ध कर बरबस अपनी और आकर्षित कर लेती है। नेरेटर के शब्दों में – स्लिम शरीर भरी देह, सीढियों पर उठते कदम लहराते केप के फूल और उपर झूमते बाल। ''(169) मिसेज तेजपाल अपने सौन्दर्य के प्रति सचेत भी रहती है वे अपने सौन्दर्य का रख–रखाव करती है एक दिन अचानक किवाड खोल कर उपस्थित होकर नैरेटर को चौका देती है और तब नैरेटर उसको सौन्दर्य का वर्णन करते हुए कहता है –''आँख पर काला चश्मा, हल्की गुलाबी क्रेप की साडी बैसा ही ब्लाउज नाखूनों पर हल्के गुलाबी शेड की नेलपॉलिश हाथ में बेंत की चपटी डोल्ची जिसके दोनो ओर प्लास्टिक के फूलकढे पर्देलगे थे। कंधे पर सुनहरी काम का बिल्कुल सफेद्द पर्स।''(170)

मिसेज तेजपाल बाजार जाने के लिये बीनू का इन्तजार करने के लिए उसके बरामदे में

टहलने लगी और तब नैरेटर कहता है कि उन्हें निर्भय होकर देख लेने का अवसर था। ''मैं उनकी कनपटी और कंधों को छूते रेशमी बाल देख रहा था। शायद अभी उन्होंने सिर धोया था, शैम्पू की हल्की हल्की गंध आ रही थी। कान का रिंग टूटे चांद सा लटका था .... कुहनी तक गुलाबी चुस्त ब्लाउज में बंधा हाथ कुर्सी की बांह पर टिका था .... घडी की काली डोरी कलाई पर बडी खूबसूरत लग रही थी और ताल देती अंगुलियों पर ताजा लगी नेलपॉलिस गंधा रही थी।''(171) वास्तव मे नारी सौन्दर्य किसी भी पुरूष को फिर वो चाहे विवाहित हो या न हो अपनी ओर बरबस ही खींच लेता है। सभी लोग पिकनिक मनाने जाते है और वहां पर मिस्टर रणधीर सभी औरतों को बन्दूक चलाना सिखा रहे थे। मिसेज तेजपाल का नम्बर आने पर उन्हें आवाज दी जाती है और गुड्डी को दौडाती हुई मिसेज तेजपाल दौडी चली आ रही है और रणधीर उन्हें मुग्ध आंखों से देखता रहा और फिर जैसे अनायास ही उसके मुंह से निकला, ''कुछ भी कहो, कम्बख्त का एक-एक अंग सांचे में ढला है। और उस समय के सौन्दर्य का चित्रण करते हुए उपन्यासकार ने लिखा है - "इधर भागकर आते हुए उनकी साडी शरीर से चिपककर पीछे उडने लगी थी और एक विचित्र अतीन्द्रिय स्पर्श उनके शरीर को दिए दे रही थी। पीछे उडती साडी से दोनो पांवों कमर धड सबकी बनावट और गठन अधिक स्पष्ट रूप में इस तरह उभर कर धूप में दिखाई दे रही थे जैसे खिले गुलाब की क्यारियों पर कुहरे का झीना नीला नीला जाला हिलोरे ले रहा हो।'' और रणधीर ने खुलकर उस अप्रतीय सौन्दर्य को शब्द दे दिए थे - हिरनी की तरह कुलाचे भरती घूमती है।''(172)

काम एवं प्रेम का विकृत रूप-

काम (*Sex*) जीवन का अभिन्न अंग है। इसकी तृप्ति से व्यक्ति के उन्नयन में सहायता होती है और इसके दमन से व्यक्ति मानसिक रोग का शिकार बनता है। व्यक्ति को सेक्स का दमन इसलिए करना पडता है कि समाज में नैतिकता के बंधन प्रबलतम है। विवाह से पूर्व स्त्री पुरूष के काम सम्बन्ध को समाज में मान्यता नहीं होती। हमारे समाज में विवाह काम की तृप्ति का लायसंस माना जाता है जैसे लायसेस न होने पर गाडी चलाना मना है वैसे विवाह के बिना काम सम्बन्ध मना है। विवाह के उपरांत जब कोई स्त्री पुरूष पति पत्नी बन जाते है तब उनको सेक्स की तृप्ति की पूरी मान्यता प्राप्त हो जाती है।

मिसेज तेजपाल वैवाहिक जीवन तो जीती है लेकिन वे दोनो ही मिस्टर तेजपाल एवं मिसेज तेजपाल दाम्पत्य जीवन में काम एवं प्रेम के प्रति एकनिष्ठ नहीं हो पाते है। मिसेज तेजपाल का वहीं सारी बाते एवं ढंग अपनाना जिससे मिस्टर तेजपाल को चिढ होती है उनके

काम के अतृप्ति एवं असफल दाम्पत्य का संकेत है। मेजर तेजपाल की हरकतों से पता चलता है कि उन्होंने अपनी पत्नी मिसेज तेजपाल पर काम की दृष्टि से एकनिष्ठ रहने के लिए अनेक बंधन डाल दिये है। पत्नी का हरदम गाते रहना विभोर होकर वायलिन सुनना उन्हें बुरा लगता है। घर मे वायलिन बजाने के लिए जो व्यक्ति आता था उससे वे जानबूझकर अनबन करते है क्योंकि उनके मन में संदेह हुआ था कि उनकी पत्नी कहीं उस व्यक्ति के प्रति आकर्षित न हो जाए। मेजर तेजपाल से उनकी पत्नी मिसेज तेजपाल को ''उन दिनों जो जो कुछ सुनने को मिला उसे वह भूल नहीं सकती।'' मिसेज तेजपाल जितनी ही नाजुक प्रकृति शील प्रेम के ममर्स्पर्शी स्पर्श को होने वाली स्वछन्द स्वभाव की थी मिस्टर तेजपाल उतने ही रोषीले एवं प्रेम को अराजक तत्व के रूप में स्वीकार करने वाले थे। संपूर्ण उपन्यास के कथाक्रम में मिसेज तेजपाल को काम की तृप्ति नहीं हो पाती क्योंकि उसके पति मेजर तेजपाल नपुसंक है। इसीलिए मिसेज तेजपाल हमेंशा उन्मुक्त व्यवहार करती रहती है। काम (*Sex*)की तृप्ति न होने से वह मानसिक संघर्ष में उलझ जाती है। जब पति दो महीने के कैम्प के लिए बाहर चले जाते है तब मिसेज तेजपाल के दिन मानसिक कशमकश में गुजरने लगते है वह मानसिक रूप से विक्षिप्त हो जाती है क्योंकि अहं के भाव में किये गये कृत्य जहां मिस्टर तेजपाल को संतुष्टि प्रदान करते है वहीं दूसरी ओर मिसेज तेजपाल के अहं को चोट पहुंचती है। मिस्टर तेजपाल के द्वारा गाने से उब्र जाने पर वह सारा दिन गाती है एवं बाल अच्छे लगने के लिए कहने पर वह बाल कटवा आती है। कहीं न कहीं मिसेज तेजपाल काम के प्रति अतृप्ति का भाव लिए हुए उन्मुक्त भाव से अपने सौन्दर्य का रख-रखाव करती है और प्रत्येक पुरूष को बरबस ही आकर्षित करती है। मेजर तेजपाल का दो महीने कैम्प चले जाने एवं मानसिक कशमकश से गुजरती हुई वह वह काम की तृप्ति का जरियॉ ढूंढती है और अपने पुराने परिचित एक वायलिनिस्ट को चिट्ठी लिखती है - ''तनाव टूट जाने की स्थिति तक आ पहुंचा है। सारे दिन अकेली बैठी-बैठी पढा करती हूं लेकिन कुछ भी पढ नहीं पाती। किताबें खुली रहती है पन्ने पलटे जाते है आंखे अक्षरों और लाइनों पर घूमा करती है और लगता है दिमाग के बोझ से पलके बंद हो जाती है। पता नहीं रहता कि चारों तरफ क्या होता रहता है? जाने यह क्या हो गया है मुझे। सारे दिन सर्दी लगती रहती है और बदन पसीने से तर बतर रहता है। नीद पूरी तरह नहीं आती। जाने क्या - क्या घूमा करता है दिमाग में। याद है एक बार तुमने लिखा था हम लोग एक दूसरे को संभालने सांवारने और बनाने में मदद दें, दुख और कमजोरी के क्षणों में उसे वांटकर एक दूसरे को हल्का कर सके बल दे सके ...... कुछ कर सकते हो बोलो ......? मेरे दिमाग से यह बोझ उतार सकोगे? इस तनाव से पीछा

छुडा सकते हो .....? मानोगे, मैं आजिज आ गई हूं ...... ? ''(173) फिर वायलिनिस्ट आ जाता है और मिसेज तेजपाल को प्रतिदिन वायलिन सुनाता है । अंत में एक सप्ताह बाद मिसेज तेजपाल उसके साथ भाग जाती है और अपनी काम की तृप्ति का स्थायी बिन्दु पाती है । लेकिन इस घटना का पता चलने पर उसके पति पागल हो जाते है और इसलिए उनके नौकरी से निकाल दिया जाता है और वे दर व बदर भटकने लगते है । उनका परिवार तथा जीवन उखड जाता है और इसका मूल कारण है अतृप्त काम ।

वास्तव में जीवन को रंगों से भरने के लिए स्त्री पुरूष के बीच प्रेम के साथ-साथ काम होना एवं उसकी तृप्ति होना अति आवश्यक है । कुलटा उपन्यास की नायिका मिसेज तेजपाल का काम तृप्त होता तो न वह तनाव पूर्ण जीती, न वायलिनिस्ट के साथ भाग जाती और न उसके पति पागल होते और न ही नौकरी खोते ।

प्रकृति प्रेमी-

मिसेज तेजपाल अपने शारीरिक सौन्दर्य के साथ-साथ अपने घर के रख रखाव पर भी ध्यान देती है । मिसेज तेजपाल को प्राकृतिक चीजें देखने का शौक रहता है । सब के साथ पिकनिक जाने पर एवं सबसे अलग होकर मिसेज तेजपाल गुड्डी के साथ प्रकृति देखने में मस्त हो जाती है उपन्यास कार लिखते है - '' वहां से काफी लम्बा चौडा ताल था और उसके कई लदे किनारों पर घास सिवार के बीच-बीच में छोटे छोटे ढेर से कमल खिले थे । ताल के दूसरी ओर कुछ औरते और बच्चे कमर कमर पानी में डूब जाल मढे ढप जैसे लिए हुए मछलियां पकड रहे थे । उन्होंने छोटे-छोटे बर्तन या घडे इधर-उधर तैरा दिए थे और पकडी हुई मछलियां उनमें डालते जाते थे । X X X दोनो के हाथों में रंग बिरंगे गुब्बारे थे और दोनो किनारे पर खडी बडे मुग्धा भाव से मछलियों का पकडना देखती रही ।''(174)

मिसेज तेजपाल नैरेटर से बात करते हुए बता रही थी बीनू साथ न्यू मार्केट जाना है और फिर झटके से मुडकर बरामदे में लटके छोटे छोटे हरे गमलों की तरफ निगाह डालकर बोली - '' मुझे तो ये गमले और फूल बडे अच्छे लगते है । बीनू बोली मैं दिला लाउंगी । मैं अपने कमरे के साइडवाले बराण्डे में लटकाउंगी । रात में कभी आंख खुल जाए बराण्डे में चांदनी के टुकडे बिखरे हो ....गमलों में लटके फूल कुनमुना रहे हो, बाहर ओस पड रही हो तब धीरे धीरे टहलने में कैसा अच्छा लगता है । है ना ?''(175)

इस प्रकार मानसिक रूप से तृप्त न होने पर भी मिसेज तेजपाल प्रकृति की सुन्दरता को पसंद करती है । जाऊ पानी कैसा लहरें मार रहा है । शायद ज्वार का समय है । अच्छा

आप ही बताइये रोशनी की छाइया ऐसी नहीं लगती जैसे चमकदार सुनहले सुनहले सांप पानी में तडप रहे हों और फि रालन भरे किनारे पर चढने की कोशिश करके रह जाते है।''(176)

नायिका–

अल्हड, मस्त, भावुक मिसेज तेजपाल कुछ न कुछ गुनगुनाती ही रहती थी। उनके पति तेजपाल स्वीकार करते है कि कौन सा वक्त है जब ये गीत न गाती हो। आप ही तो शायद बता रही थी कि नीचे वालों ने इनका नाम रेडियोग्राम रख रखा है। आटो चेंजर।''(177) बीनू भी कहती है – उनका बस चले तो दिन भर गाती हुई किटी को सीढियों पर चढाती उतारती रहे। लो ऊपर पहुंचते ही गाने लगी। दिन भर गाती है। बरामदे में स्वेटर बुनेंगी तो गांएगी, किचन में होगी तो गाएगी।''(178)

भावुकता–

मिसेज तेजपाल बचपन से अति संवेदनशील एवं भावुक थी। प्रकृति की रमणीयता उन्हें विशेष रूप से आकृष्ट करती थी। वे घण्टों सुध बुध खोकर उसके सौन्दर्य को निहारती रहती वे कहती है – वैसे नंदी के किनारे घास पर बैठने का मुझे नशा है। बचपन से ही बहने पानी को देखकर अजब सा मन हो जाता है। मुझे याद है जब हम छोटे थे, हमारे घर के पीछे ही एक खूब चौडी नहर थी। मुझे जब भी मौका मिल जाता वहीं भाग जाती। बैठी–बैठी घंटो पानी को देखा करती। पानी में बादल तैरते रहते मेरा मन होता है भी इन बादलों में से एक पर बैठकर तैरती हुई समुद्र में चली जाउं खूबदूर चली जॉऊ पानी कैसा लहरें मार रहा है। शायद ज्वार का समय है। अच्छा आप ही बताइये रोशनी की परछाइयाँ ऐसी नहीं लगती जैसे चमकदार सुनहले–सुनहले सॉप पानी में तडप रहे हो और फिरालन – भरे किनारे पर चढने की कोशिश करके रह जाते है। ''(179)

असफल दाम्पत्य–

अतृप्ति एवं कुठा–मिस्टर तेजपाल सेना में मेजर है। वे अनुशासित जीवन पसन्द आदमी है। मिसेज तेजपाल को एक ही ढर्रे–रूटीन की जिन्दगी पसन्द नहीं परिणाम स्वरूप उनमें एक प्रकार का असंतोष पनपने लगता है। इस असंतोष की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति मिसेज तेजपाल कायिक अनुभावों द्वारा करती है – ''कमरे से बाहर निकलते समय तक उनके चेहरे की सारी दीनता और निरीहता के पार कोई उद्धत किस्म की चीज उभरती चली आ रही थी,

शायद लापरवाही, शायद मस्ती, शायद चुनौती।''(180) बंधी बंधाई जिन्दगी उन्हें नीरस लगती है (शौक) छोड न देती तो उनहें लेकर घुटती। आप देखते नहीं यहां कौन से शौक पनपते है। आदमियों को क्लब, कैबरे, रेस और ब्रिज से फुर्सत नहीं है या फिर दिन भर अपने अफसरों की बातें – फलाने से झडप हो गयी..... फलाने के प्रमोशन में क्या गडबडी पैदा हो गई। एटीकेस, मैनर्स और कल्चर स्मार्क या इसका ट्रान्सफर उस डिविजन में हुआ उसका वहां या फिर वहीं एक दूसरे के यहां डिनर रिटर्न विजिटस और चाय पार्टी वर्थ-डे पार्टी के बाद वहीं घिसे पिटे मजाक। एक दूसरे के बारे में उल्टी सीधी बाते और पोजीशन की होड। दिन में वहीं खड खड करती खाकी कहिया यूनीफार्म वही तनी हुई रीढे और अकडी हुई गर्दने रोज – रोज वहीं फीतों और स्टारों की पॉलिश और शाम को काले-काले सूट। आई देम आफ दे। नपी तुली चाल, नपी तुली हंसी, नपा तुला मनोरंजन आप लगातार एक दूसरे के यहां चार साल जाइए वही पहले दिन वाली फार्मेलिटी वही तकल्लुफ, वही औपचारिकतां लगता ही नहीं जैसे आदमी मिल रहें है। कठपुतलों की जिन्दगी जिनकी हर हरकत पहले से ही तय हो।''(181) बचपन में अत्यन्त लाड प्यार के कारण मिसेज तेजपाल वैवाहिक जीवन में समन्वय नही कर सकी। पति को उनके लम्बे बाल बहुत पसन्द थे यह जानकर दूसरे दिन बाल काट कर पाण्ड बाल बनवा कर आयी। पति को गीत पसन्द तो वे दिन-दिन शेर ओ शायरी गुन गुनाती रहती। इसी प्रकार जो बात पति को पसन्द थी वे उसके विरूद्ध कार्य करती थी। धीरे-धीरे यह असंतोष एक लडाई में परिवर्तित हो गई। अतृप्त काम भावना, और असंतोष व्यक्त होने लगे। रणधीर विश्लेषण करता है – ''जैसा कि तुम कहते हो न कि मिसेज तेजपाल का गाना, चहचहाना सब बनावटी और नकली लगते थे, उसी तरह मुझे भी लगता है, कि मेजर तेजपाल का दबदबा खूंखार पना और कठोरता भी असली नही थे। .... और दोनो अपने-अपने नकली हथियारों से एक दूसरे से लड रहे थे। मजा यह की दोनो जानते थे कि हथियार दोनो के पास नकली है .... यह लडाई खुद नकली है। असली मोर्चा तो कुछ भीतरी ही था और वही वह उन्हें हरा गई ....''(182)

मुन्नी –

सारा आकाश के नायक समर की यह बहन है। किस तरह से दहेज पूरा कर विवाह किया गया। उसकी व्यथाा कथा को लेखक ने इस प्रकार लिखा है। समर कहता है मुण्से दो साल छोटी है। दो तीन साल पहले सोलह सत्रह की उम्र में उसकी पढ़ाई छुडा कर शादी कर दी गई इतनी बडी कर ली है के लगातार प्रहारों से मजबूर होकर घर की कुछ चीजे बेच बांच कर खुद भाई साहब की शादी में मिली चीजें मिला कर दहेज दिया। .... ससुराल से मुन्नी के बडे करूणार्थ खत आते। यहां आती तो बुरी तरह से विलख विलख कर रोती।(183)

शोषित पीड़ित-

मुन्नी का पति उस पर अत्याचार करता है जिसकी कोई पराकाष्ठा नहीं थी । वह रखैल रखता था । समर कहता है ''सास और पति मिल कर जो अत्याचार करते उन्हें किसी से कह भी तो नही सकती थी । इसका पता तो बाद में चला कि पति का चाल चलन कैसा है ? और वह राता भर कहां घूमता है ।''(184) सास के मरने पर पति पर अंकुश हट गया और वह किसी औरत को रखैल बनाकर घर में ले आया अब पति का हाथ पकडने वाला कोई नहीं रहा । और मुन्नी पर जो दारूण विभीषक का पहाड टूटा उसका उल्लेख इस प्रकार किया है । उसने जाने किसको घर में लाकर डाल लिया सुनते है कौई ब्राह्मण जाति की थी। नौकरानी तरह अपनी और उसकी रखैल को मुन्नी क्से सेवा कराता और दो-दो तीन-तीन दिन खाना नहीं देता और भी न जाने कितने कहने अनकहने अत्याचार किये । मुन्नी तो बताती ही नहीं थी । राम -राम भर इसकी दोनो हथेलियों पर खाट के पाये रख कर कुढान और जलाने की अपनी आनंद क्रीडा के प्रदर्शन किये जाते और एक दिन सारे शरीर पर बेतों के फूले हुए नीले निशान लेकर मुन्नी सुबह-सुबह फिर हमारे यहां आ गयी ।

बीतराग-

मायके आकर मुन्नी ससुराल की पीडा का स्मरण कर एकदम स्तब्ध रह जाती । राजेन्द्र यादव ने लिखा है - ''मुन्नी तो पता नहीं कुछ सोचती भी है या नहीं । अधिक चुप और तटस्थ रहना उसका स्वभाव हो गया है । सब नीचे होंगे तो वह उप्पर अकेली बैठी-बैठी एकटक ताका करेगी । उप्पर से आई तो सिकुडी सिकुडाई सी सभी निगाहों से बचती रहेगी । जाने क्या उल्टा सीधा सोचा करती भीतर जैसे उसे कोई चीज पीसे डाल रही हो । वह दिनों दिन पीली पडती चली जा रही है । अठारह उन्नीस बरस की चमकाते मोती सी उम्र झुर्रियों और दुख के पाले में मुरझा गई है ।''(185)

पुनि जहाज पर आवै-

अचानक एकदिन मुन्नी का पति ससुराल आया और वह मुन्नी को लिवा जाने की प्रार्थना करने लगा । अपने पिछले व्यवहार पर पश्चाताप और ग्लानि प्रकट करता । घर भर को आश्चर्य था कि उस चुडैल को क्या हुआ या कि इनके कौन अक्ल की डाढ फूट आयी ? मुन्नी के बाबूजी बताते है कि वह मुन्नी को लेने आया है । बहुत माफी वाफी मांग रहा है, अफसोस जाहिर कर रहा है, कि गलती हो गई, अब कभी ऐसा नहीं होगा । जब रूंआसा सा हो आया तो मैं क्या करता ।

उस चुडैल के कारण ही तो अकल आई है। पांच छह महीने हो गए सब कपडे जेवर समेट कर चम्पत हो गई। पुलिस वुलिस में रिपोर्ट भी की मगर हाथ आती वह फि र कहीं ? अब जाकर सारा दिमाग ठिकाने लग गया।''(186) रात भर मुन्नी के विषय में विमर्श चलता रहा पिता कहते है इस वक्त उसकी गरज ही सही आया तो खुद है। एक दफा ठोकर खाकर उसकी आंख खुल गई है। बातों से भी पता चलता है कि उसे काफी पछतावा है, अब तंग नहीं करेगा। ऐसी हालत में तुम्ही बताओं भेज देने में हर्ज क्या है ? अच्छा और नहीं तो क्या उसे यों ही जिन्दगी भर बिठा कर रखोगी ? उसे पढा लिखा दे या कोई हुनर सिखा दें, इतना अपने पास है नहीं।''(187) मुन्नी बहुत रोई गिडगिडाई जहर देकर मार डालने की प्रार्थना की किन्तु अन्त में उसे ससुराल पति के साथ जाना पडा।

बेटी रूप में-

मुन्नी उस समय एक मध्यम परिवार में एक बेटी की स्थिति क्या है यह अच्छी तरह दर्शाती है। मुन्नी जो समर से केवल दो साल ही छोटी है और सोलह सत्रह साल में उसकी पढ़ाई छुड़ा कर शादी कर दी जाती है।

जिस समय मुन्नी का पति उसे लेने आता है वह फूटफूट कर रोती हुई बाबू जी से कहती है – ''बाबू जी तुम मुझे अपने हाथ से जहर दे कर मार डालो मेरा गला घोट दो, मुझे वहा मत भेजो .... मुझे वहां मत भेजों बाबू जी। मै वहां मर जाऊंगी ..... मैं तुम्हारे हाथ जोड़ती हूं ..... पाव पड़ती हूं .... मुझे कही मत जाने दो।''(188) मुन्नी ने फिर से गिड़गिडाते हुए कहा – '' बाबू जी मैं किसी का चौका बरतन कर लूंगी पीस कूट लूंगी मुझे वहां मत भेजो उनके साथ।''(189) और अन्तोगत्वा बाबू जी द्वारा समझाने के बाद वह चली जाती है फिर कभी वापस न लौटने के लिए।

बहन रूप में –

उपन्यास ' सारा आकाश ' में मुन्नी समर की बहन है। वह चार भाइयों के बीच में सिर्फ एक बहन थी और उसे सभी चाहते है। जिस समय समर प्रभा से बात नहीं करता है, तब मुन्नी समर से छोटी होने के बाद भी समर से पूंछती है –''भैया, तुम भाभी से जरा भी नहीं बोले ? दूसरी शादी करोगे ? '' और चूल्हे के सामने बैठी एक कोयले से यों ही जमीन पर निरर्थक कुछ काढती रही। और समर के फिर से पूंछने पर '' नही यों ही पूछा मैने तो मुन्नी टाल गई। फि र जाने क्या समर के (मेरे)चेहरे की ओर देखकर बोली, '' रात खाना बाना खाकर जब भाभी अम्मा के पैर दबाती रहती है न तभी अक्सर इस तरह की बाते होती रहती।'' और वह अपनी कलाई ऊंची करके हाथ की चूडियां उठाती गिराती रही।''(190)

मुन्नी को हम सभी भाई चाहते थे। जिस समय मुन्नी को उसका पति लेने आया उस समय कुअंर ने झटलाकर कहा, '' बाबू जी तुम भी मत भेजना मुन्नी जीजी को।''(191) मुन्नी विफर कर रोने लगती है और उसको देखकर हम सभी रोने लगते है। कुअंर तो अम्मा से लिपटकर रोने लगा, '' अम्मा मुन्नी समर के बाद की थी इसलिए घर भर में मैं ही उसे सबसे अधिक प्यार करता था। मेरे गले में बाहे डालकर तो वह बुरी तरह रोई थी .... और उसने जैसे तैसे सिर्फ इतना ही कहा - ''भैया भाभी से बोलना, उन्होंने कुछ भी नहीं किया।''(192)

ननद रूप में-

मुन्नी का व्यवहार अपनी दोनो भाभियों के प्रति सहृदय था। वह हमेशा लगाव व प्रेम से बोलती एवं रहती थी। जब प्रभा पहली बार खाना बनाई थी और नमक को ले कर खूब बवाल मचा, और सभी ने प्रभा को खरी खोटी सुनाई थी उस समय मुन्नी चुप थी मानो वह प्रभा की ओर हो।

बड़ी भाभी खुशामद के स्वर में कपड़े फैलाने को कहती है मुन्नी नखरे से कहती है, ''अच्छा जी, तुम्हें हम ही मिले है काम कराने को ? अपने आप ही क्यों नहीं सुखा आती।''(193)

जिस समय प्रभा अपने मायके से दोबारा आती है और समर के द्वारा खाना मागने पर वह हंसती हुई भाभी से कहती है-''पीछे खाना मिलेगा, पहले मिठाई खिलाओ। बड़ी भाभी के पेट से होने पर वह कहती है, '' भाभी लल्ला होगा तो सारे कपड़े में लूंगी फिर तुम इधर-उधर टालो, हाँ पहले से बात तय है।''(194) समर के द्वारा प्रभा से न बोलने पर मुन्नी को कष्ट होता था और उसकी तटस्तता एवं चुप्पी यही सारा दिन करती थी कि वह प्रभा की तरफ है।

माया देवी-

माया देवी 'उखड़े हुए लोग' उपन्यास के स्त्री पात्रों में से एक है। माया देवी एक स्वछन्द विचार धारा की सभ्रान्त महिला है जो देशबन्धु की रखैल है। देशबन्धु के प्रति आकर्षित होकर वह अपने पति का परित्याग कर देती है। अपने वैयक्तिक इच्छाओं की पूर्ति के लिए वह समाज की परवाह नहीं करती अपनी युवा पुत्री पद्मा की जानकारी में ही वह अनैतिक और अनार्दशवादी प्रवृत्तियों की ओर उन्मुख होती है। देशबन्धु के प्रभाव में आकर वह उसके चंगुल में फंस जाती है। माया देवी के साथ मिलकर देशबन्धु उसके पति को विष देकर

उसकी हत्या कर देता है और उसकी संपूर्ण सम्पत्ति का स्वामी बन जाता है। उपन्यासकार ने जया और पदमा जैसी स्त्रियों की संकल्पना में माया देवी जैसे नारी पात्र को चरित्र माध्यम से वर्तमान समाज में चल रहे अव्यवस्था जो कि केवल काम की अतृप्ति का परिणाम घोषित है।

सौन्दर्य एवं प्रेम-

मानव कितना भी कुरूप हो लेकिन उसके स्वयं के अन्र्तजगत में वह सबसे सुन्दर जीव होता है और यह विचारधारा स्वभाविक रूप से सभी के अन्दर विद्यमान होती है विशेषतया नारी सौन्दर्य को पुरूष सौन्दर्य की अपेक्षा में विशेष एवं सर्वोपरि माना जाता है। कथाकार राजेन्द्र यादव माया देवी के सौन्दर्य का वर्णन करते इस प्रकार किया है। जब शरद पहली बार देशबन्धु जी के यहां जाता और देशबन्धु उससे मिलते है और फिर अपने साथ उसे खाने पर अपनी हवेली ले जाते है और तब शरद डाइनिंग टेबल के चारों ओर पडी कुर्सियों में से एक कुर्सी पर ''जरा भारी शरीर काला चश्मा लगाए महिला को देखा था और खाना के समय चल रही वार्ता के दौरान शरद के द्वारा उपन्यास कार माया देवी के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए लिखा है शरद ने उधर देखा-''आंखों पर काला चश्मा गोल चेहरा सफेद खद्दर की सीधे पल्ले की धोती कानों को आधा ढंकते हुए लहरदार बाल दोनो कानों में जरा ही झटके से हिल उठने वाले चमकदार डयररिंग नाक में किसी चमकदार नगवाली पतली सी सीक चेहरे पर गर्दन तक जरा उदारतापूर्वक लगया गया पाउडर उम्र लगभग 40 वर्ष।''(195)

शरद को देशबन्धु माया देवी और पद्मा को लेकर एवं उनकी सभी बाते बडी रहस्यमय लगती थी। सबसे अधिक आश्चर्य उसे माया देवी पर होता और वह उसके सौन्दर्य को लेकर कहता है- ''अद्भुत स्त्री है ! बालों की पत्तियों से आधे ढंके कान और झूलते इयरिंग जब उसके मस्तिष्क में कौंध गये तो पता नहीं क्यों, उसे बडी विरक्ति लगी।''(196)

जया और शरद को माया देवी और पद्मा सिनेमा साथ चलने के लिए कहती है और जिस समय माया देवी तैयार होकर उन्हें लेने आती है उस क्षण में माया देवी के सौन्दर्य एवं उसके रख रखाव को करते हुए उपन्यास कार कहते है - ''बिलकुल सफेद चिकन का ब्लाउज सीधे पतले की नीली साडी गुजरातियों के ढंग से जिसका पल्ला कमर में ठूस लिया गयाथा, गले में एक लडवाली जंजीर हाथों में तीन सोने की चूडियां वही लहरदार काढे हुए बाल जिनकी एक-एक शेड की तरह उठकर कानों को ढके थी, जरा सी सिर हिलाने से झटक

कर हिल उठने वाले लम्बे इयरिंग मुंह पर लगाए हुए पाउडर की लाइन कानों की जडों के पास पुछने से रह गई थी। किसी पुराने किस्म के लवैण्डर की भीनी लपट मारती खुशबू आंखों पर वही काला चश्मा।''(197)

काम की विकृतता-

इन्द्रियों की भूख मिटाने और काम वासना की तृप्ति के लिए जो यौन सम्बन्ध रखा जाता है या जितने भी कामुक कार्य किये जाते है उसे विकृत काम कहा जाता है। काम का विकृत रूप समाज के निम्न एवं मध्यवर्ग में जितना व्यापक है उतना ही यह समाज के उच्चवर्ग में भी दिखाई देता है।

मायादेवी अपने पति को देशबन्धु की मदद से दवा के नाम पर जहर पिलाकर मार देती है और जीवन भर देशबन्धु से यौन संबंध रखकर अपने काम की तृप्ति करती है। माया देवी का पति करोड़पति थे किन्तु वह अपने पति से संतुष्ट नहीं थी। अपने काम की तृप्ति के लिए वह देशबन्धु के यहां आकर कई दिनों तक रहती गहनों से लदी आती और सब देशबन्धु को देकर चली जाती यहां तक कि अपने पति की हत्या के बाद संपूर्ण सम्पत्ति देशबन्धु को लाकर दे देती है उससे अपने काम की तृप्ति करती रही।(198)

इतना ही नहीं वह तो अपनी बेटी के सहपाठी शरद पर डोरे डालने लगी। उसके काम को उद्दीप्त करने के लिए उसे सिनेमा दिखाने साथ ले गई और अपनी धोती उपर उठाकर शरद की टांगो से अपनी पिंडलियां रगडती रही। उसने शरद को सिनेमा देखना मुश्किल कर दिया।''(199)

अपने अधिकारों के प्रति जागरूक और स्वतंत्र विचार धारा की यह नारी परम्पराबद्ध विवाह में विश्वास नहीं करती। जहां पति परमेश्वर माना जाता है , वही माया देवी देशबन्धु जी के लिए पति का घर उजाड देती है, जहां जड और मूर्ख राक्षसों के सामने संस्कृति की नुमाइश लगाई जाती है।''(200) माया देवी अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए देशबन्धु का साथ प्राप्त करती है। माया देवी का व्यक्तित्व एवं काम अस्थिर है। एक ओर तो वह स्वदेश महल की स्वामिनी है, दूसरी ओर अपने इस जीवन से असंतुष्ट हर पुरुष को रिझाने का प्रयास करती है। आयु में प्रौढ़ होने पर भी शरद जैसे युवाओं पर डोरे डालती है। उसके चरित्र की अस्थिरता को देखकर कपिल शरद को सावधान रहने का संकेत देता है। भाई जान संभालकर रहिए रस चूसकर गंडेरी की तरह फेक देगी कि बादमें बस मक्खियां भिनभिनाया करें। उसने बड़े बड़ों को धोखा दिया है और आप समझिए कि यहां पड़ी कैसे है ? खुलेआम

आप किसी भुलावे में मत रहिए।''(201) चालीस वर्ष की प्रौढ़ होते हुए माया देवी देशबन्धु से प्रेम करने लगती है लेकिन अतृप्ति काम शिकार ही रहती है।

चरित्रहीन–

पहले कहा जा चुका है कि माया देवी चरित्रहीन महिला है। सिनेमा देखते समय शरद पर अपने वक्ष का डालना अपने हाथ से पान खिलाना, नए नए युवकों को अपने वश में करने का प्रयत्न करना इसके उदाहरण है। शरद कहता है सिनेमा देखने मुश्किल कर दिया कमबख्त ने कभी कंधे पर सिर टिका दे, कभी सिर के नीचे हाथ रख दे तब तक मैं तो समझता रहा कि शायद मैं ही गलत समझ रहा हूं, लेकिन घुटनों तक धोती उड़ा कर जबर्दस्ती मेरी टांगों से अपनी पिण्डलियां रगडती रही तब क्या समझता ?''(202)

निर्लज्ज नारी–

माया देवी देशबन्धु जी के यहां आकर प्राय: महीनों रहती। अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बाजार जाकर उधार समान ले आती। कभी–कभी दुकानदार उधार देने पर इंकार कर देता तो वे सगर्व यह कहती कि देशबन्धु जी के घर से हूं और उससे लडने पर अमादा हो जाती। उखडे हुए लोगो में इस तरह के अनेक उदाहरण है। एक उदाहरण पर्याप्त होगा है। ये नवीन ज्वैलर्स है न उनके यहां कहीं उन्हें एक हार पसन्द आ गया उसके दाम बता दिये साढे सात हजार। बोली बिल भेज देना। उस बेचारे ने साफ कह दिया, पिछले साल का अंगूठियों का तीन हजार का बिल तो अभी तक पडा है, आखिर इस सबकी भी हद है ? कोई खैरात खाना तो उसने खोला नहीं बस ताव खा गई बोली तुम जानते नहीं मैं कौन हूं। मैं देशबन्धु जी के घर से हूं। मेरा अपमान किया मैं समझ लूंगी न आग लगवा दी इस दुकान में तो नाम नहीं। उन्होंने तो पूरा बाजार इकठ्ठा कर लिया।''(203)

पतिहंता–

माया देवी अत्यन्त सम्पन्न घराने में विवाहिता थी, किन्तु देशबन्धु जी के प्रेम या वासना में इस सीमा तक बंध गयी कि उन्हें पति की हत्या करानी पडी। सूरज जी ने परिस्थिति का वर्णन इस प्रकार किया है – ''माया देवी के पति आकर तीसरे चौथे दिन यहां बीमार पड गये और फिर मर गये। मर गये यहां शरद ने झटके से पूछा।(204)

बेचारा माया देवी का पति जरा से जुकाम का शिकार था, और उसके लिए जो दवा दी गई उससे वह खाट पर जा पडा। अब अच्छे से अच्छे डॉक्टरों के इलाज शुरू हुए जब हालत

बहुत ज्यादा बिगड गई तो प्रसिद्ध डॉक्टर को लेने के लिए यह देशबन्धु खुद कार से गया। मैं बीमार के पास था। अचानक वह फूट फूट कर रो पडा। सूरज जी मुझे बचाओं मैने अपने कानों से सुना है, आज मुझे जहर दिया जाएगा। अब आप कल्पना कीजिए उस दृश्य की कि एक बीमार के चारों ओर सात आठ आदमी खडे है और उसे जबरजस्ती दवा पिला रहे है। मेरे हाथ में शीशी थी, आवश्यकतानुसार दवा डॉक्टर के पास प्याली थी, मरीज दवा को मना कर रहा था, और यों दूसरे दिन वे चल बसे।''(205)

वंचित नारी–

मायादेवी एवं देशबन्धु जी स्वातंत्र्यान्दोलन के समय से परिचित थे। माया देवी बहुत अच्छे घर की लडकी थी, जो महात्मा गांधी द्वारा चलाये जा रहे पिकेटिंग आन्दोलन लड़कियों के साथ कार्य करती थी। सूरज शरद को बताता है, कि रास्ता गलत हो या सही देशभक्ति दोनो को घसीट कर पास लाई। परिचय घनिष्ठ हुआ और घनिष्ठता प्रेम बन गई कोई आस्वाभाविक बात नहीं थी। इसने वर्षों यह छिपाये रखा कि यह विवाहित है – और प्रेम चलता रहा। और जब यह बात माया देवी को पता चली तो इन्हें बडा मानसिक आघात लगा, बीमार हो गई लेकिन फि र इसने अपने को सभांल लिया और कह दिया कोई बात नही – मैंने तुमसे प्रेम किया है – तुम्हारी आत्मा और गुणों से प्रेम किया है। तुम विवाहित हो – यह बता देते तो अच्छा था। वे इसके पीछे अंधी थी और कहावत की यह बात की यह बात की अगर यह मांगता तो शायद गर्दन काट कर भी देती। विवाह माया का हुआ और ऐसे आदमी से हुआ जिसकी लाखो की सम्पत्ति थी, लेकिन पता नहीं वह किस ज्वर में अंधी थी कि कभी पति की चिंता नहीं थी। कभी–कभी भाग आती और इस कम्बख्त के यहां हफ्तों रहती। पति ने जोर जुल्म भी किया इसे भी धमकी भरे खत आये। आखिर माया देवी के पति अपनी पुत्री पदमा की रक्षार्थ उसका खयाल करके समझौता करना पडा कि साल में एक बार माया देवी इसके पास आ सकेगी। लेकिन इसके अब एक चालाकी चलनी शुरू कर दी। जब इच्छा होती दौरे का बहाना करके आ जाता कि व्यापार में घाटा हो रहा है, बिजनेस नहीं चलता अब क्या किया जाए और माया देवी पति के घर से ला लाकर इसे देती। लोगों का अनुमान है कि बीस पच्चीस लाख रूपया इस तरह ला लाकर माया देवी ने इसके यहां भरा। कभी–कभी तो हीरे पन्ने जडे हुए गहनों से लदी आती और बिल्कुल सूनी कलाइयों लिए जाती।''(206)

प्रतिक्रियावादी नारी-

कुछ दिनों बाद मायादेवी को पता लगा कि उसकी कीमत एक रखैल से अधिक नहीं है। दिखावे के लिए देशबन्धु जी माया देवी पर ऐसा मरता, न्यौछावर करता, कि माया देवी उसके सारे खून माफ कर देती। जब असलियत फिर सामने आती तो महाभारत सा मचता। इस प्रकार माया देवी जी के सम्बन्ध में सूरज कहता है कि देशबन्धु के इस रवैये से माया देवी के हृदय में विद्वेषात्मक प्रतिक्रिया जगा दी है जो अब धीरे धीरे उसका स्वभाव बन गई है। वह देशबन्धु को चिढाने के लिए ही जैसे हर नए आदमी पर डोरे डालती है।''(207)

सेविका नारी-

मायादेवी स्वातंत्र्य आन्दोलन से जुडी थे। देशबन्धु जी भी इस कार्य में लगे थे। परस्पर परिचय आगे चलकर प्रेम में बदल गया और देशबन्धु ने मायादेवी का शारीरिक और आर्थिक शोषण खूब किया। माया देवी उनके आकर्षण में बंधी थी। उन्होंने देशबन्धु को आत्मा से प्रेम किया था। वे उससे लडती झगडती किन्तु उसके बीमार पडने पर सेवा भी करती।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. असामान्य मनोविज्ञान डॉ. रामकुमार ओझा पृ. 17 से उद्धृत
2. वही – पृ. 17
3. समग्र उपन्यास (एक सडक सत्तावन गलियां) पृ. 39
4. वही – पृ. 41
5. वही – पृ. 41
6. वही –पृ. 33
7. वही –पृ. 49
8. वही –पृ. 50
9. वही –पृ. 73
10. वही – पृ. 22
11. वही – पृ. 49
12. वही – पृ. 49
13. वही –पृ. 28
14. वही –पृ. 60
15. वही –पृ. 62
16. वही –पृ. 60
17. वही –पृ. 60
18. वही –पृ. 22
19. वही –पृ. 22
20. वही –पृ. 22
21. समग्र उपन्यास (डॉक बंगला) पृ. 214
22. वही –पृ. 215
23. वही –पृ. 216
24. वही –पृ. 217
25. वही –पृ. 217
26. वही –पृ. 218

27. वही –पृ. 288
28. वही –पृ. 229
29. वही –पृ. 240
30. वही –पृ. 241
31. वही –पृ. 241
32. वही –पृ. 242
33. वही –पृ. 230
34. वही –पृ. 231
35. वही –पृ. 231
36. वही – पृ. 237
37. वही – पृ. 237-38
38. वही –पृ. 239
39. वही –पृ. 218
40. वही –पृ. 226-227
41. वही –पृ. 230
42. वही –पृ. 231
43. वही –पृ. 216
44. वही –पृ. 218
45. वही –पृ. 226
46. वही –पृ. 231
47. वही –पृ. 232
48. वही –पृ. 238
49. वही –पृ. 257
50. वही –पृ. 257
51. वही –पृ. 258
52. वही – पृ. 258-59
53. वही –पृ. 283
54. वही – पृ. 227

55. वही – पृ. 230
56. वही –पृ. 228
57. वही – पृ. 219
58. वही –पृ. 228-229
59. समग्र उपन्यास (वही बात) पृ. 517
60. वही – पृ. 542
61. वही – पृ. 549
62. वही – पृ. 517
63. वही – पृ. 517
64. वही – पृ. 520
65. वही –पृ. 520
66. वही – पृ. 523
67. वही – पृ. 525
68. वही –पृ. 546
69. वही – पृ. 524
70. वही – पृ. 531
71. वही – पृ. 531
72. वही – पृ. 533
73. समग्र कहानियाँ (सफेद तितलियँ) पृ. 66
74. वही – पृ. 62
75. वही – पृ. 63
76. वही – पृ. 64
77. वही – पृ. 65
78. वही – पृ. 66
79. समग्र कहानियाँ (तीन दिन पहले की रात) पृ. 187
80. वही –पृ. 187
81. वही – पृ. 188
82. वही – पृ. 189

83. वही – पृ. 190

84. वही – पृ. 190

85. वही – पृ. 191

86. वही –पृ. 196 (प्रेम का विकृत रूप)

87. वही – पृ. 196

88. वही – पृ. 197

89. वही – पृ. 197

90. समग्र कहानियाँ (मांस का दरिया) पृ. 340

91. वही – पृ. 340

92. वही – पृ. 341

93 वही – पृ. 340

94. वही – पृ. 344

95. वही – पृ. 343

96. अनदेशे अनजाने पुल, राजन्द्र यादव पृ. 7

97. वही – पृ. 8

98. वही – पृ. 11

99. वही – पृ. 12-13

100. वही – पृ. 18

101. वही – पृ. 18

102. वही – पृ. 18

103. वही – पृ. 63

104. वही – पृ. 63

105. वही – पृ. 78

106. वही – पृ. 79

107. वही – पृ. 79

108. वही – पृ. 80-81

109. वही – पृ. 82-83

110. वही – पृ. 82

111. वही – पृ. 91

112. वही – पृ. 93

113. वही – पृ. 93

114. वही – पृ. 94

115. वही – पृ. 95

116. वही – पृ. 96

117 वही – पृ. 97

118. वही – पृ. 36

119. वही – पृ. 40

120. वही – पृ. 20-21

121. वही – पृ. 22

122. वही – पृ. 23

123. वही – पृ. 34-35

124. वही – पृ. 43

125. वही – पृ. 47

126. वही – पृ. 64

127. वही – पृ. 66

128. वही – पृ. 68

129. वही – पृ. 77-80

130. वही – पृ. 101

131. वही – पृ. 130-31

132. राजेन्द्र यादव कथ्य और दृष्टि पृ. 188

133. अठारह उपन्यास राजेन्द्र यादव पृ. 197

134. शह और मात पृ. 34

135. वही – पृ. 51

136. वही – पृ. 34

137. वही – पृ. 46

138. वही – पृ. 49

139. वही – पृ. 119

140. वही –पृ. 121-122

141. वही –पृ. 103

142 वही – पृ. 109

143. वही – पृ. 109

144. वही –पृ. 14-15

145. वही – पृ. 17

146. वही – पृ. 19

147. वही –पृ. 131

148. वही – पृ. 24

149. वही –पृ. 30

150. वही –पृ. 117

151. एक इंच मुस्कान पृ. 15

152. वही –पृ. 18

153. वही –पृ. 26

154. वही – पृ. 16

155. वही – पृ. 19

156. वही – पृ. 23

157. वही – पृ. 24

158. वही – पृ. 74

159. वही – पृ. 75

160. वही – पृ. 12

161. वही – पृ. 42

162. वही – पृ. 63

163. वही – पृ. 87

164. वही – पृ. 123

165. वही –पृ. 124

166. वही –पृ. 124

167. वही – पृ. 155

168. वही – पृ. 158

169. राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में व्यक्ति एवं समाज पृ. 31

170. एक इंच मुस्कान पृ. 6

171. मत्रविद्ध एवं कुलटा पृ. 93

172. वही –पृ. 112

173. वही – पृ. 113-114

174. वही – पृ. 114

175. वही – पृ. 118

176. वही – पृ. 122

177. वही – पृ. 121

178. वही – पृ. 154-155

179. वही – पृ. 145

180. वही – पृ. 153-154

181. वही – पृ. 122-123

182. वही – पृ. 118

183. वही – पृ. 117

184. वही – पृ. 142

185. वही –पृ. 173

186. वही – पृ. 29

187. वही –पृ. 29

188. वही – पृ. 68

189. वही – पृ. 69

190. वही –पृ. 69

191. वही – पृ. 69

192. वही – पृ. 29

193. वही – पृ. 70

194. वही – पृ. 71

195. वही – पृ. 30
196. वही – पृ. 30
197. वही – पृ. 27
198. उखडे हुए लोग पृ. 43
199. वही – पृ. 51
200. वही – पृ. 98
201. वही – पृ. 164
202. हिन्दी उपन्यास प्रेम और जीवन डॉ. शान्ति भारद्वाज पृ. 240
203. उखडे हुए लोग पृ. 164
204. वही – पृ. 140
205. वही – पृ. 368-69
206. वही – पृ. 367-68
207. वही –पृ. 369

अध्याय-7

- काम, प्रेम एवं सौन्दर्य की दृष्टि से आलोच्य कथाकरों का योगदान

काम प्रेम एवं सौन्दर्य की दृष्टि
आलोच्य कथाकारों का योगदान

मुनष्य की जय यात्रा का लक्ष्य अतिन्द्रिय का अर्निवचनीय आनंद की अनुभूति है। इस हेतु वह कायिक और मानसिक या आध्यात्मिक प्रयत्न करता है। कायिक प्रयत्नों में आंगिक संचालन तथा मनावेगों की अभिव्यक्ति आती है। ये मनोवेग देश काल, परिस्थिति सीमा से परे प्राय= एक रूप होते है। जिसमें काम सर्वप्रमुख स्थान रखता है। भगवान श्री कृष्ण भी गीता में कहा है ''कि इन्द्रियों की अनुभूति में मैं काम हूं।''

शोध प्रबंधन के प्रथम अध्याय में काम उसके विभिन्न रूपों की चर्चा करते हुए, यह तथ्य स्थापित करने का प्रयास किया है कि मानव हृदय काम रति परायण है। इसी से संसार का विकास होता है व्यक्ति के सहज विस्तार के मूल में यही काम भाव कारक रूप में काम करता है। जो क्रमश: राग स्वविस्तार या पारस्परिक संयोग या मिलन की इच्छा मौलिक वासना है। पश्चिमी बिचारको मे काम का मनोवैज्ञानिक या कायिक स्तर पर विवेचन किया गया है जिसे हम कह सकते है कि काम ही प्रेम है। काम ही सुख है काम ही दाम्पत्य आनंद की प्राप्ति संतुष्टि एवं आधार भूमि है। इस काम को लौकिक प्रेम तथा अलौकिक प्रेम के रूप में विभक्त कर अतिन्द्रिय आनंद की प्राप्ति हेतु जहां एक ओर भक्ति भाव का प्रचलन हुआ वहॉ सांसरिकता भौतिकता या लोभ आर्कषण के कारण इसके विकृत रूप भी समाज में ही नही साहित्य में भी उनके व्यवहारिक रूप चित्रित है। भारतीय साहित्य एवं दार्शनिक ग्रन्थों में इसका विवेचन अत्यन्त सूक्ष्म रूप में किया गया है। जिसमें एक ओर यह सुचि, उज्जवल, मेध्य, अनिर्वचनीय और पवित्र कहा गया है वहीं दूसरी ओर शारीरिक सुख की अनुभूति का कारक तत्व काम माना गया है नीति शास्त्र में इसके अन्यन्ता सयंम, सात्विकता, अत्यन्ता, सदगुणों से युक्त काम को काम्य माना गया है।

हिन्दी उपन्यास कहानियों में या यों कहें कि भारतीय काव्य शास्त्र में इसे उज्जवल रूप में प्रस्तुत किया गया है। इस सिद्धांत के पतल्वन हेतु नर नारी के मध्य परस्पर आकर्षण के मूल में नारी के आंगिक सौन्दर्य देह, यष्टि का समानुपातिक चित्रण के साथ लीला, विक्षप्ति कोमलता मष्णिता एवं पुरूष के सुगठित वाह्य आकार के साथ ही पौरूष शक्ति का उल्लेख कर काम प्रेम का चित्रण हिन्दी के उक्त साहित्य में दिखाई देताहै। प्रेमचन्द युगीन कथा साहित्य मे नैतिकता, सदाचार, त्याग, अन्यन्ता का बोल बाला था। इसलिए काम का स्वस्थ रूप का अधिक चित्रण किया गया है। किन्तु उसके पश्चात पश्चिमी विचारों की आंधी प्रयोग

प्रगति के नाम पर मानव मन की जटिल काम सम्बन्धी ग्रन्थियों का सुलझाने के लिए स्वछन्द, उन्मुक्त स्वेराचार्य परक क्रिया कलापों द्वारा काम प्रेम और सोन्दर्य का चित्रण किया गया जिसमें सामाजिक प्रतिबंधों के प्रति विद्रोह की झलक मिलती है। साठोत्तर कथा साहित्य ने देशगत आर्थिक प्रगति के विविध आयामों के विस्तार के कारण पश्चिमी जीवन शैली को अन्धानुकरण कर नारी को बिकाऊ वस्तु समझकर उसे विज्ञापन बाजी का माध्यम बनाया गया। जिसके कारण यह प्रेम और काम क्षणिक मिलन जन्य आनंद के साधन हो गये। सत्तर के दशक में उपभोक्ता वादी दृष्टि के कारण जहां एक ओर भूमण्डीकरण हुआ जनसंख्या विस्फोट को रोकने के लिए सन्तति नियमन हेतु जिन साधनों का अविष्कार प्रचार किया गया उससे समाज के नैतिक नियमों का क्षरण ही अधिक हुआ है। दूसरी ओर महिला सशक्तिकरण की वैचारिक ऑधी से नारी को अपने देह या रूप का वास्तविक ज्ञान हुआ और उसे उसने अपने स्वार्थ साधनों का एक अमोघ अस्त्र मानकर स्वत: वह अपनी प्रगति के सोपनों पर आरूढ होने का प्रगतिकरणी दम्भ भरने लगी।

कमलेश्वर एवं राजेन्द्र यादव वैचारिक दृष्टि से साम्य वादी विचार धारा के चिन्तक समर्थक और पुरूष पुरूस्कर्ता है। यहॉ यह लिखना समीचीन नहीं प्रतीत होता कि उक्त चिंतन के कारण उनके व्यवहारिक जीवन मे कितनी विसंगतियां हुई है जिसका दिग्दर्शन आलोच्य कथाकारों के साहित्य में यर्थाथ रूप में मिलता है। साम्यवाद के सामाजिक मूल्य सिद्धांतों यह बद्धमूल धारणा है कि समाज में दो ही वर्ग स्त्री पुरूष होते है। अत: नैतिकता मर्यादा सयंम यहां व्यर्थ है। नारी पुरूष तो ऐसे उन्मुक्त समाज के सदस्य माने गये जहां वैवाहिक संस्था का कोई अस्तित्व ही नहीं है। इसलिए राजेन्द्र यादव के उपन्यास और कहानियों में सुखद, आर्दश संयमित दाम्पत्य जीवन की झलक कम ही मिलती है क्षणिक वासना की तुष्टि नारी शरीर के योग या बलात्कार के प्रयासों की अथवा दाम्पत्य जीवन की विसंगतियों के पीछे रूढियों, अंधविश्वासों के विरूद्ध पात्रों का सृजन कर उनके माध्यम से जिस काम और प्रेम का चित्रण राजेन्द्र यादव ने किया है वह बहुत आदर्श तो है नहीं। उसके नकारात्मक पक्ष का चित्रण ही अधिक किया गया है। निन्नी, कुलटा (मिसेज तेजपाल) सुजाता, माया प्रभा, पद्यमा, अमला ऐसी ही नारी पात्र है जो सामाजिक बन्धनों को तोडकर अथवा अपने अहंकार की तुष्टि हेतु अपने आंगिक हाव भाव लीला विक्षप्ति को अस्त्र बनाकर पुरूष को आकृष्ट कर उसे अपने प्रगृति के सोपान रूप में चित्रित किया है। अधिकांश नारी पात्र की स्वैराचार की समर्थनिक है। नैतिकता त्याग ममत्व मार्धुय निश्चक्षल समर्पण का उनमें नितांत अभाव है। ऐसा काम या तो अपने वस्तु रूप में चित्रित है अथवा उसके अस्वस्थकर दु: खदायी परिणति

वाले या विकृति मानसिकता में परणित होकर रह गये है। चन्दा निन्नी माया देवी, मुन्नी ऐसे नारी पात्र है । अपवाद स्वरूप निन्नी को छोंड दिया गया तो प्राय: सभी नारियां अपरूप सुन्दरी है । मिसेज तेजपाल, माया, अमला ऐसी नारी पात्र है जो अपने पति से असंतुष्ट है उनका दाम्पत्य जीवन नीरस उबाऊ या दैनन्दिन शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये किये गये अन्य कार्यों की भांति है । त्रासद जिन्दगी से त्रस्त होकर नखलिस्तान के रूप में इन्होंने जिन पुरूषो का आश्रय लिया वहां भी उन्हे असन्तोष हो प्राप्त हुआ क्योंकि एक बार पराये पुरूष का संसर्ग जनित आनंद प्राप्त करके कोई भी नारी अपने पति के प्रति संतुष्ट हो ही नहीं सकती । दाम्पत्य जीवन मे जो आकर्षण मिलन जन्य आनंद की प्राप्ति होती है इसकी आदर्श परिणति मातृत्व वात्सल्य और त्याग में परिणति होना चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता तो नारी मात्र विलास पुत्तलिका या उपभोग की सामाग्री या उत्पाद मात्र होती है। काम जन्य उश्रृखंलता, पर पुरूष के प्रति आकर्षण उद्दाम मासंलता को जन्म देता है। अत: नारी हो या पुरूष कभी भी परस्पर दाम्पत्य जीवन की दिव्य अलौकिक त्याग और समर्पण प्रधान झलक नहीं देख पाती ऐसी नारियां कुण्ठित होकर विलास के तीव्र गछवर गर्त में आकण्ठ निमग्न हो जाती है राजेन्द्र यादव ने काम और प्रेम जनित आनंद के स्वस्थ और अन्यय परक निष्ठा का चित्रण कम ही स्थानों में किया है। इस स्वस्थ रूप के लिए उन्होंने गौण पात्रों का आश्रय लिया है।

यहां यह ध्यातव्य है कि राजेन्द्र यादव ने नारी सौन्दर्य के प्राक्तन आंगिक सौन्दर्य का चित्रण नख शिख पद्धति पर नहीं किया अपितु उसके समस्त प्रभाव की प्रतिछवि अंकित की है। यत्रतत्र देहकांति नारियों के अनुरूप उनके अंगो की क्षीणता या विस्तार आवयविक कठोरता तथा आकषर्ण के कारक तत्वों का वस्तु परक उल्लेख किया है। उसके सौन्दर्य के चित्रण की यह विशेषता स्पष्ट परिलक्षित होती है कि उन्होने कुरूपता में भी सौन्दर्य के दर्शन किये है। राजेन्द्र यादव की यह उपपत्ति शोधकर्त्री को ठीक लगती है, कि कुरूपता के सापेक्ष में ही सुन्दरता का महत्व है यदि दुनिया में सभी सुन्दर सुखी, सम्पन्न हो जायेंगे तो इन मूल्यों की महत्ता नष्ट हो जायेगी। राम की महत्ता तभी तक है जब रावण है। दु:ख निर्धन असुन्दर कुरूपता के होने पर ही सुन्दरता का महत्व अक्षुण्य रहता है। तात्पर्य यह कि राजेन्द्र यादव ने काम के विकृतरूप की चर्चा उसके कारक तत्वों तद्जनित आकांक्षाओं वासना परक क्रियाओं की चर्चा कर ध्वनि के रूप में प्रेम के सात्विक काम के मूलपरक सौन्दर्य का चित्रण करना उनका लक्ष्य रहा है। वे अपरोक्ष शैली के माध्यम से स्वस्थ काम को परिभषित करना चाहते है। इसलिए आवश्यक यह है कि पहले हम अस्वस्थ काम का रूप समझ ले वस्तुचित्रण की

यह शैली राजेन्द्र यादव की अपनी निजी शैली है। उन्होंने सौन्दर्य को वस्तु रूप में ही नही देखा अपितु उसे एक मूल्य या दृष्टिगत रूप में चित्रित किया है।

सारांश यह है कि राजेन्द्र यादव के कथा में नारी सौन्दर्य का आंगिक विन्यास नख शिख पद्धति पर न होकर या तो समस्त देह यष्टि जन्य सौन्दर्य अथवा प्रौढा अवस्था के कारण नारी में जो परिपक्वा अवस्था की सहज स्वभाविक सोन्दर्य दिखाई पडता है उसके स्वस्थ रूप की चर्चा की है। अपने पति के साथ वैवाहिक जीवन की सुखद स्थितियों नैतिक मान्यताओं का चित्रण सीमित स्थानों में कर राजेन्द्र यादव ने सम्भवत: सप्तदशकोत्तर समाज की स्थितियों का चित्रण नारी परिपेक्ष्य में किया है। इड, इगो सुपर इगो के कारण जो कुण्ठा विकृतियां यत्र तत्र समाज में दिखाई देती है कथाकार ने उसके अस्वस्थ रूप का चित्रण कर यह प्रदर्शित करने का प्रयास किया है कि नारी हो या पुरूष उसके प्रत्येक क्रिया कलाप में काम के सहज सरल रूप और अतृप्त अकांक्षा के कारण उत्पन्न विकृतियां किस प्रकार नारी चरित्र को मूल्यहीन कर देती है। पारिवारिक विघटन के मूल में भी यही दृष्टि काम करती है। सारा आकाश की नायिका प्रभा समान्य सुन्दरी है किन्तु प्रारंभ से ही पति की उपेक्षा का शिकार होकर ऐसी विद्रोहणी नारी बन जाती है जिसे मनोवैज्ञानिक भाषा में दु:खवादी या स्वपीडनवादी (Sydist) बन जाती है। ऐसी नारियाँ अपने शरीर पर ही अत्याचार कर पुरूष को मजबूर कर देती है। बाद में समर और प्रभा के जिस जीवटपन कष्टो में भी अपने लक्ष्य के प्रति एकनिष्ठता बनाए रखना पति को प्रेरणा देकर उसे उन्नति के मार्ग में ले जाने का कार्य भी नारी ही करती है। मंत्रविद्व की इन्दु और कुलटा की बीनू एक इंच मुस्कान की रंजना उखडे हुए लोग की जया पद्यमा ऐसी युवती विवाहिता अविवाहिता नारियां है जिसमें प्रेम के सहज रूप मिलते है थोडी बहुत नोक झोक हल्का पति के प्रति अविश्वास या बिना विवाह किये पति पत्नी की तरह रहने के पीछे राजेन्द्र यादव का मार्क्सवादी दृष्टि ही मुखरित हुआ। इसे हम अत्यन्त संक्षिप्त रूप में बिन्दुवार यों प्रस्तुत कर सकते है –

1. कथाकार ने संयुक्त और एकल_परिवार में रहने वाली नारियों के बीच सौन्दर्य की चर्चा की है।
2. यह सौन्दर्य चित्रण वाहय रूप के साथ दृष्टि परक या वस्तु परक तो है ही मूल्य बोध की दृष्टि से पारिवारिक जीवन चलाने की चिंता, पुत्र के बडे हो जाने पर सुन्दरी पुत्र वधु लाने की आकांक्षा एक साथ परिवार में रहकर आर्थिक समस्याओं से जूझती हुई नारियों के चित्रण है।

3. प्रौढा अवस्था सास, ननद, जेठानी, देवरानी, प्रेमिका, बहन, पुत्रवधू , पत्नी, सखी आदि सामाजिक रूपों के परिप्रेक्ष्य में रूढियों अन्धविश्वासों के बीच पनपते ईर्ष्या द्वेष के मध्य दाम्पत्य जीवन की वस्तु परक व्याख्या की है ।

4. प्रौढावस्था नारियों के सौन्दर्य में कर्मनिष्ठा, आत्मप्रंशसा पूर्व कालीन युवास्थाा ने अपनी प्रशंसा से आत्म मुग्ध नारियों की चर्चा इनके उपन्यासों मे मिलती है ।

5. सौन्दर्य के वाह्य रूप प्रभाव चित्रण के साथ साहर्चय जनित प्रेम की उत्पत्ति वासना की पूर्ति सामाजिक मर्यादायों का उलंघन कर फि र भी एक निष्ट रहने वाली नारियों का यथार्थ चित्रण राजेन्द्र यादव के प्रेम चितंन की अपनी दृष्टि है ।

6. राजेन्द्र यादव ने काम प्रेम और सौन्दर्य के बहुआयामी छवियों तदजन्य प्रभावों क्रियाकलापों या कारक तत्वों की चर्चा मनोवैज्ञानिक पद्धति पर किया है ।

7. काम के विकृत रूप या सौन्दर्य के विरूपावस्था का चित्रण भी उन्होने बहुत सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के आलोक में किया है ।

8. काम के विकृत रूप चित्रण में कथाकार ने प्रत्यच्छ और अप्रत्यक्ष कथा, घटना-व्यापार, कथोप कथनों के साथ इंटिरियर मोनोलांग या आंतरिक एकल वार्तालाप नामक मनोवैज्ञानिक शैली का सहारा लिया है ।

9. जया के चित्रण में इड इगो के अर्न्तद्वन्द का हैलो निशन (Hellonusn)स्टाइल अवास्तविक किन्तु सत्य प्रतीत होने वाली घटनाओं के माध्यम से नारी चरित्र और उसके काम प्रेम जनित संवेगो, भावनाओं का चित्रण बहुत स्वभाविक रूप में हुआ है । इसी काम की विकृति के कारक तत्वों के रूप में कुरूपता के कारण मानसिक संवेगों में निन्नी के चिन्तन, परिस्थतियों, स्वपरपीडन अन्धविश्वास की आस्था, अनायास चामत्कारिक रूप में ईसुरी शक्ति के द्वारा सुन्दर बन जाने की परिकल्पना अत्यन्त मनोवैज्ञानिक ढंग से किया है । विकृता अवस्था में इन वर्जित फ ल के स्वाद के चखने के लिए नारी की छटपटाहट अनजानी वेदना दिवास्वप्न और यथार्थ के धरातल पर आते ही उसकी अरन्तुद विडम्बनाओं का जो चित्रण कथाकार ने किया है वह भले ही सत्यत्र हो किन्तु इतना तो सत्य है कि आज के विकास वादी युग में बालिका से किशोरी या युवती न बनकर सीधे सब कुछ जानने वाली स्त्रियों की बहुलता राजेन्द्र यादव के नारी चरित्रों की सबसे बडी विशेषता है ।

10. राजेन्द्र यादव की नायिकाएं चाहे वह प्रेमिका हो पत्नी अविवाहिता या किशोरी (Teen Agers) टीन एजर्स सबके आंतरिक मनोभाव का मूल्य परख चित्रण नारी पक्षों के विविध पक्षों के परिपेक्ष्य में किया है। इन गुणों में त्याग एकनिष्ठ सदाचार ममत्व निश्चल समर्पण उदारता कष्टसहिष्णुता, परोपकार इत्यादि अनेक गुणों का चित्रण अपने कथा साहित्य में किया है। इतना अवश्य है कि सौन्दर्य के प्रति अलग चाहत उसे औजार या अस्त्र के रूप में मारक सौन्दर्य बनाकर पुरूष के अपने कौलिन्य अभिजात्य पन के प्रति पुरूषों का जो सहज आकर्षण होता है। आयास या अनायास ही पुरूषों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए नारियां जो कि लीला विलास भौहों का संचालन बालों को झटकना पल्लू को अनावश्यक रूप से ठीक करने की प्रवृत्ति के पीछे कथाकार की यह उत्पत्ति है कि पुरूषों को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए नारियों का अपना दुपट्टा या अपनी साडी के आंचल को संभालने सुधारने अथवा कटिविशेष में लय उत्पन्न कर अपने सौन्दर्य जनित लालशा कों देखने का चित्रण कथाकार ने प्राय: किया है।

11. अत्यन्त संक्षेप में राजेन्द्र यादव के नारियों के विभिन्न चारित्रिक पक्षों को प्रकट करते हुए उनके काम प्रेम और सौन्दर्य को यदि एक वाक्य में कहा जाए तो राजेन्द्र यादव का यह कथन शोध कर्त्री को यह बार-बार स्मरण हो आता है कि चाहे बालिका हो या बुढिया कौन ऐसी नारी है जो अपनी प्रशंसा पुरूष द्वारा सुनकर बेहोश नहीं हो जायेगी। फिजोलॉजी (Phyjology) या कायविज्ञान की दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि ईश्वर ने नारी को दो अप्रत्यच्छ ऑखो पीछे भी दी है। नारी की ऑखें अपनी पीठ पर लोलुप दृष्टि पडने का अनुभव वो इन्ही अदृश्य नेत्रों से कर लेती है और अपने मारग सौन्दर्य का प्रभाव देखने का कौतुहल प्रत्येक नारी मे जन्मजात रूप से होता है। कथाकार की यही विशिष्ट दृष्टि उसे समकालीन कहानी कारों के नारी परख दृष्टि के कारण अलग करती है। इसलिए राजेन्द्र यादव कहीं न कहीं विवादों में भी घिरे रहते है। और आज के इस भौतिकता वादी युग में आत्म विज्ञापन का यह भी एक बडा ढंग है जो बढा कारगर या प्रभावी सिद्ध होता है।

कालीदास ने लिखा है रम्याणि वीक्ष्य मधुसंरच निशम्य शब्दान पर्यत्सुकी के माध्यम से उस अतीन्द्रिय सुख कारक सौन्दर्य की चित्रित किया है जो मनसा वाचा अवाक अगम अगोचर है। विश्व के सम्पूर्ण साहित्य का संग्रह सौन्दर्य प्रेम और काम की दृष्टि मे किया जाए

तो सम्भवत: उसके पृष्ठो से सारी सम्पूर्ण धरती आच्छांदित हो जायेगी । बात यह है कि नारी हो या पुरूष सौन्दर्य सभी को अभिभूति ही नहीं करता आनंद के सागर मे निमग्न कर देता है कमलेश्वर ने सौन्दर्य की अपेक्षा वर्णन के चित्रण में कालीदास का अनुसरण किया है जिसे बार–बार देखने के उत्सुकता जागृत होती है वही तो अपरूप सौन्दर्य है । कथाकार ने किशोर नायक नायिकाओं के मध्य उपजे आकर्षण जन्य सौन्दर्य का जिस सरलता और स्वभाविक से चित्रण किया है वह नायिका के किशोरवय में प्रवेश की सूचना ही नहीं देता अपितु अविश्वसनीय औत्सुक्य का भी चित्रण किया है भला कहीं ऐसा भी सम्भव है कि पीला गुलाब नायिका के बेणी में लगते ही लाल रंग में परिवर्तित हो सकता है किशोरावस्था और मुग्धा नायिका के इस आकर्षकण का चित्रांकन काली आंधी की मालती के माध्यम से किया है । जिस सौन्दर्य को देख प्रेमी मुग्ध है और नायिका के प्रति आत्मनिवेदन के लिए जिस घटना का चित्रण कथाकार ने किया है उसने विसफारित नयनों से नायिका का अल्हणपन ही नहीं झलकता अपितु उसे सौन्दर्य के प्रति गर्व भी होता है । मुग्धा रूपगर्विता के इस स्वरूप का चित्रांकन कथाकार ने इस प्रकार किया है –''उस बाग में कोई बाते कर रहा था ये गुलाव लाल क्यों हो जाते है लडके की आवाज भी सच । लडकी बोली हाँ मैं तो तुम्हें भी एक पीला गुलाब देती है देखती हूं लाल होता है नहीं । वहीं तुम्हारे जूडे में यह पीला गुलाब लगाउंगा जब तुम छतरपुर पहुंचनां तब देखना यह मेरी यादों भरी आंखें इसे ही ताकती रहेंगी और यह लाल हो जायेगा ।

कमलेश्वर ने मुख्य रूप से तीन प्रकार के सौन्दर्य का चित्रांकन किया है । मुग्धावस्था के पश्चात सद्य: विवाहिता परिणिता नायिका के सौन्दर्य देह परिमल और उसके सामीप्य के लिए व्याकुल पति जिसके बगल में एक ही कमरे में उसका मित्र लेटा है ऐसी नाजुक विषय द्विविधाग्रस्त सौन्दर्य और प्रेम का कुछ मांसल मिलन की कुछ व्याकुलता, उद्याम लालसा का चित्रण कथाकार ने एक विचित्र परिस्थति में किया है । तीसरा आदमी की चित्रा के सद्य: परिणिता सुहाग की लालिमा से आरक्त नववधू का लज्जारूण मुख क्रांति नेत्रों की गहराई में डूबने को तत्पर उसका सौन्दर्य चित्रण उतना महत्वपूर्ण नहीं रह पाया, जितना कि दृष्टा की लालच भरी दृष्टि किसी न किसी बहाने एक निगाह से ही सही पत्नी की मुख कन्ति को झलक पाने के लिएपति की उत्सुकता को समझा ही जा सकता है । कथाकार ने लिखा है – ''उसने एक नजर मुझे देखा था और मैं उसे देखता रह गया । भरे हुए सिन्दूर की लाली बाहर निकल आई थी माथा पसीने से भींगा हुआ था और चेहरा भी पसीजा हुआ था । इस वैरन्तर सौन्दर्य में मिलन की जो आकुलता थी पिया की नशीली देह परिमल हाथों के प्रथम स्पर्श से

रोमांच पुलक सिहरन का चित्रांकन कथाकार ने बडी स्वाभाविकता से किया है। उसने लिखा है –''मेरा स्पर्श पाते ही जैसे उसका शरीर पसीजने लगता है और बडी मोहक सी गन्ध उसके बदन से उठती बहुत देर तक मैं उसके अंग प्रत्यंग को देखता रहता था। उसके पैरों के नाखूनों और जब उसकी आंखों में झाकता तो वे आंखे एक क्षण बाद ही झपक जाती थी। कथाकार ने सौन्दर्य का प्रभाववादी चित्रण किया है।

सौन्दर्य का एक तीसरा भी पहलू कथाकार ने प्रस्तुत किया है जो प्रौढ सौन्दर्य है। जिसमें धीरता स्थायीत्व वयस्यजन्य लिपि के स्पष्ट हस्ताक्षर जिसके चेहरे में अंकित है ऐसे सौन्दर्य का रूप लौटे हुए मुसाफिर की नसीबन में दिखाई पडता है। इस सौन्दर्य में लावण्य सौकुमार्य सुचिकणता नहीं है, फिर भी सौन्दर्य का दृष्टा की वस्तु होती है, जिसे हम सत्तार की दृष्टि से देखते है। वह नसीवन को पहली बार देखता है –जब उसके नक्श कानों में पडी चांदी की बालियां उलझे हुए बालों के बीच चेहरे की उभरी हुई झुर्रियां गरदन के पास उभरी हुई नसें और सूखी हुई छातियां हाथों की उंगली के काले उपटे हुए नाखून सूखी बाहों में तार की तरह उभरी हुई नसें और सांस से जीवित होने का भ्रम होता हुआ पूरा शरीर। इस सौन्दर्य चित्रण में दृष्टा के मूल्य बोध का चित्रण दिखाई पडता है क्योंकि नारी सौन्दर्य के जिस रूप का चित्रण साहित्यकार क्षणे–क्षणे नवताम रूप में करते है प्रेमी पति अथवा दृष्टा उत्सुक होकर जिसे निर्णनिमेष निहारता है ऐसा सौन्दर्य तो नसीबन का है नहीं, फिर भी ढलती वयस्का जो सौन्दर्य है प्रौढता है आचरणगत गरिमा है उसका चित्रण यहां पर हुआ है।

कमलेश्वर ने सौन्दर्य के साथ प्रेम के भी अनेक प्रतिच्छवियॉ विम्बात्मक रूप में प्रस्तुत की है यह काम वासना स्वस्थ्य उदात्त तथा विकृत रूप में अन्य पुरूषों से सम्बन्धों के साथ वस्त विक पति पत्नी के बीच उपस्थित तीसरे की उपस्थिति के कारण दाम्पत्य जीवन में आई हुई दरारों का चित्रण तो है ही साथ ही नारी जब आर्थिक या महत्वाकांक्षा को लक्ष्य मान लेती है वहां सामाजिक सम्बन्ध छोटे पड जाते है।

सौन्दर्यविभूति काम के चित्रण में कमलेश्वर ने मनोविज्ञान का सहारा लिया है। मन के गत्यात्मक इस आवेश की पृष्टभूमि में नारी का सामीप्य और सन्सर्ग जनित अभिलाषाओं की अगाध उर्मिया कमलेश्वर के कथा साहित्य के मिलती है। उसके प्रारम्भिक स्वरूप का प्राकट्य उत्सुकता से हुआ है जहां मालती जगदीश के बीच कैशोर्य शरीर जन्य उत्सुकता जहां नायिका को मुग्धा बना देती है वहीं नायक की आवेग का दृप्त रूप मिलता है। इसके दूसरे रूप का चित्रण राजा निवसियां की चन्दा और डाक बंगला की इरा में दिखाई पडता है। जिस प्रकार राजा निंवसियां की रानी प्रछन्न रूप में माँ बनकर अपने काम की तृप्ति करती है और चन्दा

अपने पति के अस्पताल में सेवा करने से उसे निरोग करने के लिए कम्पाउडर को किस प्रकार अपने शरीर को समर्पित करती है विवाहिता होते हुए चन्दा अपने पति के वंश वृद्धि हेतु इस काम को अनैतिक नहीं समझती ।

कमलेश्वर ने सौन्दर्य जनित काम के चित्रण में डाक बंगला की इरा की संवेदन शीलता तिलक की काम अभिव्यक्ति हेतु धीरे-धीरे किन्तु लक्ष्य की ओर बढती उंगलियां मदहोश करने वाले देह परिमल का चित्रण प्राकृतिक परिवेश में किया है तिलक को वनघास की भींगी -भींगी महक में इरा के देह गंध का परिचय मिलता तितलियों के अलसाई हुई निद्रालु अलस भरे नेत्रों के बिम्ब दिखाई देते । इतना ही नहीं कंधे से सटी हुई इरा के शुचिकण कोमल घने केशपाशों से फिसलती उंगलियाँ कधें से नीचे पीठ पर आ कर दो सडक की तरह मिल जाती तब लहर की तरह सिहरता व्यर्थ मुक्ति के लिए प्रयास करने वाली इरा के धृष्टता पूर्ण शरारती आंखों से उक्त कृत्य के औचित्य को पूंछने में ही दोनो और काम का उत्तर पाठक को स्वयं मिल जाता है । ऐसे क्षणिक आलिंगन में इरा और तिलक का शरीर काम के वेग से आप्लावित हो उठता । आंखों का आलस्य होठों की मादकता सारे शरीर को एक प्रकार की बिजली के आवेग से भर देता था । इरा और तिलक का यह काम, यह पाने की आग, यह मीठी जलन इससे भागना दोनो के लिए सम्भव नहीं था । उपन्यासकार ने अत्यन्त संयत किन्तु मनोविश्लेषण की दृष्टि से इस काम को एक नया आयाम दिया है । जिसमें प्रकृति का भरपूर उपयोग किया गया ।

राजेन्द्र यादव ने जहां काम के चित्रण हेतु आंगिक चेष्टाओं का स्पष्ट वर्णन किया है जिसमें कहीं दुराव और छिपाव नहीं, सरल सीधी अभिधा क्रियात्मक मूल्यों द्वार इस काम का चित्रण किया है कमलेश्वर ने अभिधा के साथ-साथ प्रकृति प्रतीकों के माध्यम से संश्लिष्ट एवं गत्यात्मक बिम्बों के माध्यम से काम का चित्रण बडी सफलता पूर्वक किया है । यह चित्रण चाहे बंसिरि का हो या मांस का दरिया की नायिका वेश्या के चरित्र चित्रण में हो अथवा डाक बंगला की इरा अथवा आगामी अतीत के चंदा और कमल बोस के चित्रण मे हो । इरा और तिलक के आम चित्रण को कथाकार ने काव्यात्मक रूप में ऐसा चित्रित किया है जिसे पढकर पाठक को चाक्षुष प्रत्यच्छी काल ही नहीं होता अपितु ऐसा करक अत्यन्त सहज और पवित्र भी रहता है । तिलक की भावना का चित्रण कुछ इस प्रकार हुआ - ''और तब नहीं जानता कैसे उसके जूडे के नीचे गरदन पर मेरे तपते हुए होठ थे ....धुले हुए केशों की ठंडक पलकों से आंखों पर उतर आई । स्निग्ध शीतलता बन घास की भींगी - मधुनाभि रखे हुए अधरों का अलस अस्तित्व या ओस से भींगे कमल पखुडियों पर मदहोश उंगलियॉ नरम

शीतलता और पराग की भीगी गंध .... कभी कमल ऑखों सी रेंगती हुई उसकी उंगलियां मेरे कानो पर थरथराई थी। इरा का संगमरमरी शरीर थरथराहट कम्पन्न देवदार की पटिटयों की तरह चिकनी देह से फूटती हुई महक नदी के पानी का चटटानों पर खामोश पछाड खाने की झनझानहट तिलक अपनी पीठ पर महसूस कर रहा था। स्त्री पुरूष इन संवेदनाओं को संजोने का कार्य उपन्यास कार ने बडी कुशलता से किया है काम और सौन्दर्य का यह संयोग कमल बोस और चंदा मे ंथा। जहां चंदा अपने पिता के लिए फूल तोडने जाती है और कमलबोस के साथ उसका सहज स्वभाविक प्रेम उन्मुक्त रूप से व्यक्त होता था। काम के इसी रूप का चित्रण समीरा और नकुल के बीच कथाकार ने दिखाया है। महत्वाकांक्षी समीरा पति के सामीप्य के लिए लालायित रहती थी किन्तु प्रशांत वयसजन्य के आवेग को सामान्य रूप में ले कर नारी को संतुष्ट नहीं कर पाता यौवन स्त्री के इस दमित वासना का चित्रण इस उपन्यास में हुआ। समीरा अपने स्त्रीत्व को यौवन की लालसा को खाली नही रखना चाहती और इस प्रकार वह नकुल के प्रेम में आबद्ध हो जाती है। कमलेश्वर की यह बद्ध मूल धारणा है कि किशोरी से बढती युवती नारी के उमंग उसका प्रथम प्रेम अत्यन्त भावुक काल्पनिक इन्द्रधनुषी सप्त रंगों से युक्त आदर्श युक्त होता है। यदि वह अपने प्रेम को वैवाहिक बन्धन में बांध सकी तो ऐसा काम स्वस्थ प्रेम दाम्पत्य रूप में पुरूष और नारी के जीवन को बांध कर रखता है। नारी पुरूष के मध्य त्याग सेवा समर्पण की सीमेन्ट से तनी दीवार अत्यन्त सुदृढ होती है किन्तु असफल प्रेम नारी को कुण्ठित ही नहीं करता भावावेश में उसे कुलटा परपुरूष अंलशायनि बना देता है यहां से ऐसी अंधेरी गुकर या सुरंग का प्रारंभ होता है जिसका दूसरा दरवाजा सदैव बन्द रहता है। मीना और जितेन्द्र (सफेद तितलियों की नायिका) ऐसी प्रेयसी है जो जितेन्द्र और दिवाकर के मध्य यह नहीं तय कर पाती कि वह किसके प्रति आकृष्ट है। काम के मांसल रूप का चित्रण मांस के दरिया में वेश्या जुगनु के माध्यम से किया गया है। वस्तुत: वेश्या किसी पुरूष से प्रेम नही ंकरती। पुरूष तो उसके लिये सुन्दर असुन्दर न होकर एक वस्तु है जो कुछ देर के लिये कुछ आंगिक क्रियाये कर एवं धन देकर अपनी संतुष्टि कर चला जाता है। वेश्या भी अपने रूप को रबड की तरह अमर तो बनाना चाहती है किन्तु समय की कालिमा वयस की आहट उसके ढलते सौन्दर्य को विवस कर देती है। चार दिन की चांदनी में ही जो धन कमा सके वहीं अंधरी रात का आश्रय होताहै।

कमलेश्वर ने काम के प्रौढ रूप के चित्रण में नसीबन का उपयोग किया है जिसमें दैहिक आवश्यकता की अपेक्षा ममत्व वात्सल्य अधिक है।

काम और प्रेम के एक अन्य रूप या आधुनिक उपयोगिता वादी संस्कृति से उपजे

अपसंस्कृति के प्रतीक के रूप में कमलेश्वर ने जो चित्रण किया है वह नारी की अत्यन्त महत्वाकांक्षा जिसमें सामाजिक सम्बन्धों में मधुरता की जगह कटुता प्यार मनुहार की जगह वैमनस्य उपेक्षा के रूप दिखाई देते है इसकी एक पूर्ण झलक और भी दिखाई देते है। इसकी एक पूर्ण बहुलता के कारण पति पत्नी के एकातिक क्षणों मे स्थानाभाव के कारण तीसरे की उपस्थिति त्रासद रूप मं चित्रित है। इस रूप का चित्रांकन चित्रा और उसका पति अपने मित्र के साथ जब दिल्ली में आ कर रहने लगते है। कथाकार ने चित्रा की देहयष्टि मादक देह परिमल तीसरे की उपस्थिति के कारण झिझक संकोच सकपटाहट और प्रिय के स्पर्श से उत्पन्न अतृप्त काम दशा का अत्यन्त आर्कषक रस प्रेशल एवं हदृयाबर्जक वर्णन किया है अतृप्त काम की पूर्ति हेतु प्रणयी युगल दिल्ली में उद्यानों के मध्य बने कुञ्जों के बीच अपनी भावनाओं का आदान प्रदान करते है। यह अत्यन्त त्रासद स्थिति है कि पति पत्नी के एकातिक क्षणों में द्वाम्याम ततृीयों की उपस्थिति कितनी निरर्थक होती है इण्यिया गेट के खुले मैदान में चिंता और उसके पति ने जिस मुक्ति का अनुभव किया होगा उसका एहसांस महानगर के रहने वाले लोग ही अनुभव कर सकते है चित्रा की आंखों में फूटती चिनगारियों वासना के डोरे श्वेद किल्न्य शरीर तन की महक कान की नीचे की लव से निकलती या फूटती चिनगारियॉ जिसका अनुभव नायक को विवश कर रहा था। दोनो की आंखों में शरारत पूर्ण धृष्टता झलक रही थी। ऐसे समय लहुसन प्याज हींग जैसे मसालों के पीसने से रची बसी हथेलियों के गन्ध में से नायक पति कैसे इत्र की खुशबू का अनुभव करता है। कलेश्वर ने ऐसे अवसर पर दाम्पत्य जन्य काम का चित्रण तृप्ति और अतृप्ति की सग्धि के रूप में किया है। जब पुलिस उन्हें सामान्य प्रेमी प्रेमिका मात्र मानकर उन्हें पकडकर थाने मे बन्द करने की धमकी देता है ऐसे अवसर पर यह काम कपूर की तरह उड जाता है और दोनो को यह सिद्ध करना पडता है कि वे एक पति पत्नी है। मिलन के क्षण रात्रि के समय घर में अत्यन्त सीमित है। कथाकार ने दाम्पत्य प्रेम के इस सन्धि स्थिति का मनोरम किन्तु गन्ध गुम्ब के साथ क्रियात्मक बिम्बों के माध्यम से इसकी अभिवृत्ति की है। यही काम अपने स्वस्थ्य रूप में तब दिखाई देता है जब सन्देह के कारण चित्रा का पति उसे छोड देता है। आसन्न प्रसवा नारी को सर्वाधिक मानसिक कष्ट ऐसी स्थिति में मिलता है। पुत्र को जन्म देकर नारी पुर्ननवा बनती है यह उसका पुर्नजन्य होता है, और चित्रा का पति उसके निष्कलुष नि:षप्रह तेजहीन शरीर को देखकर अपने प्रेम की गहराई को समझता है। इस प्रेम मे कायिक सौन्दर्य नही उद्याम, मासंल, आर्कषण नहीं उसके स्थान पर शान्त निष्कलुष पावन सौन्दर्य है अंगों में आये नये परिवर्तन उस चित्रा को नया भूगोल पति को आकृष्ट करता है। यह गरिमामय सौन्दर्य काम

को प्रौढ दाम्पत्य में बदल देता है। यही मनोवैज्ञानिक सत्य एवं तथ्य है क्योकि दर्शन शास्त्र मे 'यह धारणा है कि पति ही पत्नी में गर्भसे पुत्र रूप में स्वयं प्रकट होकर आत्मस्वरूप का दर्शन कराता है और संसार में कौन सी ऐसी नारी या पुरूष है जो आत्मरूप को देखकर मुग्ध नहीं होता है।

काली आंधी की मालती और जगदीश का प्रेम औत्सुक्य जन्य भावना से प्रारंभ हुआ। मालती की दृढता ने इसे सत्यवादी (विवाह) तक ले आया किन्तु व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा राजनीतिक शीर्ष पुरूष बनने की अभिलाषा किस प्रकार विभेदक रेखा खींच देता है कि नारी पत्नी विजय के प्रथम सोपान में पति को अपने बगल में बैठाकर गौरान्वित होती है किन्तु ज्यो–ज्यों विजय के सोपान सत्ता के शीर्ष पर पहुंचाते रहे उसी अनुपात में पति का महत्व बिछडने लगा। मालती और जगदीश बाबू के बीच पनपने वाली यह त्रासद विभिषिका आधुनिक नारी का प्रतीक है जिसमें नारी की अस्मिता उसका अहं महत्वाकांक्षा, उसका उद्देश्य प्रमुख बन बैठे और दाम्पत्य जीवन के गुलाब की पखुंडियों एक –एक कर राजनीतिक आंधी के झोके से गिरकर बिखरने लगी। पति पत्नी के मध्य कायिक दूरी ही नहीं बढी अपितु सामाजिक दूरियां शिष्टाचार की आवश्यकता के अनुरूप कर्तव्य निर्वहन की औपचरिकता भी नष्ट हो गई। कमलेश्वर ने इन दोनो के प्रेम को मतभेदों को और विखराव के ताना बाना आधुनिक बाजार वादी संस्कृति में अनुरूप ही किया है। यह सौन्दर्य मूल्य नहीं एक वस्तु है। पुरूष कोरिझाने अपनी बात मनवाने का एक मारक अस्त्र है एडलर का यह कथन यहा सटीक बैठता है – ''नारी प्यार मनुहार से अपनी जिद या हक को प्राप्त करती है और नहीं तो पुरूष की कमजोरी को अपने आसुओं के सहारे उसे विवश कर देती है। दोनो अनेक अवसर पर अपरिचित की तरह मिलते है यद्यपि जगदीश बाबू कहीं भी अवसर मिलने पर मालती की प्रिय खाद्यय वस्तु को भेजकर अपने प्रथम प्रेम की याद दिलाने का प्रयास तो करते है किन्तु प्रेम की यह बेल पुन: पल्लवित नहीं हो पाई। मालती के अन्य पुरूषों से सम्बन्धों की अफवाहों पर उन्होंने विश्वास नहीं किया कष्ट उन्हें अवश्य हुआ और दोनो ने मिलकर यह निर्णय किया कि वे दोनो विरोधी ध्रुव है जो परस्पर मिल नहीं सकते उनका जीवन रेल की पटरी की तरह समनान्तर है जहॉ मिलन सहार का प्रतीक है। जगदीश बाबू ने बेटी की दुहाई देकर दाम्पत्य जीवन के सुखद आशा का नखलिस्तान अवश्य प्रस्तुत किया है किन्तु मालती की महत्वाकांक्षा उसका कैरियर बडा था उसकी अस्मिता पीछे पैर घसीटने के लिय या पीछे मुडकर देखने के लिए नहीं थे और सुखद अल्प कालिक वैवाहिक जीवन सदा के लिए विछुड गया। इसे हम मनावैज्ञानिक भाषा में यह कह सकत है कि कैरियर को महत्व देने वालीनारी विवाह या पति

को एक क्षणिक बन्धन या अपने कैरियर का सोपान समझती है सम्बन्धों की आड मे वह अपने कैरियर को संवारने के लिए अपने हक को प्राप्त करने के लिए पुरूष से या तो प्यार मनुहार से लेती है रूठकर या जिद् से लेती है और नहीं तो उसे पता है कि उसके आंसुओं के जामने पुरुष निर्बल हो उठेगा। तात्पर्य यह कि काली आंधी सप्तम दशकोत्तर भारतीय नारी वाद का वह दस्तावेज है जिसमे पति पत्नी के रिश्ते एक दूसरे के लिए प्रेरक तुष्टि कारक आनंद दायक होकर वस्तुरूप मे चित्रित है जिनका कोई नैतिक मूल्य नहीं होता क्योंकि ऐसा प्रेम काम के प्राथमिक चरण की पूर्ति के बाद परस्पर उपयोग करने की वस्तु बन जाते है। एलिस हैवलॉक ने लिखा है कि कैरियर (उद्देश्य) प्रधान नारी पुरूष को वायलेट पेपर की तरह उपयोग करती है। मालती भी इसी काली ऑधी का प्रतीक है जिसमें महत्वाकांक्षा या कैरियर की आंधी के आगे दाम्पत्य या नीड के तिनके – तिनके विखर जाते ही यहॉ प्यार में गहराई नहीं रिश्तों में दरार की गहराई है। दाम्पत्य और नैतिक मूल्यों की उंचाई नहीं अपने अस्मिता को स्थापित करने की अग्रभेदी उन्मुक्त महत्वाकांक्षाये है।

कमलेश्वर ने अपने उपन्यास और कहानियों में ऐसे हीपरिस्थितयों के सामान्य असामान्य चित्रण किये है। जहॉ राजेन्द्र यादव ने इड इगो (id ego) के संघर्ष अर्न्तविवाद के इंटिरियर मोनोलांग) से प्रस्तुत किया है वहीं कमलेश्वर ने अन्य पुरूष के आध्यय से घटनाओ का परोक्ष चित्रण कर अन्य पुरूष कथन शाली का उपयोग किया है। इनकी नायिकाए सामान्यत: मध्यम उच्च वर्ग की है जिनमें काम की व्युत्पत्ति अधिक मिलती है। पर पुरूष सम्बन्धों की विविध रूप कमलेश्वर के कथा साहित्य में मिलते है राजा र्निवसिंया की दुहरी कहानी इरा समीरा, चांदनी, जुगनु, बंसिर सभी नारियॉ काम और उसके वर्जनाओं से पीडित है। सम्भवत: कथाकार छठे दशक के बाद भारतीय समाज में नारीवाद के 3 उभरते स्वरों या उसके पदचाप के आहट पहले से ही सुन ली है जहॉ नैतिकता की तिलांजली देकर नारी कैरियर को अधिक महत्ता देती है। एकाकी परिवार होने के बावजूद भी कमलेश्वर ने नारी और पुरूष के बीच प्रेमी प्रेमिका रूप का चित्रण कम किया है वर्जना के कारण विवाहेत्तर सम्बन्धों की व्यापकता, तदजन्य सम्बन्धों की जटिलता, नारी की कुण्ठा तृप्ति, उसकी छटपटाहट का चित्रण मनोविश्लेषण वादी दृष्टि से किया है। जिसका प्रतिफल हमे आज की युवतियो मे अधिकांश रूप दिखाई पडता है। बिन व्याही माँ की स्वीकृति, समाजिक रिश्तों में बंधे एक ही छत के नीचे रहने वाले बीटलिक सभ्यता के पोषक नारी स्वातन्त्रय के पोषक ऐसे युवक युवतियों की कमी नहीं है, जो अपने कैरियर को आगे बढाने के लिए अपने रूप सौन्दर्य को तराश कर शरीर के उच्च अवच्च उच्चावच्च अंगों का प्रदर्शन करके छप्पन व्यंजनों से युक्त अपने देह के

थाल को अपने अधिकारों के सामने परोसने में जिन्हें जरा भी झिझक नहीं। प्राक्तन नारी के नैतिक मूल्यों को अठारवी (18वीं) शताब्दी के युग का मानकर अपनी महत्वाकांक्षा की कोटि को प्राथमिकता देती है। यद्यपि उनके कथासाहित्य में नारी शब्दों से आगें बढकर अपने एक व्यक्तित्व के रूप में उभरती है उनकी अनेक नारियाँ है। जिसमें त्याग, वात्सल्य, दया, अन्यन्ता, निष्ठा, पति सेवा और दाम्पत्य जीवन की सुकोमल भावुक नैतिक मूल्यों से युक्त गुणवती नारियों का भाव भी है लेकिन अधिक्य काम और सौन्दर्य के भौतिक वादी रूप का प्राधान्य है। इसे निष्कर्ष रूप से इस प्रकार कहा जा सकता है।

आगामी अतीत की नायिका चन्दा स्त्री पुरूषों के कोमल भावुक संवेदनशील क्षणों की व्यथा कथा जिसमें प्रेम और सौन्दर्य के साथ कथाकार ने स्वसुखी प्रेम की अपेक्षा तत्सुकी प्रेम की व्याख्या की है। बात यह कि किशोरावस्था नारी का मन सतरंगी इन्द्रधनुषी कल्पना पर आरूढ होकर जिस स्वप्न लोक के चित्र देखती है। उसमें पुलक है, सिहरन है, मादकता है और अपना सर्वस्य समर्पण करने की उत्कठ अभिलाषा है। युवक कमलबोस वैद्य पुत्री किशोरी (चन्दा) से वय: सन्धि की ओर बढने वाली मुग्धा नायिका कमल बोस के चित्र को लेकर अपने ब्लाउज में छिपा लेती है। क्योंकि यह ऐसा स्थान है जहां उसकी स्वीकृति के बिना उस चित्र को कोई देख ही नहीं सकता। इस बहाने कथाकार ने दुहरे अर्थ की व्यंजना ही नहीं की है, अपितु चन्दा के भोलेपन का उजागर किया है। क्योंकि कमल बोस के पूछने पर कि वह इस चित्र को कब तक छिपाये रखेगी, चन्दा का उत्तर है कि ''कमल बोस जब तक चाहेगा। ऐसी मुग्धा नायिकाएं प्रेम मनोरथ में आरूढ होकर प्रिय से मिलने की अनेक बहाने खोज लेती है फिर तो यह जडी बूटी खोजने वाली है जिसका कार्य निभृत शून्य जंगलों में से अभिलषित जडी बूटी की प्राप्ति करना है चन्दा के इस वृत्ति को हम तत्सुखी प्रेम कह सकते है क्योंकि इसमें वह अपने प्रिय से अपने लिये कुछ नहीं मांगती। उसके अचेतन मस्तिष्क में प्रिय सनिध्य की उद्दाम लालसा मात्र है। कमल बोस के चंचल हाथो ने नारी के सुकोमल काम केन्द्रों का स्पर्श करते है तो चन्दा ने दृढतापूर्वक उत्तर दिया कि यह कमजोरी नारी को पतन की ओर ले जाती है और उसे आशा है कि कमल बोस ऐसा नहीं करेगा वह लौटकर जब ाअयेगा और चन्दा सेविवाह करेगा तब चन्दा सर्वतोभावेन अपने तनमन को समर्पित कर उसके प्रेम समुद्र में आकण्ठ निमग्न होकर अपना जीवन सार्थक कर लेगी। तात्पर्य यह है कि कमलेश्वर ने प्रेम के अपने पक्षों का चित्रण नारी पात्रों के माध्यम से किया है जिससे हम संक्षेप में इस प्रकार कह सकते है।

1. कमलेश्वर बम्बई जैसे महानगर में रहे है जहां एक ओर घोर दरिद्रता है तो दूसरी

ओर अर्थ वाद प्रचुरता है अत: स्वभाविक है कि नारी मन के विविध पक्षों का वे चित्रण करने में सफल हो सके है ।

2. उनकी कुछ नारियां प्रेम में सच्ची अनन्य एकनिष्ठता पर विश्वास रखकर अपने मातृत्व सुख का सुखोपभोग करने वाली है ।

3. उनकी प्रेमिकाएं स्वसुखी प्रेम वाली अधिक है इसमें ऐसे नारियों के भी दो रूप दिखाई देते है जो परविार में अपने प्रेम की प्राप्ति के लिए एक पुरूष का चयन कर तथा कुछ ऐसी नारियां है जो अतृप्ति आकाक्षाओं के कारण पराये पुरुष के साथ सम्पर्क बनाने में उन्हें जरा भी हिचक संकोच या सामाजिक मर्यादा का ध्यान नहीं रहता ।

4. तत्सुखी प्रेम प्रधान नायिकाएं भी है जो प्रिय सुख को सर्वस्य समझकर अपना जीवन उन्हीं के साहित्य में व्यतीत करने की आकांक्षा रखती है ।

5. जीवन के लक्ष्य या उसके प्रगति को ध्येय बनाकर उसकी प्राप्ति हेतु अपने पति प्रेमी या पुरूष को सीढी बनाकर उसका उपयोग कर उसकी ओर फिर ध्यान नहीं देती ह । ऐसी महानगरी सभ्यता में इस प्रकार की अनेक नारियों कमलेश्वर के साहित्य मे मिल जायेगी।

6. कमलेश्वर ने वेश्याओं के जीवन से सम्बन्धित नारी पक्षों को उजागर किया है जिनके लिए काम एक अर्थोपार्जन का माध्यम है और पुरूष एक वस्तु या **Subject** मात्र है ।

7. इस प्रकार कमलेश्वर ने विवाह पूर्व विवाह के साथ परपुरूष सम्बन्धों की गहरी जटिल व्याख्याए की है ।

8. उनकी नायिकाओं में बंसिरि जैसी ग्रामीण चन्दा जैसी अर्द्धशिक्षित एवं किशोरी समीरा जैसी अत्याधुनिक है ।

9. काम प्रेम और सौन्दर्य के अतिरिक्त कमलेश्वर के कथा साहित्य मे हमारे दृश्य जगत की भांति बालिकाएं पत्नी, पुत्री दादी, सहायिका सहचरी, त्यागमयी जन्य, ममतालु, अनेक वर्गीय रूपों वाली नारियाँ मिलती है जिनमें कहीं काम है तो कहीं क्रोध, कहीं करूणा है तो कहीं भय कहीं औत्सुक्य है तो कहीं निष्ठुरता और कठोरता भी है ।

कहना नहीं होगा कि राजेन्द्र यादव और कमलेश्वर दोनो समसामायिक ऐसे कथाकार है

जिन्हें कथाभूमि के रूप में जो समाज उच्च मध्य निम्न वर्ग में उपलब्ध था। उसमें नैतिक मूल्यों का क्षरण आर्थिक वर्चस्व दिखाई देता है। अधिकांश जनता शासन सत्ता की राजनीतिक विफलता, देश में लादे गये आक्रमण, चीन से पराजयजन्य क्षेत्र गहरी कुण्ठा निराशा और कुछ करने की इटपटाहट लिए हुए कथाकार ने जिनका नेतृत्व कमलेश्वर ने एक विशेष तरह का कथा आन्दोलन चलाकर सारिका के माध्यम से उन्हें अखिल भारतीय व्यापक मंच दिया है। दोनो की भाव भूमि समान होने पर भी चिन्तन गत वैभिन्न के कारण नारी चरित्र के प्रति दृष्टिकोण में भी पर्याप्त अन्तर आया है जिसका विवेचन नारी चरित्रों के मूल्यांकन विश्लेषण करते समय शोध कर्त्री ने प्रस्तुत किया है। यहां सक्षिप्त दिग्दर्शन के रूप में साम्य और वैषम्य को इस रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

साम्य-

1. दोनों कथाकारों के भाव भूमियां एक है परिवेश भी एक है और नारियों के वर्गीय रूप भी एक है। नारी चरित्रों में प्रेमिका पत्नी परपुरूष से सम्बन्ध रखने वाली स्त्री स्वेच्छाचारी स्त्री का चित्रण समान रूप से किया है।
2. दोनो की नारियाँ ग्रामीण शहरी महानगरीय जीवन से सम्बन्धित है। काम की दृष्टि से दोनो कथाकारों ने काम के उदात्त और विकृत रूपों का चित्रण समान रूप में किया है।
3. प्रेम की दृष्टि से दोनो कथाकार स्वसुखी व तत्सुखी प्रेम पर विश्वास रखने वाली नारियों का चित्रण किया है।
4. दाम्पत्य प्रेम की मार्धुय पूर्ण झाकी (भले ही कम रूप में दिखाई पडी हो) दोनो कथाकारों ने किया है।
5. सौन्दर्य की दृष्टि से दोनो कथाकारों ने किशोरी, मुग्धा, युवती, प्रौढा, वृद्धा, शिक्षित, अशिक्षित नारियों का नखशिख पद्धति पर न सही किन्तु नारी के केश विन्यास से लेकर कथा की आवश्यकता के अनुरूप विभिन्न अंगो का चित्रण किया है। नारी भूगोल के कोमल नाजुक मांसल आकर्षक अंगो का प्रत्यच्छ या परोक्ष रूप में चित्रण कर इस सौन्दर्य की अभिवृद्धि हेतु वस्त्र सहित वाह्य प्रसाधनों का भी उल्लेख समान रूप से दोनो कथाकारों ने किया है। दाम्पत्य प्रेम की या उसके भावना पूर्ण आकर्षण का चित्रण दोनो कथाकारों ने समानरूप से किया है। किन्तु दोनो के दृष्टि कोण में बहुत अन्तर रहा है।

6. दोनो कथाकारों की नारियाँ विवाहेत्तर सम्बन्धों के साथ अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति हेतु पुरूष के उपयोग में संकोच न रखने वाली है।

7. काम प्रेम और सौन्दर्य के अतिरिक्त दोनो कथाकारों ने एक तरह से नारीवाद के नारे, उसके अस्तित्व पर विश्वास रखते है।

8. दोनो कथाकारों ने नारी चरित्रों के अन्य रूप भी समानरूप से चित्रित किये है।

वैषम्य-

1. वय: क्रम की दृष्टि से कमलेश्वर के नारी पात्रों में अधिक विविधता है। बालिका से वय: सन्धि तथा वृद्वावस्था से पूर्व प्रौढावस्था की नारियों के विविध रूप मिलते है। मालती, चन्दा, नसीबन, बंसिरि, समीरा ऐसे ही पात्र है जबकि राजेन्द्र यादव के नारी पात्र प्राय: युवतियाँ है। यत्र तत्र अपवाद स्वरूप प्रौढा (अमला) के रूपों की चर्चा है।

2. कमलेश्वर के नारी पात्र हिन्दू मुस्लिम पात्र अत्यन्त विपन्न और अत्यन्त सम्पन्न नारियाँ है जबकि राजेन्द्र यादव के नारी पात्र तेजपाल, अमला तथा अपर्णा सम्पन्न महिलाएं है।

3. राजेन्द्र यादव के नारी पात्र कुछ तो सामान्य सुन्दरी निन्नी, सुजाता, जया, प्रभा, मुन्नी रंजना है तथा मिसेज तेजपाल, सुरजीत, पद्यमा अपेक्षाकृत अधिक सुन्दरी है जबकि कमलेश्वर की इरा समीरा चित्रा तीन सुन्दरीहै।

4. सौन्दर्य चित्रण की दृष्टि से राजेन्द्र यादव के नारी पात्र या तो अपने अभिजात्य चाल ढाल या सजावट से सुन्दरी दिखती है अथवा मिसेज तेजपाल सुरजीत और पदमा को अपरूप सुन्दरी बताकर उनकी कायिक यष्टि नारी की अवस्था के अनुरूप उनके शरीर के भूगोल का वस्तु आदि चित्रण किया है। जबकि कमलेश्वर की नारियाँ सुन्दरी होते हुए भी उनके अंग प्रत्यगों का चित्रण तो है इसके साथ ही देह कान्ति, देह परिमल और उनके आकर्षक स्वरूप पुरूष की उद्दाम लालसा का चित्रण किया है इस चित्रण में जहां कहीं भी साहचर्य जनित सौन्दर्य और उसके पाने की ललक दोनो कथाकारों मे भिन्न दृष्टि से चित्रित है। सुजाता अमला को पाने के लिए नायक अपना भरसक प्रयास करता है जबकि निर्दोष पवित्र यौवन के क्रिया कलापों से सर्वथा अनभिज्ञ मुग्धा पद्यमा के सौन्दर्य से कामाविभूत होकर वृद्व देशबन्धू (सम्भवत: अपनी ही पुत्री) बलात्कार करने का प्रयास करता है। उखडे हुए लोग की चन्दा मध्यकालिक प्रेमिकाओं की भांति

विवाह पूर्व प्रेमी के साथ मरने की कसमें खाती हुई विवाहित जीवन में पति के साथ इतनी मग्न और आनंदित रहती है कि प्रेमी अपने को पहचानने से भी इन्कार कर देती है। जबकि सौन्दर्य के दूसरे पक्ष का चित्रांकन उसकी पृष्ठभूमि के रूप में निन्नी की कुरूपता का उपयोग कथाकार ने बडे ही शास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक पद्धति से किया है क्योंकि विरोधाभासी गुणों के सापेक्ष दूसरों की महत्ता का परिज्ञान होता है। कमलेश्वर ने कुरूपता का तो नहीं किन्तु उसी के समकक्ष नसीबन का प्रौढ एवं किसी सीमा तक कुरूप ढला हुआ सौन्दर्य का चित्रण है किन्तु यह सौन्दर्य अपने कर्म की महत्ता से तेजोदृप्त हो उठा है। जिसमें भारतवर्ष से प्रत्यावर्तित मुसाफिरों की दूसरी पीढी के बच्चों अथवा अन्य ...... के बच्चों का पालन पोषण में वात्सल्य रूप सौन्दर्य के नये पक्ष को उद्घाटित करता है। यहां यह ध्यातव्य है कि बंसिरि ग्रामीण, साधारण सी युवती है जो प्रेम में अनेक बार ढगी जाती है जबकि डकैत उसके सौन्दर्य पर मुग्ध होकर उसकी रक्षा अन्त तक करता है।

5. अलोच्य उपन्यास कारों मे राजेन्द्र यादव ने काम के बहु आयामी रूपों का चित्रण किया है। कहीं यह स्वस्थ्य रूप में तो कहीं यह विकृत रूप में दिखाई पडता है। राजकुमारी अपर्णा के प्रति आकृष्ट उदय नायिका के मध्यकालिक नारी के प्रति किये गये कुरूरताओं का चित्रण काम के सापेक्ष में किया गया है। जबकि यही उदय सुजाता के साथ काम प्रेम के सतरंगी चाल में सुजाता को मोहरा भी बनाता है और उसके प्रति काम की भावना रखता है जिसे व्यक्त नहीं करना चाहता क्योंकि सुजाता कि दृष्टि में वह महान कथाकार है। अमला पति से उपेक्षित होकर भी स्वछन्द जीवन व्यतीत करने के लिए एक नया परिवेश धारण कर लेती है। जया अपने प्रेमी को प्राप्त करने के लिए समाज से पलायन का मार्ग अपनाती है। यह वह युग था जिसमें प्राय: कथाकार सामान्य युवक युवती को सामाजिक सम्बन्ध (भाई, बहन) दद्धा जैसे सम्बन्धों से नैकट्टय या साहचर्य प्राप्त कर धीरे-धीरे यह साहचर्य काम और प्रेम में परिवर्तित हो जाता है ऐसे ही प्रेम का एक पक्ष सुरजीतमें दिखाई देता है जिसमं किशोरावस्था जन्य इन्द्रधनुषी कल्पनाएँ जिन्हें प्राप्त करने के लिए युवतियों का मन सतरंगी कल्पना के पंखों पर सवार होकर भागने को विवश कर देती है ऐसा ही चित्रण किसी सीमा तक चन्दा और सूरज के प्रेम में था जिसमें उददाम था। मिलन की विह्वलता का चित्रण

उपन्यासकार ने मनोवैज्ञानिक ढंग से किया है जिसकी विकृत रूप में मुन्नी और निन्नी दिखाई देती है। मुन्नी का पागल पन स्वभाविक लगता है जहां स्त्री अपने ही सामने पति को उसकी प्रेमिका के साथ रति केन्द्र विलास या अभिसार रत होते हुए देखती है, उसका इड भी उस चरमसुख की प्राप्ति के लिए लालायित होता है किन्तु हाथों के उपर पंलग के पाये रखे जाने पर इस शारीरिक और मानसिक कष्ट को सहन न कर पाने के कारण अवसाद जन्य विक्षिप्तता का चित्रण राजेन्द्र यादव ने अत्यन्त मनोवैज्ञानिक ढंग से किया है जबकि कुरूपा निन्नी के मन में काम का अंकुरण अवस्था जन्य हो कर भी अपने अश्लील विकृत के रूप में राजेन्द्र यादव ने चित्रित किया है प्रभा, सुजाता, मिसेज तेजपाल का काम एक दूसरे पक्ष को निरूपित करता है प्रभा का काम विद्रोह एवं स्वपीडक सैडिष्ट रूप में चित्रित है। जिसमें अपने अस्तित्व को शुद्ध करने के लिये काम शारीरिक अत्याचार के रूप में परिवर्तित होता है और बाद में व्यंजना के रूप में यह काम दाम्पत्य जीवन के उस रूप की झलक देता है जहां नारी अपने शारीरिक सौन्दर्य अपने काम विलास से पुरूष को तृप्त कर उसकी प्रेरणा का रूप लेती है। सुरजीत का काम पलापन वादी है जो क्षणिक आवेश में विवाहित तारक के साथ समाज का परित्याग कर देती है किन्तु आवेश या उददाम अवस्था के शान्त होने पर वह पुन: अपने पितागृह को लौट जाती है। मिसेज तेजपाल का काम प्रतिक्रिया स्वरूप विकृत होता है। सुन्दरी मिसेज तेजपाल साहित्यिक और कलात्मक अभिरूचियों वाली है किन्तु उसका विवाह फौजी अनुशासन से बंधे मेजर तेजपाल से हो जाता है जिसके लिए काम एक दैनन्दिन क्रिया (routien) के समान ही अपने कामा अभिव्यक्त के लिए जहां मिसेज तेजपाल रति पूर्व काम की प्राक क्रीडा, आलिंगन स्पर्श आदि की आपेक्षा रखती है जो फौजी जीवन में सम्भव नहीं है अत: उसकी लिविडो ग्रन्थि तृप्त नहीं हो पाती जिसकी पूर्ति हेतु वह वायलिन वादक के साथ भागकर अपने पति को नपुंसक कह जाती है। राजेन्द्र यादव ने काम के मारक और विकृत रूप चित्रण में माया देवी का उपयोग किया है जो काम की पूर्ति हेतु अपने पति से असंतुष्ट एवं देशबन्धु की साहसपूर्ण क्रिया कलापों से आकृष्ट होकर अपने पति को भगाकर मात्र देशबन्धु की रखैल बन जाती है और धूर्त चालाक देशबन्धु अपने काम तृप्ति की आड में माया देवी का सारा धन हस्तगत कर लेता है। इस प्रकार राजेन्द्र यादव ने काम

के और सौन्दर्य के दोनो रूपों का चित्रण उसके कारक तत्व और मनुष्यों के क्रियाकलापों का वर्णन किया है इसके विपरीत कमलेश्वर ने काम के प्रारंभिक रूप औत्सुक्य मालती और बंसिरि के माध्यम से तथा समीरा और इरा तथा चित्रा इसके दूसरे रूप को चित्रित करते है। बंसिरि का काम अपने स्वभाविक एवं अस्वाभाविक दोनो रूपों में दिखाई देता है जबकि अपने काम औरप्रेम को मारक अस्त्रों के रूप में युक्त कर प्रेमी से पति बने जगदीश बाबू को उसके अनुकूल आचरण करने पर विवश कर देती है। यहां कथाकार ने सौन्दर्य के उपभोग वादी रूप का भी चित्रण किया है कमलेश्वर सौन्दर्य चित्रण के सूक्ष्म चित्रांकन करने वाले कथाकार है सौन्दर्य के प्रभाव उससे उत्पन्न काम की विहवलता का चित्रण मालती और चित्रा के माध्यम से किया है। जहां सद्य: विवाहिता चित्रा की झलक पाने के लिए लालायित उसका पति उसके अर्ध आंखों की लालिमा, यौवन की महिमा से मण्डित चित्रा की प्रथम मिलन से इतना आकर्षण होता है कि उसका साहचर्य प्राप्त करने हेतु वह दूसरे पुरूष की उपस्थिति को भी भूल जाता है यह काम और सौन्दर्य का एक पक्ष है। उपन्यासकार ने नायिका की देह परिमल कामा विभूति मन की उतप्त सांसे एवं तृप्ति जन्य आह्लाद परक नि:श्वासों का बडा ही मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है।

6. राजेन्द्र यादव और कलेश्वर जिस समय कथा लिख रहे थे समाज में स्त्री पुरूषों के बीच दरकती दिवारे, नारियों की महत्वाकांक्षा उनकी अस्मिता की हवा भी सैद्धांतिक और व्यवहारिक रूप मे दिखाई दे रही थी। नारियाँ अपने सतित्व और अस्मिता के लिए संघर्ष कर रही थी इस महत्वाकांक्षी का चित्रण दोनो कथाकारों ने किया तो अवश्य है, किन्तु उनके कारक तत्व या परिस्थितियाँ भिन्न – भिन्न है। सुजाता और अमला विवाहेत्तर या पूर्व विवाह सम्बन्धों की स्वीकृति देती है भले ही यह काम की आग और उसकी तपिश अन्त में ही क्यों न ही चित्रित हुई है। सुजाता उदय दोनो प्रेम और काम के मध्य झूलते हुए शारीरिक आवश्यकता को अस्वीकार करते हुए उसकी तपिश को अन्त में डायरी या पत्र लेखन से अभिव्यक्त किया है जबकि इरा समीरा विवाहेत्तर सम्बन्धों में परहेज नहीं रखती है।

तात्पर्य यह कि काम प्रेम और सौन्दर्य की दृष्टि से दोनो कथाकारों मे समकालिक परिस्थितियां एक है। सामाजिक सरोकार एक है अत: काम प्रेम और सौन्दर्य का चित्रण भी

दोनो कथाकार दुनिया की गतिविधियाँ चिन्तन चरित्र के अन्य पक्षों का सही चित्रण किया है कमलेश्वर यदि काम प्रेम और सौन्दर्य के अनुभूतियों के चित्रण के उपन्यासकार है तो राजेन्द्र यादव उसके मांसल वस्तु रूप और उसके प्रभावों के कथाकार है साथ ही दोनो कथाकार नारीचरित्र के अन्य पक्षों त्याग, दया, ममता, वात्सत्य, करूणा आदि गुणों का चित्रण भी इसी सापेक्ष में किया है। राजेन्द्र यादव के पात्रों में निन्नी सुजाता, जया, प्रभा मिसेज तेजपाल तथा कमलेश्वर के उपन्यासों में चन्दा, चित्रा, मालती प्रमुख ऐसे नारी पात्र है जो अपने समसामायिक काल के नारी समाज का प्रतिनिधित्व भी करती है और नारी अस्मिता महत्वाकांक्षांओं की ध्वजा वाहिका भी है।

उपसंहार

शोध प्रबंधिका सारांश

* पश्व दवेस्य काव्यं न ममारेषु
* कामोऽअहम् भरतर्षभ्
* प्रियेषु सौभाग्य फलुषु चारूताम्
* लब्धम् नेत्र निर्वाणम्
* क्षणे क्षणे यन्नवताम उवैति तदैव रूपम रम्णीयताम्
* Sex is beauty and beauty is sex.

जैसी उक्तियों को पढ़ सुनकर मेरे कौशोर्य मन में समाजिक गतविधियों, नारी पुरूष के आकर्षण को देखते तथा साहित्य की अध्येता होने के नाते यह प्रत्यच्छ अनुभव हुआ कि प्राय: विश्व के वाङ्मय में काम प्रेम सौन्दर्य जितना व्यापक गहन विचार विमर्श आलोढन विलोडन अनुसंसन परिशंशन आलोचना प्रत्यालोचना हुई । इससे मुझे गहन अध्ययन की रूचि जागृत हुई, और अंग्रेजी साहित्य की छात्रा होने के नाते रोंमैटिज्म कवियों की पक्तियों को पढकर अतीन्द्रिय अनिर्वचनीय अव्यक्त सुख की प्राप्ति हुई, जिसकी चरम परिणति प्रस्तुत शोध कार्य के रूप में हुई ।

कमलेश्वर एवं राजेन्द्र यादव ऐसे कहानीकार है जिन्होंने समानान्तर कथा आंदोलन के प्रेरक और उन्नायक कथाकार रहे है। इनकी कथाभूमि समान रूप से उपन्यास और कहानियों के माध्यम से व्यक्त हुई है। इनके साहित्य में नारी पात्रों की प्रमुखता है। सम्भवत: यह युगीन कारक तत्व है। नारी मुक्ति के आंदोलन नारी सौन्दर्य को वस्तु एवं दृष्टि या सृष्टि एवं मूल्य सम्बन्धी विचारों में द्वन्द्व हो रहा था। समाज का आधा वर्ग नारी है। जिसके महत्ता, गरिमा, उसके सुचि, उज्जवल, पवित्र काम, प्रेम और सौन्दर्य को वस्तु आदि बनाकर उपभोक्ता की दृष्टि से समाज में परोसा जाता है। ऐसे संक्रमण युग में इन कथाकारों ने नारी अस्मिता उसके वर्चस्व का बहु आयामी चित्रण अपने साहित्य में किया है। और जब मेरे शोध निर्देशक ने वार्तालाप के समय एतद विषयक मेरी अभिरूचि का अनुभव कर ''कमलेश्वर एवं राजेन्द्र यादव के नारी पात्रों का तुलनात्मक अध्ययन'' शीर्षक मुझे दिया, तो ऐसा लगा कि मुझे कोई अमूल्य अयाचित निधि प्राप्त हो गई है। नर नारी का आकर्षण विविध रूपा होता है। नारी देह का सौन्दर्य, उसके कर्ममय सौन्दर्य से कम महत्वपूर्ण नहीं होता और कभी कभी कुरूपता भी हमें इतना आकृष्ट करती है कि मुझे कुछ सोचने के लिए विवश करती रही, क्योंकि सौन्दर्य

- पश्व दवेस्य काव्यं न ममारेषु
- कामोऽअहम् भरतर्षभ्
- प्रियेषु सौभाग्य फलुषु चारूताम्
- लब्धम् नेत्र निर्वाणम्
- क्षणे क्षणे यन्नवताम उवैति तदैव रूपम रम्णीयताम्
- Sex is beauty and beauty is sex.

जैसी उक्तियों को पढ़ सुनकर मेरे कौशोर्य मन में समाजिक गतविधियों, नारी पुरूष के आकर्षण को देखते तथा साहित्य की अध्येता होने के नाते यह प्रत्यच्छ अनुभव हुआ कि प्राय: विश्व के वाङ्मय में काम प्रेम सौन्दर्य जितना व्यापक गहन विचार विमर्श आलोढन विलोडन अनुसंसन परिशंशन आलोचना प्रत्यालोचना हुई। इससे मुझे गहन अध्ययन की रूचि जागृत हुई, और अंग्रेजी साहित्य की छात्रा होने के नाते रोंमैटिज्म कवियों की पक्तियों को पढकर अतीन्द्रिय अनिर्वचनीय अव्यक्त सुख की प्राप्ति हुई, जिसकी चरम परिणति प्रस्तुत शोध कार्य के रूप में हुई ।

कमलेश्वर एवं राजेन्द्र यादव ऐसे कहानीकार है जिन्होंने समानान्तर कथा आंदोलन के प्रेरक और उन्नायक कथाकार रहे है। इनकी कथाभूमि समान रूप से उपन्यास और कहानियों के माध्यम से व्यक्त हुई है। इनके साहित्य में नारी पात्रों की प्रमुखता है। सम्भवत: यह युगीन कारक तत्व है। नारी मुक्ति के आंदोलन नारी सौन्दर्य को वस्तु एवं दृष्टि या सृष्टि एवं मूल्य सम्बन्धी विचारों में द्वन्द्व हो रहा था। समाज का आधा वर्ग नारी है। जिसके महत्ता, गरिमा, उसके सुचि, उज्जवल, पवित्र काम, प्रेम और सौन्दर्य को वस्तु आदि बनाकर उपभोक्ता की दृष्टि से समाज में परोसा जाता है। ऐसे संक्रमण युग में इन कथाकारों ने नारी अस्मि्ता उसके वर्चस्व का बहु आयामी चित्रण अपने साहित्य में किया है। और जब मेरे शोध निर्देशक ने वार्तालाप के समय एतद विषयक मेरी अभिरूचि का अनुभव कर ''कमलेश्वर एवं राजेन्द्र यादव के नारी पात्रों का तुलनात्मक अध्ययन'' शीर्षक मुझे दिया, तो ऐसा लगा कि मुझे कोई अमूल्य अयाचित निधि प्राप्त हो गई है। नर नारी का आकर्षण विविध रूपा होता है। नारी देह का सौन्दर्य, उसके कर्ममय सौन्दर्य से कम महत्वपूर्ण नहीं होता और कभी कभी कुरूपता भी हमें इतना आकृष्ट करती है कि मुझे कुछ सोचने के लिए विवश करती रही, क्योंकि सौन्दर्य

के कोमल स्निग्ध मश्रिण सुचिकण सौकुमार्य माधुर्य पूर्ण रूप का बहुत कुछ पढा और लिखा हुआ है, किन्तु उसके विरूप पक्ष को जब मैने अनदेखे अनजाने पुल में पढा तो मेरी सौन्दर्य के प्रति एक नई दृष्टि विकसित हुई । प्रस्तुत शोध कार्य को मैने सात अध्याय में विभक्त किया है । जिसमें काम सौन्दर्य और प्रेम के विश्वव्यापी मान्यताओं और उससे प्रभावित होने वाले चरित्र के अन्य पक्षों को निरूपित किया है । साथ ही काम प्रेम और सौन्दर्य के पक्ष का वस्तुनिष्ठ तथा उसके प्रभाववादी दृष्टि का चित्रण विश्लेषण किया है । शोध कार्य में जिस वस्तु वादी दृष्टि की अपेक्षा होती है उसका यथासम्भव पालन शोध कर्त्री ने किया है । सिद्धांतों और उसके व्यवहार निर्देशन हेतु आगमन निगमन शैलों का यथासम्भव प्रयोग उपयोग शोध कर्त्री ने किया है ।

शोध ग्रन्थ का प्रथम अध्याय काम प्रेम एवं सौन्दर्य के स्वरूप की सैद्धान्तिक व्याख्या से सम्बन्धित है । प्रथम अध्याय का प्रारंभ प्राणी मात्र की आहार निद्रा जैसी मूल प्रवृत्तियों का उल्लेखकर न ही ''मानषात् श्रेष्ठ तरम ही किंचि्त'' के अनुसार मनुष्य की श्रेष्ठता के कारक तत्वों बुद्धि विश्लेषण क्षमता इत्यादि का उल्लेख किया गया है । इसी परिप्रेक्ष्य में पाश्चात्य मानव शास्त्री मैण्डुअल, फ्रायड, युंग एवं एडलर की मूल मनोवृत्तियों का विश्लेषण किया गया है । क्योंकि काम प्रेम और सौन्दर्य की अनुभूति एवं अभिव्यक्ति इन्ही मूल वृत्तियो से सम्बद्ध है । भारतीय काम एवं काव्य शास्त्र में में काम रति और वासना का तात्विक अन्तर निरूपण कर वैदिक साहित्य से लेकर विभिन्न काव्य ग्रन्थों, दार्शनिक निरूपणों में कामतत्व की महनीयता निरूपित की गई है । क्योंकि वैदिक और उपनिषद, प्रस्थान त्रयी विशेष रूप से गीता में श्री कृष्ण ने 'कामोऽअहं भरतर्षभ' की उद्घोषणा की है । यही काम स्थायी समर्पण माधुर्य एवं त्याग पूर्ण होने पर प्रेम बनता है । जिसके मूल में सौन्दर्य भावना निहित है प्रकृति से लेकर जडचेतन एवं मानव तक सौन्दर्य के विविध रूप दिखाई पडते है । इस परिप्रेक्ष्य में आकर्षण नैनहारी से लेकर मनोहारी रूप सौन्दर्य की महत्ता बलवत्ता मधुर मिलन के उद्देलित रसप्रेशलता के साथ शोध कर्त्री ने पाश्चात्य मनोविज्ञान या मनोविश्लेषण कर्ताओं की दृष्टि से love sex and beauty का तात्विक विवेचन वस्तु परक रूप में कर वाह्य एवं अभयान्तर सौन्दर्य उसके लक्षण समानुपातिक दृष्टि के साथ उसके दार्शनिक विवेचन क्रम बद्व रूप में प्रस्तुत कर शोध कर्त्री ने यह स्थापित करने का प्रयास किया है कि काम प्रेम और सौन्दर्य परस्पर एक या अन्योन्याश्रित है । अत: काम प्रेम और सौन्दर्य वस्तु के साथ दृष्टि या मूलरूपों की भी चर्चा विस्तृत रूप से की गई । बात यह है कि मानव से लेकर प्रकृति तक में प्रजनन, मिलन, संयोगइच्छा, शक्ति कार्य करती है यह इच्छा ही प्राकृतिक विकास का मूल कारण

है। फ्रायड ने तो काम को ही सर्वत्र व्यापक मानकर उसकी बलवत्तर महत्ता निरूपित की है। दार्शनिक दृष्टि से शोध कर्त्री ने प्रथम बार काम के द्विविध रूपों का उल्लेख किया है। जिसे हम वासनामूलक और परमार्थमूलक काम कह सकते है। क्योंकि परमार्थमूलक काम में श्रद्धा और प्रेम का योग है। जिसे हम शक्ति कहते है उसका आराध्य अनन्त सौन्दर्य वान है और भक्त सकांक्ष होकर उसका समीप्य चाहता है इस प्रकार काम के साथ बोध, वृत्ति ज्ञान और भक्ति को जोडकर उसके उच्चतर रूप की प्रतिष्ठा प्रथम अध्याय में किया है। इसी प्रकार आकर्षण से युक्त सौन्दर्य का विवेचन नाट्य शास्त्र से लेकर वात्सायन कृति कामसूत्र और पाश्चात्य विचारको में सौन्दर्य के विविध मापदण्डों की चर्चा कर उसे वस्तुगत दृष्टिगत और मूल्यगत रूपों में व्याख्यायित किया गया है। काम और सौन्दर्य की अभिव्यंजना के लिए प्रेम की अनिवार्यता उसके भौतिक आधिभौतिक रूपों की प्रतिष्ठा प्रथम अध्याय का मूल विवेच्य विषय है। इधर भूमंडली करण औद्योगिक क्रांति आर्थिक समृद्धि के कारण वासना को ही प्रेम समझने वालों की चित्त वृत्तियों का तात्विक विश्लेषण कर प्रेमजन्य आनंद की उदात्त भाव भूमि, दाम्पत्य प्रेम, ईसुरी प्रेम, वात्सल्य और काम जैसे विषयों की चर्चा कर आगमन निगमन शैली के द्वारा शोध कर्त्री ने काम प्रेम और सौन्दर्य सम्बन्धी मानदण्डो का निरूपण कर उसके प्रभाव जन्य स्वरूप को स्थिर कर आलोच्य कथाकारों के नारी चरित्र के विश्लेषण मूल्यांकन की पृष्ठभूमि तैयार की है।

द्वितीय अध्याय आलोच्य कथाकारों के कथागत नारी चरित्र की दशा और दिशा का मूल्यांकन प्रस्तुत किया है। प्रारंभ में चरित्र के लगभग पर्यायवाची शब्दो पात्र चरित्र व्यक्तित्व के शास्त्रीय रूप का सैद्धान्तिक निरूपण किया गया है। पात्र अनेकार्थी शब्द है किन्तु हमारा अभिप्राय साहित्यगत निविष्ट ऐसे पात्रो से है जो अपने संवेगों मनोवेगों क्रिया व्यवहार से चरित्र का रूप धारण करते अथवा चरित्र से आगे चलकर व्यक्तित्व रूप में प्रतिष्ठित होते हुए दिखाई देते है वस्तुतः जब किसी कथा या घटना का वर्णन साहित्य का नाम करण करता है यही नामकरण अपने क्रिया कलापों से पात्र से आगे बढकर चरित्र बन जाता है। सामान्यतः चरित्र के सद् असद् दो भेद किये जाते है। इसी का परवर्तित रूप व्यक्तित्व है जिसमें शारीरिक सौन्दर्य बौद्धिक और सामाजिक सत्व निहित होते है। पात्र से कोई विशेष अर्थ नहीं निकलता क्योंकि यह नाम मात्र है यही पात्र जब किसी घटना के परिपेक्ष्य में अपनी क्रिया या प्रतिक्रिया व्यक्त करता है तब वह चरित्र हो जाता है और वह विविध सम विषम, उच्च अवच्च, संघर्ष एवं सौविध्य परिस्थितियों में एक सा व्यवहार करता है, तब चरित्र व्यक्तित्व वान बन जाता है। इस प्रकार व्यक्तित्व के मूल में व्यक्ति की शारीरिक बनावट संवेगो या आचरण करने के

ढंग अभिरूचियॉ अभिवृत्तियॉ क्षमता योग्यता दूसरे से विशिष्टता या समांजस्य करने की अदभुत क्षमता उसके मूल तत्व है । इन कारक तत्वों के पीछे भी चेतन अवचेतन अचेतन मस्तिष्क की संरचना उसके स्वरूप के साथ इड इगो और सुपर इगो जैसे ग्रन्थियों की महनीयता पाश्चात्य मनोविश्लेषणको ने अलग अलग दृष्टि से निरूपित की है । शोध कर्त्री ने भारतीय एवं पाश्चात्य चारित्रिक स्वरूप का निर्धारण समन्वय प्रवृत्ति से करके आयामत्रय सिद्धांत का उपयोग किया है । प्रथम शारीरिक आयाम है जिसमें शरीर का आकार प्रकार रूप रंग, मुखाकृति, हाथ पैर, अंगुलियों की बनावट और वंशानुगत रूप में प्राप्त गुण अवगुणों की महत्ता है । द्वितीय आयाम सामाजिक प्राप्त गुण अवगुणों की महत्ता के साथ सामाजिक आयाम है । जिसके अर्न्तगत शोध कर्त्री ने शिक्षा धर्म राष्ट्रीयता मनोविनोद अजीविका उसके साधन समुदाय विशेष की चर्चा की गई है । तृतीय मनोवैज्ञानिक आयाम है जिसमें यौन जीवन, आकांक्षाए, अभिव्यक्ति, नैतिक स्तर, वैक्तिक महत्वाकांक्षा काम प्रेम सौन्दर्य गत जटिलताएं अन्धविश्वास ज्ञान विज्ञान में कला कुशलता कल्पना, अभिरूचियॉ उनके अभिव्यक्ति के प्रकार इस आयाम के प्रमुख तत्व है । इस व्यक्तित्व के मुख्य रूप से बहुप्रचलित दो रूपों की चर्चा शोध कर्त्री ने की है अर्न्तमुखी एवं बर्हिमुखी व्यक्तित्व । इनके अन्तर्गगत भाव या विचार प्रधान उपभेद शोध कर्त्री ने उल्लेखित किया है । इसी अध्याय के दूसरे भाग में नारी चरित्र की अवधारणाएं उनके मूल रूप, वर्गीकरण के विविध मानदण्ड का उल्लेख किया है । इस परिप्रेक्ष्य में लिखा गया है कि पात्र की द्दष्टि से दो प्रकार की नारियाँ आलोच्य कथाकारों में दिखाई देती है प्रधान और गौण स्त्री पात्र साथ ही भारतीय संस्कृति साहित्य में उपलब्ध काम सूत्र नाट्य शास्त्र और काव्यशास्त्रीय लक्षण ग्रन्थों में पद्यमिनि इत्यादि कोटियों के साथ स्वकीया, परकीया और सामान्य जैसे मुख्य भेदकर नायिका भेद का विशाल ढांचा, रूप सौन्दर्य, रूचियों प्रेम प्राकट्य के प्रकार तथा देह कान्ति यष्टि, आन्तरिक गुणों में सौकुमार्य, त्याग, कोमलता, परोपकार, लीला, विछिच्प्त जैसे आंगिक संचालनों की दृष्टि से यह नायिका भेद एक पूरा शास्त्र ही खडा हो गया है जिसका सामान्य परिचय देकर शोधकर्त्री ने अपने अध्ययन हेतु मुख्य और गौण स्त्री पात्रों की वर्गीकरण स्वीकार कर दुनिया की ऑधी आबादी में नारी रूप की प्रतिष्ठा उसकी आकांक्षा उसकी अद्दता की दशा एवं दिशा का संक्षिप्त विवहालोकन करते हुए यह लिखा है कि प्रारंभिक युग में संस्कृत साहित्य नारी को समागत कर अपने को गौरान्वित समझती थी । क्योंकि बालक पुरूष रूप में विकास का यह स्वरूप नारी के बहुआयामी रूप की चर्चा की है । जिसमें बालिका, कन्या, किशोरी, युवती और माता जैसे उसके वाह्य और आन्तरिक रूपाकृति नारी चरित्र की महनीयता और विशालता उसके मातृत्व रूप में ही उपलब्ध

है। बिना मातृत्व के नारी अधूरी मानी गई है, क्योंकि वात्सल्य जनित, त्याग, ममता, उदारता, सर्वस्य समर्पण की भावना नारी को गरिमा के ऐसे उच्च पद पर आसीन करती है, जहाँ पुरूष छोटा और कमजोर प्रतीत होता। है पुरूष को जन्म देने वाली नारी वत्सला, धात्री, जननी, प्रेयसी, पत्नी, सहायिका, सहधार्मिणी और मंत्रणा देने वाले विविध रूपों की चर्चा विश्व के प्रत्येक वाङ्गमय में उपलब्ध है। नारी के एक ओर स्नेह है, तो दूसरी ओर दाम्पत्य है, तीसरी ओर कामवासना है और चौथी ओर मातृत्व है ऐसे चतुष्पद्य पर खडी नारी अर्थ और काम की महत्ता के कारण धीरे धीरे अबला होती गई, पुरुष के लिए पुत्तलिका हो गई। सामान्य पर्णजीवा रूपजीवा, सर्वजन्य सुलभ वेश्या हो गई और आज के भूमण्डली करण में अर्थ और काम के कारण वह अपनी वास्तविक गरिमा खोकर नारीत्व मर्यादा को भूलकर उच्च पद से स्खलित हो, पुरूष के समकक्ष बनने का दर्प पालने लगी। परिणाम स्वरूप सामाजिक सहयोग, पारिवारिक एकता, कौटम्बुक भावना का अपक्षरण होने लगा। पाश्चात्य साहित्य एवं समाज में आज से पचास वर्ष पूर्व स्त्री पुरूषों के साथ रहने के जिन सम्बन्धों को व्यवहारिक रूप दिया, वह बहुत कुछ पशुवृत्त से भिन्न नहीं है क्योंकि living together की अवधारणा और विलास मे ऐसे बच्चों की संख्या, उसका प्रतिशत बढता ही जाएगा जिसमें पिता पक्ष का नाम ही अनाम रहेगा और ऐसे बालक असहाय अनाथ होकर सामाजिक विद्रूपता का कुरिल उपहास करेगे। नारी जो आदि शक्ति थी, गरिमा मयी शक्ति थी शोषण का शिकार होकर चरण दासी हो गई या वंशधर रक्षिका (रखैल) हो गई। उसके सतीत्व पर प्रश्न चिन्ह लगने लगे और उसका स्वरूप इतना विकसित या कुरूप हो गया कि भारतीय संस्कृति की मूल अवधारणा ही लुप्त हो गई है।

तृतीय अध्याय हिन्दी का कथा साहित्य स्वरूप एवं विकास से सम्बन्धित है। शोध कर्त्री ने पूर्व पीठिका के रूप में हिन्दी कहानियों के उद्‌भव और विकास की स्थिति का संक्षिप्त विवेचन किया है। संस्कृत के दश कुमार चरित, वृहद कथा, मंञ्जरी जैसी कहानियों के साथ वेताल पच्चीसी, सिहांसन बत्तीसी या अय्यारी, प्रधान कहानियों की चर्चाकर इस दिशा में प्रेमचन्द के महत्व को रेखांकित किया है क्योंकि उन्होने कहानी में कौतूहल एवं जिज्ञासा वृत्ति के साथ मानव चरित्र की व्याख्या को अपना लक्ष्य बनाया और समाज के उच्च मध्य एवं निम्न वर्ग के स्त्री पुरूष पात्रो कें माध्य आर्थिक सामाजिक राजनीतिक समस्याओं को विस्तृत रूप में चित्रित किया है। प्रेमचन्द्रोत्तर युगीन कहानियां दर्शन मनोविज्ञान समाज शास्त्र राजनीति विज्ञान विभिन्न क्षेत्रों से प्रभावित कहानियाँ है। जीवन जगत के जटिल द्वन्द्वों की व्याख्या करने और तद्‌युगीन समाज की गतिविधियों का लेखा जोखा प्रस्तुत करने में इस युग

में एक ओर प्रगतिवादी कहानियाँ लिखि गई तो दूसरी और मनोविश्लेषण और रोमांस प्रधान कहानीकार सामने आये । कुछ यथार्थवाद कुछ घोर यथार्थवादी कथाकरों के भी हस्ताक्षर सश्क्त होकर उभरे है । यशपाल, अज्ञेय, इलाचन्द जोशी, भगवती चरण वर्मा, ऐसे ही कथाकार है, जिनकी कहानियों के भावान्तर भावानुवाद या छायानुवाद अनेक कहानी कारो ने किया है। राजनीतिक परिस्थतियों के कारण देश की स्वतंत्रता चीन के साथ युद्ध में पराजय साहित्यकारों को युगीन शासन से मोहभंग हुआ अत: कहानी भी नया रूप ले कर आयी जिसे कथा समीक्षको ने नई कहानी कहा । इस युग की कहानी में नगरीय जीवन में पायी जाने वाली चौथी सहानुभूति, जीवन की कृत्रिमता आन्तरिक खोखलेपन को व्यक्त किया गया है । कमलेश्वर राजेन्द्र यादव इसी धारा के प्रारम्भिक कवि है । इस युग की कहानियों में वस्तु एवं शिल्पगत नये प्रयोग हुए है । मूल्य हीनता की जगह मूल्य परिवर्तन की घोषणा की गई है । इसके बाद हिन्दी कथा साहित्य विभिन्न कथा आन्दोलनों में विभक्त हो गया क्योकि कविता में जनता से जुडने की मनोवृत्ति नहीं रही उसमें अतिशय बौद्धिकता आ गई थी । बडे और मोटे उपन्यास समय की मांग करते थे इस कारण कहानी जीवन के केन्द्र में आ गई और उसमें विदेशी प्रभाव बहुविध रूपों में छाने लगा । परिमामस्वरूप अकहानी सचेतन कहानी नई कहानी समान्तर कहानी साहित्यक कहानी, साठोत्तरी कहानी, समकालीन कहानिया आंचलिक कहानियां जैसे अनेक आन्दोलन उठ खडे हुए, जिनमें से नई कहानी औश्र समकालीन कहानी अधिक प्रचलित नाम हुए । कमलेश्वर नई कहानी आन्दोलन के पुरूस्कर्ता रहे और उनका लेखन क्षेत्र समकालीन कहानीतक विस्तृत कलक वाला है । टी.वी. मीडिया फि ल्म जैसे सश्क्त अभिव्यंजना के माध्यमों का उन्होंने उपयोग कर समसामायिक जीवन की विडम्बना शहरी स्वार्थ परता क्षुद्र राजनीतिक महत्वाकाक्षों के कारण जीवन के आए अलगाव भयावहय अजनवीपन उनकी रचनाओं के प्रमुख दार्शनिक चिन्तन है जिन्हें उन्होने अपने विविध कहानी सकलनों में उपन्यस्त किया है । समकालीन कहानी के बाद लिखि जाने वाली कहानियों में नये मूल्य बोध टूटती हुई मर्यादाए अस्तित्व वादी चिन्तन की मुखरता महिला एवं दलित चेतना का प्रामुख्य सामाजिक विवाहेत्तर शरीर सम्बन्धों की मान्यताएं इन कहानियों के प्रमुख वर्ण विषय है जीवन की जिजीविषा और छटपटाहट नये मूल्यों की तलाश इन कथाकरों के प्रमुख विषय है । शिल्पगत प्रतिमान भी नये रूप में प्रयुक्त हुए है । राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश, निर्मल वर्मा गिरिराज किशोर शिवप्रसाद सिंह, राम दरश, असगर बजाहत नूरजहॉ नासिरा शर्मा मार्कण्डेय शिव प्रसाद सिंह, उदय प्रकाश ऐसे ही कथाकार है जिन्होने हिन्दी कथा क्षेत्र को नई दशा और दिशा दी है ।

पूर्व पृष्ठों में कथासाहित्य के अन्तर्गत हिन्दी कहानियों के दशा और दिशा का विहगालोकन प्रस्तुत किया गया है। अब इसके द्वितीय भाग हिन्दी उपन्यास के स्वरूप विकास की रूपरेखा प्रस्तुत कर आलोच्य कथाकारो के कहानियाँ और उपन्यासो का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया जायेगा। हिन्दी उपन्यासों की पूर्व पीठिका प्रस्तुत करते हुए संस्कृत बाङ्मय में जातक आख्यायिका, गाथा कथा इत्यादि शब्दों पर विचार विमर्श कर उपन्यास का शाब्दिक अर्थ प्रस्तुत करते हुए यह लिखा गया है कि उपन्यास वह काल्पनिक गद्य है जिसमें वास्तविक जीवन से मिलते जुलते चरित्रों और कार्य कलापों का विस्तृत और सुम्बद्ध चित्रण होता है। पाश्चात्य साहित्य में नावेल के सारभूत तत्वों एवं हिन्दी काव्यशास्त्र में उपन्यास के साहित्यिक तत्वों का समन्वय करते हुए यह उपस्थापित करने का प्रयास किया गया है कि उपन्यास कल्पित या यथार्थ पूर्ण गद्यमय विशाल काय आख्यान है। इसके पात्र चरित्र और व्यक्तित्व से सम्पन्न हो हमारे धरिवेश के अनुकूल होते है। हिन्दी उपन्यासों के प्रारंभ में परीक्षा गुरू ब्रम्हचारी, श्यामाशुक्ल, विधवा की विपत्ति जैसे सामाजिक ऐतिहासिक या तिलस्मी प्रवृत्ति प्रधान उपन्यास प्रमुख है जिसमें चन्द्रकांता सत्तित का विशेष स्थान है। हिन्दी उपन्यासों का वास्तविक स्परूप प्रेमचन्द्र युगीन उपन्यासों में आ पाया है प्रेम चन्द के उपन्यास ततकालीन समाज के राजनीतिक सामाजिक आर्थिक समस्याओं का चित्रण उनके मूलभूत कारक तत्वों और उसके निदान का प्रयास किया गया है। प्रेमचन्द की इस दृष्टिकोण से प्रभावित होकर उपन्यास लिखे है विशम्भर नाथ शर्मा कौशिक, बेचैन शर्मा उग्र, भगवती चरण बाजपेयी इत्यादि उपन्यासकरों ने इस धार को आगे बढाया है। जिसमें मनुष्य के पारस्परिक सम्बन्धों की मार्मिकता उसके शील एवं चारित्रिक विशेषता तदयुगीन समाज की ज्वलंत समस्याओं का चित्रण नये भाषा शिल्प में व्यक्त हुए है। प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी उपन्यासों की अनेक धाराए हमें उपलब्ध होती है जिनमें मनोविश्लेषणात्मक, आंचलिक सांस्कृतिक स्वछन्दतावादी प्रवृत्तियां प्रमुख है। जिसमें मानव चरित्र की आन्तरिक जटिल गुत्थियों विडम्बनाओं दमन और कुण्ठाओं का चित्रण होता हे। जैनेन्द्र इला चन्द जोशी, अज्ञेय इस धारा के प्रमुख उपन्यासकार है। ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में चर्तुसेन शास्त्री वृन्दावन लाल वर्मा, राहुल साकृत्यावन, गोविन्द बल्लभ पन्त सशक्त हस्ताक्षर है। सामाजिक यथार्थ बोध के उपन्यास अंग्रेजी शासन के विरूद्ध पनपे आक्रोश से उत्पन्न उपन्यास है। जिसमें मार्क्स वादियों ने प्रगतिशील लेखन के नाम पर एक नई प्रवृत्ति का सूत्रपात्र किया जिसमें यशपाल, भगवती चरण वर्मा, भूपेन्द्रनाथ अश्क, रागेयराघव प्रमुख उपन्यास कार है। इन उपन्यासों में युगीन यथार्थ चेतना, यथार्थ वादी पात्रों का चरित्र, बर्हिमुखी जीवन के प्रति विरोध नये भाषा शिल्प के रूप में उपधारा के

सम्बन्धों में जाकर समाप्त होती है कमलेश्वर की विवाहेत्तर सम्बन्धों की नूतन व्याख्या चित्रा के माध्यम से हुई है उसी प्रकार सम्रुद में खोया हुआ आदमी की नायिका समीरा ऐसी ही नायिका है जो वाल्यावस्था में वात्सल्य और प्रेम से अभावग्रस्त रही है। दूसरे को देख तदानुरूप फैशन के कपडे पहनना और पुनः पुराने रूप में लौटकर घर से बाहर निकल जाना सीधी समझदार नायिका का प्रतीक है। कमलेश्वर का बहु प्रसिद्ध उपन्यास काली आँधी की नायिका मालती मुग्धा नायिका से विकसित होकर शीर्ष राजनेत्री के रूप में व्यजित हुई है। जिसमें वैयक्तिक महत्वाकांक्षा से युक्त नारी एक ओर अपने पुत्री तथा पति से दूर हो जाती है। अलगाव वाद की विडम्बना और उसकी त्रासदी जगदीश और मालती के बीच बिखरते प्रेम की अभिव्यंजना कमलेश्वर ने मनो विश्लेषण वादी दृष्टि से किया है। नारी अस्तित्व एवं अहम भाव से पूरित मालती परिपक्व राजनेत्री बनती है और कूटनीति के कारण एक सफल शीर्ष नेत्री के रूप में अवतरित होती है। आगामी अतीत की चंदा स्त्री पुरुष जीवन की मूलभूत संवेदना काम और प्रेम के विविध रूपों का तत्सुखी रूप चन्दा में दिखाया जाता है जो शोख चंचल और सच्ची प्रेमिका है। सुबह दोपहर शाम की नायिका एक श्रेष्ठ बेटी, पत्नी, बहू और भाभी के रूप में जीते हजुए स्वतंत्र विचार एवं अंग्रेजों के प्रति विद्रोह की सशक्त भावना किये हुए उपस्थित होता है। रेगिस्तान की नायिका सुशीला औत्सुक्य से पूरित अच्छे जीवन साथी की लालसा किए हुए उपन्यास में एक सभ्रान्त पत्नी की भूमिका निभाती हुई नजर आती है। प्रेम बाह्य मांसलता इगो, जन्य जिजीविषा की प्रधानता, सौन्दर्य के नग्न रूप को ही वास्तविक रूप मानने की भावना, स्वाभिमान प्रेम में तृप्ति का प्रामुख्य मौज मस्ती आनंद करने के भाव, साधारण आय के बावजूद अपनी कामजन्य महत्वा काक्षाओ के लिए किये गये थोडे बहुत अनैतिक कार्य, कस्बाई संस्कृति के अन्तर्गत प्रथम दृष्टि या प्रेम एवं समपर्ण की भावना, प्रेम के वियोग में दीपक की तरह जलती हुई नायिका इन कहानियों की नायिकाओं के प्रमुख विशेषताँए है। जिसके दैहिक आकर्षण, प्रेमजन्य विवशता, प्रेमी के लिए त्याग की चाहत और समर्पण तथा तत्पश्चात सामाजिक विद्रूपता इन नायिकाओं की नियति है जिसे कमलेश्वर ने आधुनिक कस्बाई संस्कृति से लेकर महानगरीय परिवेश जन्य विविध रूपों में प्रस्तुत किया है। जहां सौन्दर्य में मांसलता है आंगिक विकास के कुछ स्पष्ट चित्रण है, प्रेम में अद्रमता है, प्रिय से मिलन की तीव्र आकांक्षा है और महानगरीय स्वार्थ बोध एवं अस्तित्व हेतु नारी का पुरूष के मनोभावो का शोषण कमलेश्वर जैसे सशक्त उपन्यासकार ने एतद् विषयक घटनाओं के ताने बाने से इन नायिकाओं के चरित्रगत विशेषताओं से जिस कौशेय पर का निर्माण किया है उसमें विविध रंगो की छटा की उमंग, उत्साह, त्याग, भावुकता, कोमलता जैसे आंतरिक

और बाहय गुणों से सम्पन्न ये नायिकाए हमें अपने परिवेश में किसी ने किसी रूप में मिल जाती है । इसी तरह राजेन्द्र यादव के उपन्यास की जया की कोमलता, बौद्धिकता, सोच समझकर प्रेम करने वाली एवं बिना किसी धार्मिक कृत्य के सम्पन्न किये पति पत्नी के रूप में रहना उसके अत्याधुनिक रूप को प्रदर्शित करता है । सारा आकाश की प्रभा साधारण सुन्दरी सुशिक्षिता,स्वाभिमान के कारण उपेक्षिता हताश के बावजूद महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति हेतु पति की प्रेरणा स्वरूप बनना प्रभा की प्रमुख विशेषता है इसमें सबसे बडी बात यह है कि विवाह के पश्चात् मिलन की प्रथम रात्रि से लेकर चौदह वर्ष तक बिना संवाद के बिना शारीरिक समागम के एक युवती नारी के आंतरिक व्यथा कथा का चित्रण है । मंत्र विद्व की नायिका सुरजीत सुशिक्षिता किशोरावस्था में पुरूष से प्रेम कर पंजाबी पिता एवं पिरवार में विद्रोह कर घर से भाग जाना और पिता के आतंक में रहकर पुन: प्रत्या वर्तन करना उसकी चारित्रिक विशेषताएं है । एक इंच मुस्कान की रंजना पति अमर द्वारा उपेक्षिता, ईर्ष्यालु साधारण गृहणी है जो अतिशय उपेक्षा पाकर उसके जीवन से बाहर निकल जाती है । राजेन्द्र यादव की कहानियों में सभी पात्र नीराजना, रश्मि, पुष्पा प्रमुख नारी पात्र है जिसमें काम और प्रेम के साधारण रूप, दैहिक आकर्षण, प्रेम की कसक मान मनुहार, दाम्पत्य जीवन में बार बार दोहराए जाने वाले एक ही प्रकार के की गई रति क्रियाओं से उब्र नीराजना की उन्मुक्तता, चंचलता विवाह संस्था के प्रति विद्रोह, सामाजिक और धार्मिक परम्पराओं से विद्रोह जैसे रूप, चित्रित हुए तो दूसरी तरफ महत्वाकांक्षा से हीन सामान्य परतंत्र नारी के रूप में रश्मि और पुष्पा का चरित्र सामान्य स्त्री के रूप में चित्रत है । सारांश यह है कि आलोच्य कथाकारों के उपन्यास और कहानियों में प्राप्त नारियाँ कुछ ग्रामीण कुछ कस्बाई तथा कुछ महानगरों में रहने वाली है। जिनके चारित्रिक विविध पक्षो का चित्रण उपन्यासकारों ने किया है । काम प्रेम और सौन्दर्य के अन्तर्गत रूपाकर्षण मिलन की चाह प्राप्ति उसके पश्चात प्रेम में समर्पण प्रगाढ दाम्पत्य इत्यादि समानता पाई जाती है । तो सौन्दर्य की आकांक्षा क्रान्ति शोभा मार्धुय मश्रिणता रति क्रिया के प्रति औत्सुक्य, सम्बन्धों की छटपटाहट भी सामान्य रूप से आलोच्य कथाकारों में मिलता है । दोनो कथाकरों के नारी के चरित्रगत विशेषताओं साम्य और वैषम्य का चित्रण करते हुए यह कहा गया है कि –

पंचम अध्याय में आलोच्य कथाकारों के गौण नारी पात्रों का चित्रण है । इस संबंध में सलमा, रम्मी, चांदनी, मुन्नी, बीनू, सूरज की माँ, प्रमोद की भाभी नारी पात्र आते है जिनके बाह्य स्वरूप का चित्रण करते हुए यह उल्लिखित किया गया है कि गौण पात्र ऐसे अप्रमुख पात्र होते है, जो कथा पटल पर थोडी देर के लिए आ कर अपने क्रिया कलापो द्वारा या तो

घटनाक्रम को आगे बढाते है या उसे परिवर्तित करते है । अथवा पात्र विशेष के चारित्रिक पक्ष को किसी न किसी रूप में प्रकाशित करते है । उपमा तो वहुत उपयुक्त नहीं है, किन्तु धर्म की समानता के लिए धूमकेतू का उल्लेख किया जा सकता है । जिस प्रकार धूमकेतू या विद्युतलता क्षणभर के लिए आकश पटल पर दिखाई देती है और फिर कांतिहीन हो जाते है । ऐसे ही गौण नारी पात्र है । कथाकारों ने उनके वाह्य स्वरूप की कम ही चर्चा की है । उनकी आंतरिक मनोभावों का चित्रण अधिक किया है काम प्रेम और सौन्दर्य की दृष्टि से सलमा अत्यन्त महत्वपूर्ण नारी है क्योंकि उसका पति मकसूद और प्रेमी सत्तार के मध्य समलैंगिक सम्बन्ध है । ऐसी नारी के अर्न्तद्वन्द्व कायिक चाह, मकसूद का स्त्रियों की तरह संजना, सलमा का सब कुछ देखना उसके व्यक्तित्व की ऐसी विशेषता है जो अन्य नारी सहन नहीं कर सकती । जब कि रम्मी साधारण पत्नी है चांदनी दक्ष वेश्या के रूप में चित्रित है । इसी प्रकार रेगिस्तान की मुन्नी चाचा की मृत्यु के वाद पिता के द्वारा सम्पत्ति हडपने पर विद्रोह करती है और वह विश्वनाथ के साथ दृढता पूर्वक खडी रहती है । कुलटा की बीनू साधारण सुगृहणी है जो पति के साथ सफल दाम्पत्य जीवन व्यतीत करती है । इसी प्रकार सूरज की माँ मातृत्व से भरपूर नारी है जो पारिवारिक टूटन से अपने को बचाती है । प्रमोद की भाभी सविता की प्रेम भावनाओं को अनदेखा करके उसे अपने देवर प्रमोद को, दूसरी लडकी से विवाह समझौते के लिये राजी करती है ।

षष्ठ अध्याय आलोच्य कथाकरों के साहित्य में विकृत मानसिक नारी चित्रण से सम्बन्धित है । प्रारंभ में यह स्थापित करने का प्रयास किया गया है कि विकृत मानसिकता का अर्थ मानसिक विकलांगता नहीं है अपितु इसके अर्न्तगत आने वाले पात्र कुण्ठित या दमित वासना वाले होते है । इस परिप्रेक्ष्य में फ्रायड के लिबडो ग्रन्थि के साथ इड इगो और सुपर इगो की विस्तृत व्याख्या की गई है । लिबडो ही वह ग्रन्थि है जिसमें मनुष्य के जिजीविषा और उसमें काम की भावना अनस्यूत रहती है । यह व्यक्तित्व का मूल परिचालक होता है । सामान्य अवस्था में तृप्त यह काम भाव व्यक्ति को उदात्त स्वरूप प्रदान करता है जबकि इसके दमित कुष्ठित या अन्य किसी कारण वश अतृप्त रहने पर मनुष्य को मानसिक रूप से विकृत कर देता है इड ऐसी ही भावना है जो व्यक्ति के अहम और उसके वाह्य परिवेश से प्रभावित क्रिया कलापो पर नियंत्रण करता है यह सहज रूप में प्रत्येक नर नारी के मन में सुप्त अवस्था में विराजमान रहता है । इसे जाग्रदावस्था में तर्क नैतिकता, सामाजिक प्रतिबन्धों की कोई चिन्ता या परवाह नहीं रहती इसका मुख्य सम्बन्ध कायिक ईच्छाओं की पूर्ति से होता है जबकि इगो स्वचेतन बुद्धि का रूप है यह वाह्य परिवेश से प्रभावित मन को सामाजिक नियमों

मर्यादाओं के बीच संतुलन बनाने में क्रिया निष्पादित करता है। मूल रूप से यह भाव या आवेग मानव की मूल प्रवृत्तियों पर नियंत्रित या संसोधित करने का उपक्रम करता है और यही इड इगो का संघर्ष होता है जिसमें सुपर इगो की महज भूमिका होती है। यह संवेग संस्कृति, परम्परा, आदर्श, नैतिक, नियम, सामाजिक बन्धनों से मिलकर मनुष्य के व्यक्त्वि का विकास करता है। कुछ मनोवैज्ञानिक इसे अन्तरात्मा की आवाज कहते है। सुपर इगो शासित व्यक्ति ही उदात्त चरित्र एवं भौतिक वातावरण से शासित सांस्कृतिक निष्ठा से युक्त होता है। मानसिक विकृत मूल रूप से अचेतन मस्तिष्क का वह भाग है जिसमें इड और इगो के संघर्ष चलते है और दमित वासना संग्रहीत होती रहती है। परिस्थिस्तियों के अनुकूलन पर वे किसी न किसी रूप में प्रगट होकर व्यक्तित्व को असहज बना देते है। एक सडक सत्तावन गलियों की बंसिरि ऐसी ही नारी पात्र है, जो मूलत: गाँव की है, आग की लपट की तरह कुन्दन सा चमकता उसका शरीर, रस से सरावोर उसका माँसल शरीर ग्रामीण के साथ डकैत और पुलिस को भी आकृष्ट करता है और इन सबकी शिकार बंसिरी कभी डकैत की बीरता, साहस, पराक्रम पर मुग्ध है, तो कभी अपनी स्थिति समझ उसके विरूद्ध हो जाती है। परिणाम स्वरूप इस द्वन्द्ध में वह नौटंकी या वेश्या ग्रह तक की यात्रा करती है और सरनाम से कभी प्रेम करती है, तो कभी घृणा। अन्त: में पुरूष संसर्ग के लिए लालयित बंसिरि कवि गेंदा लाल के चक्कर में पड जाती है। तथा सरनाम गेंदा लाल से कुछ रूपये में रंगीले की लिए उसे खरीद लेता है। बंसिरि का प्रेम न तो रंगीले के लिए न ही सरनाम के लिए रहता है। सरनाम जब उसे आसन्न प्रसवा जान अस्पताल से लेकर घर छोड जाता है तो बंसिरि फिर वही ज्यो की त्यो रह जाती है। न तो वह उन्मुक्त भाव से प्रेम ही कर पाती है, और न ही समर्पण कर पाती है। क्योंकि उसकी मूल चाहत तो सरनाम ही है जिसे वह पाना भी चाहती है। और क्रोध के कारण उसके विरूद्ध गवाही दिलाकर अपने इगो को संतुष्ट भी करना चाहती है। ये जीवन के मुख्य पक्षों में क्रोध, प्रतिशोध, प्रतिहिंसा और परपीडन है लेकिन वह दृढ उदार एवं स्वाभिमानी नारी भी है। 'डाक बंगला' की इरा ऐसी महिला है जो सुशिक्षित सभ्रान्त परिवार की पुत्री है सुव्यवस्थित जीवन ही उसकी चाहत है किन्तु इडजन्य सुकोमल काम भावना को नियंत्रण में न रख सकने के कारण अवसाद ग्रस्त हो जाती है। बतरा, सोलंकी, डॉ. चन्द्र मोहन उसके हेलमेट तो बने जिसका एक भाग तिलक भी था। तिलक को भी इरा का मांसल सौन्दर्य सुचिकरण, मश्रिण, अग्र एवं पृष्ठ भाग, देह से निकलती सुन्दर गन्ध उसे आकृष्ट करती है किन्तु नाटक के सहयोगी विमल के साथ इरा प्रेम करती है। लेकिन वह विमल के साथ प्यार का नाटक करने लगती है और इस प्रकार अनेक पुरूषों से सम्बन्ध बनाती हुई इराविमल के

प्रति समर्पित हो निरूउद्‌देश्य जीवन व्यतीत करने के लिए अभिसप्त हो जाती है । उसके जीवन में आए अनेक पुरूषों के मूल में इरा के मन की अस्मिता है जो क्षण भर के लिए ही सही पुरूष की कोमल प्यार भरी बातों में आकर अपना सर्वस्य समर्पण करती है । उसे प्यार की जिंदगी के वस्त्र को काटते सिलते और उधेडते रहना ही उसका भाग्य बना गया । 'वही बात' की समीरा महत्वाकांक्षी है जो पति पत्नी के बीच विघटन का कारण बनता है । प्रशांत नकुल उसके जीवन में आते है । अपनेविद्राही स्वभाव के कारण समीरा एकाकी पन से उब्र कर नकुल से पुर्नविवाह कर लेती है । 'सफेद तितलियों' की सुमन पति की मृत्यु के पश्चात वैधव्य जीवन व्यतीत करने के लिए अभिसप्त है । वह हेत्वाभास (Allulation) के कारण तितलियाँ को देखती है । सफेद कपडे पहनकर जूडे में सफेद फूल लगाती है और जसवन्त की आत्मा को कमरे में मानकर उससे मिलने के लिए उसके कमरे में घुस जाती है । वह सामाजिक बंधनों में बंधकर छटपटाती हुई बारम्बार श्वेत वस्त्र धारण कर जसवन्त के कमरे में घुसने का नाटक करती रहती है । 'तीन दिन की रात' कहानी की मीरा सुन्दरी युवती, प्रसाधन प्रियता नारी एवं स्वातन्त्र की पक्षधर है । उसके इड और इगो के संघर्ष में मूल कारक तत्व यह है –क्या नारी की नियति पुरूष की बाँह ही है । जिसके घेरे में आबद्ध होकर भौतिक सुख सुविधा के साथ झूठी सामाजिक प्रतिष्ठा या सुरक्षा प्राप्त करना है । पत्नी को अफसरा बनाकर पर पुरूष की ऑखों में उसके प्रति लपलपाती कामवासना के तीव्र भावनाओं को देखना,उसे ईर्ष्या की वस्तु बनाना, यही उसके जीवन का सार तत्व है ? तभी तो दिवाकर जितेन्द्र और अमर उसके जीवन में आए लेकिन मीना का काम परपीडक बनकर रह गया । 'मांस का दरिया' की जुगनु का व्यवसाय वेश्या वृत्ति है । वह काम पुत्तलिका बनकर पुरूष की काम वासना की तृप्ति का चाहे अनचाहे केन्द्र बनती है । उसकी जांघ में निकले फोडे के कारण वह इस कार्य में तन्मय नहीं हो पाती । उसकी कमाई के माध्यम पुरूष अन्यत्र चले जाये तो ढलती वयस में उसका क्या होगा । और जुगनु रूग्णावस्था में ही आये श्रमिक मजदूर को आंशिक सुख ही प्रदान कर पाती है, कि इस मध्य उसका फोडा बह जाता है और वह पुन: पुराने जमदूर ग्राहक को बुलाने का प्रयास करती है । कथाकार ने गत यौवन वेश्याओं की नियति का दयनीय रूपचित्रित किया है । राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में सर्वाधिक अस्वाभाविक और मानसिक विकृति का पात्र 'अनदेखे अनजाने पुल' की नायिका निन्नी में देखने को मिलता है । जिसकी कथा की सत्यता का ज्ञान भूमिका पढने से होता है । कुरूपा निन्नी माता पिता से ही उपेक्षिता ही नही, गली मुहल्ले के लोग भी शैशवावस्था से ही उसे काली कलूटी कहते रहे । वय: सन्धि याकिशोरावस्था में आते ही वह कल्लोपरि बन गई ।

युवावस्थाजन्य दैहिक आकर्षण होने के बावजूद भी कुरूपा नारी की नियति उसे स्वभाविक नहीं रहने देती। किशोरावस्था के आते ही शरीर में आए भौगोलिक परिवर्तनो से शरीरगत उच्च अवच्च विकास से उसका मन दिवाकल्पक ही नहीं बनता वरन् उसमें अनेक सतरंगी भावनाए पनपने लगती है किन्तु वाह्य रूप निन्नी के आडे आता है। वह असुन्दर है तो क्या उसे प्रेम ततसम्बन्धी भावनाओं की अभिव्यक्ति उसके लिए शापित है। पुरूष का सानिध्य उसके लिए वर्जित फल है। इन्हीं भावनाओं से निन्नी का जीवन परिचालित होता है और दमित वासनाओं के कारण काम की छोटी मोटी अलियों गलियों मे ंभटक कर अपने संतुष्टि के लिए साधन ढूडती रहती है। उसका मन सामाजिक नैतिकता, मूल्यो,ं मर्यादाओं का विरोध करता है। वह दिखावे के लिए नैतिक बनती है किन्तु उसका अन्तर्मन और उसके क्रियाकलाप चाहे अनचाहे रूपों में अपनी संतुष्टि का मार्ग ढूड ही लेते है। यौन पिपासा से आक्रान्त अदम्य लालसा वाली निन्नी प्रर्दशनी देखने दिल्ली जाती है तब दर्शन का सामीप्य पाकर वह पुरूष सामीप्य का नया अनुभव करती है। इसी प्रकार सागर के साथ अस्वाभाविक क्रियाए कर अपनी अतृप्त भावना की तुष्टि करती है, तथा बैजल के धोखे से प्राप्त चुम्बन उसके इड और इगो को और उद्दीप्त कर देती है। स्वप्निल आकांक्षाओं की पूर्ति एवं वर्जना के कारण निन्नी युंग द्वारा प्रतिपादित विद्रोहणी बनकर अपने को स्वयं पीडा देने लगती है और उसकी नियति हीन भावना से उपर उठाने का कार्य दर्शन के आगमन एवं चुम्बन से होता है। जहां उसे प्रेम की एक नई परिभाषा प्राप्त होती है। 'एक इंच मुस्कान' की अमला आभिजात्य वर्ग की कुलीन नारी है जिसका वैवाहिक सम्बन्ध सुखद नहीं रहा। यद्यपि भौतिक सुख साधन उसे पति से पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध थे, किन्तु वैचारिक मतभेद के कारण अमला को उनसे इसलिए अलग होना पडा कि अमला स्वाअस्तित्व बर्हिमुखी नारी थी। कैलास, अमर उसके अनेक मित्र थे। जिनके मध्य वह नि:संकोच समाज और राजनीति की चर्चा कर अपनी बात को ही सत्य सिद्ध करने का यथासम्भव प्रयास करती थी। मानसिक दृष्टि से वह उच्च अहं भाव (Superierity complex) से से ग्रस्त नारी थी। इसलिए वह किसी एक की होकर नहीं रह पाई, और कुण्ठित जीवन व्यतीत करने को अभिसप्त हुई। 'कुलटा' की मिसेज तेजपाल भी उच्च महत्वाकांक्षा से ग्रस्त, अपने को साहित्यिक सौन्दर्य की समझ शायराना व्यक्तित्व की मलिका होने का दम्भ भरती थी। नियतिवश उसका विवाह मेजर तेजपाल से हुआ, जो बंधी बंधायी जिन्दगी और अनुशासन प्रिय थे। अत: विरोध स्वरूप पति को नपुंसक होने का आरोप लगाकर, वायलन सिखाने वाले के साथ भाग जाती है। राजेन्द्र यादव ने मिसेज तेजपाल के माध्यम से यह दिखाने का प्रयास किया है कि शारीरिक सम्बन्धों

में अतृप्ति के कारण नारी पतित हो जाती है। धन वैभव की सुविधा इस तृप्ति के लिए व्यर्थ होते है। सेक्स की तृप्ति ही नारी के व्यक्त्वि का नियामक है जो कुलटा के माध्यम से व्यक्त हुआ है। शह और मात की सुजाता और प्रिंसेज अर्पणा दोनो अपने-अपने स्तर से उच्च महत्वाकांक्षिणी नारियाँ है। सुजाता नवोदित कथा लेखिका है जो अपने कुछ रूप सौन्दर्य, कुछ देह परिमल, कुछ अपने नारीत्व को शस्त्र बनाकर उदय के विषय में अनेक कामजनित भावनाएं सोचकर उसका दुर्पयोग करना चाहती है, कि उदय उसके लिए कुछ अच्छी कहानियां लिख दे, क्योंकि रूप ऐसा मारक अस्त्र है, जिससे चाहे कैसा भी पुरूष क्यों न हो अप्रभावित हुए बिना नहीं रहता। जबकि उदय अपनी पूर्व प्रेमिका प्रिंसेज अर्पणा के जीवन में सामन्तयुगीन शोषण एवं कुरूरता को सुजाता के माध्यम से चित्रित करना चाहता है। अन्त में सुजाता को अपनी वास्तविकता का बोध और सत्य का साक्षात्कार करना पडता है। 'उखडे हुए लोग' की मायादेवी उद्योगपति की पत्नी है, जो स्वातन्त्रता संग्राम का सत्याग्रही देशबन्धु के क्रियाकलापो से आकृष्ट हो उसकी सह योगनी बनती है। विवाहिता होने पर भी प्रेमी देशबन्धु के साथ मिलकर अपने पति की हत्या करा कर अपना धन रूप और यौवन सब कुछ लुटा कर देशबन्धु की रक्षिता (रखैल) बन कर रह जाती है। जिसे इस बात से बहुत परहेज नहीं है कि देशबन्धु की वासना भरी ऑखों में इस समय माया देवी की अपेक्षा उनकी पुत्री पद्यमा पर टिककर रह जाती है। राजेन्द्र यादव की यह धारणा है कि वासना की पूर्ति या तृप्ति हेतु बनाए गये यौन सम्बन्धी जितने भी कार्य किये जाते है किसी न किसी रूप में व्यक्ति के व्यक्तित्व को विकृत ही करते है क्योंकि उनका सुपर इगो सुप्त हो जाता है।

सप्तम एवं अंतिम अध्याय में काम प्रेम एवं सौन्दर्य की दृष्टि से आलोच्य कथाकारों का योगदान क़ी चर्चा की गई है। इस सन्दर्भ में शोधकर्त्री ने काम के पवित्र, उज्जवल, सहज, स्वभाविक तथा उसके वासना परक विकृति, मांसल उद्दीपक रूप की चर्चा के साथ आत्मोत्सर्ग या सुखद, साहचर्य, सहवास सम्बन्धी प्रेम के उज्जवल रूप तथा सौन्दर्य को वस्तु मूल्य और दृष्टिगत वैविध्य रूपों का संक्षिप्त विहवालोकन प्रस्तुत कर यह कहा गया है कि दोनो कथाकारों में सौन्दर्य के प्राक्तन रूप की अपेक्षा यत्र तत्र नारी भूगोल की दृढता, सुकुमारता मांसलता, कान्ति, कोमलता, सुचिक्कणता या उसके उ्दीपक रूप की चर्चा समान रूप से चित्रित किया है। नारी सौन्दर्य के नख शिख पद्धति पर आंगिक शोभा का चित्रण न कर मात्र केश, भौंह, आँख, नाक आदि अंगो की विशेषता बताकर उसके मारक प्रभाव का वर्णन किया है। यह सौन्दर्य चित्रण दोनो उपन्यासकारों ने वस्तुपरकता के साथ दृष्टिबोध गत अनुभवों का चित्रण किया है। काम प्रेम और सौन्दर्य में पारिवारिक वर्गीय रूपों की भी चर्चा है जिसमें

पत्नी, प्रेमिका, माँ, सास, ननद, देवरानी पुत्रवधू सखी जैसे सम्बन्धों के चित्रण किये गये है। दोनो कथाकरों ने नारी के कोमल और कठोर, दाम्पत्य प्रेम की दृष्टि से सफल असफल या विवाहेतर सम्बन्धों की स्वीकृति दी है । काम के विकृत रूपों का चित्रण कमलेश्वर में अधिक है । उन्होने समलैगिंकता के साथ विवाहेतर सम्बन्धों के कारण जीवन में आये वैषम्य, घुटन या अलगाव की परिणति का चित्रण अधिक जीवन्त रूप में किया है । सौन्दर्य के विरूद्ध कुरूप सौन्दर्य का चित्रण राजेन्द्र यादव ने बडी सूक्ष्मता मार्मिकता और वैविध्य घटना पूर्ण दृष्टियों से किया है । यद्यपि शोधकर्त्री को यह बात लिखते हुए कुछ अटपटी सी लगती है कि कुरूपा स्त्री में भी यौवनगत एक सौन्दर्य होता है । इसे बहुत हल्के ढंग से राजेन्द्र यादव ने दिखाने का प्रयास किया है । आलोच्य दोनो कथाकरों ने सौन्दर्य के मुग्धा, मध्या, प्रौढा, अधीरा, रूप का चित्रण किया है । कमलेश्वर ने इस सौन्दर्य चित्रण के परिप्रेक्ष्य में नारी के सत्, असत्, कोमल, कठोर, दृढ, उर्जावान, महत्वाकांक्षिणी जैसे चरित्र के अनेक पहलुओं प्रतिच्छवियों का चित्रांकन किया है ।

निष्कर्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि कमलेश्वर और राजेन्द्र यादव जिस समय कथालेखन कर रहे थे, समाज में स्त्री पुरूषों के बीच दरकती दीवारे, नारियों की महत्वाकांक्षा, आर्थिक स्वतंत्रता की उद्दाम भावना, जीवन (Carrier) वृत्ति का प्रामुख्य उनकी अस्मिता की हवा, सैद्धांतिक और व्यवहारिक रूप में विद्यमान थी । पति के प्रति एक निष्ठा उतनी महत्वा नहीं रही गई थी । सुजाता अमला विबाहेत्तर या विवाह पूर्व सम्बन्धों की पक्षधर है, तो सुरजीत और जया पलायन कर प्रेम को प्रामुख्य दिया है । काम की तपिश, सौन्दर्य की मादकता और दोनो के मध्य प्रेम के द्वन्द्व का चित्रण दोनो उपन्यासकारों ने किया है । यद्यपि परिणाम दोनो के भिन्न है । दोनो की नारियाँ ग्रामीण, कस्बाई, नगर और महानगरीय क्षेत्र की है । प्रेम की दृष्टि से स्वसुखी एवं तत्सुखी प्रेम पर विश्वास रखने वाली नारियाँ है । कमलेश्वर यदि काम, प्रेम और सौन्दर्य के अनुभूतियों के कथाकार है, तो राजेन्द्र यादव उसके मांसल वस्तु रूप और प्रभावों के चित्रकर्ता है । चन्दा, चित्रा, मालती, इरा कमलेश्वर के तथा प्रभा, सुजाता, जया निन्नी, मिसेज तेजपाल राजेन्द्र यादव के प्रमुख नारी पात्र है जो युगीन परिवेश के साथ आधुनिक मूल्य दृष्टि बोध और सामाजिक यथार्थ की पहचान है ।

ग्रन्थ सूची

आलोच्य ग्रन्थ सूची

अ- कमलेश्वर के आलोच्य उपन्यास एवं कहानियाँ -

1. समग्र उपन्यास – कमलेश्वर – राजपाल एण्ड सन्स
2. समग्र कहानियाँ – कमलेश्वर – राजपाल एण्ड सन्स

ब- राजेन्द्र यादव के आलोच्य उपन्यास एवं कहानियाँ -

1. सारा आकाश – राजेन्द्र यादव – राधाकृष्ण प्रकाशन
2. उखड़े हुए लोग – राजेन्द्र यादव – राधाकृष्ण प्रकाशन
3. मंत्रविद्व, कुलटा – राजेन्द्र यादव – राधाकृष्ण प्रकाशन
4. शह और मात – राजेन्द्र यादव – राजकमल प्रकाशन
5. अनदेखे अनजाने पुल – राजेन्द्र यादव – राधाकृष्ण प्रकाशन
6. एक इंच मुस्कान – राजेन्द्र यादव एवं मनुभण्डारी– राधाकृष्ण प्रकाशन
7. ढोल और अपने पार (कहानी संग्रह) – राजेन्द्र यादव – राधाकृष्ण प्रकाशन
8. जहां लक्ष्मी कैद है (कहानी संग्रह) – राजेन्द्र यादव – राधाकृष्ण प्रकाशन

2. सहायक ग्रन्थ सूची -

1. हिन्दी

1. कामयनी–जयशंकर प्रसाद
2. रामचरित मानस – गीता प्रेस गोरखपुर
3. प्रकृतिवाद
4. हिन्दी शब्द सागर
5. मधुर रस स्वरूप और विकास भाग–1 राम स्वार्थ चौधरी राजकमल प्रकाशन
6. रीति कविता और श्रृंगार रस का विवेचन
7. साहित्य दर्पण विश्वनाथ चौखम्वा प्रकाशन
8. वैदिक सम्पत्ति पं. रघुनन्दन शर्मा शास्त्री
9. प्रिय प्रवास हरिऔध
10. आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य डॉ. रामेश्वर लाल खंडेलवाल

11. मध्यकालीन प्रेम साधना – पं. परशुराम चतुर्वेदी
12. कबीरदास – कबीर ग्रंथावली डॉ. श्याम सुन्दर दास
13. मध्यकालीन धर्म साधना – आ.व.ह.प्र. द्विवेदी
14. हिन्दी काव्य धारा में प्रेम संवाद पं. परशुराम रामायण वाल्मीकि –गीता प्रेस
15. हिन्दी रीति काव्य में सौन्दर्य बोध
16. सौन्दर्य शास्त्र के तत्व डॉ. कुमार विमल राजकमल प्रकाश
17. काव्य बिम्ब –डॉ. नगेन्द्र
18. रिचर्डस के आलोचना सिद्धांत –डॉ. शंभुदत्त झा
19. भारतीय दर्शन का रूप डॉ. उमेश मिश्रा
20. सौन्दर्य विज्ञान – हरिवंश सिंह शास्त्री
21. हिन्दी रीतिकाल में सौन्दर्य – ऊर्षा गंगा धरराव –साजापुरकर
22. शेरूअलम – मौलाना शिवली
23. साहित्य में पात्र प्रतिमान – रमाशंकर त्रिपाठी – उर्जा प्रकाशन कानपुर
24. पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा – हौरेस अनुवाद डॉ. सावित्री सिन्हा
25. असामान्य मनोवैज्ञानिक – डॉ. रामकुमार राय
26. मानस के गौण पात्र –श्री निवास गुप्ता– वैंकटेश्वर विश्वविद्यालय तिरूपति
27. हिन्दी शब्द सागर – श्यामसुन्दर प्रचारणी
28. हिन्दी लघु उपन्यास – डॉ. घनश्याम
29. साहित्यालोचन – डॉ. श्यामसुन्दर दास इण्डियन प्रेस प्रयाग
30. हिन्दी उपन्यासों में चरित्र चित्रण का विकास – डॉ. रणवीर रांग्रा – आत्माराम एण्ड संस
31. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास –डॉ. प्रताप नारायण एण्ड संस
32. हिन्दी उपन्यास –शिव नारायण श्रीवास्तव
33. हिन्दी उपन्यास साहित्य – ब्रज रत्न दास
34. हिन्दी साहित्य का इतिहास –रामचन्द्र शुक्ल –ना.प्र.समा. काशी
35. हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन –गणेशन
36. पत्रिका आलोचना (उप विशेषांक) विजय शंकर मल्ल
37. हिन्दी साहित्य का इतिहास – हजारी प्रसाद द्विवेदी –ग्रन्थावली राज कमल प्रकाशन

38. हिन्दी साहित्य भाग–3 सम्पादक धीरेन्द्र वर्मा भारतीय हिन्दी परिषद इलाहाबाद

39. हिन्दी साहित्य का अद्यतन इतिहास –डॉ. मनमोहन अवस्थी

40. शब्द कल्पद्रुम – चौखम्बा, वाराणसी।

41. सौन्दर्य तत्व – डॉ. सुरेन्द्र नाथ दास गुप्ता।

42. सौन्दर्य बोधा की दृष्टि में शिवानी एवं ऊषा प्रियंवदा के कथा साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन

43. यौन मनोविज्ञान रूपांतर – मन्मननाथ गुप्त

44. असमान्य मनोविज्ञान – डॉ. रामकुमार ओझा

2. संस्कृत के ग्रन्थ

1. मनुस्मृति

2. अथर्ववेद

3. सुधा सागर

4. साहित्य दर्पण

5. भक्ति नारद सूत्र

6. कामसूत्र: वात्स्यायन

7. नाट्य शास्त्र

8. श्रीमद् भगवत गीता

9. शिव पुराण:

10. कुमा संभव : कालिदास

11. श्रौत्र सूत्र

12. अमर कोश प्रथम कांड

13. हरिभक्ति रसामृत सिन्धु :रूप गोस्वामी

14. चैतन्य चरितामृत

15. कठोपनिषद

16. ब्रहम सूत्र

17. उज्जवल नील मीठा:

18. ऋग्वेद

19. कौषीतकी उपनिषद

20. काव्यालंकार – भामह
21. काव्यादर्श – दण्डी
22. प्रदीपकार
23. अभिज्ञान शकुन्तला – कालिदास
24. दश रूपक – धनञ्जय
25. रसमंजरी – भानुदत्त
26. अभिनव भारती नाट्य शास्त्र
27. शब्द कल्पद्रुम – चौखम्बा प्रकाशन

3. अंग्रेजी के ग्रन्थ

1. An out line of psychology - william M.C. dougall.
2. Love's philosophy - William shelley.
3. Studies in the psychology of sex- vol II Havelock ellis.
4. Introduction to social psychology - William M.C. Dougall.
5. Introductory Lectures of psycho-analysis-Freud.
6. Basic writings of sigmund- Freud.
7. The ego and Id.
8. The future of an illusion - Freud.
9. Hindu psychology - Akhilanand
10. Modern man in search of soul -C.G. young
11. Social psycholgoy - Thouloss.
12. The psychology of sex - Oswald schwarty
13. Peligious consciousness - William pratte.
14. The psychology of religion - W.B. selibie
15. Psychology and religion - Forsyth
16. Introduction to the psychology of -Religion thouless.
17. Web sters new international dictionary of english language.
18. Human Afection and devine love-Swani
19. Heart of - Rama swami Ramtirth.
20. Ratha Krishnan - From preface to 'Dilip Kumar Roy's Among the great.'
21. The mansions of philosophy - Will durant.
22. Phaedrus - -Plato

23. Studies in dying culture - Christopher candwele
24. Symposiam - Plato
25. Beauty and other forms of value london- Alexander
26. Philosophy of fine ..... - Hegal
27. Indian Aestheties - Ramaswamy sastri
28. Shakespeares- imagery and what it tells up Shakespeare
29. Bigraphia Literaria
30. Literature - Critici
31. New world Dictionary of the American (Language -webster)
32. The Aesthetic experience
33. The Aesthetic experience-Abhenaw Gupta
34. Characters make your story - Maren Albud.
35. Personality A psychological Interpitation-Alfort.
36. The complete work of Hores - Hores
37. Playmaking - william Archer
38. The art of Dramatic writing - Loges Agri
39. Expects of Novel - Eyem faster.
40. Principals of psychology - Anvai-William James.
41. The psychology of Education - H.G.
42. Dictonary of english and sanskrit - Monier - William .
43. The new in sycholopidia.
44. New international dictonary of English language.
45. A trigit on the novel
46. The quest for Literature.
47. Reading A novel.
48. Writing for young people - Ravensan
49. Shakespearien Tragedy - A.C. Gredle
50. Plot and character - Hoking.
51. As Ariustau Theory of peotry and fine art- S.H. Bucher.
52. A study of sofoclean drama - G.M. Kikrud.
53. The philosophy of beautiful he tanes H. causins.
54. Principal of literary Criticism-Rechards.